॥ श्रीहरिः ॥

महर्षि श्री मद्वेदव्यासविरचितम्

अथ श्री वाराह पुराणम्

भाषानुवादः

❀ प्रथमोऽध्यायः ❀

(पहिले अध्याय में मंगलाचरण-वाराहभगवान् के प्रति पृथ्वी के प्रश्न करने पर हँसते हुए वाराह रूप भगवान के उदर में रुद्र सिद्ध महर्षि आदि विश्व का पृथ्वी को दर्शन होना)

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैवनरोत्तमम् ।
देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत् ॥१॥

नरों में श्रेष्ठ नारायण भगवान-नरावतार (अर्जुन) सरस्वती देवी और व्यास को नमस्कार कर पुराण का पाठ करे ।

नमस्तस्मै वराहाय लीलयोद्धरते महीम् ।
खुरमध्यगतो यस्य मेरुः खणखणायते ॥२॥

सहज लीला से ही पृथ्वी को अपनी दंष्ट्रा पर रखने वाले-और जिसके खुरों के बीच में समाया हुआ सुमेरु पर्वत खण खण शब्द करता है अर्थात् इतना बड़ा आपका देह है जिसके खुर के बीच में इतना बड़ा सुमेरु पर्वत कंकर की भाँति समा जाता है उन वाराहरूप भगवान को नमस्कार है ।

नैमषारण्य क्षेत्र में शौनकादि ऋषियों से सूतजी कथा कहते हैं।

सूत उवाच

जिस समय में वाराह जी ने पृथ्वी का उद्धार किया उस समय पृथ्वी–भगवान् से पूंछने लगी, हे प्रभो हर एक कल्प में इसी प्रकार आप मेरा उद्धार करते रहते हैं परन्तु आदि सर्ग के आपके रूप को मैं नहीं जानती हूं। जबकि असुर द्वारा वेदों को रसातल में ले जायागया उस समय आपने मत्स्य रूप धारण कर असुर को मारकर वेदों को लाकर ब्रह्मा को दिये थे।

सुर और असुरों को अमृत निकालने के निमित्त समुद्र मंथन के समय आपने कूर्म (कछुआ) का रूप धारण कर मंदराचल को अपनी पीठ पर धारण किया था।

हे जगन्नाथ ! फिर समुद्र में बूढ़ी हुई पृथ्वी को रसातल से वराह रूप धारण कर अपनी डाढ़ पर रखकर लाये थे। और जब हिरण्यकशिपु दैत्य ब्रह्मा से वरदान प्राप्त कर अपने महाबल से पृथ्वी को बाधा करने लगा तब आपने नृसिंह रूप धारण कर उस दैत्य को मारा था।

हे प्रभो ! फिर आपने जमदग्नि के पुत्र परशुराम अवतार ग्रहण करके इकीस बार भूमि को क्षत्रियों से शून्य किया था। हे भगवन ! फिर आपने दशरथ पुत्र श्री राम रूप होकर महाबली रावण का विनाश किया था। हे प्रभो ! फिर आपने वामन रूप धारण कर यज्ञ करते हुये बलि राजा से तीन पैंड़ भूमि याचना करने पर, इस दान के देने में राजा समर्थ न हो सका तब उसे नागपाश से बांधा था। हे देव ! मैं आपके इच्छित कार्य को नहीं जान सक्ती हूं न यह जानती हूँ कि मेरा उद्धार करके किस कारण सृष्टि को रचते हो। और कैसे सृष्टि का आदि (आरम्भ) और अवसान (विनाश) होता है। और किस तरह चारों युगों की गणना संख्या होती है। और उन युगों (सतयुग, त्रेता, द्वापर,

कलियुग) में क्या विशेषता है। और कौन कौन राजायें यज्ञादि करके सिद्धि को प्राप्त हुये हैं।

यह सब संक्षेप से मुझसे कहने की कृपा कीजिये। सूत जी ऋषियों से कहने लगे कि – इस प्रकार पृथ्वी ने भगवान से प्रश्न किया तब वाराहदेव हँसे और हंसते हुये मुखद्वारा उनके उदर में– पृथ्वी देखने लगी। तब क्या देखती है कि वाराह भगवान के उदर में रुद्र, देवता, वसुनाम के, देवगण, सिद्धों का समूह, महर्षि-चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र और सातों लोक इस प्रकार सब विश्व स्थित है। पृथ्वी भगवान के इस रूप को देखकर भयभीत हो कर काँपने लगी और कुछ समय बाद ही पृथ्वी। समुद्र में शेष शय्या पर पौढ़े हुये चतुर्भुज भगवान के दर्शन करने लगी यह भगवान् का चमत्कार देखकर पृथ्वी हाथ जोड़कर स्तुति करने लगी।

धरणी उवाच

कमल के पत्र के समान नेत्र वाले–पीताम्बर धारण करने वाले, देवताओं के शत्रु दैत्यों का विनाश करने वाले, जिनकी नाभि कमल से ब्रह्मा की उत्पत्ति है इस प्रकार के आपको नमस्कार है। अपने वक्षस्थल में लक्ष्मी को धारण करने वाले मोक्ष के देने वाले सब देवों के देव आपको नमस्कार है। धनुष, खड्ग, चक्र को धारण करने वाले स्वय जन्म और मृत्यु से रहित, विद्रुम (मूंगा) समान लाल ओष्ठ और कर पल्लवों से शोभित आपको नमस्कार है मैं स्त्री हूँ और आपकी शरण हूँ अतः मेरी रक्षा कीजिये। हे जनार्दन ! नील अंजन के समान वर्ण वाले महा-काय भयंकर वाराह रूप के दर्शन कर मैं भयभीत हो गयी, फिर आपका विश्व रूप का दर्शन कर विस्मय को प्राप्त हुई हूँ हे नाथ ! हे महा प्रभो ! अब मुझ पर दया करके मेरी रक्षा कीजिये।

अब पृथ्वी अपने भय निवारण के लिये रक्षार्थ अपने अगों में भगवान के नामों से न्यास करने लगी।

केशव भगवान मेरे पावों की रक्षा करो—नारायण जंघाओं की रक्षा करो - माधव कटि (कमर) की रक्षा करो गोविन्द गुह्य अंगों की रक्षा करो। विष्णु भगवान मेरी नाभि की रक्षाकरो, मधुसूदन उदर की रक्षा करो, त्रिविक्रम हृदय की रक्षा करो, हृषीकेश मुख की रक्षा करो, पद्मनाभ मेरे नेत्रों की रक्षा करो, दामोदर शिर की रक्षा करो। इस प्रकार से पृथ्वी श्री हरि के नामों का शरीर में न्यास करके कहती हुयी कि हे विष्णो! आपको नमस्कार है, और नमस्कार करके चुप हो रही। २८।

॥ इति वाराहपुराणे प्रथमोध्यायः ॥१॥

❀ अथ द्वितीय अध्याय ❀

द्वितीय अध्याय में प्रथम पुराण लक्षण संक्षेप से सृष्टिका वर्णन, फिर पृथ्वी के पूछने पर विस्तार से सृष्टिक्रम, तहां सात्विकसृष्टि, तममोह, महामोह, तामिस्र, अन्धतामिस्र, पंच पर्व अविद्या की उत्पत्ति, पशु पक्षी आदि की उत्पत्ति, देवादिकों की उत्पत्ति, मनुष्य आदिकों की उत्पत्ति, फिर छः सृष्टियों के नाम, फिर स्थिति का वर्णन—पहिले रुद्र, सनकादिक, मरीचि आदि की उत्पत्ति, दक्ष की कन्याओं से देव दानव गन्धर्व उरग (सर्प) पक्षि आदि की उत्पत्ति, रुद्र सृष्टि, एकादश रुद्रों की उत्पत्ति, युगों का माहात्म्य, स्वायंभू मनु के पुत्र प्रियव्रत की सभा में नारद का आगमन, नारद के देखने का आश्चर्य, तहां कन्या रूप सावित्री का दर्शन होना, सावित्री द्वारा नारद को वेद आदिकों का दान, इत्यादि वर्णित है।

सूत उवाच।

शौनकादि ऋषियों से सूत जी कहने लगे कि पृथ्वी की भक्ति से श्री हरि प्रसन्न हुये, आपकी माया उसे दिखला कर अनन्तर उसी वाराहमूर्ति से स्थित हो गये और वाराह जी ने

कहा कि यह तेरा प्रश्न सुदुर्लभ है, सब शास्त्रों के सिद्धान्त से इस पुराण के विषय को कहता हूं। सब ही पुराणों के लक्षण का यह साधारण (सामान्य) श्लोक है इसे तू श्रवण कर—

श्री वाराह उवाच।

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च।
वंशानु चरितं चैव पुराणं पञ्च लक्षणम्। ४।

सर्ग (सृष्टि) का क्रम, प्रतिसर्ग, राजा आदिकों के वंशों का वर्णन और उन उन वंशों में जो उत्पन्न हुये उन्हों का चरित, मनवन्तर और मनवन्तरों के चरित जिसमें वर्णन किये गये हों उसे पुराण कहा जाता है यह पांच लक्षण पुराण के सभी पुराणों में रहते हैं। अब वाराह जी पृथ्वी से सृष्टि के क्रम को कहते हैं। हे सुन्दर मुखी! मैं पहिले तुमसे आदि सर्ग को कहता हूं; जिससे देवता और राजाओं के चरित जाने जाते हैं और सनातन परमात्मा का भी ज्ञान होता है। सबसे पहिले मुझसे आकाश उत्पन्न हुआ। फिर महत् (बुद्धि) हुआ वह सात्त्विक, राजस, तामस भेद से तीन प्रकार का हुआ, महत् से श्रवण आदि के कारण भूत *इन्द्रिय समूह उत्पन्न हुआ। आकाश का शब्द गुण, हुआ* फिर आकाश से वायु पैदा हुआ, फिर तेज पैदा हुआ, उससे जल उत्पन्न हुआ, जल पैदा होने के बाद मैंने भूत धात्री (पृथ्वी) को रचा, फिर एक अण्डरूप पैदा हुआ, जब वह अण्ड वृद्धि को प्राप्त हुआ तो उसमें से मैं उत्पन्न हुआ, उस समय जल ही सब ओर था मैंने जलों को पैदा किया और (नार) जल ही मेरे रहने का स्थान हुआ इससे मेरा नाम नारायण हुआ। कल्प कल्प में मैं जलों में शयन करता हूं शेष शय्या पर सोते हुए मेरी नाभि में से एक कमल पैदा हुआ उस कमल में चतुर्मुख ब्रह्मा पैदा हुआ उस ब्रह्मा को मैंने प्रजा रचने की आज्ञा दी, और ब्रह्मा को आज्ञा देकर मैं अन्तर्धान हो गया, जब तो ब्रह्मा विचारने लगे

कि यह किसने आज्ञा दी और किस तरह प्रजा उत्पन्न की जाय, जब ब्रह्मा इस बात के निश्चय पर न पहुंच सके तब उनको क्रोध हुआ, तब ब्रह्मा के सकाश से रोष रूप रोता हुआ एक बालक पैदा हुआ। उस रोते हुए बालक को ब्रह्मा ने निवारण किया। तब उस बालक ने ब्रह्मा से कहा आप मेरा नाम कहिये, तब ब्रह्मा ने कहा तेरा नाम रुद्र होगा। और रुद्र से ब्रह्मा ने कहा कि तुम प्रजा पैदा करो। फिर भी ब्रह्मा प्रजा रचने में समर्थ न हुये और जल में गोता लगा कर तप किया तब ब्रह्मा के दक्षिण अंगूठा से दक्ष प्रजापति पैदा हुआ, और वाम अगूंठे से प्रजापति की स्त्री उत्पन्न हुई। फिर दक्ष प्रजापति ने अपनी स्त्री में प्रजा धर्म से स्वायंभू मनु को पैदा किया। अनन्तर ब्रह्मा को प्रजा रचने का ज्ञान हो गया।

धरणी उवाच

इस प्रकार से धरणी (पृथ्वी) वाराहदेवसे संक्षेप में सृष्टि का क्रम सुनकर पुनः कहने लगी कि हे सुरेश्वर! कल्प के आदि में नारायण ब्रह्मा जिस प्रकार हुए उस आदि सर्ग को विस्तार से कहने की कृपा करिये।

श्री भगवान् उवाच।

वाराह भगवान भूमि से कहने लगे कि नारायण ने जिस प्रकार सब भूतों की रचना की थी उसे मैं सम्पूर्ण कहता हूँ, सुनिये। व्यतीत कल्प की समाप्ति में रात्रि में सोते हुए ब्रह्मा को सत्वगुण की अधिकता हुई तब जागने पर इस लोक को शून्य देखने लगा। तब ब्रह्मा ने नारायण भगवान् का स्मरण किया। और अनादि सबकी उत्पत्ति का कारणभूत ब्रह्मा रूप भगवान् ने जगत् की उत्पत्ति जिससे और जगत् का लय जिसमें ऐसे नारायण के प्रति एक श्लोक कहा।

आपो नारा इति प्रोक्ता आपोवै नर सूनवः।
अयनं तस्य ताः पूर्वं तेन नारायणः स्मृतः ॥ २६ ॥

जल का नाम, नार, भी है अतः जल को 'नार' कहते हैं, और नार(जल) परमात्मा के पुत्र हैं क्योंकि जल की उत्पत्ति परब्रह्म से ही हुई है, पूर्व काल में नर (जल) आपका अयन (शयन-स्थान) है इस कारण भगवान् को नारायण कहा जाता है।

सृष्टि रचना को चिंतवन करते हुए ब्रह्मा के प्रकास से तपोमय तम, मोह, महामोह, तामिस्र, अंधतामिस्र यह पञ्च पर्वात्मक अविद्या उत्पन्न हुई। इन्हों की पांच प्रकार की सृष्टि हुई यह मुख्य सर्ग माना गया है। फिर ब्रह्मा के ध्यान करने पर उत्तम सर्ग पैदा हुआ यह तिर्यक लोक कहा जाता है इसमें पशु पक्षि आदि पैदा हुए इस तिर्यक् (पशु) सर्ग को सृष्टि रचना का साधन न समझ कर ब्रह्मा ने फिर भगवान् का ध्यान किया। तब ऊर्ध्वस्रोत (उत्कृष्ट सृष्टि) धर्म वाला सात्विक सर्ग रचा। तथा ऊर्ध्वलोकों में रहने वाला गर्भ से उत्पन्न होने वाला देवसर्ग की रचना की परन्तु उसको भी प्रजा की रचना करने में साधन न जानकर फिर ब्रह्मा ध्यान करने लगे। तब अर्वाक् स्रोत (सर्ग) की रचना की इस सृष्टि में मनुष्य पैदा हुए। ब्रह्मा मनुष्य सृष्टि को देखकर प्रसन्न हुए और यह माना कि इन्हीं से सृष्टि बढ़ेगी, प्रजा उत्पत्ति करने में मनुष्य समर्थ होंगे। परन्तु ये दुःख बहुल हैं। हे सुभगे! यह छः सर्ग तुमसे कहे। प्रथम महत् (महान्) सर्ग, दूसरा तन्मात्रा (शब्द स्पर्श रूप रस गंध) का, तीसरा वैकारिक इन्द्रियों का सर्ग, बुद्धि (महान्) पूर्वक यह प्राकृत सर्ग हुआ। चतुर्थ सर्ग स्थावर (पर्वत वृक्ष आदि) ऊर्ध्व स्रोतों में श्रेष्ठ सातवां मनुष्य सर्ग। आठवां अनुग्रह सर्ग, वह सात्विक और तामस है। पांच वैकृत सर्ग हैं और तीन प्राकृत सर्ग हैं। नौवां कौमार सर्ग है। प्रजापति के ये नौ सर्ग मैंने तुमसे कहे। प्राकृत और

वैकृत सर्ग जगत के मूल कारण हैं। यह सृष्टि का क्रम मैंने कहा अब और क्या सुनना चाहती हो।

अब स्थिति का क्रम कहते हैं

धरणी उवाच।

ब्रह्मा से जो नव प्रकार की सृष्टि उत्पन्न हुई वह वृद्धि को कैसे प्राप्त हुई, हे देव! यह मुझसे कहने की कृपा कीजिये।

वराह उवाच।

पहिले ब्रह्मा ने रुद्र आदि तपोधन रचे, फिर सनकादिकों की सृष्टि की-अनन्तर मरीचि आदि की सृष्टि की, मरीचि, अत्रि, अङ्गिरा, पुलह, क्रतु, पुलस्त्य, प्रचेता, भृगु, नारद, वशिष्ठ। ये मरीच आदिक हैं। इन्होंमें सनकादिक विरक्त हुए अतः इन्हें धर्म में नियुक्त किया। और मरीचि आदि प्रवृत्ति में थे इन्हों में नारद केवल निवृत्ति मार्ग में थे। और ब्रह्मा के दक्षिण अंगूठे से उत्पन्न हुआ आद्य, प्रजापति, उसके वंश में यह चर अचर सब जगत पैदा हुआ। देव, दानव, गन्धर्व, उरग (सर्प) पक्षि– ये सब दक्ष की कन्याओं में उत्पन्न हुए।

अथ रुद्र सर्ग

जो ब्रह्मा के भृकुटी ललाट से क्रोधात्मक पुत्र रुद्र नाम से प्रसिद्ध हुआ था वह अर्ध नारी नर अर्थात् आधादेह पुरुष और आधा स्त्री रूप हुआथा। और वह प्रचंड एवं भयंकर था। रुद्र से ब्रह्मा ने कहा कि तुम इस देह का विभाग करो अर्थात् पुरुष और स्त्री अलहदा अलहदा हो जाओ। यह कहकर ब्रह्मा अन्तर्धान हो गये। ब्रह्मा के ऐसा कहने पर वह रुद्र अपने देह को पुरुष एवं स्त्री रूप दो प्रकार से पृथक् पृथक् कर देते हुए और फिर पुरुष रूप के दश विभाग अर्थात् दश पुरुष रूप कर दिये तब वह ब्रह्म से उत्पन्न एकादश रुद्र हो गये। हे अनघे! यह मैंने तुमसे रुद्र सर्ग का वर्णन किया अब युगों के माहात्म्य को सुनो।

सत्ययुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग ये चार युग होते हैं। इन युगों में प्रभावशाली और दानशील राजा, देवता और असुर हुए थे और उन्होंने जो धर्म कार्य किये थे वह मैं तुमको सुनाता हूं। पूर्व काल में पहिले कल्प में स्वायंभुव नाम के मनु हुये थे और उस मनु के अति पराक्रमी दो पुत्र हुए थे। प्रियव्रत और उत्तानपाद उनका नाम था और वह धर्म में परायण थे। प्रियव्रत राजा तपस्वी और बड़ा यज्ञ करने वाला था उसने बहुत दक्षिणा वाले विविध प्रकार के यज्ञ किये अनन्तर भरत आदि अपने पुत्रों को सातों द्वीपों के राज्य में स्थापित कर दिया। इस प्रकार अपने को राज्यकार्य देकर स्वयं विशाला नामक क्षेत्र में जाकर तप करने लगा। जबकि वह चक्रवर्ती राजा तप कर रहा था उस समय नारद मुनि उसे देखने के लिये वहां पर आये। सूर्य समान तेज वाले नारद को आकाश से आता हुआ देखकर प्रसन्न होकर राजा खड़ा हो गया और प्रणाम कर आसन पर बैठाकर अर्घपाद्य किया। अनन्तर आपस में दोनों के कुशल प्रश्न हुए। परस्पर वार्तालाप होने के बाद में राजा प्रियव्रत ने नारद से प्रश्न किया।

प्रियव्रत उवाच।

हे भगवन् नारद! इस सतयुग में आश्चर्य आपने कोई देखा व सुना हो वह मुझसे कृपा करके कहिये।

नारद उवाच

नारद कहने लगे कि हे प्रियव्रत! एक आश्चर्य मैंने देखा है वह मैं तुझको सुनाता हूँ। हे राजेन्द्र! कल दिन में श्वेत द्वीप गया था वहां पर कमल जिसमें खिल रहे थे ऐसा एक सुन्दर सरोवर देखा और उस सरोवर के तीर पर सुन्दर नेत्र वाली एक कुमारी को देखकर विस्मय (आश्चर्य) युक्त हो गया। फिर मधुर

भापिणी उस कन्या से मैंने पूछा कि हे भद्रे! तू कौन है और यहां पर तेरा क्या कार्य है जिस कारण यहां आई हुई है। इस प्रकार मेरे पूछने पर कुछ काल मुझे देखा और कुछ स्मरण सा कर चुप हो रही। इतने में मेरा सब ज्ञान, सब वेदाध्यय, सब शास्त्र, योग शिक्षा और सब स्मृतिशास्त्र विस्मरण हो गया। हे राजन्! उस कुमारी के देखने मात्र से क्षण मात्र में सबका ज्ञान नष्ट हो गया। तब तो मैं एक बड़े चिंता से व्याकुल हो गया और उस कन्या की मैंने शरण ली। इतने ही में उस कन्या के शरीर में एक दिव्य पुरुष दीखने लगा। और उस पुरुष के हृदय में एक अन्य पुरुष और उसके भी उर में एक द्वादश सूर्य के समान तेजस्वी लाल नेत्र वाला पुरुष दीखने लगा। इस प्रकार, उस कन्या के शरीर से उत्पन्न तीन पुरुष देखे और क्षण मात्र में वे तीनों पुरुष अदृश्य हो गये केवल एक कन्या ही रह गयी। तब मैंने उस कन्या से पूछा कि हे कुमारी! यह क्या कारण हुआ कि जिससे मुझे वेदों का ज्ञान विस्मृत हो गया। भद्रे! इस ज्ञान के नाश होने का कारण मुझे बतला।

कन्या उवाच।

ऐसा नारद का कथन सुनकर कन्या कहने लगी कि मैं सब वेदों की माता हूँ, और सावित्री मेरा नाम है। तू मुझे नहीं जानता है इससे तेरे वेद नष्ट हो गये हैं। हे राजन् उस कन्या के ऐसा कहने पर मैंने उससे फिर पूछा कि ये तीन पुरुष दीखे थे वह कौन थे।

कन्या उवाच

कन्या उत्तर देने लगी कि मेरे शरीर में स्थित जो सुन्दर रूप वाला पुरुष है वह ऋगुवेद है और वह नारायण का स्वरूप है और अग्नि रूप है इनके पढ़ने से सब पाप नष्ट हो

जाते हैं। और इस पुरुष के हृदय में अन्य पुरुष देखा था वह युजर्वेद है यह ब्रह्म का स्वरूप है और इस पुरुष के हृदय मे अन्य पुरुष देखा वह रुद्र स्वरूप सामवेद नामक है। इसका स्मरण करने से सब पाप नष्ट हो जाते हैं। हे ब्रह्मन! ऋग, यजुः, साम यह तीन वेद हैं और विष्णु, ब्रह्मा, शिव, यह तीन देवता हैं। इन्हों के अकारादिक वर्णों से सब यज्ञादि प्रवृत्त होते हैं। मुझसे पूछा गया वह मैंने संक्षेप से तुझसे कहा, अब तू सब वेदों को ग्रहण कर, हे नारद! इस सरोवर में स्नान कर, स्नान करने से सब, शास्त्र वेद आदि का और पूर्व जन्म का ज्ञान तुझे हो जायगा। ऐसा कहकर वह कन्या अंतर्धान हो गयी, और मैं उस सरोवर में स्नान करके तुझे देखने को यहां आया हूँ। ८३ ॥

इति श्री वाराह महा पुराणे आदिभूत सर्ग स्थिति युग माहात्म्य वर्णनं नाम द्वितीयोध्यायः॥

अथ तृतीयोध्यायः

इस अध्याय में प्रियव्रत नारद सम्वाद, नारद के पूर्व जन्म का वृत्तान्त ब्रह्म पार नाम स्तोत्र कथन, नारायण का दर्शन-नारद को वर प्राप्ति इत्यादि का वर्णन।

प्रियव्रत उवाच

प्रियव्रत राजा नारद से कहने लगा कि महाराज! पूर्व जन्म का अपना वृत्तान्त मुझे सुनाइये इसके सुनने से मुझे बहुत कौतूहल है।

नारद उवाच

नारद कहने लगा कि हे राजेन्द्र! इस वेद सरोवर में स्नान करने से और सावित्री के वचन सुनने से उसी समय मुझे दूसरे जन्मों के वृत्तान्त का स्मरण हो गया। राजन्! अवन्ती नाम का एक नगर था उसमें वेद वेदाङ्गों को जानने वाला ब्राह्मणों में

श्रेष्ठ सारस्वत नाम से मैं प्रसिद्ध था। और बहुत धन धान्य से सम्पन्न था, और मेरे बहुत परिवार था, एक समय एकान्त में मैंने विचार किया इस परिवार और सम्पत्ति से मुझे क्या प्रयोजन है। इस सांसारिक कार्य को पुत्रों के आधीन करूँ वन में जाकर भगवान् का भजन करूँ। यह निश्चय कर तप करने के लिये सारस्वत नामक सरोवर को चल दिया। और वहां पहुँच कर पुराण पुरुष विष्णु और शिव की आराधन की और भक्ति पूर्वक नारायण स्वरूप ब्रह्म पार नामक स्तोत्र से स्तुति की। मेरे ब्रह्म पार स्तोत्र का जप करने से प्रसन्न हुये भगवान् प्रत्यक्ष हुए।

प्रियव्रत उवाच।

प्रियव्रत राजा नारद से पूछने लगा कि भगवन्! जिस स्तोत्र से स्तुति करने पर भगवान् आपको प्रत्यक्ष हुए। उस ब्रह्म पार स्तोत्र को मुझे सुनाने की कृपा कीजिये।

नारद उवाच।

नारद प्रियव्रत राज से ब्रह्मपार स्तोत्र कहने लगा।

पर (विष्णु ब्रह्मा, महेश) से भी पर(श्रेष्ठ) पुराण (अनादि) अनन्त पराक्रम वाले पुरुषोत्तम भगवान को नमस्कार करता हूँ। जिसके समान दूसरा कोई नहीं है, उग्र तेज वाले, गम्भीर बुद्धि वालों में प्रधान, सबके नियन्ता, हरि भगवान् को मैं नमस्कार करता हूँ। शुद्ध जिन्हों का स्थान है, विशाल, सुन्दर नारायण भगवान् की स्तुति करता हूँ। पहले यह जगत शून्य था आपने इसकी रचना की, और स्थिति की, रज तम और गुणों से रहित, नारायण भगवान् मेरे शरण (रक्षक) हों। जिन्हों का पार नहीं, अनादि, धैर्य और क्षमायुक्त, शान्त, विश्व के ईश, ऐसे महानुभाव की स्तुति करता हूँ। सहस्र (असंख्य) मस्तक और असंख्य हाथ

एवं असंख्य पांव जिन्हों के हैं, सूर्य और चन्द्रमा नेत्र हैं, क्षीर समुद्र में शयन हैं, उस नारायण की स्तुति करता हूँ। तीनों वेदों से जानने योग्य, मत्स्य आदि दश जिन्हों के अवतार हैं, तीनों अग्नि रूप, तीन युग रूप, नारायण को नमस्कार करता हूँ। सत्ययुग में श्वेतवर्ण, त्रेता में लालवर्ण द्वापर में पीतवर्ण कलियुग में कृष्ण वर्ण को धरण करने वाले, भगवान् को नमस्कार है। जिसने अपने मुख से ब्राह्मणों को, भुजाओं से क्षत्रियों को, उरु (जंघा) से वैश्यों को और पांव से शूद्रों को पैदा किया, ऐसे विश्व रूप भगवान् को नमस्कार है। शंख चक्र गदा पद्म आदि आयुध को धारण करने वाले नारायण को नमस्कार है।

इस प्रकार देवताओं में श्रेष्ठ भगवान् मेरी स्तुति से प्रसन्न हो कर मेघ गम्भीर वाणी मुझसे कहने लगे कि हे नारद ! वरदान मांगो। तब मैंने भगवान की देह में लय होना मांगा तब भगवान् ने कहा तू प्रकृति को प्राप्त हो। और कहा 'नार' नाम पानी का है वह पानी तेने पितरों को दिया; इससे तेरा नाम नारद होगा। ऐसा कहकर भगवान् अन्तर्धान हो गये और मैं तप करता अपने शरीर को छोड़ कर ब्रह्म लोक में लय हो गया। हे राजन्! जो ब्रह्मदेव के दिन का आदि है वही सब सृष्टि का आदि काल है। हे पार्थिव ! तेने जो मेरा पूर्व जन्म का वृत्तान्त पूछा वह मैंने तुझसे कहा। हे राजन् नारायण का ध्यान करने से मैं श्रेष्ठता को प्राप्त हुआ हूँ तू भी भगवान् परायण हो कर नारायण की उपासना कर।२८।

इति वाराह पुराणे आदि भूत वृत्तान्ते नारद प्राग्जन्म निरूपणं नाम तृतीयोध्यायः।

अथ चतुर्थोध्यायः

सर्वत्र नारायण की व्यापकता का वर्णन।

पृथ्वी उवाच।

वाराहदेव से धरणी (पृथ्वी) प्रार्थना करने लगी कि जो सनातन परमात्मा नारायण भगवान् आपने कहा वह नारायण सब विश्व में व्यापक है अथवा सर्वत्र व्यापक नहीं है, यह आप कृपा कर कहिये।

वाराह उवाच

वाराह ने पृथ्वी से कहा कि मत्स्य, कूर्म, वाराह, नरसिंह, वामन, परशुराम, श्रीराम, कृष्ण, बुद्ध और कल्की ये उस परमेश्वर की दश मूर्तियां है। और यह मूर्तियां परमेश्वर के दर्शन करने वालों को सोपान (सीढ़ी) रूप हैं अर्थात् इनकी उपासना करने से परमेश्वर नारायण का दर्शन प्राप्त होता है। जो परमात्मा का मूल रूप है उसे तो देवता भी नहीं दर्शन कर सकते हैं। आद्य नारायण की तीन मूर्तियां हैं। विष्णु, ब्रह्मा, शिव, विष्णु सत्वगुणावतार, ब्रह्मा रजोगुणावतार और शिव तमोगुणावतार हैं। ब्रह्मा सृष्टि को रचते हैं, विष्णु पालन करते हैं और शिव संहार करते हैं। हे धरे ! तू (पृथ्वी) उस परमेश्वर की पहली मूर्ति है, दूसरी मूर्ति जल है, तीसरी मूर्ति तेज है, चौथी मूर्ति वायु है, पांचवी मूर्ति आकाश है। तथा विष्णु ब्रह्मा और शिव ये तीन मूर्तियां हैं, इस प्रकार ये आठ मूर्तियां कही गयी हैं। और यह सब जगत नारायण से व्याप्त है, अर्थात् सब विश्व रूप नारायण हैं। हे धरणी ! यह नारायण की व्यापकता तुमसे कही अब और क्या सुनना चाहती हो।

पृथ्वी उवाच।

इस प्रकार नारद के कहने पर प्रियव्रत क्या करता हुआ यह मुझसे कहने की कृपा करिये।

वाराह उवाच।

वाराह भगवान कहने लगे कि राजा प्रियव्रत ने तुझे

(पृथ्वीको) सात विभाग मे विभक्त करके उन सातों खंडों को अपने पुत्रों को देकर तप करने लगा। और नारद से सुना हुआ नारायण रूप परब्रह्म का जप करके मोक्ष को प्राप्त हुआ। हे वरारोहे! परमेश्वर के आराधन समय में एक राजा का दूसरा वृत्तान्त सुनाता हूँ। परम धार्मिक अश्वशिरा नामक एक राजा हुआ था। उसने बहुत दक्षिणायुक्त अश्वमेध यज्ञ किया था, यज्ञ के अन्त में ब्राह्मणों के साथ अवभृथ (यज्ञान्त) स्नान किया। जब तक राजा स्नान से निवृत होता है इतने में ही योग श्रेष्ठ कपिल मुनि और जैगीषव्य मुनि वहां पर आये। राजा अश्वशिरा उन ऋषियों को आते देख कर खड़ा हो करके उनको नमस्कार की और हर्ष से उनका स्वागत किया, आसन पर बैठाकर पूजन किया। फिर राजा मुनियों से पूछने लगा कि महाराज! मेरे संशय को आपसे पूछता हूँ कि नारायण भगवान की आराधना किस तरह की जाती है।

विप्रावूचतुः।

दोनों ब्राह्मण राजा से कहने लगे कि तुम नारायण किस को कहते हो, हम दोनों ही नारायण स्वरूप तेरे प्रत्यक्ष में हैं।

अश्वशिरा उवाच

राजा अश्वशिरा मुनियों से कहने लगा कि आप सिद्ध हैं तप करने से निष्पाप हैं और ब्राह्मण हैं परन्तु आप यह किस तरह कह सकते हैं कि हम नारायण हैं। नारायण भगवान् चतुर्भुज स्वरूप शंख, चक्र, गदा, पद्म आयुधों को धारण करते हैं गरुड़ के ऊपर स्थिति रहते हैं। उनके समान भूमि पर दूसरा कौन हो सकता है। वह दोनों मुनि राजा का यह वचन सुनकर हँसने लगे और कहा कि अब तुम विष्णु भगवान को देखो ऐसा कहकर कपिल तो स्वयं विष्णु रूप हो गया, और जैगीषव्य गरुड़ रूप

हो गया। उस गरुड़ पर बैठे हुये नारायण को देख कर राजा हाथ जोड़ कर कहने लगा। हे ब्राह्मणो! शान्त रहिये इस प्रकार के नारायण नहीं हैं, नारायण की नाभि में कमल है और उस कमल पर ब्रह्मा बैठा हुआ है, वह परमेश्वर विष्णु है। मुनिपुंगव राजा का ऐसा वचन सुनकर योग माया को प्रकट करते हुए माया के प्रभाव से कपिल तो पद्मनाभ हो गया और जैगीशव्य ब्रह्मा हो गया, और वह कमल में स्थित शोभा को प्राप्त हुआ। उससे तेजस्वी रुद्र पैदा हुआ, उस कालाग्नि के समान लाल नेत्र वाले रुद्र को देखने में राजा समर्थ न हुआ। और यह जान लिया कि योगियों की माया है इसे कोई नहीं देख सकता है। और राजा कहने लगा कि परमेश्वर सर्व व्यापी है यह बात सत्य है। अब इसके बाद में राजा की सभा में खटमल, मच्छड़, जूंआं, भौंरा, पक्षि सर्प, घोड़ा, गाय, सिंह, व्याघ्र, शृंगाल, हरिण, पशु, कीट इत्यादि जानवर दीखने लगे। हे भूत धारिणि! राजभवन में करोड़ों जानवर दीखने लगे। इस बात को देखकर राजा विस्मय को प्राप्त हुआ और विचार करने पर उसे ज्ञान हुआ कि कपिल और जैगीषव्य का यह माहात्म्य है, राजा अश्वशिरा हाथ जोड़कर ऋषियों से कहने लगा कि हे महाभागो! यह क्या आश्चर्य है, मुझे बतलाइये

द्विजावूचतुः।

दोनों ऋषि ब्राह्मण बोले कि हे राजन्! तैंने जो पूछा था कि विष्णु का पूजन किस तरह करना चाहिये और भगवान् की प्राप्ति कैसे हो, वह सर्वगत विश्व व्यापी भगवान् के गुण तुझे दिखलाये हैं। जिससे तुझे ज्ञान हो कि भगवान सर्व व्यापी हैं। वह परमात्मा सब शरीरों में स्थित है, कहीं भी मनुष्य को मिल सकता है। उसका एक ही कोई स्थान नहीं है, इसलिये परमात्मा का यह रूप तेरे लिये दिखाया है। और तुझे हमारा विश्वास हो

हे राजन् ! इसी प्रकार सर्वगत विष्णु भगवान् तेरे देह में भी हैं। और जो भी तुझे पशु आदि दिखलाये वो सब भगवान् का स्वरूप है। सर्वमय श्री हरि है ऐसी दृढ़ भावना रखनी चाहिये। हे राजन् ! यह ज्ञान तुझसे कहा, तू परिपूर्ण भाव से नारायण का स्मरण कर पूजा के उपचारों से ब्राह्मणों की सेवा से, सुस्थिर मन से, ध्यान करने से परमेश्वर को सुख से प्राप्त कर सकता है ॥ ४२॥ इति वाराह पुराणे नारायणस्य व्यापकता वर्णनं नाम चतुर्थो अध्यायः ॥

अथः पञ्चमोऽध्यायः ।

दोहाः—कहूँ पंचम अध्याय में, कर्म ही से भव मोच ।
अश्वशिरा वन जाय कर, प्रसन्न कियो अधोच ॥

अथ कर्म जन्य मोक्षादिकम् ॥'अश्वशिरा ने कहा' महाराज आप एक मेरे संदेह को दूर करने योग्य हो जिससे कि मेरी संसार से मुक्ति हो जावे ॥१॥ राजा अश्वशिरा के इस प्रकार कहने पर धर्मात्मा योगिराज कपिल जी यज्ञ प्रेमी राजा अश्वशिरा से बोले ॥२॥ कपिल जी बोले हे राजन् ! तेरे मन में क्या संदेह है मैं सब दूर करूंगा तू अपनी अभिलाषा कह ॥३॥ राजा ने कहा कर्म करने से मोक्ष होता है या ज्ञान से हे मुनि ! यदि आप मेरे ऊपर कृपा चाहते हो तो इस मेरे संशय को दूर कीजिये ४॥ कपिल जी ने कहा कि हे राजन् ! यही प्रश्न पहिले ब्रह्म पुत्र रैभ्य और राजा वसु ने बृहस्पति से पूछा था ॥५॥ चाक्षुष मनवन्तर में ब्रह्मा का वंश बढ़ाने वाला दानशील राजाओं में बड़ा राजा वसु था ॥६॥ ब्रह्मा का दर्शनाभिलाषी राजा वसु ब्रह्मसदन गया रास्ते में विद्याधर श्रेष्ठ चैत्र रथ को देखकर प्रीति पूर्वक ब्रह्मा का समय पूछा ॥७॥ उसने कहा कि ब्रह्मा के यहां देव सभा हो रही है इस प्रकार सुन कर वसु दरवाजे पर रहा तभी ब्रह्मलोक

निवासी महातपा रैभ्य वहीं पर आ गया राजा वसु रैभ्य को देख प्रीति युक्त हुआ ॥८॥९॥ और सम्मान कर कहा कि हे मुनि! पहिले कहाँ गये थे रैभ्य ने कहा हे राजन्! मैं बृहस्पति के पास से आरहा हूँ कुछ कार्य्यान्तर पूछने के लिये वहाँ गया था ॥१०॥११॥ रैभ्य के इतना कहने पर ही ब्रह्मा की बड़ी भारी सभा भी उठ गयी और सभी देवता अपने अपने घरों को चले गये ।१२॥ तभी बृहस्पति भी वहां पर आय वसु राजा से अनपूजित हो रैभ्य से संवाद करते करते अपने स्थान को गये । १३॥ रैभ्य, बृहस्पति और राजा वसु बैठ गये, हे राजन्! उन तीनों के बैठ लेने पर देव गुरु बृहस्पति, रैभ्य से पूछने लगे कि हे वेद वेदांगों को जानने वाले! बड़भागी क्या सतकार आपका करूँ ॥१४॥१५॥ रैभ्य कहने लगे कि हे समर्थवान बृहस्पति! मोक्ष कर्म से होता है या ज्ञान से, इस मेरे संशय को आप दूर कीजिये ॥१६॥ बृहस्पति जी बोले कि पुरुष भले बुरे कर्म करके नारायण के अर्पण कर देवे तो कर्मों से लिप्त नहीं होता है ॥१७॥ हे रैभ्य ब्राह्मण और लुभदक का सम्वाद सुनने मे आता है कि अधिवंश में कोई वेदाभ्यासी मुनि, ब्राह्मण, तपस्वी, प्रातः स्नाही और प्रातः माध्यन्दिन, सायम् इस प्रकार त्रिसवन में रत संयमन नाम वाला पहिले एक दिन धर्मारण्य मे पुण्य भागीरथी में स्नान करने गया ॥१८॥१९॥ वहां उसने हरिणों का बड़ा विचक्षण झुण्ड बैठा देखा और उनको मारने की इच्छा वाला यमराज के समान धनुष हाथ में लिया हुआ निठुरक नाम वाला शिकारी आया और उसने अच्छे धनुष पर अच्छी प्रत्यञ्चा चढ़ाकर मृग समूह मारने की तय्यारी की ॥२०॥ तब उस शिकारी को शिकार खेलने में तत्पर देख संयमन् नाम वाले ब्राह्मण ने रोकते हुये कहा कि हे शिकारी इस प्रकार जीव हिंसा मत करो ॥२१॥

ऐसा वचन सुन व्याध हंसते हंसते कहने लगा कि हे द्विज ! मैं प्रथक जीवों को नहीं मारता हूँ ॥२२॥ स्वयं परमात्मा भी प्राणियों के साथ क्रीड़ा करते हैं मन्त्रों के द्वारा गाया वलि की गई है उसी प्रकार इसमें भी कोई संशय नहीं है॥२३॥ हे ब्रह्मन ! मोक्ष की इच्छा वालों को अहम भाव कभी नहीं करना चाहिये सारे संसार का काम प्राण यात्रा में रत होना है वहां में जो शब्द है वह ठीक नहीं है ॥२४॥ संयमन ब्राह्मण इस प्रकार सुनकर विस्मय से निष्ठुरक शिकारी कहने लगा ॥२५॥ कि प्रत्यक्ष कारण वाला यह वचन क्या कहते हो ॥२३॥ फिर धर्म को जानने वाला शिकारी यह कहने लगा, लोहे का जाल बना उसके नीचे लकड़ी, अग्नि रख दी और ब्राह्मण से बोला कि लकड़ियों का समूह जलाओ तब ब्राह्मण ने मुख से फूंक मार कर अग्नि प्रज्वलित की ॥२७॥२८॥ फिर आग के जलने पर उस लोहे के जाल के झरोखों से निकली ज्वाला कदम्ब के गोल के समान शोभा को प्राप्त हुई आग के एक स्थान पर स्थित होने से भी लोहे के जाल आग की अलग अलग हजारों किरणें निकलीं तब लुभदक ब्राह्मण से कहने लगा हे विप्र ! एक ज्वाला ग्रहण कीजिये जिससे कि मैं और वचत का नाश करूं इस प्रकार कहकर लुब्धक ने अग्नि में जल का भरा घड़ा जल्दी गिरा दिया तब अग्नि बुझ कर पहिले की तरह हो गयी ॥२६॥३०॥३१॥३२॥ फिर लुब्धक उस तपस्वी ब्राह्मण से कहने लगा कि हे ब्राह्मण ! जो आपने अग्नि में से ज्वाला निकाली थी उसे मुझे दीजिये जिस मार्ग से मैं मांस मगा कर खाऊँ ॥३३॥ लुब्धक के इस प्रकार कहने पर ब्राह्मण तभी लोहे के जाल को देखता है तभी अग्नि को नहीं देखता है क्योंकि मूल के नाश होने पर नाश हो गयी थी ॥३४॥ तब संशित व्रति ब्राह्मण विलक्ष भाव से

चुप हो गया और लुब्धक कहने लगा कि इसमें अग्नि जली और बहुत शाखा वाली हुई मूल के नाश होने पर नाश हो गई है उसी प्रकार यह भी है ॥३५ ३६॥ प्रकृति में स्थित आत्मा प्राणियों का आधार है और विकृति भाव से उसकी उत्पत्ति है यही संसार की स्थिति है ॥३७॥ पिण्ड ग्रहण धर्म से किये हुये व्रतादियों को आत्मा में संयोजन करता हुआ नष्ट नहीं होता है ॥३८॥ हे राज श्रेष्ठ ! व्याध के इस प्रकार कहने पर व्याध के ऊपर आकाश से पुष्प वृष्टि हुई ॥३९॥ और दिव्य स्वेच्छा-चारी, बड़े बड़े विमान जो मुख्य रत्नों से युक्त थे उन विमानों में स्थित काम रूपी निष्ठुरक व्याध को ब्राह्मण ने देखा ॥ ४०॥४१॥ अद्वैत वासना से सिद्ध योग से बहुत शरीर वाले व्याध को देखकर ब्राह्मण हर्ष युक्त हो अपने आश्रम को लौट आया ॥४२॥ इस प्रकार अपने जाति का कर्म करते भी ज्ञान होता है । हे ब्राह्मण ! रैभ्य ! हे राजन् वसु ! और मुक्ति भी स्वजाति कर्म से होती है । ४३॥ इस प्रकार वे रैभ्य और वसु अपने संशय को मिटाकर बृहस्पति के आश्रम सेअपने आश्रम को चले गये ॥४४॥ हे राजन् अश्वशिरा ! अतएव प्रभु की आराधना करता हुआ तू भी नारयण देव को अभेद भाव से अपने शरीर में देख ॥४५॥ कपिल जी के वचन सुनकर समर्थशाली राजा अश्वशिरा ने अपने यशस्वी स्थूल सिरा नाम वाले जेष्ठ पुत्र को बुलाकर उसका राज्याभिषेक किया और आप वन को चला गया ॥४६॥ नैमिषारण्य में जा कर वहाँ यज्ञ तनु हरि भगवान् की तपस्या और स्तुति से आराधना की ॥४७॥ पृथ्वी कहने लगी हे महाराज ! राजा ने नारायण स्तोत्र से किस प्रकार स्तुति की है मुझे बताओ ॥४८॥ वाराह जी बोले नित्य स्वरूप के लिये नमस्कार है । इन्द्र, रुद्र, सूर्य, चन्द्रमा, अग्नि, वायु आदि अनेक रूप वाले यज्ञ

तनु हरि को नमस्कार करता हूँ ॥४६॥ भयंकर दाढ़ वाले, सूर्य, चन्द्र नेत्र वाले, सम्वत्सर के दो अयन ही जिनकी दो कूख हैं, दर्भा ही जिनके रोम हैं, उस उग्र शक्ति सनातन यज्ञ पुरुष को नमस्कार करता हूँ॥५०॥ आकाश और पृथ्वी का यही अंतर है जिसके शरीर से सारी ही दिशायें व्याप्त हैं उस स्तुति करने योग्य समर्थशाली जगत् के उत्पति स्थान जनार्दन भगवान् को नित्य नमस्कार करता हूँ ॥५१। जो कि अजय अरु अनादि हो कर भी सुर असुरों के जय के लिये युग युग में अपने आद्य शरीर को रचते हैं उन यज्ञ मूर्ति परमेश्वर को नमस्कार है ॥५२॥ जिस उग्र तेज वाले ने जय के लिये निर्मल सुसुभ्र माया मय चक्र धारण किया सारंग धनुष शङ्खादि धारण करने वाले चार भुजा वाले उस यज्ञ मूर्तिभगवान को नित्य प्रणाम करता हूँ ॥५३॥ कहीं हजारों सिर वाले कहीं कभी वड़े पर्वत के समान शरीर वाले कहीं त्रसरेणु समान रहने वाले यज्ञ नर को सदा नमस्कार करता हूँ ॥५४॥ जो चतुर्मुख हो सृष्टि रचता है, पालन के लिये चक्र धारण करता है, नाश के लिये कालानल के समान होता है उस यज्ञ मूर्तिको वार वार नमस्कार करता हूँ ॥५५॥ जिस सर्व गत संसार चक्र चलाने के लिये पुराण पुरुष का यज्ञ होता है जो योगियों के ध्यान में स्थित अप्रमेय है उस यज्ञ मूर्ति को वार वार प्रणाम करता हूँ ॥५६॥ जव मैंने आपका सुहृष्य भली भांति अपने मन में अर्पित किया और अपने शरीर में और कुछ नहीं है यह निश्चय किया तव मेरी स्थिर मति विशुद्ध भाव को प्राप्त होती है ॥५७॥ इस प्रकार उसके स्तुति करने पर उसके सामने अग्नि को ज्योति के समान आगे से हुआ उस राजा ने उसमें बुद्धि को लगा कर यज्ञ मूर्ति में लय प्राप्त किया ॥५८॥ इति वाराह पुराणे आदिकृत वृत्तान्ते रैभ्य वसु चरिते कर्मज मोक्ष नारायण स्तोत्र योद्गनिरूपणं काशीराम कृत भाषा टीकायाम पंचमो अध्यायः ॥५॥

अथ: षष्टोऽध्याय:

दोहा:—ज्येष्ठ पुत्र को राज्य दे, गयो पुष्कर राज ।
राजा वसु ने स्तुति करी, ईश मिलन के काज ॥

पृथ्वी ने कहा– हे देव ! बृहस्पति के वचन सुन संशय मे दूर होकर रैभ्य और वसु ने क्या किया सो कहो ॥१॥ वराह जी कहने लगे सब धर्मों को जानने वाला राजा वसु अपने राज्य का पालन करता था और बहुत दक्षिणा वाले बड़े बड़े अनेक यज्ञ राजा वसु किया करता था ॥२॥ अभेद भाव से हरि का चिंतन करते हुये राजेन्द्र ने कर्म काण्ड से देवेश नारायण को प्रसन्न किया ॥३॥ तब बहुत समय के पश्चात उसकी मति राज्य भोग की इच्छा से निवृत्त द्वन्द के अन्त को प्राप्त हुई ।४॥ और सौ भाइयों में श्रेष्ठ विवस्वन्त पुत्र को अपने राज्य में अभिषिक्त कर अपने आप तपोवन को चला गया ॥५॥ भगवत् भक्तों से जहाँ पुण्डरीकाक्ष पूजे जाते हैं, ऐसे तीर्थों में श्रेष्ठ पुष्कर राज में जाकर काशमीराधिपति राजा वसु तपस्या से अपना शरीर सुखाकर और भक्ति से पुण्डरीकाक्ष स्तोत्र जप कर अकल्मष् नारायण देव की आराधना में तत्पर हो स्तोत्र के बाद तद्रूप हो गया ॥६।७॥८॥ पृथ्वी कहने लगी हे देव ! पुण्डरीकाक्ष पार स्तोत्र किस प्रकार कहा गया है परमेश्वर ! वह मुझे बता दीजिये ।६॥ वराह जी बोले :– कमल के समान नेत्र वाले को, मधु दैत्य को मारने वाले हरि को, सर्व लोकेश को, तीखे चक्र वाले को नमस्कार करता हूँ ॥१०॥ विश्व मूर्ति, महाबाहु, वरद, सर्व तेजस, पुण्डरीकाक्ष और विद्या-अविद्यात्मक विभु को नमस्कार करता हूँ। ११॥ आदि देव, महादेव, वेद- वेदाङ्ग पारग, सर्वदेव गम्भीर तथा कमल नेत्र को नमस्कार करता हूं ॥१२॥ सहस्र सिर वाले, सहस्राक्ष महा भुजा वाले तथा सर्व गत परमेश्वर को नमस्कार करता

हूं।।१३॥ शरण्यं, शरण, देव, विष्णु, जिष्णु, सनातन, नील, मेघकान्ति, तथा चक्र पाणि को नमस्कार करता हूं ॥१४॥ शुद्ध सर्व गत नित्य व्योम रूप सनातन, भावाभाव निर्मुक्त तथा सर्वत्र हरि को नमस्कार करता हूँ ॥१५॥ हे अच्युत ! तेरे सिवाय मैं और कुछ नहीं देखता हूं ये सारा चराचर जगत त्वन्मय ही देख रहा हूं ॥१६॥ इस प्रकार स्तुति करते हुये राजा वसु के देह से नील कान्ति वाला भयङ्कर मूर्तिमान पुरुष जिसके कि लाल नेत्र थे छोटा शरीर जलते खम्भे के समान कान्ति वाला था निकलकर हाथ जोड़ राजा से कहने लगा कि हे राजन्! क्या करूँ ।१७॥१८॥ राजा कहने लगा तू कौन है ? कहां से आया तेरा मतलब क्या है ? हे व्याध ! ये मुझे बतला मैं जानना चाहता हूं ॥१६॥ व्याध ने कहा कि हे राजन् तू पहिले कलियुग में पूर्ण धर्म से पैदा दक्षिण पथ जनस्थान में विचक्षण राजा हुआ ॥२०॥ तब तैंने कभी अपने घोड़ों से युक्त हो शिकार खेलने के लिये जंगल की तरफ गमन किया उस जगल में बिना इच्छा से तैंने मृग भेष धारी मुनि को दो डण्डों से मारकर दूर पृथ्वी पर गिराया ।।२१॥२२॥ वह मुनि शीघ्र मर गया और तू हर्ष युक्त हो कर यह मृग मर गया "इस प्रकार कहते जभी देखता है तभी प्रश्रवण पर्वत में मृग वपु धारी मुनि मरा पड़ा देखता है ॥२३॥ उसको देखकर तेरा हृदय दुखित हुआ तब घर आ कर अन्य किसी के पास भी तूने कहा ॥२४॥ तत्पश्चात कतिपय दिन की रात्रि में ब्रह्महत्या के भय की डर से चित में विचाराकि ब्रह्महत्या की शान्ति के लिये कृत्य करूं जिससे कि मैं पातक से छूट जाऊँ ।२५। हे महाराज ! तब आपने नारायण का स्मर्ण करके शुद्धा द्वादशी पारण किया है ॥२६॥ नारायण मेरे ऊपर प्रसन्न होवें कहकर शुभ दिन में विधि पूर्वक गौदान किया और शीघ्र उदर शूल से

आदि कृत वृतान्ते वसु चरिते वसोः पुंडरीकाक्ष पार स्तोत्रेण मोक्ष प्राप्तिर नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् षष्टोध्यायः ॥६॥

अथः सप्तमोऽध्यायः

दोहाः— इस सप्तम अध्याय में, रैभ्य चरित्र महान ।
तपोगदाधर स्तवन से, जन लोक में पयान ॥

पृथ्वी ने कहाः-कि हे देव ! यह मुझे बड़ा संशय है कि वसु को सिद्ध हुआ सुनकर मुनि शार्दूल रैभ्य ने स्वयं क्या किया ॥१॥ वराह जी ने कहा कि वह मुनि शार्दूल रैभ्य वसु को सिद्ध हुये सुनकर पितृ तीर्थ पुण्य गया में गया ॥२॥ वहीं आकर पिंड देने से भक्ति पूर्वक पित्रों को तृप्त करता हुआ दुख से करने योग्य महत् तीव्र तप करने लगा ॥३॥ बुद्धिमान उस रैभ्य के तीव्र तप करने पर विमान में स्थित अति तेजस्वी महा योगी आया ॥४॥ जो कि त्रसोणु के समान शुद्ध सूर्य्य के समान दीप्यमान परमाणु परिमाण वाला पुरुष विमान स्थित था ॥५॥ वह बोला हे सुव्रत रैभ्य ! किस लिये तू यहाँ तप करता है ऐसा कहकर वह पुरुष भूमि और आकाश के बीच ठहरा ॥६॥ वहाँ भी सूर्य्य समान देदीप्यमान् आकाश में व्याप्त विष्णु भवन तक व्याप्त करता हुआ विमान को रैभ्य ने देखा ॥७॥ तब विस्मय युक्त हो वह रैभ्य प्रणति पूर्वक पूछने लगा कि हे महायोगिन ! आप कौन हो ? मुझे बतलाइये ॥८॥ पुरुष कहने लगा मैं रुद्र से छोटा ब्रह्मा का मानस पुत्र सनत कुमार नाम वाला हूं। और जनलोक में रहता हू ॥९॥ हे तपोधन रैभ्य ! प्रेम से आपके पास आया हूं वत्स ! ब्रह्मकुल बढ़ाने वाला तू सर्वदा धन्य है ॥१०॥ रैभ्य कहने लगा हे योगीवर ! आपके लिये नमस्कार हो प्रसन्न होइये हे विश्व रूप ! आप मेरे ऊपर दया करते हो। हे योगी सिंह ! कहिये आपका यहीं क्या कार्य है जो कि आज आपने यहीं आकर मुझे

मर गया ॥२७॥ और द्वादशी पारण करने से भी जो तू मुक्त न हुआ उनके कारण को कहता हूं। नारायणी नाम वाली सुन्दर आपकी पत्नी थी आपने उसको कण्ठगत प्राण होने पर भी पुकारा है अतः यह तेरी गति है ॥२८।२९॥ हे महाराज ! एक कल्प आपको विष्णु पुर में हुआ है और मैं आपकी देह में स्थित मन्त्र कुछ जानता हूं ।३०॥ महाघोर ब्रह्म ग्रह इसको पीड़ित करता हूं इस प्रकार मेरी मति हुई तभी विष्णु के नौकरों ने मुझे मूसलों से मारा और नाश को प्राप्त होकर मैं तेरे रोम कूप से च्युत हुआ हे राजेन्द्र ! स्वर्ग में भी मैं अपने तेज के साथ आपके साथ रहा ॥३१॥३२॥ इसके बाद रात्रि कल्प आने पर दिन कल्प निवृत्त हुआ फिर इस समय आदि सृष्टि के सत्ययुग में राजा सुमनस के घर में तू श्रेष्ठ राजा वसु हुआ ॥३३॥ और काश्मीर देश के मालिक सुमनस के अंग रुहों से मैं पैदा हुआ हूं पर्य्याप्त दक्षिणा वाले अनेक यज्ञों से तैने यजन किया परन्तु विष्णु स्मरण रहित उन यज्ञों से भी मैं नष्ट नहीं हुआ हूं इस समय पुण्डरीकाक्ष पारग स्तोत्र आपने पढ़ा है उसके प्रभाव से तेरे बालों को छोड़ एकी भूत हो व्याध रूपी हुआ हूं ॥३४॥३५।३६॥ पहिले पाप मूर्ति ने भगवान का स्तोत्र सुन कर मुक्त हुआ हूँ और इस समय धर्म बुद्धि वाला हो गया हूं ॥३७। राजा वसु इस प्रकार व्याध के वचन सुनकर विस्मय को प्राप्त हुआ और उस व्याध को वर देकर तृप्त किया ॥३८॥ राजा बोला हे व्याध ! जिस प्रकार त्वेने जन्मान्तर की बात सुनाई तथैव तू धर्म व्याध होगा ॥३९॥ जो इस श्रेष्ठ पुण्डरीकाक्ष पारग स्तोत्र को सुनेगा उसको पुष्कर यात्रा में विधि पूर्वक स्नान करने का फल प्राप्त होगा ॥४०॥ वराह जी बोले- हे पृथ्वी ! ऐसा कहकर राजा वसु श्रेष्ठ विमान पर चढ़ प्रधान तेज से योग को प्राप्त हुआ ॥४१॥ इति वराह पुराणे

आदि कृत वृतान्ते वसु चरिते वसोः पुंडरीकाक्ष पार स्तोत्रेण मोक्ष प्राप्तिर नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् षष्ठोध्यायः ॥६॥

अथः सप्तमोऽध्यायः

दोहाः— इस सप्तम अध्याय में, रैभ्य चरित्र महान।
तपोगदाधर स्तवन से, जन लोक में पयान ॥

पृथ्वी ने कहाः–कि हे देव ! यह मुझे बड़ा संशय है कि वसु को सिद्ध हुआ सुनकर मुनि शार्दूल रैभ्य ने स्वयं क्या किया ॥१॥ वराह जी ने कहा कि वह मुनि शार्दूल रैभ्य वसु को सिद्ध हुये सुनकर पितृ तीर्थ पुण्य गया में गया ॥२॥ वहीं आकर पिंड देने से भक्ति पूर्वक पित्रों को तृप्त करता हुआ दुख से करने योग्य महत् तीव्र तप करने लगा ॥३॥ बुद्धिमान उस रैभ्य के तीव्र तप करने पर विमान में स्थित अति तेजस्वी महा योगी आया ॥४॥ जो कि त्रसोणु के समान शुद्ध सूर्य के समान दीप्यमान परमाणु परिमाण वाला पुरुष विमान स्थित था ॥५॥ वह बोला हे सुव्रत रैभ्य ! किस लिये तू यहाँ तप करता है ऐसा कहकर वह पुरुष भूमि और आकाश के बीच ठहरा ॥६॥ वहाँ भी सूर्य समान देदीप्यमान् आकाश में व्याप्त विष्णु भवन तक व्याप्त करता हुआ विमान को रैभ्य ने देखा ॥७॥ तब विस्मय युक्त हो वह रैभ्य प्रणति पूर्वक पूछने लगा कि हे महायोगिन ! आप कौन हो ? मुझे बतलाइये ॥८॥ पुरुष कहने लगा मैं रुद्र से छोटा ब्रह्मा का मानस पुत्र सनत कुमार नाम वाला हूं। और जनलोक में रहता हूं ॥९॥ हे तपोधन रैभ्य ! प्रेम से आपके पास आया हूं, वत्स ! ब्रह्मकुल बढ़ाने वाला तू सर्वदा धन्य है ॥१०॥ रैभ्य कहने लगा हे योगीश्वर ! आपके लिये नमस्कार हो प्रसन्न होइये हे विश्व रूप ! आप मेरे ऊपर दया करते हो। हे योगी सिंह ! कहिये आपका यहाँ क्या कार्य है जो कि आज आपने यहाँ आकर मुझे

धन्य किया और मुक्त किया है ॥११॥ सनत् कुमार कहने लगा हे द्विज वर्य ! धन्य तू ही है जो कि वेद वाद में प्रीति करता है और मंत्र जप होम व्रत से तथा गया में प्राप्त हो पिण्डों से मत्र पितरों को तृप्त करता है ॥१२॥ और सुन विशाल नाम का एक राजा हुआ वह विशाल पुरी में निवास करता था जो कि धन्य धृतिमान विशाल पुरी का मालिक शत्रुओं का मारने वाला था। उसने पुत्र के अर्थ स्वयं ब्राह्मणों से पूछा फिर अदीन सत्व वाले वे ब्राह्मण बोले कि हे राजन्! पुत्र की कामना से गया में जाकर अनेक अन्न दान दीजिये और पितरों को तृप्त कीजिये ॥१३॥१४॥ तब निश्चय करके सकल पृथ्वी का मालिक दानी और मानी तेरा लड़का होगा ॥१५॥ ब्राह्मणों के इस प्रकार कहने पर विशाल पुरी का राजा प्रसन्न हो श्रेष्ठ गया तीर्थ में जाकर भक्ति पूर्वक मघा नक्षत्र में पितरों के लिये विधि से पिण्ड दान करने लगा तभी आकाश में उत्तम मूर्ति वाले सित, पीत, कृष्ण, तीन पुरुषों को देख कर बोला कि आप यह क्या देख रहे हो मेरे मन में कौतूहल है सो सब कहिये ॥१६॥१७॥ शित ने कहा हे तात! नाम से वृत से कुल से कर्म से मैं सित तेरा जनक हूँ और ये क्रूर कर्म करने वाला ब्रह्म हत्या करने वाला पापी रक्त वर्ण मेरा पिता है ॥१८॥ व्रत से कर्म से भी कृष्ण अधीश्वर नाम वाला कृष्ण वर्णी मेरे पिता का पिता है इस कृष्ण वर्ण वाले ने पहिले अनेक जन्मों में अनेक ऋषि मारे हैं ॥१९॥ हे पुत्र ! मेरा पिता और उनका पिता ये दोनों मरकर भयङ्कर अदीचि संज्ञा वाले नरक में दीर्घ काल तक प्राप्त हुये हैं ॥२०॥ और मैं अपने शुद्ध कर्म से दुर्लभ शक्रासन को प्राप्त हुआ हूं इस समय मंत्र को जानने वाले तूने गया तीर्थ में पिण्ड दान देने से तीर्थ पिण्ड के प्रभाव से नरक में स्थित इनको भी बलात्कार इकट्ठा कर लिया है ॥२१॥ हे अरिन्दम पितामह प्रपितामहों को तृप्त करता हूं इस प्रकार

तूने जलाञ्जलि छोड़ी है ॥२२॥ अतः इस वाक्य से हमारा एक दम योग हो गया है तीर्थ के प्रभाव से निःसंदेह पितृलोक में जाता हूं ॥२३॥ दुर्गति विकृति को प्राप्त भी ये पापी तेरे पितामह यहां पिण्ड दान पाने से संसिद्धि को प्राप्त हो गये हैं ॥२४॥ ये तीर्थ का प्रभाव है कि ब्रह्म हत्या वाले पिता का भी इस गया में उसका लड़का यदि पिंडदान करे तो उद्धार हो जाता है ॥२५॥ हे पुत्र इसीलिये मैं इनको लेकर तुझे दिखाने आया था अब जाता हूँ ॥२६॥ हे रैभ्य ! इसीलिये मैं भी आपको धन्य कहता हूं एक बार गया में आना एक बार पिंड दान करना दुर्लभ है और तू तो नित्य यहीं रहकर पिंड दान करता रहता है सो तेरे पुण्य का कहाँ तक वर्णन किया जाय ॥२७॥२८॥ जिस तूने साक्षात् गदापाणि नारायण को स्वयं देखा है तब से साक्षात् गदाधर यहीं रहते हैं अतएव हे रैभ्य ! यह अति विख्यात तीर्थ है ॥२९॥ वराह जी कहने लगे ऐसा कहकर महायोगी सनत् कुमार वहीं अंतरधान हो गये और रैभ्य भी इसके बाद गदापाणि हरि का स्तोत्र करने लगा ॥३०। रैभ्य कहने लगा कि विबुधजनों से पूजित गदाधर को, क्षमा वाले को, दुखियों के दुख दूर करने वाले को, कल्याण स्वरूप को, बड़ी असुर सेना मर्दन करने वाले को, स्मरण करने से सकल पाप नाश करने वाले को, मैं नमस्कार करता हूँ ॥३१॥ पुराण पुरुष बहु पूजित पुरातन, विमल, निश्चय मनुष्यों की गति, त्रिविक्रम, पृथ्वी धारण करने वाले, बल श्रेष्ठ, केशव तथा गदाधर को एकान्त में नमस्कार करता हूँ ॥३२॥ विशुद्ध भाव ऐश्वर्य युक्त श्री समन्वित निर्मल विचक्षण निष्पापी राजाओं से स्तुति को जो प्रणाम करता है वह सुख पूर्वक रहता है ॥३३॥ देव राक्षसों से पूजित चरण-कमल वाले को, कुन्डल, हार, बाजुबंद, मुकुट धारण करने वाले समुद्र शीश चक्रपाणि तथा गदाधर को जो प्रणाम करे है वह सुख

पूर्वक रहता है ।।३४।। सतयुग में सफेद, त्रेता में लाल, द्वापर में नील तथा सुवर्ण, कलियुग में काले रूप वाले भगवान् को जो प्रणाम करता है वह सुख पूर्वक निवास करता है। ३५।। जो उत्पति स्थान होकर ब्रह्मा को जगत् का कारण बनाता है नारायण रूप से जगत का पालन करता है तथा रुद्र रूप से संहार करता है। ऐसे त्रिमुक्ति मान गदाधर भगवान जय को प्राप्त होवे ।३६।। सत्व, रज, तम ये तीन गुण हैं विश्व की उत्पत्ति इन्हीं से निर्भर है वही एक होता हुआ भी तीन प्रकार का गदाधर मेरे धर्म- मोक्ष में धैर्य धारण करावे।।३७।। जल समुद्र रूपी संसार के दुख की तन्तुओं से वियोग ही सुभीषण नक्र चक्रों से ऊंचे से गिरते हुये मुझको जिसने तराया है वही महाप्लव रूप गदाधर है ।।३८। स्वयं त्रिमूर्ति आकाश के समान आत्मा से आत्मा में अपनी शक्ति से ये ब्रह्माण्ड जिसने रचा है तथा उस ब्रह्माण्ड में अनेक तेजसादियों को रचने वाले भूधर को मैं नमस्कार करता हूं। ३९।। जगत् में मत्स्यादि नाम वाला सुरादि संरक्षण से वृषाकपि, मख स्वरूप, विभु स्वरूप, तथा गदाधर मुझे सद्गति देवे ।।४०।। वराह जी ने कहा बुद्धिमान रैभ्य के इस प्रकार विष्णु की स्तुति करने पर पीताम्बर पहिने जनार्दन भगवान जल्दी प्रकट हुये ।।४१।। शंख, चक्र, गदा, पद्म हाथ लिये गरुड़ की सवारी हुये आकाश में स्थित पुरुषोत्तम भगवान धीर मेघ गम्भीर वाणी से बोले ।।४२।। हे द्विजोत्तम रैभ्य ! मैं तेरी भक्ति और स्तुति तथा तीर्थ स्नान से प्रसन्न हूं जो तेरी इच्छा है सो कहो ।।४३।। रैभ्य कहने लगा हे देवेश । मुझे ऐसी गति दो जिससे कि आपके प्रसाद से जहां सनकादिक रहते हैं वहां रहूं ।।४४।। भगवान बोले हे ब्रह्मन् रैभ्य ! ऐसा ही होगा । इस प्रकार कहकर भगवान् अन्तर्धान हो गये और रैभ्य एक दम दिव्य ज्ञान युक्त होकर प्रसन्न हुये भगवान् की कृपा से वहाँ गया जहाँ

सनकादिक रहते हैं ॥४५॥४६। इस रैभ्य के कहे गये गदाधर स्तोत्र को जो पढ़ेगा वह गया में जाकर पिण्ड दान देने के फल से विशेष फल प्राप्त करेगा ॥४७॥ इति वराह पुराणे आदि कृत वृतान्ते रैभ्यस्य तपसा गदाधर स्तोत्रेण चोत्तम लोक प्राप्ति नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् सप्तमो अध्यायः ॥७॥ इति दैभ्य चरित्रम् समाप्तम ॥

अथः अष्टमोऽध्यायः

दोहा:— अब अष्टम अध्याय में, व्याध चरित्र महान्।
लवलीन भयो ब्रह्म में, विष्णु स्तोत्र बखान्।

अथः धर्म व्याध चरित्रम् – वराह जी ने कहा जो राजा वसु के शरीर से वसु हुआ था वह अपनी वृत्ति से चार हजार वर्ष तक रहा ॥१॥ अपने कुटम्ब के लिये हमेशा एक एक वनचर मृग मारकर भृत्य अतिथि अग्नि को तृप्त करता था। २॥ हे पृथ्वी! विचक्षण वह व्याध अपने आचार से पर्व पर्व में मिथिला नगरी में पितरों का श्राध करता था ॥३॥ हमेशा अग्नि की सेवा सुन्दर मीठी वाणी बोलता हुआ प्राण यात्रानुशक्त जीव को नहीं मारता था इस प्रकार रहते उस व्याध का मुनियों के समान जितेन्द्रिय धर्म बुद्धि वाला महा तपस्वी अर्जुनक नाम का पुत्र हुआ ॥४॥५॥ और बुद्धिमान उस व्याध की समय बड़े चारित्र से अत्यन्त मनोहर अरजुनका नाम की लड़की हुई ॥६॥ उस लड़की के यौवन काल में धर्मज्ञ व्याध सोचने लगा कि किसके लिये यह लड़की दूं कौन योग्य पुरुष होगा ॥७॥ इस प्रकार सोचते हुये उस धर्म व्याध के मतंग सुत के प्रति स्पष्ट प्रसन्नाख्य बोलना ऐसा सोच मातङ्ग प्रसन्न के प्रति उद्यत हो उसके पिता से बोला आप प्रसन्न के लिये अर्जुनी को ग्रहण करो हे तपस्वियों में श्रेष्ठ जिसको कि महान आत्मा प्रसन्न के लिये मैं स्वयं दे रहा हूं। ८। ९॥ मातंग ने कहा सर्व शास्त्र पारंगत ये प्रसन्न नाम वाला मेरा लड़का है,

इसके लिये आप की सुता अर्जुनी को ग्रहण करता हूँ ॥१०॥ ऐसा कहने पर महा तपस्वी धर्म व्याध ने बुद्धिमान मतङ्ग पुत्र प्रसन्न के लिये अपनी लडकी देदी ११॥ तब कन्या को देकर धर्म व्याध अपने घर चले गये और उसकी लड़की अपने सास सश्वर तथा पति की सेवा मे तत्पर हुई ॥११॥ बहुत दिन पश्चात उस अर्जुनी कन्या को उसकी सास ने कहा कि हे पुत्री ! तू ऐसे जीव हत्यारे की लड़की है जिसमे तप करना पति की सेवा करना कुछ नहीं जानती पतली कमर वाली वह कन्या स्वल्पापराध से ताडित होने भी बार बार रोती विलखती अपने पिता के घर आई ॥१३॥१४॥ उसके पिता ने कहा हे पुत्री ! तेरे रोने का क्या कारण है इस प्रकार पूछने पर लड़की ने कहा हे पिता ! सास ने मुझे बडे क्रोध मे जोर से जीव हत्यारे की लड़की व्याध से पैदा हुई कहा है ॥१५॥१६॥ इस प्रकार सुन धर्मात्मा, धर्म व्याध क्रोधित हुआ और मतङ्ग के घर गया ॥१७॥ मतङ्ग ने आये हुये अपने समधी का आसनादि अर्घपाद्य से पूजन कर यह बोला कि हे समधी ! आपका आगमन कार्य्य क्या है उसे बताओ ताकि मै उसे पूर्ण करू ॥१८॥१९॥ व्याध ने कहा चैतन्य रहित कुछ भोजन खाना चाहता हूं जिस कौतूहल से कि मैं आपके घर आया हूँ ॥२०॥ मतङ्ग ने कहा गेहूं धान, छटे छटाये हमारे घर मे हैं। हे धर्मज्ञ तपोधन समधी जी आप इच्छा पूर्वक खाइये ॥२१॥ व्याध ने कहा हे श्रेष्ठ ! मै देखता हूँ कि ये गेहूँ, धान तथा जौ कैसे है जिस स्वरूप से होंगे जान लूँगा ॥२२॥ वराह जी ने कहा व्याध के इस प्रकार कहने पर मतङ्ग ने एक सूर्प पर गेहूं और दूसरे सूर्प पर व्रीहि लाकर धर्म व्याध को बतलाये ॥२३॥ धर्म व्याध अपने आगमन से ही धान्य और गेहूं देख उठकर चलने लगा परन्तु मतग ने रोक कर कहा हे बुद्धिमान ! समधी जी कहिये मेरे घर में पका हुआ उत्तम अन्न खाये बिना क्यों चलने

लग गये हो आज क्यों नहीं खाते हो या आप ही पकाकर खाइये ॥२४॥२५॥ व्याध ने कहा जो हजारों करोड़ों जीव हर रोज मारता है ऐसे पापी के अन्न को कौन पुरुष खायेगा ॥२६। यदि आपके घर में अचैतन्य अन्न कुछ पका है तो समधी जानकर खा लूंगा अन्यथा नहीं ॥२७॥ यदि मैं कुटम्ब के लिये दिन में एक पशु जंगल में मारता भी हूँ तो पितरों को अर्पण कर कुटम्बी जनों सहित खाता हूँ ॥२८॥ और तू तो बहुत जीवों को हमेशा मारकर भृत्यों के सहित अपने कुटम्बियों के साथ खाता है। अतः मेरा मत है कि तेरे घर न खाऊं ॥२६। पहिले ब्रह्मा ने औषधि, वीरुहा, लत्ता वगैरह सब यज्ञ के लिये रचे हैं और वह तो प्राणियों का भक्ष्य ही है यही श्रुति प्रमाण है ॥३०॥ दिव्य भौम, पैत्र, तानुप, ब्राह्म ये पांच महायज्ञ ब्रह्मा ने पहिले निर्माण किये हैं। ३१॥ ये यज्ञ ब्राह्मणादियों के हित के लिये हैं और वर्णों का ब्राह्मणों से शुभ किया जाता है ॥३२॥ ऐसा करके मनुष्य खावे तो अन्न शुद्ध होता है। अन्यथा ये धान्य वगैरह भी एक एक करके मृग पक्षी मानने चाहिये और देने वाले खाने वालों को मद्य मांस के समान हैं ॥३३॥ मैने अपनी लड़की तेरे लड़के को व्याही और तेरी औरत ने उसको कहा कि जीव घाती की लड़की है अतएव मै तेरा घर देखने आया हूँ ॥३४॥ आचार देव पूजा, अतिथि पूजा, तर्पण इनमें से मै तेरे घर में होते एक भी नहीं देख रहा हूँ ॥३५॥ इसलिये पितरों के श्राद्ध की इच्छा से मै जाना चाहता हूँ। पितरों के तृप्त किये बिना अपने घर में भी नहीं खाता हूँ ॥३६। मै व्याध जीव घाती हूं। तू तो लोक हिंसक नहीं है जीव घातक जो मेरी बेटी तेरे बेटे से व्याही है वह प्रायश्चित हो गया है इस प्रकार कह आकाश की ओर औरत को शाप देकर उठा।शाप यह है कि सास के साथ स्नुषा का कभी विश्वास नहीं और ऐसी स्नुषा कभी न होवे जो सास का

जीवित चाहती हो ॥३७॥३८॥३९॥ हे पृथ्वी ! इस प्रकार कह व्याध अपने घर चला गया और देव-पितरों को भक्ति पूर्वक पूजने लगा।४०॥ पुत्र अर्जुनक को घर में रखकर व्याध शीघ्र त्रिलोकी प्रसिद्ध पुरुषोत्तम तीर्थ में जाकर नियम पूर्वक इस स्तोत्र को पढ़ते पढ़ते तप करने लगा ॥४१॥४२॥ राक्षसों को मारने वाले,विशाल वक्ष स्थल पर कौस्तुभ मणि धारण करने वाले, नीति वाले, अच्छे शासन रूप, प्रधानगति वाले, त्रिविक्रम मन्दराचल धारी विष्णु को नमस्कार करता हूं ॥४३॥ दामोदर बुद्धि से पृथ्वी जीतने वाले यश से शुभ्र वाले, भ्रमर कान्ति वाले भवः दैत्य रिपु, बहु स्तुति तथा शरण रूप जर्नादन को मैं नमस्कार करता हूं ।४४॥ तीन प्रकार से स्थित, तीखे चक्र धारी, नीति वाले, श्रेष्ठ गुण युक्त, कल्याण दाता तथा अव्यय पुरुषोत्तम को मैं नमस्कार करता हूं ॥४५॥ हविर भुक्ता यज्ञावतार महा वराह मेरा हित करने वाले चतुरमुखे, पृथ्वी को धारण करने वाले, समुद्र में शरण में आये मेरी वे विष्णु रक्षा करें।४६॥ जिसने माया से जगत्त्रय विस्तृत किया, जिस प्रकार एक अग्नि सर्वत्र है। चराचर में सर्वत्र व्याप्त विष्णु जगत्पति मेरा शरण यानी रक्षक होवे ॥४७॥ उत्पत्ति में कम् माने जल, कम् माने सुख, कम् माने ब्रह्मा को रचना है तब ये सचराचर जगत्पत्ति, तब रुद्रात्मा होने पर प्रलय, तब ही हरि विष्णु हर कहा जाता है ॥४८॥ सूर्य, चन्द्र, पृथ्वी, वायु, तेज, जल जिसकी मूर्तियां हैं वही अचिन्त्य रूप धारण करने वाले विष्णु मुझे कल्याण देवे ।४९॥ व्याध के इस प्रकार कहने पर अद्‌भुत रूप और दर्शन वाले स्वयं सनातन भगवान् आगे से हुये अनन्त पाद हाथ मुख वाले भगवान् ने कहा कि वर मांग ॥५०॥ भगवान् के कहने पर व्याध ने कहा कि ये वर मेरे पुत्रों में भी दीजिये क्रिया कलाप से तथा आत्म विद्या से कुल प्रसूती में भी तेरे अनुगामी होवे ॥५१॥

इस कुल के लिये हमेशा ज्ञानादेय हो और हे भगवन्! मेरा निरन्तर ब्रह्म में लय होवे ॥५२॥ इस प्रकार उसके कहने पर भगवान् ने कहा कि प्रसन्न हो जाइये मैंने तेरे कुल के लिये यह वर दे दिया और तेरा भी पारब्रह्म में लय कर दिया है ५३॥ भगवान् के ऐसा कहने पर उसने अपने देह से निकला हुआ तेज देखा और कवि सनातन को छोड़ वहीं पर लय को प्राप्त हुआ हे पृथ्वी इस स्तोत्र को जो मनुष्य सुनेगा या पढ़ेगा या हमेशा विष्णु को पूजकर उपवास कर विशेष कर विष्णु के दिन जो मनुष्य करे वह जहां केशव भगवान् हैं वहीं मनवन्तर तक सुख पूर्वक निवास करता है ॥५४॥५५॥५६॥ इति वराह पुराणे आदि कृत वृत्तान्ते धर्म- व्याधचरितम् नाम श्री केदार प्रान्तीय काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् अष्टमो अध्यायः ॥८॥

अथः नवमोऽध्यायः

दोहा:— इस नौवें अध्याय में, रचना सृष्टि वखान ।
हित वेद लीन प्रकटे, मत्स्य रूप भगवान् ॥

अथ मत्स्यावतार:– पृथ्वी ने कहा हे नाथ पहिले सत्ययुग में विश्वमूर्ति भगवान नारायण ने क्या किया यह सब तत्त्व से सुनना चाहती हूँ॥१॥ वराह जी ने कहा पहिले एक ही नारायण थे उनके अलावा कोई नहीं था स्वच्छन्द कर्म करने वाले भगवान् अकेले ही रति को प्राप्त नहीं हुये ॥२॥ भगवान् की द्वितीय इच्छा से अभाव संज्ञा वाली बुद्धियात्मक चिन्ता सूर्य्य के समान एकदम चमकी॥३॥ वह चिन्ता भी दो प्रकार की हुई उमा संज्ञा वाली सदामर्त्य लोक में व्यवस्थित है॥४॥ ओम् इति एकाक्षरी भू। उस समय इस पृथ्वी को रचती हुई भूः भुव स्व मह जन आदि लोक रचे उससे आगे तपादि में आत्मा लीन हो जाती है सूत्र में मणियों के समान ये भूरादि लोक प्रणव में जकड़े हैं॥५॥६॥ प्रणव से पैदा जगत् उस समय शून्य था। जो ये भगवान शंकर

की मूर्ति हैं, वही स्वयम् इन शून्य लोकों को रचकर उत्तम मूर्ति रचने की इच्छा वाला मनोधाम को चोभित कर वहां अपनी माया से आकार स्थित हुआ और आकार के क्षुब्ध होने पर ब्रह्माण्ड हुआ ॥७॥८॥ ब्रह्माड के शकली भूत होने पर भूरलोक की कल्पना हुई और मध्य में सूर्य्य समान दूसरा भवन हुआ ॥६॥ पहिले जो नवृक, संस्थ, पद्म, कोप, व्यवस्थित था वहीं प्रजापत्य तेज से नारायण देव हैं। १०॥ उनसे अकार आदि स्वर हल् रचे उसने उस अमूर्त सृष्टि में शास्त्र गाये। ११। इस प्रकार रचकर अमेयात्मा फिर चिन्ता करने लगा चिन्ता करते उसके आंख से बड़ा तेज निकला ॥१२॥ दाहना अग्नि के और बांया हिम के समान इसको देख परमेष्ठी ने उनको सूर्य्य-चन्द्र कल्पित किया ।१३। तब परमेष्ठी से प्राण वायु निकली वही वायु भगवान् जो कि इस समय भी हमारे हृदय में व्याप्त है॥१४॥ उस वायु से अग्नि, अग्नि से महत् जल निकला जो अग्नि है वही तेज ब्राह्म का परम कारण है ॥१५॥ परमेष्ठी ने बाहु के तेज से क्षात्र तेज रचा उरुओं से वैश्य, पैरों से शूद्र रचे॥१६॥ तब विभु ने यक्ष राक्षस रचे, चार प्रकार से भूरलोक, आकाश चारियों से भुव लोक, अपने धर्म पर चलने वालों से स्वर्ग गामी अन्य प्राणियों से स्वर्ग लोक पूरित किया ॥१७।१८। सनकादियों से महर्लोक वैराजों से जन लोक तपोनिष्ठ देवों से तप लोक, पूरित किया ॥१६॥ अपुन म रक देवों से सत्य लोक पूरित किया इस प्रकार सृष्टि रचकर भूत भावन परमेश्वर ने तब अमोघ कल्प संज्ञा जगत् के लिये रची ॥२०॥ उस जगत में भूर्लोक, भुव लोक, स्वर लोक ये तीन है अर्थात् इन तीन ही भुवनों में कल्प होता है जब ब्रह्मा सोवे तब ये ही लोक जलमय हो जाते हैं। २१। कल्पान्त में सोने पर उतनी ही रात भी होती है जितना कि दिन उस समय ये त्रिलोकी जलमय हो सोई सी रहती है॥२२॥ रात्रि के व्यतीत होने पर कमलेक्षण उठकर उन

वेदों को और उनमें स्थित वेद माता को सोचने लगा ॥२३॥ ज्ञान निद्रा से मोहित होता हुआ लोक मार्ग की स्थिति करने के लिये सोचता भी वे वेद न मिले फिर अपनी जलमूर्ति में लीन उन वेदों को देखा और ग्रहण करने की इच्छा से सोचने लगा तथा मछली का रूप धर जल में प्रवेश किया ॥२४॥२५ इस प्रकार ध्यान कर एक दम महा मत्स्यावतार धर भगवान् जल को चारों तरफ से क्षोभित करते हुये जल में प्रवृष्ट हुये ॥२६॥ बड़े पर्वत तुल्य प्रकट मात्स्य रूप धर भगवान् के सहसा जल में प्रवेश करने पर जल स्तोत्रों से उनकी स्तुति करने लगे ॥२७॥ वेदान्तरर्गत अप्रतर्क्य नारायण मत्स्य रूप । आपके लिये नमस्कार हो । हे सुस्वर हे विश्वमूर्त हे विद्यादय धारिन आपके लिये नमस्कार है ॥२८॥ हे सूर्य्य चन्द्रादि अनेक रूप वाले ! हे चारु नेत्र हे जलान्त विश्वस्थित आपके लिये नमस्कार हो हे विष्णु ! हम आपकी शरण हैं मत्स्यतनु छोड़ हमारी रक्षा कीजिये ॥२९॥ हे विश्वमूर्ति आप ही विश्व विकृत हैं हे देव ! तुझ से अलग और कुछ नहीं है आप से कुछ भी व्यतिरिक्त नहीं है अतः हम आपकी शरण हैं ।.३०॥ हे कमल नेत्र आकाश, आत्मा, इन्दु, अग्नि, मन ये सारे पुराण मूर्ति आपका रूप हैं हे शम्भो ! जो कुछ भक्ति हीन हो उसे क्षमा कीजि , हे देव देव ! आप ही से जगत् प्रकाशित है ॥ ३१ ॥ हे देव आपका सुभाषण सुस्वन है आर्द्र तुल्य पका रूप विरुद्ध है हे पुराण हे देवेश ! हे जगन्निवास ! हे अच्युत ! हे तीव्र भानो ! कल्याण को प्राप्त हो जाइये ॥३२॥ आपके स्वरूप को देखकर भय से आपकी शरण आय नमस्कार करते हैं । संसार में आज आपके विना देहगत प्राण पुराण नहीं है ॥३३॥ इस प्रकार की स्तुति होने पर भगवान् ने जल में लीन वेदों को उपनिषदों सहित शास्त्रों को ग्रहण करके अपने रूप को प्राप्त किया ॥३४॥ जब तक स्वमूर्ति भगवान् हैं, तभी तक ये जगत है । भगवान् के कूटस्थ होने पर

जगत् लय हो जाता है। भगवान् के विकृत यानी विकार भाव को प्राप्त होने पर जगत् बढता है ॥३५॥ इति वराह पुराणे आदि कृत वृतान्ते सृष्टि वर्णने मत्स्यावतार तत् स्तव निरूपणम् नाम श्री केदार प्रान्तिय काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् नवमोऽध्यायः [६]

अथः दशमोऽध्यायः

दोहाः— इस दशवें अध्याय में, दुर्जय चरित महान ॥
विजय करी सारी धरा, इन्द्र किया विरहान् ॥१०॥

अथः सृष्टि – वराह जी ने कहा हे धरे ! भूत भावन भगवान् इस प्रकार सर्व जगत रचकर चुप हुये। तदनन्तर सृष्टि बढने लगी ॥१॥ सृष्टि के बढ जाने पर सब देवता अनेक प्रकार के यज्ञों से पुरातन नारायणाख्य पुरुष का यजन करने लगे ॥२॥ सारे ही द्वीपों मे, सारे ही वर्षों मे, भक्ति मे तत्पर हो देवता बडे बडे यज्ञों से हरि को पूजने लगे अपने को पूज्य करने की इच्छा वाले देवताओं ने भगवान् को अति प्रसन्न किया। इस प्रकार भगवान् को प्रसन्न करते देवताओं को बहुत हजार वर्ष बीते तब भगवान् ने प्रसन्न हो प्रत्यक्ष दर्शन दिया।॥४॥ अनेक हाथ, पेट, मुख, और नेत्र वाले बडे पर्वत के शृङ्ग को उल्लिखित करते हुये के समान विराजमान भगवान बोले हे देवताजन ! तुम्हारा क्या कार्य है ? उसको कहो ॥५॥ देवता कहने लगे हे गोविन्द ! हे महानु भाव ! आपकी जय हो हे नाथ आपने वरदान देने से हम देवता श्रेष्ठ किये हैं इस मृत्यु लोक में भी आद्य आपको छोड़ हमें कोई नहीं भजता है ॥६॥ सूर्य, चन्द्रमा, अष्टवसु, साध्यगण, विश्वेदेवा, अश्विनी कुमार, मरुद् गण तथा उस्मपा आदि हम सारे ही आपकी शरण हैं। हे विश्व मूर्ते ! आप हमें यहां पूज्य कीजिये ॥७॥ उन देवताओं के ऐसा कहने पर महा योगेश्वर हरि ने कहा कि तुम सबको पूज्य करता हूं फिर अन्तर्धान हो गये ॥८॥ स्तुति

करते हुये सनातन देवता भी अपने अपने स्थान को चले गये और भगवान् भी त्रिविध भाव को प्राप्त हुये ॥६॥ इस प्रकार जगद्धाता महेश्वर तीन प्रकार हो देवताओं को पूजकर त्रिविध भाव को सात्विक,राजस, तामस भेद से ठहरा ।१०॥ सात्विक से वेदों को पढ़, यज्ञ से देवताओं का यजन कर, राजस से अपना ही अवयव होकर काल रूपी प्रकृति रौद्र शूलपाणि ने अपनी राजसी मूर्ति की भक्ति से पूजा की ॥११। १२॥ और तामस भाव से असुरों में रहा एवम् तीन प्रकार हो भगवान् ने देवताओं की आराधना की तब लोक भी अनेक प्रकार का हुआ ॥१३॥१४॥ इस प्रकार विष्णु ने देव श्रेष्ठों के नाम ग्रहण किये, वही विष्णु सत्य युग में नारायण रूप, त्रेता में रुद्र रूप, द्वापर में यज्ञ मूर्ति, कलियुग में नारायण रूप से एवम् वहु रूप हुआ ॥१५॥१६॥ हे पृथ्वी ! आदि कर्ता बड़े पराक्रम वाले विष्णु भगवान के सचरित्र मैं कहता हूं तू ध्यान लगाकर सुन ।१७॥ सत्ययुग में सुप्रतीक नाम का एक बड़ा पराक्रमी राजा था और उसकी अत्यंत खुबसूरत दो रानियाँ थीं ॥१८। विद्युन प्रभा और कान्तिमति उनके नाम थे परन्तु जब उनमें से एक के भी पुत्र न हुआ तब बलवान राजा सुप्रतीक ने पर्वत श्रेष्ठ चित्रकूट में जाकर विधि से अत्रि मुनि को प्रसन्न किया ॥१६ २०॥ वर चाहने वाले राजा ने बहुत समय तक उस ऋषि को प्रसन्न किया। वर देने की इच्छा से आत्रेय मुनि यानी दुर्वासा जभी बोलना चाहता था तभी महा बलवान इन्द्र भी देव सेना से युक्त हो चुपचाप हाथी से उसके पास ही से गया ॥२१॥२२॥ इस प्रकार इन्द्र को जाता देख प्रीति वाले मुनि ने क्रोधित हो कर देवराज इन्द्र के लिये उग्र शाप दिया ॥२३॥ हे दिवस् पते ! इन्द्र हे मूर्ख ! जिससे तूने मेरी अविज्ञा की है इस लिये तू राज्य से भ्रष्ट होकर अन्य लोक में वास करेगा ॥२४॥ क्रोध से ऐसा कहकर भी राजा सुप्रतीक

को कहने लगा कि हे राजन् तेरा बड़ा पराक्रम वाला पुत्र होगा ॥२५॥ इन्द्र के रूप के समान रूप वाला श्रीमान् शस्त्र धारी प्रतापी विद्या प्रभाव को जानने वाला और क्रूर कर्म्मा होगा ॥२६॥ दुर्जय नाम से अति बलवान राजा होगा ऐसा कहकर मुनि चले गये। धर्मज्ञ सुप्रतीक उस राजा ने भी अपनी औरत विद्युत प्रभा में गर्भ धारण किया। समय पर विद्युत प्रभा ने भी दुर्जय नाम से बड़े बलवान पुत्र को पैदा किया ॥२७॥ ।२८। उसका जातकर्म संस्कार मुनि ने किया। मुनि के जातकर्म संस्कार करने के बल से वह सौम्य हुआ ॥२६। वेद शास्त्र, अर्थ-विद्या पारंगत धर्मवान पवित्र हुआ और जो उसकी दूसरी कान्तिमति नाम की रानी थी उसका वेद वेदांग पारंगत सुद्युम्न नाम का बड़ा पुत्र हुआ ॥३०॥३१॥ तत्पश्चात् कालान्तर में राज श्रेष्ठ सुप्रतीक ने समीप में स्थित दुर्जय नाम के पुत्र को योग्य जानकर और अपना बुढ़ापा देख दुर्जय के प्रति राज्य के लिये सोचने लगा ऐसा विचार कर राजा ने दुर्जय को राज्य दे दिया और अपने आप चित्रकूट पर्वत में चला गया ॥३२॥३३॥ ।३४॥ दुर्जय भी हाथी, घोड़े और रथों से महत् राज्य को युक्त कर राज्य वृद्धि के लिये सोचने लगा ॥३५॥ इस प्रकार विचार करके मेधावी दुर्जय ने हाथी, घोड़े, रथ तथा पैदलों से सेना को रचकर उत्तर दिशा की तरफ गया ॥३६॥ उत्तर के देश आधीन इस भारतवर्ष को भी अपने आधीन कर फिर किम्पुरुष नाम वर्ष को भी अधीन कर पुनः उससे परे हरिवर्ष खण्ड भी अधीन किया ॥३७॥३८॥ रम्य, रोमाश्व, कुरु, भद्राश्व, मेरु मध्य स्थित इलावृत खण्ड ये सारे ही उसने जीतकर अपने अधीन किये ॥३९॥ राजा दुर्जय इस सारे जम्बू द्वीप को जीतकर देवताओं के सहित इन्द्र जीतने के लिये तय्यार हुआ ॥४०॥ सुमेर पर्वत में चढ़कर देव, दानव, गंधर्व, गुह्यक, किन्नर तथा दैत्यों को जीतकर

विजय पताका फहराई तभी ब्रह्म पुत्र नारद ने दुर्जय की जीत इन्द्र को सुनायी तब इन्द्र भी जल्दी लोकपालों सहित दुर्जय को मारने गया। परन्तु शीघ्र ही दुर्जय से हार कर मेरु पर्वत को छोड़ लोकपालों सहित मृत्यु लोक में आकर पूर्व देश में ठहरा उसका बड़ा चरित्र होगा ॥४१॥४२ ॥४३॥४४। और दुर्जय देवताओं को जीतकर निवृत्त हो, गन्ध मादन पर्वत पर जभी सेना का डेरा लगाया तभी उसके पास दो तपस्वी आये और बोले हे राजन् दुर्जय ! आपने सब लोकपाल हरा दिये हैं जगत् लोकपालों के बिना नहीं चल सकता है इसलिये वह प्रधान सुख हमें दीजिये उन तपस्वियों के इस प्रकार कहने पर धर्म को जानने वाला दुर्जय बोला कि तुम कौन हो ॥४५॥४६॥४७॥ वे बोले हम विद्युत- सविद्युत नाम वाले असुर हैं और इस समय तेरे द्वारा सज्जनों में श्रेष्ठ धर्म चाहते हैं। हे दुर्जय लोकपालों का सारा कर्म करने को हम तैयार हैं ४८॥४९॥ ऐसा कहने पर दुर्जय ने तत्क्षण उनको स्वर्ग में भेज लोक पाल पदवी देदी तब वे अन्तर्धान हो गये ॥५०॥ हे पृथ्वी ! उनका भी बड़ा कार्य और चरित्र होगा। महाराज दुर्जय मन्दिर के ऊपर नन्दन- वन के समान कुबेर का सुन्दर बगीचा देख हर्ष से उस बगीचे में घूमने लगा ॥५१॥५२॥ वहीं उसने सुवर्ण वृक्ष के नीचे दो कन्या देखीं जो कि अत्यन्त मनोहर रूप से युक्त अत्यन्य दर्शनीय थीं ॥५३॥ देखकर विस्मय से युक्त हुआ कि ये सुन्दर नेत्रों वाली बाला कौन हैं। ऐसा विचार करते जभी एक भी क्षण हुआ था तभी उसी वनी में दो तपस्वियों को देख कर राजा सहसा परम हर्ष को प्राप्त हुआ ॥५४॥५५॥ और जल्दी हाथी से उतर कर उन उन तपस्वियों को नमस्कार किया तथा उनके दिये हुये कुशासन पर बैठा ॥५६॥ तब उन तापसों ने पूछा कि तू कौन है, कहाँ से आया है, किसका है और किस लिये यहां स्थित है:दुर्जय हँस कर

बोला कि राजा सुप्रतीक प्रसिद्ध है मैं उसी का पुत्र दुर्जय हूं। पृथ्वी के सब राजाओं को जीतता हुआ यहां आया हूं, ये आप निश्चय जानें आप मेरे अनुग्रह की इच्छा से कौन यहां आये हो सो कहो ॥५७॥५८॥५६॥ तापस बोले हेतृ प्रहेतृ नाम वाले स्वायंभुव मनु के हम पुत्र हैं और देवताओं को जीतने मेरु पर्वत पर आये हैं ॥६०॥ वहां, हाथी, घोड़े, रथों युक्त हमारी सेना ने देवताओं की सैकड़ों हजारों सेना जीत ली थी ॥६१॥ वे देवता हमारी बड़ी भारी सेना और असुरों से जिन्हों के प्राण चले गये ऐसी अपनी सेना देख जहां हरि भगवान सोये हैं क्षीर समुद्र में उनकी शरण गये और नमस्कार पूर्वक कहने लगे ॥६२॥६३॥ हे देव ! हे हरि ! असुर श्रेष्ठों ने हमारी सारी सेना जीत ली है जिसके नेत्र विह्वल हो रहे हैं उस हमारी सेना की रक्षा करो ॥६४॥ हे केशव पहिले देवासुर संग्राम में भी आपने हमारी रक्षा की है क्रूर सहस्र बाहु के संग्राम में और कालनेमी के संग्राम में आपने हमारी रक्षा की है ॥६५॥ हे देवेश ? बहुत सेना से युक्त हो हेतृ प्रहेतृ नाम के असुर देव कण्टक स्वरूप इस समय भी हैं ॥६६॥ उनको मारकर हे जगत्पते ? हमारी रक्षा करो। ऐसा कहने पर नारायण देव विष्णु ने कहा कि मैं उनको मारने जाऊंगा। ऐसा सुन देवता मेरु पर्वत पर गये और मन से जनार्दन का स्मरण करने लगे उनके स्मरण करते ही भगवान् ने चक्र और गदा लेकर अकेले ही हमारी सेना में प्रवेश करके अपने शरीर को अपनी विभूति से एक, दश, सौ, हजार, लाख, करोड़ प्रकार से बना कर हमारी सेना के मध्य में स्थित हुआ ॥६७ ६८॥६६॥७०॥७१॥ जो कोई असुर हमारे बल के आश्रित था वह मरकर जमीन पर पड़ा दीखता था ॥७२॥ इस प्रकार माया से विश्व मूर्ति ने सारी सेना मारकर रणभूमि, मांस, रुधिर, ध्वजादियों से व्याप्त कर दी ॥७३॥ चक्र धारी भगवान् सारा चतुरंग बल मार कर हम

दोनों को ही शेष देख अंतर्धान हो गये ॥७४॥ तब भगवान का ऐसा प्रभाव जान हम आराधना के लिये उसी की शरण गये ॥७५॥ तू हमारे मित्र सुप्रतीक का पुत्र है ये दो हमारी कन्या हैं। हे राजन! हेतृ की सुकेशी नाम की कन्या है प्रहेतृ की मिश्रकेशी नाम की कन्या है इनको ग्रहण कीजिये ॥७६॥ हेतृ के ऐसा कहने पर दुर्जय ने अपनी भार्या बनाने निमित्त उन दोनों कन्याओं को धर्म से ग्रहण किया ॥७७॥ उनको प्राप्त कर राजा दुर्जय बहुत प्रसन्न हुआ और सेना सहित अपने राज्य की तरफ लौटा ॥७८॥ बहुत समय पीछे दो लड़के हुये। सुकेशी से प्रभव नाम का मिश्रकेशी से सुदर्शन नाम का पुत्र हुआ ॥७९॥ वह राजा दुर्जय पुत्र द्वय को प्राप्त कर कालान्तर में जंगल को गया ॥८०॥ वहां रहकर भयङ्कर वन जन्तुओं को मारने लगा एक समय निर्लेप निष्पापी मुनि की आश्रम में स्थित देखा ॥८१॥ जो कि महा भाग्यशाली तपोनिष्ठ ऋषि समूह का रक्षक पापियों का नाशक था और उसका नाम गौरमुख था ॥८२॥ उस गौरमुख का आश्रम निर्मल जलों से अत्यंत शोभायमान था, सुगन्धित वायु से महकता था, अच्छे अच्छे द्रुम- लताओं से व्याप्त था मानो आकाश से मेघ पृथ्वी पर आया हो ऐसी शोभा पारहा था श्रेष्ठ विमान की भांति उसका घर देदिप्यमान था ॥८३॥ जलती मुखाग्नि से आकाश को भी देदीप्यमान् करता हुआ सुन्दर शुद्ध सुगन्धित निवास स्थान से शोभायमान और शिष्यों से गायो गयो सामवेद की ध्वनि से सस्वर सा मालूम होता था सुन्दर तपस्वनियों और मुनि कन्याओं से युक्त था सुन्दर अनेक वृक्षों से फूले फूलों से सुगन्धित घर उस श्रेष्ठ आश्रम में था॥८४॥ इति वराह पुराणे आदि कृत वृतान्ते सृष्टि वर्णने दुर्जय चरिते श्री केदार प्रान्तीय काशीराम कृत भाषा टीकायाम् दशमो अध्यायः ॥१०॥

अथः एकादशोऽध्यायः

दोहाः— दुर्जय का सेना सहित, कीनो है सतकार।
ईश्वर से वर पाय कर, गोरे मुख ने अपार ॥

पुनर दुर्जय चरितम् – वराह ने कहा तदन्तर इस प्रकार गोरेमुख के आश्रम को देखकर राजा दुर्जय सोचने लगा कि इस रम्य आश्रम में प्रवेश कर तथा इस आश्रम के परम धार्मिक ऋषियों को देखूं विचार कर राजा ने उस आश्रम में प्रवेश किया ॥१॥२॥ तब धर्मात्मा गोरेमुख मुनि ने अत्यंत प्रसन्न हो कर राजा दुर्जय की पूजा स्वागतादि किया तथा वार्तालाप के पश्चात् महा मुनि गोरेमुख ने कहा कि हे नृप श्रेष्ठ अपनी शक्ति के अनुसार सेना सहित आपका भोजन में अपने ही यहाँ तय्यार करूंगा अतः घोड़ों को खुला छोड़ दीजिये राजा ऋषि के वचन सुन अपनी सेना सहित भक्ति पूर्वक ठहर गया ॥३॥४॥५॥ राजा सोचने लगा कि मेरे साथ पांच अक्षोहिणी सेना है ये तपस्वी किस प्रकार हमारे लिये भोजन तय्यार करेगा ॥६॥ उधर गोरेमुख भी राजा दुर्जय को निमंत्रण देकर सोचने लगा कि अब मैं इसको कहां से भोजन दूंगा ॥७॥ इस प्रकार सोचते हुये मुनि गोरेमुख के मन में हरि भगवान स्थित हुये ॥८॥ तब नारायण देव का मन से स्मरण कर गोरेमुख ने गंगा किनारे पर भगवान को प्रसन्न किया ॥६॥ पृथ्वी बोली हे भूधर ! किस प्रकार गोरेमुख ने भगवान प्रसन्न किये इस कौतुक सुनने की मेरी बड़ी अभिलाषा है ॥१०॥ वराह जी कहने लगे विष्णु के लिये पीताम्बर के लिये आद्य रूप के लिये, जल रूप के लिये, सर्वदा नमस्कार करता हूँ ॥११॥ सर्व व्यापक, जल शायी, क्षिति रूप, तेजसात्मा, तथा वायु रूप, व्योम रूप को नमस्कार हो तू ही सर्व प्राणियों का प्रभु है तू ही सबका हृच्छय कामदेव है ॥१२॥१३॥ तुम ही ओंकार हो तुम ही वषट्कार हो तुम सर्वत्र स्थित हो तुम सब देवों के

आदि हो और आपका आदि कुछ नहीं है ॥१४॥ तुम भू हो, भुव हो, स्व हो, जन हो, मह हो, तप हो, सत्य हो, तुम्ही में चराचर व्याप्त है ॥१५॥ तुम्हीं से सारे प्राणि हैं। तुम्हीं से सारा विश्व है। तुम्हीं से सारे ऋगादि हैं। तुम्हीं से सारे शास्त्र हैं। तुम्हीं से सारे यज्ञ प्रतिष्ठित हैं ॥१६॥ तुमसे सारे वृक्ष, तुम से सारे वीरुध, तुम्हीं से सारी वनौषधियां तथा तुम्हीं से पशु, पक्षि सारे हैं ॥१७॥ हे देव देव ! मेरा भी दुर्जय नाम वाला राजा अभ्यागत आया है उसका आतिथ्य करने को मैं प्रोत्साहित हूं ॥१८॥ हे देव देव ! हे जगत्पते आज मुझ भक्ति नम्र निर्धन के लिये अन्नादि संचय कीजिये ॥१९॥ हाथ से जिस जिस को स्पर्श करूं आंखों से जिस जिस को देखूं चाहे काष्ट, चाहे तृण, चाहे कंत हों, वे सारे ही चार प्रकार का अन्न हो जावें ॥२०॥ तथा और जो भी मैंने ध्यान किये हैं वे सब सिद्ध हो जावें हे परमेश्वर आपके लिये नमस्कार हो ॥२१॥ वराह ने कहा इस स्तुति से प्रसन्न होकर देव देव भगवान् ने उस मुनि को अपना रूप दिखाया ॥२२॥ और कहा कि हे विप्र ! अपनी मनोकामना कहो ऐसा सुन मुनि जभी अपनी आंख खोलता है तभी जनार्दन भगवान् पीताम्बर पहिने शंख, चक्र, गदा, पद्म हाथ में लिये स्ववाहन गरुड़ में स्थित होने पर भी बारह सूर्यों के समान प्रकाश वाले दिखाई दिये ॥२३॥२४॥ आकाश में यदि हजारों सूर्य एक दम उदय होवें और उनका जो प्रकाश होवे उतनी ही उन भगवान् की अनुपम कांति थी ॥२५॥ हे पृथ्वी ! विस्मय से उत्फुल्ल लोचन वाले मुनि ने अनेक प्रकार से प्रविभक्त सारा संसार एक जगह उन भगवान् में देखा ॥२६॥ अरु भगवान् को सिर झुका हाथ जोड़ कर बोला कि यदि मुझ भक्त को वर देने वाले केशव भगवान् हैं तो कल सुबह अपने घर जाने वाला ये नृपति दुर्जय आज अपने भृत्य और घोड़ों के सहित मेरे यहां भोजन करे

गोरेमुख के ऐसा कहने पर भगवान् ने उसको चित सिद्धि और सुन्दर कान्ति वाला एक मणि दिया ॥२७॥२८॥२६॥ उसको देकर भगवान् अंतर्धान हो गये गोरेमुख मुनि भी अनेक ऋषियों से सेवित अपने आश्रम में गया ३०॥ वहां जाकर मुनि सोचने लगा हिमालय के आकार वाला महाभ्र के समान ऊँचा चन्द्र किरणों के समान धवल शत भूमिक घर को स्मरण किया ॥३१॥ विष्णु के प्रसाद से मुनि ने वैसे ही हजारों, करोड़ों महल निर्माण किये ॥३२॥ जो कि प्राकार वाले थे जिनके समीप वगीचे बने थे जिन वगीचों में कोकिल कुल का मनोहर शब्द हो रहा था और भी विविध पक्षियों से सुशोभित था ॥३३॥ उन गृहोद्यानों में चम्पक, अशोक, पुनाग, नागकेशर आदि के पेड़ लगे थे तथा नाना जाति के वृक्ष लगे थे॥३४॥ हाथियों की हस्ति शाला घोड़ों की घुड़शाल तय्यार की गयी थी तथा विविध प्रकार का भोजन तैयार किया गया था ॥३५॥ भक्ष्य, भोज्य, लेह्य, चोस्य बहुत प्रकार से तय्यार किया तथा भोजन के लिये सुवर्ण पात्र भी तय्यार किये ॥३६ इस प्रकार मुनि ने स्मरण करने ही से सव तय्यार करके राजा दुर्जय को कहा कि सब सेना सहित महल में प्रवेश करो ॥३७॥ ऐसा कहने पर राजा ने पर्वतोमय उसके महल में प्रवेश किया तथा गृहान्तरो में भृत्य वर्गों ने प्रवेश किया ॥३८॥ तव उनके प्रवेश हो जाने पर गोरेमुख मुनि उस दिव्य मणि को ग्रहण कर राजा से कहने लगा ॥३९॥ हे राजन्! मैं आपके स्नानादि व्यवहार तथा रास्ते में घूमने के लिये खिलारिनियों तथा दासों को भेजता हूं ॥४०॥ ऐसा कह उस मुनि ने विष्णु दत्त मणि राजा के देखते ही एकान्त में स्थापित करदी ॥४१। उस मणि के स्थापित करते ही हजारों दिव्य रूप वाली औरत निकलीं ॥४२॥ जो कि सुकुमार यङ्गरागादि से युक्त थीं सुकुमार वयस्का थीं श्रेष्ठ थीं सुन्दर गोल-

मोल गालों वाली थीं सुचारु अंग वाली सुन्दर केश व सुन्दर नेत्रों वाली थी ॥४३॥ कोई सुवर्ण पात्रों को ग्रहण कर निकली चलने लगीं इस प्रकार योषिद्गण तथा भृत्य समूह निकला। उस राजा के सारे नौकर राजा का केवल भोजन और परिधानादि करते थे ॥४४॥४५॥ उन औरतों ने राज मार्ग से स्नान करना देखा और नौकरों ने उन गजगामिनियों का स्नानादि कृत्य देखा ॥४६॥ राजा के स्नान के समय तूर भेरि आदि अनेक प्रकार के बाजे बजने लगे और कुछ औरतें नाचने लगीं और कुछ इन्द्र के स्नान करते समय के समान गान करने लगीं एवम् दिव्योपचार से राजा ने स्नान किया ॥४७॥४८॥ फिर राजा विस्मय से सोचने लगा कि ये मुनि की सामर्थ्य है या मणि की ॥४६॥ एवम् स्नान कर उत्तम वस्त्र पहिन विधि से राजा ने नानाविधि भोजन किया ॥५०॥ उस मुनि ने जिस प्रकार राजा की पूजा की तथैव भृत्य जन का भी सत्कार किया ॥५१॥ जभी राजा ने नौकर सेना वाहनादि सहित भोजन किया तभी अरुण कान्ति भगवान् सूर्य्य भी अस्त गिरि पर पहुंच गये ॥५२॥ तत्पश्चात् शरद चाँद की उज्वल चांदनी की छटा से रात्रि सुशोभित हुई सौम्य गुणों से युक्त भी रोहिणी धव चन्द्रमा सुसंगत राग करने लगा ॥५३॥ शुक्रतारा राहु के साथ उदय हुआ तथा बृहस्पति भी उन्हीं के साथ उदय हुआ अब बृहस्पति दुर्जन संगति होने से शोभा को प्राप्त न हुआ क्योंकि देह धारियों की मति स्वभाव योग से ही शोभा पाती है यानी जैसे स्वभाव वाले का साथ करो वैसा ही हो जाता है अथवा शुक्र ही अच्छे वंश में पैदा होने पर भी दैत्य गुरु तथा राहु के साथ उदय होने से शोभा को प्राप्त नहीं हुआ ॥५४॥ मंगल भी अपनी लालिमा को त्याग रहा है राहु भी प्रकाशमान हो रहा है चन्द्रमा की किरणें श्वेत हैं जगत् का स्वभाव देव राक्षसों से ठीक ठीक ही है क्योंकि बल पराक्रम

से ही स्वभाव हुआ करता है चन्द्रमा बलवान होने से उसके सामने अन्य मंद कान्ति हो गये थे ॥५५॥ सूर्य के अग्र सिद्धान्त कथा के समान निर्मल शनैश्चर किरणों में केतु ने भी अन्धकार नहीं किया क्योंकि उस समय दुर्जनों की मति भी निर्मल हो गई थी ॥५६॥ राजा चन्द्रमा का पुत्र बुध जगत् की उत्र बुद्धि करता हुआ अपने ही कर्मों से सुशोभित हुआ क्योंकि बुद्धि का मालिक बुध ही है चन्द्र पुत्र होने से देव पंक्ति अलग होने पर भी भूतीक हुआ अतः बुध नित साधु समित होवे ॥५७॥ आकाश में स्थित केतु ने आकाश कपिल वर्ण का किया यद्यपि केतु ने काला वर्ण करना था परन्तु सज्जनों की सभा में दुर्जन अपना शुद्ध कर्म कौशल नहीं कर सकते ॥५८॥ चन्द्र किरणों से भापित भी सुकुल की सुन्दर अवलायें पद पद पर रति प्रसाद को नहीं प्राप्त हुई क्योंकि सज्जनों की समुन्नति महान सुयोग से होती है ५६॥ त्रिदोप संक्रान्ति करने वाले वरुण राजा के पुत्र ने कौशिक सन्निवेशित सूर्यजा चिर काल तक जीती है वेद कर्म अन्यथा नहीं होता ॥६०॥ सप्तर्षि ध्रुव तारे शिशुमार चक्र को घेरे हुये हैं जिस ध्रुव ने पहिले अपासन के लिये हरि की आराधना की तथा विष्णु स्मरण से बुद्धि और लक्ष्मी से भी दुर्लभ स्थान चिरकाल के लिये प्रकाशित किया है ॥६१॥ इस प्रकार भृत्य वर्ग तथा गज घोड़े वन्दियों के भोजन वसन अलङ्कारादि से गोरेमुख के शुभ आश्रम में राजा दुर्जय की सुख पूर्वक रात्रि व्यतीत हुई ॥६१॥ श्रेष्ठ रागों से चित्रित सुन्दर नीवार से वेष्टित स्वरूप अवलाओं के ठहरने से भंग भासुर श्रेष्ठ पलंगे उन घरों में थीं ॥६३॥ घर में आये हुये राज्य के श्रेष्ठ नौकरों को भी विदा कर राजा श्रेष्ठ स्त्री संयुक्त स्वर्गस्थ इन्द्र के समान सोया ॥६४॥ तथा उस राजा के नौकर भी उस ऋषि के प्रभाव से सुख पूर्वक सोये ॥६५॥ तब रात्रि के व्यतीत होने पर वे स्त्रियां और वे घर अंतर्धान हो गये वे बड़े

मोल के श्रेष्ठ आसनादि सभी छिप गये। राजा देखकर विस्मय युक्त हो सोचने लगा। ६६॥६७॥ किस प्रकार ये मणि मेरे लिये होवे बार बार सोचने पर जान कर राजा दुर्जय ने विचार किया कि इसकी चिंतामणि में हरूंगा तब राजा आश्रम से बाहर जाने को तय्यार हुआ ॥६८॥६९॥ बल वाहनों सहित आश्रम के कुछ दूर जाकर ऋषि गोरेमुख की मणि मांगने को विरोचन नाम का मंत्री भेजा वह मन्त्रि ऋषि के पास जाकर मणि को मांगने लगा।७०।७१। हे मुने! रत्नों का पात्र राजा है अतः मणि राजा को दीजिये मन्त्रि के ऐसा कहने पर क्रोधित हो गोरेमुख बोला कि ॥७२॥ प्रति ग्राही तो ब्राह्मण होते हैं राजा तो देने वाला होता है तू राजा होकर दीन के समान क्यों मांगता है ॥७३॥ यह यथावत दुराचारी राजा दुर्जय के पास जल्दी जा कर कह देना यह कहने पर लोग तेरी निन्दा नहीं करेंगे ॥७४॥ सन्देश पाकर दूत राजा के पास आया और ब्राह्मण का कहा सन्देश सुनाया ॥७५। राजा गोरेमुख के वचन सुन अत्यंत क्रोधित हो कहने लगा कि हे नील! जल्दी उसके पास जाओ और उस गोरेमुख की मणि लेकर जल्दी आओ ॥७६॥७७॥ राजा की आज्ञा पाकर नील बहुत सेना समूह सहित गोरेमुख के आश्रम में गया ॥७८॥ वहां अग्नि होत्रशाला में रखी हुई मणि को देख नील रथ से उतर कर पृथ्वी पर ठहरा ॥७९॥ परम दारुण नील के रथ से उतरने पर क्रूर बुद्धि से उस मणि से शस्त्र धारी पुरुष निकले। ८०॥ जो कि रथ, ध्वजा, घोड़ों से युक्त थे समान स्वरूप वाले थे ढाल तलवार धारी थे सधनुष्क थे सतूवीर थे परम दुर्जय योधा थे ॥८१॥ उस मणि को भेदन कर महाबल शालि असंख्य योधा निकले उनमें प्रधान महाशूर पन्द्रह थे ॥८२॥ हे पृथ्वी! उनके नाम कहता हूं सुन सुप्रभ १, दीप्त तेजा २, सुरश्मि ३, शुभदर्शन ४, ॥८३॥ सुकान्ति ५, सुन्दर ६, सुन्द ७,

प्रद्युम्न ८, सुमना ९, सुभ १०, सुशील ११, सुखद १२, मम्भु १३, सुदान्त १४, शोम १५, मणि से निकले ये पन्द्रह नायक थे ॥८४॥ बहुत सेना युक्त विरोचन को देख अनेक प्रकार के अस्त्र- शस्त्र लेकर निरन्तर लड़ने लगे ॥८५॥ उनके सुवर्ण समान धनुष सुन्दर सोने के पुङ्ख वाले सरों को छोड़ते थे उनके खड्ग भयङ्कर गिरते थे अनेक तोप, शूल गिरते थे ॥८६॥ रथ रथ से हाथी हाथी से घोड़ा घोड़े से तथा अन्यग्र पराक्रम शील पैदल सेना पैदल सेना से भिड़कर लड़ने लगे ॥८७॥ तथैव अनेक द्वन्द युद्ध होने लगे आपस में लड़ने से पसीने के बजाय रुधिर ही गिरने लगा निश्चय से रास्ता भी लोहु लुहान हो गया ॥८८॥ इस प्रकार भयङ्कर युद्ध होने पर युद्ध में राजा का मन्त्रि सब सेना सहित मरकर विचेत हो यमराज के घाट पहुंचा ॥८९॥ दुर्जय राजा मन्त्रि के मरने पर सेना सहित आया और अति तीव्र प्रतापवान राजा दुर्जय सुन्दर घोड़ों से जुते हुये रथ में बैठे मणिजों से लड़ने लगा ॥९०॥ तब राजा की उस युद्ध में हार होने लगी हेतृ प्रहेतृ भी युद्ध में लड़ते हुये जवांई को सुनकर बड़ी सेना सहित आये हे पृथ्वी ! उस सेना में जो दैत्य थे उनके नाम सुन ॥९१॥९२। प्रघस, विघस, संघस, अशनि, सप्रभ, विद्युतप्रभ, सुघोम, उन्मताच, भयङ्कर अग्निदत, अग्नि तेजा, बाहुशक्र, प्रतर्दन, विरोध, भीमकर्मा, विप्रचिति, ॥९३॥९४। श्रेष्ठ आयुध लिये हुये ये पन्द्रह असुर थे और वे हरएक एक एक अक्षौहिणी सेना लिये हुये थे ॥९५॥ दुरात्मा दुर्जय राजा की महामायावी असुर सेना मणिजों से लड़ने लगी ॥९६॥ दीप्त तेजा ने विघस को तीन वाणों से भेदन किया सुरश्मि ने दश वाणों से संघस को भेदन किया असनिप्रभ को पांच वाणों से सुभदर्शन ने भेदन किया सुकान्ति ने विद्युतप्रभ को सुन्दर ने सुघोस को भेदन किया ॥९७॥९८॥ सुन्द ने पांच वाणों से उन्मताच को

भेदन किया और उसका धनुप भी तीखे बाण से काट डाला ॥६६॥ सुम्ना ने अग्निद्रष्टा को सुवेद ने अग्नि तेजस को और सुनल ने वाहु और शक्र को, सुवेद ने प्रतर्दन को भेदन किया ॥१००॥ परस्पर युद्ध होने से अस्त्र लाघवता पूर्वक मणिजों ने और भी यथा संख्य दैत्य मारे ॥१०१॥ जभी आपस में उनका घोर संग्राम हो रहा था समिधा कुशादि लेकर गौरेमुख आया वह आश्चर्य युक्त भय दायक संग्राम को तथा वहु सेना युक्त राजा दुर्जय को देखकर दरवाजे पर ही चिन्ता व्यग्र हो गया। और बैठकर मणि का ही यह कारण है जान लिया ॥१०२॥ १०३ ।१०४। मणि के वहाने ही ये भयंकर संग्राम हो रहा है जानकर गौरेमुख मुनि हरि को स्मरण करने लगा उसके स्मरण करने ही से भगवान् पीताम्बर पहिने गरुड़ पर बैठे उसके सामने आये और कहने लगे कि मैं तेरा क्या कार्य करूँ ॥१०५॥ वह ऋषि हाथ जोड़कर भगवान् को कहने लगा कि सेना सहित इस दुर्जय को मारो ॥१०६॥ ऐसा कहने पर भगवान् ने अग्नि के समान तेज वाले चक्र से असुरों से युक्त दुर्जय की उस सेना को पल भर में भस्म कर दिया ऐसा करके भगवान् गौरेमुख से कहने लगे कि निमिष मात्र में दानव कुल का इस जंगल में संहार हुआ अतः इसका नाम नैमिपारण्य होगा ॥१०७॥ १०८। १०९॥ और इन नैमिपारण्य में ब्राह्मणों का निवास होगा तथा मैं यज्ञ पुरुष भी सर्वदा यहां रहूंगा ॥११०॥ और तू इन नायकों की हमेशा पूजा करते रहना सत्य युग में ये मणिज नाम के राजा होंगे ॥१११। ऐसा कहकर भगवान् अंतर्धान हो गये तथा गौरेमुख भी परम हर्षित हो सुख पूर्वक अपने आश्रम में रहने लगा ॥११२॥ इति वराह पुराणे आदि कृत वृतान्ते दुर्जय चरितम् श्री केदार प्रान्तिय काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम एकदशोऽध्यायः ॥११॥

अथ: द्वादशोऽध्यायः

दोहा:— भजन किया रघुनाथ का, चित्रकूट में जाय ।
ईश में नृप लीन हुआ, ब्रह्म ज्ञान को पाय ॥

वराह जी कहने लगे महायुद्ध में भगवान् के चक्र से मारी सेना को जल गई सुन शोकाकुल हो सोचने लगा ॥१॥ सोचते सोचते राजा को ज्ञान हुआ कि चित्रकूट में भगवान् राघव कहे जाते हैं ॥२॥ इसलिये वहां जाकर जगतपति हरि की नामों से स्तुति करूंगा ऐसा विचार कर राजा चित्रकूट पर्वत पर गया और महा पुण्य दायक स्तोत्र पढ़ने लगा ॥३॥४॥ दुर्जय कहने लगा नर नाथ राम को, अच्युत को, कवि को, पुराण को, त्रिदशारि को, शिव स्वरूप को, प्रभव को, महेश्वर को, शरणागत पालक को, लक्ष्मी धारण करने वाले को, तथा रमेश को, हमेशा नमस्कार करता हूं ॥५॥ हे देव ! आप हमेशा समस्त तेजसों के तेज करने वाले हो, समस्त रूप धारण करने वाले हो, पृथ्वी में आप पांच गुणों से रहते हो, जल में चार गुणों से, और तेज में तीन गुणों से रहते हो॥६॥ वायु में दो गुणों से, आकाश में शब्द गुण से प्रतिष्ठित रहते हो आप ही सूर्य्य, चन्द्र, अग्नि स्वरूप हो ये सारा संसार आप ही में लीन है ॥७॥ जिससे सारा संसार आप ही में रमण करता है अतः जगत् प्रतिष्ठित आपका नाम राम हुआ आपकी स्मरण रूपी नौका वाला मनुष्य दुखतर नरक्रों से व्याप्त तथा भौंरे, मीन, ग्रह, नक्रों से भीषण संसार सागर में नहीं डूबता है तपोवनों में आपका नाम स्मरण किया है हे हरे ! वेदों के नष्ट होने पर आप हमेशा मत्स्या अवतार धरते हो ॥८॥ ॥९॥ हे विभो ! युग क्षय में आप अग्नि रूप होते हो तथा हे माधव युग युग में सिन्धु मथन के समय आप कछुये का रूप धारण करते हो ॥१०॥ आपके समान और कोई नहीं है आप ही मे यह विश्व विस्तृत है अखिल लोक सारी दिशायें आप ही

से विस्तृत हैं ॥११॥ किस प्रकार आद्य परम धाम आपको छोड़ दूसरे की शरण जाऊँ पहिले आप एक थे तब महतत्व अहम फिर अग्नि स्वरूप तथा जल, वायु, आकाश, मन, बुद्धि आदि ये सारे आप ही से हुये सबकी उत्पत्ति स्थान आप ही हो ॥१२॥ आपने यह विश्व विस्तृत किया आप सनातन पुरुष हो हे समस्त विश्व के ईश्वर ! हे विश्व मूर्ते, हे सहस्र बाहो, हे देव देव आप की जय हो हे महानुभाव राम के लिये नमस्कार हो इस प्रकार स्तुति करने पर भगवान् ने प्रसन्न हो राजा को अपना दर्शन दिया और बोले ॥१३॥१४॥ हे राजन् ! वर मांग– राजा भगवान् का वचन सुन ससम्भ्रम युक्त हो भगवान् को प्रणाम करके बोला कि हे देवेश्वर जो आपका प्रधान स्वरूप है उसमें मुझे लय कीजिये ॥१५॥ ऐसा कहने पर राजा तत्क्षण असुरघन मूर्ति भगवान में लीन हो गया अनेक कर्म काण्डों से ध्यान से भगवान् का स्मरण नामोच्चारण करता हुआ वह राजा मुक्ति को प्राप्त हुआ ॥१६॥ वराह जी कहने लगे हे पृथ्वी ! ये मैंने पुराण पुरुषोत्तम की महिमा वर्णन की हे भगवान् की महिमा का वर्णन कोई हजार मुखों से हजार वर्षों में भी समाप्त नहीं कर सकता ॥१७॥ हे भद्रे उद्देश से संस्मृत मात्र मैंने यह कहा । समुद्र जलावगाहन के समान उद्देश से संस्मृत मात्र ही मैंने कहा है ॥१८॥ स्वयंभू ने ब्रह्मा ने अकुतो भय नारायण ने भी कहा कि हमसे असंख्य है इसका आद्य रूप जानना बहुत कठिन है ॥१९॥ समुद्र के रेत की संख्या हो सकती है पृथ्वी की धूलि कण गिने भी जांय तब भी भगवान के पराक्रम की गणना नहीं हो सकती ॥२०॥ हे पृथ्वी ! यह नारायणका अंस मैंने कहा यह सत्ययुग का वृतान्त है और क्या सुनना चाहिये है ॥२१॥ इति वराह पुराणे आदि कृत वृतान्ते दुर्जय चरिते नारायणैश्वर्य्ये भाषा टीकायाम् द्वादशो अध्यायः ॥१२॥

अथ त्रयोदशोऽध्यायः

दोहाः— किया मारकण्डेय ने, पित्रोधार परचार ।
गोरेमुख कल्प श्राद्ध का, समझा सकल विचार ॥

अथ श्राद्ध कल्पः पृथ्वी कहने लगी यह मुझे बड़ा आश्चर्य है कि ऐसा देख गोरेमुख मुनि तथा वे मणिज किस श्रेष्ठ फल को प्राप्त हुये ॥१॥ परम धार्मिक श्रीमान् गोरेमुख मुनि कौन था? हरि के कर्म देख उसने क्या किया ॥२॥ वराह जी ने कहा निमिष मात्र में भगवान् से किया दैत्य संहार कर्म देखकर उन्हीं भगवान् की आराधना करने की इच्छा से गोरेमुख मुनि परम दुर्लभ प्रभास नाम तीर्थ में गया जिस चन्द्रमा के तीर्थ में तीर्थ चिन्तक दैत्य नाशक देवता को वताते हैं ॥३॥४॥ दैत्य सूदन हरि की आराधना करने लगा आराधना करते उसके सामने महायोगी मारकण्डेय मुनि आया ॥५। गोरेमुख ने दूर से मारकण्डेय को आते देख परम हर्ष युक्त हो भक्ति पूर्वक अर्घपाद्य से उनकी पूजा की ॥६॥ और कुशासन पर विठला कर पूछने लगा कि हे मुनि शार्दूल! शिक्षा दो क्या करूं ॥७॥ ऐसा कहने पर महा तपा मारकण्डेय ऋषि प्रेम वाणि से गोरेमुख को कहने लगा ॥८॥ मारकण्डेय ऋषि ने कहा सब देवताओं में आद्य नारायण श्रेष्ठ हैं नारायण से ब्रह्मा हुआ ब्रह्मा ने मन से सात मुनियों को रचा ॥६॥ परमेष्ठी ने उनको कहा कि मेरा यजन करो परन्तु वे सातों आत्मा से आत्मा ही का यजन करने लगे ये श्रुति है ॥१०॥ ब्रह्मा ने उनको शाप दिया कि जिससे इन्होंने मेरी आज्ञा उल्लंघन रूपी बड़ा व्यभिचार किया है अतः निश्चय से सबके सब ज्ञान भ्रष्ट हो जायेंगे ॥११॥ अपने पुत्रों को ब्रह्मा के ऐसा शाप देने पर वे सातों जल्दी वंश वर्द्धक पुत्रों को पैदाकर स्वर्ग को गये ॥१२॥ तब उन ब्रह्मवादियों के स्वर्ग जाने पर उनके पुत्र श्राद्धदान से निरन्तर तृप्त करने लगे ॥१३॥ वे ब्रह्मा के सातों मानस पुत्र

वैमानिक हैं और अपने पुत्रों का मन्त्रोक्त पिण्ड दान देखते रहते हैं। १४॥ गोरेमुख कहने लगा– हे ब्रह्मण्ड मारकण्डेय जो पितर हैं और जितने समय तक रहते हैं और पितृ गण कितने हैं जो वहां रहते हैं सो कहो ॥१५॥ मारकण्डेय कहने लगे– देवताओं का सोम बढ़ाने वाले मरीच्यादि सात स्वर्ग में रहते हैं और वही पितर कहे हैं। १६॥ चार मूर्तिवान हैं और तीन अमूर्ति मान हैं उनकी लोकरचना कहूंगा तू सुन। १७॥ सन्तानक लोगों में देवताओं के देदीप्यमान पितर रहते हैं देवता उनका यजन पूजन करते रहते हैं ॥१८॥ ये लोक से भ्रष्ट हो सनातन लोकों को प्राप्त होते हैं फिर सैकड़ों युगों के बाद ब्रह्मवादी होते हैं ॥१९॥ वे फिर उस स्मृति को प्राप्त कर अनुत्तम साद्य योग को पुनरावृत्ति दुर्लभ शुद्ध योग को प्राप्त करते हैं ॥२०॥ योगियों के बल से और श्राद्ध में यजन करने से ये सारे पितर योगियों के योग को बढ़ाने वाले होते हैं ॥२१॥ हे योगिराज गोरेमुख! इसलिये योगियों के लिये श्राद्ध देने चाहिये। ये सोमरस पीने वालों का अनुतम प्रथम सर्ग है ॥२२॥ ये वे मरीच्यादि एक शरीर वाले हैं। भूरलोक वासियों का स्वर्गलोक निवासी याज्य हैं और उनके ब्रह्मपुत्र मरीच्यादि याज्य यानी पूज्य पितर हैं और उनके मरुदगण याज्य हैं और उन कल्प वासी संज्ञा वालों के जनलोक वासी याज्य हैं और उनके सनकादिक याज्य हैं और उनके भी तप में स्थित वेराज याज्य हैं उनके सात गण कहे हैं। इतनी ही पितृ सन्तति है ॥२३॥२३॥८५॥ प्रथक प्रथक वर्णों का उनका भी यजन करना चाहिये और शूद्र वर्णत्रय की आज्ञा से सब पितरों का यजन करे ॥२६॥ शूद्र के शूद्र जाति के पितर अलग हैं। हे ब्रह्मन! मुक्त भी चेतनक पितरों में नहीं दीखते हैं ॥२७ विशेष शास्त्र दृष्टि मे और पुराणों के देखने से इस प्रकार कहे गये ऋषियों के शास्त्रों से स्वसंभव याज्यों को जानकर

स्वयम् ब्रह्मा ने सृष्टि में पुत्रों की स्मृति प्राप्त कर वे भी ज्ञान से निर्माण को प्राप्त हुये ॥२८ २९॥ वस्वादियों के कस्यपादि वर्णों केवासनादि सामान्यता से गन्धर्वादियों को भी जानना चाहिये ॥३० हे महामुने ! ये पित्रिक सर्ग उद्देश तुमसे कहा है इसका करोड़ों वर्षों में भी अन्त नहीं हो सकता ॥३१॥ अथः श्राद्ध कालाः हे द्विजो तम ! अब श्राद्ध काल कहता हूं तू सुन द्विज के पास श्राद्ध योग्य द्रव्य के आने पर भली भांति जानकर संक्रान्ति में व्यतिपात तथा अयनों में श्राद्ध करे ॥३१॥३३॥ विश्वपत संक्रान्ति के दिन तथा सूर्य्य चन्द्र- ग्रहण होने पर तथा सारी ही संक्रतियों में श्राद्ध करना चाहिये ॥३४॥ ग्रहों और नक्षत्रों के पीड़ित होने पर दुष्ट स्वप्न होने पर तथा नई धान होने पर श्रद्धा पूर्वक श्राद्ध करे ॥३५॥ अमावस्या के दिन आर्द्रा, विशाखा, स्वांति, नक्षत्र होने पर श्राद्ध करने से पितर आठ वर्ष में तृप्त होते हैं ॥३६॥ अमावस्या के दिन पुष्य पुनर्वसु तथा रोद्रे नक्षत्र आने पर श्राद्ध करने से पितर बारह वर्ष तक तृप्त होते हैं ॥३७॥ धनिष्ठा अजप कपाद तथा सतविषा नक्षत्र अमावस्या के दिन मिलना पितरों की तृप्ति कारक है उस दिन को देवता भी मुश्किल से प्राप्त करते हैं ॥३८॥ अक्षय फल चाहने वाले मनुष्य इन नौ नक्षत्रों में से किसी के भी अमावस्या संयुक्त होने पर अवश्य श्राद्ध करें क्योंकि उसका पुन्य करोड़ों वर्षों तक भी समाप्त नहीं होता ॥३९॥ अब पितरों का दूसरा श्राद्ध काल रहिस्य कहते हैं जो कि पुन्य दायक है वैसाख की तृतीया, कार्तिक शुक्लं पक्ष की नवमी में, भादों कृष्ण पक्ष की त्रयोदशी में, माघ की पूर्णिमा में सूर्य- चन्द्र के उपप्लव में तथा वैसाख, भादों, कार्तिक माघ की अष्टमी में और उत्तरायण दक्षिणायण में तिल मिश्रित जल भी निरन्तर जो मनुष्य पितरों को देता है उसने मानो हजारों वर्षों तक श्राद्ध किया है। इस रहस्य को पितर कहते

हैं ॥४०॥४१॥४२॥ माघ अमावस्या के दिन सतविषा नक्षत्र का योग पितरों को तृप्ति कारक है और जन्मान्तर के पुन्य से यह योग मिटता है ।४३॥ और उसी दिन धनिष्टा नक्षत्र आवे तो उस कुल के मनुष्यों से दिया हुआ जल अन्न पितरों को अयुत वर्षों तक तृप्त करता है ॥४४। और माघ अमावस्या के दिन पूर्वा भाद्रपदा नक्षत्र यदि आवे तो उस समय जो पितरों को श्राद्ध देता है उसके पितर परम तृप्ति को प्राप्त करते हैं और युग पर्यन्त सुख की नींद सोते हैं ॥४५॥ गंगा में सतलज में विपासा में सरस्वति में नैमिषारण्य में गौमति में गौ आदि का पूजन करता है वह पितरों के समग्र अशुभों को दूर करता है ॥४६। पितर फिर यह कहते हैं कि कवत्रियोदशी संयुक्त मघा में तनपादियों से दिये हुये शुभ तीर्थ जल से हम तृप्ति को प्राप्त करेंगे ॥४७॥ चित वित विशुद्ध होवे शुभ कहा हुआ समय हो कही गयी विधि हो पात्र हो परम भक्ति हो तो मनुष्यों को अभिवांछित फल मिलता है।॥४८॥ अथः पितरों का गीतः— हे गोरेमुख! तथा अब पितृ गीतों को ध्यान देकर सुन जिसको सुनकर मनुष्य शुद्धात्मा हो जाता है ॥४६॥ हमारे कुल में मतिमान धन्य मनुष्य भी होगा जो कि वित साध्य न करता हुआ हमें पिन्ड दान देगा ॥५०॥ रत्न, वस्त्र, महायान सब कुछ वसुभोगादिक ऐश्वर्य्य होने पर हमारे निमित ब्राह्मणों को देगा ॥५१॥ अथवा भक्ति से नम्र बुद्धि वाला कहे समय पर यथाशक्ति अपने ऐश्वर्य्य के अनुसार अन्न से ब्राह्मण श्रेष्ठों को भोजन करवे ॥५२॥ अथवा अन्न दान करने को असमर्थ अपनी शक्ति से वन्य शाक ान वन का शाक ही देवे तथा स्वल्प दक्षिणा देवे ।५३॥ और तना भी न कर सके तो काले तिलों को हाथ से ग्रहण कर केसी ब्राह्मण को प्रणाम करके दे देवे ॥५४॥ अथवा भक्ति तत्पर ो तिलों से सात-आठ जल की अञ्जली हमारे निमित देगा ॥५५॥

अथवा कहीं से घास प्राप्त करके हमारी निमित भक्ति से गायों को ।।५६।। सर्वा भाव होने पर वन में जाकर कन्दमूल देखता हुआ सूर्यादि लोकपालों के लिये यह ऊँचे से पढे कि मेरे पास न वित है, न धन है, और न कुछ श्राद्ध योग्य वस्तु है अतः पितरों को नमस्कार करता हूं। आकाश में मेरे ये दोनों हाथ फैलाये हैं। इन्हीं से पितर तृप्त हो जावें ।।५७।।५८।। भावा भाव निमित्त पितरों का यह गीत है इनके कहे अनुसार जो करे उसने श्राद्ध कर लिया समझो ।।५६।। इति वराह पुराणे आदि कृत वृतान्ते श्राद्ध कल्पो नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम् त्रयोदशोऽध्यायः ।।१३।।

अथः चतुर्दशोऽध्यायः

दोहाः— इस चौदस अध्याय में, श्राद्ध विचार विकास ।
कीनो मृकंड सूनु ने, भली भांति प्रकास ।।

अथ श्राद्ध केतन योऽयायोग्य। ब्राह्मणादि निरूपण । मार्कंडेय कहने लगा हे विप्रर्षि गौरमुख ! यह मुझे पहिले ब्रह्म-पुत्र सनन्दन ने कहा है उसे इस समय सुनाता हूँ तू सुन ।।१।। प्रातः माध्यन्दिन, सायम् ये तीन सवन करने वाला अर्थ्वयु घी, शहद, मिश्री ये तीन मधु वाला त्रिसुपर्ण और शिक्षा कल्प, व्याकरण, नैरुक्त, छन्द, ज्योतिष इन छवेदांगों को जानने वाला षडङ्ग वेत्ता पुरुष, ऋत्विज को भानजा, दोहित्र तथा ससुर को श्राद्ध में बुलावे ।।२।। जामाता को, मातुल को, तपोनिष्ठ ब्राह्मण को, पंचाग्नि में अभिरत को, शिष्य को, श्राद्ध में निमन्त्रित करे ।।३।। सम्बन्धियों को मातृ पितृ भक्त को श्राद्ध में बुलावे तथा मित्रद्रोही कुनखी काले दान्त वाले ब्राह्मण को श्राद्ध में नबुलावे । कन्या दूषक को, आग लगाने वाले को, सोम विक्रेता को, अभिशप्त को, तथा चोर को, चुगली खोर को, ग्राम याजक को, श्राद्ध में निमन्त्रित न करे ।।५।। वेतन लेकर अध्यापको करने वालों को,

सूतकाध्यापक को परपूर्वापति को, माता पिता के अरक्षक को, वृपलि सुति पोष्य को, वृपलि पति को तथा देवक को श्राद्ध में निमन्त्रित न करे ॥६॥७ अथः निमन्त्रण आदि- विद्वान मनुष्य श्राद्ध से पहिले दिन श्रेष्ठ ब्राह्मणों का निमन्त्रण करे ब्राह्मणों का निमन्त्रण कर पीछे अपने आप आये हुये यतियों को भी भोजन करावे ॥८॥ घर में आये ब्राह्मणों को पाद प्रचालनादि पूर्वक भोजन करावे हाथ में पवित्री ले आचमन किये ब्राह्मणों को आसन्न पर बिठलावे ॥९॥ अथः ब्राह्मण संख्यादि- पितरों के निमित ब्राह्मणों की विषम संख्या होनी चाहिये देवताओं की संख्या एक भी हो सक्ती है अथवा एक पितरों के निमित और एक देवताओं के निमित ब्राह्मण बुलावे ॥१०॥ मातामह यानी नाना का श्राद्ध वैश्वदेव पूर्वक करे वा भक्ति सम्पन्न हो तन्त्रोक्त विश्वदेवा करे। ११॥ मातामह श्राद्ध में ब्राह्मण को पूर्व मुख कराकर खिलावे। देवताओं के श्राद्ध में पूर्व- पश्चिम दोनों ओर मुख कराकर खिला सकता है और प्रपिता महादियों के श्राद्ध में उत्तर मुख ब्राह्मण को भोजन करावे ॥१२ कोई उनका अलग अलग श्राद्ध कहते हैं और कोई महर्षि एक जगह एक ही पात्र से बतलाते हैं।।१३॥ अथः श्राद्ध प्रकारः- आसन के लिये कुशादिक देकर अर्घादि विधान से पूजकर ब्राह्मणों की आज्ञा पूर्वक देवताओं का आवाहन करे ॥१४। विधि को जानने वाला मनुष्य यवाम्बु से देवताओं को अर्घ देकर, यथा विधि सुगन्धित, दीप देवे ॥१५॥ पितरों के लिये सब कार्य अपसव्य होकर करे ब्राह्मणों की आज्ञा पाकर आसन के लिये द्विधाकृत कुशाओं को देवे ॥१६॥ विद्वान मनुष्य पितरों का आवाहन मन्त्रोच्चारण पूर्वक करे तिल के जल से अर्घ्यादि देवे ॥१७। अथ तन्त्र वहां पर अतिथि के आने पर- यदि उस समय बहुत दूर से चलकर आया हुआ अन्न की अभिलाषा से अतिथि

आजावे तो ब्राह्मणों की आज्ञा पाकर उसका भी पूजनादि करे ॥१८॥ योगिजन अनेक रूप से जो कि पहिचाने नहीं जाते मनुष्यों की भलाई के वास्ते इस पृथ्वी पर विचरते रहते हैं ॥१६॥ इसलिये श्राद्ध में आये हुये अतिथियों की विधिवत पूजा करे। हे ब्राह्मण श्रेष्ठ ! अतिथियों की पूजा न करने पर वे अतिथि समग्र श्राद्ध क्रिया के फल को नष्ट कर लेते हैं ।२०॥ अथ होमविधिः ब्राह्मणों की आज्ञासे व्यञ्जन और क्षार रहित अन्न की तीन आहुति अग्नि में देवे ॥२१॥ पहिली आहुति अग्नये कव्य वाहनाय कहकर देवे । पितृमते सोमाय कहकर देवे ॥२२॥ तीसरी आहुति वैवस्वत के लिये देवे आहुति से बचा हुआ अल्पान्न ब्राह्मणों के पात्रों में गेर देवे॥२३॥ अथः भोजनम् श्रेष्ठ अत्यंत रुचिकर अर्थात खीर मालपुवे आदि शुद्धता से पका हुआ अन्न ब्राह्मणों को परोस कर कोमल वाणि से कहे कि हे ब्राह्मणो ! प्रेम से भोजन कीजिये ॥२४॥ ब्राह्मणों को भी प्रसन्नता से मौन धारण कर प्रेम सहित खाना चाहिये और खिलाने वाला भी भक्ति से बार बार पूछकर परोसता जावे ॥२५॥ अथः अभि श्रवणः– रक्षोघ्न मन्त्र पढ़े तिलों से पृथ्वी का आमन्त्रण करके वही ब्राह्मण आज्यपादि पितर समझे ।२६॥ पिता पितामह, प्रपितामह, जो कि होमाध्यासित मूर्ति हैं तृप्ति को प्राप्त हो जावें ॥२७। मेरा पिता, पितामह, तथा प्रपितामह जो कि ब्राह्मणों के शरीर में स्थित हैं आज तृप्त हो जावें ।२८॥ मैंने जो पृथ्वी में पिण्ड दिये हैं उनसे पिता, पि तामह, प्रपितामह तृप्त हो जावें ॥२६॥ पिता, प्रपितामह मेरे भक्ति से कहे वाक्य से तृप्त हो जावें ॥३०॥ मातामह तृप्त हो जावें पिता तृप्त हो और भी जो कोई हैं सब तृप्त हो जावें विश्वेदेवा तृप्त हो जावें और राक्षस नष्ट हो जाँय ॥३१॥ समस्त यज्ञों का नेता यज्ञेश्वर भोक्ता अव्ययात्मा हरि ईश्वर यहाँ स्थित होवें उनके सानिध्य मात्र ही असुर राक्षस शीघ्र दूर हो जाँय ॥३२॥

अथः विकिरान्न दानादि- ब्राह्मणों के तृप्त होने पर पृथ्वी पर अन्न बखेरे और उनके आचमन के लिये जल देवे ·सुतृप्त उन ब्राह्मणों की आज्ञा से भूतल में सब अन्न से विकिरान्न देवे अथः पिण्ड दानादि – तब जल से पिण्डों को अच्छी तरह से ग्रहण करे ॥३३॥३४॥ पितृ तीर्थ से जल तथा जल की अञ्जलि देवे तथा पितृ तीर्थ ही से माता महादियों को तीर्थ में पिण्ड देवे ॥३५॥ उच्छिष्ट के नजदीक दक्षिणाग्र कुशाओं में पुष्प धूपादि से पूजित पहिला पिण्ड अपने पिता के लिये देवे ॥३६॥ फिर पितामह के लिये देवे तदनन्तर प्रपितामह के लिये देवे लेप घर्षण से कुशाओं के मूल में लेप भुजा लगावे अर्थात् पिण्ड बनाते समय हाथ में लगे अन्न को कुशाओं में पूँछ देवे ॥३७॥ तथा माता महादियों को गन्ध माल्यादियों से पूजित पिण्ड देवे आचमन देवे और भक्ति में तत्पर हो स्वस्ति वाचन बंचवाकर शक्ति से ब्राह्मणों को दक्षिणा देवे ॥३८॥३६॥ उनको दक्षिणा देकर जो विश्वे देवा हैं वे तृप्त हो जावें इत्यादि वैश्वदेविक सूक्त पढ़े ॥४०॥ ऐसा कहने पर ब्राह्मण आशिष देवे और वह पितरों का, देवताओं का विसर्जन करे ॥४१॥ मातामहों का भी देवताओं के साथ ही यथास्थित विसर्जन करे भोजन में तथा स्व शक्ति से दान में और तद्वत् विसर्जन में आपाद शौच पूर्वक द्विजादि ये काम करें ॥४२॥ पहिले माता महादि तीनों में से ज्ञानि विप्र का विसर्जन तथा फिर अन्य का सम्मान पूर्वक विसर्जन करे ॥४३॥ दरवाजे तक उनके पीछे से जावे और उनकी आज्ञा पाकर निवृत्त हो जावे तथा वैश्वदेविक नित्य क्रिया करे ॥४४॥ तदनन्तर अपने भाई- बन्धु कुटम्ब के साथ भोजन करे इस प्रकार विद्वान मनुष्य पितरों और मातामहों का श्राद्ध करे श्राद्ध से तृप्त होने पर पितामहादि सब इच्छायें पूर्ण करते हैं ॥४५॥ 'श्राद्ध में तीन पवित्र हैं दौहित्र, कुतप तथा तिल तथा चांदी का दान अथवा

चांदी का दर्शन करना॥ ४६। ब्राह्मण के प्रेम पूर्वक खाने पर श्राद्ध कर्त्ता को क्रोध, रास्ता चलना तथा शीघ्रता ये तीन त्याग देने चाहिये ॥४७॥ पितरों के सहित विश्वेदेवाओं का तथा माता महादियों का श्राद्ध करने वाला मनुष्य सारे ही कुल को तृप्त करता है ॥४८॥ पितर सोमाधार चन्द्रमा योगाधार कहा है अतः श्राद्ध योग नियुक्त होना चाहिये ॥४६॥ हजारों ब्राह्मणों के आगे से यदि एक भी योगी है तो वह सारे ही भोजन करने वाले ब्राह्मणों को तथा खिलाने वाले यजमान को तार देता है ॥५०। ये सब पुराणों में सामान्य पैतृक क्रिया है इस क्रम से कर्म काण्ड जानकर मनुष्य बन्धन से छूट जाता है ॥५१॥ इसी का आश्रय ले बड़े बड़े ऋषि निर्वाण को प्राप्त हुये हैं इसलिये हे गोरेमुख! तुम भी ऐसा ही करो। ५२॥ हे गोरेमुख! जो तूने पूछा सो मैंने कह दिया है पितरों का यजन कर हरि का ध्यान जो करता है उसको इससे बढ़कर क्या है ? इससे आगे पितृ तन्त्र नहीं है यह निश्चय जानो ॥५३॥ इति वराह पुराणे आदि कृत वृतान्ते श्राद्ध कल्प निरूपणाम् नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम् चतुर्दशोऽध्याय ॥१४।

अथः पञ्चदशोऽध्याय

दोहाः— दशावतार स्तोत्र पढ़, चन्द्र तीर्थ प्रभास।
गोरेमुख मुनि मुक्त भया, करि अज्ञान विनास ॥

अथः गोरेमुख की दशावतार स्तोत्र से मुक्ति – पृथ्वी कहने लगी हे भगवन् मारकण्डेय ऋषि से पूर्वोक्त श्राद्ध विधि सुनकर गोरेमुख ने जो किया सो कहो ॥१॥ वराह जी ने कहा हे पृथ्वी इस प्रकार पितृतन्त्र सुनकर गोरेमुख ने मारकण्डेय के कहने के अनुसार अपने सैकड़ों जन्म स्मरण किये ॥२॥ पृथ्वी कहने लगी हे भूधर! गोरेमुख पूर्वजन्म में कौन था और किस प्रकार उसने अपने जन्म स्मरण किये और जन्म स्मरण कर उसने क्या किया ॥३॥

वराह जी कहने लगे कि वह गोरेमुख पहिले जन्म में भृगु था और उसी के वंश में पैदा हुआ मारकण्डेय मुनि था ।४। तुम पुत्रों से बोधित किये हो कि सुगति को प्राप्त करो ये जो पहिले कहा गया था उसी से मारकण्डेय ने गोरेमुख को बोधित किया ॥५॥ गोरेमुख ने सब जन्म स्मरण किये और स्मरण कर जो कृत्य किया उसको संक्षेप से कहता हूँ तू सुन ॥६॥ इस प्रकार श्राद्ध विधान से बारह वर्षों तक पितरों का यजन किया । फिर हरि का स्तोत्र पढ़ने लगा ॥७॥ तीनों लोकों में विख्यात प्रभास नाम का जो तीर्थ है उसमें दैत्यान्तक देव की स्तुति करने लगा ॥८॥ गोरेमुख कहने लगा अथ दशावतार स्तोत्रम्- शत्रुओं के घमंड दूर करने के वालों को, कल्याण स्वरूप को, नारायण को, ब्रह्मन् वेताओं में श्रेष्ठ को, सूर्य्य चन्द्र अश्विनी कुमार की मूर्ति वाले को, आद्य को, पुरातन को, दैत्य हर को, तथा हरि को हमेशा नमस्कार करता हूँ ॥९॥ जिसने वेदों के विनाश काल में पुरातन मात्स्यवपु धारण किया है, और आद्य सुर शत्रु को मारा है उसकी मैं स्तुति करता हूं ।१०॥ तथा समुद्र मथते समय जिसने कच्छुये का रूप धर मंदराचल को धारण किया है, भलाई हेतु प्राप्त हुये पुराण पुरुष मेरी रक्षा करें ॥११॥ जिस महा वराह ने रसातल में जाकर पृथ्वी का उद्धार किया तथा हिरण्याक्ष असुर को मारा वह यज्ञावतार मेरी रक्षा करें जिन योगिराज ने भयंकर करालमुख वाला नृसिंह अवतार युग युग में धारण किया है, वही सुवर्ण समान कान्ति वाले, भक्त प्रह्लाद को बचाने वाले तथा हिरंयकशिपु दैत्य को मारने वाले नृसिंह भगवान् मेरी रक्षा करें ॥१३॥ जिस अप्रमेय ने वावनावतार से ब्रह्मचारी का वेश धारण कर राजा वलि का यज्ञ विध्वंस किया और वलि से छल पूर्वक तीन पैर पृथ्वी मांग तीनों लोक नापे वही योगारूढ़ हमारी रक्षा करें ॥१४॥ जिसने इक्कीस वार पृथ्वी को जीतकर कश्यप के

लिये दी , वही अभिजन रक्षक असुरों को मारने वाला हिरन्य गर्भ जामदग्नि हमारी रक्षा करें ॥१५॥ जिस हिरन्य गर्भ ने अपने शरीर को चार प्रकार से विभक्त कर रामादि रूप से प्रकट हुआ वही असुर को मारने वाला रामावतार हमारी रक्षा करे ॥१६॥ चाणूर कंस आदि असुरों की डर से डरे हुये देवताओं के अभय के लिये जो कृष्णावतार लेते हैं और कल्प कल्प में अद्भुत रूप वाले होते हैं वही हमारी रक्षा करें ॥१७। हर एक कलियुग में वर्ण व्यवस्था स्थापित करने के लिये जो कलंकी अवतार धारण करते हैं जिनके अनेक रूप हैं जो सनातन हैं ब्रह्ममय हैं पुरातन में जिसके रूप को देवता सिद्ध तथा दैत्य नहीं देखते हैं अतएव विज्ञान गति को छोड़कर यमनियम से भी जिसकी पूजा करते हैं वही मत्स्यादि अनेक रूप धारण करने वाले भगवान् हमारी रक्षा करें ॥१८॥१९॥ पुरुषोत्तम के लिये नमस्कार है नमस्कार है फिर भी बारम्बार नमस्कार है ॥२०॥ इस प्रकार नमस्कार करते उस गोरेमुख को भगवान् ने प्रत्यक्ष दर्शन दिया भगवान् का दर्शन कर गोरेमुख को विज्ञान प्राप्त हुआ फिर अपुनर्भव संज्ञा वाले शाश्वत ब्रह्म में लय को प्राप्त हुआ ॥२१॥ ॥२२॥२३॥इति वराह पुराणे आदि कृत वृतान्ते गोरेमुखस्य मोक्ष निरूपणम् नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम् पंचदशो अध्यायः ॥१५॥

अथः षोडशोऽध्यायः

दोहा:— इस षोडशऽध्याय में, सरमा का आख्यान।
वर्णन कीनों प्रेम से, सुभ सहित व्याख्यान॥

अथः सरमोपाख्यान— पृथ्वी कहने लगी हे भूधर! जो दुर्वासा ऋषि ने शाप दिया था कि हे इन्द्र जिससे तूने मेरा आदर न किया अतएव सुप्रतीक के पुत्र दुर्जय के द्वारा स्वर्ग से भ्रष्ट हो मृत्यु लोक में वास करेगा इस प्रकार शाप होने के कारण दुर्जय

ने इन्द्र को हराकर स्वर्ग से भ्रष्ट किया और इन्द्र सब देवताओं सहित मृत्यु लोक में आया तब उसने क्या किया तथा जब भगवान् ने दुर्जय को मार दिया तब दुर्जय के स्वर्ग में स्थापित किये हुये विद्यु त सविद्यु त ने क्या किया ये मेरा संशय प्रसन्नता पूर्वक दूर कीजिये ॥१॥२॥३॥४॥ वराह जी बोले दुर्जय से पराजित होकर देवराज इन्द्र भारतवर्ष में आया तथा वाराणसी की पूर्व दिशा में देवताओं के सहित निवास करने लगा तथा स्वर्ग में जो विद्यु त सविद्यु त थे उन्होंने योग ग्रहण किया। तथा लोकपालों के लिये दीर्घ ताप ज्वरादि योगमाया के द्वारा करने लगे ॥५।६॥७॥ राजा दुर्जय को मरा हुआ सुन सदा समुद्रान्त स्थित धोड़े को लाकर देवताओं के प्रति युद्ध करने चले। ८॥ बड़ी सेना से युक्त वे दैत्य हिमालय पर आकर रहने लगे ॥६। देवता भी कवचादि पहन कर बड़ी भारी सेना इकट्ठी करके अपने इन्द्रपद पाने के लिये सलाह करने लगे ॥१०॥ उस सलाह में देवताओं के गुरु बृहस्पति ने कहा कि पहिले तुम गोमेध से यज्ञ करो फिर सब यज्ञों से यजन करना चाहिये यही उपाय है हे देवताओ उपदेश मैंने देदिया है इन्द्रपद प्राप्त के लिये इस उपाय को शीघ्र कीजिये ॥११॥१२॥ गुरु के उपदेश को सुन देवताओं ने गाय पशु कल्पित किये और चरने के लिये छोड़ दिये तथा उनकी रक्षा के लिये सरमा नाम वाली देव कुतिया भेज दी ॥१३॥ देव कुत्ती सरमा से रक्षित वे गायें चरती चरती जहां वे दैत्य थे वहीं पहुँच गयीं ॥१४॥ वे दैत्य उन गायों को देख अपने पुरोहित शुक्राचार्य्य जी से कहने लगे कि हे गुरुजी देखिये देवकुतिया सरमा से रक्षित देवताओं की गायें चर रही हैं कहो इस समय क्या करें ॥१५॥ ऐसा सुन शुक्राचार्य्य बोला हे दैत्यगण उन गायों को शीघ्र हरण करलो विलम्ब न कीजिये ॥१६॥ शुक्र के ऐसा कहने पर दैत्यों ने इच्छा पूर्वक देवताओं की गायें हर लीं

गायों के हराये जाने पर देव कुतिया भी वहीं ढूंढ़ती हुई जा पहुंची वहाँ दैत्यों से हराई हुई गायों को देखा तथा दैत्यों ने भी उस कुतिया को, जिसने कि चोरी का भेद पालिया है देखा ॥ १७॥१८॥ अतएव सरमा को सांत्वना देते हुये कहने लगे कि हे कुतिया इन गायों का दूध दुह कर तूही स्वतन्त्रता पूर्वक पिया कर ऐसा कह उस दूध को उसी कुतिया को पिलाकर कहने लगे कि हे सरमा ! इन गायों को कभी इन्द्र के पास मत बताना ऐसा कहकर दैत्यों ने देव कुतिया जंगल में छोड़ दी ॥१९॥२०॥२१॥ दैत्यों से छोड़ी हुई वह सरमा कांपती कांपती देवताओं के पास जाकर देवराज इन्द्र को प्रणाम करके चुप हुई ॥२२॥ तथा पहिले उस कुत्ती की रक्षा के लिये इन्द्र ने मरुद्गण को कहा था कि तुम गुप्त रूप से जाकर इस कुतिया की रक्षा करो ।२३॥ इन्द्र की आज्ञा से मरुद्गण सूक्ष्म रूप धरकर उस सरमा के साथ ही गये थे सरमा के लौटने पर उन्होंने भी लौटकर देवराज इन्द्र को प्रणाम किया ॥२४॥ उनके आने पर इन्द्र पूछने लगा कि हे सरमे ! गाय कहां हैं सरमा कहने लगी कि मैं नहीं जानती हूं कि कहां हैं ॥२५ तब क्रोधयुक्त हो इन्द्र मरुद्गण को पूछने लगा कि हे मरुद्गण ! यज्ञ के लिये रखी हुई गायें कहां हैं ये कुतिया ऐसा क्या कह रही है कि मैं नहीं जानती ॥२६॥ इन्द्र के ऐसा कहने पर मरुद्गण ने सरमा का समग्र कर्म इन्द्र के पास कह दिया ॥२७॥ उनके कहने पर बड़े क्रोध युक्त हो उठकर सरमा को पैर से ताड़ित करने लगा ॥२८॥ हे मूढे ! तूने दूध पिया है वे गायें तो दैत्यों ने हरली हैं ऐसा कह उसको वारवार ताड़ित करने लगा ॥२९॥ इन्द्र के पादाघात से उसके मुंह से दूध गिरने लगा मुंह से दूध बहाती वह कुतिया जहां गायें थीं वहीं जा पहुंची इन्द्र भी सेना सहित उसके पीछे पीछे जाकर दैत्यों से हरी हुई अपनी गायें दिखाई दीं ॥३०॥३१॥ जो दैत्य गायों के रक्षक थे वे अत्यंत

बलवान थे परन्तु इन्द्र सेना से मारे जाने पर उन्होंने शीघ्र अपनी मूर्तियों के साथ ही गायें छोड़ दीं अर्थात् उनके प्राण निकल गये ॥३२। अपने परम हर्षित सामन्तक गणों से युक्त देवराज इन्द्र अपनी गायों को पाकर अति प्रसन्न हुआ ॥३३॥ इन्द्र ने अनेक प्रकार के हजारों यज्ञ किये। यज्ञ करने से इन्द्र का बल पराक्रम बढ़ गया ॥३४॥ बल बढ़ने पर इन्द्र देव सेना को कहने लगा कि दैत्य वध के लिये तय्यार हो जाओ ॥३५॥ ऐसा सुन देवतागण तत्काल सनद्ध हुये और इन्द्र सहित असुरों के नाश के लिये चल पड़े ॥३६॥ जाकर शीघ्र दैत्यों से युद्ध छेड़ दिया तथा देवताओं ने असुरों की सारी सेना पराजित कर डाली हत् शेष जो असुर थे वे डर के मारे विह्वल और अचेत होकर समुद्र में डूब गये इन्द्र भी लोकपालों के सहित स्वर्ग में जाकर अपने इन्द्रासन को सुख पूर्वक भोगने लगा ।.३७॥३८॥३९॥ जो इस उत्तम सरमा के आख्यान को सुनेगा वह गौमेध यज्ञ के फल को प्राप्त होगा ॥४०॥ राज्य से भ्रष्ट हुआ राजा यदि इस आख्यान को दत्त चित से सुने तो वह इन्द्र के समान अपने राज्य को प्राप्त करेगा ॥४१॥ इति वराह पुराणे आदि कृत वृतान्ते सरमो पाख्यानम् नाम काशीराम शर्म्माकृत षोड़शोऽध्यायः ॥१६॥

अथः सप्तदशोऽध्याय

दोहा:— सुभ सुहावन आश्रम इक, तहाँ गयो नृप राज।
महातम से प्रश्न कियो, जीव मोक्ष के काज॥

अथः महातप उपाख्यानम्– पृथ्वी कहने लगी हे देव वराह जी! वे जो मणि से पैदा हुये नर पुङ्गव थे उनको भगवान् ने वरदान दिया था कि ये त्रेता युग में राजा होंगे। सो किस प्रकार वे पैदा हुये हैं और होकर उन्होंने क्या काम किया आप अलग नामों से कह दीजिये ॥१॥२॥ वराह जी कहने लगे हे पृथ्वी! सुप्रभ नाम का जो मणिज था वह राजा हुआ है उसकी उत्पत्ति

सुन ॥३॥ पहिले कृतयुग में श्रुतकीर्ति नाम का विख्यात महाबाहु राजा था वह तीनों लोकों में श्रेष्ठ था ॥४॥ हे पृथ्वी ! सुप्रभव नामक मणिज उसी राजा का पुत्र हुआ और प्रजापाल नाम से प्रसिद्ध हुआ ॥५॥ वह एक दिन वन जन्तुओं से व्याप्त जङ्गल में शिकार खेलने गया वहाँ उसने ऋषि का एक बड़ा भारी आश्रम देखा उस आश्रम में परम धार्मिक महातपा नाम वाला महर्षि निराहार रह सनातन ब्रह्म को जपता तप करता रहता था ॥६॥७॥ उस आश्रम में जाने की इच्छा से राजा प्रजापाल ने आश्रम में प्रवेश किया ॥८॥ उस श्रेष्ठ आश्रम में अनेक पेड़ लगे थे पृथ्वी से उगे घास से मार्ग संकीर्ण था चन्द्रमा के समान प्रकाश वाली लतायें थीं जिन लताओं पर भौंरे निरन्तर गुञ्जार करते रहते थे ॥९॥ लाल कमल के उदर के समान कोमल अग्र नखाङ्गुली वाली श्रेष्ठ औरतों से चिन्हित सुरक्त पद पंक्ति वाली भूमि उस आश्रम में थी जो कि इन्द्र के नन्दन वन से भी बढ़कर थी उस भूमि के ऊपर अनेक प्रकार के पक्षिगण व्याप्त थे अथवा इन्द्र की श्रेष्ठ अपसराओं को कोमल अङ्गुलियों से चित्रित पद पंक्ति वाली भूमि को छोड़ पक्षीगण ऊपर तरफ व्याप्त थे अथवा इन्द्र की भूमि को भी छोड़ और निचली भूमि को भी छोड़ पक्षिगण ऊपर प्रसृत थे ॥१०॥ उस आश्रम के समीप मत्त भौंरे गुंजार कर रहे थे तथा हृष्ट विविध पक्षियों के ऊँचे स्वर मधुर लग रहे थे उनके शब्द करने पर विविध परमाणु वाली साखायें सुपुष्प तथा समयोग युक्त थी तथा उस आश्रम में कदम्ब, नीप, अर्जुन शाल, ताल, तमाल के कमाल वृक्ष लगे थे उनमें अनेक पक्षियों का कोलाहल होता था उनके मधुर कोलाहल से युक्त सुजन प्रयोग निराकुल थे तीखी दाढ़ और श्रेष्ठ सयवाले सिंहों से मदमस्त हाथी के समान उस आश्रम के चारों तरफ गृह में द्विज यज्ञाग्नि के धूम से तथा प्रज्वलित अग्नि में यज्ञ करने से अधर्म रूपी हाथी को

विदारित कर रहे थे यानी शेर जिस प्रकार हाथी के मस्तक को फाड़ता है उसी तरह वे ब्राह्मण यज्ञ करने से अधर्म के मस्तक को दूर कर रहे थे इस प्रकार विविधि उपायों को देखते हुए राजा ने आश्रम में प्रवेश किया और आश्रम में प्रवेश कर तीव्र तेज वाले राजा ने ब्रह्मवेत्ताओं में प्रधान महातपा मुनि को देखा ॥११॥१२॥ ॥१३॥१४॥ जो कि कुशासन पर बैठा था और सहस्र किरणों वाले सूर्य्य के समान एक दूसरा सूर्य्य सा दीखता था ऐसा देखकर राजा मुनि के प्रसंग से शिकार खेलने की मति से भूल गया तथा उसने धर्म के प्रति मन को अद्वितीय बनाया। महात्मा मुनि निष्पापी राजा प्रजापाल को देख आसन स्वागतादि से उसका अतिथि सत्कार किया ॥१५॥१६॥ हे पृथ्वी! आसन पर बैठे ऋषिश्रेष्ठ को प्रणाम कर प्रजापाल इस दुर्लभ प्रश्न को पूछने लगा कि हे भगवन् दुख युक्त संसार में लवलीन मनुष्य को संसार सागर जीतने की इच्छा से जो कार्य्य करना चाहिये वह मुझ नम्र को बता दीजिये ॥१७॥१८॥ महातपा कहने लगा संसार सागर में डूबे हुये मनुष्यों को पूजन से होम से दान से विधि से यज्ञों से तथा ध्यान से प्राणादि रस्सियों से देवता रूपी मल्लाहों से ध्यान रूपी कीलों से अति निश्चल तथा स्थिर अविनाशी भगवान् को नौका बनानी चाहिये हे राजन्! इस समय तू भी त्रिलोकेश्वर भगवान् को संसार सागर से पार उतरने के लिये नौका बनाइये ॥१९॥ नरकासुर मारने वाले नारायण को, सुरेश को, जो भक्ति से नमस्कार करता है वह शोक से रहित हो विष्णु के परम अव्यय पद को प्राप्त होता है ॥२०॥ राजा बोला हे भगवन्! हे सर्व धर्मज्ञ मोक्ष चाहने वाले पुरुषों से भगवान् किस प्रकार पूजे जाते हैं तत्व से कहो ॥२१॥ महातपा कहने लगा हे महा बुद्धिमान् राजन् सब योगियों के ईश्वर हरि भगवान् जिस प्रकार स्त्री पुरुषों से प्रसन्न होते हैं वह सुनिये ॥२२॥ सारे ही देवता पितर ब्रह्मादि

ब्रह्माण्ड के भीतर जितने हैं सब विष्णु के ही सकान से हुये हैं यही वैदिक श्रुति है ॥२३॥ अग्नि तथा अश्विनी कुमार गौरी, गणेश, भुजंगम, कार्तिकेय तथा आदित्य कामादि, दुर्गा, दिशायें धनपति, विष्णु, यम, रुद्र, शशि तथा पितर ये सब ही जगत्पति के ही प्राधान्यता से भगवान् हिरण्य गर्भ के शरीर में पैदा हुये हैं वे अलग अलग गर्भ करके में योग्य हूँ में ही प्रधान हूं। पूजने योग्य हूं कहते हुये उनका क्षुब्ध सागर के समान देव सभा में बड़ा कोलाहल हुआ ऐसा सुना जाता है ॥२४॥२५॥२६॥२७॥ उन सबके आपस में विवाद करने पर सबसे पहिले उनमें से अग्नि उठा और कहने लगा कि मेरा यजन करो मेरा ध्यान करो में ही सबसे प्रधान हूं यह प्रजापति का शरीर मेरे बिना नाश को प्राप्त हो जायगा जिससे कि सबसे बड़ा में नहीं रहूंगा॥२८॥२९॥ ऐसा कहकर अग्नि ने उस शरीर को छोड़कर अलग स्थित हो गया अग्नि के निकल जाने पर भी वह शरीर नष्ट नहीं हुआ ॥३०॥ तब शरीर के प्राण अपान स्थानों में स्थित अश्विनी कुमारों ने कहा कि हम ही पूज्य हैं, हम ही याज्य हैं तथा सबसे श्रेष्ठ हैं ऐसा कहकर शरीर को छोड़ अलग स्थित हो गये तब भी वह शरीर नष्ट न हुआ ।३१।३२॥ तब वाणि स्वरूपिणी गौरि बोली कि प्रधान मैं हूँ ऐसा कह शरीर से अलग हो गये परन्तु वाणि से रहित वह शरीर नष्ट न हुआ फिर आकाशाख्य गणपति वाक्य बोला कि मेरे बिना यह शरीर नहीं रह सकता है ऐसा कह शरीर छोड़ अलग हो गये तब भी यह शरीर नष्ट न हुआ आकाश रहित होने पर भी नष्ट न हुआ ॥३३॥३४।३५॥३६॥ फिर छिद्र रहित शरीर को भी स्थित देख शरीर को धातु कहने लगे कि हमारे बिना तो शरीर कभी ठहर ही नहीं सकता ऐसा कह उन्होंने भी शरीर छोड़ दिया, परन्तु उनसे रहित शरीर प्रधान पुरुष से पाला जाता है ऐसा देख अहङ्कार स्वरूप स्कन्ध

मेरे बिना शरीर नहीं रह सकता कहकर शरीर को छोड़ अलग चला गया ॥३७॥३८॥३९॥४०॥ अहङ्कार के अलग होने पर भी वह शरीर मुक्त की तरह रहा फिर ऐसा देख आदित्य क्रोधित हो कहने लगा कि मेरे बिना यह शरीर किस प्रकार क्षण भर भी रहेगा ऐसा कह शरीर से निकल गया परन्तु शरीर नष्ट न हुआ ॥४१॥४२॥ फिर कामादिगण कहने लगे कि हमारे बिना शरीर नहीं रहेगा ॥४३॥ ऐसा कहकर कामादिगण भी शरीर को छोड़ चले गये फिर भी शरीर नष्ट न हुआ तब क्रोध से दुर्गा भी मेरे बिना नहीं रहेगा कहकर अन्तर्धान हो गई फिर दिशायें उठ कहने लगीं कि हमारे बिना कार्य नहीं होता इसमें सन्देह नही चारों दिशाओं ने भी शरीर छोड़ दिया फिर धनपति वायु भी ऐसा ही कह मस्तक पर स्थित हुआ ॥४४॥४५॥४६॥४७॥ तदनन्तर मन का अधिष्ठाता विष्णु ने कहा कि मेरे बिना यह शरीर क्षण भर भी नहीं ठहर सकता ऐसा कह विष्णु भी अन्तर्धान हो गया ॥४८॥ तब धर्म कहने लगा कि ये सब मुझसे ही पालित हैं अब मेरे हो चले जाने पर किस प्रकार रहेगा ॥४९॥ ऐसा कह धर्म चले गये फिर भी शरीर नष्ट न हुआ तब भूतभावन अव्यक्त महादेव कहने लगा कि मेरे बिना शरीर कदापि न रहेगा ऐसा कह शम्भू भी अन्तर्धान हुआ पर शरीर नष्ट न हुआ ॥५०॥५१॥ तब पितर कहने लगे कि प्राणान्तरों में स्थित जो हम इन्द्रियार्थ हैं हमारे बिना यह शरीर अवश्य ही नष्ट हो जायगा ऐसाकह वह भी अन्तर्धान हो गये तब भी शरीर नष्ट न हुआ ॥५२॥५३॥ अग्नि, प्राण, अपान आकाश, तथा धातु अहङ्कार, भानु, काष्ठा, कामादि, माया वायु, विष्णु, धर्म शम्भु, पितर इन सबसे रहित वह शरीर इन्द्र रूपी सोम पुरुष से रक्षित मुक्त के समान स्थित रहा ॥५४॥५५॥ इस प्रकार षोड़श आत्मा तथा अविनाशी सोम के स्थित रहने पर पहिले की तरह

गुणों से युक्त हो वह शरीर उठ खड़ा हुआ ॥५३॥ सर्वज्ञ से रचित शरीर को पहिले की तरह देख ये सारे ही चेत्र देवता वैलक्ष्य भाव को प्राप्त हुये ॥५७॥ हे राजन् ! तब सारे ही चेत्र देवताओं ने अपने अपने स्थानों पर जाकर परमेश्वर की स्तुति करने लगे ॥५८॥ तुमहीं अग्नि हो, तुम ही प्राण हो, तुम ही अपान हो, तुम ही सरस्वती हो, तुम ही आकाश हो, तुम ही शरीर की धातु हो, तुम ही अहङ्कार हो, तुम ही आदित्य हो, धनाध्यच हो, तुम ही कामादि गण हो, तुम ही माया हो, तुम ही पृथ्वी हो, तुम ही दुर्गा हो, तुम ही दिशा हो, तुम ही मरुत्पति हो; तुम ही विष्णु हो, तथा तुम ही धर्म हो, तुम ही विष्णु हो, तुम ही शम्भू हो, तुम ही पराजित हो, तुम ही अक्षर हो, तुम ही अर्थ हो, तथा तुम ही परमेश्वर संज्ञा वाले हो हमारे चले जाने पर यह चेत्र किस प्रकार रहेगा ऐसा सोच, इस शरीर को छोड़ हम चले गये थे परन्तु हमारे चले जाने पर आप ही इस चेत्र की रचा करते रहते हो ॥५६॥६०॥६१॥६२॥ हे प्रजापते ! हमें स्वयम् रचकर हमारा कशूर देखकर भी हमें स्थान भ्रष्ट न कीजिये इस प्रकार उनकी स्तुति करने पर भगवान् प्रसन्न हो गये ॥६३॥ भगवान् उनसे कहने लगे कि मैंने आप लोगों को क्रीड़ा के लिये रचा है। आपको रचकर सिर्फ मेरा एक प्रयोजन है। वैसा यदि तुम्हें ठीक न लगता तो इस तुम्हारे प्रत्येक के दो दो रूप कर देता हूँ देव लोक में मूर्ति से और भूत कार्य में अमूर्ति से रहोगे फिर कालान्त में शीघ्र लय को प्राप्त हो जाना और शरीर में फिर कभी कहीं भी अहङ्कार न करना ॥६४॥६५॥६६॥ तथा इस समय तुम्हारी मूर्तियों के नाम तुम्हें बतलाता हूँ अग्नि का वैश्वनर नाम होगा प्राणपानों का अश्विनी कुमार नाम होंगे ॥६७॥ गौरी हिमालय की पुत्री होगी और ये पृथिव्यादि गुण युक्त गणेश गजवक्त्र होगा ॥६८॥ शरीर के धातु अनेक प्राणियों के

स्वरूप वाले होंगे तथा अहङ्कार स्कन्द कार्तिकेय होगा ॥६६॥ ये शरीर की माया कारण से दुर्गा होगी ये काष्ठायें वरुण की दश पुत्री होगीं ॥७०॥ यह वायु धनेश होगा ये मन निसन्देह विष्णु होगा ॥७१॥ ये धर्म भी निसन्देह यम सोगा ये महतत्व महादेव होगा ॥७२॥ इन्द्रियार्थ जो हैं वे पितर होंगे ये सोम पहिले सर्वदा जामित्र होकर इस प्रकार नारायणात्मक वेदान्त पुरुष कह दिया सब देवता तब अपने स्थान को गये और भगवान् चुप हुये ॥७३॥७४॥ इस प्रभाव वाले जनार्दन भगवान् हैं जो वेद से जानने योग्य हैं हे राजन्! यह कह दिया और क्या सुनना चाहता है ॥७५ इति वराह पुराणे आदि कृत वृत्तान्ते महातप उपाख्याने काशीराम कृत भाषा टीकायाम सप्तदशो ऽध्याय ॥१७

होने पर वह सत् अद्भुत स्वरूप होने पर– वह प्रीतिमान् विकार भाव को प्राप्त हुआ उसके विकृत होने पर महाग्नि पैदा हुई जिसकी करोड़ों ज्वालाऐं थीं जो शब्द वाला तथा दहनात्मक था अति तेजस्वी वह महा अग्नि भी विकार भाव को प्राप्त हुआ ॥६॥७॥८॥ उस महाग्नि के विकृत होने से परम दारुण वायु निकला तथा वायु को भी विकार भाव को प्राप्त होने पर आकाश हुआ ॥९॥ वह आकाश शब्द वाला हुआ वायु स्पर्श वाला हुआ वह तेज आपस में श्लिष्ट जल से युक्त हुआ ॥१०॥ ऊध्रगामी वायु से बोधित किये हुये तेज ने जल को सुखाया उनके सुखाने पर आकाश ने स्थान दिया तब शीघ्र ही वे जल पिण्डी भूत हो काठिन्यता को प्राप्त हुये । वही ये पृथ्वी, तेज, वायु आकाश, जलों से वृत्त रहित हुई चारों के योग काठिन्य से प्रत्येक के एक एक गुण वृद्धि होने से पृथ्वी पांच गुण वाली हुई क्योंकि इस पृथ्वी में तेज वायु आकाश तथा जल भी हैं ॥११॥१२॥१३॥ पृथ्वी अप, तेज, वायु, आकाश आदि पांच महाभूतों के काठिन्य से ब्रह्माण्ड हुआ उस ब्रह्माण्ड में नारायण हुये वही नारायण अनेक प्रजा रचने की इच्छा से ब्रह्मा स्वरूप हुआ वह ब्रह्मा सृष्टि रचने के लिये सोच रहा था बहुत देर तक सोचने पर भी जब सृष्टि नहीं रची गई तब ब्रह्मा को क्रोध हुआ उस क्रोध से सहस्र अर्ची वाला दहनात्मक अग्नि निकला ॥१४॥ ॥१५॥१६॥ हे राजन् ! उस समय वह अग्नि ब्रह्मा को जलाने लगा तब ब्रह्मा ने कहा कि हव्य देवताओं की आहुति, और कव्य- पितरों की आहुति धारण कर अतएव वह अग्नि हव्य वाहन नाम का हुआ ॥१७॥ अग्नि भूक से पीड़ित होकर ब्रह्मा के पास जाकर कहने लगा कि मैं क्या करूं हे ब्रह्मन मुझे शिक्षा दीजिये ब्रह्मा ने कहा तू तीन प्रकार से तृप्ति को प्राप्त होगा ॥१८॥ पहिले दक्षिणा के दे चुकने पर तृप्ति

प्राप्त होकर तू देवताओं को दक्षिणा भाग को प्राप्त करावेगा अतः तेरा नाम दक्षिणग्नि अवश्य होगा ॥१६॥ हे विभावसो ! त्रिलोकी में जो कुछ हवन किया गया हो उसको देवताओं के निमित तू धारण कर लिया करेगा तब तेरा नाम हव्य वाहन होगा ॥२०॥ गृह शब्द शरीर वाचक कहा गया है इस समय तू उस शरीर पाने गृह का पति होने से तू गारह पत्य नाम मे प्रसिद्ध होगा तथा सर्वगत रहेगा ।२१॥ हवन करने पर तू विश्व नरों को यानी सब मनुष्यों को सद् गति को पहुंचाता है अतः तेरा नाम निश्चय से वैश्वा नर होगा ॥२२। द्रविण शब्द बल वाचक है तथा द्रविण शब्द धन वाचक है तुझे तृप्त करने पर तू ही मनुष्यों को धन देने वाला है अतः तेरा नाम द्रविण देने से द्रवीणोदा होगा ॥२३॥ तेरा तेज अग्नि में निः, शब्द निश्चय बतलाता है कि तू पापों को हमेशा दूर करता रहता है और सब जगह स्थिर रहता है अतः तेरा नाम अग्नि होगा २४॥ धमा यह जो परिपूरण वाचक जो शब्द है वह लड़कियों को भी कहा जाता है इसलिये लड़कियों का नाम इध्म है अतः तू भी तृप्त करने वाने पूरिन को गति देने वाला है यानी धमा परिपूरण शब्द तेरे लिये भी हो सकता है क्योंकि तू भी यजमान की परिपूरण गति है अतः तेरा नाम इध्म भी होगा ॥२५॥ हे पुत्र अग्नि ! ये तेरे नाम महायज्ञों में पूजे जायेंगे तेरा यजन करने वाले मनुष्य सब कामनाओं से अवश्य परिपूरण होंगे ॥२६॥ इति वराह पुराणे आदि कृत वृतान्ते महातप उपाख्याने अग्नि उत्पत्तिर् नाम काशीराम कृत भाषा टीकायाम् अष्टादशोऽध्यायः ॥१८॥

अथ एकोनविंशोऽध्यायः

दोहाः— ब्रह्मा ने अग्नि देव को, दे पड़िवा तिथि वास ।
तामे कियो शक्त शुभ, कभी न होवे नास ॥

यथाग्नि प्राशस्त्यम:- महातपा कहने लगा हे राजन्! विष्णु की विभूति का महात्म्य प्रसंग से तेरे पास कह दिया अब तिथियों का महात्म्य कहता हूं आप सुनिये ॥१॥ इस प्रकार ब्रह्मा के क्रोध से पैदा हुआ अग्निदेव ब्रह्मा से कहने लगा कि हे ब्रह्मन्! मुझे तिथि प्रदान कीजिये जिस तिथि में मैं जगत विख्यात हो जाऊँ ।२॥ ब्रह्मा कहने लगा देवता यक्ष गन्धर्वादियों के पहिले प्रतिपदा से तू हुआ है अतः तेरे पद से सारे देवता प्रातिपदिक कहे जायंगे इसलिये तुझे प्रतिपत् नाम की तिथि प्रदान करता हूँ ॥३॥४। उस तिथि में प्रजापत्य मूर्ति से जो हवि के द्वारा हवन करेगा उसके सारे पितर खुश हो जायंगे ॥५॥ चार प्रकार के प्राणि मनुष्य ,पशु, असुर, गन्धर्वों सहित सारे ही देवता तेरे तृप्त होने पर प्रसन्न हो जाते हैं ॥६॥ और जो तेरा भक्त प्रतिपदा के दिन उपवास करे वा चीर भोजन ही करे उसका महत् फल सुनिये कि वह बीस चतुर्युगी तक स्वर्ग लोक में रहता है ॥७॥ तथा तेजस्वी होता है बुद्धिमान होता है धनवान् होता है इस जन्म में राजा या राजा के समान होता है तथा मरकर स्वर्ग में जाता है ॥८॥ तब अग्नि चुप होकर ब्रह्मा के दिये हुये स्थान में चलागया ॥९॥ जो मनुष्य इस अग्नि की जन्म कथा को प्रातः काल हमेशा उठकर सुनेगा वह निश्चय पापों से मुक्त हो जायगा ॥१०॥ इति वराह पुराणे आदि कृत वृत्तान्ते महातप उपाख्याने अग्नि प्राशस्त्य निरूपणम् नाम काशीराम प्रणित भाषा टीकायाम् एकोनविंशोऽध्याय ॥१९॥

अथः विंशोऽध्यायः

दोहाः— अश्विनी जन्म अब कहूँ, सुनिये चित्त लगाय।
वैद्य हुये हैं स्वर्ग में, ब्रह्मा से वर पाय ॥

अथः-अश्विनी कुमार जन्मः- प्रजापाल कहने लगा हे ब्रह्मन्! इस प्रकार महान आत्मा अग्नि की उत्पत्ति कह दी है

अब प्रान- अपान किम प्रकार देवता अश्विनी कुमार हुये हैं सो कहिये ॥१॥ महातपा ऋषि ने कहा मरीची ब्रह्मा का पुत्र है स्वयम् ब्रह्मा ने जो पुत्र मन से पैदा किये हैं उनमें मरीची श्रेष्ठता को प्राप्त हुआ ॥२॥ मरीची का पुत्र महातेजा कश्यप मुनि हुआ वह प्रजापति मुनि कश्यप देवताओं का पिता हुआ ॥३॥ उस कश्यप के बारह आदित्य हुये वह बारह आदित्य नारायणात्मक तेज कहा गया है ।४॥ ये बारह सूर्य बारह महीने हैं स्वयम् हरि सम्वत्सर हैं इस प्रकार बारह आदित्य हुये उनमें मारतण्ड प्रताप वान् था ॥५॥ उस मार्तण्ड को त्वष्टाने अपनी महा प्रभावाली संज्ञा नाम की कन्या दी उस संज्ञा से मार्तण्ड ने यम तथा यमुना दो सन्तान पैदा कीं ॥६। वह संज्ञा मार्तण्ड के तेज को न सहती हुई मन के समान वेग वाली घोड़ी का रूप धर अपने आप उत्तर कुरु देश में चली गई और स्वर्ग में अपनी छाया स्थापित कर दी ॥७॥ फिर मारतण्ड भास्कर ने संज्ञा के तद्रूप छाया का सेवन किया उससे भी मारतण्ड ने शनि और तपति दो सन्तान पैदा किये ८। हे राजा जब वह संज्ञा की छाया संज्ञा के पुत्रों में असमानता करने लगी तब मारतण्ड क्रोध से लाल आँखें कर छाया से कहने लगा कि हे भामिनी ! अपने ही पुत्रों में असमानता नहीं करनी चाहिये मार्तण्ड ने जब इस प्रकार कहा तब वह छाया असमानता करने लगी तब अत्यंत दुखी होकर यम ने अपने पिता से कहा कि पिता जी यह तो हमारी माता नहीं है । हमेशा शत्रु के समान आचरण करती है तथा सौतेली मां के समान वृथा आचार वाली है और अपने पुत्रों को प्यार करती है ॥९॥ ॥१०॥११॥ इस प्रकार यम के वचन सुन वह छाया क्रोध ने मूर्च्छित हो शाप देने लगी कि तू शीघ्र ही प्रेत राज होगा ॥१२॥ ऐसा सुन मारतंड ने पुत्र के हित की इच्छा से कहा कि हे पुत्र ! तू धर्म और पाप का मध्यवर्ती होगा लोकपाल होगा तथा स्वर्ग

में शोभा को प्राप्त होगा ।।१३।। छाया के क्रोध से धर्षित मार्तंड ने शनि को शाप दिया कि हे पुत्रक! तू मातृ दोश से क्रूर दृष्टि वाला होगा ।।१४।। ऐसा कह मार्तंड संज्ञा को देखने की इच्छा से उठकर चल दिया मार्तण्ड ने संज्ञा को उत्तर कुरु देश में घोड़ी का रूप धरा देखा ।।१५।। तब उत्तर कुरु देश में पहुंच कर घोड़े का रूप धर प्राजापत्य मार्ग से आत्मा से आत्मा को युक्त किया घोड़ी का रूप धरी हुई उस संज्ञा में मार्तन्ड ने तीव्र तेज से बीज वपन किया वह तीव्र तेज जलता हुआ दो प्रकार से गिरा ।।१६।।१७।। वह प्रान- अपान चेत्र देवता जो कि पहिले अमूर्ति मान थे वरदान पाने से उस योनि में मूर्ति मान हुये ।।१८।। वे नर श्रेष्ठ पान अपान घोड़ी रूप वाली त्वष्टा की लड़की से पैदा होने के कारण रवि नन्दन अश्विनी कुमार हुये हैं ।।१६।। स्वयम् भानु प्राजापत्य तेज था और संज्ञा प्रधान शक्ति थी उसके शरीर में पहिले की तरह अमूर्ति से स्थित भी मूर्ति को प्राप्त हुये ।।२०।। तब वे अश्विनी कुमार देवता मारतंड के पास गये तथा कहने लगे कि महाराज! हमें क्या कर्तव्य करना चाहिये ।।२१।। मार्तंड ने कहा हे पुत्रो। भक्ति पूर्वक प्रजापति देव की आराधना करो वह नारायणात्मक तुम्हें अवश्य वरदान देगा और तुम उस वरदान से श्रेष्ठ बनोगे ।।२२।। इस प्रकार महात्मा मार्तंड ने उन अश्विनी कुमारों को कहा। तब वे अश्विनी कुमार परम दुश्चार तपस्या करने लगे तथा सावधानता से ब्रह्मपार स्तोत्र का पाठ करने लगे ।।२३।। बहुत समय के पश्चात् नारायणात्मक ब्रह्मा उनके ऊपर प्रसन्न हुआ और परम प्रीति से उनको इस प्रकार वरदान दिया ।।२४।। प्रजापाल ने कहा हे मुने! अव्यक्त जन्मा ब्रह्मा का ब्रह्म पार स्तोत्र अश्विनी कुमारों ने किस प्रकार किया है यह आपके प्रसाद से सुनना चाहता हूँ ।।२५।। महातप कहने लगा हे राजन्! जिस प्रकार अश्विनी कुमारों ने ब्रह्मा का

ब्रह्मपार मय स्तोत्र पढ़ा और पढ़ने से उनको जिस प्रकार फल मिला वह कहता हूं ॥२६॥ हे निष्क्रय ! हे निष्प्रपञ्च !हे निराश्रय ! हे निरपेक्ष ! हे निर्गुण !हे निरालोक ! हे निराधार ! हे निर्मम ! आपको नमस्कार है ॥२७॥ हे ब्रह्मन् ! हे महा ब्रह्मन् ! हे ब्राह्मण प्रिय! हे पुरुष ! हे महा पुरुष ! हे पुरुषोत्तम ! हे देव ! हे महादेव ! हे देवोत्तम् ! हे स्थाणो ! हे स्थित ! हे स्थापक! आपके लिये नमस्कार हो ॥२८॥ हे भूत ! हे महा भूत ! हे भूतादि पते ! हे यक्ष ! हे महायक्ष ! हे यक्षाधिपते ! हे गुह्य ! हे महा गुह्य ! हे गुह्याधिपते ! हे सौम्य ! हे महा सौम्य ! हे सौम्याधिपते ! आपको नमस्कार हो ॥२९॥ हे पक्षिन हे महा पक्षि पते ह दैत्य ! हे महा दैत्याधिपते ! हे रुद्र ! हे महा रुद्राधिपते ! हे विष्णो ! हे महा विष्णुपते ! हे परमेश्वर ! हे प्रजापते ! आपके लिये नमस्कार हो ॥३०॥ उन अश्विनी कुमारों ने इस प्रकार प्रजापति की स्तुति की । तब ब्रह्मा सन्तुष्ट होकर कहने लगा कि हे अश्विनी कुमारो ! देवताओं से भी दुर्लभ वर को मागो जिस वरदान से तुम सुख पूर्वक स्वर्ग में निवास करोगे ॥३१॥३२॥ अश्विनी कुमारों ने कहा हे प्रजापते ! हमें देवताओं का हिस्सा दीजिये देवताओं का जो सोमरस पीना है वैसा ही हमें भी दीजिये ॥३३॥ ब्रह्मा ने कहा तुम्हारा रूप-सौन्दर्य अद्वितीय होगा तथा सब वस्तुओं में तुम वैद्य बनोगे अर्थात् आप अद्वितीय आयुर्वेद शास्त्र जानने वाले होंगे तथा लोकों में आपको सोमपान का भी हिस्सा मिलेगा यह सब ठीक होगा ॥३४॥ महातपा कहने लगा यह सब वरदान ब्रह्मा ने अश्विनी कुमारों को द्वितीया तिथि के दिन दिया था अतः यह द्वितीया तिथि सर्वोत्तम है ॥३५॥ अच्छे रूप सौन्दर्य की इच्छा वाला मनुष्य इस द्वितीया तिथि में पुष्पाहार को एक सम्वत्सर तक करने से-मनुष्य सौन्दर्य वाला हो जाता है ।३६॥ और जो गुण अश्विनी कुमारों के हैं वही उस मनुष्य के भी

हो जाते हैं जो इन अश्विनी कुमारों की उत्तम जन्म कथा सुनता है वह पाप निर्मुक्त तथा पुत्रवान् होता है ॥२७॥ इति वराह पुराणे आदि कृतवृतान्ते महातप उपख्याने अश्विनो रूत्पत्तिनाम काशीराम विहित भाषा टीकायाम् विंशो ऽध्यायः ॥२०॥

अथः एक विंशतितमोऽध्यायः

दोहा:— इकीसवें अध्याय में, प्रकटे रुद्र महान ।
दक्ष यज्ञ विध्वंश कियो, हरि हर युद्ध महान ॥

अथः गौरी उत्पत्ति— प्रजापाल कहने लगा हे महा प्राज्ञ ! परमात्मा के वरदान देने से संस्तुति हुई गौरी ने किस प्रकार मूर्ति ग्रहण की सो विस्तार पूर्वक कहिये महातपा कहने लगा पहिले प्रजा रचने की इच्छा से प्रजापति ब्रह्मा सोचने लगा पर प्रजा नहीं रची गई ॥१॥२॥ तब ब्रह्मा के क्रोध से रुद्र परकट हुआ रोने उसका नाम रुद्र हुआ ॥३॥ उस अमित देह वाले रुद्र के लिये स्वयंम् परजापति ब्रह्मा ने अपने शरीर से पैदा हुई गौरी सरस्वती देवी अपनी कन्या भार्य्यार्थ दी ।४॥ वह रुद्र उस वरासेहा भारती को प्राप्त कर परम हर्षित हुआ । सृष्टि काल में ब्रह्मा ने रुद्र को कहा कि तू तपस्या के द्वारा पूजा की रचना कर यह बार बार कहने पर भी मैं असमर्थ हूं, कह कर रुद्र जल में डूबने लगा तू तपोर्थी है तप से हीन है पूजा रचने को समर्थ नहीं है इस पूकार विचार कर रुद्र जल में डूब गया ॥५॥६॥७॥ उस रुद्र के जल में डूब जाने पर ब्रह्मा ने परम सुन्दर अपनी कन्या भारती को अपने ही शरीर में रख दिया ॥८॥ फिर पूजा रचने की इच्छा से ब्रह्मा ने सात मानस पुत्र रचे तथा दक्ष पूजापति रचा तब से लेकर पूजा दिन दिन बढ़ने लगी ॥९॥ उस सृष्टि में इन्द्र के सहित सारे देवता अष्टवसु रुद्र आदित्य तथा मरुद्गण ये सब ही दक्षिणायणी के पुत्र थे ॥१०॥ जिसको पहिले रुद्र

ने ग्रहण किया था वह गौरी ब्रह्मा ने पुन्यर्थ दक्ष को दी वह देवी फिर होकर दाक्षायणी हुई ॥११॥१२। फिर दक्ष ने अपनी बेटियों के लड़कों को देखकर प्रजापति को प्रसन्न करने के लिये यज्ञ प्रारम्भ किया ॥१३॥ उस यज्ञ में ऋत्विजों का कर्म ब्रह्मपुत्र मरीच्यादियों ने ही यथा स्थानों में विभक्त होकर किया ॥१४॥ स्वयम् मरीची ब्रह्मा हुआ, तथा अत्रि यज्ञ कर्म में स्थित रहा, अंगिरा आग्निध्र हुआ, पुलस्त्य होता हुआ, पुलह उद्गाता हुआ, महातपा क्रतु उस यज्ञ में प्रस्तोता हुआ, प्रचेता ऋषि प्रतिहर्ता हुआ, वशिष्ट सुब्रह्मण्य हुआ, सनकादिक सभासद हुये ॥१५॥१६ ॥१७॥ उस यज्ञ में याज्य ब्रह्मा था इज्य विश्व कृत था पूज्य दक्ष था दुहिता के लड़के रुद्र, अदित्य, अंगिरादि, थे। पितर उस यज्ञ में प्रत्यक्ष थे पितरों के प्रसन्न होने पर सारा संसार प्रसन्न होता है उस यज्ञ में भागार्थी आदित्य वसु आदि देवता थे ॥१६॥ जभी पितरों के सहित विश्वदेवो मरुद्गण गंधर्व आदि हवि ग्रहण कर रहे थे तभी रुद्र जल से ऊपर उठा जो कि पहिले ब्रह्मा के कोप से पैदा होकर तप करने जल में गया था ॥२०॥ ॥२१॥ फिर सहस्र सूर्य्यों के समान कांति वाला ज्ञानमय सर्वदेव मय तथा अमल स्वरूप रुद्र जल से बाहर आया ॥२२॥ हे राजन्! सारे जगत् का प्रत्यक्ष दर्शी रुद्र तपस्या से अत्यंत शोभा को प्राप्त हुआ उस समय पांचों की सृष्टि हुई थी स्वर्ग में रहने वालों की तथा चार प्रकार से पृथ्वी में रहने वालों की तत्काल रुद्र स्वर्ग की भी सम्भूति हुई ॥२३॥२४॥ हे पृथ्वी सत्तम! अब तू रुद्र सर्ग को सुन दश हजार वर्ष तक महा जल में तपस्या करके रुद्र जब अधिरुद्र हुआ तब पृथ्वी को जंगल तथा मनुष्य पशुओं से व्याप्त सस्यधानों से रमणीय देखकर दक्ष घर में ऋत्विजों के शब्द तथा आश्रमों में बड़े योगस्थों से कीर्तित शब्द रुद्र ने सुने ॥२५॥२६॥२७॥ तब ऐसा सुनकर महातेजा

सर्वज्ञ परमेश्वर रुद्र देव अत्यंत क्रोधित होकर यह कहने लगा कि सर्वात्मा ब्रह्मा ने मुझे रचकर कहा था कि पूजा को बढ़ाओ ।२८॥२९॥ इस समय वह सृष्टि का कर्म किसने किया है ऐसा कह कर क्रोध मे बड़ा भारी शब्द किया उस रुद्रदेव के शब्द करने पर रुद्र के कानों से ज्वाला निकली उस ज्वाला में भूत वेताल उद्गुस्य, प्रेत, पूतनादि करोड़ों निकले जो कि अनेक अस्त्र शस्त्रों से युक्त थे विविध-आयुध धारी भूत समूह को देखकर महादेव ने परम सुन्दर वेद विद्याङ्ग रथ तैयार किया जिसमें स्व-स्व मृगद्वय थे, तीन तत्त्व, तीन वेणु थे तीन सवन त्रिपूजक थे धर्म अक्ष था मारुत ध्वनि थी दिन रात दो पताकायें थी और धर्म अधर्म दण्ड थे ॥३१॥३२॥३३॥३४॥ सर्व विद्या का सकट था स्वयम् ब्रह्मा सारथी था गायत्री धनुष था ओंकार की धनुष की डोरी थी सात स्वर सात वाण थे । इस प्रकार सारी सामिग्री महादेव ने तैयार की ॥३५॥३६॥ प्रतापवान् रुद्र क्रोध से दक्ष यज्ञ की तरफ गया रुद्र के आने पर ऋत्विजों के सारे यंत्र समूह नष्ट हो गये ऋत्विज इस प्रकार विपरीतता देखकर कहने लगे कि हे देवताओ ! तुम्हारा भय का समय आ गया है ब्रह्मा से निर्मित कोई बलवान असुर इस परम दुर्लभ महायज्ञ में यज्ञ भाग लेने के लिये आ रहा है सो तुम्हें युद्ध के लिये तैयार हो जाना चाहिये ऐसा कहकर ऋत्विज दक्ष से कहने लगे ॥३७॥३८॥३९॥४०॥ हे दक्ष! कहो कि यहाँ हमें क्या कार्य करना चाहिये दक्ष बोला कि जल्दी आयुध धारण करो तथा लड़ाई आरम्भ करदो ॥४१॥ दक्ष के कहनानुसार अनेक प्रकार के आयुध धारण करके देवता रुद्र के अनुचरों के साथ महायुद्ध करने लगे ॥४२॥ वहां अनेक प्रकार के अस्त्र- शस्त्र धारी लोकपालों के साथ भूत, वेताल, कूष्माण्ड, ग्रह पूतनादि, युद्ध करने लगे ॥४३॥ देवता भी अनेक प्रकार से बाणों को फेंकते थे तथा तलवा[illegible] [illegible]रते आदि अस्त्र

फेंककर रुद्र के भूतों को मारकर यमराज के यहां पहुंचाते थे तथा रुद्र के अनुचर भी वाण हड्डि तथा जली हुई लकड़ियों से देवताओं को महादेव के सामने ही क्रोध से बलपूर्वक मारते थे ॥४४। ४५॥ फिर भयङ्कर रूप वाले उस संग्राम में रुद्र ने एक वाण से भगदेवता की आंख फोड़ डाली ॥४६॥ रुद्र के वाण से नष्ट चक्षु वाले भगदेवता को देखा पूषा क्रोध युक्त हो रुद्र के साथ युद्ध करने लगा ॥४७॥ महा संग्राम में वाणों की रक्षा करने वाले पूषा देवता के दाँत महादेव ने तोड़ डाले ॥४८॥ रुद्र से पूषा के दाँत तोड़ गिराये देख एकादश रुद्र शीघ्र इधर उधर भागने लगे ॥४६॥ उनको दिशाओं में भागते हुये देखकर आदित्य से छोटा प्रतापवान विष्णु अपनी सेना को इस प्रकार कहने लगा कि पुरुषार्थ घमण्ड तथा महात्म्य को छोड़ कर कहां चले गये हो अपना व्यवसाय, कुल तथा ऐश्वर्य को जल्दी क्यों नहीं स्मरण करते हो ॥५०।५१॥ परमेष्ठी के गुणों से युक्त जिससे पहिले आयु ग्रहण की है उसी अमोघ ब्रह्मा को पृथ्वी में स्मरण करो ।५२॥ ऐसा कहकर पीताम्बर पहिने शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म धारण किये हुये जनार्दन हरि गरुड़ के ऊपर सवार हो गये ॥५३॥ तब हरि हर का घमासान युद्ध रोंगटे खड़े करने वाला हुआ रुद्र ने पाशुपत अस्त्र से हरि को भेदन किया ॥५४ क्रोधवान् हरि ने नारायणास्त्र से रुद्र को भेदन किया तब दोनों अस्त्र आकाश में जाकर लड़ने लगे ॥५५॥ एक दूसरे को मारने की इच्छा से अनेक प्रकार के दाव पेच दिखाते थे उस समय उनका युद्ध दिव्य हजार वर्ष तक हुआ ।५६॥ वह द नों अस्त्र उस युद्ध में अत्यन्त शोभा को प्राप्त हो रहे थे एक मुकुट को धारण किया हुआ था । दूसरा जटा जाल को धारण किया हुआ था एक शख बजाता था दूसरा डमरू की डम डम ध्वनि गुंजायमान करता था ॥५७॥ एक के हाथ में खड्ग था दूसरे के हाथ में दंड

फेंककर रुद्र के भूतों को मारकर यमराज के यहां पहुंचाते थे तथा रुद्र के अनुचर भी वाण हड्डि तथा जली हुई लकड़ियों से देवताओं को महादेव के सामने ही क्रोध से वलपूर्वक मारते थे ॥४४।४५॥ फिर भयङ्कर रूप वाले उस संग्राम में रुद्र ने एक वाण से भगदेवता की आंख फोड़ डाली ॥४६॥ रुद्र के वाण से नष्ट चक्षु वाले भगदेवता को देखा पूषा क्रोध युक्त हो रुद्र के साथ युद्ध करने लगा ॥४७॥ महा संग्राम में वाणों की रक्षा करने वाले पूषा देवता के दाँत महादेव ने तोड़ डाले ॥४८॥ रुद्र से पूषा के दाँत तोड़ गिराये देख एकादश रुद्र शीघ्र इधर उधर भागने लगे ॥४९॥ उनको दिशाओं में भागते हुये देखकर आदित्य से छोटा प्रतापवान विष्णु अपनी सेना को इस प्रकार कहने लगा कि पुरुषार्थ घमण्ड तथा महात्म्य को छोड़ कर कहां चले गये हो अपना व्यवसाय, कुल तथा ऐश्वर्य को जल्दी क्यों नहीं स्मरण करते हो ॥५०।५१॥ परमेष्ठी के गुणों से युक्त जिससे पहिले आयु ग्रहण की है उसी अमोघ ब्रह्मा को पृथ्वी में स्मरण करो ।५२॥ ऐसा कहकर पीताम्बर पहिने शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म धारण किये हुये जनार्दन हरि गरुड़ के ऊपर सवार हो गये ॥५३॥ तब हरि हर का घमासान युद्ध रोंगटे खड़े करने वाला हुआ रुद्र ने पाशुपत अस्त्र से हरि को भेदन किया ॥५४ क्रोधवान् हरि ने नारायणास्त्र से रुद्र को भेदन किया तब दोनों अस्त्र आकाश में जाकर लड़ने लगे ॥५५॥ एक दूसरे को मारने की इच्छा से अनेक प्रकार के दाव पेच दिखाते थे उस समय उनका युद्ध दिव्य हजार वर्ष तक हुआ ।५६॥ वह दोनों अस्त्र उस युद्ध में अत्यन्त शोभा को प्राप्त हो रहे थे एक मुकुट को धारण किया हुआ था । दूसरा जटा जाल को धारण किया हुआ था एक शंख बजाता था दूसरा डमरू की डम डम ध्वनि गुंजायमान करता था ॥५७॥ एक के हाथ में खड्ग था दूसरे के हाथ में दंड

सर्वज्ञ परमेश्वर रुद्र देव अत्यंत क्रोधित होकर यह कहने लगा कि सर्वात्मा ब्रह्मा ने मुझे रचकर कहा था कि प्रजा को बढ़ाओ ।२८॥२६॥ इस समय वह सृष्टि का कर्म किसने किया है ऐसा कह कर क्रोध मे बड़ा भारी शब्द किया उस रुद्रदेव के शब्द करने पर रुद्र के कानों से ज्वाला निकली उस ज्वाला में भूत वेताल ब्रह्मरूप, प्रेत, पूतनादि करोड़ों निकले जो कि अनेक अस्त्र शस्त्रों से युक्त थे विविध-आयुध धारी भूत समूह को देखकर महादेव ने परम सुन्दर वेद विद्याङ्ग रथ तैयार किया जिसमें स्व-श्व मृगद्वय थे, तीन तत्व, तीन वेणु थे तीन सवन त्रिपूजक थे धर्म अत्त था मारुत ध्वनि थी दिन रात दो पताकायें थी और धर्म अधर्म दण्ड थे ॥३१॥३२॥३३॥३४॥ सर्व विद्या का सकट था स्वयम् ब्रह्मा सारथी था गायत्री धनुष था ओंकार की धनुष की डोरी थी सात स्वर सात बाण थे । इस प्रकार सारी सामिग्री महादेव ने तैयार की ॥३५॥३६॥ प्रतापवान् रुद्र क्रोध से दक्ष यज्ञ की तरफ गया रुद्र के आने पर ऋत्विजों के सारे यंत्र समूह नष्ट हो गये ऋत्विज इस प्रकार विपरीतता देखकर कहने लगे कि हे देवताओ ! तुम्हारा भय का समय आ गया है ब्रह्मा से निर्मित कोई बलवान असुर इस परम दुर्लभ महायज्ञ में यज्ञ भाग लेने के लिये आ रहा है सो तुम्हें युद्ध के लिये तैयार हो जाना चाहिये ऐसा कहकर ऋत्विज दक्ष से कहने लगे ॥३७॥३८॥३६॥४०॥ हे दक्ष ! कहो कि यहाँ हमें क्या कार्य करना चाहिये दक्ष बोला कि जल्दी आयुध धारण करो तथा लड़ाई आरम्भ करदो ॥४१॥ दक्ष के कहनानुसार अनेक प्रकार के आयुध धारण करके देवता रुद्र के अनुचरों के साथ महायुद्ध करने लगे ॥४२॥ वहां अनेक प्रकार के अस्त्र- शस्त्र धारी लोकपालों के साथ भूत, वेताल, कूष्माण्ड, ग्रह पूतनादि, युद्ध करने लगे ॥४३॥ देवता भी अनेक प्रकार से बाणों को फेंकते थे तथा तलवार, खड्ग, फरसे आदि अस्त्र

फेंककर रुद्र के भूतों को मारकर यमराज के यहां पहुंचाते थे तथा रुद्र के अनुचर भी वाण हड्डि तथा जली हुई लकड़ियों से देवताओं को महादेव के सामने ही क्रोध से बलपूर्वक मारते थे ।।४४। ४५।। फिर भयङ्कर रूप वाले उस सग्राम में रुद्र ने एक वाण से भगदेवता की आंख फोड़ डाली ।।४६।। रुद्र के वाण से नष्ट चक्षु वाले भगदेवता को देखा पूषा क्रोध युक्त हो रुद्र के साथ युद्ध करने लगा ।।४७।। महा संग्राम में वाणों की रक्षा करने वाले पूषा देवता के दाँत महादेव ने तोड़ डाले ।।४८।। रुद्र से पूषा के दाँत तोड़ गिराये देख एकादश रुद्र शीघ्र इधर उधर भागने लगे ।।४६।। उनको दिशाओं में भागते हुये देखकर आदित्य से छोटा प्रतापवान विष्णु अपनी सेना को इस प्रकार कहने लगा कि पुरुषार्थ घमण्ड तथा महात्म्य को छोड़ कर कहां चले गये हो अपना व्यवसाय, कुल तथा ऐश्वर्य को जल्दी क्यों नहीं स्मरण करते हो ।।५०।५१।। परमेष्ठी के गुणों से युक्त जिससे पहिले आयु ग्रहण की है उसी अमोध ब्रंह्मा को पृथ्वी में स्मरण करो ।५२।। ऐसा कहकर पीताम्बर पहिने शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म धारण किये हुये जनार्दन हरि गरुड़ के ऊपर सवार हो गये ।।५३।। तब हरि हर का घमासान युद्ध रोंगटे खड़े करने वाला हुआ रुद्र ने पाशुपत अस्त्र से हरि को भेदन किया ।।५४ क्रोधवान् हरि ने नारायणास्त्र से रुद्र को भेदन किया तब दोनों अस्त्र आकाश में जाकर लड़ने लगे ।।५५।। एक दूसरे को मारने की इच्छा से अनेक प्रकार के दाव पेच दिखाते थे उस समय उनका युद्ध दिव्य हजार वर्ष तक हुआ ।५६।। वह द नों अस्त्र उस युद्ध में अत्यन्त शोभा को प्राप्त हो रहे थे एक मुकुट को धारण किया हुआ था । दूसरा जटा जाल को धारण किया हुआ था एक शख वजाता था दूसरा डमरू की डम डम ध्वनि गुंजायमान करता था ।।५७।। एक के हाथ में खड्ग था दूसरे के हाथ में दंड

था एक का शरीर कौस्तुभ मणि से सुशोभित था तो दूसरे का शरीर भस्म से विभूषित था ।।५८।। एक गदा घुमा रहा था तो दूसरा दण्ड घुमा रहा था एक का गला मणियों से सुशोभित था दूसरे का गला मुन्ड मालाओं युक्त था ।।५६।। एक पीताम्बर पहिने था दूसरा सर्प मेखला से युक्त था इस प्रकार रुद्र तथा नारायणात्मक दोनों अस्त्र आपस में स्पर्धा करते हुये लड़ते रहे ।।६०।। एक दूसरे से बढ़कर था उन अस्त्रों को देख ब्रह्मा कहने लगा कि हे अस्त्रो ! अपने अपने स्वभाव से दोनों ही शांत हो जाओ ।।६१। इस प्रकार ब्रह्मा के कहने पर दोनों अस्त्र शांत हो गये फरि विष्णु और रुद्र से ब्रह्मा यह कहने लगा कि तुम दोनों हरि हर लोक में प्रसिद्धि को प्राप्त करोगे और यह नष्ट हुआ दक्ष यज्ञ सम्पूर्णता को प्राप्त होगा ।।६२।।६३।। दक्ष की संतति से यह लोक विख्यात हो जायगा ।।५४।। इस प्रकार हरि- हर को समझा कर लाक पितामह ब्रह्मा लोकों को यह कहने लगा कि रुद्र का यज्ञ भाग इस रुद्र को देदो ।।६५।। रुद्र भाग जेठा है यह वैदिक श्रुति है हे देवताओ परमेष्ठी स्वरूप रुद्र की तुम स्तुति करो ।।६६।। भग की आंख फोड़ने वाले तथा पूषा के दान्त तोड़ने वाले रुद्र की तुम जल्दी इन गीतों तथा नामों से स्तुति करो ।।६७।। जिस रुद्र देव की स्तुति करने से तुम्हें वरदान प्राप्त होगा ब्रह्मा के ऐसा कहने पर देवता स्तुति करने लगे । ६८।। स्वयंभू को नमस्कार कर देवता स्तुति करने लगे देवता बोले विषम नेत्र के लिये तथा त्र्यम्बक को नमस्कार हो। ६६।। सहस्र नेत्र वाले को नमस्कार हो शूलपाणि को नमस्कार दण्ड धारी को नमस्कार हो ।।७०।। हे देव ! आप अग्नि ज्वाला तथा करोड़ों सूर्यों के समान कान्ति वाले हो इस समय हम आपके अदर्शन होने पर विज्ञान से मूढ़ हुये हैं ।।७१।। हे शम्भो ! त्रिनेत्र के लिये नमस्कार हो दुख दूर करने वाले के लिये नमस्कार हो हे त्रिसूल पाणि ! हे भयङ्कर

मुख व रूप वाले हे समस्त देवेश्वर ! हे शुद्ध भाव ! हे रुद्र ! हे अच्युत ! हे सर्व भाव हमारे ऊपर प्रसन्न हो जाइये ।।७२।। हे पूषा के दाँत तोड़ने वाले हे भीम रूप ! हे सर्पराज से मनोहर कंठ वाले हे विशाल देह ! हे अच्युत ! हे नीलकंठ ! हे विश्वेश्वर हे विश्वमूर्ते आप हमारे ऊपर प्रसन्न हो जाइये ।।७३।। हे भग देवता की आंख फोड़ने में चतुर ! यज्ञ से प्रधान हिस्सा ग्रहण कीजिये हे देवेश्वर ! हे नीलकंठ ! प्रसन्न हो जाइये हे सर्व गुणेपते ! हमारी रक्षा कीजिये ।।७४।। सफेद अङ्गराग से अप्रतिपन्न मूर्ति वाले ! हे कपाल धारी हे त्रिपुरासुर मारने वाले हे पुष्कर नाल में जन्म लेने वाले हे उमापते हम दुखियों की रक्षा कीजिये।।७५।। हे देववर हे अनन्त हे सुरेश ! हम आपके शरीर में अनेक वेदवर सर्गों को देख रहे हैं जो कि अङ्गों के सहित हैं विद्या सहित हैं तथा पदक्रम सहित हैं ये सब वेद आप ही में लीन हैं। ७६।। हे भव हे सर्व हे महादेव हे पिनाकिन् हे रुद्र ! हे हर ! हम आपको नमस्कार करते हैं हे विश्वेश ! हे परमेश्वर हमारी रक्षा कीजिये ।।७७।। सब देवताओं के इस प्रकार स्तुति करने पर देव देव महादेव प्रसन्न होकर यह कहने लगा ।।७८।। रुद्र बोले भग की आंख ठीक हो जाय पूषा के मुख में दाँत आ जांय तथा दक्ष का यज्ञ पूर्ण हो जायगा अदिति पुत्र देवताओं को भी पशु भाव से दूर कर लूंगा जो देवता मेरे दर्शन से पशु भाव को प्राप्त हुये हैं वह मैंने एक दम दूर कर लिया है वह पशु भाव आप लोगों के पतित्व को प्राप्त होगा मैं सब विद्याओं का आद्य सनातन पति हूं मैं पति भाव से पशुओं के मध्य में स्थित हूँ अतः संसार में मेरा नाम पशु पति होगा। ७६। ।।८०।।८१।।८२।। जो मेरा यजन करेंगे उनको पशु पति दीक्षा होगी रुद्र के ऐसा कहने पर लोक पितामह ब्रह्मा स्नेह युक्त मन्द मुस्करा कर रुद्र से यह वचन बोला कि निश्चय ही आपका पशु

पति नाम लोक में विख्यात होगा ॥८३। ८४॥ ये पशु पति देव संसार में विख्यात होंगे और समस्त लोकादि इनकी आराधना किया करेंगे ॥८५। इस प्रकार रुद्र को कह फिर ब्रह्मा दक्ष को कहने लगा हे दक्ष ! पहिले ही रची हुई गौरी को तू रुद्र के लिये देदे ॥८६॥ इस प्रकार कह ब्रह्मा ने दक्ष के सामने ही उस परम सुन्दर अपनी कन्या गौरी महादेव को देदी ॥८७। बहुमान् पुरसर दक्ष का प्रिय कार्य कर्त्ता हुआ दाक्षायणी कन्या को ग्रहण करने पर महादेव के लिये देवताओं के नजदीक कैलाश स्थान निवास के लिये दिया रुद्र भी भूतों के सहित कैलाश पर गया और निवास करने लगा ॥८८॥८९॥ देवता भी प्रसन्न होकर अपने स्थानों को चले गये । ब्रह्मा भी दक्ष सहित प्राजापत्य पुर को गया ॥९०॥ इति वाराह पुराणे आदि कृत वृत्तान्ते महातप उपाख्याने गौरेयुत्पत्तिर नाम काशीराम कृत भाषा टीकायाम् एकविंशोऽध्यायः । २१॥

अथः द्विविंशोऽध्यायः

दोहाः— इस बाइस अध्याय में, दक्ष सुता तज देह ।
हिम गिरि घर पैदा हुई, कीनो भव से नेह ॥

अथः गौरी विवाह— महातपा कहने लगा महादेव कैलाश मेंसुख पूर्वक निवास करने लगे कुछ दिन पश्चात् गौरी अपने पिता का महादेव से वैर स्मरण कर सोचने लगी कि इन महादेव ने मेरे पिता दक्ष का अपराध जान उसका यज्ञ विध्वंस किया मेरे पिता ने महादेव जी का बड़ा भारी अपराध किया है अतः इस दक्ष से पैदा हुई मुझको भी महादेव निंदित ही समझेंगे । इसलिये मैं अपने शरीर को त्याग देती हूँ तपस्या से आराधना कर इस शरीर को छोड़ूंगी तथा फिर जन्म लेकर देव देव महादेव को प्राप्त करूंगी जिसने बान्धव अनुचर नाश किये हैं ऐसे अपने पिता दक्ष के पास किस प्रकार जाऊं इस प्रकार भव की पत्नी

तथा दक्ष की दुहिता गौरी विचार करके तप करने हिमालय महा गिरिराज में गई ॥१॥२॥३॥४॥ उस हिमालय में बहुत दिन तक तप से शरीर सुखाती हुई अपने शरीर से पैदा हुई योगाग्नि से अपना शरीर जलाकर अन्तर्धान हो गई फिर दूसरे जन्म में हिमालय की पुत्री होकर उमा कृष्ण नाम से विख्यात हुई।।५॥ इस प्रकार हिमालय के घर में शुभ शोभन परम रमणिय मूर्ति ग्रहण कर पुनः त्रिलोचन देव महादेव को स्मरण कर तप करने लगी ॥६। महादेव भी मेरा पति हो कहकर तप करने लगी हिमालय पर्वत पर पार्वती ने तपस्या करके महादेव की आराधना की फिर महादेव ने ब्राह्मण का भेष धर पार्वती के आश्रम में आया ॥७॥८॥ वह महादेव बूढ़ा स्वरूप धारण किये था सर्वाङ्ग शिथिल थे तथा पद पद पर गिरता लुढ़कता मुश्किल से ब्राह्मण वेष धारी महादेव उनके समीप आकर कहने लगा कि हे भद्रे मैं भूका हूं मुझ भूके ब्राह्मण को भोजन दीजिये ॥९॥ उस ब्राह्मण के ऐसा कहने पर शैल सुता ब्राह्मण को कहने लगी कि हे विप्र! मैं फलादिक भोजन कराऊंगी आप शीघ्र स्नान करके आइये फिर इच्छा पूर्वक भोजन करना। १०॥ शैल सुता के ऐसा कहने पर वह ब्राह्मण वहीं नजदीक गंगा में स्नान करने गया ॥११॥ स्नान करते समय उस द्विज रूपी रुद्र ने माया मय भयङ्कर मकर रूप धारण करके उस ग्राह रूप से द्विज रूप को ग्रसने लगा ॥१२॥ बलवान मकर से अपने को ग्रसित कराकर तदनन्तर अपने बूढे शरीर को ग्राह ग्रसित उस शैल सुता के पास संकेत से दिखाकर जोर से कहने लगा ॥१३॥ हे कन्ये! अब ब्रह्मण्यता को प्राप्त हुये मुझ बूढ़े ब्राह्मण को इस ग्राह से बचा दीजिये जमी को विकृति न न पहुंचू जल्दी मुझे बचाने के योग्य हो ॥१४। उस ग्राह ग्रस्त ब्राह्मण के इस प्रकार कहने पर पारवती सोचने लगी कि मैं पितृ भाव से शैल राज को भर्तृ भाव से शंकर को स्पर्श करती हूँ

परन्तु तप से पवित्र हुई मैं ब्राह्मण को किस प्रकार स्पर्श करूं ॥१५॥ यदि इस ग्राह ग्रस्त को नहीं छुड़ाती हूं तो मेरे ऊपर निसन्देह ब्रह्म हत्या लगेगी ॥१६॥ और यदि छुड़ाती हूँ तो मेरा धर्म जरूर नष्ट होगा परन्तु ब्रह्म हत्या नहीं लगेगी ऐसा कह शीघ्रता से चली गयी ॥१७॥ वह जल्दी जाकर हाथ से ब्राह्मण को पकड़ कर जल मध्य से जभी किनारे पर खींचा तभी महादेव ने ग्राह तथा ब्राह्मण का रूप छोड़कर अपना ही रूप धारण किया ॥१८॥ जिसको लक्ष्य करके पार्वती ने कठिन तपस्या की वही भगवान् रुद्र उसके हाथ के सहारे जल से किनारे पर आये ॥१९॥ उन महादेव जी को देख पार्वती पूर्व त्याग को स्मरण कर बहुत शर्मिंदी हुई तथा शर्म से कुछ न कहा गया ॥२०॥ चुप हुई गौरी को देख रुद्र ने कुछ हंसकर कहा कि हे भद्रे मुझे हाथ से पकड़ कर क्यों छोड़ना चाहती है ॥२१॥ हे भद्रे ! यदि मेरे साथ पाणि ग्रहण करना वृथा समझती हो तो मैं आपके पास भोजन की कहता हूँ ॥२२। यह मैंने परिहास से नहीं कहा बल्कि परम्परा से कहा है तब पार्वती शर्मिन्दी हो मन्द मुस्कान सहित बचन बोलने लगी ॥२३॥ हे देव देव ! हे त्रिलोचन ! मेरे तप का उद्योग आप ही के लिये है पहिले जन्म में आपही महेश्वर मेरे पति थे इस जन्म में भी आपही मेरे पति हो सकते हैं दूसरा कदापि नहीं हो सकता परन्तु मेरा पिता शैलराज मेरा विवाह आपके साथ करेंगे अतः उनके पास जाती हूं पिता की आज्ञा लेकर आप विधि विधान से मेरा पाणिग्रहण करना ॥२४॥२५॥२६॥ ऐसा कह देवी पार्वती अपने पिता हिमालय के पास जाकर हाथ जोड़कर कहने लगी ।२७॥ मैंने यहां इस समय पहिले जन्म का भर्ता दक्ष मखान्तक रुद्र तपस्या से जान लिया है ।२८॥ वह विश्वपति महादेव ब्राह्मण का वेष धरकर मेरे आश्रम में आया तथा मुझसे भोजन मांगने लगा मैंने कहा कि मैं भोजन कराऊंगी आप स्नान

से जल्दी निवृत्त होकर आइये मेरे कहने पर वह ब्राह्मण स्नान करने जान्हवी गंगा में गया वहां जाकर बूढ़े ब्राह्मण के वेष वाले शंकर ने अपनी माया से अपने आप को ग्राह गृस्त करके आर्त दशा हो मुझे पुकारने लगा ब्रह्म हत्या के डर से मैंने उनको हाथ से पकड़ा मेरे हाथ से पकड़ते ही शंकर ने अपना सच्चा रूप दिखा कर कहा हे देवी! पाणिगृहण के लिये आये हुये मुझ तपोवन में कुछ विचार अथवा अन्यथा शंका न करिये ॥२६॥३०॥३१॥३२॥ उनके ऐसा कहने पर उनको विश्वास दे मैं आपको पूछने यहां आई हूँ ॥३३॥ इस समय जो कार्य योग्य है उसको जल्दी कीजिये ॥३४॥ अपनी कन्या पार्वती के इस प्रकार कहने पर हर्षयुक्त हो शैलराज कहने लगा कि हे पुत्री! मैं संसार में धन्य हूँ जिसका कि स्वयम् शंकर जामाता होने वाला है हे पुत्री! तेरे द्वारा मैं सन्तान वाला कहाऊंगा। ३५॥३६॥ हे पुत्री! तूने मुझे देवताओं के मस्तक पर रख लिया है जभी मैं आता हूँ तू क्षण भर ठहर ी रह ॥३७॥ ऐसा कह शैल राजा ब्रह्मा के पास गया वहां सर्व देव पितामह ब्रह्मा को देखकर दण्डवत् प्रणाम किया तथा ब्रह्मा से बोला कि हे ब्रह्मन्! मेरी उमा नाम की लड़की है उसको आज मैं रुद्र के लिये दे रहा हूँ तब ब्रह्मा के कहा कि ठीक है रुद्र के लिये अपनी लड़की को अवश्य दीजिये ॥३८॥३६॥ ॥४०॥। ब्रह्मा की आज्ञा पाकर शैलराज जल्दी अपने घर आकर तुम्बुरु नारद हा हा! हू हू! किन्नर, गन्धर्व, तथा असुर राक्षसों को भी बुलाने गया ॥४१॥ सारे पर्वत नदी, शैल, वृक्ष, औषधि लता वगैरह सारे ही अपनी अपनी मूर्ति धारण कर शंकर के साथ हिमालय कन्या का विवाह महोत्सव देखने आये ॥४२॥ उस विवाह में वेदी स्थल पृथ्वी थी, कलस सात समुद्र थे, सूर्य- चन्द्र दीपक थे, नदियां जल बहाने की पात्र थीं ॥४३॥ इस प्रकार विवाह सामिग्री को तय्यार कर शैल राज ने रुद्र बुलाने

के लिये मन्दर पर्वत भेजा मन्दर के कहनानुसार शंकर शीघ्र आये तथा आकर विधि- पूर्वक सोम पार्वती का पाणिग्रहण किया ॥४४॥४५॥ उस विवाह उत्सव में पर्वत मुनि तथा नारद मुनि गाने लगे सिद्ध नाचने लगे वनस्पतियाँ अनेक प्रकार के पुष्पों को वरसाने लगे ऊपर से अप्सरायें नृत्य करने लगीं ॥४६॥ उस विवाह महोत्सव में लोक पितामह ब्रह्मा आकर कहने लगा कि हे पुत्री ! ससार में तेरा प्रधान भर्ता है हे शिव तेरी उत्तम स्त्री उमा है अर्थात् तुम्हारा जोड़ा सबसे उत्तम है इस प्रकार उमा के सहित रुद्र को तथा रुद्र के सहित उमा को कहकर ब्रह्मा अपने पुर को चला गया ॥४७॥४८॥ वह विवाह जिस प्रकार से हुआ था वह सब महातपा ऋषि ने पूछने वाले प्रजापाल राजा को सुनाया । ३६॥ परमार्थ ने यह गौरी की उत्पत्ति तथा विवाह जिस प्रकार हुआ है तेरे पास कह दिया है ॥५०॥ यह सब गौरी का विवाह आ।द तृतीया के दिन हुआ है अतः तृतीया तिथि में हमेशा सौभाग्य की इच्छा वाला लवण न खावे ॥५१॥ जो स्त्री इस तृतीया तिथि में व्रत उपवास करे उसका सौभाग्य बढ़ता है ॥५२॥ जो दुर्भगा नारि या दुर्भग पुरुष इस कथा को सुनकर तृतिया तिथि में लवण छोड़े, उनकी सौभाग्य द्रव्य सम्पदादि सब कामनायें पूर्ण होती हैं तथा आरोग्य कान्ति पुष्ट होती है ।५३॥५४॥ इति वाराह पुराणे आदि कृत वृतान्ते महातप उपाख्याने गौरी विवाहो नाम काशीराम कृत भाषा टीकायाम् द्वविंशोऽध्यायः ॥२२॥

अथः त्रयोविंशोऽध्यायः

दोहा:— इस तेइस अध्याय में, गनपति जन्म उभार ॥
भव मुख ते पैदा भये, सिद्ध बुद्धि दातार ॥

अथ गणेश उत्पत्तिः– प्रजापाल ने कहा हे महाराज गणपति का मूर्तिमान जन्म किस प्रकार हुआ है यह मेरे मन में

सन्देह है उसे दूर कीजिये क्योंकि इस सन्देह से मेरा दिल दुख रहा है ॥१॥ महातपा ऋषि बोले पहिले देवगण तथा तपोधन् ऋषियों ने कार्य आरम्भ किया परन्तु कार्य में अनेक विघ्न होते थे। २॥ अच्छे काम करने पर क्रिया विघ्न सहित समाप्त होती थी तथा असत् कार्यों की क्रिया निर्विघ्न समाप्त होती थी तब पितरों के सहित देवता सोचने तथा सलाह करने लगे कि असत् कार्यों में विघ्न पूर्वक तथा शुभ कार्यों में निर्विघ्न पूर्वक कार्य समाप्ति होवे ॥४॥ उन देवताओं के इस प्रकार सलाह करने पर उनकी यह बुद्धि हुई कि इसका निर्णय करने महादेव के पास जांय ॥५॥ वे देवता कैलाश वासी को अभिमन्नित कर सविनय दण्डवत् प्रणाम पूर्वक कहने लगे ॥६॥ देवता बोले हे देव देव हे महादेव ! हे शूल पाणि ! हे त्रिलोचन ! असत् कार्यों में विघ्न के लिये तुम किसी एक पुरुष को पैदा करने के योग्य हो सो कीजिये ।७॥ देवताओं के ऐसा कहने पर हर्षित हो भगवान् शंकर टक टकी वाली आंखों से उमा को देखने लगे ॥८॥ देवताओं के सामने उमा को देख कर शंकर को चिंता हुई कि किस प्रकार हमें आकाश में मूर्ति दीखेगी ॥६। पृथ्वी की मूर्ति विद्यमान है जल की मूर्ति विद्यमान है तथा तेज की भी मूर्ति है वायु की भी मूर्ति यह दीख रही है ॥१०॥ परन्तु आकाश की किसी भी प्रकार मूर्ति नहीं दीखती इस प्रकार ज्ञात कर महादेव जी अट्टहास करने लगे, ज्ञान शक्ति पुरुष को देखकर जो शम्भू ने आकाश में देखा ब्रह्मा ने पहिले जिसको शरीरियों का शरीर कहा जिसलिये परमेष्ठी देव हंसे इन चार कार्यों से पृथ्वी जल, तेज, वायु, इन चारों में ही शम्भू के हास से अति तेजस्वी मूर्ति मान महा कान्ति वाला उज्वल मुख वाला दिशाओं को देदीप्यमान करता हुआ तथा परमेष्ठी गुणों से युक्त साक्षात् दूसरे रुद्र के समान कुमार हुआ ॥११॥१२॥१३॥१४॥ उत्पन्न होते ही

देवताओं को भी मोहित करने लगा कान्ति से, दीप्ति से, मूर्ति से, रूप से, वह कुमार महान् आत्मा था ॥१५॥ उस कुमार के अद्भुत रूप सौन्दर्य को देख उमा निर्निमेष चक्षु से कुमार को देखने लगी॥१६। उमा के उस चञ्चल भाव को देख शिव कुपित हुआ तथा कुमार की आखों को मोहने वाले सोभन रूप को देखकर परमेश्वर महादेव ने कुमार गणेश को शाप दिया हे कुमार ! तू हाथी के मुख वाला होगा बड़े पेट वाला होवे तथा निश्चय तेरा मूसा वाहन होगा ॥१७॥१८॥ इस प्रकार बड़े क्रोध में आकर महादेव ने उसको शाप दिया तथा क्रोध से शरीर को उठा हिलाने लगा ॥१६॥ त्रिशिखास्त्र पाणि महादेव जैसे जैसे अपने शरीर को हिलाते जाते थे वैसे ही उनके बालों से जल कण पृथ्वी पर गिर कर चमकने लगे तथा अनेक प्रकार के विनायक जिनके कि हाथी के मुख हैं तमाल के समान नील तथा आञ्जन की कान्ति वाले हाथों में अनेक अस्त्र धारण कर तब महादेव व्याकुल हो मन में कहन लगा कि यह क्या हुआ अद्भुत कर्मकारी एक ही अद्वितीय महत् कार्य करता है ये देवताओं का मनोमिलपित कार्य किया हो तथा इसके चारों तरफ ये कहां से आये ।।१०॥११॥२२॥ उसी प्रकार देवता भी ऐसा ही सोचने लगे तभी विनायकों से पृथ्वी क्षोभित हो गई तब श्रेष्ठ विमान में चढ़कर ब्रह्मा आकाश में यह बोलने लगा ॥२३॥ हे देवताओ अद्भुत रूप धारी सुरनायक त्रिलोचन के द्वारा तुम धन्य हो परमेश्वर से अनुग्रहीत हो विघ्न करने वाले असुरों को अनुगृह तथा धन्यता नहीं हो सकती ॥२४॥ इस प्रकार देवताओं को कहकर ब्रह्मा रुद्र से कहने लगा हे महादेव ! हे विभो ! जो आपके मुह से पैदा हुआ है वह विनायकों का प्रभु है तथा अन्य विनायक इस गणेश कुमार के अनुचर हैं यह विनायक का स्वामी आकाशात्मक गणेश पृथिव्यादि चारों में ही व्यवस्थित

यह आकाश बहुत प्रकार से व्यवस्थित है आपके एक स्मरण करने पर भी वे सारे ही आये हैं अब आप इस सब को शान्त कीजिये गणेश को वरदान अस्त्र आदि प्रदान कीजिये ऐसा कह ब्रह्मा के चले जाने पर शंकर अपने पुत्र गणेश से कहने लगे ॥२५॥२६॥ ॥२७॥ विनायक, विघ्न कर, गजास्थ, गणेश, भव पुत्र, आदि तेरे नाम होंगे तथा ये तेरे प्रचण्ड क्रूर दृष्टि वाले नौकर चले जावें उच्छुस्म दानादि से बड़े शरीर वाले कार्य में सिद्धि को प्रतिपादन करते हुये तथा आप देवताओं में यज्ञों में व अन्य कार्यों में महानुभावता से सबसे पहिले पूजा जायगा अन्यथा तू कार्य सिद्धि का नाश करेगा महादेव के ऐसा कहने पर देवताओं के सहित महादेव ने सोने के कलशों में भरे हुये जल से गणेश का अभिषेक किया तब गणेश अत्यन्त शोभा को प्राप्त हुआ ॥२८॥२६। ३०॥३१। अभिषिक्त हुये गणनायक गणेश को देख देवता गणेश की स्तुती करने लगे ॥३२॥ देवता बोले गजचक्र के लिये नमस्कार हो, गणनायक को नमस्कार हो, हे विनायक आपको नमस्कार हो. हे चण्ड प्राक्रम आपको नमस्कार हो ॥३३॥ विघ्न कर्त्ता को नमस्कार हो, सर्प मेखला वाले को नमस्कार हो। रुद्र मुख से पैदा हुये को नमस्कार हो, लम्बोदर को नमस्कार हो, हे महाराज ! हम सब देवताओं के नमस्कार से आप हमेशा प्रसन्न हो जाइये ॥३४॥ इस प्रकार देवताओं से स्तुत रुद्र से अभिषिक्त होकर पार्वती के पुत्र भाव को प्राप्त हुआ ॥३५॥ वह नामकरण अभिषेक आदि चतुर्थी के दिन हुआ है अतः चतुर्थी सबसे उत्तम है ॥३६॥ इस चतुर्थी के दिन जो तिलों का भोजन कर गणपति की आराधना करता है उसके ऊपर गणपति प्रसन्न होते हैं तथा उसकी मनोकामना पूर्ण करता है ॥३७॥ जो इस स्तोत्र को पढ़ता है अथवा निरन्तर सुनता है उसके कार्य में कोई विघ्न नहीं होते हैं तथा वह पाप

से छूट जाता है। ३८॥ इति वाराह पुराणे आदि कृत वृतान्ते महातप उपाख्याने विनायकोत्पत्तिर्नाम काशीराम कृत भाषा टीकायाम् त्रयोविंशोऽध्यायः ॥२३॥

अथ चौविस्वाऽध्यायः

दोहाः— इस चौविस अध्याय में नाग जन्म विकराल।
प्रजापति आज्ञा पाय के, गये पाताल कराल "

नागों का जन्म – पृथ्वी कहने लगी हे महीधर! किस कारण वे नाग आपके गात्र स्पर्श से महा बलवान् मूर्ति वाले हुये हैं ॥१॥ वाराह बोले प्रजापाल राजा गणपति का जन्म सुनकर फिर कोमल वाणि से महातपा ऋषि को पूछने लगा प्रजापाल ने कहा हे भगवन्! तार्क्ष्य गरुड़ के विषय यानी शत्रु व भोजन नाग कुटिल मूर्ति को किस प्रकार प्राप्त हुये हैं यह मुझे बता दीजिये २॥३॥ महातपा कहने लगा सृष्टि रचते समय ब्रह्मा ने मन के ध्यान से मरीचि पैदा किया मरीचि का पुत्र कश्यप हुआ ॥४॥ कश्यप की भार्या दक्ष पुत्री परम सुन्दरी कद्रु थी कश्यप ने उस कद्रु से महा बलवान पुत्र पैदा किये ॥५॥ अनन्त, वासुकि, महा बलवान कम्बल, करकोटक तथा पद्म आदि अनेक सर्प जाति पैदा किये तथा महा पद्म, शंख, कुलिक पापराजित, इतने कश्यप पुत्रों में प्रधान कहे हैं ॥६।७॥ उनके सन्तानों से यह सारा जगत् भर गया ॥८॥ वे सारे ही नाग भयङ्कर मुख वाले उल्वण विषवाले थे मनुष्यों को देखकर शीघ्र डस कर भस्म कर लेते थे ॥९॥ हे राजन्! जिस प्रकार आकाश में भयङ्कर वायु रहती है उसी प्रकार मनुष्यों का परम दारुण नाश दिनोंदिन होने लगा ॥१०॥ इस प्रकार अपना नाश देख कर सारी प्रजा चारों तरफ से शरण्य परमेश्वर की शरण गये ॥११॥ इसी अभिप्राय को लेकर सारी प्रजा कमल जन्मा ब्रह्मा को कहने लगी ॥१२॥ हे महा भावन तीक्ष्ण दाढ़ वाले भुजङ्गों

से हमारी रक्षा कीजिये प्रति दिन सर्प जिनको दृष्टि से देखते हैं मनुष्य या मृगयूथ वे मारे ही भस्म हो जाते हैं ॥१३॥ आपने सृष्टि रची है और ये नाग सृष्टि का लय कर रहे हैं इस दुर्वृत्त को जान कर जो योग्य है वह कीजिये ॥१४॥ ब्रह्मा बोले मैं आपकी निसन्देह रक्षा करूंगा हे लोकपाल ! गण ! आनन्द पूर्वक अपने अपने स्थान को जाइये । १५॥ अव्यक्त मूर्ति ब्रह्मा के ऐसा कहने पर वे लोकपाल तथा प्रजा चली गई उनके चले जाने पर ब्रह्मा ने वासुकी प्रमुख नागों को बुलाकर अत्यंत क्रोध से शाप दिया ॥१६। ब्रह्मा ने कहा जिससे तुम मेरे रचे हुये मनुष्यों का नाश कर रहे हो अतः दूसरे जन्म मे सुदारुण माता के शाप से निश्चय स्वायंभव मन्वन्तर में तुम्हारा अति घोर नाश होगा ॥१७॥ ब्रह्मा के ऐसा कहने पर कांपते हुये मारे ही सर्प राज ब्रह्मा के पैरों को पकड़ यह वचन कहने लगे ॥१८॥ नाग बोले हे भगवन् ! यह हमारी कुटिल जाति आप ही ने बनाई है विषोलणना, क्रूरता आपने हमारे लिये रची है हे अच्युत! उसको आप शान्त कीजिये ॥१९॥ ब्रह्मा बोले यदि मैने ही तुम कुटिल आशय वाले रचे हो तो फिर क्यों मनुष्यों को निर्दयी होकर हमेशा डंसते हो ॥२०॥ नाग बोले हे महाराज ! आप हमारे लिये मर्यादा कीजिये तथा अलग स्थान दीजिये ॥२१॥ नागों का वचन सुन ब्रह्मा कहने लगा हे नागो ! मनुष्यों के साथ तुम्हारा समय विभाग करता हूँ ॥२२॥ तुम एकाग्र चित से मेरे शाशन को सुनिये अतल वितल तीसरा सुतल नाम का पाताल तुम्हारे निवास करने को घर दे दिया है वहां जाओ जाकर मेरे शासन से अनेक भागों को भोगते हुये मेरे दिन के सात सम्वन्तरों तक रहो फिर वैवेस्वत मन्वन्तर के आदि में कश्यप के पुत्र होवेंगे ॥२३॥२४॥२५॥ सब देवताओं के दायाद यानी उसके साथ बांटदार होंगे तथा गरुड़ के साथ बाँटदार होंगे फिर तुम्हारी

सन्तान चित्रभानु से नष्ट होवेगी ॥२६॥ आपको यह दोष नहीं होगा इसमें संशय नहीं किन्तु जो क्रूर दुर्विनीत फंड़ वाले होवेंगे उनका नाश होगा सबका नहीं ॥२७॥ तम भी काल को प्राप्त होने पर तथा अपकार करने पर मनुष्यों को डंस कर खाना ॥२८॥ तथा जो मनुष्य मंत्र औषधि से युक्त गारुड़ मण्डल मे वध कवच वाले हैं उनको कभी न डसना उनसे हमेशा डर कर ही रहना अन्यथा आप लोगों का नाश होगा २६॥ ब्रह्मा के ऐसा कहने पर वे सारे ही पृथ्वी पर आये तथा ब्रह्मा के शाप के कारण प्रसन्नातः करण पूर्वक पातालादि स्थानों में वास करने करने लगे ॥३०॥३१॥ यह सारा वृतान्त पंचमी तिथि के दिन हुआ इसलिये यह पंचमी तिथि प्रिय है, श्रेष्ठ है, सर्व पापों को दूर करने वाली है ॥३२॥ इस पंचमी तिथि में जो आँवलादि रस छोड़ता है तथा दूध से नागों को स्नान कराता है नाग उसके मित्रता को प्राप्त होते हैं । ३३॥ इति वाराह पुराणे आदि कृत वृतान्ते महातप उपाख्याने नाग जन्म नाम काशीराम कृत भाषा टीकायाम् चतुर्विंशोऽध्यायः ॥२४॥

अथः पचीसवाँ ध्यायः

दोहाः— इस अध्याय में, कार्तिक जन्म महान ।
देवतान के जो भये, सेनापति प्रधान ॥

अथः कार्तिक जन्म– प्रजापाल बोला हे महामुने ! अहङ्कार से कार्तिकेय कैसे हुआ है इस मेरे संशय को मिटा दीजिये ॥१॥ महातपा ने कहा जो सब तत्वों में प्रधान पुरुष कहा गया है उसे अव्यक्त माया हुई अव्यक्त तथा पुरुष के बीच महत्व हुआ जो महान कहा है वही अहङ्कार है ॥२॥३॥ पुरुष जिसको कहा वही विष्णु अथवा शिव स्वरूप है जिसको अव्यक्त कहा वही उमा देवी है वा श्री है ॥४॥ उन विष्णु लक्ष्मी कहो चाहे शिव उमा कहो उनके संयोग से अहङ्कार हुआ वही सेनापति

कार्तिकेय है उसकी उत्पत्ति कहता हूँ हे राजन् सुनिये ॥५॥ आद्य नारायण हैं उनसे ब्रह्मा हुआ फिर मरीच्यादि हुये उनसे आगे कस्यपादि तब आदित्य हुये ॥६॥ तब से लेकर सुर, दैत्य, गन्धर्व, मानुष, खग, पशु आदि सब प्राणियों की सृष्टि कही गई है। ७ सृष्टि के बढ़ जाने पार महा बलवान देव, दत्य, सात्वत भाव याने भक्त भाव ले विजय की इच्छा से आपस में लड़ने लगे ॥८॥ दैत्यों के अनेक युद्ध दुर्मद बलवान् सेना नायक थे हिरण्यकशिपु, हिरण्याक्ष, विप्रचित, भीमाक्ष क्रौंच ये अति बलवान् शूर उस महायुद्ध में देव सेना तथा देवताओं को पतिदिन जीतते थे उन देवताओं का पराजय देख बृहस्पति बोला सेनापति के विना सारी सेना नष्ट हो गई है एक इन्द्र ही से देवों की सेना रक्षित नहीं हो सकती है ॥९॥१०॥११॥१२॥ इसलिये किसी सेनापति को ढूढ़ो देर मत करो बृहस्पति की आज्ञा से ब्रह्मा के पास गये ॥१३॥ वहां जाकर ससंभ्रम से कहने लगे कि हमें सेनापति दीजिये तब ब्रह्मा ने ध्यान किया कि मैं इनका कार्य किस प्रकार करूं ध्यान करके ब्रह्मा ने निश्चय किया कि रुद्र के पास जाना चाहिये फिर देवता, गन्धर्व, ऋषि, चारण सारे ही ब्रह्मा के आगे कर कैलाश पर्वत पर गये वहां पशु पति शिव को देख शक्रादि देवता शिव की अनेक स्तोत्रों से स्तुति करने लगे ॥१४॥१५॥१६॥ देवता बोले शरण आये हुये हम सब महेश्वर त्र्यम्बक भूत भावन को नमस्कार करते हैं हे उमापते! हे विश्वपते! हे मरुत्पते! हे जगत्पते! हे शंकर हमारी रक्षा कीजिये जटा समूह के अग्र भाग में स्थित चन्द्र कान्त से जगत् को प्रकासित करने वाले हे त्रिशूलपाणे! हे पुरुषोत्तम! हे अच्युत! दैत्यों के डर डरे हुये आपकी शरण हैं हमारी रक्षा कीजिये ॥१७॥१८॥ तुम आदि देव हो पुरुषोत्तम हो हरि हो भव हो महेष हो त्रिपुरान्तक हो विभु हो भग देवत की आंख

करने पर महादेव बोले हे देवगण ! आपका क्या कार्य है सो जल्दी कहिये ॥२६॥ देवता बोले हे देवेश ! दैत्य वध के लिये सेनापति दीजिये जिससे कि ब्रह्म मुख्य देवताओं का भला हो जावे ॥३०॥ रुद्र बोले आप लोगों को मैं सेना नायक दूंगा आप दुख रहित हो जाइये होनी वाली बात अवश्य होगी इस प्रकार देवताओं को कह विदा कर महादेव ने पुत्र के हेतु अपने शरीर में स्थित शक्ति को चोभित किया। ३१॥३२। महादेव के शक्ति को चोभित करने पर ज्ञान से शोभायमान साथ ही पैदा हुई शक्ति को धारण करता हुआ, सूर्य समान कान्ति वाला कुमार पैदा हुआ ॥३३॥ हे राजेन्द्र उस कुमार की उत्पत्ति बहुत प्रकार से है अनेक मन्वन्तरों में यह देव सेना नायक हुआ है ॥३४॥ जो ये शरीर में स्थित देव अहङ्कार है प्रयोजन बस वही सेनापति हुआ है ॥३५॥ उस कुमार के पैदा होने पर देवगण सहित ब्रह्मा ने पशु पति शिव की स्तुति पूजा की ॥३६॥ फिर देवता ऋषियों सहित उसने सेन पति कुमार को तृप्त किया वह कुमार भी देवताओं से कहने लगा कि मुझे सहायक तथा वाहन दीजिये । ३७॥ उस कुमार का वाक्य सुन महानुभाव महादेव यह बोले कि हे कुमार ! तुझे क्रीडनक याने खेल के लिये कुक्कट देता हूं तथा साख, विमास, अनुचर देता हूं ॥३८॥ हे कुमार तू भूत ग्रहों का नायक तथा देवताओं का सेनापति होगा शिव के ऐसा कहने पर तदनन्तर देवता अष्ट वाणि से स्कन्ध कुमार की स्तुति करने लगे देवता बोले हे प्रभो ! हे महेश्वर सुत ! तू देव सेना नायक होगा ॥३९॥४०॥ हे षण्मुख ! हे स्कन्ध ! हे विश्वेश ! हे कुकुटध्वज ! हे अग्निपुत्र ! हे शत्रुओं को कम्पित करने वाले हे कुमारेश! हे बालग्रहानुज ! हे जितारे ! हे क्रौंच विध्वंस ! हे कृत्तिकाके पुत्र ! हे शिवात्मज ! हे भूत ग्रह पति श्रेष्ठ ! हे पावके ! हे प्रिय दर्शन ! हेमहाभूत पति के पुत्र ! हे त्रिलोचन आपको

फोड़ने वाले हो, दैत्य रिपु हो, पुरातन हो, वृषध्वज हो, हे देव श्रेष्ठों के भी श्रेष्ठ हमारी रक्षा कीजिये ॥ १९॥ हे हिमालय पुत्री के स्वामी! हे गिरि प्रिया प्रिय! हे प्रभो! हे समस्त देवलोक से पूजित हे गणेश! हे भूतेश! हे कल्याण के अक्षय स्थान! हे श्रेष्ठ दैत्यों को मारने वाले! हे अच्युत! हमारी रक्षा कीजिये ॥२०॥ पृथिव्यादि तत्वों से आप प्रतिष्ठित हो आकाश में आप ध्वनि स्वरूप हो दो प्रकार से आप तेज में हो यानी तेज के जो गुण हैं वह दो गुण आप ही हो जल में तीन गुण हैं वह आप ही हो पृथ्वी में चार गुण से हो पांच गुण प्रधान हो ॥२०॥ वृक्षों में आप अग्नि स्वरूप से हो पत्थरों में सत्य स्वरूप हो तिलादियों में तैल स्वरूप महेश्वर ही हो हे रुद्र! दैत्य गणों से पीड़ित हमारी रक्षा कीजिये ॥२२॥ हे त्रिलोचन! जब अनायास, अकाण्ड, यह कुछ नहीं था हे विरुद्ध लोचन! आप ही तब प्रमाण बाधा रहित थे ॥२३॥ हे कपाल मालिन्! हे शशि खण्ड सेखर! हे श्मशान वासिन् हे श्वेत भस्म गुंठित! हे फणीन्द्र सम्वीत ... हे अन्तक के भी अन्तक! आप चतुर्बुद्धि से हमारी रक्षा की...

करने पर महादेव बोले हे देवगण ! आपका क्या कार्य है सो जल्दी कहिये ॥२६॥ देवता बोले हे देवेश ! दैत्य वध के लिये सेनापति दीजिये जिससे कि ब्रह्म मुख्य देवताओं का भला हो जावे ॥३०॥ रुद्र बोले आप लोगों को मैं सेना नायक दूंगा आप दुख रहित हो जाइये होनी वाली बात अवश्य होगी इस प्रकार देवताओं को कह विदा कर महादेव ने पुत्र के हेतु अपने शरीर में स्थित शक्ति को चोभित किया। ३१॥३२। महादेव के शक्ति को चोभित करने पर ज्ञान से शोभायमान साथ ही पदा हुई शक्ति को धारण करता हुआ, सूर्य समान कान्ति वाला कुमार पैदा हुआ ॥३३॥ हे राजेन्द्र उस कुमार की उत्पत्ति बहुत प्रकार से है अनेक मन्वन्तरों में यह देव सेना नायक हुआ है ॥३४॥ जो ये शरीर में स्थित देव अहङ्कार है प्रयोजन वस वही सेनापति हुआ है ॥३५॥ उस कुमार के पैदा होने पर देवगण सहित ब्रह्मा ने पशु पति शिव की स्तुति पूजा की ॥३६॥ फिर देवता ऋषियों सहित उसने सेन पति कुमार को तृप्त किया वह कुमार भी देवताओं से कहने लगा कि मुझे सहायक तथा वाहन दीजिये । ३७॥ उस कुमार का वाक्य सुन महानुभाव महादेव यह बोले कि हे कुमार ! तुझे क्रीडनक याने खेल के लिये कुकट देता हूं तथा साख, विसाख, अनुचर देता हूं ॥३८॥ हे कुमार तू भूत ग्रहों का नायक तथा देवताओं का सेनापति होगा शिव के ऐसा कहने पर तदनन्तर देवता अष्ट वाणि से स्कन्ध कुमार की स्तुति करने लगे देवता बोले हे प्रभो ! हे महेश्वर सुत ! तू देव सेना नायक होगा ॥३६॥४०॥ हे षणमुख ! हे स्कन्ध ! हे विश्वेश ! हे कुकुटध्वज ! हे अग्निपुत्र ! हे शत्रुओं को कम्पित करने वाले हे कुमारेश' हे बालग्रहानुज ! हे जितारे ! हे क्रौंच विध्वंस ! हे कृत्तिकाके पुत्र ! हे शिवात्मज ! हे भूत ग्रह पति श्रेष्ठ ! हे पावके ! हे प्रिय दर्शन ! हेमहाभूत पति के पुत्र ! हे त्रिलोचन आपको

नमस्कार है देवताओं के इस प्रकार स्तुति करने पर भव नन्दन वृद्धि को प्राप्त हुआ बारह सूर्यों के समान कान्ति वाला तथा अतुल पराक्रम शाली हुआ अपने तेज से त्रिलोकी को तपाने लगा ॥४१।४२॥४३॥४४॥ प्रजापाल ने कहा हे ऋषे आपने भव पुत्र को अग्नि पुत्र क्रित्तिका पुत्र षण्मातृ कहा है यह किस प्रकार है सो कहिये ॥४५ । जो कि आदि मन्वन्तर की उत्पति मैंने कही है उस समय परोक्ष दर्शी देवताओं ने उसकी वैसे ही स्तुति की थी ।।४६।। क्रित्तिका अग्नि गिरिजा आदि दूसरे जन्म में गुह की माता हुई हैं ॥४७॥ हे प्रजापाल तेरे पूछने पर यह आत्म विद्या अमृत रूपी अहङ्कार का गुप्त जन्म मैंने बता दिया है॥४८॥ स्कन्द स्वयम् महादेव ही है सर्व पापों का नाश करने वाला है उस स्कन्द को अभिषेक समय पर ब्रह्मा नेष्ठी तिथि प्रदान की है ॥४६॥ उस षष्ठी तिथि में जो फलाहार कर स्कन्द की पूजा भक्ति पूर्वक करता है उसको अपुत्र का पुत्र प्राप्त होता है निर्धन को धन मिलता है ॥५०॥ तथा जिस जिस कामना को मनुष्य मन में स्मरण करे वह सब मिल जाती है तथा जो इस कार्तिकेय स्तोत्र को पढ़ता है उसके घर में बाल- बच्चे आनन्द मंगल रहते हैं ॥५१॥५२॥ इति वाराह पुराणे आदि कृत वृतान्ते महातप उपाख्याने स्कन्दोपतिर्नाम काशीराम कृत भाषा टीकायाम् पञ्चविंशोऽध्यायः ॥२५॥

अथः छब्बीसवाँऽध्याय

दोहाः— इस छब्बीस अध्याय में, उपजा तेज महान ।
त्रिलोक में प्रकाश करे, भास्कर नाम महान ॥

अथ आदित्य उत्पत्तिः— प्रजापाल कहने लगाः— हे ज्योति स्वरूप शरीर का मूर्तिमान जन्म किस प्रकार हुआ है इस मेरे संशय को मिटा दीजिये । महातप कहने लगा जो ये एक ही सन्तान ज्ञान शक्ति है उसमें दूसरे की अभिलाषा करने से तेज

हुआ ॥१॥२॥ वही सूर्य है भास्वान है महात्मा ज्ञान स्वरूप के अन्योन्यता से लीन हुये तेज जगत्रय को प्रकाशित करते हैं ॥३॥ उसमें सारे देवता सिद्धगण तथा महर्षियों के सहित स्वयंभूत ऐसा कहा है तिससे वह सूर्य हुआ ॥४॥ लीन हुये उस तेज का एक दम शरीर हुआ वेदवादी उसको प्रथकता से रवि कहते हैं ॥५॥ आकाश में चढ़कर यह रवि सारे लोकों को प्रकाशित करता है अतः इसका नाम भास्कर हुआ। प्रभापित करने मे प्रभाकर हुआ ॥६॥ दिवा दिन के लिये कहा गया है उसको यानी दिन को करने से दिवाकर हुआ सब जगत् का आदि होने से उसका नाम आदित्य हुआ ॥७॥ इस ही के तेज से बारह सूर्य हुये हैं प्रधान एक ही है जगत् में जो घूमता रहता है ॥८॥ उस जगत् की व्याप्ति करते परमेश्वर को देख उसी के अन्तस्थित देवता निकल कर स्तुति करने लगे ॥९॥ देवता बोले आप जगत के उत्पत्ति स्थान हो पुराण हो जगत् की रक्षा करते हो प्रलय में नाश करते हो आप उत्पन्न होकर निरन्तर विश्व में चलते रहते हो आपको हम निरन्तर प्रणाम करते हैं ॥१०॥ आप ही से चारों तरफ विस्तृत तेज जगत को प्रतापित करता है हे सूर्य ! तुम काल रूपी अक्ष वाले मन्वन्तर रूपी वेग वाले तथा सात घोड़ों वाले रथ में स्थित हो ॥११॥ हे आदि देव ! आप प्रभाकर हो, रवि हो, समस्त चराचर के आत्मा हो, पितामह हो, वरुण हो, यम हो, सिद्धलोक आप ही को भूत भविष्य कहते हैं ॥१२॥ हे अन्धकार नाशक ! हे वेद मूर्ते ! शरण में आये हुये जो हम हैं हमारी सदा रक्षा कीजिये ॥१३॥ हे देव ! आप वेदान्त से जाने जाते हैं तथा यज्ञों में आप ही विष्णु स्वरूप पूजे जाते हैं । हे शम्भो ! हमारी रक्षा कीजिये इस प्रकार देवताओं ने परम भक्ति से सूर्य की स्तुति की ॥१४॥ देवताओं के ऐसा कहने पर सूर्य ने अपनी सौम्य मूर्ति को प्राप्त होकर

देवताओं में प्रकाशता को प्राप्त हुये ॥१५॥ यह सब देवताओं का दहन आपने शान्ति किया सप्तमी के दिन सूर्य ने पृथ्वी पर मूर्ति ग्रहण की ।१६॥ सप्तमी का जो मनुष्य भक्ति पूर्वक सेवन करके सूर्य की पूजा करता है भास्कर उसकी मनोकामना पूर्ण करते हैं ॥१७॥ हे राजन् ! यह सूर्य का पुरातन उपाख्यान कह दिया है अब आदि मन्वन्तर की कथा मुझसे सुन॥१८॥ इति वाराह पुराणे आदि कृत वृतान्ते महातप उपाख्याने आदित्य उत्पतिर्नाम काशीराम कृत भाषा टीकायाम् षडविंशोऽध्यायः ॥२६।

अथः सत्ताइसवाँऽध्यायः

दोहाः— सत्ताइस अध्याय में, अन्धक दैत्य विनाश ।
कामादिक पैदा भये, खून चूसने खाश ॥

महातपा कहने लगा पहिले एक महा बलवान अन्धक नाम का महा दैत्य था उसने ब्रह्मा से वर पाकर देवताओं को भी वश में कर लिया था ॥१॥ उसने देवता वश में करके फिर छोड़ दिये तदनन्तर अन्धक के भय से पीड़ित वे देवता मेरु पर्वत में ब्रह्मा के पास गये ॥२॥ देवताओं को आये देख ब्रह्मा पूछने लगा कि हे देवगण ! आप लोग किस लिये आये हैं आपका क्या कार्य है कहते क्यों नहीं कैसे चुप बेठे हो ॥३॥ देवता बोले हे पितामह आप के लिये नमस्कार हो हम सब देवता अन्धक दैत्य से पीड़ित हैं आप हमारी रक्षा कीजिये ॥४॥ ब्रह्मा बोले मैं अन्धक से लोगों की रक्षा नहीं कर सकता हूं अतः हम सबको महादेव रुद्र के पास जाना चाहिये ॥५॥ क्योंकि उस अन्धक को मैंने ही पहिले एक वरदान दिया है कि तू अवध्य होगा तेरा शरीर पृथ्वी को स्पर्श नहीं करेगा॥६॥ इसलिये उस बलवान अन्धक को मारने वाला सिर्फ एक महादेव ही है अतः हमें कैलाश वासी शंकर की शरण जाना चाहिये ॥७॥ ऐसा कह देवगण सहित ब्रह्मा महादेव के पास पहुंचे ब्रह्मा को आते देख शंकर ने आतिथ्य

स्वागतादि क्रिया करके ब्रह्मा को पूछने लगे किस कार्य सिद्धि के लिये ये सारे ही देवता मेरे समीप आये हैं ॥८॥६। शीघ्र आज्ञा दीजिये जिससे कि मैं उस कार्य को शीघ्र करूं जभी देवता यह कहना चाहते थे कि बलवान अन्धक से हमारी रक्षा कीजिये तभी बड़ी भारी सेना लेकर अन्धक वहीं आ पहुंचा ॥१०॥११॥ चतुरङ्ग सेना से युक्त हो युद्ध में शंकर तथा पर्वत-राज पुत्री को मारने की चेष्टा करने लगा ॥१२॥ वे बेरोक टोक आते हुये युद्धाभिलषी अन्धक दैत्य को देख सारे ही देवता रुद्र के अनुचर हो गये ॥१३॥ रुद्र ने भी वासुकी, तक्षक, धनंजय को ध्यान से बुलाकर उनके कंकण कटि सूत्र आदि बनाये ॥ ४॥ नील नाम का दैत्य हाथी का रूप धारण कर हाथी ही के समान अद्भुत रूप होकर शीघ्र गति से महादेव के समीप आया ॥१५॥ उसका भेद नन्दी ने जानकर वीर भद्र को उसका भेद बतलाया वीरभद्र ने भी शीघ्र सिंह का रूप धर उसको मार कर उस हाथी का अञ्जन के समान काला चमड़ा निकाल महादेव जी को दिया महादेव ने उस हस्ती चर्म को कपड़ों के बदले पहिन लिये ॥१६॥१७ उसी दिन से रुद्र भी गज चर्म पहिनने वाला हुआ गज चर्म पहिन कर सर्पों के आभरण बनाकर तीन शिखा वाले शूल को हाथ से उठाकर अपने गणों सहित अन्धक की ओर दौड़े तब देव दानवों का भयङ्कर संग्राम होने लगा ॥१८॥१६॥ इन्द्रादि लोकपाल सेनापति स्कन्द तथा सारे देवतागण उस युद्ध में लड़ने गये ॥२०॥ इस युद्ध को देख नारद शीघ्र नारायण के पास गया और कहने लगा कि हे भगवन्! कैलाश पर्वत पर दानवों के साथ देवताओं का घोर संग्राम हो रहा है ॥२१॥ ऐसा सुन नारायण अपना चक्र लेकर गरुड़ पर चढ़कर वहीं कैलाश में आकर दानवों के साथ लड़ने लगे ॥२२॥ नारायण के आने से सहारा जान रण से थके थकाये देवता इधर उधर भागने लगे ॥

देवताओं के इधर उधर चले जाने पर रुद्र स्वयम् अन्धक के समीप जाकर उससे भयङ्कर युद्ध करने लगे जो रोंगटे खड़े करने वाला था ॥२४॥ भगवान् शंकर ने उस दैत्य के ऊपर त्रिशूल से प्रहार किया उस त्रिशूल के प्रहार से जो रक्त पृथ्वी पर गिरा उससे असंख्य अन्धक पैदा हुये उनको देख महादेव जी बड़े आश्चर्य को प्राप्त होकर संग्राम में मूल अन्धक को त्रिशूल की नोंक से उठाय नाचने लगे तथा अन्य जो उसके खून से पैदा हुये जो अन्धक थे उनको परमेष्ठी नारायण ने चक्र से मार गिराया महादेव त्रिशूल से भेदित अन्धक से खून की धारा निरन्तर बहती रही तब शंकर क्रोधित हुये महा क्रोध के द्वारा शंकर के मुँह से एक ज्वाला निकल पड़ी ॥२५।२६॥२७॥२८॥ ॥२९॥ उस ज्वाला मे तद्रूप धारिणी देवी हुई उसको योगेश्वरी कहते हैं तथा अन्य स्वरूप धारिणी विष्णु ने भी निर्मित की ।३०॥ ब्रह्मा, कार्तिक, इन्द्र, यम, वराह, परमेष्टी. विष्णु ने पाताल को भी उखाड़ने वाला रूप बनाया तथा महेश्वरी, माहेन्द्री ये अष्टमाता हुई ॥३२॥ क्षेत्रज्ञ से अवधारित जिसका जो कारण कहा गया है क्षेत्र देवताओं के वह शरीर मैंने कह दिये हैं ॥३३।। काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह, मात्सर्य पैशुन्य अनुसुया ये आठ माता हैं योगेश्वरी काम है माहेश्वरी क्रोध को जानो ॥३४॥३५॥ लोभ वैष्णवी कही है मद ब्रह्माणी कही है मोह स्वयं कौमार है मात्सर्य इन्द्रजा है, यम दण्ड धरा देवी है अनुसुया वराही है ये आठ माता बतलाई गई हैं ॥३६॥३७॥ कामादि गण जिस प्रकार मूर्ति को प्राप्त हुई हैं वह मैंने कह दी हैं कामादि गण शरीर मे सम्बन्ध रखता है ॥३०॥ इन देवताओं ने अन्धक से गिरा हुआ खून सुखा दिया है तब आसुरी माया नाश को प्राप्त हुई तथा वह अन्धक सिद्धता को प्राप्त हुआ ॥३९॥ यह आत्मविद्या मूल रूपी सारा आख्यान

तेरे से कह दिया जो इन आठ माताओं की उत्पत्ति की कथा सुनेगा अष्ट माता उसकी प्रतिदिन रक्षा करती हैं तथा जो माताओं का जन्म पढ़ता है वह संसार में सब तरह से धन्य है और शिव लोक को प्राप्त होता है उन आठ माताओं को ब्रह्मा ने अष्टमी तिथि प्रदान की है अष्टमी के दिन विल्व का आहार कर जो इनकी भक्ति पूर्वक जो पूजा करता है उसके ऊपर वह प्रसन्न होकर क्षेम आरोग्यता प्रदान करती हैं ।४०॥४१॥४२। ।४३ इति वाराह पुराणे आदि कृत वृत्तान्ते महातप उपाख्याने अष्टम न्युत्पत्तिर्नाम काशीराम कृत भाषा टीकायाम् सप्तविंशोऽध्यायः ॥२७॥

॥ अथः अठाइसवांऽध्याय ॥

दोहा—दुर्गा की उत्पति कहूँ, अठाईस अध्याय।
वेत्रासुर निवास किया, नवमीं पूजा पाय ॥

अथः दुर्गा की उत्पत्तिः—प्रजापाल कहने लगा कात्यायनी दुर्गा किस प्रकार प्रकट हुई है सूक्ष्म रूप से आदि क्षेत्र में स्थित माया प्रथक मूर्ति से किस प्रकार प्रकट हुई है ॥१। महातपा ऋषि बोले हे राजन् ! वरुण के अंश से सिन्धुद्वीप नामका एक प्रतापी राजा था वह तप करने जङ्गल में गया ॥२॥ इन्द्र को मारने वाला मेरा एक पुत्र होवे इस ध्येय को लेकर निश्चल कठिन तपस्या से अपने शरीर को सुखाता था ॥३॥ प्रजापाल बोला हे मुन्ने ! इन्द्र ने उसका क्या अपकार किया था ।४॥ जिससे कि वह इन्द्र के नाशार्थ पुत्र कामना से व्रत में स्थित हुआ । महातपा बोले वह पहिले जन्म में बलवानों में श्रेष्ठ त्वष्टा का पुत्र था वह सब अस्त्रों से अवध्य था फिर इन्द्र ने जल के फेन से उसे मारा तदन्तर वह लय को प्राप्त हुआ ॥५॥६॥ दूसरे जन्म में ब्रह्म वंश में सिन्धुद्वीप नाम से प्रतापी राजा हुआ है इन्द्र के वैर को स्मरण

हुई गंगा में नियम पूर्वक क्षेत्रज्ञ माया गायत्री का जप कर रहा था जब देवता जोर से कहने लगे ।१९॥२०॥२१॥ हे प्रजापते सब देवता तथा ऋषियों की रक्षा कीजिये असुर से डरे हुये हमारी रक्षा कीजिये ॥२२॥ देवताओं के ऐसा कहने पर ब्रह्मा आये हुये देवताओं को देख सोचने लगा कि इस संसार में परमात्मा की माया प्रबल है न असुर न राक्षस कुछ नहीं है यह माया कैसी है इस प्रकार ब्रह्मा के सोचने पर अयोनिज प्रादुर्भाव हुई ।२३॥२४॥ शुक्लाम्बर पहिनी माला, किरीट, कुण्डल, से देदीप्यमान मुख वाली आठ भुजाओं से युक्त दिव्य आयुध संयुक्त कन्या प्रादुर्भाव हुई ॥२५। शंख, चक्र, गदा, पद्म, खड्ग, घंटा तथा धनुष तूणीर आदि धारण किये जल से बाहर निकली सिंह वाहन से चलती महायोग एक ही बहुत प्रकार से स्थित होकर असुरों के साथ लड़ने लगी ॥२६॥२७॥ दिव्य अस्त्रों से दिव्य हजार वर्षों तक लड़कर देवी ने वेत्रासुर को रण में मार गिराया ।२८। तब देव सेना में बड़ा भारी किल किला शब्द हुआ उस भयङ्कर वेत्रासुर के मारे जाने पर युद्ध में सारे देवता प्रणाम कर कहने लगे कि आपकी विजय हो ! विजय हो !! तथा महादेव जी देवी की स्तुति करने लगे। महेश्वर बोले हे देवी ! हे गायत्री ! हे महामाये ! हे महाप्रभे ! आपकी जय हो ॥२९॥ ।३०। हे महादेवी ! हे महाभागे! हे महासत्वे! हे महोत्सवे हे दिव्य गन्ध से विभूषिते! हे दिव्य माला की लड़ियों से सुशोभिते आपकी जय हो! जय हो !! ॥३१॥ हे वेदमातः ! हे अक्षरस्थे ! हे महेश्वरी ! हे त्रिलोकस्थे हे त्रितत्वस्थे! हे त्रिग्रहिस्थे! हे त्रिशूलिनी आपको नमस्कार हो ॥३२॥ हे त्रिनेत्रे ! हे भीम वक्त्रे ! हे भीम नेत्रे ! हे भयानके ! हे कमलासनजे ! हे देवी हे सरस्वती ! आपके लिये नमस्कार हो ॥३३॥ हे कमल पत्राक्षी ! महामाये। हे अमृत सर्वे ! हे सर्वगे ! हे सर्व भूतेशी हे स्वाहाकारे हे स्वधे !

हे अम्बिके आपके लिये नमस्कार हो ॥३४॥ हे सम्पूर्णे ! हे पूर्ण चन्द्राभे ! हे भास्वराङ्गे ! हे भवोद्भवे ! हे महाविद्ये ! महामाये हे महावेदे ! महादेत्य विनाशे ! आपको नमस्कार हो ॥३५॥ हे महा बुद्धि से पैदा ! हे वीतशोके ! हे किरातने ! तू ही नीति है, तू ही वाणी है, तू ही गौ है, तू ही अक्षर है ॥३६॥ तू ही धी है, तू ही श्री है, तू ही ओंङ्कार है, तू ही तत्वों में स्थित है, हे सर्व तत्वों का हित करने वाली परमेश्वरी आपके लिये नमस्कार है ॥३८॥ इस प्रकार महादेव ने उसकी स्तुति की तथा देवताओं ने ऊँचे स्वर से जय जय कार किया ॥३८॥ तदनन्तर ब्रह्मा भी जल से बाहर आकर कृतकृत्या देवी को देखने लगा ॥३६॥ उसको देख तथा देव कार्य हुआ जान भविष्य कार्य का उद्देश्य रखकर ब्रह्मा यह वचन बोला ॥४०॥ ब्रह्मा बोले यह वरारोह देवी हिमालय पर्वत पर जावे वहां सब देवता भी प्रसन्नता पूर्वक चले जायँ देर न कीजिये ॥४१॥ इस देवी की हमेशा नवमी के दिन पूजा करनी चाहिये यह देवी पूजा पाने पर सब लोगों को वरदान देने वाली होगी ॥४२॥ नवमी के दिन जो मनुष्य व नारी पिष्टान्न खायेगी उसकी मनोकामना पूर्ण हो जावेगी ॥४३॥ हे महादेव आपके कहे हुये इस स्तोत्र को जो प्रातः काल स्वयम् पढ़ेगा उसको देवी वरदान देती है तथा सब आपत्तियों से छुटकारा करती है ब्रह्मा इस प्रकार महादेव को कह फिर उस देवी से बोले ॥४४॥४५॥ हे देवी ! तूने अभी हमारा भविष्य कार्य महिषासुर वध करना है ॥४६॥ ऐसा कह देवी को हिमायल में स्थापित कर ब्रह्मा तथा सारे देवता अपने स्थानों को गये ॥४७॥ स्थापित कर वह नन्दित हुई अतः उसका नाम नन्दा देवी हुआ जो देवी के इस जन्म को स्वयम् पढ़े या सुने वह सम्पूर्ण पापों से छुटकारा पाकर मुक्ति को प्राप्त होता है ॥४८॥४६॥ इति वाराह पुराणे आदिकृत वृत्तान्ते महातप उपाख्याने दुर्गा देवी उत्पत्ति नाम काशी राम कृत भाषा टीका याम् अष्टाविंशोऽध्यायः ॥२८॥

। अथः उनतीस अध्याय ॥

दोहा—ब्रह्मा से पैदा भई, दिशा छैः और चार ।
अपने स्थान गयीं सकल, क आदेश अनुसार ॥

अथः दिशा उत्पत्ति—महातपा बोले "हे राजन् ! इस कथा को सावधानता पूर्वक सुनिये जो कि ब्रह्मा के कानों से दिशा उत्पन्न हुई हैं ।१॥ आदि सर्ग में सृष्टि रचते समय ब्रह्मा को चिन्ता हुई कि मेरी रची हुई प्रजा को कौन धारण करेगा ।२॥ इस प्रकार सोचने अवकाश को प्राप्त हो ब्रह्मा के कानों से दश कन्या महा प्रभावशाली प्रादुर्भूत हुई पूर्वा, दक्षिणा, पश्चिमा, उत्तरा, उर्द्धा, अधरा ये कन्या मुख्य थीं ॥३॥४॥ उनमें चार कन्या परम सुन्दर रूप वाली महा भाग्यशाली गम्भीरता से युक्त पैदा हुई ॥५॥ वे प्रेम पूर्वक प्रजापति से बोली कि हे देव देव ! प्रजापते ! आप हमें स्थान दीजिये ॥६॥ जहां कि हम अपने भर्त्ताओं सहित आनन्द पूर्वक रहें तथा महा भाग्यशाली पतियों के साथ हमारा विवाह भी कीजिये ॥७॥ ब्रह्मा बोले हे सुश्रोणियों यह ब्रह्माण्ड सौ करोड़ योजन विस्तार वाला है उस ब्रह्माण्ड के किनारे किनारे अपनी इच्छा पूर्वक निवास करो जल्दी जाओ विलम्ब न करो ॥८॥ अच्छे रूप वाले पतियों को रचकर मैं तुम्हें अर्पण करूंगा इस समय जो जिसको पसन्द लगता है वह उस स्थान पर शीघ्र चले जाओ ९। ब्रह्मा के कहनानुसार वे अपनी अपनी इच्छा पूर्वक दिशाओं में चली गयीं ब्रह्मा ने शीघ्र उन लोकपालों को जो कि महा बलवान थे ॥१०॥ उन लोकपालों को रचकर ब्रह्मा ने वे कन्यायें फिर बुलाई और उनका विवाह लोकपालों से किया ॥११॥ एक इन्द्र को दी, दूसरी अग्नि को, तीसरी यम को, चौथी निऋति को, पाँचवीं वरुण को, छटी वायु को, सातवीं कुबेर को, आठवीं ईशान को, नवीं उर्द्धा स्वयं रख ली और दसवीं अधरा नाम की शेष को देदी ॥१२॥१३॥

इस प्रकार विवाह कर ब्रह्मा ने उनको दशमी तिथि दी वह उनको अत्यंत प्रिय हुई ॥१४॥ दशमी के दिन जो मनुष्य दही खाकर दिशाओं की पूजा करे उसका सारा पाप प्रतिदिन दिशायें नष्ट करती रहती हैं ॥१५॥ जो दिशाओं के जन्म को सावधानता से सुनता है वह ब्रह्म लोक में प्रतिष्ठा को प्राप्त करता है ॥१६॥ इति वाराह पुराणे आदि कृत वृतान्ते महातप उपाख्याने दिगुत्पत्तिर्नाम काशीराम कृत भाषा टीकायाम् एकोनत्रिंशोऽध्याय ॥२६॥

अथः तीसवाँऽध्याय

दोहाः— कहूं तीस अध्याय में, वसुपति जन्म विचार।
एकादशी पूजन से, मिलते हैं फल चार॥

महातपा कहने लगा— हे राजन्! जिस प्रकार शरीरस्थ वायु कुवेर हुआ है ऐसी पापों का नाश करने वाली कुवेर की उत्पत्ति सुनिये ॥१॥ जो आदि शरीर है उसमें अन्तस्थित क्षेत्र देवता वायु प्रयोजन वस मूर्तित्व को प्राप्त हुआ है ॥२॥ मूर्त्त वायुकी उत्पत्ति मैंने जो कही है उसी को स्पष्टतया मुझसे सुन ॥३। सृष्टि की कामना से ब्रह्मा के मुख से प्रचण्ड शर्करा वर्षा वायु निकला उसको ब्रह्मा ने रोककर कहा कि ॥४॥ मूर्तिमान होजा शान्त होजा, इस प्रकार ब्रह्मा के कहने पर वह वायु मूर्तिमान हुआ तथा सब देवताओं का जो धन व फल है उस सबकी रक्षा करने से आपका नाम धनपति होगा फिर ब्रह्मा ने उसको एकादशी तिथि प्रदान की ॥५ ६॥ उस एकादशी तिथि में जो निरन्तर पवित्र होकर बिना आग में पका हुआ भोजन करे अर्थात् जो आग में न पकने पर भी खाया जाता है फल, फूल, फलाहारादि भोजन करे उसको कुवेर प्रसन्न होकर धर्म्मादि चारों फल देते हैं ॥७। यह कुवेर की मूर्ति सब पापों को नाश करने वाली है।

जो इस कथा को भक्ति से पढ़े या सुने वह इस लोक में सब कामनाओं को पूर्ण करता है तथा मरकर स्वर्ग सुख भोगता है ॥८॥ इति वाराह पुराणे आदि कृत वृत्तान्ते महातप उपाख्याने धनदोत्पत्तिर्नाम काशीराम कृत भाषा टीकायाम् त्रिंशो-अध्यायः ॥३०॥

अथः इकतीसवांऽध्यायः

दोहाः— इस इकतीस अध्याय में, परापर का विचार।
पर से अपर विष्णु भये, सबके पालन हार ॥

अथः विष्णु उत्पत्तिः— महातपा बोले मनु के नाम में जो मनुत्व कहा जाता है प्रयोजन वश यही विष्णु मूर्तिमान है ॥१॥ हे नृप यह जो परे से परे नारायण देव हैं उनको सृष्टि के प्रति चिंता हुई ॥२॥ यह सृष्टि मैंने रच ली है अब इसका पालन भी मुझे ही करना है परन्तु निराकार से कर्म काण्ड नहीं हो सकता ॥३॥ अतएव एक मूर्ति रचता हूं जो कि इस सृष्टि का पालन करे हे राजन्! सत्य संकल्प भगवान् के इस प्रकार सोचने पर महा प्रलय से पहिले की सृष्टि जात् मूर्तिमान हो कर उसके सामने प्रकाशित हुई सामने ही खड़ी उस मूर्ति में तीनों लोक प्रवेश होते साक्षात् नारातण ने स्वयम् देखे तब भगवान् ने पुरातन वागादियों का वरदान स्मरण किया ॥४॥५॥६॥ तब भगवान् प्रसन्न हो उस मूर्ति को वरदान देने लगे कि तू सर्वज्ञ होगा सर्व कर्ता होगा, तथा सर्व लोकों से नमस्कृत होगा ॥७॥ त्रैलोक्य प्रतिहालन करने के हेतु तू सनातन विष्णु होजा ब्रह्मा तथा देवताओं का कार्य हमेशा करते रहना ॥८॥ हे देव! विष्णो! तेरी निसन्देह सर्वज्ञता होगी ऐसा कह निराकार नारायण प्रकृति में स्थित हो गये ॥९॥ समर्थ शाली विष्णु ने भी उस समय पहिली बुद्धि का स्मरण किया।

इस प्रकार विवाह कर ब्रह्मा ने उनको दशमी तिथि दी वह उनको अत्यंत प्रिय हुई ॥१४॥ दशमी के दिन जो मनुष्य दधी खाकर दिशाओं की पूजा करे उसका सारा पाप प्रतिदिन दिशायें नष्ट करती रहती हैं ॥१५॥ जो दिशाओं के जन्म को सावधानता से सुनता है वह ब्रह्म लोक में प्रतिष्ठा को प्राप्त करता है ॥१६॥ इति वाराह पुराणे आदि कृत वृतान्ते महातप उपाख्याने दिगुत्पत्तिर्नाम काशीराम कृत भाषा टीकायाम एकोनत्रिंशोऽध्याय ॥२६॥

अथः तीसवाँऽध्याय

दोहाः— कहूं तीस अध्याय में, वसुपति जन्म विचार ।
एकादशी पूजन से, मिलते हैं फल चार ॥

महातपा कहने लगा– हे राजन्! जिस प्रकार शरीरस्थ वायु कुबेर हुआ है ऐसी पापों का नाश करने वाली कुबेर की उत्पत्ति सुनिये ।।१।। जो आदि शरीर है उसमें अन्तस्थित क्षेत्र देवता वायु प्रयोजन वस मूर्तित्व को प्राप्त हुआ है ।।२।। मूर्त वायुकी उत्पत्ति मैंने जो कही है उसी को स्पष्टतया मुझसे सुन ॥३। सृष्टि की कामना से ब्रह्मा के मुख से प्रचण्ड शर्करा वर्षा वायु निकला उसको ब्रह्मा ने रोककर कहा कि ।।४।। मूर्तिमान होजा शान्त होजा, इस प्रकार ब्रह्मा के कहने पर वह वायु मूर्तिमान हुआ तथा सब देवताओं का जो धन व फल है उस सबकी रक्षा करने से आपका नाम धनपति होगा फिर ब्रह्मा ने उसको एकादशी तिथि प्रदान की ।।५ ६।। उस एकादशी तिथि में जो निरन्तर पवित्र होकर बिना आग में पका हुआ भोजन करे अर्थात् जो आग में न पकने पर भी खाया जाता है फल, फूल, फलाहारादि भोजन करे उसको कुबेर प्रसन्न होकर धर्मादि चारों फल देते हैं ॥७। यह कुबेर की मूर्ति सब पापों को नाश करने वाली है ।

जो इस कथा को भक्ति से पढ़े या सुने वह इस लोक में सब कामनाओं को पूर्ण करता है तथा मरकर स्वर्ग सुख भोगता है ॥८॥ इति वाराह पुराणे आदि कृत वृत्तान्ते महातप उपाख्याने धनदोत्पत्तिर्नाम काशीराम कृत भाषा टीकायाम् त्रिंशो-ऽध्यायः ।३०॥

अथः इकतीसवांऽध्यायः

दोहाः— इस इकतीस अध्याय में, परापर का विचार ।
पर से अपर विष्णु भये,सबके पालन हार ॥

अथः विष्णु उत्पत्तिः— महातपा बोले मनु के नाम में जो मनुत्व कहा जाता है प्रयोजन वश यही विष्णु मूर्तिमान है ॥१॥ हे नृप यह जो परे से परे नारायण देव हैं उनको सृष्टि के प्रति चिंता हुई ॥२॥ यह सृष्टि मैंने रच ली है अब इसका पालन भी मुझे ही करना है परन्तु निराकार से कर्म काण्ड नहीं हो सकता ॥३॥ अतएव एक मूर्ति रचता हूं जो कि इस सृष्टि का पालन करे हे राजन्! सत्य संकल्प भगवान् के इस प्रकार सोचने पर महा प्रलय से पहिले की सृष्टि जात् मूर्तिमान हो कर उनके सामने प्रकाशित हुई सामने ही खड़ी उस मूर्ति में तीनों लोक प्रवेश होते साक्षात् नारायण ने स्वयम् देखे तब भगवान् ने पुरातन वागादियों का वरदान स्मरण किया ॥४॥५॥६॥ तब भगवान् प्रसन्न हो उस मूर्ति को वरदान देने लगे कि तू सर्वज्ञ होगा सर्व कर्ता होगा, तथा सर्व लोकों से नमस्कृत होगा ॥७॥ त्रैलोक्य प्रतिपालन करने के हेतु तू सनातन विष्णु होजा ब्रह्मा तथा देवताओं का कार्य हमेशा करते रहना ॥८॥ हे देव! विष्णो! तेरी निसन्देह सर्वज्ञता होगी ऐसा कह निराकार नारायण प्रकृति में स्थित हो गये ॥९॥ समर्थ शाली विष्णु ने भी उस समय पहिली बुद्धि का स्मरण किया ।

तदनन्तर महातपा भगवान् विष्णु ने योग निन्द्रा का चिन्तन किया ॥१०॥ प्रधान रूप मे ध्यान कर विष्णु ने उसमें इन्द्रियों अर्थ में उत्पत्ति वाली प्रजा स्थापित की तब सो गये ॥११॥ सोते हुये उन विष्णु की नाभि मे बड़ा भारी कमल निकला सात रस द्वीपों वाली पृथ्वी समुद्र तक जंगलों के सहित निकली ॥१२॥ उसके रूप का विस्तार पातालतल तक था कर्णिका में मेरु था उस मेरु के बीच में ब्रह्मा का जन्म हुआ ॥१३॥ इस प्रकार उसके शरीर की उत्पत्ति देख प्रसन्न हो उसके शरीर में वायु रूप से जो निराकार भगवान् थे वे वायु रूप को रचकर कहने लगे ॥१४। इस अविद्या के विजय को शंख रूप से धारण कीजिये अज्ञान नाश करने के लिये इस खड्ग को हमेशा हाथ में रखिये ॥१५॥ हे अचुत! काल चक्र मय इस घोर चक्र को धारण कीजिये हे केशव! अधर्म नाश के लिये इस गदा को धारण कीजिये ॥१६॥ प्राणियों के माता स्वरूप यह माला आपके गले में हमेशा रहे श्रीवत्स तथा कौस्तुभ मणि चन्द्र आदित्य के बहाने रहे ॥१७। हे वीर! वायु आपकी गति होगी जिसको गरत्मान् कहा है त्रैलोक्य गामिनी लक्ष्मी देवी हमेशा आपके आश्रय भूत रहेगी ॥१८॥ तथा आपके लिये द्वादशी तिथि होगी जो द्वादशी के दिन घी का भोजन करके तेरा पूजन करेगा वह काम रूपी होगा ॥१६॥ औरत व पुरुष जो कोई करे वह स्वर्ग में जाता है यह विष्णु कहा गया है इसी की देव दानव मूर्तियाँ हैं ॥२०॥ यह वेदान्त पुरुष युग युग में सर्वत्र स्थित रहते हैं अपने ही शरीर का पालन किसी का नाश तथा अन्य अपने ही शरीर को कितने ही प्रकर से रचता रहता है ॥२१॥ हीन बुद्धि से कभी इसे मनुष्य नहीं बतलाना चाहिये, जो इस पाप नाशक वैष्णु सर्ग को सुनता है यहां वह सुख भोग अन्त में मर कर स्वर्ग को जाता है ॥२२॥२३॥

इति वाराह पुराणे आदि कृत वृतान्ते महातप उपाख्याने परापर निर्णयो नाम काशीराम कृत भाषा टीकायाम् एकत्रिंशो-अध्याय: ॥३१॥

अथ: बत्तीसवाँऽध्याय:

दोहा:— इस बत्तीस अध्याय में, धर्म जन्म आख्यान् ।
दोष देख गवनो तुरत. कहूँ सब व्याख्यान ॥

अथ: धर्मोत्पत्ति– महातपा कहने लगे हे राजन् ! अब धर्म की उत्पत्ति तथा महात्म्य तथा तिथि का वर्णन करता हूँ आप सुनिये ॥१॥ पहिले पर से अपर संज्ञा वाले ब्रह्मा थे उन्होंने प्रजा रचने की इच्छा से प्रजापालन सोचा कि प्रजा रचकर उसका पालन कौन करेगा । २॥ चिन्ता करते ब्रह्मा के दक्षिण अंग से श्वेत कुण्डल, श्वेत माल्यादिक पहिना एक पुरुष पैदा हुआ उस वृषाकृति को देख ब्रह्मा ने कहा कि हे साधो ! तुम इस प्रजा की रक्षा करो क्योंकि तुम ज्येष्ठ श्रेष्ठ हुये हो ॥३॥४॥ ब्रह्मा के कथनानुसार प्रजापालन में स्थिर होकर सत्य युग में चार पैर से त्रेता में तीन पैर से द्वापर में दो पैर से तथा कलियुग में एक पैर से रहकर प्रजा की रक्षा करने लगा ब्राह्मणों से दान देना तथा लेना यज्ञ करना तथा कराना वेद पढ़ना तथा पढ़ाना इस छः प्रकार से रहा क्षत्रियों में यज्ञ करना वेद पढ़ना दान देना इस तीन प्रकार से स्थित रहा ॥५॥६॥ वैश्यों में दो प्रकार से तथा शूद्रों में चार वर्णों की सेवा करना इस प्रकार से रहा तथा रसातलादि पातालों में सब द्वीपों में सब वर्षों में एक ही सामर्थशाली सर्वत्र स्थित रहा ॥७॥ गुण, द्रव्य, क्रिया, जाति ये उसके चार पैर हैं वेद में इसके तीन शृंग नाम आख्यातादि कहे हैं आद्यन्त ओंकार से दो सिर कहे हैं विभक्ति सात हाथ कहे हैं उदात्त, अनुदात्त, स्वरित. इन तीनों से उर, कंठ, सिर, इन तीन जगे बन्धा हैं इस प्रकार धर्म रहता है ॥८॥९॥

वह धर्म पहिले बृहस्पति की स्त्री तारा को ग्रहण करने की इच्छा से अद्भुत कर्मकारी सोम ने पीड़ित किया ।।१०। क्रूर कर्मा बलवान् सोम से पीड़ित होकर वह समर्थ शाकी धर्म सघन जङ्गल में जाय छिप रहा ।।११।। धर्म के चले जाने पर धर्म से वंचित देवता असुरों की सेना पकड़ने उनके घरों में घूमने लगे ।। १२।। तथा असुर भी देवताओं के घरों में घूमने लगे, धर्म नाश से निर्मर्याद होने पर सोम दोष से कोपित देव, राक्षस, आपस में स्त्री के हेतु आयुद्ध लेकर लड़ने लगे ।।१३।।१४।। राक्षसों के साथ क्रोधित देवताओं को लड़ाई देख नारद ने पितामह ब्रह्मा के पास जाकर युद्ध वर्णन किया ।।१५।। सब सर्व लोक पितामह हंसयान में चढ़कर वहां आय उनका युद्ध स्थागित किया तथा कहने लगा कि किस कारण आप लोगों का यह युद्ध हो रहा है ।।१६।। सबने कहा कि सोम के कारण हमारा यह युद्ध हो रहा है फिर ब्रह्मा ने अपनी बुद्धि से यह जाना कि मेरा पुत्र धर्म, सोमदोष से पिड़ित होकर गहन वन में चला गया है ।।१७।। तब ब्रह्मा शीघ्र वहीं पहुँचा वहीं जाकर देवताओं के साथ चतुष्पाद वृषाकृति धर्म को देखा ।।१८।। चन्द्रमा की आकृति वाले विचर करते धर्म को देख ब्रह्मा देवताओं से कहने लगा कि यह मेरा प्रथम पुत्र है बृहस्पति की स्त्री चुराने वाले चन्द्रमा ने इसको बहुत दुख दिया है इस समय सब देव राक्षस इस धर्म को सन्तुष्ट करो । १९।। जिसके सन्तुष्ट करने पर समान स्थिति हो जायगी ब्रह्मा के वाक्य से सम्पूर्ण शशि सन्निभ धर्म को जान देव दानव आदि धर्म की स्तुति करने लगे देवता बोले शशि के समान प्रकाश वाले को नमस्कार हो, जगत्पति के लिये नमस्कार हो ।।२१।।२२ देवरूप के लिये नमस्कार हो स्वर्ग मार्ग प्रदर्शक को नमस्कार हो कर्म मार्ग स्वरूप के लिये नमस्कार हो सर्वग के लिये नमस्कार हो ।।२३।। हे धर्म आप ही से पृथिवी पाली जाती है आपही से त्रैलोक्य पाला

जाता है तथा अन्न, तप, सत्य सब आपही से रहित है ॥२४॥ स्थावर जङ्गमादि कुछ भी आप से रहित नहीं है आप से रहित होने पर तो सारा जगत् नष्ट हो जाता है ॥२५॥ सब प्राणियों के आप आत्मा हो, सब के सत्व स्वरूप हो राजसियों के रजोगुण आप ही हो तामसियों के तमोगुण आपही हो ॥२६॥ आप चतुष्पाद वेद हो आप के चार शृंग नाम आख्यात, उपसर्ग, निपात हैं तीन आंख हैं सात विभक्ति आपके सात हाथ हैं उर, कंठ, सिर में उदातादि तीन प्रकार से बन्धे हुये हो वृष रूप के लिये नमस्कार हो ॥२७॥ आप से रहित होकर हम निकृष्ट मार्ग पर चलने लग गये हैं आप हमारी परम गति हो अतः हम मूढ़ों को आप अच्छा मार्ग प्रदान कीजिये ॥२८॥ देवताओं के इस प्रकार स्तुति करने पर वृषरूपी प्रजापति सन्तुष्ट हो शान्त दृष्टि हो, प्रसन्न मन हो, देवताओं को देख कहने लगा ॥२९॥ स्वयम् धर्म के शान्त चक्षु से देखते ही सारे देवता सम्मोह से अलग हो क्षण भर में ही श्रेष्ठ धर्म से युक्त हो गये ॥३०॥ और असुर भी अपने धर्म को प्राप्त हो गये तब ब्रह्मा धर्म से कहने लगा हे धर्म आज से तेरी त्रयोदशी तिथि होगी ॥३१ जो त्रयोदशी का सेवन उपवास कर तेरी पूजा करेगा वह पापों के करने पर भी पापों से मुक्त हो जायगा ॥३२। हे धर्म तू ने चिरकाल तक इस जंगल का सेवन किया है अतः इस जगल का नाम धर्मारण्य होगा ॥३३॥ जो कि तू लोक में कृतादियों से चार, तीन, दो, एक पैर से लक्षित होता है अतः कर्म भूमि तथा आकाशादियों में अपना घर समझ कर विश्व की रक्षा करते रहना ॥३४॥ ब्रह्मा के इतना कहने पर देव राक्षसों के देखते ही ब्रह्मा अन्तर्धान हो गया तथा शोक रहित धर्म के सहित सारे देवता अपने अपने स्थान को चले गये ।३५॥ जो इस धर्मोत्पति को श्राद्ध में पितरों को सुनाकर तृप्त करता है

तथा अपनी शक्ति के अनुसार क्षीर भोजन से पितरों को तृप्त करता है वह देवताओं के साथ स्वर्ग से भोग भोगता है ॥३६॥ इति वाराह पुराणे आदि कृत वृतान्ते महातप उपाख्याने धर्मोत्पत्तिर्नाम काशीराम कृत भाषा टीकायाम् द्वात्रिंशोध्यायः ॥३२।

अथः तेतीसवाँऽध्यायः

दोहाः— अब तेतीस अध्याय में, रुद्र जन्म वृत्तान्त ।
स्तुति देवगण की सुनकर, ह्वै हैं शङ्कर शान्त ॥

अथः रुद्रोत्पत्ति– क्षमा रूपी अस्त्र को धारण करने वाला उग्र तेजा ऋषि महातपा बोला कि हे राजन्! धर्मोत्पत्ति वर्णन करली है अब आप सावधानता से इस आद्य दूसरी रुद्र उत्पत्ति को सुनिये पहिले उग्र तेज वाला प्रजापति ब्रह्मा हुआ उन्होंने परम ज्ञान तत्वभाव को जान कर सृष्टि रचने की इच्छा की, जब कितना ही परिश्रम करने पर भी सृष्टि न रची गई तब ब्रह्मा को क्रोध आय क्षुभित हुआ तदनन्तर ब्रह्मा के क्रोध से स्थिर कीर्ति तथा पुण्य वाला रज तमोगुण से ध्वस्त गति श्रेष्ठ सुन्दर तथा वरदान देने वाला प्रतापी कृष्णारुण शरीर पिङ्गल नेत्र वाला पुरुष पैदा हुआ और पैदा होते ही रोने लगा फिर ब्रह्मा ने उसको रोने से रोककर कहा कि रोने से तेरा नाम रुद्र होगा तथा हे महानुभाव! आप समर्थवान् हो आप इस सृष्टि का विस्तार कीजिये ॥१॥२॥३॥४॥ ब्रह्मा के ऐसे कहने पर वह रुद्र प्रजा रचने की इच्छा से तप करने जल में डूब गया जल में डूब जाने पर ब्रह्मा ने मरीचि, अत्रि, कर्दम आदि मानसिक सृष्टि रची तथा दक्ष रचा देववर महादेव के जल में तप करने पर ब्रह्मा के मानसिक पुत्र सृष्टि बढ़ाने लगे सृष्टि के विस्तृत हो जाने पर दक्ष ने ब्रह्मा की प्रसन्नता के लिये एक यज्ञ रचा यज्ञ होते समय जो पहिले प्रजा रचने की इच्छा से जल में तप करने गया था

उस महादेव ने जल से बाहर आकर दक्ष यज्ञ की ध्वनि सुनी तथा पृथ्वी को सुरसिद्ध आदि अनेक प्रकार की सृष्टि से परिपूर्ण देखा तब रुद्र को क्रोध आया कि दीप्त कन्या को तिरस्कृत कर किसने मोह से मेरी अवहेलना कर सृष्टि रची है ॥५॥६॥७॥ हा ! हा !! शब्द करने पर रुद्र के मुँह से अग्नि किरणें निकलीं चिनगारियों से क्षुद्र, भूत, वेताल, पिशाच, समूह तथा योगी समूह पैदा हुये उनसे पृथ्वी आकाश सारी दिशायें सारे लोक व्याप्त हो गये तब रुद्र ने सर्वज्ञता से चौबीस हस्त परिमित धनुष बनाया उस धनुष् में क्रोध से तिगुनी याने तिलड़ी या त्रिगुण प्रत्यञ्चा लगाई तब दिव्य धनुष वाणों को ले दक्ष यज्ञ की तरफ चला वहां जाकर पूषा के दाँत भग की आंख तथा ऋतु के अण्डकोष गिराये विद्धबीज हो ऋतु भागने लगा मार्ग में यज्ञ मार्ग से वायु ने उसे रोका तथा सारे देवता पशुता को प्राप्त हो रुद्र को प्रणाम करने लगे ॥८॥६॥१०॥११॥ फिर ब्रह्मा वहां आकर देवताओं के सामने ही रुद्र का आलिङ्गन कर भक्ति युक्त देवताओं को देख रुद्र ने ही इन देवताओं का अपकार किया है यह जानकर रुद्र की तरफ देख ब्रह्मा कहने लगा कि हे तात रुद्र ! क्रोध न कीजिये क्रोध ही से यह यज्ञ नष्ट हुआ है। इस प्रकार ब्रह्मा के बचन सुनकर क्रोधवान् रुद्र बोला कि आपने पहिले मुझे रचा है आपके ये देवता यज्ञादि में मेरा भाग कल्पित क्यों नहीं करते हैं अतएव हे देव देव ! मैंने इन अज्ञानियों को विकृत किया है कि आगे से ये समझ जाँय ॥१२॥१३॥१४॥ ब्रह्मा जी बोले हे देवगण ! ज्ञान के हेतु आप लोग स्तुतियों से रुद् का यजन करो तथा सोर असुर भी रुद् की स्तुति करें क्योंकि स्तुति करने से रूद् सन्तुष्ट हो जायगे रुद् की प्रसन्नता से यहां सारे ही कार्य सिद्ध हो जांगे ॥१५॥ ब्रह्मा के ऐसा कहने पर देवता महान् आत्मा रुद् की स्तुति करने लगे

देवाधिदेव के लिये नमस्कार हो, त्रिनेत्र के लिये नमस्कार हो महात्मा के लिये नमस्कार हो ॥१६॥ रक्त पिंगल नेत्र वाले को नमस्कार हो जटा का मुकुट धारण करने वाले को नमस्कार हो, भूत वेतालों से परिवेष्ठित को नमस्कार हो, महा सर्पों के यज्ञोपवीत वाले को नमस्कार हो ॥१७॥ भयङ्कर अट्टहास संयुक्त मुख वाले को नमस्कार हो कपर्दि स्थाणु को नमस्कार हो पूषा के दाँत तोड़ने वाले को नमस्कार हो भग नेत्र फोड़ने वाले को नमस्कार हो ॥१८॥ होने वाले वृषवाहन को महाभूत पति को नमस्कार हो, भविष्य त्रिपुरान्तक को तथा अन्धक दैत्य मारने वाले को नमस्कार हो १६। कैलाश निवासी को नमस्कार हो हस्ति चर्म धारण करने वाले को नमस्कार हो विकराल उद्ध केश के लिये नमस्कार हो भैरव के लिये नमस्कार हो ॥२०॥ अग्नि ज्वाला से कराल के लिये चन्द्र मौलि के लिये नमस्कार हो भविष्य कृत कपाली वृत के लिये परमेष्ठी के लिये नमस्कार हो॥२१॥ दारु वन नष्ट करने वाले तीखे शूल वाले को सर्पों के कंकड़ धारण करने वाले को नील कंठ वाले को त्रिशूल धारी को नमस्कार हो ॥२२॥ प्रचण्ड दण्ड धारी को वड़वाग्नि मुख वाले को वेदान्त वेद्य को यज्ञ मूर्ति को नमस्कार हो ॥२३॥ दक्ष यज्ञ नाश करने वाले को जगत्भय को, विश्वेश्वर को, देव को, शिव को शम्भू को, भव को नमस्कार हो ॥२४। कपार्दे को कराल को महादेव को नमस्कार हो। इस प्रकार देवताओं के रुद्र की स्तुति करने पर उग्र धन्वा सनातन शम्भू बोला कि मैं जिस कार्य को करूं वह कहिये देवता बोले हे भव ! आप हमें शीघ्र वेद शास्त्र तथा विज्ञान दीजिये तथा आप हमारे ऊपर प्रसन्न हैं तो सरहस्य यज्ञ दीजिये महादेव बोले हे देव गण ! हित के सहित तुम सब पशु हो जाओ मैं तुम्हारा पति हूँगा तब मोक्ष को प्राप्त करोगे देवताओं ने यह बात स्वीकार कर कहा कि तभी तो आपका नाम

पशु पति है ॥२५॥२६॥२७॥२८॥ तदनन्तर प्रसन्न हो ब्रह्मा रुद्र से कहने लगा कि हे रुद्र तेरे लिये निसन्देह चतुर्दशी तिथि होगी ॥२६। उस चतुर्दशी तिथि में जो भक्ति तत्पर होकर आपका पूजन करेंगे उपवास कर गेहूं के अन्न से ब्राह्मणों को भोजन करावेंगे उनके ऊपर तुम प्रसन्न हो उनको तुम स्थान दीजियेगा ॥३०॥३१॥ अव्यक्त जन्मा ब्रह्मा के ऐसा कहने पर रुद्र ने पूषा के दाँत, भग की आंख ऋतु के फल सब ठीक कर दिये तथा अन्य देवताओं को भी सकल परिज्ञान दिया। इस प्रकार रुद्र की सम्भूति प्रथम ब्रह्मा से हुई है ॥३२॥३३। इस ही प्रयोग से देवपति कहा जाता है जो इस कथा को प्रातःकाल सुनता है वह सब पापों से मुक्त हो शिव लोक को प्राप्त करता है इति वाराह पुराणे महातप उपाख्याने रुद्रोत्पत्तिर्नाम काशीराम कृत भाषा टीकायाम् त्रयत्रिंशोऽध्याय ॥३३॥

अथः चौतीसवाँऽध्यायः

दोहा:—पितृ सर्ग वर्णन करहूँ चौतीसहि अध्याय।
अमावस दिन तृप्त भये, प्रजा दिया जल पाय॥

अथः पितृ सर्ग स्थिति वर्णनं– महातपा ऋषि बोले हे राजन्! पितरों की उत्पत्ति में वर्णन करता हूँ तुम सुनिये पहिले प्रजा रचने की इच्छा वाले ब्रह्मा ने एकाग्र मन से सब तन्मात्रा मन से बाहर कर रूपकों से सबमें परम का ध्यान करने लगा उस परम आत्मा में योग को प्राप्त हुये ब्रह्मा के देह से धूम्र वर्ण की कान्ति वाले तन्मात्रा निकली ॥१॥२॥३॥ आकाश में स्थित ऊपर जाने की इच्छा वाले तपस्वी सोम रस पीते हैं ऐसा कहने लगे ॥४। ब्रह्मा उन त्रियक स्थित उन मुखों को सहसा देखकर कहने लगा कि आप लोग सब ग्रह मेधियों के पिता होवें ऊर्द्ध वक्त्र वाले नान्दी मुख संज्ञा वाले पितर होवें ऐसा कह ब्रह्मा ने उन पितरों को दक्षिणायन संज्ञा वाला मार्ग रचा

चुप चाप प्राणि रचे तब पितर बोले कि हे भगवन् ! आप हमें वृत्ति दे दीजिये जिससे कि हम सुख पूर्वक रहें ॥५॥६॥७। ब्रह्मा ने कहा आपके लिये अमावस्या तिथि होगी उस अमावस्या तिथि में मनुष्यों के कुश तिलोदक देने से आप लोग परम तृप्ति को प्राप्त होवेंगे अन्यथा नहीं ॥८। इस अमावस्या के दिन उपवास कर पितरों को भक्ति पूर्वक तिल देने चाहिये तथा आप लोग भी ऐसा करने वाले को परम वरदान देवें ॥९॥ इति वाराह पुराणे आदि क्रूर वृतान्ते महातप उपाख्याने सर्ग स्थिति वर्णनम् नाम काशीराम कृत भाषा टीकायाम् चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ॥३४॥

॥ अथः पैंतीसवाँअध्याय ॥

दोहा— दक्ष शाप से क्षय हुआ, अत्रृ ऋषि तनय सोम ।
समुद्र मथ पुनि प्रकटा, आदि सनातन सोम ॥

अथ सोमोत्पत्ति स्थिति रहस्य– महातपा कहने लगा ब्रह्मा का पुत्र महा यशस्वी अत्रि नाम का था उस अत्रि का पुत्र चन्द्रमा हुआ वह चन्द्रमा दक्ष का दामाद था जो सत्ताईस नक्षत्र दक्ष की पुत्री कही गई हैं वह सारी चन्द्रमा की पत्नी थीं उनमें श्रेष्ठ रोहिणी थी ॥१॥२॥ चन्द्रमा उस रोहिणी ही के साथ क्रीड़ा रति विलास करता था अन्य पत्नियों के साथ रमण नहीं करता था ऐसा सुना जाता है वे रोहिणी से इतर स्त्रियां अपने पिता दक्ष के पास आकर अपने पति का असमानता से व्यवहार करना कहा दक्ष भी बार बार आकर चन्द्रमा को समझाने लगा परन्तु चन्द्रमा ने सब स्त्रियों में समान व्यवहार नहीं किया तब चन्द्रमा को दक्ष ने शाप दिया कि अन्तर्हित होजा तब दक्ष के शाप से चन्द्रमा क्षय को प्राप्त हुआ ॥३॥४॥ चन्द्रमा के नष्ट होने पर देवता, मनुष्य, पशु, लता, औषधि, आदि सब नष्ट हो गये ॥५॥ अतिशय करके औषधियों के

नष्ट होने पर देव श्रेष्ठ आतुर हो कहने लगे कि वीरुधों के मूल में सोम स्थित है ॥६॥ फिर सबको चिंता हुई तथा विष्णु की शरण गये भगवान् सबको कहने लगे कि कहिये आपका क्या कार्य करूं ॥७॥ देवता बोले भगवन् दक्ष ने शाप देकर चन्द्रमा का नाश कर लिया है भगवान् बोले चारों तरफ से औषधि गेर कर दत्तचित से समुद्र मथन कीजिये तब आपका कार्य पूर्ण होगा ॥८॥ देवताओं से ऐसा कहकर विष्णु ने स्वयम् रुद्र का ध्यान किया ब्रह्मा का तथा वासुकि नाग का ध्यान किया ॥६॥ तब सारे देवता वासुकी नाग की नेतन बनाकर मन्दराचल की रीड़किनी बनाकर समुद्र मथन करने लगे उससे फिर सोम उत्पन्न हुआ ॥१०॥ जो क्षेत्रज्ञ संज्ञा वाला इस देह में प्रधान पुरुष है वही देहियों का जीव संज्ञा वाला सोम यानी चन्द्रमा मानना चाहिये ॥११॥ परोक्षता से वह सोम मूर्ति को प्राप्त हुआ उसी प्रभु से देव मनुज ये सोलह क्षेत्र देवता वृक्ष औषधि आदि सब जीवित हैं रुद्र ने उस ही को कला के सहित सिर धारण किया ॥१२॥१३॥ तदात्मिक यानी चन्द्रात्मिक ही जल है क्योंकि यह विश्व मूर्ति कहा गया है उस चन्द्रमा को ब्रह्मा ने पूर्णमासि तिथि प्रदान की है ॥१४॥ पौर्णमासि के दिन उपवास कर उसकी पूजा कर अन्न आहार करे तो चन्द्रमा उसको परम ज्ञान देता है कान्ति पुष्टि धन धान्य सब कुछ दे देता है ॥१५॥ इति वराह पुराणे आदि कृत वृतान्ते महातप उपाख्याने सोमोत्पत्ति स्थिति रपस्यम नाम काशीराम कृत भाषा टीकायाम् पञ्चत्रिंशो-ऽध्यायः ॥३५॥

अथः छत्तीसवाँऽध्याय

दोहा— मणिजों का इतिहास कह, महातपा मुनि मोच ।
वृन्दावन में भजन कर, प्रजापाल नृप मोच ॥

अथ प्राचीन इतिहास वर्णनं-- महातपा कहने लगा हे राजन्! आदि त्रेतायुग में जो मणिज राजा हुये हैं उनको कहता हूं जिनमें कि एक तू भी हुआ है जो सुप्रभ नाम का मणिज था वही तू कृतयुग में प्रजापाल नाम से विख्यात राजा हुआ है ॥१॥२॥ हे राजन्! शेष त्रेता युग में महा बलवान् राजा होंगे जो दीप्त नाम का मणिज था वह शान्त नाम से राजा होगा ॥३॥ सुरश्मि मणिज महा बलवान् शसकरण नाम से राजा होगा सुभदर्शन नाम का मणिज निसन्देह पांचाल नाम से विख्यात राजा होगा ॥४॥ सुशान्ति नाम का मणिज अङ्ग वंश में राजा होगा सुन्दर नाम का मणिज भी उसी वंश में होगा सुन्द नाम का मणिज मुचुकुन्द राजा होगा सुषुम्न नाम का मणिज तुरु नाम से राजा होगा ॥५॥ सुम्ना सौमदत्त नाम से राजा होगा शुभ नाम का मणिज सम्वर्ण नाम से राजा होगा। सुशील, वसुदान नाम से राजा होगा। सुखद, वसुपति नाम से राजा होगा शम्भु मणिज सेनापति नाम का राजा होगा। कान्त मणिज दशरथ नाम का राजा होगा सोम, जनक राजा होगा ये सारे राजा त्रेतायुग में होंगे ॥६॥७॥ वे सारे ही राजा इस पृथ्वी का भोग कर तथा अनेक यज्ञों से यजन कर निसन्देह स्वर्ग को जायेंगे। ८॥ वाराह जी कहने लगे वह राजा प्रजापाल महातपा ऋषि ने ब्रह्म विद्या रूपी आख्यान सुनकर अति प्रसन्न हो तप करने वन गया ॥९॥ तथा महातपा ऋषि ने अध्यात्म योग के द्वारा अपने कलेवर को छोड़ ब्रह्मता को प्राप्त हो हरि में लय हुआ ॥१०॥ वह राजा तप करने वृन्दावन में गया वहां गोविन्द नाम के हरि की स्तुति करने लगा ॥११॥ राजा बोला जगत् के देव मूर्ति को, गोपेन्द्र को, इन्द्रानुज को, अप्रमेय को, संसार चक्र चलाने में चतुर को, पृथ्वी धर को, देववर को, नमस्कार करता हूं। १२॥

सैकड़ों दुख रूपी लहरों से भयङ्कर जरा रूपी भौंरों वाले कृष्ण पाताल मूल वाले वालों से पाताल या कृष्ण भगवान् रूपी मूल वाले भवसागर में अन्तस्थित मुझ को सिर्फ एक ही सुख देता है उस अप्रमेय गोपति के लिये नमस्कार हो ॥१३॥ व्याधि आधि युक्त पुरुषों से ग्रहों से संगठवान् होने पर भी हे देव ! हे महात्मन् ! हे जनार्दन ! हे समस्त वन्धो ! युद्ध प्रेमी तथा वारवार संघटमान् को नमस्कार हो ॥१४॥ आप सर्व देवताओं के श्रेष्ठ देव हो, हे सुरेश ! आप ही से यह सारा संसार व्याप्त है, विस्तृत है, हे गोपेन्द्र ! हे महानुभाव ! हे रथाङ्गपाणे ! संसार से डरे हुये मेरी रक्षा कीजिये ॥१५॥ आप पर पुरुष हो, देव हो, देवताओं में श्रेष्ठ हो, पुराण रूप हो, शशि प्रकाश हो, हे हुतासक ! हे अच्युत हे तीव्र भाव ! हे गोपेन्द्र ! संसार सागर में डूबते हुये मुझे बचाइये ॥१६॥ हे अच्युत ! आपकी माया से मोहित संसार रूपी चक्र में अनेक आक्रमण जिन देह धारियों को आविर्भूत होते हैं हे सुरेश ! वे द्वन्द धाम वाले कौन आपकी माया को जीत सक्ते हैं अर्थात् कोई नहीं ॥१७॥ जो तुझ अगोत्र अस्पर्श, अरूप, गध, अनाम, अनिर्देश, अज, वरेण्य को हे गोपेन्द्र ! भजते हैं मुक्ति को चाहने वाले वे धीर सांसारिक धर्मों से मुक्त हो जाते हैं ॥१८॥ जो शब्द से भी परे है व्योम रूप है, निराकार है निष्कर्म है शुभ भाव है, वरेण्य है तथा उपचार से पुराणों में चक्र पाणि आदि कहा गया है उसको नमस्कार करता हूँ ॥१९॥ त्रिविक्रम को जगत्र व्याप्त को, चतुर्मूर्ति मन बुद्धि, चित अहङ्कार को, सर्व लोकेश को, शम्भू को, विभु को, भूत पति को सुरेश को अनन्त मूर्ति विष्णु को नमस्कार करता हूँ ॥२०॥ हे देव ! आप सब चराचर को रचते हो, पालन करते हो, संहार करते हो, मुक्ति की इच्छा वाले मुझको वहीं पहुंचाइयो जहां योगी लोग जाकर वापिस नहीं

आते हैं ॥२१। हे महानुभाव गोविन्द ! आपकी जय हो, हे विष्णो ! आपकी जय हो हे पद्मनाभ ! आपकी जय हो हे सर्वज्ञ हे अप्रमेय ! आपकी जय हो हे विश्वेश्वर हे विश्वमूर्ते ! आपकी जय हो ॥२२॥ वाराह जी बोले वह प्रजापाल राजा भगवान् की इस प्रकार स्तुति कर परमात्मा गोविन्द में अपने कलेवर को रख मोक्ष को प्राप्त हुआ ॥२३॥ इति वाराह पुराणे सत्य तप उपाख्याने प्रागिति हासे काशीराम कृत भाषा टीकायाम् षट्त्रिंशोऽध्यायः ॥३६॥

अथः सैंतिसवाँऽध्याय

दोहा— धरणी फिर पूछन लगी, रमेश मिलन उपाय ।
वाराह ने समुझाय दी, प्रागिति हास सुनाय ॥

अथ प्राची नेतिहास वर्णनम्– पृथ्वी ने कहा हे विभो ! हे देव ! भक्ति वाले मनुष्यों से भगवान् की आराधना किस प्रकार की जाती है अथवा भक्ति युक्त स्त्रियों से भगवान् किस प्रकार पूजे जाते हैं हे भूत भावन यह सब मुझे बता दीजिये ॥१॥ वाराह भगवान् बोले हे देवि मैं भाव से साध्य हूँ धन से तथा जपादि से साध्य नहीं हूं तथा भक्तों का कायक्लेश तेरे पास कहता हूं ॥२॥ मन से, वाणि से, कर्म से, जो मनुष्य मेरा ही चिन्तन करे उसके विविध व्रतों को कहता हूं तू सुन ॥३॥ अहिंसा, सत्य, अस्तये, ब्रह्मचर्य आदि मानसिक कर्म कहे हैं ॥४॥ दिन में एक समय भोजन करना तथा रात्रि में पूर्ण उपवास करना आदि कायक व्रत कहे हैं ॥५॥ वेद पढ़ना पढ़ाना विष्णु का कीर्तन करना सत्य भाषण करना और किसी की निन्दा न करना दूसरे की भलाई करते रहना धर्म पर दृढ़ होना यह वाचिक व्रत कहे हैं ॥६॥ इसमें एक कथा भी सुनी जाती है कि पहिले कल्प

में ब्रह्मपुत्र, उग्रतपा, आरुणी नाम का ऋषि था वह तप करने जङ्गल में गया उपवास करने में तत्पर हो उस जङ्गल में तप करने लगा ॥७॥८॥ उस ब्राह्मण ने देविका नदी के किनारे पर निवास किया कभी वह उस नदी में स्नान करने गया वहां स्नान करके जप कर रहा था कि उसने महा धनुष धारी तीखे नेत्र वाले भयङ्कर व्याध को आते देखा । ६॥ ॥१०॥ वह व्याध वल्कल ग्रहण करने की इच्छा से उस ब्राह्मण को मारने उसके समीप आया उसको देख ब्रह्म हत्यारे के डर से पीड़ित होकर वह ब्राह्मण क्षोभ को प्राप्त हुआ नारायण देव का ध्यान करता हुआ वहीं पर स्थिर ही रहा जिसके हृदय में हरि भगवान् विराजमान् थे ऐसे ब्राह्मण को आगे से देख व्याध डर गया ॥११॥१२॥ तथा धनुष बाण छोड़कर व्याध कहने लगा कि हे ब्राह्मण ! मैं आपको मारने की इच्छा से यहां पर आया हूं ॥१३॥ परन्तु इस समय आपके दर्शन से वह बुद्धि लोप हो गई है हजारों ब्राह्मण तथा हजारों स्त्रियें मैंने मारी हैं हे ब्रह्मन् ! पाप पूर्ण ब्रह्म हत्यारा मैं किस गति को प्राप्त होऊंगा ॥१४॥१५। इस समय आपके समीप तप करना चाहता हूं आप उपदेश देकर सफल कीजिये ॥१६॥ व्याध के ऐसा कहने पर भी उस ब्राह्मण ने व्याध को ब्रह्म हत्यारा पाप कर्मी जानकर कुछ उत्तर न दिया ॥१७॥ ब्राह्मण के कुछ न कहने पर भी धर्म की इच्छा से व्याध वहीं ठहरकर नदी में स्नान करके किसी वृक्ष मूल में निवास करने लगा ॥१८। कुछ दिन पश्चात् एक भूखा व्याघ्र उस शान्त ब्राह्मण को मारने उस देविका नदी में गया ॥१६॥ जल के बीच में स्थित ब्राह्मण को जभी वह व्याघ्र मारना चाहता था तभी समीप में स्थित उस व्याध ने उस व्याघ्र को मार डाला ॥२०॥

उस व्याघ्र के शरीर से एक पुरुष निकला कारण कि अन्तर जल में स्थित ब्राह्मण ने व्याघ्र मारने का शब्द सुनकर ॐ नमो नारायणाय इस प्रकार मन्त्र उच्चारण किया। वह भगवान् नामोच्चारण मन्त्र कण्ठगत प्राण वाले व्याघ्र ने भी सुना। उस मन्त्र के सुनते ही व्याघ्र ने प्राणों को छोड़ शुभ पुरुष स्वरूप धारण किया। तथा कहने लगा कि हे द्विज श्रेष्ठ! आपके प्रसाद से पाप निर्मुक्ति तथा निरामय होकर जहां सनातन विष्णु है वहीं जाता हूं उसके ऐसा कहने पर ब्राह्मण बोला कि हे पुरुषोत्तम ! तुम कौन हो ॥२१॥२२॥२३॥२४॥ उसने कहा मैं पहिले जन्म में राजा था दीर्घबाहु मेरा नाम था। सब धर्मों के तत्व को जानने वाला था। मैं वेदों के तत्व को जानता था तथा शुभ अशुभ सभी कर्मों को भली भांति जानता था ब्राह्मणों से मेरा कुछ प्रयोजन नहीं है। ब्राह्मण क्या चीज है मेरे इस प्रकार कहने पर ब्राह्मणों ने क्रोधित होकर मुझे शाप दिया कि तू क्रूर दुराधर्ष व्याघ्र होगा ब्राह्मणों के अपराध से मुझे कुछ भी स्मरण नहीं होगा किन्तु मरण समय केशव भगवान का नाम किसी के उच्चारण करने पर सुनियेगा ॥२५॥२६॥२७॥२८॥ ब्राह्मणों के ऐसा कहने पर उसी समय मुझे ब्रह्म शाप ने घेर लिया ॥२६॥ तब मैंने अनुग्रह के लिये उन ब्राह्मणों को प्रणाम कर कहा। तब उन्होंने मुझे यह कहा कि हे नराधिप! छटे दिन के आगे जो कुछ तेरे पास ठहरेगा वही कुछ समय के लिये तेरा भोजन होगा। बाण से मारे जाने पर कंठ गत प्राण होकर जो तू ब्राह्मण के मुख से नारायण नाम सुनेगा तब तुझे निसन्देह स्वर्ग मिलेगा हे ब्राह्मण ! सो इस समय आपके मुँह से नारायण का नाम मैंने सुन लिया है ॥३०॥३१॥३२॥३३॥

ब्राह्मणों के साथ द्वेप करने पर भी भगवान् पत्यक्ष हुये तो फिर जो ब्राह्मणों को पूजकर अपने ही मुख से हरि का नाम उच्चारण करेगा वह पापों से मुक्त प्राणों से वियुक्त होकर निसन्देह भव सागर से मुक्त हो जाता है यह सच कहता हूँ फिर भी यह सच कहता हूं हाथ उठाके सच कहता हूँ ॥३४ ॥३५ जङ्गम, ब्राह्मण, देवता कूटस्थ, पुरुषोत्तम ऐसा कह वह राजा व्याघ्र पापों से मुक्त हो वह राजा स्वर्ग को गया ।३६॥ ब्राह्मण भी मुक्त होकर उस समय व्याध से कहने लगा। जिञ्चत्तु मृगराज से जो कि तूने मेरी रक्षा की है हे पुत्र! उससे मैं तेरे ऊपर प्रसन्न हूं में वर देने को तैयार हूं तू वर मांग व्याध बोला कि हे महाराज! यही वर है जो कि आप मुझसे प्रेम पूर्वक बात चीत कर रहे हो ॥३७॥३८॥ इससे ज्यादा वर का मैं क्या करूं मुझे शिक्षा दीजिये वह ब्राह्मण बोला हे व्याध! पहिले तूने तप करने की इच्छा से मेरी प्रार्थना की है परन्तु उस समय तू बड़ा भारी पातकी था घोर रूप था इस समय तेरे पाप देविका नदी में स्नान करने से मेरे दर्शन से तथा चिरकाल तक विष्णु नाम श्रवण से नष्ट हो गये हैं इस समय निश्चय शुद्ध देह हो गया है ॥३९॥४०॥४१॥ अब मेरे सामने तू एक वार ग्रहण कर चिरकाल तक तपस्या करने लगजा जो कि तू चाहता है ॥४२॥ व्याध ने कहा हे भगवन्! जो आपने विष्णु नारायण का नाम लिया है वह विष्णु मनुष्यों से किस प्रकार प्राप्त किया जाता है यही वर मुझे दीजिये ॥४३॥ तपस्वी ब्राह्मण ने कहा पुरुष जो कुछ भी व्रतादिक करता है वे सब विष्णु के निमित्त करने चाहिये भक्ति युक्त हो ऐसा कहने पर वह पुरुष उस अच्युत भगवान् को प्राप्त कर लेता है ॥४४॥ हे पुत्र! ऐसा जानकर

आप इस व्रत को कीजिये गणान्न न खावे, झूंठ कभी न बोले ॥४५॥ हे व्याध यह श्रेष्ठ व्रत तुझे बता दिया है जब तक चाहे निश्चल हो यहीं पर तपस्या करता रह ॥४६॥ श्री वाराह ने कहा व्याध को चिन्ता युक्त देख ब्राह्मण ने उसे वरदान दिया फिर व्याध को मोक्षार्थी जानकर मुनि कहीं उससे छिपकर कहीं चले गये ॥४७॥ इति श्री वाराह पुराणे आदि कृत वृतान्ते सत्य तप उपाख्याने भगितिहासे काशीराम कृत भाषा टीकायामसप्तत्रिंशोऽध्यायः ३७॥

अथः अड़तीसवाँऽध्यायः

दोहाः— निराहार रह तप किया, देविका तट व्याध ।
दुर्वासा मुनि तृप्त हो, सत्य तप कियो व्याध ॥

अथः व्याध तप वर्णनम्— वाराह ने कहा वह व्याध श्रेष्ठ शुभ शोभन मार्ग में स्थित हो मन से गुरु का स्मरण करता निराहार रह तप करने लगा ॥१॥ भिक्षा का समय आने पर वृक्षों के गिरे हुये पत्तों को खाता था। वह एक दिन भूख से पीड़ित होकर एक पेड़ के नीचे गया और वृक्ष के पत्तों को खाने की इच्छा करने लगा तभी आकाश में आकाशवाणी ने कहा कि सकट को न खाइये जोर से कही गई आकाश वाणी सुनकर वह व्याध उस वृक्ष को छोड़ दूसरे वृक्ष के पत्ते ग्रहण करने लगा तब भी आकाश वाणी ने ऐसा ही निषेध किया । फिर अन्य कई वृक्षों के पास गया, परन्तु आकाशवाणी ने ऐसा ही कहकर निषेध किया । इस प्रकार वह व्याध सबको सकट जानकर निराहार ही रहा २॥३॥४॥५॥ आलस्य रहित गुरु के चरण स्मरण करके निराहार रहकर तप करने लगा तभी प्रसंशित आत्मा दुर्वासा ऋषि वहां आ पहुंचा । उसने तब उठे तेज से जलती हुई हवि के समान उस

व्याध को प्राण युक्त देखा ॥६॥७॥ तथा उस व्याध ने भी महामुनि दुर्वासा को सिर से नमस्कार कर कहा कि हे भगवन्! आपके दर्शन से मैं कृतार्थ हो गया हूँ। इस समय श्राद्ध काल में आप मेरे देवता मुझे प्राप्त हुये हो हे द्विजोत्तम ! आपको शीर्ण पर्णादियों से भोजन कराकर प्रसन्न करता हूँ ॥८॥९॥ उस व्याध का तप जानने की इच्छा से दुर्वासा भी शुद्ध भाव से पवित्र तथा जितेन्द्रि व्याध से यह वचन बोला कि मैं भूख से व्याकुल हूँ तथा तेरे ही उद्देश्य से यहां आया हूँ अत: मुझे जौ, गेहूँ तथा धनादियों का अच्छा पका हुआ भोजन कराइये ॥१०॥११॥ दुर्वासा ऋषि के ऐसा कहने पर व्याध चिन्ता कुल हुआ कि मैं अन्न कहां से प्राप्त करूंगा उसके चिन्ता ग्रस्त होने पर सिद्धि युक्त सुवर्ण का एक शुभ पात्र आकाश से गिरा उसको व्याध ने अपने हाथों से ग्रहण किया ॥१२॥ ॥१३॥ पात्र को ग्रहण कर प्रेम पूर्वक दुर्वासा से कहने लगा हे ब्रह्मन् ! आप मेरे ऊपर इतनी कृपा कीजिये कि जब तक मैं भिक्षा करके आता हूं तब तक यहीं पर ठहरिये ऐसा कह कर व्याध भिक्षा मांगने नजदीक ही वनघोप युक्त नगर में गया नगर की तरफ जाते उसके आगे से हेमपात्र हाथ में लिये अन्य सर्व शोभन व्रक्षों से निकले हुये कोई तथा विविध प्रकार का अन्न उसे देकर उसका पात्र भर दिया व्याध भी अपने को कृतार्थ हुआ जान अपने आश्रम की तरफ लौट आया । दुर्वासा को वहां विराजमान देखा ॥१४॥१५॥१६॥१७॥१८॥ मुनि को वहीं बैठा देख प्रसन्नता से भिक्षा को पवित्र स्थान पर रखकर दुर्वासा को प्रणाम कर यह बोला कि हे ब्रह्मन् !! आपका यदि मेरे ऊपर अनुग्रह है तो हाथ पैर धोकर शुभ आसन पा बैठिये और भोजन कीजिये ॥१९॥२०॥

व्याध के ऐसा कहने पर तप के प्रभाव को जानने की इच्छा से दुर्वासा बोला मेरे पास न तो जलपात्र है और न गंगा ही में जा सकता हूँ हे व्याध! मैं पाद प्रक्षालन किस प्रकार करूं दुर्वासा के ऐसा कहने पर व्याध चिंता युक्त हो गया क्या करूं इस दुर्वासा ऋषि को किस प्रकार भोजन कराऊं ऐसा सोच गुरु का स्मरण कर देविका नदी के शरण गया ॥२१॥२२॥२३ वहां देविका नदी की स्तुति करने लगा व्याध ने कहा हे नदियों में श्रेष्ठ देविके नदी! मैं ब्राह्मण हत्यारा हूं व्याध हूं, पाप कर्मा हूं, तथापि स्मरण करने से मुझ शरण में आये हुये की रक्षा कीजिये । मैं देवता नहीं जानता, मन्त्र नहीं जानता, पूजन नहीं जानता हूं केवल गुरु के चरणों का स्मरण कर निरन्तर शुभ देखता रहता हूं हे गंगे! इस प्रकार जो दीन दुखी मैं हूं मेरे ऊपर दया कीजिये ॥२४॥२५॥२६॥ हे गंगे! पाद प्रक्षालन के लिये दुर्वासा ऋषि के समीप आइये व्याध के इस प्रकार कहने पर पाप नाशिनी देविका नदी ऋषि के समीप आ पहुंची देविका नदी को अपने पास आई देख दुर्वासा परम विस्मय को प्राप्त हुआ ॥२७॥२८॥ हाथ पैर धोकर तथा आचमन कर अत्यन्त प्रसन्नता पूर्वक दुर्वासा ने श्रद्धा युक्त भोजन किया फिर भूख से दुर्बल हड्डी मात्र शेष व्याध को कहने लगा कि अङ्गों के सहित सरहस्य पदक्रम वाले वेद तेरे को प्राप्त होवें ॥२९ ३०॥ ब्रह्म, विद्या, पुराण, आदि तुझे प्रत्यक्ष हो जावें इस प्रकार वरदान देकर दुर्वासा ने उसका नामकरण किया कि तू सत्य तपा नाम का आद्य ऋषि होगा दुर्वासा के ऐसा वर देने पर व्याध कहने लगा हे ब्रह्मन्! व्याध होकर किस प्रकार मैं वेदों को पढ़ूं दुर्वासा ऋषि बोला, निराहार रहने से तेरा पहिला शरीर चला गया है इस

समय दूसरा ही तपोमय शरीर हो गया है पहिले का अज्ञान नष्ट हो गया है इस समय शुद्ध अक्षर हो गया है ॥३१॥३२। ॥३३। ३४॥ मैं सच कहता हूँ कि इस समय तू शुद्ध शरीर हो गया है। अतः वेद और शास्त्र तुझे अवश्य प्राप्त होकर प्रकाशित हो जांयगे ॥३५॥ इति वाराह पुराणे आदि कृत वृत्तान्ते सत्य तप उपाख्याने काशीराम कृत भाषा टीकायाम अष्टत्रिंशोध्याय ॥३८॥

अथः उनतालीसवाँऽध्याय

दोहाः— मत्स्य द्वादशी व्रत विधि, कही सकल समुझाय।
व्याध हित दुर्वासा मुनि, जस फल कहु नहिं जाय॥

सत्य तपा व्याध ने कहा— हे भगवन्! जो आपने दो शरीर कहे हैं वह मुझे बतलाइये कि दो प्रकार का भेद किस प्रकार हुआ है ॥१॥ दुर्वासा ऋषि ने कहा— दो नहीं बल्कि देह धारियों के भोग भोगने के स्थान शरीर हैं वे विकृति या विपरीतता को प्राप्त होते हुये तीन प्रकार से होते हैं ॥२॥ पहिली अवस्था ज्ञान से हीन अधर्म युक्त थी, दूसरी व्रतादि करने से अत्यन्त धार्मिक हुई ॥३। जो इन्द्रियों को अतिक्रमण कर धर्म अधर्म का उपभोग करती है वह शरीर की तीसरी अवस्था है विचक्षण ब्रह्म वेत्ताओं ने इस प्रकार शरीर के तीन भेद कहे हैं ॥४॥ पहिले प्राणियों को मारने का जो तेरा स्वभाव या भाव था वह पापी था अतः शरीर भी पाप संज्ञा वाला हुआ। इस समय शुभ वृत्ति तथा सरल तप आदि करने से दूसरा धर्म युक्त तेरा शरीर हो गया है। इसलिये निश्चय से तू वेद पुराण आदि जानने के योग्य हो गया है ।५॥६॥७॥ जब तक पुरुष की आठ वर्ष से भीतर की अवस्था रहती है तब अन्य वृत्त रहता है और आठ वर्ष से ज्यादा का

होने पर अन्य चेष्ठ हो जाता है ब्रह्मवादियों ने एक ही शरीर के अलग अलग तीन भेद अवस्था के भेद से कहे हैं इनक अन्तर सिर्फ मिट्टी और घड़े के समान है। कर्म काण्ड ब्राह्मणादि यानी ब्राह्मण ग्रन्थों में चार प्रकार का कहा है उ वेदोक्त कर्म को ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य ये तीन नित्य कर हैं शूद्र तीनों वर्णों की सेवा करता है यही वेदोक्त क्रि है ॥८॥९॥१०॥११॥ इन धर्मों को जानकर जो तप करत है उस वेदोक्त कर्म करने वाले को शीघ्र मुक्ति प्राप्त होत है ॥१२॥ सत्यतपा कहने लगा कि हे मुनि जो आप कहा है कि अगोत्र, अनाम, मूर्ति रहित परब्रह्म का रूप योग लोग भी नहीं जानते हैं तो कहिये कि संज्ञा आदि से रहि ब्रह्म किस प्रकार जाना जाता है हे गुरो ! उसकी संज्ञा आ कहिये जिससे कि मैं उसे जानूं ॥१३॥१४॥ जो ये परब्र वेदों में शास्त्रों में पढ़ा जाता है वह पुण्डरीकाक्ष स्वय नारायण हरि तो अनेक प्रकार के यज्ञ करने से, तथा दाना देने से, प्राप्त होता है ॥१५॥ तथा बहुत सा धनों से वे वेदान्तों के जानने वाले ऋत्विजों से प्रधान देव स्वय नारायण हरि प्राप्त हो सकते हैं। तथा पुण्य करने वाल से भगवान प्राप्त होते हैं। अब आप बताइये कि निर्ध को किस प्रकार से भगवान् मिलते हैं॥१६॥१७ हे ऋषि धन के बिना दान भी नहीं दिया जा सकता और य धन हो भी जाय तो कुटम्ब के पालन पोषण में आसक्त पु की धन की इच्छा नहीं हो सकती है अतः निर्धन कुटम्बासक्त पुरुष को हरि भगवान अप्राप्य प्रतीत होते जिस अति कठिन परिश्रम से भगवान मिलते हैं तो व उपाय मुझे बताइये जो कि सब वर्णों के करने योग्य ॥१८॥१९॥२०॥ दुर्वासा ने कहा "देव निर्मित परम गु

रहस्य में कहता हूं जो कि पहिले जल में डूबी हुई पृथ्वी ने किया है पृथ्वी का पार्थिव भाव जल से अति घुल जाने से पृथ्वी जल में डूब कर रसातल पहुंच गई थी। प्राणियों को धारण करने वाली पृथ्वी रसातल में पहुंच कर समर्थशाली नारायण भगवान् की उपवास, व्रत, तथा पृथक- पृथक नियमों से आराधना करने लगी। बहुत समय पश्चात् गरुड़ध्वज भगवान ने पृथ्वी की आराधना से प्रसन्न हो रसातल से पृथ्वी का उद्धार कर स्थिति में स्थापित कर दी ॥२१॥२२॥२३॥२४॥ सत्य तपा बोला हे मुने! पृथ्वी ने कौन उपवास किया था तथा कौन व्रत किये थे। वह मुझे बताइये ॥२५॥ दुर्वासा ने कहा जब मार्गशीर्ष महीने की दशमी तिथि आवे तो मनुष्य को चाहिये कि नियतात्मा होकर देवार्चन करे, अग्नि कार्य करे, शुद्ध वस्त्र पहिने प्रसन्न चित्त होकर सुन्दर पका हुआ हव्यान्न का भोजन करे फिर कदम चले, तदनन्तर हाथ पैर धोकर जिस वृक्ष से दूध निकलता है उससे आठ अंगुल का दांतुन करे फिर आचमन करे तत्पश्चात् सब दरवाजों का स्पर्श करके चिरकाल तक जनार्दन का ध्यान करे शंख, चक्र, गदा धारण करने वाले पीताम्बर पहिने प्रसन्न मुख तथा सर्व लक्षण पूजित भगवान् का ध्यान करे फिर हाथ से जल लेकर शुद्ध भाव से जनार्दन देव को हस्त जल से अर्घ्य देवे ॥२६॥२७॥२८॥२९॥३०॥ तथा हस्त जल से अर्घ्य देवे ऐसा कहे कि हे पुण्डरीकाक्ष! एकादशी के दिन निराहार रहकर द्वादशी के दिन भोजन करूंगा हे अच्युत! आप मेरी रक्षा कीजिये ॥३१॥३२॥ ऐसा कहकर नारायण का जप करता हुआ देव देव नारायण के समीप विधि विधान से सो जावे ॥३३॥ प्रातःकाल शयन से उठकर शौच आदि क्रिया करके समुद्र में जाने

वाली निर्मल नदी में अथवा अन्य किसी भी नदी में या तड़ाग में या घर ही में नियत आत्मा होकर स्नान करे ॥३४॥ स्नान से पहिले निम्न मन्त्र कहकर शुद्ध मिट्टी लावे "हे देवी पृथ्वी! प्राणियों का धारण पोपण हमेशा आप ही से होता है अपने सत्य से मेरे पापों को दूर कीजिये, हे सुव्रते! ब्रह्माण्ड के अन्तर्गत सारे तिथि आप से मिले हुये हैं इसलिये अपने पापों को दूर करने के लिये आपसे इस मृतिका को ग्रहण करता हूँ' यह मन्त्र कहते हुये मिट्टी लाकर जल की प्रार्थना करे हे वरुण सारे ही अभिनाशी रस आपमें सर्वदा स्थित हैं उन रसों से आप इस मृतिका को शीघ्र पवित्र कीजिये इस प्रकार मिट्टी तथा जल को लेकर अपने शरीर पर लगावें ॥३५॥३६॥३७॥ ॥३८॥ विद्वान पुरुप शरीर पर तीन चार मिट्टी मलकर यथा विधि वरुण के मन्त्र पढ़कर स्नान करे। स्नान करके तथा आवश्यक कृत्य करके फिर देवालय में जावे वहां भक्ति पूर्वक भगवान् की आराधना करे ॥३६।४०॥ केशव के लिये नमस्कार हो, पैरों की पूजा करे, दामोदर के लिये कटि प्रदेश पूजा करे, नृसिंह के लिये जंघाओं की पूजा करे, श्री वत्सधारी के लिये छाती की, कौस्तुभ धारी के लिये कोष्ठ की, श्री पति के लिये वक्षस्थल की, त्रैलोक्य विजयता के लिये हाथों की, सर्वात्मा के लिये सिर की, चक्र धारी के लिये चक्र की, शंकर के लिये कमल की, गम्भीर के लिये गदा की, शान्त मूर्ति के लिये कमल की पूजा करे ॥४१॥४२॥४३॥ इस प्रकार समर्थशाली देव देव नारायण की पूजा करे फिर उनके आगे से चार कलश स्थापित करे ॥४४॥ उन कलशों में जल भर देवे माल्यादिक लगावे सुवर्ण तिल पञ्चरत्न आदि गेर देवे वह चार कलश चार समुद्र कहे गये हैं उन कलशों के

बीच में वस्त्र से आच्छादित पीठ स्थापित करे उनके ऊपर सोने, या चांदी, या तात्रा, या लकड़ी का बना हुआ पात्र रक्खे या कुछ न होवे पलास पत्तो का पात्र बिनाकर उसमें जल भर देवे तदनन्तर उस जलपूर्ण पात्र में सब अवयवों से युक्त सब अलङ्कारों से विभूषित जनार्दन भगवान् की सुवर्णमय मत्स्य प्रतिमा को स्थापित करे ॥४५॥४६॥४७॥४८ तदनन्तर अनेक प्रकार नैवेद्य तथा फल- फूल धूप- दीप वस्त्र आदि से यथा विधि भगवान् की पूजा करके प्रार्थना करे हे देव जिस प्रकार मत्स्य रूप धर कर आपने रसातल में गये हुये वेदों का उद्धार किया है। उसी प्रकार मेरा भी उद्धार कीजिये इस प्रकार प्रार्थना करके उन्हीं के सामने जागरण करे प्रातःकाल अपने विभव के अनुसार उन चार कलशों को चार ब्राह्मणों को दे देवे। पूर्व का कलशा बह्वृच ब्राह्मण को दे देवे। दक्षिणा का कलशा छाँदोग्य ब्राह्मण को देवे ।४६॥ ।५०॥५१॥५२॥ पश्चिम दिशा का श्रेष्ठ कलशा यजुशाखा वाले ब्राह्मण को देवे, उत्तर दिशा का जिस किसी को देवे यही विधि कही है ऋगवेद पूर्व में, सामवेद दक्षिण में, यजुर्वेद पश्चिम में, अथर्ववेद उत्तर में प्रसन्न होवें ॥५३॥ ॥५४। इस क्रम से सारे वेद प्रसन्न होवें ऐसा पढ़े सोने की मत्स्य मूर्ति आचार्य को दे देवे ॥५५॥ अनेक प्रकार से जो गन्ध, धूप, दीप, वस्त्र आदि से पूजन कर रहस्य के सहित जो इस मन्त्र को पढ़कर विधि विधान से पूजन करता है उसको करोड़ों गुने फल प्राप्त होते हैं जो गुरु को प्राप्त करके मोह से गुरु का तिरस्कार करता है वह नीच पुरुष करोड़ों जन्मों तक नरक में निवास करता है विधि विधान को जानने वाला आप्त गुरु कहा गय है इस प्रकार विधान देखकर द्वादशी के

दिन विष्णु की पूजा करके दक्षिणा के सहित अपनी शक्ति के अनुसार ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥५६॥५७॥५८॥५९॥ और कलशे के ऊपर जो तिलों के सहित तांम्र पात्र रक्खा है यानी कलशाताम्र पात्र तथा मत्स्य भगवान् की प्रतिमा सब सामिग्री सहित कुटम्बी ब्राह्मण को देवे तब ब्राह्मण को भोजन करावेगा फिर मौनी होकर बाल बच्चों सहित अपने आप भी भोजन करे । इस विधि से जो पृथ्वी से किये हुये व्रत करता है हे सत्य तप ! उसके पुण्य को सुनिये यदि मेरे हजार मुख हों तथा ब्रह्मा की आयु के तुल्य मेरी आय होवे तो मत्स्य द्वादशी व्रत के पुन्य को कह सकूंगा ॥६०॥६१॥६२॥६३॥६४॥ तथापि उद्देश्य से कहूँगा आप सुनिये दिव्य बारह सौ वर्षों की एक चतुर्युगी होती है इकत्तर चतुर्युगी तक एक मनु राज्य करता है चौदह मनुष्यों के राज्य करने पर ब्रह्मा का एक दिन होता है फिर उतने ही समय तक ब्रह्मा की रात्रि होती है तदनन्तर इस प्रकार तीस अहोरात्र का एक महीना होता है। बारह महीनों का एक वर्ष होता है। इस प्रकार ब्रह्मा की सौ वर्ष की आयु होती है ।जो मनुष्य कही गई विधि से मत्स्य द्वादशी का व्रत करता है वह ब्रह्मलोक को प्राप्त करता है । तथा जब तक ब्रह्मा रहता है तब तक वह भी रहता है ब्रह्मा के लय होने पर उसका भी लय हो जाता है ॥६५॥६६॥६७॥६८॥६९॥ पुनः सृष्टि के होने पर देवता या राजा होता है। इस व्रत के करने से इच्छा या अनिच्छा से किये गये ब्रह्म हत्यादि पाप भी तत्त्क्षण नष्ट हो जाते हैं। इस संसार में जो दरिद्री हैं अथवा जो राज्य से भृष्ट है ॥७०॥७१॥ वह उस द्वादशी का व्रत करके दरिद्री धनवान हो जाता है तथा राजा अपने गये हुये राज्य को फिर प्राप्त कर लेता है जो वन्ध्या स्त्री पूर्वोक्त

विधि से इस मत्स्य द्वादशी व्रत को करेगी, उसका परम धार्मिक पुत्र पैदा हो जायगा जिसने अगम्या गम्य का पाप किया हो वह भी उस पाप से इस व्रत के करने से छूट जाता है ॥७२॥७३॥७४॥ जिसने बहुत वर्षों से ब्रह्म क्रिया का लोप कर लिया है वह भी इस व्रत के सेवन करने से शीघ्र वेद संस्कार को प्राप्त हो जाता है । ज्यादा क्या कहें इस व्रत के बराबर भगवान् मिलने का दूसरा उपाय नहीं है ७५ जो व्रत अप्राप्य वस्तु को भी प्राप्त कराता है अतः मनुष्यों को यह व्रत हमेशा करना चाहिये । हे ब्रह्मन् ! इस ही विधि से स्वयम् जल में डूबती हुई पृथ्वी ने भी यह व्रत किया है । इसमें ज्यादा विचार करने की आवश्यकता नहीं यह विधि अदीक्षित तथा नास्तिक को नहीं सुनानी चाहिये ॥७६॥७७॥ देवता ब्राह्मणों के विरोधियों को यह विधि कभी नहीं सुनानी चाहिये यह पापों को नाश करने वाली गुरु भक्त को सुनानी चाहिये ॥७८॥ जो इस विधि से इस व्रत को करता है उसको सौभाग्य, धन, धान्य तथा श्रेष्ठ स्त्रियां प्राप्त होती हैं तथा अनेक मनोरथ पूर्ण होते हैं । ७९॥ जो इस मत्स्य द्वादशी कल्प को भक्ति पूर्वक सुनायेगा या स्वयम् सुनेगा वह सब पापों से छूट जायगा ॥८०॥ इति श्री वाराह पुराणे धरणी व्रते मत्स्य द्वादशी व्रतम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् एकोन चत्वारिंशो अध्यायः ॥३९॥

अथः चालीसवाँऽध्यायः

दोहा:— चालीसहु अध्याय में, कहें कूर्म अवतार ।
द्वादशी दिन व्रत किये, होवे धन विस्तार ॥

अथः कूर्म द्वादशी व्रतम्— दुर्वासा ऋषि कहने लगे— उसी प्रकार पौष के महीने सभी देवताओं ने

अमृत के हेतु समुद्र मथा वहां जनार्दन भगवान् ने कूर्म रूप धारण किया ॥१ उनकी भी यह द्वादशी तिथि है पोष महीने की जो शुक्ल दशमी कही है उसमें पूर्वोक्त क्रिया के अनुसार संकल्प करके भगवान् का भजन करते करते सो जवे एकादशी के दिन प्रातःकाल उठ स्नानादि क्रिया पूर्वोक्त विधि से करके अलग अलग मन्त्रों से जनार्दन की पूजा करे ॥२ ३॥ पहिले कूर्म के लिये पैरों की पूजा करे फिर नारायण हरि के लिये कटि प्रदेश की पूजा करे, संकर्षण के लिये उदर की. विशोक के लिये उर की भव के लिये कंठ को, सुबाहु के लिये बाहु की, विशाल के लिये नमस्कार हो कह सिर की पूजा करे, देव को नमस्कार अपने अपने नाम के मन्त्रों से सुगन्ध, फूल, धूप, दीप, नैवेद्य विचित्र विचित्र फलों से भगवान् की पूजा करके माला तथा श्वेत वस्त्र से आच्छादित कलश को पञ्चरत्न से युक्त कर भगवान् के आगे स्थापित करे अपनी शक्ति के अनुसार सुवर्ण की प्रतिमा, मन्दर संयुक्त कूर्म रूप से बनवा कर घृत पूर्ण ताम्र पात्र में रक्खे उस ताम्र पात्र को पूर्ण कलश के ऊपर स्थापित करे तदनन्तर भगवान् की प्रतिमा का विधिवत् पूजन करे। फिर उस कलश के सहित प्रतिमा को ब्राह्मण के लिये दे देवे ॥४।५॥६॥७॥ अपनी शक्ति के अनुसार ब्राह्मणों को द्वादशी के दिन में भोजन करा कर कूर्म रूप नारायण को प्रसन्न करे। फिर भृत्य वर्ग सहित अपने आप भी भोजन करे ॥८॥ इस प्रकार पौष मास में कूर्म द्वादशी का व्रत करने से सारे पाप छूट जाते हैं इसमें विचार नहीं करना चाहिये अवश्य वह संसार चक्र को छोड़ कर हरि भगवान् के लोक को प्राप्त करता है। सारे पाप शीघ्र नाश हो जाते हैं तथा सत्य धर्म प्राप्त होता है। भक्ति पूर्वक इस व्रत के करने से अनेक

जन्मों के पाप नष्ट हो जाते हैं। नारायण प्रसन्न हो जाते हैं। तथा पूर्वोक्त मत्स्य द्वादशी के व्रत के समान फल प्राप्त होता है ॥९॥१०॥११॥ इति वाराह पुराणे आदि कृत व्रतान्ते कूर्म द्वादशी व्रतम् नाम काशीराम कृत भाषा टीकायाम् चत्वारिंशोऽध्याय ॥४०

अथः इकतालीसवाँऽध्याय

दोहाः— इकतालीस अध्याय में, वाराह व्रत अनूप।
माघ शुक्ला द्वादशी, करि है हरि मय रूप ॥

अथः वाराह द्वादशी व्रतम्— दुर्वासा ने कहा- हे परम धार्मिक मुने! इसी प्रकार पृथ्वी का उद्धार करने वाले वाराह भगवान् की आद्य माघ शुक्ला द्वादशी व्रत की महिमा सुनिये ॥१॥ पहिले कहे विधान से संकल्प स्नान आदि करके भगवान् की पूजा करके एकादशी के दिन विचक्षण मनुष्य गन्ध, धूप, दीप नैवेद्य आदि से भगवान् की पूजा करे पश्चात् भगवान् के आगे से जल पूर्ण घड़ा रक्खे ॥२॥३॥ वराहाय, ऐसा कहकर पैरों की पूजा करे। माधवाय, कह कर कटि की पूजा करे। क्षेत्रज्ञ, कह जठर की पूजा करे विश्वरूपाय, कहकर हरि के उर की पूजा करे। सर्वज्ञाय, कह कण्ठ की पूजा करे। प्रजानाम् पतये, कहकर सिर की पूजा करे। प्रद्युम्नाय, कहकर हाथों की पूजा करे। दिव्यास्त्राय, कहकर सुदर्शन की पूजा करे। अमृतोद्भवाय, कहकर शंख की पूजा करे। यही भगवान् की पूजा की विधि है उस जल पूर्ण कलशे में सोना चांदी व ताम्रमय पात्र में अपनी शक्ति के अनुसार धन आदि को भर देवे ॥४॥५॥६॥७॥ फिर उस वित्त पूर्ण पात्र में अपनी शक्ति के अनुसार सोने की वाराह भगवान् की प्रतिमा रक्खे प्रतिमा ऐसी बनानी चाहिये कि पर्वत, वन, द्रुम सहित जो पृथ्वी को दाढ़ के अग्र भाग से उठा रही हो

तदनन्तर रत्न गर्भ कलशे में सर्व बीज पूरित पात्र को रखे उसके ऊपर वाराह रूपी मधु हन्ता माधव की पूर्वोक्त लक्षण सम्पन्न सोने की प्रतिमा स्थापित कर देवे फिर उस प्रतिमा को श्वेत वस्त्र के जोड़े से आच्छादित कर देवे ।।८।।९।।१०।। पूर्वोक्त प्रकारसे ताम्रादि पात्र में भगवान् को स्थापित कर पुष्प धूप, दीप, नैवेद्यादि से पूजा करे फिर पुष्पांजलि करके वहीं पर जागरण करे ।।११।। तथा भगवान के अवतार का प्रयोजन गीत कीर्तन आदि करता रहे इस प्रकार पूजा तथा जागरण कर प्रभात में सूर्य के उदय होने पर शौचादि क्रिया कर स्नान कर हरि की पूजा करके हरि की प्रतिमा को ब्राह्मण को देवे जो कि ब्राह्मण वेद वेदाङ्ग पारङ्गत सज्जन वृत्ति वाला हो, बुद्धिमान हो, विष्णु भक्त हो, श्रोत्रिय हो, कुटम्बी हो इस प्रकार लक्षण सम्पन्न ब्राह्मण को कलश के सहित वाराह रूपी हरि की प्रतिमा दे देवे ।।१२।।१३।।१४।। देने से जो फल प्राप्त होता है वह मुझसे सुनिये इस जन्म में सौभाग्य स्त्री कान्ति, पुष्टि, तुष्टि, प्राप्त होती हैं दरिद्री को धन मिलता है अपुत्री को पुत्र मिलता है दरिद्रता शीघ्र नष्ट हो जाती है लक्ष्मी बलात्कार निवास करने लगती है ।।१५।।१६।। इस जन्म में सौभाग्य मिलता है । परलोक में जो फल मिलता है उसको कहता हूँ आप सुनिये इस विषय पर एक पुरानी ऐतिहासिक कथा है । किसी नगर में एक वीर धन्वा नाम का राजा विख्यात् हुआ वह कभी शिकार खेलने जंगल में गया ।।१७।।१८।। वह वीर धन्वा राजा ऋषियों के आश्रम में जाकर जंगलों में अनेक मृगों को मारने लगा तथा अज्ञान से मृग वेष धारी ब्राह्मणों को भी उस राजा ने मारा हे ब्रह्मन् ! वहां सम्वर्त राजा के पाँचों भ्राता वेदाध्यन में तत्पर हो मृग वेष से निवास कर रहे थे राजा से वे मारे

गये ॥१६॥२०॥ सत्य तपा बोला हे ब्रह्मन् ! आप प्रसन्न होकर मेरे संसय को मिटा दीजिये। कि सम्वर्त के पाँचों पुत्रों ने किस कारण से मृगरूप धारण किया था ॥२१॥ दुर्वासा ने कहा वे सम्वर्त राजा के पुत्र कभी एक समय जंगल में गये वहां उन्होंने उसी समय के पैदा हुये माताओं से छोड़े हुये हरिण के बच्चों को देख उन पांचों ने एक एक हरिण के बच्चों को ग्रहण फिर वे मृग शावक कन्दराओं में सिथित हो मर गये तदनन्तर वे पांचों भाई उन हरिण पातकों के मरने पर दुखित होकर अपने पिता के पास लौट आये ॥२२॥ तथा शिकार खेलने से प्रथक यह बचन बोले कि हे मुने ! जातमात्र पांच मृग पोतक अनायाश हम से मारे गये हैं अतः उसका प्रायश्चित् कहिये सम्वर्त्त बोला मेरा पिता हिंसक था । मैं उनसे भी विशेष हुआ इसलिये मेरे पुत्र तुम पाप कर्मा हो गये हैं। अब मृग चर्म पहिन कर पांच वर्ष तक निरय चित्त से कठिन तपस्या करोगे तो पाप से मुक्त हो जाओगे सम्वर्त्त के ऐसा कहने पर वे पाँचों मृग चर्म पहिन कर वन में जाकर निरन्तर ब्रह्म का जप करने लगे ॥२४॥२५॥२६॥२७॥ इस प्रकार वन में जाकर ब्रह्म का ध्यान करते करते उनका एक वर्ष व्यतीत हुआ तभी राजा वीर धन्वा वहां आया जहां कि पांचों भाई मृग चर्म पहिन कर एक वृक्ष के नीचे जप कर रहे थे कि राजा वीर धन्वा ने उनको मृग जानकर बाण से भेदन किया ॥२८॥२६॥३०॥ उन व्रत में स्थित ब्राह्मणों को मरे हुये जानकर भय से काँपता हुआ राजा वीर धन्वा देवरात ऋषि के आश्रम में आया ॥३१॥ वहां आकर पूछने लगा कि हे महामुने ! मेरे ऊपर ब्रह्म हत्या लग गई है क्योंकि मैंने तप में स्थित पांच ब्राह्मणों को मारा है ऐसा कहकर श्लोक से युक्त हो अत्यन्त दुखी

होकर फूट फूट कर रोने लगा वह देवरात ऋषि रोते हुये राजा को देखकर कहने लगा हे नृपते! तुझे क्या भय है भय को शीघ्र दूर कीजिये आपके पातक को मैं शीघ्र दूर कर लूंगा जिस प्रकार सुतलाख्य पाताल में डूबती हुई पृथ्वी का वाराह भगवान् ने उद्धार किया है हे राजेन्द्र! उसी प्रकार ब्रह्म हत्या से युक्त आपका भी स्वयम् जनार्दन भगवान उद्धार करेंगे। देवरात ऋषि के ऐसा कहने पर राजा हर्ष युक्त हो यह वचन बोला ॥३२॥ ॥३३॥३४॥३५।३६॥ किस प्रकार वह भगवान् मेरे ऊपर प्रसन्न होयेंगे तथा प्रसन्न होकर किस प्रकार मेरे सारे पापों का नाश करेंगे।३७॥ दुर्वासा ने कहा ऐसा कहने पर देवरात ऋषि ने राजा को यह वाराह द्वादशी का व्रत विधि विधान से कहा, तथा राजा ने यह व्रत करके इस लोक में अनेक भोग भोगे ॥३८॥ मरने के पश्चात् वह राजा सोने के विमान पर विराजमान हो इन्द्र लोक स्वर्ग को गया ॥३९। इन्द्र उसके लिये अर्घ लाकर प्रत्युत्थानादि क्रिया करने आया आते हुये इन्द्र को देख विष्णु पार्षद कहने लगे कि हे देवराज! तू न्यून तप वाला होने से इस राजा का दर्शन नहीं कर सकता, इसी प्रकार उस राजा के तेज को देखकर लोकपाल अर्घ्यादि देने आये पर उनको भी हीन कर्मा जानकर विष्णु पार्षदों ने दूर किया हे महामुने! इस प्रकार वह राजा सत्यलोक में गया वहां दाह प्रलय से वर्जित अपुनर्मारक लोक में देवताओं से स्तूयमान् अभी भी विराजमान् है ॥४०।४१।४२॥४३॥ इसमें आश्चर्य क्या है जो कि यज्ञ पुरुष प्रसन्न हो गये हैं इस जन्म में सौभाग्य, आयु, आरोग्य, सम्पत्ति मिलती है।४४॥ एक द्वादशी भी विधि से पूजी जाय तो उत्तम अमृत को देती है और यदि सबही द्वादशियों में भगवान् की पूजा करे तो भगवान अपना ही स्थान

दे देते हैं ।४५।। नारायण चतुर्मूर्ति हैं परार्ध्य हैं यथा भगवान ने मत्स्यावतार लेकर वेदों का उद्धार किया है ।।४६।। क्षीर समुद्र मथते समय कूर्म रूप धरकर मन्दराचल धारण किया यह दूसरी मूर्ति है । तथा तीसरी मूर्ति देखिये कि रसातल में गई हुई पृथ्वी का वाराह रूप धरकर उद्धार किया है ।।४७।।४८।। इति वाराह पुराणे आदि कृत वृतान्ते वारह द्वादशी व्रतम् नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम् एक चत्वारिंशोऽध्यायः ।।४१।।

अथः बयालीसवाँऽध्याय

दोहाः— बयालीस अध्याय में, नृसिंह व्रत वृत्तान्त ।
फाल्गुन सिता द्वादशी, देवे स्वर्ग नितान्त ।।

अथः नृसिंह द्वादशी व्रतम्— दुर्वासा ने कहा— उसी प्रकार फाल्गुन मास की शुक्ला द्वादशी का सेवन कर विधि विधान से हरि भगवान् की पूजा करे ।।१।। नृसिंह के लिये नमस्कार हो कहकर पैरों की पूजा करे गोविन्द के लिये नमस्कार कहकर जंघाओं की पूजा करे विश्व भुज के लिये नमस्कार कह कटि प्रदेश की पूजा करे अनिरुद्ध के लिये नमस्कार कह वक्षस्थल की पूजा करे । शिति कण्ठ के लिये नमस्कार कह कण्ठ की पूजा करे । पिराङ्ग केश के लिये नमस्कार कह सिर की पूजा करे । असुरध्वंस के लिये नमस्कार कह चक्र की पूजा करे तो यात्मा के लिये नमस्कार कह शङ्ख की पूजा करे । इस प्रकार गन्ध, पुष्प, फलादि से पूजा करे । फिर आगे से श्वेत वस्त्र को आच्छादित कलश को लाकर उसमें पञ्च-रत्न आदि गेर देवे फिर उस घड़े के ऊपर ताम्र पात्र में अपनी शक्ति के अनुसार सोने की बनाई हुई नृसिंह प्रतिमा को स्थापित कर देवे । तदनन्तर उस नृसिंह प्रतिमा का

विधि विधान से पूजा करके रात्रि को जागरण करे। द्वादशी के दिन सवेरे वेद वेत्ता ब्राह्मण को कलश के सहित वह प्रतिमा दे देनी चाहिये ॥२ ३॥४॥५॥ ६॥ हे महा मुने ! इस व्रत के करने से पहिले वत्सनाम राजा ने जो फल प्राप्त किया है उसको कहता हूँ ॥७॥ किम्पुरुष वर्ष में परम धार्मिक नाम का एक प्रसिद्ध राजा था। उसका वत्स नाम का पुत्र हुआ ॥८॥ वह संग्राम में शत्रुओं से पराजित होकर तथा शत्रुओं के उसका खजाना हर लेने पर वह वत्स राजा अपनी स्त्रियों के सहित वन जाकर वसिष्ठ ऋषि के आश्रम में निवास करने लगा ॥९॥ कुछ समय पश्चात् वसिष्ठ ऋषि ने उसको पूछा कि हे राजन् ! आप किस कार्य के लिये इस आश्रम में निवास कर रहे हो ॥१०॥ राजा ने कहा अयि भगवन् ! शत्रुओं ने मेरा राज्य तथा खजाना सब हर लिया है मैं असहाय हो गया हूँ। अतः आपकी शरण आया हूं ॥११॥ आप उपदेश देकर मुझे प्रसन्न कीजिये दुर्वासा ने कहा राजा के इस प्रकार कहने पर वसिष्ठ ने नृसिंह द्वादशी का व्रत विधि विधान से बतलाया तथा राजा ने भी इस व्रत को जान सावधानता से यह व्रत किया राजा के व्रत करने पर नृसिंह भगवान प्रसन्न हुये ॥१२॥१३॥ और नृसिंह भगवान ने उस राजा को संग्राम में शत्रुओं का नाश करने वाला चक्र दिया फिर चक्र को प्राप्त कर उस राजा ने संग्राम में अपने शत्रुओं को मारकर अपना राज्य पुनः प्राप्त किया ॥१४॥ राज्य में स्थित होकर उस राजा ने हजारों अश्वमेध यज्ञ किये अन्त में मरकर विष्णु लोक को गया ॥१५॥ मुने ! यह धन्य तथा पापों का नाश करने वाली नृसिंह द्वादशी कह दी है इसको प्रसन्नता पूर्वक सुनकर यथेप्सित इस व्रत को कीजिये ॥१६॥ इति श्री वाराह पुराणे धरणी व्रते नृसिंह द्वादशी व्रतम् काशीराम कृत भाषा टीकायाम् द्वाचत्वारिंशो अध्याय ॥४२॥

अथः तेतालीसवाँऽध्यायः

दोहाः— तेतालिस अध्याय में, वामन व्रत विधान ।
मधु द्वादशी व्रत किये, मिलि है स्वर्ग महान ॥

अथः वामन द्वादशी व्रत— दुर्वासा मुनि ने कहा— हे मुने ! इस ही प्रकार चैत्र महीने की शुक्ल द्वादशी को पारण करे पहिले दशमी साम को संकल्प कर लेवे फिर एकादशी के दिन शौच आदि नित्य क्रिया करके देव देव जनार्दन की पूजा करे ॥१॥ वामन के लिये नमस्कार कह पैरों की पूजा करे विष्णवे नमः कह कटि की पूजा करे, वासुदेवायः कह कर जठर की पूजा करे, संकर्षणाय नमः कह कर छाती की पूजा करे ॥२॥ विश्व भूते नमः कह कर कण्ठकी पूजा करे, व्योम रूपाय कह कर सिर की पूजा करे, विश्व जितये नमः कहकर बाहु की पूजा करे, शङ्खाय नमः चक्राय नमः कहकर शंख चक्र की पूजा करे ॥३॥ इस विधि से देव देव सनातन विष्णु की पूजा करके पहिले की तरह रत्न तथा जल से पूरित कलश को आगे से रक्खे ॥४॥ तथा पूर्वोक्त क्रिया के अनुसार यथा शक्ति वित्तादि से पूरित ताम्र पात्र में सोने की वामन भगवान् की प्रतिमा रखकर उस कलश के ऊपर स्थापित कर देवे यथा शक्ति उस प्रतिमा पर श्वेत यज्ञोपवीत करना चाहिये । प्रतिमा के पार्श्व में कुण्डल छत्र खड़ाऊं अक्ष माला तथा कुशासन रखने चाहिये । वामन की पूजा करके प्रभात समय इस सब सामान सहित प्रतिमा ब्राह्मण को दे देवे तथा कहे कि वामन रूपी विष्णु भगवान् प्रसन्न हो जावें ॥५॥६॥७॥ मास नाम से संयुक्त अवतार का नाम कहकर कहे कि विष्णु भगवान् प्रसन्न हो जावें यह सर्वत्र के लिये विधि कही गई हैं ॥८॥ सुना जाता है कि पहिले एक हरियस्व हर्य्याश्व नाम का राजा था

उसकी कोई भी सन्तान नहीं थी पुत्र की इच्छा से वह राजा तप करने लगा इस प्रकार पुत्र प्राप्ति के लिये तप करते समय उस राजा के पास ब्राह्मण का भेष धर जनार्दन भगवान् आये ॥६॥१०॥ भगवान आकर राजा से कहने लगे कि हे राजन् ! आप यह क्या कर रहे हैं ? राजा ने कहा पुत्र प्राप्ति के लिये यज्ञ कर रहा हूँ तब विप्र वेष धारी भगवान् ने कहा कि हे राजन् ! विधि विधान से चैत्र के महीने की वामन द्वादशी का व्रत करिये, तब तेरा पुत्र होगा ऐसा कह भगवान अन्तर्धान हो गये ॥११॥१२॥ राजा ने भगवान् का कहा व्रत यथोक्त विधि से करके वह सामिग्री वेद वेत्ता बुद्धिमान दरिद्री ब्राह्मण को देकर कहा कि हे भगवन् ! जिस प्रकार आप अपुत्रा अदिती के गर्भ में स्वयम् पुत्रत्व को प्राप्त हुये हो उसी सत्य से मेरा भी श्रेष्ठ पुत्र हो जाना चाहिये ॥१३॥१४॥ हे मुने ! इस विधि के करने से उस राजा का अति विख्यात उत्प्राश्व नाम का महा बलवान पुत्र हुआ है इस व्रत के करने से अपुत्र पुत्र प्राप्त करता है धन की अभिलाषा वाला धन प्राप्त करता है जो राज्य से भ्रष्ट है वह पुनः अपने राज्य को प्राप्त कर लेता है तथा मरकर विष्णु लोक में जाता है वहां चिरकाल तक निवास कर पुनः फिर मृत्यु लोक में आकर नहुस के पुत्र ययाति के समान बुद्धिमान तथा चक्रवर्ती राजा होता है ॥१५॥१६॥१७॥ इति वाराह पुराणे धरणी व्रते वामन् द्वादशी व्रतम् नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम् त्रयस्चत्वारिंशो अध्याय ॥४३॥

अथः चालिसवांऽध्यायः

दोहा:— वैसाख सिता द्वादशी, चवालीस अध्याय ।
जामदग्नय पूजन किये, भव संकट मिट जाय ॥

अथ: जामदग्नय द्वादशी व्रतम्— दुर्वासा कहने लगा– वैसाख महीने में भी इसी प्रकार विधि पूर्वक संकल्प करे तथा एकादशी के दिन पूर्वोक्त विधान से स्नान करके देवालय में जावे ॥१॥ वहां निम्न लिखित मन्त्रों से भगवान् की आराधना करे जामदग्नाय नमः कह पैरों की पूजा करे। सर्व धारिणो कह उदर की पूजा करे ॥२॥ मधुसूदनाय नमः कह कर कटि प्रदेश की पूजा करे। श्री वत्स धारिणे नमः कह जंघाओं की पूजा करे शारान्तकाय नमः कह भुजाओं की पूजा करे शितिकण्ठाय कह कूर्चक यानी भौंवों के बीच के भाग की पूजा करे। और शांखायनम चक्रायनमः कहकह शंख चक्र की पूजा करे ब्रह्माण्ड धारिणेसम कहकर सिर की पूजा करे बुद्धिमान मनुष्य इस प्रकार पूजा करके फिर उनके सामने पहिले के समान कलश रक्खे उसको वस्त्र से आच्छादित करे फिर उस कलश में बांस का पात्र रक्खे उसमें हरि की प्रतिमा रक्खे, प्रतिमा जामदग्नय रूप से सोने की बनावे, जामदग्नय प्रतिमा के दाहिने हाथ में कुल्हाड़ी बनावे ॥३॥४॥५॥६॥ फिर अर्घ, गन्ध, धूप, नैवेद्यादि तथा नाना प्रकार के फूलों से पूजन कर उन्हीं के सामने रात्रि में भक्ति पूर्वक जागरण करे ॥७॥ प्रातःकाल सूर्योदय होने पर कलश सहित प्रतिमा ब्राह्मण को दे देवे हे सत्य तप ! इस प्रकार व्रत करने वाले को जो फल प्राप्त होता है वह मुझसे सुनिये ॥८॥ एक महा भाग्यवान् वीरसेन नाम का राजा था उसने एक समय पुत्र प्राप्ति के लिये तीव्र तप करना आरम्भ किया ॥९॥ उसके तीव्र तप करने पर उसको देखने कुछ दूर से महामुनि याज्ञवल्क आये ॥१०॥ परम तेजस्वी महामुनि योज्ञवल्क को आते देख राजा वीरसेन ने उनका अभ्युत्थानादि सत्कार किया ॥११॥ वीरसेन से पूजा पाकर याज्ञवल्क ने

कहा कि राजन् ! किस लिये तप कर रहे हो आपकी क्या अभिलाषा है सो कहिये ॥१२॥ राजा वीरसेन ने कहा हे महाभाग ! मै अपुत्र हूँ मेरी पुत्र संतति नहीं है इसलिये तपस्या से इस शरीर को सुखा रहा हूँ ॥१३॥ याज्ञवल्क बोला हे राजन् ! इस महा क्लेश कारक तप को छोड़ दीजिये अल्प परिश्रम से ही आपका पुत्र हो जायगा ॥१४॥ राजा ने कहा हे महाराज ! मैं आपके शरण हूँ आप प्रीति से कहिये कि कौनसा वह स्वल्प प्रयास का उपाय है जिससे कि मेरा पुत्र हो जावे ॥१५॥ दुर्वासा ने कहा- राजा के इस प्रकार पूछने पर महामुनि याज्ञवल्क ने राजा को वैसाख शुक्ल द्वादशी का व्रत बताया तथा सुनाया ॥१६॥ उस राजा ने विधि विधान से इस व्रत को किया फिर इस व्रत के प्रभाव से नल नाम का परम धार्मिक विख्यात् पुत्र प्राप्त किया ॥१७॥ जो कि नल राजा अब भी संसार में प्रख्यात है हे महामुने ! इस व्रत का यह फल सिर्फ प्रासंगिक कहा है ॥१८॥ इस व्रत के करने से सुपुत्र पैदा होता है । विद्या प्राप्त होती है, लक्ष्मी मिलती है उत्तम कान्ति होती है इस जन्म में ही नहीं वल्कि परलोक की भी महिमा सुनिये ॥१६॥ इस व्रत को करने वाला एक कल्प तक अप्सराओं के साथ ब्रह्मलोक में निवास कर क्रीड़ा करता है फिर सृष्टि में चक्रवर्ती राजा होता है निश्चय से इस व्रत को करने वाला तीस कल्प तक जीवित रहता है ।२०॥२० । इति श्री वाराह पुराणे यादि कृत वृत्तान्ते द्वादशी महात्म्ये जामदग्न्य द्वादशी व्रतम् नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम् चतुश्चत्वारिंशोऽध्याय ॥४४ ।

अथः पेंतालिसवाँऽध्यायः

दो'ाः—पेंतालिस अध्याय में, राम व्रत अभिराम ।
जेठ की सिता द्वादशी, किये मिले उपराम ।।

अथः श्रीराम द्वादशी व्रतम्— दुर्वासा ने कहा— जेष्ठ
महीने भी पूर्वोक्त प्रकार से संकल्प कर स्नान कर देवालय में
कर परमदेव की अनेक विधि फल फूलों से पूजा करे ॥१॥
ाभिरामाय मन्त्र से पैरों की पूजा करे त्रिविकाय मन्त्र से कटि
श की पूजा करे वृत विस्वायनमः मन्त्र से उदर की पूजा
े ॥२॥ सम्वत् सरायनमः कह छाती की पूजा करे सम्वर्त
ाय नमः मन्त्र से कण्ठ की पूजा करे, सर्वास्त्र धारिणे नमः
ह कर भुजाओं की पूजा करे कमलायनमः चक्रायनमः कह
कमल तथा चक्र की पूजा करे, सहस्र शिरशे नमः कहकर
महात्मा के सिर की पूजा करे, इस प्रकार पूजा करके
र्वोक्त प्रकार से कलश स्थापन करे ॥३॥४॥ कलश को
त्रादि से आच्छादित करे फिर पूर्वोक्त विधि से सुवर्ण मय
म लक्ष्मण की प्रतिमा सुन्दर ताम्रपात्र में कलश के ऊपर
ापित । करे तदनन्तर विधि विधान पूर्वक उनकी पूजा करे
दशी के प्रतः काल समय में कलशे के सहित उस प्रतिमा
ो ब्राह्मण के लिये दे देवे तो उस मनुष्य के सारे आहित
प नष्ट हो जाते हैं । पहिले समय सन्तान रहित राजा
शरथ जी ने भी पुत्र की कामना लेकर वसिष्ठ मुनि की सेवा
ो है । फलतः वसिष्ठ मुनि ने उनको पुत्र प्राप्ति के लिये
ही व्रत बतलाया था ॥५॥६॥७॥ राजा दशरथ ने पहिले
रहस्य को जान यही व्रत किया है जिसके प्रभाव से
व्यय विष्णु भगवान् प्रसन्न होकर चार प्रकार से पैदा हुये ।
स्वयम् रामचन्द्र जी दशरथ के महा बलवान पुत्र हुये हैं

यह इस जन्म का फल कहा अब पार लौकिक फल सुनिये ॥८॥९॥ इस व्रत के प्रभाव से मनुष्य तब तक स्वर्ग लोक के भोगों को भोगता है जब तक कि इन्द्र तथा देवता आदि स्वर्ग लोक में स्थित रहते हैं उसके पश्चात् मृत्य लोक में आकर सैकड़ों यज्ञ करने वाला राजा होता है ॥१०॥ यदि निष्काम से इस व्रत को करे तो उसके सारे पाप नष्ट हो जाते हैं तथा शाश्वत निर्वाण को प्राप्त होता है ॥११॥ इति वाराह पुराणे श्री राम द्वादशी व्रतम् नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम् पंचचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४५॥

अथः छयालीसवाँऽध्याय

दोहाः— छयालीस अध्याय में, कृष्ण व्रत विस्तार ।
आषाढ़ सिता द्वादशी, करि मिलि हैं फल चार ॥

अथः कृष्ण द्वादशी व्रतम्— दुर्वासा ने कहा— पूर्वोक्त विधि से आषाढ़ महीने में भी दशमी के दिन संकल्प कर एकादशी के दिन मृत्तिका से स्नान कर देवालय में जाकर भगवान् का पूजन करे चक्रपाणये नमः कहकर भुजाओं की पूजा करे, भूपतये नमः कहकर कण्ठ की पूजा करे, शङ्खाय नमः चक्राय नमः कह कर शंख की पूजा करे, पुरुषाय नमः कह कर सिर की पूजा करे इस प्रकार विधि विधान से पूजा करके पहिले के सामान उनसे आगे से वस्त्राच्छादित कलश स्थापित करे फिर उसके ऊपर सोने की चतुर्व्यूह युक्त वासुदेव भगवान् की प्रतिमा स्थापित करे ।१॥२॥ ॥३॥ उस प्रतिमा के फल फूल, धूप- दीप, नैवेद्यादि से विधिवत् पूजा करके वेद वेत्ता ब्राह्मण को कलश सहित दे देवे ॥४॥ ऐसा करने से जो फल प्राप्त होता है वह मुझसे सुनिये यदुवंशवर्द्धक वसुदेव विख्यात् हुआ है तथा उसके समान व्रत वाली उसकी देवकी नाम की

भार्य्या थी वह पति धर्म परायण भी थी परन्तु उसकी कोई सन्तान न रही ।।५।।६।। बहुत समय पश्चात् वासुदेव के घर में नारद मुनि आ पहुंचा । वासुदेव ने उसका आतिथ्य सत्कार किया सत्कार पाकर भक्ति से नारद मुनि कहने लगा हे वासुदेव ! मुझसे इन देव कार्य को सुनिये कि मैं इस कथा को सुनकर शीघ्र आपके पास आया हूँ ।।७।।८।। हे यदु श्रेष्ठ वासुदेव ! मैंने देव सभा में पृथ्वी देखी है वह पृथ्वी गौरूप धर देव सभा में जाकर कहने लगी कि हे देवताओ मैं भार महन नहीं कर सकती हूँ दुष्ट पाखंडी असुरों के संग से मैं पीड़ित हो रही हूं । अतः उन पापियों को शीघ्र मारिये पृथ्वी के ऐसा कहने पर वे सारे देवता पृथ्वी के सहित नारायण के पास गये तथा नारायण का मन से ध्यान करने पर नारायण भगवान् प्रत्यक्षता को प्राप्त हुये ।।९।।१०।। प्रत्यक्ष दर्शन देकर नारायण बोले हे देवताओ ! इस कार्य को मैं अपने आप मृत्यु लोक में मनुष्य के समान जाकर सिद्ध कर लूंगा इसलिये सन्देह न कीजिये ।।११।। किन्तु आषाढ़ महीने की द्वादशी का पारण जो स्त्री अपने पति सहित करेगी उसी के गर्भ से मैं पैदा हूंगा ।।१२।। नारायण के इस प्रकार कहने पर देवता निश्चिन्त हो अपने स्थान को चले गये । मैं यहां आपके पास आया हूं आप अपुत्र हो इसलिये मैंने आपको यह व्रत सुनाया है वह शीघ्र कीजिये ।।१३।। इस द्वादशी का व्रत पारण करने से वसुदेव ने साक्षात् कृष्ण भगवान् को पुत्र के रूप से प्राप्त किया है तथा ऐश्वर्य लक्ष्मी प्राप्त की है ।।१४।। इस लोक में सुख भोगकर अन्त में वसुदेव परम गति को प्राप्त हुआ है हे सत्य तप ! यह आषाढ़ महीने की विधि मैंने तुझे बतादी है ।।१५।। इति वाराह पुराणे आदि कृत व्रतान्ते श्री कृष्ण द्वादशी व्रतम् नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम् षट्चत्वारिंशोऽध्यायः ।।४६।।

अथ: सैंतालीसवाँऽध्याय:

दोहा:— सैंतालिस अध्याय में, नृग- नृप का व्रतान्त।
श्रावण शुक्ला द्वादशी, करे रक्षा नितान्त॥

अथ: बुद्ध द्वादशी व्रतम्— दुर्वासा ने कहा– श्रावण के महीने शुक्ल द्वादशी के दिन व्रन करे। तथा पूर्वोक्त विधि के अनुमार गन्ध पुष्पादि से जनार्दन भगवान् की पूजा करे ॥१॥ दामोदराय नमः कहकर पैरों की पूजा करे, हृषि केशाय नमः कहकर कटि प्रदेश की पूजा करे, सनातनाय: कहकर जठर की पूजा करे, श्री वत्स धारिणे कहकर छाती की पूजा करे, ॥२॥ चक्रपाणये नमः कह कर भुजाओं की पूजा करे हरये: नमः कह कण्ठ की पूजा करे, तथा मुजकेशाय नमः कह सिर की पूजा करे, भद्राय नमः कहकर शिखा की पूजा करे, ॥३॥ इस प्रकार पूजन कर पूर्वोक्त प्रकार से कलश स्थापन करे। कलश के ऊपर वस्त्र रक्खे फिर उसके ऊपर सुवर्णमय भगवान दामोदर की मूर्ति स्थापित करे तदनन्तर नामोच्चारण पूर्वक उस प्रतिमा की पूजा गन्ध, पुष्प, धूप- दीप, नैवेद्यादि से करनी चाहिये ॥४॥५॥ फिर पूर्वोक्त विधि के अनुसार उस प्रतिमा को वेद वेदाङ्ग पारङ्गत ब्राह्मण को देवे इस प्रकार नियम से जो इस व्रत को करता है उसका फल मुझसे सुनिये ॥६। हे मुने यह जो श्रावण मास की विधि कही है पापों का नाश करने वाला उसका फल सावधानता पूर्वक सुनिये ॥७॥ पहिले कृत युग में एक नृग नाम का महा बलवान् राजा था। वह शिकार खेलने की अभिलाषा से घोर जंगल में जाकर घूमने लगा ॥८॥ वह कभी घोड़े में सवार होकर व्याघ्र, सिंह, हाथियों से व्याप्त तथा चोर, डाकू, सर्प, व्याल, आदमियों से निर्वेवित बड़ी दूर घोर जंगल में गया ॥९॥ अकेला

ही राजा घोड़े को एक पेड़ के नीचे खोलकर स्वयम कुशासन बिछाकर दुख युक्त होकर सो गया ॥१०॥ तभी रात्रि में १४ हजार व्याध मृग मारने के लिये घूमते हुये राजा के चारों तरफ से आये ।११॥ वहां उन व्याधों ने सुवर्ण तथा रत्नों से विभूषित सोये हुये नृग राजा को अति उग्र परम लक्ष्मी से युक्त देखा ॥१२॥ वे व्याध राजा नृग को देख शीघ्र अपने स्वामी से कहने लगे। उनका स्वामी भी रत्न तथा सोने के लालच से राजा को मारने के लिये उद्यत हुआ ॥१३॥ तथा घोड़े के लालच से उन अपने नौकर व्याधों को कहा। वे वन चारी क्रूर व्याध सोये हुये राजा के पास जाकर राजा को मारने के लिये तैयार हुये ॥१४॥ तभी राज के शरीर से श्वेत आभरणों से तथा माला चन्दन आदि से विभूषित एक नारि निकली ।१५॥ और उस देवी ने चक्र लेकर सारे म्लेछ मार गिराये उन चोरों को मार कर वह देवी फिर उसी राजा के शरीर में शीघ्र प्रवेश कर गई राजा ने भी नींद से जागकर मरे हुये उन म्लेछों को तथा अपने ही शरीर में प्रवेश करती उस देवी को देखा। ॥१६॥ ॥१७॥ फिर राजा घोड़े पर सवार हो वाम देव के आश्रम में गया वहाँ ऋषि से पूछने लगा कि महाराज वह स्त्री कौन थी तथा वह जो म्लेच्छ मरे पड़े थे वह कौन थे ॥१८॥ हे ऋषे! यह मुझे बताइये वाम देव ऋषि ने कहा हे राजन्! तू पहिले जन्म में शूद्र जाति का राजा था, उस जन्म में तूने ब्राह्मणों से सुनकर श्रावण मास शुक्ल द्वादशी [पारण किया है।१९॥ ॥२०॥ वह एकादशी का व्रत तथा द्वादशी पारण विधि विधान तथा भक्ति पूर्वक तूने किया है उस ही के उपवास से तुझे राज्य मिला है ॥२१॥ वह द्वादशी देवी सब आपत्तियों में आपकी रक्षा करती रहती है उसी ने वे क्रूर म्लेच्छ मारे हैं ॥२३॥ हे राजन्! वह श्रवण द्वादशी देवी अकेली तेरी रक्षा

करती रहती है तथा तुझे राज्य सुख भी उसी ने दिया है ॥२३॥ जब कि एक ही श्रावण द्वादशी आपत्तियों में रक्षाकर राज्य सुख भी देती है तो और द्वादशियों का क्या करना जो केवल स्वर्गादि देती है ॥२४॥ इति वाराह पुराणे धरणी व्रते बुध द्वादशी व्रतम् नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम् सप्तचत्वारिंशोऽध्याय ॥४७॥

अथः अड़तालीसवाँऽध्याय

दोहाः—भाद्रपद सिता द्वादशी, अठ चालिस अध्याय।
कल् की प्रतिमा पूजकर, भुक्ति मुक्ति फल पाय ॥

अथः कल्की द्वादशी व्रतम्— दुर्वासा ने कहा– पूर्वोक्त प्रकार से भाद्रपद एकादशी के दिन भी संकल्प स्नानादि करके भगवान् की पूजा करे नमोस्तु कल्किने कहकर पैरों की पूजा करे हृषि केशाय नमः कहकर कटि प्रदेश की पूजा करे। म्लेच्छ विध्वंसनाय जग्नमूर्तेनमः कह उदर की पूजा करे ॥१॥२॥ सिति कण्ठाय नमः कहकर कण्ठ की पूजा करे। खड्ग पाणें नमः कह भुजा की पूजा करे। चतुर्भुजाय नमः कहकर हाथों की पूजा करे। विश्वमूर्तेनम कहकर सिर की पूजा करे ॥३॥ इस प्रकार पूजन करके पहिले की तरह उनके आगे से कलश स्थापन करे। फिर सुवर्ण की कल्की भगवान् की प्रतिमा कलश के ऊपर रक्खे श्वेत वस्त्र तथा गन्ध पुष्पादि से सुशोभित करके प्रतिमा का पूजन करे। तदनन्तर उस प्रतिमा को प्रातःकाल ब्राह्मण को देवे ॥४॥५॥ हे महामुने! ऐसा करने मे जो फल प्राप्त होता है वह मुझसे सुनिये पहिले काशीपुरी में विशाल नाम का एक महा बलवान राजा था ॥५॥ उसके गोत्र वालों ने उसका राज्य छीन लिया था। फिर वह राजा गन्ध मादन पर्वत पर गया फिर गन्ध- मादन की परम शोभायमान द्रोणी बद्रीस्थान को प्राप्त हुआ ॥७॥

राज्य भ्रष्ट तथा लक्ष्मी से हीन वह राजा वदरी वन में तप करने लगा। उसके तप करते किसी समय पुराणे ऋषि श्रेष्ठ नर नारायण देव उसके पास आये जो कि सब देवताओं के पूज्य आद्य नारायण हैं उन नारायण ने वहां पर विष्णु के परम पद परम ब्रह्म का ध्यान करते हुये राजा को देखा तथा देखकर वे प्रीति पूर्वक राजा को पूछने लगे ॥८॥९॥१०॥ हे राजन्! अपना वर मांग। हम तुझे वरदान देने आये हैं।

राजा ने कहा मैं नहीं जानता हूँ कि आप कौन हैं। मैं किसका वर ग्रहण करूं ॥११॥ मैं जिसकी आराधना कर रहा हूँ उसी से सुन्दर वर मांगना चाहता हूँ राजा के ऐसा कहने पर नर नारायण बोले हे राजन्! तू किसकी आराधना कर रहा है ॥१२॥ और किस परम सुन्दर वर को चाहता है। ऐसा कहने पर राजा ने कहा कि मैं विष्णु की आराधना कर रहा हूं ॥१३॥ ऐसा कहने पर राजा चुप हो गया। फिर नारायण देव बोले हे राजन्! उसी विष्णु की प्रसन्नता से हम तुझे वर देने आये हैं ॥१४॥ तेरे मन में क्या अभिलाषा है अपनी इच्छानुसार सुन्दर वर मांग। राजा ने कहा बहुत दक्षिण वाले अनेक यज्ञों से जिस प्रकार मैं यज्ञेश्वर का यजन करूं वही वर मुझे दीजिये तब नर ने कहा कि हे राजन् लोक मार्ग प्रदर्शक स्वयम् नारायण देव मेरे नाथ वदरी वन में तप करते रहते हैं। यह पहिले मत्स्यावतार से हुआ, फिर कूर्मावतार लिया है ॥१५॥ ॥१६॥१७॥ तदनन्तर वाराह रूप से, फिर नृसिंह रूप से, फिर वामन रूप से, पुनः जामदग्नय रूप से हुआ है ॥१८॥ फिर दाशरथी राम होकर सारे चोर म्लेच्छों को मार इस पृथ्वी को मोहित किया है इस ही ने इस पृथ्वी को प्रकृति में स्थित किया है वही ये हरि भगवान पाप भय से मनुष्यों से नृसिंह रूप को प्राप्त हुये हैं ॥१९॥२०॥

मोह नाश के लिये वामन को, धन के लिये जमदग्नि को, क्रूर शत्रु नाश करने के लिये दाशरथी राम को, विधिवत् पूजना चाहिये ।२१॥ विद्वान पुरुष पुत्र कामना से कृष्ण बलराम का पूजन करे, रूप सौन्दर्य के लिये बुद्ध भगवान् की पूजा करे शत्रु नाश की इच्छा से कल्की भगवान की पूजा करे ॥२२॥ ऐसा कहकर नर ने उस विशाल राजा को यही भाद्रपद की कल्की द्वादशी का व्रत बतलाया और नर के कहने के मुताबिक विशाल राजा ने यह व्रत किया, तथा व्रत के प्रभाव से चक्रवर्ती राजा हुआ है ॥२३॥ हे मुने ! उस राजा के नाम से ही बदरीवन विशाला नाम से कहा जाता है । यह राजा इस व्रत के प्रभाव से इस जन्म में राज्य कर वन को गया अनेक यज्ञों से भगवान् का यजन करके परम निर्वाण को प्राप्त हुआ है इति वाराह पुराणे आदि कृत व्रतान्ते कल्की द्वादशी व्रत मनाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम अष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४८॥

अथः उनचासवाँऽध्याय

दोहा:— आश्विन्य सिता द्वादशी, उनपचास अध्याय ।
पद्मनाभ पूजन किये, भव विच्युति हो जाय ॥

अथः पद्मनाभ द्वादशी व्रतम्— दुर्वासा ने कहा— आश्विन्य के महीने में भी शुक्ल पक्ष की द्वादशी के दिन सनातन पद्मनाभ की पूजा करनी चाहिये ॥१॥ पद्मनाभ कह कर पैरों की पूजा करे । पद्मयोनये कह कर कटि की पूजा करे । सर्व देवाय नम् कह कर उदर की पूजा करे । पुष्कराक्षाय नमः कह वक्षस्थल की पूजा करे ॥२॥ अव्ययाय नमः कह कर हाथों की पूजा करे । शंखाय नमः चक्राय नमः नह कर शंख चक्र की पूजा करे । प्रभावय नमः कह कर सिर की पूजा करे ।

फिर पूर्वोक्त विधि से कलश स्थापित करे ॥३॥ उस कलश के ऊपर सुवर्णमय पद्मनाभ भगवान् को स्थापित करके गन्ध पुष्पादि से विधिवत् पूजा करे ॥४॥ प्रातःकाल होने पर प्रतिमा ब्राह्मण को दे देवे। हे महामते! इस प्रकार करने से जो फल प्राप्त होता है वह मुझसे सुनिये ॥५॥ कृतयुग में भद्राश्व नाम का महा बलवान राजा था। जिसके नाम से वर्ष का नाम भी भद्राश्व वर्ष हुआ ॥६॥ किसी समय उनके घर पर अगस्त्य ऋषि आकर कहने लगा कि हे राजन्! आपके घर में सात रात्रि तक निवास करूंगा ॥७॥ राजा ने सिर से नमस्कार कर कहा कि अस्तु निवास करिये। भद्राश्व की कान्ति मति नाम की परम सुन्दर भार्य्या थी ॥८॥ उस कान्ति मती का तेज बारह सूर्यों के समान था। तथा उस कान्ति मती की पांच सौ संपत्नि थीं ॥९॥ परन्तु वे सब दासियों के समान कान्तिमती की सेवा किया करती रहतीं थीं। क्योंकि वह भद्राश्व को प्रिय थी ॥१०॥ अगस्त्य ऋषि ने रूप सौन्दर्य तथा तेज से युक्त कान्ति मती को देख और कान्तिमती के भय से सौतों को भी काम करते देख तथा राजा भद्राश्व भी उस कान्ति मती का ही प्रसन्न मुख देखता था। इस प्रकार परम सुन्दर रानी को देख अगस्त्य ऋषि ने प्रसन्न होकर कहा कि जगन्नाथ भगवान साधु हैं! साधु हैं!! फिर दूसरे दिन भी इसी प्रकार परम शोभाय मान रानी को देखकर कहने लगा ॥११॥१२॥ आश्चर्य है! आश्चर्य है!! यह संसार वञ्चित रह गया है! वञ्चित रह गया है!! इस प्रकार अगस्त्य ने दूसरे दिन भी रानी को देखकर कहा ॥१४॥ फिर तीसरे दिन भी रानी को देखकर कहा कि अहो मूर्ख! परमेश्वर को नहीं जानते हैं ॥१५॥ जिस भगवान ने एक ही दिन में राजा से प्रसन्न होकर ऐसा फल दिया है। चौथे दिन हाथ उठाकर फिर कहने लगा कि जगन्नाथ साधु है यानी श्रेष्ठ है स्त्री

साधु शूद्र साधु है, द्विज साधु है, राजा साधु है बार बार वैश्य साधु हैं ॥१६॥१७॥ भद्राश्व राजा साधु है, मैं अगस्त्य भी साधु हूँ, प्रहलाद साधु है, महाव्रत ध्रुव साधु है ॥१८॥ ऐसा कह कर अगस्त्य ऋषि राजा के सामने ही खड़ा होकर नाचने लगा। इस प्रकार रानियों के सहित राजा भद्राश्व ने अगस्त्य ऋषि को नाचते देख, पूछा कि महाराज! आपको क्या खुशी है जो कि आप इस प्रकार नाच रहे हो अगस्त्य ने कहा—अहो! तू मूर्ख है, कुत्सित राजा है तथा ये तेरे अनुगामी भी मूर्ख हैं १६।२०॥ अहो! पुरोहित भी मूर्ख हैं जो कि मेरे मत को नहीं जानते अगस्त्य के इस प्रकार कहने पर राजा हाथ जोड़कर बोला २१॥ हे ब्रह्मन! आपके कहे प्रश्न को हम नहीं जानते हैं यदि आपका हमारे ऊपर अनुग्रह है तो कहिये ॥२२॥ अगस्त्य ने कहा—पहिले एक नगर में हरिदत्त वैश्य के घर में यह तेरी पटरानी पूर्व जन्म में दासी थी तथा तू इसका स्वामी था ॥२३॥ तू भी उसी बनिये के घर में नौकर हो सेवा करता था तुम शूद्र जाति से पैदा थे उस वैश्य ने आश्विन्य के महिने शुक्ल द्वादशी पारण किया था ॥२४॥ वह बनियां स्वयम् विष्णु मन्दिर में जाकर पुष्प धूपादि से विधि पूर्वक पूजा कर तथा तुम दोनों को वहां दीपक जलाने निमित्त रखकर स्वयम् अपने घर आया, वैश्य के चले जाने पर तुम दोनों रात भर दीपक जलाते रहे ॥२५॥२६॥ जब तक सवेरा नहीं हुआ एक रात्रि भर तुमने दीपक प्रज्वलित रक्खा फिर कुछ दिन पश्चात् समय पाकर तुम दोनों दम्पति मर गये ॥२७॥ उस दीपक जलाने के ही पुण्य से तेरा जन्म प्रियव्रत राजा के घर में हुआ है और यह पहिले वैश्य की दासी तेरी भार्य्या हुई है ॥२८॥ दूसरे के बदले भी हरि भगवान् के मन्दिर मे दीपक जलावे तो उसकी पुण्य की संख्या नहीं हो सकती है, इस

लिये ही मैंने कहा है कि हरिभगवान् साधु हैं ॥२६॥३०॥ सत्य युग में एक वर्ष तक हरि की भक्ति करने से, त्रेता में छः महीने भक्ति करने से बराबर फल होता है, द्वापर में तीन महिने भक्ति पूर्वक पूजन से भी वही फल प्राप्त होता है, तथा कलियुग में तो नमो नारायण कहकर ही वह फल प्राप्त होता है ॥३१॥३२॥ इसलिये जगत् वंचित रहगया है, भक्ति मात्र ही मैंने कहा है, दूसरे का दिया जलाने से भी इतना फल प्राप्त होता है ॥३३॥ हे राजन्! मेरा कहा हुआ जो फल तुझे प्राप्त हुआ है अहो! मूर्ख उस हरि के दीप के फल को नहीं जानते हैं ।३४॥ इस प्रकार ब्राह्मण के सामने जो राजा भक्ति में तत्पर होकर अनेक यज्ञों से हरि का भजन करते हैं वह साधु हैं ।३५॥ मैं हरि को छोड़ पृथिवी में और किसी को नहीं देखता हूँ अतएव अगस्त्य साधु हैं इस प्रकार मैंने अपनी आत्मा की प्रशंसा की है ॥३६॥ वह स्त्री धन्य है वह शूद्र धन्य है तथा धन्यतर हैं जिन्होंने कि स्वामी की सेवा करते परोक्ष में हरि की भी सेवा की है ॥३७॥ वह स्त्री धन्य है वह शूद्र धन्य है जो कि द्विज सेवा में तत्पर रहे तथा द्विज की आज्ञा से हरि की भक्ति करे, इसलिये स्त्री साधु है ॥३८॥ असुर भाव को लेकर भी प्रहलाद ने पुरुषोत्तम के अलावा और कुछ न जाना अतः वह साधु कहा है ।।३६॥ प्रजापति के कुल में पैदा होकर बचपन ही में वन को जाकर विष्णु की आराधना की तथा परम शोभन स्थान प्राप्त किया, इसीलिये ध्रुव साधु है, यह मैंने कहा है, इस प्रकार महात्मा अगस्त्य का वचन सुनकर राजा ने मुनि श्रेष्ठ अगस्त्य से आत्मोपदेश पूछा कार्तिकी पर्व के लिये पुष्कर तीर्थ जाते हुये अगस्त्य ऋषिने भद्राश्व राजा के घर ठहरकर राजा के पूछने पर यही आश्विना द्वादशीका व्रत कहा ॥४०॥४१॥४२॥४३॥ दुर्वासाने कहा हे तपोधन यही मैंने तुझे—

दिया है। आश्विन्य द्वादशी पारण कहकर अगस्त्य ऋषि ने राजा से कहा कि मैं पुष्कर तीर्थ जा रहा हूँ आपका घर पुत्रादि से युक्त होवे ऐसा कह अगस्त्य मुनि एक दम अदर्शन हो गये ॥४४॥४५॥ तब भद्राश्व राजा ने आश्विन्य द्वादशी के दिन पद्मनाभ का विधिवत् पूजन किया व्रत पारण करने से राजा ने उस जन्म में यथेच्छ फल प्राप्त किया ।४६॥ पुत्र पौत्रों से युक्त हो इस जन्म में यथेच्छ भोगों को भोगकर पद्मनाभ के प्रसाद से वैशाव स्थान को गया । ४७॥ इति वाराह पुराणे पद्मनाभ द्वादशी व्रतम् नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम् उनपञ्चाशोऽध्याय ॥४६

अथः पचासवाँऽध्याय

दोहाः— कार्तिक शुक्ला द्वादशी, इस पचास अध्याय ।
अगस्त्य मुनि भद्राश्व से, विधि कहि सब समुझाय ॥

अथः धरणी व्रतम्— दुर्वासा ने कहा– हे मुनि श्रेष्ठ ! अगस्त्य ऋषि पुष्कर तीर्थ में जाकर फिर शीघ्र भद्राश्व के घर लौट आया ॥१॥ परम धार्मिक भद्राश्व आते हुये मुनि को देख अति प्रसन्न हो अर्घ पाद्यादि देकर आसन पर बिठला कर प्रसन्न दिल से ऋषि को पूछने लगा हे भगवन् ! आपने पहिले आश्विन्य मास की द्वादशी का विधान कहा था वह मैंने कर लिया है । अब कार्तिक द्वादशी का जो पुण्य है वह मुझने कहिये ॥२॥३॥४। अगस्त्य ने कहा हे राजन् ! कार्तिक द्वादशी परम पवित्र कही गई है। उसका विधि से सेवन करके जो फल प्राप्त होता है उसको मैं सुनाता हूँ आप सावधानता से सुनिये । पूर्वोक्त विधि से संकल्प करके स्नान करे ॥५॥ फिर देवालय में जाकर अकल्मष नारायण की पूजा करे । नमः सहस्र शिरसे कहकर हरि भगवान् की पूजा करे ॥७॥ पुरुषाय नमः

कह भुजा की पूजा करे। विश्वरूपिणे नमः कह कण्ठ की पूजा करे। ज्ञानास्त्राय नमः कह कर अस्त्रों की पूजा करे। श्री वत्साय नमः कहकर वक्षस्थल की पूजा करे ॥८॥ जगत् ग्रसिष्णवे नमः कह उदर की पूजा करे। दिव्य मूर्तये नमः कह कर कटि की पूजा करे। सहस्र पादाय नमः कहकर भगवान के पैरों की पूजा करे ॥९॥ अनुलोम से देवेश की पूजा कर दामोदराय नमः कह भगवान के सारे अंग की पूजा करे ॥१०॥ इस प्रकार विधिवत पूजा कर उनके आगे से चार कलश स्थापित करे उन कलशों में श्वेत चन्दन लगावे तथा उनमें पञ्चरत्न आदि गेर देवे ॥११॥ तथा माला की लड़ियों से कलश की ग्रीवा बांध लेवे श्वेत-वस्त्र से ढक लेवे सुवर्ण तथा तिलों से पूर्ण ताम्र पात्रों से चार समुद्र कल्पित कर देवे। फिर उसके मध्य में पूर्वोक्त विधि से सुवर्णमय हरि की स्थापना करे ॥१२॥१३। योगीश्वर, योगीगम्य, पीताम्बर धर हरि की पूर्वोक्त प्रकार से विधिवत् पूजा करे फिर जागरण करे ॥१४॥ वैष्णव यज्ञ करे। योगियों से किये गये षोड़सार चक्र में हरि की पूजा करे ॥१५॥ एवम् प्रकार पूजाकर प्रभात समय में ब्राह्मण को दे देवे। चार सागर चार ब्राह्मणों को दे देवे, पांचवें के लिये सावधानता से भगवान की प्रतिमा देवे। वेद वेत्ता को देने से समान फल होता है तथा पदार्थ जानने वाले को देनेसे दूना फल होता है। जो कि रहस्य तथा समन्त्र इस व्रत के विधान को जानता है तथा कहता है उसको देने से करोड़ों गुना फल होता है। गुरु के होने पर भी जो कुत्सित पुरुष दूसरे की पूजा करता है वह दुर्गति को प्राप्त होता है तथा उसका व्रत निष्फल हो जाता है। सबसे पहिले गुरु को देवे फिर गुरु के न होने पर दूसरे को देवे ।१८॥१९॥ २०॥ चाहे विद्य हो, चाहे सविद्य हो, परन्तु गुरु ही जनार्दन है सुमार्ग में स्थित हो चाहे कुमार्ग में स्थित हो परन्तु

गुरु ही परम गति है ॥२१॥ जो गुरु प्राप्त होकर भी तिरस्कार करता है। वह करोड़ों युगों तक नरक में निवास करता है ॥२२॥ इस प्रकार द्वादशी के दिन ब्राह्मणों को दान देकर विष्णु की पूजा करके अपनी शक्ति के अनुसार ब्राह्मणों को भोजन करावे तथा दक्षिणा देवे ॥२३॥ इस धरणी व्रत के करने से पहिले प्रजापति ने प्राजापात्य प्राप्त कर मुक्ति प्राप्त की है ।२४॥ तथा हैहय वंश के कृत वीर्य्य राजा ने भी इस व्रत के प्रभाव से कार्तवीर्य्य पुत्र पैदा किया। तथा सास्वत ब्रह्म में लय प्राप्त किया है ॥२५। हे महामते! शकुन्तला ने भी इसी व्रत के प्रभाव से दुष्यन्त के वीर्य से चक्रवर्ती भरत नाम का पुत्र पैदा किया है ।२६॥ तथा पहिले के वेदोक्त सारे ही चक्रवर्ती राजा इस व्रत के ही प्रभाव से चक्रवर्ती हुये हैं ॥२७॥ पाताल में डूबकर धरणी ने भी यह व्रत किया है। अतः इस व्रत का नाम धरणी व्रत हुआ है ॥२८॥ इस व्रत के समाप्त होने पर वाराह मूर्ति हरि ने पृथ्वी को पाताल से उठाकर पानी में नौका की तरह स्थापित की है ॥२९॥ हे मुने! यह धरणी का व्रत मैंने तुमसे कह दिया है। जो इसको भक्ति से सुने या करे वह सब पापों से छुटकारा पाकर विष्णु के सायुज्य को प्राप्त होता है ॥३०॥३१॥ इति वाराह पुराणे आदि कृत वृत्तान्ते कार्तिक शुक्ल द्वादस्याम व्रतम् नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम् पञ्चाशोऽध्यायः ॥५०॥

अथः इकायवनवाँऽध्याय:

दोहा:— मुनि वचन सुनि सत्यतपा, गयो शीघ्र गिरिराज।
अगस्त्य ने वर्णन किया, ज्ञान मोक्ष के काज॥

अथागस्त्य गीता रभ्यते— वाराह जी बोले— इस प्रकार दुर्वासा से धरणी व्रत रूपी उत्तम वाक्य सुनकर सत्य तपा शीघ्र हिमालय के पास उत्तम स्थान में गया ॥१॥

जहां कि पुष्प भद्रा नदी है। चित्रशाला शिला है। वट भद्र वट है। वहीं उसका आश्रम सुशोभित हुआ ॥२॥ उस आश्रम में उसका महत्व चरित्र होगा। धरणी ने कहा-हे सनातन ! जो मैने यह व्रत रूपी तपस्या की थी, उसको किये बहुत हजार कल्प बीत जाने से मैं भूल गई थी। इस समय आपके प्रसाद से मैंने प्राक्तन कर्म स्मरण कर लिये हैं। और जाति स्मरत्व होकर विशोक हो गई हूँ। हे देव ! यदि कुछ और भी कौतुक है। अगस्त्य फिर उस राजा भद्राश्व के घर आकर उस राजा ने क्या किया है। हे भूधर ! वह मुझसे कहिये ॥३॥४॥५॥६॥ श्री वाराह जी ने कहा श्वेत वाहन भद्राश्व ने वापिस आये अगस्त्य को देख उनको श्रेष्ठ आसन पर बिठला कर विशेष आदर सम्मान करके मोक्ष धर्माख्य प्रश्न पूछने लगा। भद्राश्व ने कहा- हे भगवन् ! किन कर्मों से मनुष्य की संसार ग्रन्थि टूटती है ॥७॥ ॥८॥ अथवा क्या करके मनुष्य मूर्त अमूर्त आपत्तियों में शोक नहीं करते हैं। अगस्त्य ने कहा, हे राजन ! दूर तथा नजदीक में व्यवस्थित दिव्य कथा सुनिये। हे नृप ! दृश्य अदृश्य विभाग से जायमान कथा सावधानता से सुनिये। ६॥ न दिन था न रात्रि थी न दृष्टि थी न दिशा थी न आकाश था न देवता थे न दिन था न सूर्य था उस समय में पशुपाल राजा (परमात्मा) अनेक पशुओं की रक्षा करता था ॥१०॥ वह पशुपालन "परमात्मा" अनेक पशुओं को पालता हुआ देखने की इच्छा से कदाचित् शीघ्र पूर्व समुद्र को गया। अनन्त पार महोदधि के तीर पर एक वन "संसार या देह" था। उसमें सर्प "संसारी देह" वसते थे ॥११॥ वहां आठ द्रुम "किसी के मत से आठ प्रकृति" तथा तिरछी सीधी चलने वाली काम वहा नदी थी। तथा अन्य पांच प्रधान पुरुष "पांच महाभूत अथवा पांच प्राण वायु" थे। तथा एक पुरुष "जीव" तेज से देदीप्यमान

स्त्री "बुद्धि" को धारण किये था। वह स्त्री "बुद्धि" भी सहस्र सूर्य के समान प्रकाशमान विशाल पुरुष "जीभ" को अपने वक्षस्थल में धारण किये थी। उस पुरुष "जीव" का अधर त्रिविकार "सत्व रज तम" तथा त्रिवर्ण था। अब वे सारे ही घूमते हुये राजा पशुपाल (परमात्मा) को देख चुप चाप होकर मरे हुये के समान हो गये और राजा पशुपाल ने उस वन में प्रवेश किया जहां कि पूर्वोक्त संसारी थे। उस राजा के वन में प्रविष्ट होने पर वह वनवासी सारे ही उस राजा में लीन हो गये। और क्षण भर में ऐक्य को प्राप्त हो हुये ॥१३॥१४॥ उन दुर्विनीत चोर रूपी वनवासी सर्पों ने वह राजा वेष्ठित कर दिया उनसे वेष्ठित हो राजा सोचने लगा कि ऐसा क्या उपाय है जिससे ये नहीं होवे और फिर ऐसा क्या उपाय होगा। जिससे कि इनको स्मरण शक्ति न रहे ॥१५॥ राजा के इस प्रकार चिन्ता करने पर श्वेत रक्त तथा पीत तीन वर्ण धारण करने वाला अपर त्रिवर्ण पुरुष ने राजा को संज्ञा की कि अपर होकर भी मुझे छोड़कर कहां जाते हो उस त्रिवर्ण पुरुष के ऐसा कहने पर वही त्रिवर्ण पुरुष महन्नाम से हुआ और फिर उस महत् ने भी राजा को वेष्ठित किया। राजा ने उस महत् को बुद्ध्यश्व, ऐसा कहा, राजा के इस प्रकार कहने पर स्त्री (बुद्धि) ने भी राजा को रोका ॥१६ १७। १८॥ मायातत् उसको कहा कि मत डर, तब अन्य पुरुष राजा को सम्वेष्ठित किया। तब सर्वेश्वरेश्वर वीरता से स्थित हुये तब अन्य पांच पुरुष आकर राजा को सम्वेष्टित कर स्थित हुये। तब राजा अवरोधित हुआ ॥१६॥२०॥ हे राजन्! भद्राश्व! इधर रुके हुये एकीभूत सारे दस्युओं ने मथने के लिये शस्त्र लिये फिर भय से आपस में लीन हो गये ॥२२॥ उनके लीन होने पर नृपति का परम सुन्दर घर अत्यन्त सुशोभित हुआ। हे राजन्! तथा अन्य भी

करोड़ों पाप दस्युओं ने उस घर में प्रवेश किया ॥२२॥ गृह में भू सलिल, अग्नि, सुख, शीत, मारुत, सुगुण युक्त तथा शुभ्र और सावकाश पांचों का ऐक्य हुआ। उन पांचों में एक ही चिरकाल तक सम्वेष्टित तथा आशक्त रहा इस प्रकार उस पशुपाल राजा ने तत्काल किया ॥२३॥२४॥ संग्राम में उस नृपति के लाघव तथा रूप को देखकर त्रिवर्ण पुरुष राज सत्तम् को कहने लगा ॥२५॥ हे महाराज ! मैं अपुत्र हूँ आप का क्या कार्य करूं। हमने आपको बांधने का निश्चय किया है ॥२६॥ हे देव यदि आपने हम सारे पराजित कर लिये हैं तो हे पार्थिव! हम सब लीन होकर ठहरते हैं ॥२७॥ एक मेरे ही आपके पुत्रत्व को प्राप्त होने पर सब की सम्भावना हो सकती है। त्रिवर्ण पुरुष महत् के ऐसा कहने पर राजा ने त्रिवर्ण को कहा हे सत्तम ! मेरा पुत्र अन्य का भी कर्त्ता होता है। सुखों से पोषित करता हुआ मैं नर संबन्धी भावों से कदापि लिप्त नहीं होता हूँ ॥२८॥ ॥२६॥ उस पशुपाल राजा ने ऐसा कहकर त्रिवर्ण महत पुरुष को पुत्र बनाया। उनके मध्य में स्थित होकर ही उनसे विमुक्त वह पशुपाल राजा विराम को प्राप्त हुआ ॥३६॥ इति वाराह पुराणे अगस्त्य गीतासु मोक्षधर्म निरूपणम् नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम् एकपञ्चाशोऽध्यायः ॥५१॥

अथः बावनवाँऽध्यायः

दोहा:— अगस्त्य ने भद्राश्व को, बावनें अध्याय।
पशुपालहु उद्देश्य से, दीनों मोक्ष बताय॥

अथः पुनस्तदेव— अगस्त्य ने कहा— जब कि पशुपाल राजा ने त्रिवर्ण को अपना पुत्र बनाया तब महत नाम त्रिवरण पुत्र ने स्वतन्त्रता से अहम नामक (अहङ्कार) पुत्र

तीन भेद वाला पैदा किया ॥१॥ उस अहम् नामक पुत्र की अवबोध स्वरूपिणी कन्या हुई और अव'बोधा स्वरूपिणी कन्या का मनोहर विज्ञानद पुत्र हुआ ॥२॥ और उस विज्ञानद के भी सर्व रूप पांच भोगी पुत्र पांच पाण हुये वे पांचों पुत्र प्राण अपान समान उदान व्यान यथा संख्य से उस घर के रक्षक हुये ॥३॥ वह पहिले चोर थे फिर राजा ने इनको वश में किया तो इन सब ने अमूर्त के समान रह शुभ घर रचा ॥४॥ उसका एक स्तम्भ है वह चतुष्पथ है उसमें नौ दरवाजे हैं तथा वह पुर जल कृत्य वाली हजारों नदि (नाड़ियों) से युक्त था ॥५॥ तव वे नव एकीभूत हो उस पुर में प्रविष्ट हुये । राजा पशुपाल तत्क्षण मूर्तिमान पुरुष हुआ ॥६॥ तव उस पुर में स्थित होकर पशुपाल राजा ने सम्मुच्यं वाचक वेदों का स्मरण किया ॥७। जो कि आत्म स्वरूप थे नित्य थे उन वेदों का स्मरण किया । तथा उनसे कहे हुये व्रतों का स्मरण किया । और राजा पशुपाल ने नियम यज्ञ आदि सबका स्मरण करके रचना की ॥८॥ कदाचित उस राजा पशुपाल ने कर्म काण्ड की इच्छा की अतः उस सर्वज्ञ राजा ने योग निन्द्रा में स्थित होकर पुत्र रचा ॥९॥ जो कि चार मुख, चार भुजा, चार वेद तथा चार मार्ग धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष वाला था उससे लेकर नृपति का विषय स्वपद से स्थित हुआ ॥१०॥ वह नृप उस समुद्र में उस वन में हस्त्यादि रूपी तृष्णादियों से कर्म काण्ड से जानता हुआ हे महामते ! भद्राश्व समानता को प्राप्त हुआ ॥११॥ इति वाराह पुराणे अगस्त्य गीतासु मोक्ष धर्म निरूपणाम् नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम् द्वापञ्चाशो अध्याय ॥५२॥

अथ त्रेपनवाँऽध्याय

दोहा:— त्रेपन अध्याय कह्यो, पशुपाल नृपाख्यान।
भद्राश्व समुझाय दियो, सद सहित व्याख्यान॥

अथ: पशुपालो ख्यानम्— भद्राश्व ने कहा– हे ब्रह्मन्! आपने यह कथा मेरे प्रश्न विषयक कही है। उस कथा की आविर्भूति किसके करने से किससे हुई है सो कहिये ॥१॥ अगस्त्य ने कहा– प्राप्त हुई यह चित्र कथा सबके विषय में स्थित है। तथा तेरे देह मेरे देह में और सब जन्तुओं में समान है ॥२॥ जो कथा का मूल कारण चाहता है उसका उपाय स्वयम् पर पुरुष ईश्वर है। अर्थात् आत्मस्थ होने से वह कथा जानी जाती है। जो पशुपाल (परमात्मा) से उत्पन्न हुआ है चतुर्मुख ब्रह्मा है वही उस कथा का गुरु तथा परवर्तक है। उसका पुत्र स्वर नाम से हुआ है। वह स्वर सत्य नाम से कहा गया है ॥३-४॥ हे नृप ब्रह्मा ने अपने चारों मुखों से स्वर के द्वारा कहे गये ऋगादि चारों वेदों से, धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष आदि चार साधन कहे हैं। चतुर साधन बताने तथा ईश्वर भक्ति से वे वेद आरधना के योग्य हुये हैं चार वेदों में, पहिला ऋगवेद है। वह यज्ञ साधन रूप है, यजुर्वेद, धर्म प्रतिपादक है, सामवेद उसी धर्म को दृढ़ करने वाला है। और चौथा उन ही ऋगादियों से रचा गया है। उस वेद चतुष्टय की आराधना करके मनुष्य शीघ्र भक्ति से ईश्वर को प्राप्त करता है ॥५॥६॥ हे राजन्! पहिले सप्त मूर्ति का चरित्र सुनें दूसरे में ब्रह्मचर्य धारण करे, तदनन्तर भार्यादियों का पालन करना, गृहस्थ रहना, फिर धर्म पर आरूढ़ रहना, या मनुष्यों में धर्म रखना,

और आत्मस्थ धर्म होने पर वनवास कहा है ॥७।८॥ अन्य कोई इसमें में कहता है और में तू आदि कहने से एक प्रकार चार प्रकार दो प्रकार का भेद कहता है भेद भिन्न के साथ उत्पन्न उसके अपत्यता को प्राप्त हुये हैं ॥६॥ पहिले चतुर्मुख ब्रह्मा ने नित्या नित्य स्वरूपों को देख कर अपने जनक की चिन्ता की है। कि मैं जनक को किस प्रकार देखता हूँ महान आत्मा मेरे पिता के जो गुण थे वे गुण स्वरादि अपत्यों में किसी में भी नहीं दिखाई देते हैं ॥१०॥११॥ पिता के पुत्र का जो पुत्र है वह पितामह नामक है यह श्रुति है "आत्मावै पुत्र नामासि" इस वचन से पुत्रादियों में भी वही गुण होने चाहिये थे। परन्तु पिता के गुण इन स्वरादि अपत्यों में नहीं देखे जाते हैं ॥१२॥ कहीं भी भाव होगा, पिता को देखना चाहिये। ऐसा सोचने पर भी क्या करना चाहिये। इस प्रकार ब्रह्मा चिन्ता करने लगा ॥१३॥ ब्रह्मा के इस प्रकार चिन्ता करने पर उसके सामने पैत्रिक शस्त्र प्रकाशित हुआ। उसने रोष से उस शस्त्र के द्वारा अन्तिकस्थ स्वर का मथन किया ॥१४॥ उसके मथन करने पर उस स्वर का नारिकेल फलाकार अति दुर्ग्रह शिर निकला और ब्रह्मा ने उस सिर को देखा ॥१५॥ वह सिर प्रधान से अर्थात् माया से घिरा हुआ तथा इन्द्रिय रूप दश प्रकार से युक्त होकर सुशोभित हुआ। उस सिर को ब्रह्मा ने चतुष्पाद शास्त्र से तिलशः भेदन किया यथेच्छ तिलशः टुकड़े टुकड़े करने पर वह अमूल प्रकाशित नहीं हुआ। तब अहम् अहम् करते हुये को भी सी प्रकार भेदन किया ॥१६॥१७॥ उस भाग में दृष्टि करके एक अन्य हस्व देखा और वह हस्व कहने लगा कि हम

भूतादि पांच हैं इस प्रकार कहते हुये को भी ब्रह्मा ने भेदन छेदन किया ॥१८॥

उसने जो पांच प्राण देखे थे उनको भी छेदन किया प्रकाशित होते हुये वे पाँच समीप में अवकाश करके रहने लगे। उसको भी ब्रह्मा ने असंग शस्त्र से तिल काण्ड के समान छेदन किया। उसके कट जाने पर दशांश से एक अन्य ह्रस्व याने सूक्ष्म ब्रह्मा ने देखा ॥१९॥२०॥ उस ह्रस्व पुरुष को भी रूप शस्त्र से छेदन करके एक अन्य दिखाई दिया। वह ह्रस्व सित, सौम्य, रूप था। उसको भी उसी प्रकार छेदन किया ॥२१॥ इस प्रकार करने पर उस ब्रह्मा ने स्वर का शरीर देखा और हे राजन्! उसके आभ्यन्तर में अपने पिता को देखा। वह त्रसरेणु समान सूक्ष्म था। और मूर्ति से सब जन्तुओं में अव्यक्त याने अप्रकट रूप से व्याप्त था वह मैं को देख परम हर्षित हुआ, निश्चय से दोनों वह स्वर ही हुआ ॥२२॥२३॥ एवम् प्रकार स्वर नाम का महातपा यह पुरुष है उस स्वर का शरीर प्रवृति रूप है और क्षिर निवृति रूप है ॥२४॥ हे राजन्। इसी से उसकी शीघ्र कथा से संभूति हुई है। यह कह दिया यही निवृति है यह सब जगत् का प्रथम इतिहास है। जो इसको तत्व से जानता है वह साक्षात् कर्म परक होता है ॥२५॥२६॥ इति श्री वाराह पुराणे अगस्त्य गीतासु पशुपालो पाख्यानम नाम काशीराम शर्म्मा कृतो भाषा टीकायाम् त्रिपञ्चासऽध्याय ॥५३॥

अथः चौवनवाँऽध्याय

दोहा:— इस चौवन अध्याय में, श्रेष्ठ पति मिलन हेतु।
अप्सरा गण प्रश्न किये, व्रत कहु नारद देत ॥

अथः उत्तम भर्तृ प्राप्ति व्रतम्— भद्राश्व ने कहा— हे द्विज! विज्ञान की इच्छा वाले को किसकी आराधना करनी चाहिये। तथा किस प्रकार आराधना करनी चाहिये यह मुझे बता दीजिये ॥१॥ अगस्त्य ने कहा— सब देवताओं मे भी श्रेष्ठ विष्णु की पूजा करनी चाहिये। उसका उपाय कहता हूँ। जिससे वह मनोकामना पूर्ण कर लेते हैं ॥२॥ सब वेदों का रहस्य सब मनु जन्म मुनियों का देव, पर नारायण हैं, उनको प्रणाम करने से मनुष्य दुख का अनुभव नहीं करता। ३॥ सुना जाता है कि पहिले महात्मा नारद ने विष्णु की तुष्टि करने वाला व्रत अप्सराओं को कहा है ॥४॥ अप्सरा बोली हे भगवन्! ब्रह्म पुत्र! हम भर्त्ता की इच्छा कर रही है। जिस प्रकार हमारे नारायण भर्त्ता हों ऐसा उपाय कहिये ॥५॥ नारद ने कहा प्रणाम पूर्वक प्रश्न सर्वत्र शुभ होता है। वह तुमने यौवन के घमण्ड से मुझे प्रणाम नहीं किया ॥६॥ तथापि देव देव का नामोच्चारण जो तुमने किया है, उससे आपका भर्त्ता नारायण होगा। यह वरदान तुम्हे दे दिया ॥७॥ भगवान् के नामोच्चारण ही से निसन्देह सब कुछ हो गया है। अब शीघ्र व्रत विधान कहता हूँ जिससे कि हरि भगवान स्वयम् वरदान देने आवेंगे तथा तुम्हारे भर्त्ता होंगे। नारद ने कहा वसन्त में जो शुक्ल पक्ष की द्वादशी है उसमें उपवास करे रात्रि में हरि भगवान को पूजा करनी चाहिये। विद्वान पुरुष लाल फूलों से मण्डल बनाकर पूजा करे, तथा नाचना गाना बजाना करते हुये वहीं पर जागरण करे नमोभवाय कह सिर की पूजा करे अनङ्गाय नमः कह कटि प्रदेश की पूजा करे ॥८॥९॥१०॥११॥

कामायनमः कह बाहु मूल की पूजा करे, सुशास्त्रायनमः कह उदर की पूजा करे, मन्मथायनमः कह पैरों की पूजा करे, हरयेनमः कह सब अङ्गों की पूजा करे, इस प्रकार पूजा तथा नमस्कार करने वाले को भगवान् दिव्य चक्षु देते हैं इस प्रकार पूजा करके प्रभात समय भगवान् की प्रतिमा वेद वेदाङ्ग युक्त तथा सम्पूर्ण अङ्ग वाले बुद्धिमान ब्राह्मण को दे देनी चाहिये, तथा ब्राह्मणों की पूजा करके उस व्रत की समाप्ति करनी चाहिये ॥१२॥१३॥१४॥ ऐसा कहने पर अवश्य विष्णु भगवान् तुम्हारा भर्त्ता हो जायगा सुशोभन इक्षु काण्ड से रस लेकर माल्लिका जाति आदि के फूलों से भगवान् की पूजा करनी चाहिये गर्भ से मुझे प्रणाम न करके तुमने प्रश्न किया है उस अपमान का फल तुमको यह होगा कि इस तालाब में अष्टावक्र मुनि हैं उसका उपहास करने से वह तुम्हें शाप देगा इस व्रत से भगवान् को पति प्राप्त करोगी अभिमान् से तथा अपमान् से गोपालों से तुम्हारा हरण होगा, पहिले हर्त्ता देव कन्याओं का भर्त्ता होगा ॥१५॥ ॥१६॥१७॥१८॥१९॥ अगस्त्य ने कहा कि इस प्रकार कह कर देवर्षी नारद चले गये अवसराओं ने भी विधि विधान से यह व्रत किया इस व्रत के प्रभाव से भगवान् उसके ऊपर प्रसन्न हुये ॥२०॥ इति वाराह पुराणे आदि कृत वृतान्ते अगस्त्य गीतासूत्तर खण्ड उत्तम भर्तृ प्राप्ति व्रतम्नाम काशीराम कृत भाषा टीकायाम् चतुः पञ्चाशोऽध्याय ॥५४

अथः पचपनवाँऽध्याय

दोहाः— इस पचपन अध्याय में, हैं शुभ व्रत विधान ।
अगहन द्वादशि आरम्भ कर, कार्तिक दान महान ॥

अथ शुभ व्रतम— अगस्त्य ऋषि ने कहा हे राजन् सब व्रतों में उत्तम व्रत सुनिये जिस शुभ व्रत से निसन्देह विष्णु भगवान् मिलते हैं ॥१॥ मार्गशीर्ष महीने से इस व्रत का

आरम्भ करे । मार्गशीर्ष शुक्ल दशमी के दिन एक समय भोजन करे । दशमी दिन स्नान करके मध्यान्ह में विष्णु की पूजा करे फिर भोजन करके अक्षत द्वादशी, पारण का पूर्वोक्त विधि अनुसार संकल्प करे ॥२॥३॥ एकादशी उपवास द्वादशी पारण करके ब्राह्मणों को जौ-दान देवे, दान होम, तथा पूजा में हरि का नाम उच्चारण करे ॥४॥ इस प्रकार फाल्गुन तक बराबर करता रहे, फिर चैत्रादि महिनों में व्रत उपवास करके ब्राह्मणों को प्रीति पूर्वक सत्तु के पात्र दान देवे श्रावणादि महिनों में ब्राह्मणों को धान्य का दान देवे ॥५॥६॥ तीन महिने इस प्रकार करके जब तक कार्तिक महिने की दशमी न आवे तब तक ऐसा ही करता रहे । फिर दशमी के आने पर शुद्ध पवित्र होकर भक्ति पूर्वक मास नाम से हरि की पूजा करे । फिर भोजन करके पूर्वोक्त प्रकार से एकादशी व्रत उपवास तथा द्वादशी पारण का संकल्प करे ॥७॥८॥ एकादशी के दिन अपनी शक्ति के अनुसार पाताल तथा कुल पर्वतों से युक्त सुवर्ण की पृथ्वी बनावे उस पृथ्वी का प्रतिमा को भूमि के अङ्गन्यास कहते हुये हरि के आगे से स्थापित करे तथा उसमें एक जोड़ा श्वेत वस्त्र का तथा सब बीज रक्खे ॥९॥१०॥ फिर पञ्च रत्न आदि से विधिवत् पूजा करके वहीं पर जागरण करे प्रातः काल होने पर चौबीस ब्राह्मणों को आमन्त्रित करे, और एक एक ब्राह्मण को दक्षिणा सहित एक एक गाय तथा एक एक बैल का दान देवे, एक एक जोड़ा कपड़े का देवे, तथा अंगूठी और कड़, कानों के सुवर्णमय कुण्डल देवे तथा हे राजन् ! राजा उन ब्राह्मणों को एक एक गाँव भी देवे । अपनी शक्ति के अनुसार दरिद्रियों का भरण पोषण करता रहे ॥११॥१२॥१३॥१४॥ तथा शक्ति के अनुसार सुवर्ण की पृथ्वी बनाकर गाय बैल तथा वस्त्र युगम अपने ऐश्वर्य के अनुसार देवे और सब

आभरणों से विभूषित गाय का दान अवश्य करना चाहिये। हे राजन्! इस प्रकार करने से भगवान् तत्काल प्रसन्न हो जाते हैं ॥१५॥१६॥ अथवा चांदी की पृथ्वी बनाकर हरि का स्मरण करता हुआ ब्राह्मण को दे देवे। तथा इन ब्राह्मणों को उपानद् छाता, खड़ाऊ, देकर कहे कि सनातन विष्णु भगवान् मेरे ऊपर प्रसन्न हो जावें। दान भोजन आदि देने से जो फल प्राप्त होता है, वह हजार वर्षों में भी कहा नहीं जा सकता। हे राजन्! तथापि मैं उद्देश्य से कुछ फल कहता हूँ ॥१७॥१८॥१९॥ ॥२०॥ इस व्रत के करने से जो शुभ फल प्राप्त होता है उसे मैं कहता हूं आप सुनिये। आदि युग में एक ब्रह्मवादी दृढ़ व्रत राजा था उसने पुत्र की इच्छा से ब्रह्मा को पूछा। ब्रह्मा ने इस राजा को यही व्रत बतलाया था ब्रह्मा की आज्ञानुसार यह व्रत किया। व्रत समाप्ति पर भगवान् स्वयम् प्रत्यक्ष दर्शन देकर राजा से कहने लगे कि हे राजन्! जो तेरी अभिलाषा है उस वरदान को मुझसे मांग ले ॥२१॥२२॥२३॥ राजा ने कहा हे देवेश! मुझे ऐसा पुत्र दीजिये जो कि वेद मन्त्र जानने वाला हो याजक हो, यजनासक्त हो, कीर्ति वाला हो, चिरायु, प्रचुर गुण, सम्पन्न तथा अकल्मष हो। ऐसा कह राजा ने फिर कहा कि हे परमेश्वर! मुझे ऐसा शुभ स्थान दीजिये, जो कि मुनिपद नाम का है जहां जाकर मनुष्य शोकाकुल नहीं होता ॥२४॥२५॥२६॥ उस राजा को ऐसा ही होगा कहकर भगवान अन्तर्धान हो गये तदनन्तर उस राजा का वत्स श्री नाम का पुत्र हुआ है। वेद वेदाङ्ग, सम्पन्न, तथा यज्ञ करने वाले उस पुत्र की कीर्ति पृथ्वी भर में विस्तृत हो गई थी। राजा भी विष्णु से दिये हुये उस प्रतापी पुत्र को प्राप्त कर राज्य भार पुत्र को सौंप आप तप करने गया रमणीय हिमालय पर्वत पर हरि भगवान् की आराधना करने लगा तथा सर्वदा स्तुति भी पढ़ता

रहा ॥२७॥२८॥२६॥ भद्राश्व ने कहा- हे ब्रह्मन् ! वह स्तुति कौन है जो कि उस राजा ने की थी, तथा स्तुति करने से उस राजा को क्या फल प्राप्त हुआ है, अगस्त्य ने कहा हिमालय पर्वत पर जाकर मन में हरि का ध्यान करते हुये राजा ने अद्भुत कर्मा हरि की स्तुति गाई है ॥३०॥३१॥३२॥ राजा ने कहा क्षर को, अक्षर को, क्षीर समुद्रशायी को, पृथ्वी धर को, मूर्ति वालों के परम पद को, अतीन्द्रिय को, निराकृति को, प्रभु जनार्दन को, मैं स्तुत करता हूं ।३३॥ आप आदि हो परमार्थ रूपी हो, विभु हो, पुराण हो पुरुषोत्तम हो वेद वेताओं के प्रधान हो हे शङ्ख गदास्त्र पाणे ! मेरी रक्षा कीजिये ॥३४॥ हे देव ! हे अनन्त मूर्ते ! कीर्तन करने से आपने देव राक्षसों का कार्य सिद्ध किया है। हे देव ! कूटगत विष्णु की चेष्टायें केवल सृष्टि के अर्थ हुआ करती हैं आप यद्यपि कूटस्थ हो तथापि आपने कूर्मत्व मृगत्व आदि से अनेक रूप प्रकट किये हैं। यद्यपि आपका जन्म नहीं है तथापि सर्वज्ञ होने से आपके अनेक जन्म कहे जाते हैं ॥३५॥३६॥ नृसिंह, वामन, जमदग्नि आदि के लिये नमस्कार हो। रावण का वंश नाश करने वाले राम को, वासुदेव को, नमस्कार हो, हे वासुदेव ! हे बुद्ध ! हे कल्किन ! आपके लिये नमस्कार हो ।हे शम्भो ! हे नरेश ! हे विभुधारिनशन ! आपको नमस्कार हो ॥३७। हे नारायण ! हे पद्मनाभ ! हे पुरुषोत्तम ! हे समस्त देव पूज्य ! हे सर्वमित् प्रधान ! आपको नमस्कार हो ॥३८॥ हे करालआस्य नृसिंह मूर्ते ! आपको नमस्कार हो, हे हे विशालाद्रि समान कूर्म ! आपको नमस्कार हो हे ! समुद्र प्रतिमान् वाले मत्स्य आपको नमस्कार हो, हे वराह रूपी अनन्त आपको नमस्कार हो ॥३६॥ हे देव ! सृष्टि के लिये आपकी ये चेष्टायें हैं यथार्थ में तो आपकी मूर्ति नहीं है मैंने

अज्ञान से यह ध्यान किया है। आप पुराण पुरुषोत्तम तो दीखने में आते ही नहीं हो ॥४०॥ हे विष्णो ! स्वयम् आप ही आद्यमख हो, तथा मखाङ्ग भूत हवि आप ही हो पशु आप ही हो, ऋत्विक् आप ही हो, आज्य भी आप ही हैं आपके ही लिये मुनि तथा देवसंग यज्ञ करते रहते हैं ॥४१॥ इस सुरादि कालानल संस्थ चलाचल जगत् में आप विभक्त नहीं हैं हे जनार्दन ! मुझे हृदयेशित सिद्धि दीजिये ॥४२॥ हे कमल पत्राक्ष ! हे मूर्तामूर्त ! हे हरे ! आपको नमस्कार हो, आपकी शरण आया हूँ मेरा संसार में उद्धार कीजिये ॥४३॥ विशाल आम्र के नीचे स्थित होकर उस महात्मा राजा के इस प्रकार स्तुति करने पर परमेश्वर प्रसन्न हो गये ॥४४॥ तब हरि कुब्ज रूप धारण कर राजा के समीप आये। हरि के आने पर वह आम्र भी कुब्ज हो गया ॥४५॥ प्रशंसित व्रत वाला वह राजा उस बड़े आश्चर्य को देख यह विशाल आम्र कैसे कुबड़ा हो गया है। इस प्रकार चिंता करने लगा ॥४६॥ चिंता करते हुये उसने सोचा कि इस कुबड़े के आने ही से यह आम्र कुबड़ा हो गया है। इसमें सन्देह नहीं है ॥४७॥ अतः यह कुबड़ा भी निश्चय से भगवान् होगा ऐसा कह उस राजा ने कुबड़े ब्राह्मण को नमस्कार किया ॥४८॥ और कहा हे भगवन् ! अनुग्रह के लिये ही आप पुरुषोत्तम मेरे समीप आये हो, अतः पहिले हरि के रूप से मुझे दर्शन दीजिये ॥४९॥ राजा के ऐसा कहने पर भगवान् शंख, चक्र, गदा धारण कर सौम्य रूप से उसके सामने ही प्रकाशित होकर कहने लगे ॥५०॥ हे राजेन्द्र जो तेरे मन में है वह वरदान मुझसे मांगले। मेरे प्रसन्न होने पर त्रैलोक्य का राज्य भी तुच्छ है ॥५१॥ भगवान के ऐसा कहने पर हर्ष से प्रफुल्लित आंखों वाले राजा ने कहा हे देवेश! मोक्ष दीजिये। ऐसा कह चुप हो गया ॥५२॥ राजा के ऐसा कहने पर भगवान् बोले

जो मेरे आने से यह आम्र कुबड़ा हुआ है अतः यह स्थान कुब्जाम्र तीर्थ से प्रसिद्ध होगा। ब्राह्मण अथवा तिर्यक् योनि पशु-पक्षी भी इस तीर्थ में जो कलेवर को छोड़ेगा उसके पांच सौ विमान् प्राप्त होवेंगे। योगी होगा। और मुक्त को प्राप्त करेगा ॥५३ ५४॥५५॥ ऐसा कह जनार्दन भगवान् ने शंख के अग्र भाग से राजा को स्पर्श किया। स्पर्श करते ही वह राजा परम निर्वाण को प्राप्त हुआ ॥५६॥ अतः हे राजन् भद्राश्व! तू भी उस भगवान् की शरण जा जिससे फिर शोक पदवी को प्राप्त नहीं होगा यानी जन्म मरण का दुख नहीं होगा ॥५७। जो इस विधान को प्रातःकाल सुने या पढ़े भगवान उसको शीघ्र भुक्ति मुक्ति देते हैं अर्थात् इस जन्म में भुक्ति तथा मरने पर मुक्ति देते हैं ॥५८॥ जो इस पुण्यदायक शुभ व्रत को कहता है, वह मनुष्य इस जन्म में सर्व सम्पत्ति युक्त हो आखिर भगवान् में लीन हो जाता है ॥५९॥ इति वाराह पुराणे अगस्त्य गीतासु शुभ व्रतम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् पंच पंचाशोऽध्यायः ॥५५

अथः छप्पनवाँऽध्याय

दोहा— इस छप्पन अध्याय में, निर्धन भी धनी हो।
अगहन पड़िवा व्रत किये, अग्नि को पूजे जो ॥

अथः धन्य व्रतम्— अगस्त्य ने कहा— हे राजन्! अब सब व्रतों में उत्तम व्रत कहता हूँ जिसके करने से निर्धन भी शीघ्र धनी हो जाता है ॥१॥ मार्गशीर्ष शुक्ल पक्ष को जो प्रतिपदा है उसकी रात्रि में विष्णु तथा अग्नि की पूजा करे ॥२॥ वैश्वानराय नमः कह पैरों की पूजा करे अग्नये नमः कह उदर की पूजा करे हविर्भुजाय नमः कह वक्षस्थल की पूजा करे द्रविणोदाय

नमः कह भुजाओं की पूजा करे, संवर्ता नमः वह सिर की पूजा करे ज्वलनाय नमः कह सारे अंग की पूजा करे । इस विधान से देव देव जनार्दन की पूजा करके उन्हीं के सामने विधि से कुण्ड बनाकर पूर्वोक्त मन्त्रों से हवन करे ॥३॥४॥५॥ फिर घृत संयुक्त संयावक अन्न खावे, कृष्ण पक्ष में भी इस ही विधि से चार महिनों तक करता रहे ॥६॥ चैत्रादि महिनों में घृत और खीर का भोजन करे, इस प्रकार व्रत समाप्त करना चाहिये ॥७॥ व्रत समाप्त होने पर सुवर्ण मय अग्नि की प्रतिमा बनावे, लाल वस्त्र का जोड़ा, लाल पुष्प, लाल चन्दन तथा कुमकुम समर्पण कर प्रतिमा की पूजा करे, तदनन्तर सर्वावयव सम्पन्न खूबसूरत ब्राह्मण को लाल वस्त्र का जोड़ा पहिनाकर, विधिवत् उस की पूजा करे । तदनन्तर बुद्धिमान पुरुष को निम्नलिखित मन्त्र से अग्नि की प्रतिमा ब्राह्मण को देनी चाहिये ॥८॥९॥१०॥ धन्य हूँ, धन्य कर्मा हूँ, धन्य चेष्टा हूँ, धन्यवान हूँ, इस व्रत के करने से मैं सर्वदा सुखी हो जाऊँ ॥११॥ इस प्रकार मन्त्रोच्चारण करके प्रतिमा महात्मा ब्राह्मण को दे देवे । इस प्रकार करने से भोग वर्जित मनुष्य भी शीघ्र धन्यत्व को प्राप्त हो जाता है ॥१२॥ इस धन्य व्रत के करने से इस जन्म में निश्चय ही धन धान्य तथा सौभाग्यादि सब कुछ प्राप्त हो जाता है ॥१३॥ पहिले जन्म के समग्र पाप अग्नि नष्ट कर लेती है पापों के जल जाने से मनुष्य पाप निर्मुक्त हो जाता है ॥१४॥ जो इस व्रत विधि को नित्य भक्ति पूर्वक पढ़े या सुने वह तीनों लोकों में धन्य हो जाता है ॥१५॥ ऐसा भी सुना जाता है कि जब पहिले कुबेर शूद्र योनि से पैदा हुआ तो उसने भी यह व्रत करके कुबेरत्व प्राप्त किया है ॥५६॥ इति वाराह पुराणे अगस्त्य गीतासु धन्य व्रतम् नाम काशीराम कृत भाषा टीकायाम् षट्पंचाशोऽध्याय ॥५६॥

अथः सतावनवाँऽध्यायः

दोहाः— सतावन अध्याय में, इक व्रत है अपार ।
चन्द्रमा ने जाको कर, पाई कान्ति अपार ॥

अथः कान्ति व्रतम्— अगस्त्य ने कहा अब सबसे उत्तम कान्ति व्रत कहता हूँ जिस कान्ति व्रत के करने से चन्द्रमा ने पुनः कान्ति प्राप्त की है ॥१। पहिले दक्ष शाप से चन्द्रमा राज यक्ष्मा रोपसे आक्रान्त हो गया था, फिर इस व्रत के ही करने से कान्तिमान हुआ है ॥२॥ हे राजेन्द्र ! कार्तिक शुक्ल द्वितिया दिन व्रत करके रात्रि में बलराम तथा कृष्ण की पूजा करे ।३। बलदेवाय नमः कह पैरों की पूजा करे केशवायनमः कह सिर की पूजा करे । इस प्रकार उत्तम वैष्णव की पूजा करके उस दिन जो दो कला वाला सोमाख्य देव चन्द्र है उसको निम्नलिखित मन्त्र से अर्घ्य देवे ॥४ ५॥ अमृत रूप के लिये नमस्कार हो, विधिवर के लिये नमस्कार हो यज्ञ लोकाधिपति के लिये नमस्कार हो सोम परमात्मा को नमस्कार हो ॥६॥ रात्रि में घृत सहित यवाल भोजन चार महीनों तक करे फाल्गुनादि चार महिनों में क्षीर भोजन करे धान का हवन करे कार्तिक में जौ का हवन करे और आपाढ़ादि चार महिनों में तिल का हवन करे, तथा भोजन भी तिलों ही का करे यहि विधि कान्ति व्रत की कही गई है। सम्वत सर तक यह व्रत करने पर व्रती मनुष्य सुवर्णमय चन्द्र की प्रतिमा बनावे ॥७॥८॥९॥ श्वेत वस्त्र युगम से जोड़े से सफेद फूल तथा गन्धादि से पूजन करके वह सुवर्ण प्रतिमा ब्राह्मण को देवे ॥१०॥ अथवा सम्वत् सर पूर्ण होने पर रजतमय चन्द्रमा की प्रतिमा बना कर श्वेत वस्त्र युगम तथा श्वेत फूल तथा गन्धादि से पूजन करके वह प्रतिमा ब्राह्मण की पूजा करके ब्राह्मण को दे देवे हे नारायण ! आपको नमस्कार हो आपके प्रसाद से

कान्तिमान् सर्वज्ञ तथा प्रिय दर्शन हो जाऊं। इस मन्त्र से वह प्रतिमा चुपचाप ब्राह्मण को दे देनी चाहिये। इस प्रकार देने से मनुष्य शीघ्र कान्तिमान् हो जाता है। आत्रेय चन्द्रमा ने भी पहिले यह व्रत किया है ॥११॥१२॥१३॥१४॥ इस व्रत को करने से स्वयम् जनार्दन प्रसन्न होकर चन्द्र की राजयक्ष्मा दूर करके चन्द्रमा को अमृताख्य कला प्रदान की है ॥१५॥ उस कला को चन्द्रमा ने व्रत तपस्या के प्रभाव से रात्रि में ग्रहण किया है और सोमत्व तथा द्विज राजत्व को प्राप्त हुआ है। १६। द्वितीया में अश्विनी कुमार सोम रस भोक्ता कहे हैं। वे अश्विनी कुमार शुक्ल पक्ष में शेष और विष्णु कहे हैं ॥१७॥ हे राजन् विष्णु से प्रथक कोई भी देवता नहीं है। नाम भेद से सर्वत्र पुरुषोत्तम ही स्थित हैं ॥१८॥ इति वाराह पुराणे अगस्त्य गीतासु कान्ति व्रतम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् सप्त पञ्चासोऽध्याय। ५७॥

अथः अठावनवाँऽध्याय

दोहाः— सौभाग्य व्रत अब कहूँ, अट्ठावन अध्याय।
शिव शक्ति पूजा करहु, तृतिया तिथि अकुलाय॥

अथः सौभाग्य व्रतम्— अगस्त्य ने कहा– हे राजन्! अब सौभाग्य व्रत सुनिये जिस व्रत के करने से स्त्री पुरुष शीघ्र ही सौभाग्य को प्राप्त हो जाते हैं ॥१॥ फाल्गुन महीने की शुक्ल पक्ष की तृतिया दिन व्रत उपवास करना चाहिये। रात्रि में शुद्ध पवित्र हो सत्य वक्ता होकर लक्ष्मी के सहित हरि की, या उमा के सहित रुद्र की, पूजा करे। जो लक्ष्मी वही गिरिजा है। जो हरि है वही त्रिलोचन महादेव हैं। सब शास्त्रों में तथा पुराणों में ऐसा ही कहा गया है। अतः शास्त्र विरुद्ध उनका जो भेद बतलाता है उन मनुष्यों को रुद्र भगवान् काव्य शास्त्र आदि नहीं प्रदान करते हैं। विष्णु को रुद्र कहे, लक्ष्मी गौरी कही गई है ॥२॥३॥४॥५॥ रुद्र विष्णु में जो भेद भाव रखता

है उसको लोग नीच कहते हैं । तथा उसको सर्व धर्म से वहिष्कृत नास्तिक समझना चाहिये ॥६॥ इस प्रकार जानकर लक्ष्मी सहित उन परमेश्वर हरि की निम्न लिखित मन्त्र से पूजा करनी चाहिये। गम्भीराय नमः कह कर पैरों की पूजा करे, सुभगाय नमः कह कटि प्रदेश की पूजा करे, देव देवाय नमः कह उदर की पूजा करे त्रिनेत्राय नमः कह मुख की पूजा करे ॥७॥८॥ वाचस्पतये नमः कह सिर की पूजा करे, रुद्राय नमः कह कर सब अङ्गों की पूजा करे। मेधावि पुरुष इस प्रकार लक्ष्मी युक्त हरि का पूजन करे ॥९॥ अथवा गन्ध पुष्पादि से गौरी सहित रुद्र को पूजा करे। तब उनके सामने सौभाग्य पति के निमित घी तिल तथा मधु से हवन करे। फिर लवण रहित स्नेह विरस, गौ घृमान्न का भोजन करे। कृष्ण पक्ष की भी यही विधि है। आषाढ़ादि महीनों में सर्वदा शुद्धता पूर्वक श्यामाक नाम धान्य विशेष का भोजन करे ॥१०॥११॥१२॥१३॥ तब माघ शुक्ल तृतिया में सुवर्णमय गौरी और रुद्र की प्रतिमा बनावे, अथवा लक्ष्मी सहित विष्णु की प्रतिमा यथा शक्ति बनाकर उन प्रतिमाओं की विधिवत् पूजन करके सुपात्र ब्राह्मण को दे देवे ॥१४॥१५॥ जो ब्राह्मण अन्न से हीन हो, वेद शास्त्रों का ज्ञाता साधु वृत्ति वाला हो, सदाचारी हो उसको ही प्रतिमा देनी चाहिये ॥१६॥ तथा ब्राह्मण को छः पात्र भी देवे। एक मधु पात्र, दूसरा घृत पूरित पात्र, तीसरा तिल वा तेल से भरा पात्र, चौथा गुड़ का पात्र पांचवाँ लवण पूरित पात्र, छटा गाय दूध से भरा पात्र ब्राह्मण को देवे ॥१७।१८॥ ये पात्र दान देने से सात जन्मों तक नारि व पुरुष सुभग तथा दर्शनीय होते हैं ॥१९॥ इति वाराह पुराणे अगस्त्य गीतासु सौभाग्य व्रतम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् अष्टपञ्चाशो अध्याय ॥५८॥

अथः उनसठवाँऽध्याय

दोहाः— फाल्गुन शुक्लो चौथ को, व्रत गणपति प्रधान।
कीने जो इस व्रत को, नशें कुविघ्न महान॥

अथः अविघ्न व्रतम्— अगस्त्य ने कहा– हे राजन्! अब मैं विघ्ननाशक व्रत कहता हूं जिसको करने से विघ्न नहीं होते हैं ॥१॥ फाल्गुन महीने की शुक्ल चौथ के दिन से यह व्रत करना चाहिये। तिलों का पारण करके रात्रि में भोजन करना चाहिये ॥२॥ तब ब्राह्मण तिलान्न से ही हवन करे। चार महीने तक निरन्तर व्रत करता रहे। फिर पांचवें महीने में सुवर्णमय गणेश की प्रतिमा बनाकर पूजा करे पांच पायसान्न पात्रों सहित वह प्रतिमा ब्राह्मण को दे देवे। तथा तिल भी देवे ॥३॥४॥ इस प्रकार यह व्रत करने से मनुष्य सब विघ्नों से छूट जाता है सगर ने अश्वमेध यज्ञ में विघ्न देखकर यही व्रत किया फिर अश्वमेध यज्ञ फल प्राप्त किया है तथा त्रिपुरासुर मारते समय रुद्र ने इस ही व्रत को करके त्रिपुरासुर मारा है मैंने भी भी समुद्र पीते समय यही व्रत किया है ॥५॥६॥७॥ तप चाहने वाले ज्ञान की इच्छा वाले अन्य अनेक राजाओं ने भी अविघ्न पूर्वक कार्य सिद्धि के लिये यही व्रत किया है ॥८॥ शूर के लिये, धीर के लिये, गजानन के लिये, लम्बोदर के लिये एक दंष्ट्र के लिये इस प्रकार विधिवत् पूजा करके विघ्नःनाशार्थ हवन करे। ॥९॥ इस व्रत के करने मात्र से ही मनुष्य विघ्न से छूट जाता है। विनायक की प्रतिमा दान देने से मनुष्य कृत कृत्य हो जाता है ॥१०॥ इति वाराह पुराणे अगस्त्य गीतासु अविघ्न व्रतम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् उन-षष्टितमोऽध्याय ॥५९॥

अथः साठवाँऽध्यायः

दोहाः— कार्तिक शुक्ला पञ्चमी, कीजे व्रत आरम्भ ।
शान्ति होत सब काज में, मिटे विघ्न आरम्भ ॥

अथः शान्ति व्रतम्— अगस्त्य ने कहा– हे राजन्! अब शान्ति व्रत सुनाता हूँ। आप सुनिये जिस शान्ति व्रत के करने से गृह मेधियों के कार्यों में सर्वदा शान्ति हुआ करती है ॥१॥ कार्तिक शुक्ल पंचमी से यह व्रत आरम्भ करके एक वर्ष तक गर्म भोजन न खावे ॥२॥ रात्रि शेष शायी हरि भगवान की पूजा करे। अनन्ताय नमः कह पैरों की पूजा करे, वासुकिनी नमः कहकर कटि प्रदेश की पूजा करे ॥३॥ तक्षकाय नमः कह जठर की पूजा करे, करकोटकाय नमः कह वक्षस्थल की पूजा करे, पद्माय नमः कह कंठ की पूजा करे, महा पद्माय नमः कह भुजाओं की पूजा करे ॥४॥ शंख पालाय नमः कह मुख की पूजा करे, कुटिलाय नमः कह सिर की पूजा करे। इस प्रकार पूजा कर अलग भी पूजा करे ॥५॥ उन सर्पों के उद्देश्य से फिर हरि भगवान का दूध से स्नान करावे तदनन्तर उनके सामने क्षीर और तिलों से हवन करे ॥६॥ इस प्रकार एक वर्ष तक व्रत करके ब्राह्मणों को भोजन खिलवे। तथा सुवर्णमय नाग बनाकर ब्राह्मण को देवे ॥७॥ इस प्रकार भक्ति पूर्वक जो मनुष्य इस व्रत को करता है उसकी अवश्य शान्ति होती है। तथा उसको नागों से भी कभी भय नहीं होता है ॥८॥ इति श्री वाराह पुराणे अगस्त्य गीतासु शान्ति व्रतम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम षष्टीतमोऽध्याय ॥६०॥

अथः इकसठवाँ अध्याय

दोहाः— अब इकसठ अध्याय में, है व्रतकाम अनूप ।
षष्टी तिथि पूजा करिये, कुमार हरि का रूप ॥

अथः काम व्रतम्— अगस्त्य ने कहा– हे महाराज!

अब मुझसे कहे हुये काम व्रत को सुनिये। जिस काम व्रत के करने से मन से चिन्तित अभिलाषा भी पूर्ण हो जाती है ॥१॥ षष्ठी तिथि में एक वर्ष तक फल खाकर ही व्रत करना चाहिये। पोष महीने की पंचमी तिथि दिन भोजन करके फिर षष्ठी दिन पहिले फल खावे, तदनन्तर मौनी होकर चावलों का भात खावे ॥२॥३॥ अथवा षष्ठी के दिन ब्राह्मणों के साथ फल ही खाकर रहे। फिर सप्तमी के दिन पारण करे ।३॥ अग्नि कार्य कर गुह रूप से केशव भगवान् की पूजा करके एक वर्ष तक व्रत करे ॥५॥ षड़ानन कार्तिकेय सेनानी कृतिका सुत कुमार तथा स्कन्द इस प्रकार नामोच्चारण कर विष्णु की पूजा करे ॥६॥ व्रत के समाप्त होने पर ब्राह्मण को भोजन कराना चाहिये। स्कन्द की सुवर्णमय प्रतिमा बनाकर ब्राह्मण को देवे ॥७॥ प्रतिमा देते समय यह कहे कि हे कुमार! आपके प्रसाद से मेरे सब काम समृद्धि को प्राप्त हो जावें। हे विप्र! मैं इस स्कन्द प्रतिमा को भक्ति से दे रहा हूँ आप शीघ्र ग्रहण कीजिये ८॥ वस्त्र सहित यह प्रतिमा ब्राह्मण को देने मात्र से मनुष्य के इस जन्म में सब काम समृद्ध हो जाते हैं ॥६॥ अपुत्र को पुत्र प्राप्त होता है निर्धनी धन वाला हो जाता है। राज्य से भ्रष्ट राजा पुनः राज्य को प्राप्त कर लेता है इसमें कुछ सन्देह नहीं है ॥१०॥ हे राजन्! व्रत चर्या से राजा नल ने भी पहिले यह व्रत ऋतु पर्ण राजर्षी के निमित्त किया है ॥११॥ हे राजन्! तथा पौराणिक अन्य अनेक राज्य भ्रष्ट राजाओं ने भी कार्य सिद्धि के लिये यह व्रत किया है इति श्री वाराह पुराणे अगस्त्य गीतासु काम व्रतम् नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम् एक सप्ततमो अध्याय ॥६१॥

अथ: बासठवाँऽध्यायः

दोहा — आरोग्य व्रत विधि कहूँ, इस बासठ अध्याय।
रोग मिटे सब सप्तमी, भास्कर माथ नवाय॥

अथः आरोग्य व्रतम्— अगस्त्य ने कहा— हे महाराज!

अब दूसरा आरोग्य व्रत कहता हूँ जो कि परम पुण्यदायक, तथा पापों के नाश करने वाला है ॥१॥ आदित्य भास्कर, रवि, भानु सूर्य, दिवाकर, प्रभाकर आदि कह पूजन करके व्रत करे ॥२॥ षष्टी दिन भोजन करके सप्तमी के दिन निराहार रह सूर्य की पूजा करे तथा अष्टमी के दिन पारण करे। यही विधि का कर्म है ॥३॥ इस विधि से जो एक सम्वत्सर तक सूर्य का पूजन करे उसको इस जन्म में धन धान्य तथा आरोग्यता प्राप्त होती है ॥४॥ और मरकर शुभ स्थान मिलता है जहां के गये वापिस नहीं आते हैं। पहिले अनरण्य नाम का महा बलवान एक चक्रवर्ती राजा था उसने इस व्रत को कर सूर्य का पूजन किया है। व्रत के प्रभाव से प्रसन्न होकर भगवान् ने इस राजा को उत्तम आरोग्यता दी है ॥५॥६॥ भद्राश्व ने कहा— क्या यह राजा रोगी था जिससे आरोग्यता को प्राप्त हुआ है। हे ब्रह्मन्! चक्रवर्ती को किस प्रकार रोगोत्पत्ति हो सकती है ॥७॥ अगस्त्य ने कहा— वह चक्रवर्ती राजा था तथा स्वरूप वाला महा यशस्वी था। हे महाराज! वह राजा देवगणों से सेवित दिव्यमान सरोवर में गया, वहीं उस राजा ने सरोवर के बीच में एक सफेद कमल देखा, और उस कमल में दो भुजा धारण किये लाल वस्त्र पहिने प्रखर तेज वाला अंगुष्ट गात्र पुरुष श्रेष्ठ को देखा ॥७॥८॥९॥१०॥ उसको देख राजा ने अपने सार्थी से कहा कि इस कमल को मेरे लिये ले आइये इस कमल को मैं सबके सामने धारण करूंगा तो श्लाघनीय हो जाऊंगा अतः शीघ्र ले आइये, विलम्ब न कीजियेगा राजा के इस प्रकार कहने

पर सार्थी ने सरोवर में प्रवेश किया ॥११॥१२॥ हे राजन् ! उस सार्थी ने सरोवर में प्रवेश करके कमल ग्रहण करने को उद्यत हुआ फिर कमल के स्पर्श करते ही कमल से हुंकार शब्द हुआ ॥१३॥ उस हुंकार शब्द से सार्थी डर कर मर गया और राजा उस हुंकार शब्द से शीघ्र बल पराक्रम से रहित हो कुरूप कुष्ट रोग ग्रस्त हो गया । राज ने अपने को कुरूप देख यह क्या हुआ ? यह सोचता विचारता शोकार्त हो वहीं पर स्थित रहा । उस राजा के चिन्ता करने पर कुछ समय पश्चात् बुद्धिमान महातपा ब्रह्म पुत्र वशिष्ठ वहां आकर राजा को पूछने लगा कि हे राजा शार्दूल तेरा यह शरीर ऐसा निवर्ण कैसे हुआ है ॥१४॥ ॥१५॥१६॥१७॥ इस समय में तेरा क्या उपकार करूं सब समाचार मुझे सुनाइये । वशिष्ठ के इस प्रकार पूछने पर राजा ने कमल निकालने के सब समाचार कहे हे राजन ! राजा के वचन सुनकर वशिष्ठ ऋषि ने कहा कि हे राजन तूने असाधु कर्म किया है इसी लिये तू कुष्टी हुआ है । वशिष्ठ के ऐसा कहने पर राजा काँपता हुआ हाथ जोड़कर वशिष्ठ ऋषि से पूछने लगा कि हे ब्रह्मन् ! साधु होता हुआ मैं असाधु कैसे हुआ हूँ । तथा मुझे कुष्ट रोग कैसे हुआ है । यह भली भांति बताइये ॥१८॥१६॥२०॥२१॥ वशिष्ठ ने कहा– यह त्रैलोक्य विख्यात् ब्रह्म उत्पत्ति नाम का कमल है । इसके देखने मात्र ही से सब देवता देखे जाते हैं ॥२२॥ और इस कमल में कहीं पर षण्मास देखा जाता है इसके देखने पर जो जल में प्रवेश करता है वह सब पापों से मुक्त हो कर परम निर्वाण को प्राप्त होता है । ब्रह्मा की पहिली अवस्था की मूर्ति जल में व्यवस्थित है ॥२३॥२४॥ जल में प्रवेश कर इस मूर्ति को देखकर मनुष्य संसार के बन्धन से छूट जाता है । इसको देख कर तेरे सार्थी ने जल में प्रवेश किया है तथा जल में प्रवेश

कर कमल तोड़ने की इच्छा की है, अतः सार्थी मर गया है। और दुर्बुद्धि पापी तू कुष्ट रोग ग्रस्त हुआ है ॥२५॥२६॥ तूने जो इसका दर्शन किया है अतः साधु है और जो मोह को प्राप्त हुआ है उससे असाधु है ॥२७॥ ब्रह्म पुत्र वशिष्ठ ऐसा कहकर अन्तर्धान हो गये राजा भी वशिष्ठ के वचन सुनकर सर्वदा उस सरोवर के पास आकर उन भगवान् तथा कमल का दर्शन पूजन करने लगा। फिर आरोग्यता को प्राप्त हुआ है। यह देवता भी कहते हैं कि सुवर्णमय ब्रह्म कमल तथा उसमें स्थित हरि को देखकर हम ऐसे परम ब्रह्म को प्राप्त होंगे कि जहां के गये वापिस नहीं आते हैं ॥२८॥२९॥३०॥ हे राजन्! कुष्टी होने का यह दूसरा कारण भी सुनिये, उस कमल में स्वयम् पद्म गर्भ आदित्य व्यवस्थित थे उनको देख राजा ने यथार्थ में जान लिया कि यह शाश्वत परमात्मा है, इसको सिर में धारण करूंगा तो मेरी ख्याति हो जायगी। इस भाव को लेकर राजा ने अपना सार्थी भेजा, सार्थी एक दम मर गया, और राजा कुष्टी हुआ ॥३१॥३२। ३३ हे राजेन्द्र अतः आप भी इस व्रत को करिये, इस व्रत के प्रभाव से कुष्ट रोग भी छूट जाता है ॥३४॥ इति वाराह पुराणे अगस्त्य गीतासु आरोग्य व्रतम् नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम् द्विषष्टीतमोऽध्याय ॥६२॥

अथः तिरेसठवाँऽध्यायः

दोहा:— पुत्र प्राप्ति व्रत कहें, त्रेसटवें अध्याय।
भाद्रपद कृष्ण अष्टमी, हरि को शीश नवाय॥

अथः पुत्र प्राप्तिव्रतम्— अगस्त्य ने कहा— हे महाराज! भद्राश्व अब में संक्षेप से पुत्र प्राप्त व्रत कहता हूं आप सुनिये भाद्रपद कृष्णाष्टमी के दिन पुत्र प्राप्त व्रत किया जाता है ॥१॥ ॥२॥ सप्तमी के दिन संकल्प करके अष्टमी के दिन हरि भगवान की पूजा करे। माताओं से वेष्टित देवकी के गोद में बैठे हुये

विष्णु भगवान् की पूजा करे ॥३॥ अष्टमी प्रातःकाल शुद्ध हो सावधानता से हरि की पूजा- विधि विधान से करनी चाहिये। हरि की पूजा करके जौ तथा काले तिल, घृत, दधि से हवन करे। फिर भक्ति पूर्वक यथा शक्ति ब्राह्मणों को भोजन करवाकर दक्षिणा देवे ॥४॥५॥ फिर अपने आप भी उत्तम बिल्व का भोजन करे। तदनन्तर सर्व रस युक्त स्नेहादि संयुक्त यथेष्ट भोजन करे। ॥६। प्रतिमास इस ही विधि से व्रत करना चाहिये कृष्णाष्टमी का विधि विधान से व्रत उपवास करने से अपुत्र भी पुत्रवान हो जाता है ॥७॥ ऐसा सुना जाता है कि प्रसिद्ध एक प्रतापी शूरसेन राजा अपुत्र था। उसने हिमालय पर्वत पर पुत्र प्रास्थर्थ तप किया। उसके तप करने पर भगवान् ने उसे यही व्रत बतलाया भगवान् के कहनानुसार शूरसेन ने यही व्रत किया तथा व्रत करते से व्रत यज्ञादिक प्रेमी महा भाग्यशाली वसुदेव नाम का पुत्र प्राप्त किया वसुदेव नामक पुत्र को प्राप्त कर शूरसेन राजा परम निर्वाण को प्राप्त हुआ है ॥८॥६॥१० हे राजन्! इस प्रकार कृष्णाष्टमी व्रत मैंने तुझे कह दिया है। सम्पन्न नर

अथः— सौर्य्य व्रतम्— अगस्त्य ने कहा— अब उत्तम शौर्य व्रत कहता हूँ जिसके करने से भीरु भी तत्त्वण बड़ा पराक्रमी हो जाता है ॥१॥ अश्विन्य महीने में शुद्ध नवमी के दिन पारण करे । सप्तमी के दिन संकल्प करके अष्टमी दिन निरादेन यानी भात या भोजन न खाकर नवमी दिन प्रथम भक्ति पूर्वक पिष्टान भोजन करे ॥२॥ ब्राह्मणों को भोजन खिलावे तथा महामाया, महाप्रभा, महाभागा, दुर्गा देवी की पूजा करे ॥३॥ इसी प्रकार सम्वतसर तक व्रत करे । व्रतान्त में कुमारी पूजन करे भोजन खिलावे ॥४॥ तथा हमें वस्त्रादियों से कुमारियों को विभूषित कर उनसे क्षमा प्रार्थना करे कि दुर्गा देवी मेरे ऊपर प्रसन्न हो जावे ॥५॥ इस प्रकार व्रत करने पर राज्य से भ्रष्ट राजा भी पुनः राज्य प्राप्त कर लेता है। अविद्य विद्या प्राप्त करता है, भय भीत पराक्रम को प्राप्त करता है ॥६॥ इति श्री वाराह पुराणे अगस्त्य गीतासु शौर्य व्रतम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् चतुः षष्टितमोऽध्याय ॥६४॥

अथः पैंसठवाँऽध्यायः

दोहाः— पैंसठवें अध्याय में, व्रत सार्व भौम एक ।
कार्तिक सिता दशमी दिन, दिगवलि देवे अनेक ॥

अथः सार्व भौम व्रतम्— अगस्त्य ने कहा— अब संक्षेप से सार्व भौम व्रत कहता हूँ जिसके करने से राजा तत्त्वण सार्व भोम हो जाता है। कार्तिक महीने की शुक्ल पक्ष की दशमी के दिन व्रत करके रात्रि को भोजन करे। दिशाओं को वलि देवे ॥१॥२॥ भक्ति पूर्वक विचित्र फूलों से श्रेष्ठ ब्राह्मणों की पूजा करे तथा निम्नोक्त मन्त्र से दिशाओं की प्रार्थना करे ॥३॥ हे दिशाओ ! आप सब मेरे जन्म जन्म में सिद्धि को प्राप्त होवें। ऐसा कहकर शुद्ध चित्त से दिशाओं को वलि देवे ॥४॥ फिर रात्रि में पहिले सुसंस्कृत दध्यन्न खावे, तदनन्तर यथेष्ट भोजन करे

सी प्रकार एक सम्वत्सर तक व्रत करता रहे। जो इस प्रकार
नियत चित्त से हमेशा इस व्रत को करता है वह मनुष्य दिग्
विजयी होता है ।।६।। मार्गशीर्ष शुक्ल पक्ष की एकादशी दिन
निराहार रह कुबेर का व्रत करे, पूर्वोक्त विधि से एक वर्ष तक यह
व्रत करे तो कुबेर प्रसन्न हो कर इस पुरुष को धन दौलत देता
है ।।७।। शुक्ल तथा कृष्ण एकादशी के दिन निराहार रहकर जो
द्वादशी पारण करता है वह महत् पुण्यदायक वैष्णव व्रत कहा
है ।।८।। इस प्रकार व्रत करने से घोर पाप भी नष्ट हो जाते हैं।
त्रयोदशी के दिन भी राज्याहार कर धर्म व्रत करे ।।६।। फाल्गुन
शुक्ल चतुर्दशी से लेकर रौद्र व्रत करना आवश्यक है तथा
फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी को विशेष करके रौद्र व्रत करना चाहिये
।।१०।। माघ मास से लेकर पूर्ण सम्वत्सर तक पूर्णिमा व्रत करे
रात में रात में भोजन करे। हे राजन्। तथा अमावस्या के दिन
पितृ व्रत करना चाहिये ।।११।। हे नृप जो इस प्रकार पन्द्रह वर्ष
एक तिथि व्रत करता है उसको उतना ही फल प्राप्त होता है
।।१२।। जिसने ये व्रत कर लिये हैं उसने हजारों अश्वमेध यज्ञ,
हजारों राजसूय यज्ञ, कर लिये समझो ।।१३।। एक ही व्रत करने
से सारे पाप नष्ट हो जाते हैं। और जो सारे ही तिथि व्रतों को
करता है वह शुद्ध विराज लोक को प्राप्त होता है ।।१४।।१५।।
इति श्री वाराह पुराणे अगस्त्य गीतासु सार्व भौम व्रतम् नाम
काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् पञ्च षष्टीतमोऽध्याय ।।६५।।

रूप यही जनार्दन भगवान हैं उसके विविध अनेक आश्चर्य दे
जाते हैं ॥२॥ हे पार्थिव ! पहिले एक समय श्वेत द्वीप में नार
मुनि पहुँचा, वहां उसने प्रखर कान्ति वाले शङ्ख, चक्र, गद
पद्म, धारण किये अनेक पुरुष देखे। उनको देखकर नारद
चिन्ता हुई कि यह विष्णु ! यह विष्णु !! यह विष्णु !
सनातन इसमें विष्णु कौन है ॥३॥४॥ इस प्रकार सोचते हु
नारद को कृष्ण के प्रति चिन्ता हुई कि हे प्रभो ! शंख, च
गदाधर कृष्ण की किस प्रकार आराधना करूं ॥५॥ जिस
कि परमदेव कृष्ण नारायण को जानूं । इस प्रकार सोच क
परमेश्वर देव का ध्यान करने लगा ॥६। तब ब्रह्म सुत नार
ने दिव्य हजार वर्ष तक ध्यान किया, और ध्यान करने से भगवा
प्रसन्न हुये ॥७॥ भगवान् ने प्रत्यक्ष दर्शन देकर नारद से कह
कि हे ब्रह्म सुत अपना अभिलषित वर कह जो कि मैं तुझे
॥८॥ नारद ने कहा हे भुवनेश्वर ! मैंने एक हजार वर्ष तक आपक
ध्यान किया है हे अच्युत ! यदि आप मेरे ऊपर प्रसन्न हैं त
वह उपाय बताइये जिससे आपकी प्राप्ति हो ॥६॥ देव देव
कहा हे द्विज जो पौरुष सूक्त से या संहिता पाठ से मेरा यज
करते हैं वह शीघ्र मुझे प्राप्त होते हैं ॥११॥ ब्राह्मण, क्षत्रिय
वैश्यों को पांच रात्र विधान कहा है तथा शूद्रों को मेरे
पदवी गमन कहा गया है ॥१२॥ शूद्रों के लिये मेरा नाम कीर्तन ह
कहा गया है । शूद्र अन्य पूजादिक न करे । हे विप्रेन्द्र! पहिले
कल्प में यह पुरातन पांचरात्र मैंने ही कहा है ॥१३॥ यदि हजार
में कोई इस पांच रात्र को ग्रहण करे कर्मक्षय में मेरा भक्त होगा
उसके हृदय में नित्य पांचरात्र वास करेगा । और मुझे प्राप्त होगा
अन्य राजस, तामस, भावों से युक्त मेरे शासन पराङ्मुख होंगे
हे नारद कृत त्रेता द्वापर तीन युग हैं ।

उनमें सतोगुणी मुझे प्राप्त होते हैं कलियुग में तमोगुण, रजोगुण विशिष्ट होते हैं। उनमें भी सतोगुण प्रधान यदि कोई होवे तो मुझे प्राप्त कर लेता है। हे नारद इस समय एक और वरदान तुझे देता हूँ ॥१४॥१५॥१६॥१७॥ जो यह मेरा परम दुर्लभ पंचरात्र शास्त्र है, वह मेरे प्रसाद से सम्पूर्ण आपको प्राप्त हो जायगा। यानी उसको आप जान लेंगे ॥१८॥ हे द्विज! भक्ति पूर्वक वेद पंचरात्र यज्ञ से मैं शीघ्र प्राप्य हूँ ॥१६॥ वह भगवान् इस प्रकार नारद को कह शीघ्र अदर्शन हो गये तथा नारद भी स्वर्ग को गया ॥२०॥ इति श्री वाराह पुराणे अगस्त्य गीतासु नारद पुराणार्थ सूचनम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् षट्षष्टीतमोऽध्यायः ॥६६॥

अथः सड़सटवाँऽध्यायः

दोहाः— सड़सटवें अध्याय में, विष्णवाश्चर्य बखान।
भद्राश्व ने पूछा सब, भगवत् रूप महान॥

अथ विष्णवाश्चर्यम्— भद्राश्व ने कहा– हे भगवन्! जगत् में सिता तथा कृष्णा जो दो स्त्री हुई हैं वे दो सिता तथा कृष्णा कौन हैं ॥१॥ और कौन यह पावक पुरुष सात प्रकार का हुआ है। तथा हे विप्र! यह बारह प्रकार का द्विदेह छः सिर वाला कौन है ॥२॥ हे द्विज श्रेष्ठ! सूर्य्य- चन्द्रोदय से किसका दाम्पत्य कहा गया है। हे द्विज सत्तम! यह संसार किस प्रकार विस्तृत हुआ है ॥३॥ अगस्त्य ने कहा जो सिता, कृष्णा, स्त्री कही गई हैं वे आपस में भगिनी हैं। सिता कृष्णा दो वर्ण की स्त्री रात्रियों को कहा है ॥४॥ हे नरेश्वर! जो एक होकर सात प्रकार से कहा है, वह समुद्र है। सात प्रकार से न एक प्रकार से व्यवस्थित रहता है ॥५॥ तथा जो बारह प्रकार का द्विदेह षट्शिरा कहा है वह सम्वत्सर है। दो अयन ही उसके दो शरीर हैं ॥६॥

छः ऋतु 'सम्वत्सर के छः वक्र कहे हैं। और सूर्य चन्द्रोदय से जिनका दाम्पत्य कहा है वे दिन और रात हैं ॥७॥ तब इन भगवान् ही से संसार हुआ है। हे नृप ! सत्तम ! वह परम देव विष्णु भगवान जानने चाहिये। वेद क्रिया हीन होने से परमेश्वर नहीं देखे जाते हैं ॥८॥९॥ इति वाराह पुराणे अगस्त्य गीतासु विष्णवाश्चर्यम् नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम् सप्तषष्टीतमोऽध्याय ॥६७।

अथः अड़सठवाँऽध्याय

दोहाः— इस अड़सठ अध्याय में, प्रागिति हास महान ।
अगस्त्य ने वर्णन किये, अघ निस्तार महान ॥

अथ– प्रागिति हास वर्णनम्— भद्राश्व ने कहा– जो ये सर्वगत परमात्मा व्यवस्थित हैं वह चतुर्युग में किस प्रकार जानना चाहिये ॥१॥ हे मुने ! वर्णों का युग युग में कैसा आचार हुआ करता है। ब्राह्मणों की अन्य स्त्री शंकर होने पर किस प्रकार शुद्धि होती है ॥२॥ अगस्त्य ने कहा कृतयुग में देवताओं से वेद कर्म से पृथ्वी युक्त रहती है। तथा त्रेता में भी देवताओं का यज्ञ करते हुये देवताओं से पृथ्वी सुशोभित रहती है द्वापर में सत्व रज वहुत रहता है जब तक कि धर्म सुत युधिष्ठर राजा होगा। ॥३॥४॥ हे नरेश्वर ! तब कलिरूप अन्धकार होगा। उस कलियुग के आने पर द्विज अपने मार्ग से भृष्ट हो जायँगे ॥५॥ तथा कलियुग में सत्य शौच रहित वैश्य शूद्र आदि हीन जाति के राजा होंगे ॥६॥ तब लोक नष्ट होगा, वर्ण धर्म नष्ट हो जायगा। भद्राश्व ने कहा– अगम्यागमन करके ब्राह्मण और क्षत्रिय तथा शूद्र किस प्रकार शुद्ध होते हैं। तथा अगस्त्य किसको कहते हैं।

अगस्त्य ने कहा– ब्राह्मण चतुर्गामी होवे, क्षत्रि त्रिगामी होवे ॥७॥८॥ वैश्य द्विगामी होवे, शूद्र एक गामी होवे। हे नरेश्वर ! क्षत्रिय के लिये ब्राह्मणादि अगम्य है ॥६॥ वैश्य के लिये क्षत्रिया अगम्य है। शूद्र के लिये वैश्या अगम्या है। अधम के लिये उत्तम वर्ण की भार्या अगम्य है। यह मनु में कहा है ॥१०॥ माता, मात्रिश्वसा, श्वश्रू, भ्रातृ, पत्नी अधम को उत्तम नारी यत्न से त्यागिनी चाहिये ॥११॥ स्नुषा, दुहिता, मित्र, पत्नी स्वमात्रिजा, सुत, स्त्री यह सर्वदा अगम्य कही हैं यह यत्न से परिवर्जनीय हैं ॥११॥ और रजस्यादियों में अन्य स्त्री अगम्य कही हैं, यानी रजस्वला आदि भी अगम्य हैं। यह अगम्या-गमन पाप के लिये होता है ॥१३॥ वियोनिगमन से ब्राह्मण के लिये पाप शीघ्र पर्याप्त हो जाता है। शेष पाप की अशुद्धि सौ प्राणायाम करने से मिट जाती है ॥१४॥ बहुत समय से भी जो पाप वर्ण शंकर संगति से ब्राह्मण ने समुपार्जित किये हैं, वह तीन सौ प्राणायाम तथा दश प्रणव गायत्री से ब्रह्म हत्या भी दूर हो जाती है। तो अन्य पापों की क्या कथा है। अर्थात् सारे पाप नष्ट हो जाते हैं ॥१५॥१६। जो श्रेष्ठ ब्राह्मण पर रूप भगवान की ध्यानादि से पूजा जानता। है, या करवाता है, वह कदापि पापों से लिप्त नहीं होता है ॥१७॥ वेदाध्यायी सैकड़ों पाप करने पर भी पापों से लिप्त नहीं होता, विष्णु का स्मरण करते वेद पढ़ते दान देते हरि का यजन करते हुये ब्राह्मण शुद्ध ही हैं तथा विरुद्ध को भी तार लेते हैं। हे नृप ! जो तूने पूछा वह सब बता दिया है ॥१८॥१६॥ हे पार्थिव ! जो मन्वादियों ने विस्तार से कहा वह मैंने आपको संक्षेप से कह दिया है ॥२८॥ इति वाराह पुराणे पृगित हासे नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् अष्टषष्टितमोऽध्यायः ॥६८॥

अथः उनहत्तरवांऽध्याय

दोहाः— उनहत्तर अध्याय में, इक आश्चर्य महान ।
इलावृत्त में अगस्त्त ने, देख्यो समय महान ॥

अथः नारायणश्चर्यम्— भद्राश्व ने कहा— हे भगवन्! द्विज श्रेष्ठ ! आपके शरीर में जो वृत्त है उसको आप चिरजीवी है अतः मुझे सुनाइये ॥१॥ अगस्त्य ने कहा— हे राजन ! मेरा यह शरीर वेद विद्या युक्त अनेक कल्प स्थाथि तथा बहुत कौतुहलान्वित है। ॥२॥ हे पार्थिव ! एक समय में सारी पृथ्वी घूमता हुआ सुमेरु के पार्श्व में व्यवस्थित इलावृत नाम महा वर्ष में गया था, वहां मैंने रमणीय सरोवर देखा और उस सरोवर के तीर पर ऋषि की बड़ी भारी कुटिया देखी, तथा उस कुटिया में उप वासादि करने से शिथिल शरीर वाला एक तापस देखा ॥३॥४॥ उस तापस के शरीर में कठिन तप करमें से हड्डि और चमड़ा ही शेष रह गया था। उसके वल्कल धारण किये थे। हे नृप ! श्रेष्ठ ! उस तापस को देख मैंने अपने मन में विचारा कि यह कौन तापस श्रेष्ठ है फिर विश्वास किया कि यह कोई श्रेष्ठ तपस्वी है। तदनन्तर दृढ़ विस्वास के लिये मैंने उस तापससे कहा कि हे ब्रह्मन् ! मैं आप के पास आया हूँ। मुझे कुछ दीजिये ॥५॥ ॥६॥ मेरे इस प्रकार कहने पर उसने कहा हे द्विजोत्तम ! आपका स्वागत हो हे ब्रह्मन ! ठहरिये ठहरिये मैं आपका स्वागत करता हूँ ॥७॥ उस तापस की इस प्रकार कोमल वाणी सुनकर मैंने उस कुटिया में प्रवेश किया, तथा वहां तेज से देदीप्यमान विप्र तामस को देखा ॥८॥ पृथ्वी में बैठे हुये मुझको देखकर उस द्विज तापस ने हुँकार शब्द किया उस हुँकार शब्द से पाताल को फोड़

पांच कन्या निकलीं उनमें एक सोने की पीठ लिये हुई थी, तभी दूसरी कन्या ने हाथ में रक्खा हुआ जल मुझे दिया तीसरी मेरे पैर पकड़ कर धोने लगी अन्य दो कन्यायें व्यञ्जन ग्रहण कर मेरे दोनों तरफ से खड़ी हो गईं ।६॥१०॥११॥ फिर भी उस महातपा ने हुँकार शब्द किया, उस हुंकार शब्द से योजन विस्तार वाली हेम द्रोणी ग्रहण किये आकर सरोवर में उस द्रोणी को नौका स्वरूप रख लिया, और उस नौका स्वरूप उस द्रोणी में हेम कलश धारण किये सैकड़ों कन्यायें आईं हे नृप तदनन्तर तापस के हेम द्रोणी तथा कन्यायें आई हुई देख मुझे कहा कि हे ब्रह्मन् ! यह सब आपके स्नानार्थ रचा है ॥१२॥१३॥१४॥ हे सत्तम ! आप इस द्रोणी में प्रवेश करके स्नान कीजिये । हे नराधिप भद्राश्व ! तब मैं उस तापस के कथनानुसार जभी उस द्रोणी में प्रवेश करता था, तभी वह द्रोणी सरोवर में डूब गई मैं भी द्रोणी के साथ ही जल में डूब गया । और डूब कर वह तापस तथा वह पुर उस जल में देखा, और तभी वह सुमेर के मस्तक पर आत्मा से अपनी आत्मा को देखने लगा, सात समुद्र सात कुल पर्वतों, को देखने लगा ।१५॥१६॥१७॥ तथा सप्त द्वीप वती पृथ्वी देखी हे सुव्रत ! इस श्रेष्ठ लोक का आज तक भी में ध्यान करते रहता हूँ जो कि जल में डूब कर देखा था ॥१८॥ कब उस श्रेष्ठ लोक को प्राप्त करूंगा, इस प्रकार मुझे चिन्ता हुई है । हे राजन् उस प्रकार जो मेरे देह में परमेष्ठी का जो कौतुक वृत्त था वह तुझे सुना दिया है । और क्या सुनना चाहता है ।॥१६॥ इति श्री वाराह पुराणे नारायणाश्चर्य कथनम् नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम् एकोन-सप्ततमोऽध्याय ॥६९॥

अथः सत्तरवोंऽध्यायः

दोहा:— त्रिदेवन मह कौन बड़ा, सत्तरहु अध्याय।
अगस्त्य के पूछने पर, रुद्र अभेद बताय॥

अथः कृत त्रेता द्वापरादि विषयाः— भद्राश्व ने कहा हे भगवन्! उस लोक को देख उसके प्राप्त्यार्थ आपने व्रत तप वा धर्म क्या किया है॥१॥ अगस्त्य ने कहा- भक्ति पूर्वक हरि की आराधना किये विना श्रेष्ठ लोकों की इच्छा करना व्यर्थ है। और हरि की आराधना करके लोक करतल में स्थित होते हैं॥२॥ हे राजेन्द्र इस प्रकार विचार कर मैंने भूरि दक्षिणा वाले यज्ञों से सैकड़ों वर्षों तक सनातन विष्णु भगवान् की आराधना की है॥३॥ हे नृप नन्दन! तब बहुत समय से यज्ञ मूर्ति जनार्दन भगवान का यजन करते समय कदाचित विलोय हुये इन्द्र सहित देवता मेरे पास आये और आकर सारे ही अपने अपने यथायोग्य स्थानों पर स्थित हुये।४॥५॥ तभी वहीं पर भगवान् वृषध्वज महादेव विरूपाक्ष त्र्यम्बक नील लोहितादि नाम धारी आये॥६॥ वह परमेश्वर भी अपने रौद्र स्थान पर स्थित हुये। उन सब देव ऋषि महोरगों को आये देख, ब्रह्म पुत्र भगवान् सनत्कुमार आये वह त्रसुरेणु परिमाण वाले सूर्य समान देदीप्यमान विमान में भूत भविष्य जानने वाले महा योगी सनत् कुमार आकर रुद्र को सिर से नमस्कार करने लगा॥७॥८॥९॥ देवताओं को नारदादि ऋषियों को तथा सनत् कुमार को रुद्र को संस्थित देखकर मैंने यह कहा कि, इन आप में से कौन याज्य हैं, तथा कौन वशिष्ठ हैं। मेरे इस प्रकार कहने पर देवताओं के सामने महादेव याज्य मुझसे कहने लगे॥१०॥११॥ रुद्र ने कहा- सारे देवता अमल देवर्षि तथा विख्यात ब्रह्मर्षि मेरे वचन को सुनिये॥१२॥

हे अगस्त्त ! तुम भी मेरे वचन को सुनिये जिस देव का यज्ञों से यजन किया जाता है। जिससे यह सारा संसार हुआ है उत्पन्न होकर जो संसार देवताओं सहित जिसमें लीन होता है, वही प्रधान देव सर्व रूप जनार्दन है ॥१३॥१४॥ उस भगवान् परमेश्वर ने अपने को तीन प्रकार से रचा। रजोगुण तमोगुण से युक्त हुआ, रजोगुण सत्व गुण अधिक भगवान ने नाभि कमल से कमलासन ब्रह्मा उत्पन्न किया। रजोगुण तमोगुण से युक्त होकर उस विभु ने मुझ रुद्र को उत्पन्न किया ॥१५॥१६॥ जो सत्व है, वही हरि देव है जो हरि है, वही परम पद है। जो सत्व गुण रजोगुण है, वही कमलसन ब्रह्मा है जो ब्रह्मा है, वही देव है। जो देव है, वही चतुर्मुख ब्रह्मा है। जो रजोगुण तमोगुण से युक्त है वही मैं रुद्र हूँ। इसमें सन्देह नहीं है १७॥ ॥१८॥ सत्व, रज, तम यह त्रिक कहा जाता । सत्व से जन्तु मुक्त होता है सत्व नारायणात्मक है ॥१९॥ सत्व युक्त रज से रजोधिक सृष्टि होती है। वह पैतामह वृत्त सब शास्त्रों में पढ़ा जाता है ॥२०॥ जो वेत बाह्य कर्म शास्त्र उद्देश्य से सेवन किया जाता है। वह रौद्र विख्यात् है। वह मनुष्यों के लिये नेष्ट है ॥२१॥ यद्वा रज से रहित जो केवल तामस कर्म है, वह मनुष्यों के लिये इस लोक पर लोक में दुर्गति परक है। ॥२२॥ सत्व से जन्तु मुक्त होता है, सत्व नारायणात्मक है, और भगवान् नारायण यज्ञ रूपी कहे जाते हैं ॥२३॥ कृत युग में शुद्ध स्वरूप नारायण की उपासना की जाती है। त्रेता में यज्ञ रूप से, द्वापर में पांचरात्र से, नारायण की उपासना की जाती है। ॥२४॥ तथा कलियुग में मेरे से किये हुये तामस मार्ग से, द्वेष बुद्धि से, वह परमात्मा जनार्दन पूजे जाते हैं ॥२५॥ उससे प्रधान देव न होने वाला है और न होगा। जो विष्णु है वही ब्रह्मा है, जो ब्रह्मा है वही परमेश्वर है ॥२६॥ वेदत्रय में तथा यज्ञ में पण्डितों में यही

निश्चय है। हे द्विज सत्तम ! जो हम तीनों में भेद करता है, व
पापकारी दुष्ट आत्मा दुर्गति को प्राप्त होता है। हे अगस्त्य
तथा प्राक्तन वृत भी मुझसे सुनिये ॥२७॥२८॥ जिस प्रकार f
मनुष्य कल्प में हरि की भक्ति नहीं करते हैं। भूलोंक वासि पहि
जनार्दन का यजन करके केशव को प्राप्त हुये, भगवान व
आराधना कर स्वर्ग गति को गये। क्रम से निचले स्थानों व
छोड़ सारे ही ऊपर ऊपर के स्थानों में जाने लगे ॥२६॥३०
इस प्रकार सर्व लोकों से मुक्ति मार्ग व्याप्त हो गया, तब मुनि
पद्मा रूद्र सारे देवता प्रयत चित्त से हरि का ध्यान करने ल
॥३१॥ वह हरि भगवान भी सर्व गति होने से एक दम प्र
होकर कहने लगे कि ,हे योगिवर देवताओ कहिये, आपका क
कार्य है ॥३२॥ वह योगिवर देवता भगवान को प्रणाम कर
कहने लगे कि हे देवों के देव सारे ही लोग मुक्ति मार्ग
व्यवस्थित हो रहे हैं ॥३३॥ अब सृष्टि किस प्रकार होगी त
नरकों में कौन निवास करेगा। उनके ऐसा कहने पर जनार्द
भगवान उनसे कहने लगे ॥३४॥ तीन युगों में बहुत मानव
पास आयेंगे और अन्य युग में विरले ही पुरुष मेरे आश्र
वाले होंगे ॥३५। वह मोह रचता हूँ, जिससे पुरुष मोह को प्र
हो जायेंगे। हे रुद्र ! तू मोह शास्त्रों की रचना कर अल्प परिश्र
दिखाकर शीघ्र सबको मोहित कर दे तब भगवान ने ऐसा क
कर अपनी आत्मा छिपा दी, और मुझ रुद्र को प्रकटित कि
उस समय से लेकर मेरे रचे शास्त्रों में लोक बाहुल्य से अभि
लोलुप होता है। अतः ये वेदानुवर्ति मार्ग को तथा नाराय
देव को एकी भाव से देखते हुये मुक्त होते हैं। और जो मु
रुद्र तथा विष्णु ब्रह्मा में भेद मानते हैं, वे पाप कर्मा नरक ज
हैं ॥३६॥३७॥३८॥३९॥४०॥

जो वेद मार्ग निर्मुक्त हैं उनके मोहन के लिये नय सिद्धान्त संज्ञा से मैंने शास्त्र रचा है। वह पशु भाव तो पास है जबकि वह पतित होवे, तब पारत्रपत शास्त्र वेद संज्ञित होता है। हे विप्र! अन्य शास्त्रार्थ वादियों से मैं वेद मूर्ति नहीं हूँ ॥४१॥४२॥४३॥ देव को छोड़ मेरा स्वरूप अनादिवत् जाना जाता है। हे विप्रर्षे मैं वेद वेद्य हूं। विशेषतः ब्राह्मणों से वेद्य हूं ॥४४॥ तीन युग, मैं हूं ब्रह्मा विष्णु मैं ही हूं, सत्वादि तीन गुण मैं ही हूं, तीन वेद भी मैं ही हूं तीन अग्नि मैं ही हूं ॥४५॥ तीन लोक, तीन संध्या, तीन वर्ण, तीन सवन मैं ही हूं तीन प्रकार से बंधा गया यह जगत् मेरा ही शरीर है॥४७॥ जो इस प्रकार पर नारायण को अपर ब्रह्मा को, तथा मुझको जानता है। वह मुक्त होता है। गुण से मुख्य से मैं एक ही हूं। जो अलग अलग कहें वह मोह है ॥४७॥ इति वाराह पुराणे रुद्र गीतासु कृत त्रेता, द्वापर वृत्त वर्णनम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् सप्ततितमोऽध्याय ॥७०॥

अथः इकहत्तरवाँऽध्यायः

दोहा:— इकहत्तर अध्याय में, कहरो हिये महेश।
देख शिवहु पूजन लगे, मोह शास्त्र अवलेश॥

अथः कलियुगीया विषयाः— अगस्त्य ने कहा— हे नृपते! शिव ने जब इस प्रकार देवता, ऋषि, तथा मुझको, ऐसा कहा तो मैं झुककर प्रणाम करने लगा॥१॥ शिव को सिर से नमस्कार कर जभी देखता था, तभी उसी रुद्र के देह में कमलासन ब्रह्मा तथा त्रसुरेणु समान सूक्ष्म ज्वलद् भास्कर वर्ण समान कान्ति वाले नारायण दिखाई दिये॥२॥३॥ उनको देख सारे याजक ऋषि विस्मित हो, जय जय शब्द तथा साम, ऋग्यजु, वेद ध्वनि करने लगे ॥४॥

जयकार ध्वनि कर उन परमेश्वर रुद्र देव से कहने लगे कि हे महेश ! यह क्या एक ही आपकी मूर्ति में तीनों मूर्ति दीख रही हैं ॥५॥ रुद्र ने कहा– हे महर्षियो ! मेरे उद्देश्य से यज्ञ में जो हवि दी जाती है उसको हम तीनों विभक्त कर ग्रहण करते हैं ॥६॥ हे मुनि सत्तम वृन्द ! हम में अलग अलग भेद भाव नहीं है। सम्यक् दृष्टि वाले विपरीतों में अनेकशः भेद भाव देखते हैं ॥७॥ हे नृप ! रुद्र के ऐसा कहने पर वे सारे ही मुनि जन महादेव शंकर से मोह शास्त्र का प्रयोजन पूछने लगे ॥८॥ ऋषियों ने कहा– हे देव लोकों के मोहनार्थ आपने जो पृथक शास्त्र रचा है, वह किस हेतु से रचा, सो कहिये ॥६॥ रुद्र ने कहा– भारतवर्ष में एक दण्डक वन है, उसमें गौतम मुनि ने घोर तपस्या की है, तीव्र तप करने से गौतम ऋषि के ऊपर प्रसन्न होकर ब्रह्मा कहने लगा– हे तपोधन वरदान मांगिये ॥१०॥११॥ लोक कर्ता ब्रह्मा के इस प्रकार कहने पर गौतम ने कहा– हे भगवन् ! मुझे धान्यों की संगत सस्य पंक्ति रूपी वरदान दीजिये ॥१२॥ गौतम के इस प्रकार वर मांगने पर पितामह ने उसको वही सस्य पंक्ति का वरदान दिया। उस वर को प्राप्त कर शत शृंग दण्डकारण्य के आश्रम ने गौतम धान वपन किये। उषा काल में पके हुये धानों को मुनि लोग काटते थे। और गौतम मुनि उन कटे धानों का मध्याह्न समय में भोजन पकाता था ॥१३॥१४॥ यह गौतम मुनि सर्वा तिथ्य कर उन धानों का भोजन ब्राह्मणों को खिलाता था। तदनन्तर कदाचित् बारह वर्ष की बड़ी भारी लोम हर्षिणी अनावृष्टि हुई उस अनावृष्टि को देख सारे वनेचर मुनि भूख से पीड़ित होकर गौतम के पास गये, उनको आये देख गौतम ने सिर से नमस्कार किया ॥१५॥१६॥१७॥ और कहने लगा, हे मुनिवरात्मजा ! मेरे घर में निवास करिये। गौतम के इस प्रकार कहने पर

वे मुनिजन जब तक अनावृष्टि निवृति नहीं हुई तब तक विविध प्रकार के भोजन करते हुये, गौतम के आश्रम में ही स्थित रहे। और उस अनावृष्टि के निवृत होने पर वे मुनि जन तीर्थ यात्रा की अभिलाषा करने लगे ॥१८॥१६॥२०॥ उस समय मुनि श्रेष्ठ शांडिल्य, तापस को मारीच मुनि विचार पूर्वक कहने लगा। मारीच ने कहा– हे शांडिल्य ! तेरा पिता गौतम मुनि अवश्य क्रोध करेगा। अतः उसको पूछे बिना हम तप करने तपोवन में नहीं जाते हैं। मारीच के ऐसा कहने पर सारे ही मुनि जन हंसकर कहने लगे कि क्या हमने अन्न खाने से अपना शरीर बेच लिया है। इस प्रकार कह कर गमन के प्रति सोपाधि कहने लगे ॥२१॥२२॥२३॥ मायामयी गाय को रचकर उस गौतम की गौशाला में छोड़ दी, तदनन्दर शाला में चरती उस मायामयी गाय को देखकर गौतम मुनि ने हाथ में जल ग्रहण कर "प्राणि-रुद्रेति" इस प्रकार कहा। तब वह मायामयी गाय जल बिन्दु समान पृथ्वी पर गिर पड़ी। तब मरी पड़ी मायामयी गाय को तथा जाते हुये मुनियों को देख गौतम मुनि उन मुनियों को प्रणाम पूर्वक कहने लगा ॥२४॥२५॥२६। हे मुनि ब्राह्मणो शीघ्र कहिये कि मुझ भक्त तथा नम्र को छोड़कर आप लोग क्यों जा रहे हैं ॥२७॥ मुनि ब्राह्मण कहने लगे हे ब्रह्मन् ! यह गौ हत्या जब तक आपके शरीर में है तब तक हम आपके घर का अन्न नहीं खायेंगे ॥२८॥ उनके इस प्रकार कहने पर धर्म वित् गौतम मुनि ने कहा– हे तपोधनो ! गौ वध का प्रायश्चित मुझे बताइये ॥२६॥ उन्होंने कहा– हे ब्रह्मन् यह गौ मरी नहीं बल्कि मूर्छित के समान स्थित है। गंगाजल से आप्लु त होने पर यह गाय निश्चत अवश्य उठ जायगी ॥३६॥ प्रायश्चित मरी हुई का होता है। और जो अमृता है उसके लिये तो यही उपाय है।

गंगाजल लाने का प्रण कीजिये। इस प्रकार कह कर वे मुनि गण चले गये ॥३१॥ उनके चले जाने पर बुद्धिमान गौतम मुनि, तप करने तथा आराधना करने की इच्छा से गिरिराज हिमालय में गया॥३२॥ तथा सौ वर्ष तक उसने मुझ रुद्र की आराधना की है। फिर मैंने प्रसन्न होकर गौतम को कहा कि वरदान मांग ॥३३॥ उसने कहा हे भगवन्! अपनी जटा से धारण की हुई तपस्विनी गंगा मुझे दीजिये। यह पुण्य भागीरथी मेरे साथ चली चले ॥३४॥ गौतम के ऐसा कहने पर मैंने एक जटा खंड से उसे दी है। उसको ग्रहण कर जहां गायें मरी पड़ी थीं, गौतम वहीं गया ॥३५। उस जल से प्लावित होकर वह गायें चली गईं। और पुण्य तोय तथा पवित्र ह्रद वाली नदी वृद्धि को प्राप्त हुई ॥३६॥ उस महदाश्चर्य को देख अमल सप्तर्षि साधु साधु कहते विमान में स्थित होकर वहां आये ॥३७॥ हे गौतम! तू साधुओं से भी साधु है। तेरे समान और कौन हो सकता है। जिसने कि यह जाह्नवी गगा दण्डकारण्य में पहुँचाई है ॥३८॥ उन ऋषियों के ऐसा कहने पर गौतम ने विचारा कि यह क्या हुआ तभी गौतम ने जान लिया कि, यह गौ हत्या निवारण शिवजी ने की है। तथा सोच विचार कर जान लिया कि, ऋषियों ने माया से ही यह सब मिथ्या गौ हत्या मेरे ऊपर लगायी है। अतः उन मिथ्या जटा भस्म तथा व्रत धारण करने वाले ऋषियों को शाप दिया कि, ये ऋषि गण वेद कर्म से वहिस्कृत वेदत्रयी से बाह्म होंगे, महा मुनि के इस प्रकार क्रूर वचन सुनकर, सप्तर्षि कहने लगे कि हे द्विजोत्तम! यह आपका शाप सर्व कालिक न होवे, किन्तु आपका वाक्य वृथा न होगा ॥३९॥४०॥४१॥४२॥ यदि कलियुग में ब्राह्मण अपकारो होंगे

तो उनके लिये यह शाप उपकार स्वरूप हो जायगा, इस प्रकार शाप से अभिसप्त होने पर भी वे द्विजोत्तम कलियुग में भक्ति को भजने वाले होंगे, आपके वाक्य रूपी अग्नि से निर्दग्ध ब्राह्मण कलियुग में सर्वदा क्रिया हीन, और वेद कर्म वहिस्कृत होंगे, और इस नदि का गौड़ नाम गोदावरी होगा ॥४३॥४४॥ ॥४५॥ कलियुग में जो मनुष्य इस गोदावरी में आयकर गाय दान करेंगे, और यथा शक्ति अन्न दान भी करेंगे, वह स्वर्ग में देवताओं के साथ विहार करेंगे ॥४६॥ और सिंह के वृहस्पति में जो गोदावरी में जायगा, तथा स्नान कर पितरों को तर्पण देगा, उसके नरक में गये हुये पितर भी स्वर्ग को चले जायेंगे। और स्वर्ग में स्थित पितर निसन्देह मुक्त हो जायेंगे ॥४७ ॥४८॥ हे गौतम ! तू बड़ी भारी ख्याति को प्राप्त होकर शास्वत मुक्ति को प्राप्त होगा। इस प्रकार कह वे ऋषि गण कैलाश पर्वत पर चले गये ॥४९॥ हे अगस्त्य ! जिस कैलाश में मैं हमेशा उमा के साथ रहता हूं, वहां आय कर वे ब्राह्मण होने वाले मुनि गण मुझसे कहने लगे ॥५०॥ हे भगवन् ! कलियुग में सारे ही जटा मुकुट धारण कर रुद्र रूप हो स्वेच्छा से प्रेत भेष वाले मिथ्या चिह्न धारण करने वाले होवेंगे। अतः उनके अनुग्रह के लिये कोई शास्त्र प्रदान कीजिये, जिनको हमारे वंश में पैद हुये कलियुग से पीड़ित होकर सेवन करें ॥५१॥५२॥ हे अगस्त्य ! पहिले इस प्रकार उनके मेरी प्रार्थना करने पर मैंने वेद क्रिया युक्त एक संहिता बनाई ॥५३॥ तब मेरी बनाई हुई उस विश्वास संहिता में बाभ्रव्य शांडिल लीन हुये, अल्पा पराध सुनकर ही वे गये और दांभिक हुये ॥५४॥ भविष्य ज्ञाता मेरे ही से मोहित होकर लौल्यार्थी द्विज नर अपने शास्त्रों को रचेंगे ॥५५॥ निश्वास संहिता का लक्ष मात्र प्रमाण है।

वही पशुपति दीक्षा है । तथा पशुपति का योग है ॥५६॥ इस वेद मार्ग से जो अन्य है वह शौच विवर्जित भयंकर वा रुद्र सम्बन्धी क्षुद्र कर्म जानना चाहिये ॥५७॥ कलियुग में जो वेदान्ती बनकर रुद्र से अजीविका करते हैं, वे मनुष्य लोलुपार्थी सो कलियुग में अपने शास्त्र रचेंगे ॥५८॥ वे उच्छुसम रुद्र जानने चाहिये । मैं उनमें व्यवस्थित नहीं हूँ देवकार्य में जब पहिले भैरव स्वरूप से मैं नाचा था, क्रूर कर्म वालों का वही यह सम्बन्ध है । दैत्यों का नाश करते समय मैंने जो अट्टहास किया था उस समय जो अश्रु विन्दु पृथ्वी पर गिरे थे, वही असंख्यक रौद्र पृथ्वी में होंगे ॥५९॥६०॥ पृथ्वी में उच्छुसम निरत सर्वदा सुरा मांश प्रिय स्त्री लोल पाप कर्मा रौद्र हुये हैं ६१॥६२॥ गौतम शाप से उन्हीं के वंश में वे द्विज होंगे । उनमें जो मेरे शासन में रत होंगे तथा सदाचारी होगे उसको स्वर्ग अपवर्ग का भेद बतलाकर मेरी संतति दूषक वेदान्तिकों का अधिपतन होगा ॥६३॥६४॥ पहिले गौतम के शाप से फिर मेरे वचन से दग्ध द्विज अवश्य नरक को प्राप्त होंगे ॥६५॥ रुद्र ने कहा मेरे इस प्रकार कहने पर ब्रह्मपुत्र सप्तर्षि वापिस चले गये । तथा गौतम भी अपने घर को गया ॥६६॥ हे ऋषि मुनियो ! यह धर्म का लक्षण मैंने तुमसे कह दिया है, इससे विपरीत जो होगा वह पाखण्ड रत होगा ॥६७ इति श्री वाराह पुराणे रुद्र गीतासु ब्राह्मणानाम शापोनाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम् एक सप्ततितमोऽध्याय ॥७१॥

अथः बहत्तरवांऽध्याय

दोहाः— बहत्तरह अध्याय में, अगस्त्य पूछी बात ।
तीन देव मंह कौन कब, प्रधान पूजे जात ॥

अथः– प्रकृति पुरुष निर्णय— वाराह ने कहा– सर्वज्ञ सर्व कर्तार, भव, रुद्र को, प्रणाम कर अगस्त्य पूछने लगा ॥१॥ अगस्त्य ने कहा– आप रुद्र, ब्रह्मा, तथा विष्णु यह तीनों का त्रिक किस काल में प्रधान हैं, किस काल में अधोक्षज प्रधान है, किस काल में ब्रह्मा प्रधान है, हे देव त्रिलोचन ! यह आप मुझे बताइये ॥२॥३॥ रुद्र ने कहा– वेद सिद्धान्त मार्गों में परम ब्रह्म विष्णु का ही त्रिभेद कहा जाता है। यह बात मोहित मनुष्य नहीं जानते हैं ।४॥ विप्र प्रवेश ने धातु से स्नुप्रत्यय होने से जो विष्णु पद है वही सब देवों में प्रधान देव सनातन है ॥५॥ तथा जो विष्णु दश भेद और एक भेद से कहा जाता है । हे महाभाग! वह योगेश्वर्य्य समन्वित आदित्य है ॥६॥ जो परमेश्वर सर्वदा देव कार्य करता है। वही विष्णु मनुष्य भाव को प्राप्त होकर युग युग में मेरी स्तुति करता है ॥७॥ लोक मार्ग प्रवृत्यर्थ तथा देव कार्य सिद्धि के लिये मैं कृत युग में हमेशा श्वेत द्वीप में उनकी स्तुति करता हूँ ॥८॥ शृष्टि काल चतुर्मुख की स्तुति करता हूँ तथा काल स्वरूप होता हूं ब्रह्मा देव सुरों से युक्त हो कृतयुग में हमेशा मेरी स्तुति करता है ॥६। भोग चाहने वाले देवता लिंग मूर्ति रूप मेरा यजन करते हैं । तथा मोक्ष चाहने वाले लोग जिस सहस्र शीर्षक देव का यजन करते हैं वह विश्वात्मा स्वयम् नारायण देव हैं। हे अगस्त्य ! जो ब्रह्म यज्ञ से नित्य यजन करते हैं वे ब्रह्मा को प्रसन्न करते हैं क्योंकि वेद ब्रह्मा कहा गया है। नारायण शिव विष्णु शंकर पुरुषोत्तम इनमें नामों से परम ब्रह्म सनातन कहा है ॥१०॥११॥१२॥ हे विप्र ! कर्म युजों के लिये ब्रह्मा विष्णु महेश्वर हम तीनों ही मन्त्र आदि हैं इसमें विचार करना चाहिये।

में विष्णु तथा वेद और ब्रह्म कर्म भी यह तीन एक ही हैं। विद्वान इनमें भेद न समझे, जो पक्षपात से भेद मानते हैं। हे सुव्रत अगस्त्य ! वह घोर नरक जाते हैं उसी से पुरुष पापी होते हैं। मैं ब्रह्मा, विष्णु, ऋग्युज, साम उसी से इनमें भेद कहा गय है तथा सब में भेद कहा है। ॥१३॥१४।१५॥१६॥ इति श्री वाराह पुराणे प्रकृति पुरुष निर्णये काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् द्विसप्ततिमोऽध्याय ॥७२॥

अथः तेहत्तरवाँऽध्याय

दोहाः— ब्रह्मा आज्ञा पाय शिव, प्रजा रचन के हेतु।
जल डूबि वैराज स्तव, करि हरि से वर लेत ॥

अथः वैराज वृत्तम— रुद्र ने कहा- हे द्विज श्रेष्ठ मुनि पुङ्गव ! सलिल में डूब कर जो बहु कौतुहलान्वित, अभूत पूर्व दृश्य, मैंने देखा है उसे सुनिये। पहिले ब्रह्मा ने मुझे रचकर मुझसे कहा कि, प्रजा की रचना कर, हे द्विज ! ब्रह्मा के इस प्रकार कहने पर पूजा रचने को असमर्थ हो मैं जल डूबा हूँ। ॥१॥२॥ उस जल में पूयत मन से अंगुष्ठ मात्र पुरुष परमेश्वर का ध्यान करते जभी क्षण भर ठहरा था, पूलयाग्नि के समान क्रान्ति वाले दश तथा एक पुरुष अपनी क्रान्ति से जल को तपाते हुये जल से निकले ॥३॥४॥ मैंने उनको पूछा कि आप कौन हैं और कहां जाओगे जो कि आप लोग जल से निकल कर इस जल को तपा रहे हैं सो कहिये ॥५॥ हे द्विज श्रेष्ठ ! मेरे इस प्रकार कहने पर वे कुछ न कहकर चुपचाप ही चले गये ॥६॥ तब उनके पश्चात् मेघ कान्ति वाला पुण्डरीक समान नेत्र वाला अतीव मनोहर महा पुरुष उस जल में दिखाई दिया ॥७॥ मैंने उसको पूछा कि तू कौन है तथा ये जो पहिले गये हैं वे कौन थे हे पुरुषर्षभ ! कहिये कि आपका क्या प्रयोजन है ॥८॥ महा पुरुष ने कहा- ये जो दीप्त तेज वाले पुरुष पहिले गये हैं। वे

आदित्य शीघ्र जा रहे हैं। ब्रह्मा के ध्यान से वे पैदा हुये हैं ॥६॥ ब्रह्मा सृष्टी रच रहा है अतः उस सृष्टी पालनार्थ ये नर निसन्देह जा रहे हैं ॥१०॥ सम्भु ने कहा– हे भगवन्! महा पुरुष चेष्ट को किस प्रकार जानूं। भव इस नाम से सब कहिये, निश्चय से मैं पर हूँ ॥११। रुद्र के इस प्रकार कहने पर वह पुरुष बोला मैं जलशायी सनातन नारायण देव हूँ ॥१२॥ तेरे दिव्य चक्षु करता हूँ सावधानता से मुझे देख, उस पुरुष के ऐसा कहने पर जभी में उसे देखना चाहता था तभी क्या देखता हूँ ज्वलद् भास्कर समान तेज वाला, अङ्गुष्ट मात्र उसी नारायण पुरुष को देखता हूँ और उसकी नाभि में कमल, तथा उस कमल में ब्रह्मा को देखता हूँ और ब्रह्मा के समीप अपने आपको भी देखता हूं इस प्रकार उस महापुरुष को देख मैं हर्ष को प्राप्त हुआ ॥१३॥ ॥१४॥१५॥ हे द्विज शार्दूल! तथा उस पुरुष की स्तुति करने की मेरी बुद्धि उद्यत हुई। मेरी स्तुति करने वाली बुद्धि होने पर तप. से कर्मों को स्मरण करने पर मैंने उस पुरुष की किस स्तोत्र से स्तुति की है ॥१६॥ ७॥ रुद्र ने कहा अनन्त के लिये, विसुद्ध चैतस के लिये, सरूप रूप के लिये सहस्र बाहु के लिये, सहस्र रश्मि श्रेष्ठ के लिये, विशाल देह के लिये, वेधस के लिये, विबुध कर्मा के लिये, नमस्कार हो ॥१८॥ समस्त विश्व का दुख दूर करने वाले को, शम्भु को, सहस्र सूर्याग्नि के समान तिग्म तेज वाले को, समस्त विद्या धारण करने वाले को, चक्र धारी को, समस्त देवताओं से नमस्कृत भगवान् को सर्वदा नमस्कार करता हूँ ॥१६॥ हे आदि देव! हे अच्युत! हे शेष शेखर! हे प्रभो! हे विभो! हे भूत पते! हे महेश्वर! हे मरुत्पते! हे सर्व पते! हे जगत्पते! हे भुव पते! आपको सर्वदा नमस्कार करता हूं ॥२०॥ हे जलेश! हे नारायण! हे विश्व की भलाई करने वाले! हे क्षितीश! हे विश्वेश्वर! हे विश्व लोचन! हे संशाक रूप

हे सूर्य रूप ! हे अच्युत ! हे वीर ! हे विश्वग ! हे प्रतर्क्य मूर्ते ! हे अमृत मूर्ती अव्यय ! आपको नमस्कार करता हूं ॥२१॥ हे ज्वलदग्नि की अर्चा से विरुद्ध मण्डल ! हे विश्वतोमुख नारायण रक्षा कीजिये ॥२२॥ हे विभो ! मैं आपके अनेक वक्त्र देख रहा है, मध्यस्तगत पुराण ईश जगत् का उत्पत्ति स्थान ब्रह्मा को देख रहा हूं तथा अपने आपको देख रहा हूं, आपके लिये तथा पितामह के लिये नमस्कार करता हूं ॥२३॥ हे देव, वरादि देव ज्ञान से विशुद्ध सत युक्त सन्मार्ग वाले लोग अनेक संसार चक्र क्रमाणों से अर्थात् अनेक जन्मान्तरों तक आपकी उपासना करते रहते हैं। मैं आपको क्या प्रमाण कर र्‌हा हूं ॥२४॥ हे आदि देव जो आपको प्रकृति से परे जानता है। अथवा जो सर्व वित् आदि देव जानता है। हे भगवन उनमें बलात्कार गुणों का भेद नहीं करना चाहिये। क्योंकि आप विशाल मूर्ति होकर भी सूक्ष्म से सूक्ष्म मूर्ति हो ॥२५॥ आप वाक् योनि वाले होकर भी यानी निराकार होकर भी विगतेन्द्रिय नहीं हो। विक्रम भाव से विगतेक्‌कर्मा नहीं हो, आप संसार वाले हो परन्तु तादृश संसरण शील हहीं हो विशुद्ध भावों से आपका परम वपु है ॥२६॥ संसार से विच्छित्ति करने वाले, याने संसार से पार चाहने वाले, याज्ञिक आखिर आप चतुर्भुज को ही जानते हैं। प्रधान रूप को नहीं जानते हैं। क्योंकि आपके अद्भुत कारण वाले स्वरूप को देवता भी नहीं जानते हैं ॥२७॥ अतः ब्रह्मा आदि आपके अवतारोक्त पुराण तनु की आराधना करते हैं। महानुभाव सृष्टि रचने वाला कमल योनि भी निश्चय से आपके प्रधान रूप को नहीं जानता है ॥२८॥ परन्तु तप से विशुद्ध होकर मैं आपके कवि पुराण, आद्य, विशुद्ध तनु को जानता हूं। चेतः प्रसूति में पुराण बार-बार मेरा जनक प्रसिद्ध पद्मासन ब्रह्मा बतलाते हैं ॥२९॥ हे नाथ ! तपस्या से हीन मुझ सरीखे भी आपको नहीं जानते हैं

तपस्या से श्रेष्ठता को प्राप्त हुये ब्रह्मादियों से भी अबोध्य आपको देव रूप सम्यक् अनन्त प्रमाणों द्वारा आपको जानना चाहते हैं। परन्तु ज्ञान हीन होने से उन उदर कीर्ति वालों में भी बुद्धि का प्रकर्ष ज्ञान नहीं होता है। हे नाथ! क्योंकि बुद्धि तो जन्मान्तरों में वेद वेत्ताओं के विवेक से तथा आपके प्रसाद से होती है। ॥३०॥३१॥ आपका लाभ होने से मानुषत्व नहीं होता, देव गन्धर्व गति नहीं होती है। बल्कि शिव कल्याण होता है। तू विश्व रूप है, तथा सूक्ष्म से सूक्ष्म है। स्थूल स्वरूप है। हे आद्य आपका लाभ ही यह कृत कृत्यता है ॥३२॥ आप स्थूल हो, आप सुसूक्ष्म हो, सुलभ हो हे भगवन्! आपकी वाह्य वृत्ति मे नर नरक में गिरते हैं। समरूप धारण करने वाले आत्म स्वरूप वितत स्वभाव नाथ स्वरूप आपके स्थित होने पर जल सहित वर्स्वक मरुत, मही, आदि सत्वों से क्या कहा जाता क्या प्रयोजन है। हे अनन्त! विशेष करके मुझ भक्त की यह स्तुति स्वीकार कीजिये ।३३॥३४। हे विष्णो! आपके लिये नमस्कार है। सृष्टि रचने को जो कहा है, अतः आप सर्वज्ञता दीजिये। चार या करोड़ों मुख वाला यदि कोई विशुद्ध चेता नर हो, अरु वह अनेक अयुत वर्षों से मेरे गुणों को कहिये, तब देववर प्रसन्न हो जाइये। सम स्वभाव तथा विशुद्ध भाव वाले आप वियुक्त तथा विशुद्ध भाव वाले सेवक के हृदय में स्थित रहते हो। आपको नमस्कार हो, आप स्वर्ग हो, आपकी प्रथक व्यवस्था नहीं होती है। हे ईश! आपको सर्वगत जानकर मैंने यह प्रकटता से स्तुति की है ॥३५॥ ॥३६॥३७॥ हे अच्युत आप केवल संसार चक्र क्रमण रूप भीति से रक्षा कीजिये॥३८॥ वाराह ने कहा—अमित तेजा रुद्र ने जब इस प्रकार भगवान् की स्तुति की तब भगवान प्रसन्न हो मेघ गम्भीर वाणी

से बोले ॥३६॥ विष्णु ने कहा– हे देवों के देव ! हे उमापते ! आपका कल्याण हो वरदान मांगिये हे देव हममें भेद नहीं है, हम दोनों एक ही हैं और अलग अलग भी हैं ॥४०। रुद्र ने ने कहा– हे प्रभो ! ब्रह्मा से प्रजा रचने के हेतु मैं नियुक्त किया हूं हे भूत भावन ! उस प्रजा रचने में आप मुझे त्रिविध ज्ञान दीजिये ॥४१॥ विष्णु ने कहा– तू निसन्देह सर्वज्ञ होगा, ज्ञान राशि होगा, सनातन होगा और देवताओं में परम पूज्य होगा ॥४२॥ विष्णु के ऐसा कहने पर उमापति फिर कहने लगे हे देव ! अन्य वरदान भी दीजिये, जिससे कि मैं सब जन्तुओं में प्रसिद्ध हो जाउं । हे केशव ! मूर्ति स्वरूप होकर यानी साकार होकर आप ही मेरी आराधना कीजिये मुझे धारण कर मुझसे वरदान ग्रहण कीजिये जिससे कि आप सब देवताओं में पूज्य से पूज्यतर होवेंगे ॥४३॥४४॥ विष्णु ने कहा– देव कार्य के लिये मानुष अवतार लेकर मैं आपकी आरधना करूंगा, और आप मुझे वरदान देना ॥४५॥ हे उमापते ! जो आपने कहा कि धारण करो वह मैं मेघ होकर सौ वर्ष तक आपको धारण करता हूं ॥४६॥ इस प्रकाक वह स्वयम् हरि भगवान् मेघ बनकर महादेव को जल से ऊपर लाकर कहने लगे ॥४७॥ हे प्रभो ! ये जो दश तथा एक प्राकृत पुरुष हैं, वह आदित्य संज्ञा वाले वैराज पृथ्वी पर आये हैं ॥४८॥ हे शंकर तथा बारहवाँ जो मेरा अंस पृथ्वी पर आयेगा, वह विष्णु आपकी आराधना करेगा ॥४६॥ ऐसा कह अपने अंस से दिव्य मेघ रचकर नारायण शब्द के समान न मालूम कहां लीन हुआ ॥५०॥ रुद्र ने कहा– इस प्रकार पहिले भूत भावन सर्वज्ञ हरि ने मुझे व[illegible]न दिया है। अतः मैं देवताओं में श्रेष्ठ हूं ॥५१॥ नाराय[illegible] के समान अन्य कोई प्रधान देव न हुआ, और न होगा। हे [illegible]त्तम ! यह वेद पुराणों का रहस्य मैंने सब सुना दिया है, जिससे कि विष्णु पूज्य

है ॥५२॥५२॥ इति वाराह पुराणे आदि कृत वृतान्ते रुद्र गीतासु वैराज व्रतम् नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम त्रिसप्ततितमोऽध्यायः ॥७३॥

अथः चौहत्तरवाँऽध्याय

दोहाः— चौहत्तर अध्याय में, प्रिय व्रत कुल महान ।
सदा शिव वरणें सब, भवन कोष परिमान ॥

अथः भुवन कोष वर्णनम्— वाराह ने कहा– फिर वे सारे ऋषि गण, उस सनातन पुराण पुरुष, शाश्वत, क्रतु, अव्यय विश्वरूप, अज, शम्भु त्रिनेत्र, शूलपाणि आदि नाम वाले रुद्र को पूछने लगे कि हे सुरेश्वर ! आप हमारे तथा सब देवों के प्रधान देव हैं । अतः आपको एक प्रश्न पूछते हैं कि भूमि का प्रमाण तथा संस्थान पर्वतों का विस्तार वर्णन कीजिये ॥१॥२॥३॥ हे देवों के देव उमापते ! कृपा पूर्वक हमें यह बात सुनाइये । रुद्र ने कहा– सब पुराणों में भूलोक का वर्णन किया जाता है । अतः इस समय आप लोगों को संक्षेप से भूगोल का वर्णन सुनाता हूं आप लोग सावधानता से सुनिये ॥४॥५॥ जो वह सकल विद्या वबोधित परम आत्मा रूपी विगत कल्मष, परमाणु रूप अचिन्त्य आत्मा नारायण सकल लोक व्यापी पीताम्बर धारी उरु वक्ष तथा क्षितिधर आदि नामों से सूचित किया जाता है उस अप्रव अदीर्घ अहस्व अकृप अलोहितादि उपलक्षित विज्ञान मात्र रूप अप्रकार भगवान् ने सत्व रज तम से उद्दत होकर जल रचा जल को रचकर आदि पुरुष परमेश्वर नारायण सकल जगन्मय सर्वमय देवमय यज्ञमय आपोमय आपोमूर्ति भगवान् योग निद्रा से सो गये । योग निद्रा से सोये हुये भगवान् की नाभि से कमल निकला उस कमल में सकल वेद निधि अचिन्त्यात्मा परमेश्वर प्रजापति ब्रह्मा हुआ । उस ब्रह्मा ने सनक सनन्दन सनातन सनत् कुमारादि ज्ञान धर्मियों को पहिले रचा । फिर स्वायंभु व मनु को रचा, और मरीच्यादि दक्षान्त

ऋषि रचे, जो स्वायंभुव मनु ब्रह्मा ने रचा है । उस स्वायंभुव से ही भुवन का अति विस्तार वर्णन किया जाता है उस स्वायंभुव के प्रियव्रत और उत्तानपाद दो लड़के हुये ।।६।। प्रियव्रत के दश पुत्र हुये आग्नीध्र, अग्निबाहु, मेध, मेधातिथि। ध्रुव ज्योतिष्मान द्युतिमान हव्य वपुष्म सवन नाम वाले। फिर प्रियव्रत ने सात पुत्रों को सात द्वीपों का राज्य दिया, उनमें अग्नीध्र को जम्बू द्वीप का राज्य दिया मेधातिथि को शाक द्वीप का राज्य दिया ज्योतिष्मान को शाल्मली द्वीप का राज्य दिया द्युतिमान को क्रौंच द्वीप का राज्य दिया हव्य को गोमेद द्वीप का राज्य दिया वपुस्मान को प्लक्ष द्वीप का राज्य दिया सवन को पुष्कर द्वीप का राज्य दिया पुष्कर द्वीपाधिपति सवन के दो पुत्र महावीति, घातक नाम से उत्पन्न हुये उनके नाम से ही पुष्कर द्वीप के दो खण्ड प्रचलित हुये हैं घातक का घातकी खण्ड, कुमुद का कौमुद खंड हुआ है । शाल्मली द्वीपेश्वर ज्योतिष्मान के भी कुश वैद्युत जीमूत वाहन नाम वाले तीन पुत्र हुये । उन तीनों पुत्रों के नाम से ही शाल्मली द्वीप के तीन खंड प्रसिद्ध हुये हैं तथा द्युतिमान के सात पुत्र कुशल मनुगव्य पीवर अधृ अन्धकारक मुनि दुन्दुभि नाम से हुये हैं । इनके नामों से ही क्रौंच द्वीप में सात महादेश प्रचलित हैं ।।७।। कुश द्वीपेश्वर के भी सात पुत्र हुये उद्भिद, वेणुमान, रथ, पाल, मनस, धृति, प्रभाकर, कपिल । इनके नामों से ही इस द्वीप के सात खंड प्रचलित हुये । शाक द्वीपाधिपति के भी सात पुत्र हुये नाभि, शान्त, भय, शिशिर, सुखोद, मनन्द, शिव क्षेमक ध्रुव। इनके नामों से ही इस द्वीप के खंड भी प्रचलित के। जम्बू द्वीपेश्वर आग्नीध्र के नौ पुत्र हुये । नाभि किम्पुरुष हरिवर्ष इलावृत रम्यक हिरण्मय कुरु भद्राश्व केतुमाल । हिमालय के पास नाभि का अजनाभ खंड हुआ, हेमकूट पर्वत के पास किम्पुरुष खंड हुआ नैषध पर्वत के पास हरिवर्ष खंड हुआ

मेरुमध्य इलावृत खंड नील गिरि के पास रम्यक खंड श्वेत गिरि के पास हिरण्मय खंड शृंगवान् पर्वत के पास कुरु वर्ष खंड माल्यवान के पास भद्राश्व खंड गंधमादन के पास केतुमाल खंड हुआ। इस प्रकार स्वायम्भुव मन्वन्तर भुवन प्रतिष्ठा हुई। कल्प कल्प कल्प में इस प्रकार सात सात राजाओं से पृथ्वी की पालन व्यवस्था होती है। यह कल्प कल्पमें नित्य हुआ करती है ॥८॥ इसमें नाभि का सर्ग कहते हैं। नाभि ने मेरु देवी का ऋषभ नाम का पुत्र पैदा किया। ऋषभ के सौ पुत्र जिनमें ज्येष्ठ भरत था ऋषभ देव ने भरत को हिमालय का दक्षिण भाग भारत वर्ष का राज्य दिया। भरत का पुत्र सुमति हुआ। अपने पुत्र को राज्य देकर भरत भी तप करने जंगल में गया। सुमति का तैजस पुत्र हुआ। तैजस का सत्सुत हुआ उसका इन्द्रद्युम्न उसका परमेष्टी उसका प्रतिहर्त्ता उसका निखात पुत्र हुआ। निखात का उन्नेता उन्नेता का अभाव अभाव का उद्गाता उद्गाता का प्रस्तोता प्रस्तोता का विभु विभु का पृथू पृथू का अनन्त अनन्त का गय गय का नय नय का विराट विराट का महा वीर्य्य वीर्य्य का धीमान पुत्र हुआ ॥९॥ उसके सौ पुत्र हुये उन्हीं से यह प्रजा वृद्धि को प्राप्त हुई है। उन्हीं से भारत वर्ष सप्तद्वीप समाङ्कित हुआ है ॥१०॥ उनकी वंश प्रसूति से यह भूमि भोगी गई है। कृत त्रेतादि युक्ति से यानी इकहत्तर युग चौकड़ी तक एक मनु की सन्तान पृथ्वी का भोग करती है।।११॥ भुवन कथन प्रसंग से यह शुभ स्वायंभुव मन्वन्तर कहा है। अब और सुनिये ॥१२॥ इति वाराह पुराणे रुद्र गीतासु भुवन कोषे वर्णनम् नाम श्रीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् चतुः सप्ततितमोध्यायः ॥७४॥

अथ पिचहत्तरवाँऽध्याय

दोहाः— पिचहत्तर अध्याय में, जम्बू द्वीप महान् ।
वर्ष पर्वत सब कहें, सहित मान परिमान् ॥

अथः जम्बू द्वीप मेरु निरूपणम्— रुद्र ने कहा – इससे आगे जम्बू द्वीप का यथा तथ वर्णन, समुद्र की संख्या, तथा द्वीपों का विस्तार वर्णन करता हूँ ॥१॥ उन द्वीपों में जितने वर्ष हैं, तथा जितनी नदियां हैं, महा भूत प्रमाण सूर्य चन्द्र की गति पृथक पृथक वर्णन करता हूँ। ॥२॥ सात द्वीपों के अन्तरगत द्वीप हजारों हैं। उनका क्रमशः वर्णन करना कठिन है। जिन द्वीपों से कि यह जगत व्याप्त है ॥३॥ चन्द्र तथा आदित्यादि ग्रहों सहित सातों द्वीपों का वर्णन करता हूं, जिनका प्रमाण मनुष्य तर्क से कहते हैं ॥४॥ जो भाव अचिन्त्य है उनको तर्क से नहीं सिद्ध करना चाहिये। जो प्रकृति से परे हैं, वही अचिन्त्य कहे गये हैं ॥५॥ नौ खण्ड वाले जम्बू द्वीप मण्डल का विस्तार वर्णन करता हूं। तुम सुनिये ॥६॥ जम्बू द्वीप चारों तरफ से लक्ष योजन विस्तार वाला है। उस जम्बू द्वीप में अनेक योजन विस्तार वाले नाना प्रकार के मनोहर जनपद हैं ॥७॥ सिद्ध चारणों से व्याप्त सर्वधातु युक्त शिला जालों से उन्नत पर्वतों द्वारा जम्बू द्वीप सुशोभित है ॥८॥ तथा पर्वतों से निकली हुई नदियों से युक्त जम्बू द्वीप विस्तार युक्त है श्रीमान है। चारों तरफ से गोल है ॥९॥ नौ खण्डों से घिरा है। श्रीमान है। भूत भावन इस जम्बू द्वीप में स्थित है। और यह जम्बू द्वीप अपने से दुगुने परिमाण वाले चार समुद्र से घिरा हुआ है। तथा जम्बू द्वीप के ही परिमाण वाले छः वर्ष पर्वत पूर्व की ओर लम्बायमान हैं जो कि अपने किनारों से पूर्वी और पश्चिमी समुद्र को अवगाहित कर रहे हैं। यानी पूर्वी समुद्र से पश्चिमी समुद्र तक लम्बे हैं। हिमालय पर्वत हिम वाला है हेमकूट

सुवर्णमय है। निपद पर्वत सर्वत्र सुमुख है तथा सुमेरु पर्वत चतुर्वर्ण वाला कहा है ॥१०॥११॥१२॥१३॥ वृत्ताकृति प्रमाण वाला सुमेरु चौकोर खड़ा है। उसके चारों तरफ प्रजापति के गणों से युक्त नाना वर्ण है यह सुमेरु ब्रह्मा की नाभि मन्डल के समान है। इसके पूर्व की ओर श्वेत वर्ण है। अतः इसका ब्राह्मण्य देखा जाता है इसका दक्षिण भाग पीला है। अतः इसका वैश्यत्व जाना जाता है। और इसका पश्चिमी भाग भृंग पत्र समान काला है अतः इस सुमेरु की शूद्रता देखी जाती है। तथा इसका उत्तर भाग रक्त वर्ण है अतः इसका क्षत्र भाव कहा गया है। स्वभाव वर्ण और परिमाण से यह वृत्त कहा गया है ॥१४॥१५॥१६॥१७॥१८॥ नील पर्वत वैदूर्य मणि के रंग वाला है श्वेत गिरि शुक्ल वर्ण है। शृंगवान पर्वत हिरणमय मयूर पुछ समान वर्ण वाला है ।॥१९॥ यह पर्वत राज सिद्ध चारणों से सेवित है। इन पर्वतों में एक पर्वत से दूसरा पर्वत नौ हजार योजन दूर पर है। अर्थात् इनका अन्तर नौ हजार योजन है इन पर्वतों के मध्य में इलावृत्त खंड है। जिस इलावृत्त खंड के बीच में सुमेरू पर्वत है। उतने ही हजार योजनों से यह इलावृत्त सुमेरु के चारों तरफ से विस्तृत है। इस इलावृत्त खंड के बीच में महा मेरू सुमेरू धूम रहित अग्नि के समान शोभायमान दीखता है। मेरू से दक्षिण की ओर अर्द्ध वेदी दक्षिण है। तथा उत्तर की तरफ अर्द्ध वेदी उत्तर है। ॥२०॥२१॥२२॥ उत्तर तथा दक्षिण तरफ जो ये छः खंड है उनके यह छः पर्वत सीमा रूप हैं। भद्राश्व खंड केतुमाल खंड को छोड़कर सब खंडों का विस्तार नौ हजार योजन है। एक एक खन्ड में छोटे छोटे और भी हजारों पर्वत हैं। वर्षों के सीमा पर्वतों का विस्तार जम्बू द्वीप के बराबर है ॥२३ २४॥

नील गिरि तथा निषद गिरि एक लक्ष योजन विस्तार वाले हैं। तथा श्वेत गिरि हेमकूट हिमालय शृंगवान ये पर्वत निषद नील गिरि से कम विस्तार वाले हैं तथा जम्बू द्वीप प्रमाण लक्ष योजन निषद पर्वत है निषद से बारहवाँ हिस्सा कम हेमकूट है हेम कूट से बीसवें हिस्से कम हिमालय है आठ अंश से हिमालय पर्वत पूर्व पश्चिम की तरफ विस्तृत है। द्वीप के मण्डली भाव यानी गोल होने से परवतों में न्यूनाधिकता है ॥२५॥२६॥२७॥ ॥२८॥ जिस प्रकार सुमेरू के दक्षिण तरफ निषद हेम कूट तथा हिमालय पर्वत हैं एवम् प्रकार सुमेरू के उत्तर में नील श्वेत तथा शृंगवान पर्वत हैं उन सीमा पर्वतों के बीच में जनपद नगर हैं वही वर्ष यानी खन्ड कहे हैं वह वर्ष विषम पर्वतों से घिरे हैं तथा चारों तरफ से नदियो से व्याप्त हैं। अतः वे खंड आपस में अगम्य हैं अर्थात् एक खंड वाले दूसरे खंड में बड़े परिश्रम से पहुँच सकते हैं ॥२९॥३०॥ उन खंडों में अनेक जाति वाले जन्तु निवास करते हैं यह हिमालय के पास भारत वर्ष है। इस भारत वर्ष में भारतीसन्तान निवास करती है। हिमालय से परे हेम कूट पर्वत है उसके समीप किम्पुरुष खंड है हेमकूट से परे निषद पर्वत है जो कि हरि वर्ष खंड की सीमा रूप है हरि वर्ष से परे सुमेरु के पास इलावृत्त खंड है। इलावृत्त खंड से परे नील नाम पर्वत है उससे परे रम्यक खंड है। रम्यक खंड से परे श्वेत गिरि है तथा श्वेत गिरि के पर्ली तरफ हिरणमय खन्ड है। हिरणमय खन्ड से परे शृंगवान पर्वत है फिर कुरु खन्ड से ॥३१॥३२॥६३॥३४॥ सुमेरु से उत्तर में कुरू खन्ड तथा दक्षिण में भारत खन्ड धनुष के आकार वाले हैं। क्योंकि दीप के गोल होने से धनुषाकार हैं

इलावृत्त खण्ड चौकोर है। वेदिरूप जम्बू द्वीप का निपध पर्वत से इस तरफ दक्षिण हिस्सा है। तथा नील पर्वत से उधर उत्तर हिस्सा है। तीन खण्ड दक्षिण में हैं। और तीन खण्ड उत्तर में उनके बीच में इलावृत खण्ड है। जहाँ कि सुमेरु है विस्तार से चौतीस हजार योजन कहा गया है। सुमेरु से पश्चिम की ओर गन्ध मादन पर्वत है। तथा पूर्व में माल्यवान पर्वत है। यह दो हजार योजन चौड़े हैं। तथा उत्तर में नील गिरि दक्षिण में निपद गिरि से मिले हुये हैं। और भद्राश्व खण्ड, केतुमाल खन्ड के सीमा स्वरूप हैं। निपद हेमकूट हिमालय की ऊँचाई दश हजार योजन है। सुमेरू पर्वत स्वर्णमय है। वह सुमेरु चतुर्वर्ण युक्त है। चतुरस्र है जन आदि सारे अव्यक्त धातु उत्पन्न हुई हैं ॥३५॥३६॥३७॥३८॥३९॥४०॥ अव्यक्त पृथ्वी कमलाकार मालूम होती है। मेरु उस पृथ्वी कमल की कर्णिका है चतुस्पत्र, तथा पंच गुण महदव्यक्त प्रकट हुआ है। फिर सारी ही विस्तृत प्रवृतियां पैदा हुई हैं। अनेक कल्प तक रहने वाले पुण्य कारी कृतात्मा महात्माओं को पुरुषोत्तम भगवान् मिलते हैं। महायोगी महादेव जगध्येय जनार्दन सर्व लोकगत अनन्त पावक रूप अव्यय मूर्ति भगवान अनेक कल्प स्थायि पुन्यकारी महात्माओं को मिलते हैं। उनकी प्राकृति मूर्ति मांश, मेदा तथा हड्डियों से रहित है। ॥४१॥४२॥४३॥४४॥ योगि होने से ईश्वर होने से भगवान सर्व रूप धारण कर लेते हैं। तथा समर्थ हैं। अतएव उसी अर्थ के लिये लोक में सनातन पद्म हुआ है कल्पस्थायि इसकी यही गति है। उस पद्म में देवों के देव चतुर्मुख ब्रह्मा हुये हैं। ४५॥४६॥ जो कि प्रजापतियों के पति हैं, देव हैं, ईशान हैं, जगत् के प्रभु हैं उस कमल की बीज रचना यथार्थ ही है ॥४७॥ समग्र प्रजा की रचना से विस्ता पूर्वक वर्णन किया जाया है। यह जल विष्णु

का ही शरीर है। जिससे कि वह रत्न विभूषित हैं ॥४८॥ वन तथा तलावों सहित पृथ्वी कमल समान उत्पन्न हुई है उस लोक पद्म पृथ्वी का विस्तार सिद्धों से कहा गया है। उसको में विभाग पूर्वक वर्णन करता हूँ आप सुनिये इस द्वीप में चार महा वर्ण प्रसिद्ध हैं ॥४६॥५०॥ उनके बीच सुमेरु है वह चारों ओर से नाना वरण युक्त है पूर्व से श्वेत, दक्षिण से पीत, पश्चिम से भृंग वर्णा यानी काला और उत्तर भाग में रक्त वरण है ॥५१॥ ॥५२॥ पर्वत राजों के बीच में स्थित सुमेरु शुक्ल सुशोभित होता है। तथा तरुण सूर्य के समान और धूम रहित अग्नि के समान शोभा पाता है। चौरासि हजार योजन ऊँचा है सोलह हजार योजन पृथ्वी में गड़ा हुआ है। तथा सोलह हजार ही विस्तृत है ॥५३।५४। बारह हजार योजन मस्तक में विस्तृत है इसका चारों तरफ से परिणाह विस्तार तिगुना है। मन्डल के परिमाण से यह व्यश्यमान मालूम होता है। चारों तरफ से छयानवे हजार व्यश्यमान कहा गया है। चतुरस्रमान से इसका परिणाह चारों तरफ से है। यह सुमेरु पर्वत दिव्य है। तथा दिव्यो सधियों से युक्त है। स्वरणमय सुन्दर भवनों सेघिरा हुआ है ॥५५॥५६॥ ॥५७॥५८॥ उस शैलराज में सारे ही देवता, गंधर्व, उरग, राक्षस तथा अप्सराओं का समूह प्रसन्नता पूर्वक विहार तथा निवास करते हैं। वह मेरु भूत भावन के भवनों से घिरा है। सुमेरु के चारों तरफ चार महा देश हैं। उत्तर में कुरु, दक्षिण में भारतवर्ष पश्चिम में केतुमाल, पूर्व में भद्राश्व देश है। उस पद्म की कर्णिका चारों तरफ से परिमन्डल है। हजा योजनों के परिमाण से उसके केशर जाल चौदह कहे हैं। चौरासि हजार योजन ऊँचा सोलह हजार योजन विवर में छिपा सुमेरु है ॥५६॥६०॥६१॥६२॥

॥६३॥ और तीस हजार योजनों के परिमाण से उसके केशर, जाल चारों ओर फैले हैं ॥६४॥ लक्ष योजन विस्तार और अस्सि हजार योजन मोटे उसमें चार पर्व हैं, तथा चौदह हजार योजन परिमाण वाली जो मैंने प्रसिद्ध कर्णिका कही है, उसका मैं संक्षेप से वर्णन करता हूँ। आप लोग एकाग्रता से सुनिये ॥६५।६६। यह कर्णिका सैकड़ों मणियों से चित्रित है। अनेक वर्णों से देदीप्यमान है। अनेक पर्ण समूह से युक्त है। सुवर्ण समान अरुण कान्ति वाली है ॥६७॥ मनोहर सहस्र कन्दरा वाला सहस्र कमलों से सुशोभित एक श्रेष्ठ पर्वत है ॥६८॥ उसमें मणि रत्नों में रची गई शुभ्र मणियों से चित्रित वन्दरवार वाली ब्रह्मर्षि जनों से संकुल रमणीय ब्रह्म सभा है ॥६९। उस ब्रह्म सभा का नाम मनोवती है। जो कि सर्व लोकों में प्रसिद्ध है उस मनोवती नाम वाली ब्रह्म सभा में सर्वदा महा विमान संस्थ सहस्र सूर्यों के समान कान्ति वाले ईशान देव की महिमा रहती है वहां सारे देव-गण स्वयम् प्रभु चतुरवक्र का यजन पूजन करते रहते हैं जिन, सत्य संकल्प महात्माओं ने ब्रह्मचर्य धारण किया है, तथा सदाचार परिस्थित से अच्छे अच्छे कार्य किये हैं तथा जो भक्ति पूर्वक पितृ देवार्चन में रत रहते हैं। उनका निवास ब्रह्म लोक में होता है ॥७०॥७१॥७२ ।७३॥ जो ग्रहस्थाश्रम का पालन करते हैं, जो नम्र हैं, जो अतिथियों के प्यारे हैं, जो ग्रहस्थी हैं, जो शुक्ल कर्मस्थ हैं, विरक्त हैं, कारणात्मक हैं, तथा यम नियम दानों से जिनके पाप नष्ट हो गये हैं, उनका निवास अनिन्दित ब्रह्म लोक में होता है ॥७४॥७५॥ ऊपर ऊपर-सब गतियों की परम गति यह ब्रह्म लोक चौदह हजार योजन विस्तृत कहा है ॥७६॥ तथा

ऊपर की ओर मनोहर सूर्य समान कान्ति वाले रत्न धातुओं से चित्रित अनेक रत्नों के निवास स्थान मणियों के तोरण तथा मन्दिर वाले मेरु के सभी पार्श्वों में चारों तरफ से परिमन्डल वाले रम्य महा पर्वत में तीस हजार योजन विस्तृत चक्रपाद नाम से एक श्रेष्ठ पर्वत है चक्रपाद पर्वत के समीप से निकली ऊर्ध्व वाहिनी नदी दश योजन विस्तार वाली भूमि में प्रतिष्ठा को प्राप्त हुई है। चन्द्रमा के समान कान्ति वाली वह नदी पुरी अमरावती में बहती हुई सूर्य चन्द्र नक्षत्रों के समूह अपनी कान्ति से तिरस्कृत करती रहती है ॥७७॥७८॥७९॥८०॥ हे द्विजगण ! जो प्रातः सायम् संध्या में इसका सेवन करते हैं आठ श्रेष्ठ पर्वतों के ऊपर घूमते ज्योतिषों के मध्यस्थ द्विज सप्तर्षि उनके ऊपर प्रसन्न होते हैं अथवा जो पर्वत प्रातः सायम् संध्या का सेवन करते हैं उन आठ ही अचलोत्तमों के ऊपर द्विज प्रसन्न रहते हैं। घूमते हुये ग्रह नक्षत्रों की कान्ति हरने वाली जो नदी है वह रुद्र तथा इन्द्र से पूज्य है ॥८१॥८२॥ इति वाराह पुराणे रुद्र गीतासु भुवन कोषे जम्बू द्वीप निरूपणम् नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम पंच सप्ततितमोऽध्यायः ॥७५॥

अथः छिहत्तरवाँऽध्याय

दोहाः— छिहत्तरहु अध्याय में, अमर पुरी विस्तार ।
अष्ट दिगपाल पुरी सब, वर्णन करी अपार ॥

अथाष्ट दिगपालपुरी— रुद्र ने कहा— इस मेरू पर्वत के पूर्व देश में परम कान्तिमान नाना धातुओं से शोभायमान चक्रपाद परवत परिच्छित देश में सब देवताओं की पुरी हैं। जहां के देव दानवों तथा राक्षसों के सुवर्णमय तोरण तथा प्राकार हैं। वहां से परम कान्तिमान उत्तर पूरब में अलोक जनों

से पूर्ण सैकड़ों विमानों से व्याप्त बड़ी बड़ी बावड़ियों से युक्त जिसमें नित्य हर्ष ही हर्ष रहता है रंग विरंगे फूलों से सुशोभित रमणीय पुरन्दर पुरी अमरावती नाम वाली है। उस अमरावती के मध्य में वैडूर्य्य मणि की वेदिका है ॥१॥२। ३। ४॥५॥६॥ उस वेदिका में सुधर्मा नाम की सभा है जो कि अपने ही गुणों से तीन लोकों में विख्यात् है। उसमें शचीपति रहता है ॥७॥ वह इन्द्र सब देव योनि विशेष सिद्धादियों से युक्त रहता है। उस अमरावती में भास्कर का वंश विस्तृत है। सब देवों से नमस्कृत देव पति इन्द्र वहीं रहता है उससे आगे और दिशाओं में भी अलग अलग पुरी दिशा पतियों के गुणों के अनुसार हैं। आग्नेय दिशा में अग्नि की तेजोवती नाम पुरी है। तथा दक्षिण दिशा में वैवस्वत की गुणवती रमणीय संयमनी पुरी त्रैलोक्य प्रसिद्ध है। तथा नैऋत्य दिशा में नैऋताधिपति विरूपाक्ष की कृष्णवती नाम वाली पुरी है ।८। ६॥१०॥११॥ पश्चिम दिशा में उदकाधिपति महात्मा वरुण की शुद्धवती नाम वाली पुरी है ॥१२॥ तथा वायव्य दिशा में वायु देवता की सर्वगुण सम्पन्ना गन्धवती नाम वाली पुरी है। उससे आगे उत्तर दिशा में गुह्यकाधिपति की रम्य तथा वैडूर्य्य मणि की वेदिकायुक्त महोदया-नाम की सुन्दर पुरी है। तथा आठवीं ईशान दिशा में महान् आत्मा ईशान देव की नाना विधि भूत गणों से युक्त मनोहरा नाम की पुरी है। आश्रमस्थ विविध वन पुष्प धर्मों से यह देव लोक प्रार्थित किया जाता है। यही स्वर्ग कहा जाता है ॥१३॥ ॥१४॥१५॥१६॥ इति वाराह पुराणे रूद्र गीतासु भुवन कोषे अष्टदिक्पाल पुरी निरूपणम् नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम् षठ सप्ततितमोऽध्याय ॥७६॥

अथः सत्तहत्तरवाँ अध्याय

दोहा:—सत्तहत्तर अध्याय में, मर्य्यादा नग चार ।
ता शिखरों में हैं महा, जम्बादि वृक्ष चार ॥

अथः मेरु वरणनम्— रुद्र ने कहा— जो यह मेरु मध्य कर्णिका मूल कहा है । उसकी योजन सहस्र संख्या मान से कही है ॥१॥ अठचालीस हजार योजन विस्तार कर्णिका मूल मण्डल का कहा है ॥२॥ सुमेरु के आस पास हजारों ऊँचे ऊँचे पर्वत हैं और सुमेरु के चारों पार्श्व में और भी मर्यादा परवत हैं। जो अठारह हजार योजन विस्तार वाले हैं । सुमेरु से पूर्व की ओर जठर और देवकूट पर्वत हैं । बुद्धिमान लोग इन मर्यादा पर्वतों को आठ बतलाते हैं । इस प्रकार सुमेरु के पश्चिम दिशा में पवन और परियात्र पर्वत हैं। जो कि दक्षिण दिशा की ओर लम्बे हैं दक्षिण में कैलाश और करवीर पर्वत हैं यह पूर्व की ओर लम्बायमान हैं । और उत्तर की ओर त्रिशृंग तथा मकर नाम पर्वत हैं यह पश्चिम की ओर विस्तृत हैं ॥३॥४॥ हे द्विज श्रेष्ठो! यह जो सुमेरू पर्वत कहा हैं उसका दिक्स्थान कहता हूं आप सुनिये सुमेरू के चारों दिशाओं में चार और भी मर्यादा पर्वत हैं जिनसे घिरे हुये सुमेरु से सप्त द्वीपवती पृथ्वी अचला हो विष्टब्ध है याने निश्चल है उन चारों पर्वतों की ऊँचाई दश हजार योजन हैं । वह चारों पर्वत तिरछी सीधी हरिताल तलों की रचना से युक्त हैं । मनः सिला एक प्रकार की शिला उनकी गुफा तथा स्वरण मणियों से वह पर्वत चित्रित हैं । अनेक सिद्धि भवन और क्रीड़ा स्थलों से कान्ति वाले हैं ॥५,६॥७॥ सुमेरू से पूर्व मन्दर है दक्षिण में गन्ध मादन है पश्चिम में विपुल पर्वत है उत्तर में सुपार्श्व पर्वत है । उन चारों परवतों के शिखरों में चार महा वृक्ष प्रतिष्ठित हैं । जो कि सुसमृद्धि शाले देव, दैत्य तथा अप्सराओं से शोभित हैं ॥९॥१०॥

मन्दर पर्वत के शिखर में कदम्ब का वृक्ष है, वह कदम्ब वृक्ष बड़ा ऊँचा तथा लम्बी लम्बी शाखाओं से युक्त है, वह कदम्ब वृक्ष महा कुम्भ प्रमाण वाले फूलों केशर को महा गन्ध से मनोग्य पुष्पों से सर्वदा सुशोभित रहता है ॥११॥१२॥ भूत-भावन भुवनों से समसेना प्रवृत वह कदम्ब वृक्ष अपनी पुष्प गन्ध से हजारों योजन तक सुरभित करता है। इस भद्राश्व नाम वाले कदम्ब वृक्ष के फल गिरने पर केतुपात की सम्भावना होती है यह महा कदम्ब कीर्तिमान रूपवान तथा श्रीमान रहता है ॥१३॥ ॥१४॥ उस महा कदम्ब के नीचे साक्षात् हृषिकेश भगवान् सिद्ध मन्त्रों से निसेवित रहते हैं। तथा उस लोक सहस्र के स्ववदन हरि अमर श्रेष्ठ ने वार वार सानु को स्पर्श किया उससे आलोकित वर्ष जिसके नाम से वर्ष का नाम भी भद्रास्व हुआ ॥१५॥१६॥ दक्षिण दिशा में गन्ध मादन पर्वत पर पुष्प फल महा शाखाओं से सुशोभित जामुन का वृक्ष है। उस बड़े ऊँचे जामुन वृक्ष से स्वादु सुरभि युक्त तथा अमृत तुल्य फल गिरिमस्तक पर गिरते हैं ॥१७॥१८॥ उन फलों के अति ऊँचे से गिरने के कारण उस पर्वत से उन फलों के रस से नदी निकलती है। उस नदी जल से भीगी हुई मिट्टी से अग्नि समान कान्ति वाला जाम्बू नद सुवर्ण के आभूषण बनवाकर देव, दानव, गन्धर्व, राक्षस तथा गुह्यक अपनी अपनी अबलाओं को पहिनाते हैं॥१६॥२०॥ और उन जम्बू फलों के आसव को देवगण पीते हैं। वह जम्बू फल रस से उत्पन्न नदी दक्षिण इलावृत में बहती है। उसी के नाम से मनुष्य इस द्वीप का नाम जम्बू द्वीप कहते हैं ॥२१॥२२॥ पश्चिम दिशा में विपुल पर्वत शिखर पर जाति शृंग पीपल महा वृक्ष है। उसकी ऊँचाई और मोटाई बहुत ज्यादा है।

अनेक सत्व गुणों का आलय है। कुम्भ पमाण मनोहर शुभ फल उस वृक्ष पर सब ऋतुओं में लगे रहते हैं। सकेतु केतु को देख गन्धर्वों से सेवित है। जिस नाम से केतुमाल नाम हुआ। हे विप्र गण ! तह सुनिये क्षीर समुद्र मथते समय रुद्र ने स्कन्ध प्रदेश में स्थित माला को केतु में रक्खी है अतः इस वर्ष का नाम केतुमाल हुआ ॥२३॥२४॥२५॥२६॥ अतः उससे चिन्हित वर्ष का नाम केतुमाल हुआ। सुमेरु से उत्तर दिशा में सुपार्श्व पर्वत है उसमें एक महान वट वृक्ष है जिसके स्कन्ध प्रदेश मण्डल विस्तार तीन योजन है विविध कलापों से वह माल्यवान सा मालूम होता है। सुर सिद्ध सेवित उस न्यग्रोध की शाखा बहुत लम्बी हैं कुम्भ सदृश्य बड़े तथा सुवर्ण समान कान्ति वाले फल उस वट में सर्वदा रहते हैं वहां वट वृक्ष प्रकाशक सनद कुमार से छोटे ब्रह्मा के सात पुत्र हैं ॥२७॥२८॥२९॥३०॥ वहाँ सात कुरु महा भाग्यवान् प्रसिद्ध हैं स्थिरगत क्षान्त नीरजस्क महात्माओं से सपत्न पर्यंत वर्षो से वे सनातन अपने स्थान को प्राप्त हुये। उस महात्मा के नाम से अंकित सप्तति वर्ष हैं। दिव्य और देव में कुरु भर्ता प्रसिद्ध हैं ॥३१॥३२॥३३॥ इति वाराह पुराणे रुद्र गीतासु भवन कोपे मेरु वर्णनम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् सप्ततितमोऽध्याय।७७॥

अथ अठहत्तरवाँऽध्याय

दोहा:— अठहत्तरअध्याय में, मन्दरादि नग चार।
चार दिशा के सब कहे, ह्रद पर्वत विस्तार ॥

अथ मन्दरादि पर्वत चतुष्टय वर्णनम्— रुद्र ने कहा- तथा मन्दर गंधमादन विपुल सुपार्श्व पर्वत राजों के शिखरों का क्रमशः वर्णन करता हूं। विन्ध्य (इलायचियों से) रमणीय

पक्षियों के कूजन से सस्वर अनेक पक्षियुक्त आत्मा वाले वह शिखर हैं। उनमें देवताओं की दिव्य नारी क्रीड़ा किया करती हैं किन्नर गान करते हैं । वे शिखर, शीत, मन्द तथा सुगन्धित पवन से सेव्यमान और अति रमणीय हैं ।१।।२।।३।। चारों दिशाओं में नदी विराजमान हैं। उनको नाम से सुनिये। पूर्व में चैत्र रथ नाम, दक्षिण में गन्ध मादन है। प्रभाव से नव खंड युक्त हैं, स्वच्छ जल वाले हैं। तथा वन खंडों का आक्रमण करके ललनाओं सहित देवता जिस उद्देश में हर्ष युक्त हो क्रीड़ा करते हैं। रत्नों से आकीर्ण तीर्थ वाले महा पुन्य जल वाले, अनेक जल यंत्रों से शब्दायमान तथा बड़े हैं। और लम्बायमान वृक्ष शाखाओं से युक्त हैं। अलिकुल से प्रक्षिप्त हैं। कमल, उत्पल, कुल्हार, आदि कमल जाति से सुशोभित उनमें सरोवर हैं नाना गुण वाले उन चारों पर्वतों में पूर्व में अरुणोद. दक्षिण में मानस, पश्चिम में असितोद और उत्तर में महा भद्रा महा सागर है ।।४।।५।।६।।७।।८।।९।। श्वेत, कपिल, कुमुदों से तथा कडारादि कमल विशेषों से वह महासर सुशोभित हैं अरुणोद के जो शैल हैं वह प्राच्य कहे हैं ।।१०।। उनको मैं वर्णन करता हूँ आप सुनिये । विकङ्क, मणि शृंग, सुपात्र, महान् उपल, महानील कुम्भ। सुविन्दु, मदन, वेणुनद, सुमेदा, निषध, देव पर्वत यह पुन्य पर्वत श्रेष्ठ पूर्व दिशा में हैं ।।११।।१२।। दक्षिण मानसरोवर के समीप जो महा पर्वत हैं उनको नाम से कहता हूँ आप सुनिये। त्रिशेखरशैल, अचलोतम, शिशिर, कपि, रातमक्ष, तुरग, शानुमान ताम्राह, विष तथा श्वेतोदन, समूल. सरल रत्नकेतु पर्वत एक मूल महा शृंग गजमूल, शावचक्र, पञ्चशैल, कैलाश पर्वतराज हिमालय यह दक्षिण दिशा के पर्वत हैं अब उत्तर दिशा के पर्वत सुनिये ।।१३।।१४।।१५।।१७।।१७।।

कपिल, पिंगल भद्र, सरस, महाचल, कुमुद, मधूमान, गर्जन, मरकट कृष्ण, पान्डव महस्र शिरा, पारियात्र, और शृंगवान दह पर्वत गत्तर में कहे हैं ।१८॥१६॥ महाभद्र मसोवर के उत्तर में जो पर्वत स्थित हैं, उनको कहता हूँ । आप सुनिये हंस कूट वृष हंस, कपिञ्जल, इन्द्र शैल, मानुमान्, नील, कनक, शृंग शत, श्रंग पर्वत पुष्कर, मेघ, शैल परवतों तम विराज, जारुचि यह उत्तर के परवत कहे हैं ।२०॥२१॥२२॥२३॥ इन मुख्य परवतों के उत्तर में यथा क्रम स्थली, नगर, द्रोणी, सरोवर सुनिये ।२४॥ इति वाराह पुराणे रूद्र गीतासु भुवन कोपे मन्दरादि पर्वत चतुष्ठय वर्णनम् नाम काशीराम कृत शर्मा कृत भाषा टीकायाम् अष्टसप्ततितमोऽध्यायः

अथः उनासिवाँऽध्याय

दोहाः— मेरु द्रोणी की कथा, उनासीहु अध्याय ।
नगर सरोवर वरणू सब, प्रभु पाद सिर झुकाय ॥

अथः मेरोद्रोणी नाम निरूपणम्— रुद्र ने कहा- सीतास्य और कुमुद पर्वत के मध्य नाना प्राणियों से सेवित विहङ्गों से युक्त द्रोणि में तीन सौ योजन आयाम और सौ योजन विस्तृत सुरस तथा निर्मल जल वाली रमणीय सुरोचनी स्थली है ॥१॥२॥ वहां द्रोण मात्र परिमाण वाले सुगन्धित हजारों पुन्डरीक शत पत्र तथा महा पद्मों से अलंकृत देव, दानव, गंधर्व महा सर्प, आदियों से अधिष्ठित प्रकाश वाला श्रीसर नाम सरोवर है ॥३॥४॥ वह सरोवर स्वच्छ जलों से पूर्ण तथा सब देह धारियों का शरन्य है । उस सरोवर में पद्मवन के मध्य में एक महा पद्म है ॥५॥ वह महा पद्म करड़ों पत्रों से विकसित तथा तरुण सूर्य के समान कान्ति वाला है नित्य विकसित रहने से मधुर है अति विस्तृत होने से

न्दर केशर जाल से युक्त रहता है। मतवाले भौंरे उस पर
ब्द करते रहते हैं। उस कमल के मध्य में भगवती श्री लक्ष्मी
सदा विराजमान रहती है। अतः वह कमल लक्ष्मी के निवास
न होने से निसन्देह मूर्ति युक्त होता है। उस सरोवर के
किनारे पर सिद्धों से सेवित नित्य पुष्प फलों से रमणीय एक बड़ा
ल्व वन है। वह वन शत योजन विस्तीर्ण तथा दो सौ योजन
आयाम वाला है ॥६॥७॥८॥९। उस वन में चारों तरफ से अर्द्ध
श ऊंचे शिखर वाले महा वृक्ष हैं। उन वृक्षों की हजारों
शाखा हैं। तथा उन वृक्षों का स्कन्ध भाग बड़े मोटे हैं उन
क्षों पर नगाड़े के समान बड़े बड़े अमृत रस तुल्य स्वाद तथा
गन्धित हरित तथा पांडुर वरण के हजारों फल लगते रहते
। तथा उनके शीर्ण हो गिरने पर वहां की भूमि आकीर्ण रहती
। उस वन का नाम सब लोकों में श्रीबन नाम प्रसिद्ध है।
१०॥११॥१२॥ तथा उस वन में देवादि निवास करते हैं।
आठ दिशाओं से यह वन सुशोभित है। तथा पुन्यकारी विल्व
त खाने वाले मुनियों से सेवित है। वहां सिद्ध समूह से सेवित
क्ष्मी नित्य रहती है। एक एक अचलेन्द्र और मणिशैल का
न्तर सौ योजन विस्तार तथा दो सौ योजन आयाम वाला
। उसमें सिद्ध चारण सेवित विमल पंकज वन है। लक्ष्मी से
रण किया पुष्प नित्य जलता सा मालूम होता है। अर्द्ध
श शिखर तथा महा स्कन्धों से युक्त प्रफुल्ल शाखा वाले
क्षों से वह वन पिंजर के समान दीखता है ॥१३॥१४॥१५॥
१६॥ दो हस्त परिणाह तीन हस्त आयाम विस्तृत, मनः
शिलाओं के समान पान्डु केशर वर्ण वाले, विकसित सुगन्धित
मनोहर फूलों से व्याप्त तथा मतवाले, भौंरों से नादित सारा
न शोभा को प्राप्त होता रहता है।

वह वन दानव, देव, गन्धर्व, यक्ष राक्षसों से किन्नर अप्सरा तथा महा सर्पों से सेवित हैं उस वन में सिद्ध साधुगण से आकीर्ण नाना आश्रमों से व्याप्त भगवान् कश्यप प्रजापति का आश्रम है। १७॥१८॥१९॥२०॥ महानील तथा ककुभ पर्वत के मध्य में सुखा नाम नदी है उसके तट पर पचास योजन आयाम तीस योजन मन्डल वाला महा वन है। अर्द्ध कोष ऊंचे वृक्ष वाला श्रीमान् रम्य ताल वन है। तथा महा बल महासार स्थिर अविचल, शुभ महदन्जन संस्थान महा फलों से भ्रष्ट गन्ध गुणोपेत सिद्ध सेवित वन है ॥२१॥२२॥२३॥२४॥ वहीं ऐरावत हाथी की सुन्दर महाकृति है। ऐरावत रुद्र तथा देव शील के बीच सहस्र योजनायाम शतयोजन विस्तृत वृक्ष वीरुद्ध वर्जित सारी भूमि एक शिला वाली है। वह भूमि पाद मात्र सलिल से चारों तरफ से आप्लुत है। इस प्रकार हे ब्रह्मणो! मेरु के पार्श्व में स्थित पर्वतान्तर द्रोणी नाना प्रकार से कही गई है ॥२५॥२६॥२७॥२८॥इति श्री वाराह पुराणे रुद्र गीतासु भुवन कोषे द्रोणीनाम निरूपणम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् एकोनाशीतिमोऽध्याय ॥७९॥

अथः अस्सीवाँऽध्यायः

दोहा:— इस अस्सी अध्याय में, नाना पर्वत मध्य।
अनेक विधि द्रोणी कहें, सुन्दर विचित्र सद्य॥

अथः मेरोर्द्रोणयादि वर्णनम्— रुद्र ने कहा— अब दक्षिण दिशा में स्थित सिद्ध सेवित द्रोणियां कहते हैं। शिशिर और पतंग पर्वत के मध्य में स्त्रियां मुक्त गलित पादप वाली भूमि है। वृक्षों से अति रमणीय इक्षु क्षेप शिखर में पक्षि समूह निसेवित एक उदुम्बर वन है ॥१॥ महा कच्छुओं के समान बड़े फलों से वह वन अति रमणीय लगता है उस उदुम्बर

वन में आठ प्रकार के देव योनि विशेष निवास करते हैं ॥२॥ उस वन में स्वच्छ स्वादु तथा अगाध जल वाली नदियां बहती हैं। और वहाँ नाना मुनिजना कीर्ण कर्दम प्रजापति का आश्रम है। और शत योजन परिमन्डल वाला एक वन है। तथा ताम्राभ पर्वत और पतंग पर्वत के मध्य में शत योजन विस्तृत दो सौ योजन आयत वाले सूर्य समान राजीव पुरुडरीक कमल जातियों से अलंकृत अनेक सिद्ध गन्धर्वादियों से सेवित एक महा सरोवर है ॥३॥ उसके मध्य में शत योजन आयाम, तीस योजन विस्तार वाला अनेक रत्न धातुओं से विभूषित एक महा शिखर है। उस शिखर के ऊपर रत्नों के प्राकार तथा तोरण वाली एक बड़ी भारी रथ्या है। उस महा रथ्या में विद्याधरों का एक बड़ा भारी नगर है उस नगर में एक लक्ष परिवार वाला विद्याधर राज पुलोमा रहता है तथा विशाखा चल और श्वेत पर्वत के मध्य में एक सरोवर है उसके पूर्व तट पर महा कुम्भ मात्र बड़े तथा अति सुगन्धित और सुवर्ण सदृश फलों से सुशोभित एक महत् आम्र वन है। उस वन में देव गन्धर्वादि निवास करते हैं ॥४॥ सुमूल पर्वत और वसुधार पर्वत के पचास योजन लम्बे तीस योजन चौड़े मध्य भाग में एक विल्व स्थली है। उसमें महा कुम्भ सदृश फल लगते हैं। उन फलों के गिरने से वहां की स्थल मृत्तिका भीगी हुई रहती है। विल्व फल खाने वाले गुह्यक आदि उस स्थली में निवास करते हैं। तथा वसुधार और रत्नधार पर्वत के मध्य में तीस योजन चौड़ा सौ योजन लम्बा एक सुगन्धित किन्शुक वन है वह वन कुसुम समूह की गन्ध से सौ योजन की दूरी तक सारा प्रदेश सुगन्धित कर लेता है उस वन में निर्मल जल है तथा सिद्ध गन्धर्व निवास करते हैं ॥५॥६।

वह वन दानव, देव, गन्धर्व, यक्ष राक्षसों से किन्नर अप्सरा तथा महा सर्पों से सेवित हैं उस वन में सिद्ध साधुगण से आकीर्ण नाना आश्रमों से व्याप्त भगवान् कश्यप प्रजापति का आश्रम है। १७॥१८॥१९॥२०॥ महानील तथा ककुभ पर्वत के मध्य में सुखा नाम नदी है उसके तट पर पचास योजन आयाम तीस योजन मन्डल वाला महा वन है। अर्द्ध क्रोप ऊंचे वृक्ष वाला श्रीमान् रम्य ताल वन है। तथा महा बल महासार स्थिर अविचल, शुभ महदन्जन संस्थान महा फलों से भ्रष्ट गन्ध गुणोपेत सिद्ध सेवित वन है ॥२१॥२२॥२३॥२४॥ वहीं ऐरावत हाथी की सुन्दर महाकृति है। ऐरावत रुद्र तथा देव शील के बीच सहस्र योजनायाम शतयोजन विस्तृत वृक्ष वीरुद्ध वर्जित सारी भूमि एक शिला वाली है। वह भूमि पाद मात्र सलिल से चारों तरफ से आप्लुत है। इस प्रकार हे ब्रह्मणो! मेरु के पार्श्व में स्थित पर्वतान्तर द्रोणी नाना प्रकार से कही गई है ॥२५॥२६॥२७॥२८॥इति श्री वाराह पुराणे रुद्र गीतासु भुवन कोषे द्रोणीनाम निरूपणम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् एकोनाशीतितमोऽध्याय ॥७९॥

अथः अस्सीवाँऽध्यायः

दोहाः— इस अस्सी अध्याय में, नाना पर्वत मध्य।
अनेक विधि द्रोणी कहें, सुन्दर विचित्र सद्य॥

अथः मेरोर्द्रोणयादि वर्णनम्— रुद्र ने कहा— अब दक्षिण दिशा में स्थित सिद्ध सेवित द्रोणियां कहते हैं। शिशिर और पतंग पर्वत के मध्य में स्त्रियां मुक्त गलित पादप वाली भूमि है। वृक्षों से अति रमणीय इक्षु क्षेप शिखर में पक्षि समूह निषेवित एक उदुम्बर वन है ॥१॥ महा कच्छुओं के समान बड़े फलों से वह वन अति रमणीय लगता है उस उदुम्बर

वन में आठ प्रकार के देव योनि विशेष निवास करते हैं ॥२॥ उस वन में स्वच्छ स्वादु तथा अगाध जल वाली नदियां बहती हैं। और वहाँ नाना मुनिजना कीर्ण कर्दम प्रजापति का आश्रम है। और शत योजन परिमन्डल वाला एक वन है। तथा ताम्राभ पर्वत और पतंग पर्वत के मध्य में शत योजन विस्तृत दो सौ योजन आयत वाले सूर्य समान राजीव पुण्डरीक कमल जातियों से अलंकृत अनेक सिद्ध गन्धर्वादियों से सेवित एक महा सरोवर है ॥३॥ उसके मध्य में शत योजन आयाम, तीस योजन विस्तार वाला अनेक रत्न धातुओं से विभूषित एक महा शिखर है। उस शिखर के ऊपर रत्नों के प्राकार तथा तोरण वाली एक बड़ी भारी रथ्या है। उस महा रथ्या में विद्याधरों का एक बड़ा भारी नगर है उस नगर में एक लक्ष परिवार वाला विद्याधर राज पुलोमा रहता है तथा विशाखा चल और श्वेत पर्वत के मध्य में एक सरोवर है उसके पूर्व तट पर महा कुम्भ मात्र बड़े तथा अति सुगन्धित और सुवर्ण सदृश फलों से सुशोभित एक महत् आम्र वन है। उस वन में देव गन्धर्वादि निवास करते हैं ॥४॥ सुमूल पर्वत और वसुधार पर्वत के पचास योजन लम्बे तीस योजन चौड़े मध्य भाग में एक विल्व स्थली है। उसमें महा कुम्भ सदृश फल लगते हैं। उन फलों के गिरने से वहां की स्थल मृत्तिका भीगी हुई रहती है। विल्व फल खाने वाले गुह्यक आदि उस स्थली में निवास करते हैं। तथा वसुधार और रत्नधार पर्वत के मध्य में तीस योजन चौड़ा सौ योजन लम्बा एक सुगन्धित किन्शुक वन है वह वन कुसुम समूह की गन्ध से सौ योजन की दूरी तक सारा प्रदेश सुगन्धित कर लेता है उस वन में निर्मल जल है तथा सिद्ध गन्धर्व निवास करते हैं ॥५॥६।

उस किन्शुक वन में आदित्य देव का एक महा निवास स्थान है। उस स्थान में सूर्य भगवान् मास मास में अवतरण किया करते हैं। प्रजापति लोक जनक को देवादि नमस्कार करते हैं। तथा पंचकूट पर्वत और कैलाश पर्वत के मध्य भाग में सौ योजन लम्बा क्षुद्र जन्तुओं से अगस्त्य स्वर्ग मार्ग के समान हंस सदृश पान्डुर वरण भूमन्डल है ॥७॥ अथ पश्चिम दिशा के पर्वतों की द्रोणियां कहता हूँ। सुपार्श्व शैल और शिखि शैल के मध्य में वर्गाकार सौ योजन विस्तार वाला नित्य तपा हुआ तथा दुख से स्पर्श करने योग्य एक भौम शिलातल है। उसके बीच में तीस योजन विस्तीरण मन्डल युक्त अग्नि का स्थान है उसमें लोक क्षयकारी भगवान् संवर्तक काष्ट के बिना ही सर्वदा जलता रहता है। पर्वत राज कुमुद और अञ्जन पर्वत के मध्य में सर्व सत्वों से अगम्य सौ योजन विस्तार वाली मातुलुङ्ग स्थली है। वह स्थली पीले वर्ण के फलों से सुशोभित रहती है। उस स्थली में एक पुण्य तालाव है तथा वृहस्पति का उसमें बन है। तथा पिंजर और गोरे पर्वत के मध्य में अनेक सौ योजन विस्तृत सरोवर तथा द्रोणियां हैं। वे भौंरे के गुंजार युक्त कुमुदों से सुशोभित हैं ॥८॥ वहां परमेश्वर विष्णु भगवान् का स्थान है। तथा शुक्ल और पांडुर गिरि के मध्य में भी तीस योजन चौड़ा नव्वे योजन लम्बा वृक्ष रहित एक शिलोद्देश है वहां नष्कम्पा नाम एक बावड़ी है। उसके आस पास स्थल कमल है तथा वह दीर्घिका अनेक जाति के कमलों से सुशोभित है। उसके मध्य में पांच योजन प्रमाण का एक वट वृक्ष है। उस वट वृक्ष पर नीले वस्त्र पहिने चन्द्र शेखर उमापति यक्षादिओं से पूजित होते हुये निवास करते हैं।

सहस्र शिखर पर्वत तथा कुमुद पर्वत के बीच में बीस योजन चौड़ा पचास योजन लम्बा अनेक पक्षिगण सेवित अनेक वृक्षों के मधुरस वाले फलों से सुशोभित इक्षु क्षेप नाम का ऊंचा शिखर है। उसमें दिव्य अभिप्राय से निर्मित चन्द्रमा का महान आश्रम है। तथा शंख कूट और ऋषभ पर्वत के मध्य में अनेक योजन आयत अनेक गुण सम्पन्न विल्व प्रमाण सुगन्धित कल्लोलों से युक्त रमणीय पुरुष स्थली है। वहां पुरुष रसोन्मत्त अनेक वृक्ष वलियों से युक्त नागादि निवास करते हैं॥६॥ तथा कपिञ्जल और नाग शैल पर्वत के बीच दो सौ योजन लम्बी सौ योजन चौड़ी नाना जनों से विभूषित एक स्थली है। वह स्थली द्राक्षा तथा खरजूर खंडों से सुशोभित हैं। तथा पुष्कर और महा मेघ पर्वत के मध्य भाग में सौ योजन लम्बी साठ योजन चौड़ी पाणितल के समान वृक्ष वीरुद्ध रहित एक बड़ी भारी स्थली है उसके पास में चार महा वन हैं। और अनेक योजन विस्तार वाले सरोवर हैं। दश, पांच, सात. आठ, तीस बीस योजन वाली पर्वत क्षय महा घोर स्थली तथा द्रोणी वहां कितनी ही हैं। ॥१०॥ इति श्री वाराह पुराणे रुद्र गीतासु भुवन कोशे मेरुस्थ द्रोन्यादि वर्णनम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् अस्सीतितमोऽध्याय ॥८०॥

अथः इक्कासिवाँऽध्यायः

दोहाः— इक्कासी अध्याय में, देवतान के स्थान।
पूर्व कथित नगराज में, वर्णे सुनिये ध्यान॥

अथः तेसु पर्वतेसु देवानामवकाशा वर्न्यते— रुद्र ने कहा— अब इससे आगे पूर्व कथित पर्वतों में देवताओं के स्थान वर्णन करता हूँ। सीताख्य पर्वत के ऊपर महेन्द्र का क्रीड़ा स्थान है। वही देवराज इन्द्र का पारजित वृक्षों का वन है। उससे पूर्व की ओर कुन्जर नाम गिरि है।

उसके ऊपर दानवों की आठ पुरी हैं ॥१॥ तथा वज्रक पर्वत में राक्षसों की पुरी है, वे राक्षस नाम से कामरूपी बालक हैं, महानील पर्वत पर किन्नरों की पन्द्रह हजार पुरी हैं, वहीं किन्नरों के राजा देवदत्त चन्द्रादि गर्व सहित निवास करते हैं, चन्द्रोदय पर्वत में सुवर्ण मय विलबोल पुर हैं, वहां नाग निवास करते हैं, वे विल प्रवेश नाग गरुड़ से डरकर बिलों में निवास करते हैं, और अनुराग पर्वत में दानवेन्द्र रहते हैं, वेणुमान पर्वत में भी विद्याधरों के तीन नगर हैं, एकैक नगर तीन हजार योजन विस्तार वाला है, उन में उलूक, रोमश, वेत्रादि विद्याधरों के राजा निवास करते हैं ॥२॥ वहां एक-एक पर्वत पर स्वयम् गरुड़ निवास करता रहता है, कुंजर पर्वत में नित्य पशुपति निवास करता है, वसुधार पर्वत में भी योगीराज वृषभध्वज अनादि पुरुष महादेव शंकर करोड़ों हजार भूतादि गणों से युक्त रहते हैं, वसुधार पर्वत में पुष्पक वाले वसुओं का निवास है ॥३॥ वसुधार और रत्नधार पर्वत के मस्तक पर आठ वसु और सप्तर्षियों की आठ और सात पुरी हैं, एक शृङ्ग पर्वत में चतुर्मुख ब्रह्मा का स्थान है, गज, पर्वत में महाभूतों से युक्त स्वयम् भगवती रहती है ॥४॥ और पर्वत राज वसुधार में मुनि सिद्ध विद्याधरों का भी स्थान है, जिसकी बाहर की चौहद्द बड़ी मजबूत हैं, वहां और भी अनेक पर्वत हैं, उनमें युद्ध सालों गन्धर्व रहते हैं उनका स्वामी राज-श्रेष्ठ पिंगल है, सुर राक्षस पञ्चकूट में तथा दानव शत शृंग पर्वत में रहते हैं, दानव और यक्षों के सैकड़ों नगर हैं ॥५॥ प्रभेदक पर्वत के पश्चिमी भाग में देव दानव सिद्धादियों के नगर हैं, प्रभेदक गिरि मस्तक पर एक बड़ी भारी शिला है, पर्व पर्व दिनों में चन्द्रमा उस शिला पर उतरता है, उसी के उत्तर पार्श्व में त्रिकूट पर्वत है यहां ब्रह्मा रहता है, वहीं कहीं पर अग्नि स्थान है । देवता

मूर्तिमान अग्नि की उपासना करते हैं ॥६॥ उत्तर में भृंगवान् पर्वत पर देवताओं के स्थान हैं। पूर्व में नारायण का स्थान मध्य में ब्रह्मा का स्थान, पश्चिम शंकर का स्थान है। वहां यक्षों के कुछ नगर हैं। उसमे उत्तर की ओर जातुच्छ नाम महा पर्वत हैं। तथा तीस योजन मंडल वाला नन्द जल नाम सरोवर है उस सरोवर में सत मस्तकों से प्रचन्ड नन्द नाम का नाग राजा रहता है ॥७। यह आठ देव पर्वत जानने चाहिये वे क्रम से सोना चांदी, रत्न, वेडूर्य मनशिला दियों ने वर्ण वाले हैं। यह पृथ्वी लक्ष कोटि शत आदि अनेक संख्या वाली है। उन पर्वतों में विद्याधरों के स्थान हैं। जिस प्रकार कि मेरु पास केशर वलयाल वाला सिद्ध लोक कहा जाता है। यह पृथ्वी कमल के समान स्थित हैं। यह काम सब पुराणों में सामान्यता से कहा जाता है ॥८॥ इति श्री वाराह पुराणे रुद्र गीतासु भुवन कोषे मेरु पर्वते देवनामव कास वर्णनम नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम एकाशीतितमोऽध्याय। ८३॥

अथः बय्यासिवाँ अध्याय

दोहाः— बय्यासी अध्याय में, नदियों का अवतार।
आकाश नदी (के) मेरुपर, मे गिरे भाग चार ॥

अथः नदियों का अवतरण— रुद्र के कहा— अब नदी अवतार सुनिये। जो आकाश समुद्र कहा जाता है उसी से आकाश गामिनी नदी निकली है। वह आकाश गंगा निरन्तर इन्द्र गज से शोभित होती है। और चौरासि हजार योजन ऊपर से मेरु के मस्तक पर गिरती है। तथा मेरु कूट तट से गिरकर आकाश गंगा के चार भाग होते हैं। साठ हजार योजन से निरन्तर गिरकर दक्षिण की ओर बहती हुई सीता अलक नन्दा चक्षु भद्रा आदि नामों से चार प्रकार हुई। उनमें से पर्वतों को तोड़ती फोड़ती इकासी हजार योजन विस्तार पृथ्वी में

जाकर गाम- पृथिवीम् गता होने से गङ्गा कही जाती है ॥१॥ अब गन्ध मादन पर्वत के पार्श्व में अमर गण्डिका वर्णन की जाती है। इकतीस हजार योजन आयाम सौ योजन विस्तार वाला वह स्थान है। वहां केतुमाल खंड के सारे जनपद महा बलवान कृष्ण वर्ण के पुरुष तथा कमल सदृश वर्ण वाली अबलायें निवास करती हैं। वहां महा वृक्ष पनस है। वहां ईश्वर ब्रह्म पुत्र रहता है। और वहां के मनुष्य उदक पान करने से जरा रोग रहित हो अयुत वर्ष की आयु वाले होते हैं। माल्यवान् से पूर्व की ओर पूर्व गण्डिका है। एक शृंग से सहस्र योजन मानस है। और वहां भद्राश्व नाम जनपद है ॥२॥ वहां भद्र रसाल वन है। वहां कालाम वृक्ष हैं। पुरुष श्वेत वर्ण के कमल के समान हैं। स्त्रियाँ कुमुद वर्ण वाली होती हैं, वहां रहने वालों की आयु दश हजार वर्ष की होती है। वहां पाँच कुल पर्वत हैं उनके नाम यह हैं। शैल वर्ण मालाख्य कोरजस्क, त्रिपर्ण, और नील इन पर्वतों से निकली गंगाओं के समीप रहने वाले देशों के वैसे ही नाम हैं ॥३॥ वहां के देश वासी इन्हीं नदियों का जल पीते हैं। नदियों के नाम इस प्रकार हैं। सीता, सुवाहिनी, हंसवती, कासा, महा वक्त्रा, चन्द्रवती, कावेरी, रसाख्यावती, इन्द्रवती, अङ्गार वाहिनी, हरितोया, सोमावती, शतह्रदा, वनमाला, वसुमती, हन्सा, सुपर्ण, पंच गन्गा, धनुपमर्ता, अणिवप्रा सुब्रह्म भागा, विलासिनी कृशातोया, पुण्योदा, नागवती, शिवा, शैवालिनी, मणितत्य क्षीरोदा, वरुणाताक्षी, विष्णुपदी इन महा नदियों का जल जो पीते हैं वे दश हजार आयु वाले हो महादेव- पार्वती के भक्त होते हैं ॥४॥ इति श्री वाराह पुराणे रुद्र गीतासु भुवन कोपे नद्यवतार निरूपणाम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् द्व्यशीतितमोऽध्यायः ॥८२॥

अथः तिरासिवाँऽध्यायः

दोहाः— निषधाचल वर्णन करूं, तिरासीहु अध्याय।
तासमीप जनपद नदी, कुलाचल सबहि गाय ॥

अथः नैषधस्त कुलाचल नदी जनपद वर्णनम्— रुद्र ने कहा– भद्राश्व वर्ष का यह स्वाभाविक रचना कहदी, केतुमाल विस्तार से कह दिया निषध पर्वत के पश्चिमी भाग के कुलाचल जनपद तथा नदी कहते हैं। यथा विशाख, कम्बल, जयन्त, कृष्ण हरित, अशोक व्रधमान, इन सात कुल पर्वतों के करोड़ों प्रसूति हैं। वहां रहने वाले जनपदों के उन्हीं के अनुसार नाम हैं १॥ जिस प्रकार शोर ग्रामान्त, सातप, कृत सुरा, श्रवण, कम्बल, माहेयाचल, कूटवास, मूलतप, क्रौञ्च, कृष्णाङ्ग, मणिपङ्कज चूडमल, सोमीय, समुद्रान्तक, कूर कुञ्ज, सुवर्णतट, कुह, श्वेताअंग कृशापांद, विद कपिल, कर्णिक महिव कव्ज कर्नाट महोत्कट शुक नाक सगज भूम ककुरन्जन महानाह किकिसपर्ण भोमक चोरक धूमजन्मा अन्गरज जीव लौकिता वाचामनहा अगमधुरेय सुकेय चकेय श्रवण मतकाशिक गोदावाम कुल-पंजाव व्रजह मोदशालकादि ये जनपद पूर्वोक्त कुल पर्वतों से निकली नदियों का जल पीते हैं ॥२॥ उन नदियों के नाम यह हैं। प्लाक्षा महा कदम्बा मानसी श्यामा सुमेधा बहुला विवर्ण पुङ्खा माला दर्भवती भद्रनदी शुकनदी पलवा भीमा प्रभञ्जना काम्बा कुशावती दक्षा कासवती तुन्गा पुण्योदा चन्द्रावती सुमूलवती ककु पद्मिनी विशाला करन्टका पीवरी महामाया महिषी मानुषी चण्डा ये प्रधान नदी हैं। तथा अन्य क्षुद्र नदी भी अनेकों हैं ॥३॥ इति श्री वाराह पुराणे रुद्र गीतासु नैसेधस्त कुलाचल जनपद नदी निरूपणम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् अशीतिमोऽध्याय ॥८३।

अथः चौरासिवाँऽध्याय

दोहाः— चौरासी अध्याय में, सुमेरु उत्तर भाग ।
देश विशेष कथा कहूँ, अरुता देश सुहाग ॥

अथः मेरो दक्षिणोत्तर वर्ष वर्णनम्— रुद्र ने कहा— उत्तर वर्षों के तथा दक्षिण वर्षों के जो जो पर्वत वासी देश विशेष हैं उनको यथा न्याय वर्णन करता हूँ हे ब्राह्मणो आप सावधानता से सुनिये । मेरु से उत्तर तथा श्वेत गिरि से दक्षिण की ओर वायव्य रम्यक नाम खंड है । वहां के मनुष्य निर्मल शुद्ध बुद्धि वाले जरा दुर्गति रहित होते हैं ॥१॥२॥३॥ वहाँ भी रोहित न्यग्रोध महा वृक्ष है । उसके फल रस पान करने से सारे मनुष्य दस हजार वर्ष की आयु वाले हो देव रूपी होते हैं । और श्वेत गिरि से उत्तर तथा त्रिसंग से दक्षिण में हिरणमय खंड है वहां हैरन्वती नदी बहती है काम रूपी बलवान वहीं निवास करते हैं ॥४॥५॥६॥ वहाँ के रहने वालों की आयु ग्यारह हजार वर्ष तक रहती है । तथा अन्य पंद्रह सौ वर्ष तक जीते रहते हैं ॥७॥ उस देश में लकुच और पनस के वृक्ष होते हैं । उन पनसों के फल खाने से ही बहुत दिन तक जीते रहते हैं ॥८॥ तथा त्रिशृंग में मणि काञ्चन और सर्व रत्नों के सिखर हैं । उसके उत्तर शृंग से दक्षिण समुद्र तक उत्तर कुरु देश है । वहाँ क्षीर वृक्ष आमश्च वृक्ष हैं उन वृक्षों से ही वस्त्र तथा आभूषण निकलते हैं । वह की भूमि मणिमय है । वही का रेत सुवर्णमय है । उसमें स्वर्ग से च्युत मनुष्य निवास करते हैं उनकी आयु तेरह हजार वर्ष की होती है ॥९॥ उसी द्वीप के पश्चिम और चार हजार योजन आगे देव लोक से चन्द्र द्वीप है । वह हजार योजन मंडल वाला है । उस चन्द्र दीप के मध्य में चन्द्रकान्त तथा सूर्य कान्त मणि के पर्वत रात दिन पिघलते रहते हैं । उन दोनों पर्वतों के बीच में अनेक नदी युक्त अनेक वृक्ष

समाकुल चन्द्रावर्ता नाम महा नदी है ।।१०।। कुरु वर्षांत के त्तर पार्श्व में समुद्र तरङ्गों की मालाओं से युक्त पांच हजार योजन आगे देवलोक से सूर्य द्वीप है वह भी हजार योजन मंडल वाला है। उसके मध्य में सौ योजन ऊंचा और विस्तार वाला एक गिरिवर है। उससे सूर्या व्रत नाम की नदी निकलती है और वहाँ सूर्य का स्थान है। वहां सूर्य देवत्य तदवर्ण प्रजा दस हजार वर्ष आयु वाली होती है ।।११।। उस दीप से पश्चिम की ओर चार हजार योजन आगे समुद्र देश में हजार योजन परिमन्डल वाला भद्राकार नाम का द्वीप है। वहां वायु का अनेक रत्नों से सुशोभित भद्रासन है, वहां सकल विग्रह वाला वायु रहता है। और पांच हजार वर्ष आयु सुवर्ण समान वर्ण वाली प्रजा वहां रहती है ।१२।। इति श्री वाराह पुराणे रुद्र गीतासु मेरोर्दक्षिणोत्तर वर्ष वर्णनम् नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम् चतुरशीतितमोऽध्याय । ८४।।

अथः पिचासिवाँऽध्यायः

दोहाः— पिचासीहु अध्याय में, भारत के नव खंड ।
नदी पर्वत कहूँ सब, अगाध जल प्रचन्ड ।।

अथः नवभेद भारत वर्णनम्— रुद्र ने कहा— यह पृथ्वी कमल के समान कही । इस समय नौ भेद वाले भारतवर्ष को सुनिये। जिस प्रकार इन्द्र, कसेरु, ताम्रवर्ण, गभस्ति, नागद्वीप, सौम्य, गन्धर्व, वारुण तथा भारत यह एक एक हजार योजन परिमाण वाले हैं तथा सागर से वेष्टित हैं। यह सात कुल पर्वत हैं ।।१।। महेन्द्र, मलय, सह्य, सुक्तिमान, रिक्ष पर्वत, विंध्य और पारियात्र ये सात कुल पर्वत हैं ।।२।। और अन्य क्षुद्र पर्वतों के नाम ये हैं। मन्दर शार दर्दुर कैलाश, मैनाक वैद्युत वारंधम पाण्डुर तुङ्गप्रस्त कृष्णगिरि जयन्त ऐरावत ऋष्यमूक गोमन्त चित्रकूट श्री पर्वत चकोर कूट श्री शैल कृत

स्थला इनसे और भी क्षुद्रादिक्षुद्र पर्वत हैं । उनमें म्लेच्छ जनपद निवास करते हैं । और वे निम्नोक्त नदियों का जल पीते हैं । ॥३॥ गङ्गा सिन्धु सरस्वती सतद्रु वितस्ता विपाशा चन्द्र भाग सरयू यमुना इरावति देविका कुहू गोमति धूतपापा वाहुदा दृषद्वती कौशिकी निस्वीरा गण्डकी चचुष्पती लोहिता ये नदियें हिमालय से निकलती हैं । वेदस्मृति वेदवती सिन्धु परणा चन्द्रनाभा नाशदा चारा रोहिपारा चर्मवती विदिशा वेदत्रयी वपन्ती ये पारियात्र पर्वत से निकलती हैं ॥४॥ सोंण ज्योतिरथा नर्मदा सुरसा मंदाकिनी दशारण चित्रकूटा तमसा पिपला करतोया पिशाचिका चित्रोत्पला विशाला वंजुका वालुवाहिनी शुक्तिमती विरजा पंकिनी रात्रि ये ऋक्ष पर्वत से निकलती हैं । मणिजाला सुभा तापी पयोष्णी शीघ्रोदा वेण्णों पाशा वैतरणी वौदीपाला कुमुद्वती तोया दुर्गा अन्त्या गिरा एता ये नदियें विन्ध्याचल से निकलती हैं । गोदावरी भीमरथी कृष्ण वेणी वंजुला तुंगभद्रा सुप्रयोगा वाह्य कावेरी ये सह्य पर्वत से निकलती हैं ॥५॥ शतमाला ताम्रपर्णी पुष्पावती उत्पलावती ये नदी मलयाचल पर्वत से निकलती हैं । त्रियाना, ऋषि कुल्पा इक्षुला त्रिविन्दाला, मूलिनी वंशवरा महेद्रन्तनया ऋषिका लुसिती मन्द गामिनी पलाशिनी ये शुक्तिमान पर्वत से निकलती हैं । ये प्रधानता से कुल पर्वतों की नदी हैं अन्य क्षुद्र नदियां हैं । यह जम्बू द्वीप लाख योजन परिमाण वाला है ॥६॥ इति वाराह पुराणे रुद्र गीतासु भुवन कोशे भारतीय नव खंड निरूपणम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् पंचाशीतितमो अध्याय ॥८५॥

अथः छ्यासिवाँऽध्याय

दोहाः— छियासीहु अध्याय में शाक द्वीप महान।
द्वीप जम्बू विस्तार से जमकु चौगुनोगान्॥

अथः शाक द्वीप निरूपणम्— रुद्र ने कहा- इससे आगे शाक द्वीप सुनिये जम्बू द्वीप के विस्तार से दुगुना विस्तार साला चार जल समुद्र है। तथा चार समुद्र भी अपने दुगुने विस्तार वाले शाक द्वीप से घिरा हुआ है। उस शाक द्वीप में पुन्य जनपद हैं। तथा वहां के रहने वाले लोग चिरायु वाले होते हैं। और दुर्भिक्ष जरा व्याधि रहित होते हैं। इस द्वीप में सात ही कुल पर्वत हैं। इस शाक द्वीप के एक ओर चार समुद्र है दूसरे ओर चीर समुद्र है॥१॥२ शाक द्वीप में शैलेन्द्र उदय नाम पर्वत पूर्व की ओर लम्बायमान है। दूसरी जलधार नाम गिरि है। वही चन्द्र कहा गया है। इन्द्र उसी के जल को ग्रहण करके बरसा करता है। उससे आगे श्वेतक नाम पर्वत है। उस श्वेतक पर्वत में छः प्रकार की अनेक प्रजा क्रीड़ा किया करती हैं। उससे आगे रजत गिरि है। वही शाक नाम से कहा जाता है। उससे आगे अम्बिकेय है। और वही विभ्राजस कहा जाता है॥२॥ वही केशरी कहा जाता है। फिर वायु पर्वत है। पर्वतों के ही नामों से ही वर्षों के नाम हैं। जिस प्रकार कि उदय सुकुमार जलधार चेमक महा द्रुम ये प्रधान नाम हैं। और दो पर्वतों के नाम से दो वर्ष और हैं। शाक द्वीप के मध्य में शाक वृक्ष है। शाक द्वीप में सात महा नदियां हैं। सुकुमारी, कुमारी नन्दा, वेणिका धेनु इक्षुमति गभस्ति नामों से प्रसिद्ध हैं॥३॥ इति श्री वाराह पुराणे रुद्र गीतासु शाक द्वीप निरूपणम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् षड़शीतितमो अध्याय॥८६॥

अथः सत्तासिवाँऽध्यायः

दोहाः— कुश द्वीप वर्णन करूं, सतासीहु अध्याय ।
कुलाचल नदी तथा वर्ष, कहूँ सब गाय ।

अथः कुश द्वीप वर्णनम्— रुद्र ने कहा— अब तीसरे कुश द्वीप का वर्णन सुनिये । शाक द्वीप के विस्तार से दूने विस्तार वाले कुश द्वीप से क्षीर समुद्र घिरा हुआ है । कुश द्वीप में भी सात कुलाचल हैं । वे सारे ही दो दो नाम वाले हैं । जिस प्रकार कि कुमुद पर्वत विद्रुम नाम से कहा जाता है । उन्नत हेम नाम से पुष्पवान द्रोण नाम से, कंक पर्वत कहा जाता है । अग्निमान ही कुशेशय नाम से कहा जाता है, तथा महिष नाम पर्वत ही हरि पर्वत कहा जाता है । वहां अग्नि का निवास है । ॥१॥ सातवां ककुद्र पर्वत ही मदर नाम से कहा जाता है । ये पर्वत कुश द्वीप में व्यवस्थित है । इनका भेद भी द्वि नाम संज्ञा वाला है । कुमुद पर्वत के श्वेत तथा उद्भिद खण्ड हैं । वही आदि में कहा जाता है । उन्नत पर्वत के लोहित तथा मण्डल नाम से दो खन्ड हैं वही बलाहक के जीमूत और रथाकार नाम होते है, द्रोण का हरि वही बलाधन होता है ॥२॥ वहां दो नाम वाली नदी हैं । प्रतोया को प्रवेशा कहते हैं । शिवा को यशोदा कहते हैं । तीसरी चित्रा को ही कृष्णा कहते हैं । चौथी ह्लादिनी को ही चन्द्रा कहते हैं । पांचवीं विद्युल्लता को ही शुक्ला कहते हैं । छटी वरणा को ही विभावरी कहते हैं । सातवीं महती को ही धृति कहते हैं । ये नदियां प्रधान हैं अन्य क्षुद्र नदी भी अनेक हैं । यही कुश द्वीप का विस्तार है ॥३॥ शाक द्वीप से दूना विस्तार है । कुश द्वीप के मध्य में महा कुश का एक स्तम्भ है, यह कुश द्वीप अमृत तुल्य दधि मंडोद समुद्र से जो कि क्षीरोद से दुगुना है । उससे घिरा है ॥४॥ इति श्री वाराह पुराणे रुद्र गीतासु कुश द्वीप वर्णनम नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् सप्तशीतिमोऽध्याय ॥८७॥

अथ: अठासिवाँऽध्याय:

दोहा:— अट्टासी अध्याय में, क्रौञ्च द्वीप महान ।
ता स्थित जनपद कुलाचल, नदी विशेष बखान ॥

अथ: क्रौञ्च द्वीप वर्णनम्— रुद्र ने कहा— अब चौथा क्रौञ्च द्वीप कहता हूँ, कुश द्वीप से दुगुना दधि समुद्र है । और उससे दूना विस्तार वाला क्रौञ्च द्वीप है इसमें सात ही प्रधान पर्वत हैं । प्रथम क्रौन्च, विद्रुलत, रैवत, मानस वही पावक पर्वत हैं उसी प्रकार अंधकार है, वही अच्छोदक है. देवाव्रत है, वही सुराप कहा जाता है तदनन्तर देविष्ट है, वही कान्चन श्रृग होता है १॥ देवनन्द से परे गोविन्द द्विविन्द है तथा पुंडरीक है। वही तोयाशः हैं । ये सात रत्नमय पर्वत क्रौंच द्वीप में व्यवस्थित हैं, सारे ही आपस में उन्नत हैं ॥२॥ वहां वर्ष जिस प्रकार हैं कि क्रौंच का कुशल देश है । वही माधव कहा गया है । पावक का मनोनुग देश है वही संवर्तक कहा गया है । तब ऊष्णवान है वह सप्रकाशक है तप पावक है वही सुदर्शन है तथा अन्धकार ही संमोह है, तब मुनि देश है और वह प्रकाशवाला है तब दुंदभि देश ही अनर्थ नाम से कहा जाता है ॥३॥ और वहां भी सात नदियां हैं । गौरी कुमुद्वती, संध्या, रात्रि, मनोजवा, ख्याति पुरुडरीका ये सात प्रकार की नदी हैं ॥४॥ गौरी ही पुष्पवहा है । कुमुद्वती नार्द्रवती है । संध्या रौद्रा है । सुखा वहा भोग जवा है । ख्याति क्षिप्रोदा है । पुंडरीका ही बहुला है । इसके अतिरिक्त और भी क्षुद्र नदियां हैं क्रौञ्च द्वीप घृतोद से घिरा में । घृतोद शाल्मली द्वीप से घिरा है ॥५॥ इति वाराह पुराणे रुद्र गीतासु भुवन कोशे क्रौंच द्वीप वर्णनम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् अष्टाशीतितमो अध्याय ॥८८॥

अथः उन्नासिवाँऽध्यायः

दोहा:— शाल्मली द्वीप कहूँ अब उन्नवचें अध्याय।
गोमेद पुष्कर को अरू सबहि द्वीप बताय॥

अथः शाल्मली द्वीप वर्णनम्— रुद्र ने कहा– शेष तीन द्वीपों के मनुष्यों को कहता हूँ। पहिले पांचवां शाल्मली द्वीप सुनिये ॥१॥ क्रौञ्च द्वीप के विस्तार से शाल्मली द्वीप दूना है ॥२॥ शाल्मली द्वीप घृतोद को घेर कर दूने विस्तार से स्थित है। वहां सात प्रधान पर्वत हैं और उतनी ही नदी हैं। वहां के पर्वत पीत शातक ये दो बड़े हैं। और जल से सर्व गुण सुवर्ण वाले रोहित सुमनस कुशल जाम्बू नद वैद्युत ये कुल पर्वत तथा वर्ष हैं ॥३॥ अब छटा गोमेध द्वीप कहा जाता है। जिस प्रकार शाल्मली द्वीप सुराजल वाले समुद्र से घिरा हुआ है। उसी प्रकार सुराजल वाला समुद्र भी गोमेद द्वीप से घिरा है। वहां प्रधान पर्वत दो ही हैं। एक अवर और दूसरा कुमुद गोमेद द्वीप से आगे इक्षुरस जल समुद्र है वह समुद्र दुगुने परिमाण वाले पुष्कर 'द्वीप से घिरा हुआ है। उस पुष्कर द्वीप में मानस नाम पर्वत है। वह भी दो प्रकार से छिन्न है। वह पुष्कर द्वीप भी स्वच्छ जल वाले समुद्र से घिरा है ॥४॥ उसके अनन्तर ब्रह्मान्ड कटाह है। यही पृथ्वी का परिमाण है। ब्रह्मांड कटाह का परिमाण इन द्वीप मंडलों की विस्तार संख्या ही है। इनको वराह रूपी नारायण भगवान् कल्प कला में रसातल से एक दाढ़ में उठाकर स्थिति में स्थापित करते हैं ॥५॥ आपको इस पृथ्वी का विस्तार कह दिया आपका कल्याण हो, हे द्विजगण! मैं अपने कैलाश को जाता हूँ ॥६॥ श्री वाराह जी बोले ऐसा कहकर तत्क्षण में ही अपने कैलाश धाम को चले गये। और अन्य सब देवता तथा ऋषि गण भी जहां से आये थे अपने धाम को चले गये ॥७॥

इति श्री वाराह पुराणे रुद्र गीतासु शाल्मली द्वीप वर्णनम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम अननवतितमो अध्यया ॥८६॥

अथ नवेवाँऽध्याय

दोहाः— कैलाश गयो ब्रह्म अब, अन्धक मारन हेतु।
हरि त्रिदेवन दृष्टि से,शक्तय वतरण करि लेत ॥

अथः त्रिशक्तिगत सृष्टि महात्म्यम्— पृथ्वी ने कहा— पुण्य परमात्मा शिव हैं इस प्रकार कोई भव को कहता है, कोई महादेव को कहता है, कोई हरि को परमात्मा कहते हैं तथा अन्य कोई ब्रह्मा को परमात्मा बतलाते हैं ॥१ हे देव ! इस बात में मुझे बड़ा कौतुहल है अतः आप कहिये कि इन देवताओं में कौन पर है तथा कौन अपर है ॥२॥ श्री वाराह जी ने कहा— पर नारायण देव हैं फिर ब्रह्मा है। उससे रुद्र देव हुआ वही सर्वज्ञता को प्राप्त हुआ है ॥३॥ हे परानेन उसके आश्चर्य वृत्त अनेक हैं उनको मैं तुझे सुनाता हूँ तू सुन ॥४॥ नाना धातुओं से विचित्रित रमणीय कैलाश शिखर में त्रिशूल पाणि त्रिलोचन महादेव सर्वदा निवास करते हैं ॥५॥ वह पिनाक पाणि महादेव सर्व भूत गणों से तथा पार्वती से युक्त हो एक समय बैठा था ॥६॥ उस कैलाश में कोई सिंह मुख वाले गण सिंह के समान गर्ज रहे थे। कोई हस्ति मुख वाले, हस्ति के समान तथा हय मुख वाले घोड़े के समान चिंगहाड़ तथा हिन हिना रहे थे ॥७॥ तथा कितने ही शिन्शमार मुख वालों के गण थे। कोई शूकर मुख वाले थे, कोई घुड़ मुख थे, कोई गर्दभ मुख वाले, कोई बकरी के मुख वाले थे ॥८। तथा छाग मुख मत्स्य मुखवाले असंख्य सूर योधा थे कोई गान कर रहे थे कोई नाच रहे थे कोई दौड़ रहे थे तथा कोई पहलवानों के समान ताल ठोंक रहे थे ॥९॥ कोई हंस रहे थे कोई किलकिला रहे थे तथा कोई महा बलवान गर्ज

रहे थे तथा कोई गण नायक लोष्ठ ग्रहण कर लड़ रहे थे ॥१०॥ तथा बल के घमन्ड वाले मल युद्ध कर रहे थे। इस प्रकार हजारों गणों से युक्त हो शंकर भगवान् स्थित थे ॥११॥ देववर महादेव जभी स्वयम् देवी पार्वती के साथ क्रीड़ा कर रहे थे तभी देवताओं के सहित स्वयं ब्रह्मा शीघ्र वहां पर आ पहुँचा ॥१२॥ उनको आते देख विधि विधान मे आतिथ्य पूजन कर, परम देव महादेव ब्रह्मा से पूछने लगे ॥१३॥ हे ब्रह्मन् ! आपका आना कैसे हुआ किस लिये आप शीघ्र मेरे पास आये हो ? शीघ्र कहिये ॥१४॥ ब्रह्मा ने कहा– एक अन्धक महा दैत्य है उससे सारे ही देवता पीड़ित होकर शरण चाहते हुये मेरे पास आये हैं ॥१५॥ तब मैंने इन देवताओं को कहा कि अन्धक दैत्य वध चाहते हुये हम सबको रुद्र के पास जाना चाहिये अतः देवताओं के सहित मैं आपके पास आया हूं ॥१६॥ ऐसा कहकर ब्रह्मा ने पिनाक पाणि महादेव को देखा और मन से परमेश्वर नारायण का स्मरण किया ॥१७॥ तब नारायण देव दोनों के मध्य में स्थित हो गये। तदनन्तर ब्रह्मा विष्णु एकीकृत हो गये । ॥१८॥ और हर्ष युक्त हो सूक्ष्म दृष्टि से आपस में देखने लगे फिर उन तीनों की त्रिधा दृष्टि एक रूपा हो पैदा हुई ॥१९॥ उस ऐक्य दृष्टि से दिव्य कुमारी पैदा हुई जो कि नील कमल के समान श्यामा थी तथा काले घुंगराले अलकों से शोभायमान थी ॥२०। उस कुमारी की नासिका सुन्दर थी ललाट पट सुन्दर था मुख कमल मनोहर तथा सुप्रतिष्ठित था त्वष्ट्रा ने अग्नि जिह्वा का जो लक्षण कहा है वह सब उस कुमारी में दीखता था तदनन्तर उस कन्या को देख ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि देव बोले कि हे शुभे तू कौन है ? हे विपश्चिपते ! तेरा क्या कार्य है वह शुक्ल कृष्ण पीत वर्ण वाली कुमारी बोली कि हे त्रिदेव ! आपकी दृष्टि योग से पैदा हुई हूं क्या आप अपनी शक्ति मुझ परमेश्वरी को नहीं

जानते हो ॥२१॥२२॥२३॥२४॥ तदनन्तर वे ब्रह्मादि देव उससे प्रसन्न हो उसको वरदान देकर कहने लगे कि हे देवि ! तू नाम से त्रिकला देवी है तू सर्वदा विश्व की रक्षा करती रह ॥२५॥ हे अनघे तेरे और भी गुणों से उत्पन्न सर्व सिद्धि करने वाले नाम होवेंगे ॥२६। तथा हे देवि ! हे वरानने ! एक और भी कारण है जिससे तू त्रिवर्ण है अतः तीनों वर्णों से शीघ्र अपनी तीन मूर्तियां धारण कर ।२७। त्रिदेव के ऐसा कहने पर उस कुमारी ने त्रिविधि तनु धारण किया सिता कृष्णा पीता त्रिमूर्ति को प्राप्त हुई ।२८। जो वह शुभा ब्राह्मी मूर्ति है सौम्य रूप से ब्रह्म सृष्टि विधान से वह सुश्रोणी प्रजा रचती है ॥२९॥ जो रक्त वर्ण वाली सुरूपा पतली कमर वाली तथा शंख चक्र धारण करने वाली थी वह देवी वैष्णवी कला कही गयी है ।३० वह सकल विश्व की रक्षा करती है उसको विष्णु की माया कहते हैं जो कृष्ण वर्ण से त्रिशूलिनी रौद्र मूर्ति है वह भयंकर दाढ़ वाली रौद्रा देवी जगत् का संहार करती है जो श्वेत वर्ण ब्रह्मा की सृष्टि विभावरी देवी थी वह विपुल कमल नेत्र वाली ब्रह्मा को शीघ्र अभिमंत्रित कर वहीं अन्तरर्धान हो गयी ॥३१॥३२। वह अन्तर्हिता देवी सर्वज्ञता की इच्छा से महा तीव्र तप करने श्वेत पर्वत में गयी ॥३३॥३४॥ जो वैष्णवी कुमारी थी वह केशव से आज्ञा मांग दुश्चर तप करने मन्दराचल पर गयी ।३५। तथा जो कराल दंष्ट्र' विशालाक्षी रौद्रा कुमारी थी वह भी शिव से विदा मांग तप करने नील पर्वत पर गयी ।३६। तदनन्तर बहुत कालान्तर में ब्रह्मा प्रजा रचने को उद्यत हुआ परन्तु प्रजा रचने पर भी ब्रह्मा की प्रजा वृद्धि को नहीं प्राप्त हुयी ॥३७। जबकि ब्रह्मा की मानस सृष्टि नहीं बढ़ी तब ब्रह्मा सोचने लगा कि क्या कारण है कि जिससे मेरी प्रजा बढ़ नहीं रही है ॥३८॥ हे पृथ्वी ! तब

ब्रह्मा ने योगभ्यास द्वारा हृदय से ध्यान किया ब्रह्मा ने ध्यान में श्वेत पर्वतस्थ कुमारी को जाना ॥३६॥ वह वहां कठिन तप कर रही थी और तप करने से उसके सारे पाप दूर हो गये थे उसको देख ब्रह्मा जहां वह कुमारी थी मन्दराचल पर्वत पर जा पहुंचा ॥४०॥ तप करती हुई उस कन्या को देख ब्रह्मा यह बोला ब्रह्मा ने कहा– हे भद्रे ! तप किस उद्देश्य से कर रही है ॥४१॥ हे विशालाक्षि ! मैं तुम्हारे ऊपर प्रसन्न हूँ हे कन्यके ! वरदान माँगिये । सृष्टि बोली हे भगवन् ! मैं एक स्थान में नहीं रह सकती हूँ ॥४२॥ अतः सर्वगत्व चाहती हुई आपसे वर मांगती हूँ सृष्टि देवी के इस प्रकार कहने पर प्रजापति ब्रह्मा ने कहा कि हे देवि ! तुम स्वर्गा हो जाओगी । ब्रह्मा के इस प्रकार कहने पर वह कमलेक्षणा सृष्टि देवी ब्रह्मा के ही अंक में लय को प्राप्त हो गई उसी समय से ब्रह्मा की सृष्टि बढ़ने लगी ॥४३॥४४॥४५॥ ब्रह्मा के सात मानस पुत्र हुये उस सात मानस पुत्रों के अन्य तपोधनादि पुत्र हुये तथा उनके भी पुत्रों के पुत्रों के पुत्रों से चार प्रकार से भूत सृष्टि हुई ।४६॥ स्थावर और जंगमों की सृष्टि सर्वत्र स्थित है लोक में यत् किञ्चत् स्थावर जङ्गम है वह सब भूत भव्य सृष्टि ने ही सर्वदा के लिये स्थापित किया है ।४७॥ इति वाराह पुराणे सृष्टि विभागे त्रिशक्ति महात्म्ये सृष्टि देवता निरूपणम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम नवतितमोऽध्यायः ।।६०॥

अथः इकानवेवोंऽध्याय

दोहाः— सरस्वती वर्णन करें, इकानवे अध्याय ।
जय पूर्वक ब्रह्मा स्तुति, कीनी माथ नवाय ॥

अथः सरस्वती वर्णनादिकम्— श्री वाराह जी ने कहा– हे वरारोहे ! शिव ने परमेष्ठी ने जो वह त्रिशक्ति देवी कही है उसकी अन्य महा विधि सुनिये ॥१॥ उन त्रिशक्तियों में प्रथम

श्वेत वर्ण स्वरूप वाली सृष्टि कही गई है वह एकाक्षरा नाम से सर्वाक्षर मयी नाम से विख्यात् है ॥२॥ उसी को वागीशा कहा जाता है उसी को सरस्वती कहते हैं वही विद्येश्वरी देवी है। वही अमिताक्षरा कही जाती है। कहीं वही ज्ञान विधि है, कहीं वही विभावरी देवी है। जितने सौम्य नाम हैं तथा यावत ज्ञानोद्भव नाम हैं। हे पृथ्वी! वह सब उसी शक्ति देवी के हैं जो वैष्णवी शक्ति कही है वह विशालाक्षी रक्त वर्ण स्वरूपिणी है ॥३॥४॥ ॥५॥ और अपरा तीसरी परायण रौद्री कही है जो रुद्र के तत्व से जानता है वह इन तीनों शक्तियों को सिद्ध कर लेता है ॥६॥ हे वरारोहे! वही यह एक ही सर्वा त्रिविधि कही गई है। हे पृथ्वी यह पुरातन सृष्टि मैंने तुझे कह दी है। ७॥ उसी से यह सारा स्थावर जङ्गम जगत व्याप्त है। जो वह अव्यक्त जन्मा ब्रह्मा से वर्द्धित सृष्टि थी, उसी के तुल्य ब्रह्मा ने उस देवी की स्तुति की है। ब्रह्मा ने कहा है हे सत्य सम्भूते! हे ध्रुवे! हे धरे! हे हे अक्षरे! हे देवि! आपकी जय हो ॥८॥६॥ हे सर्वज्ञे! हे सर्व जननि! हे सर्व भूत महेश्वरि! हे वरारोहे! तू सर्वज्ञा है तथा सर्व सिद्धियों को देने वाली है ॥१०॥ हे सिद्धि! बुद्धि देने वाली देवि! तू सबकी प्रसूति है परमेश्वरी है तू स्वाहा है तूही स्वधा है हे श्रेष्ठ मुख वाली देवी तू ही उत्पत्ति स्थान है ॥११॥ तू ओंकार स्वरूपिणी है तू ही वेदोत्पत्ति है हे वरानने! तू ही देव दानव यक्ष गन्धर्व राक्षस पशु तथा वीरुधादियों की योनी है तू ही विद्या है। तू ही विद्येश्वरी है तू ही सिद्ध है तू ही प्रसिद्ध है तू ही मैं हूं तू ही सुरेश्वरी है ॥१२॥१३॥ हे वरारोहे तू ही सर्वज्ञा है तू ही सर्व सिद्धि करने वाली है तू ही सर्वत्रा है तू ही सर्व शत्रु दलन करने वाली है ॥१४॥ तू ही सर्व विद्येश्वरी देवी है हे स्वास्ति करने वाली तेरे लिये नमस्कार करता हूं हे वरानने जो पुरुष तेरा स्मरण करके ऋतु-स्नाता औरत के

पास जाता है हे प्रजेश्वरी ! तेरे प्रसाद से अवश्य उसकी सन्तान उत्पत्ति होती है तू विजया है स्वरूपा है। हे भद्रे तू सर्व शत्रु नाश करने वाली है ॥१५॥१६॥ इति श्री वाराह पुराणे त्रिशक्ति महात्मे सृष्टि सरस्वती वर्णनादिकम नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम एक नवतितमो अध्याय ॥९१।

अथ बयानवेवोऽध्याय

दोहाः— वैष्णवी माहात्म्य कहूँ, बयानवे अध्याय ।
तपोबल देखि आप मुनि, नारद दैत्य सुनाय ॥

अथः वैष्णवी माहात्म्यम्— श्री वाराह जी ने कहा- जो कौमार व्रत धारण करने वाली परम वैष्णवी राजसी शक्ति देवी तप करने मन्दराचल में गई थी उसने अकेले ही विशाला में तप किया, बहुत समय पीछे तप करते उसका मन क्षुभित हुआ ॥१॥२॥ उस क्षोभ से सौम्य लोचना कुमारी निकली हैं उन कुमारियों के काले घुंगराले बाल थे ओष्ट बिम्बा के समान थे नेत्र दीर्घ थे ॥३॥ उन कुमारियों ने नितम्बों में करधनी पहिनी थीं पैरों में नूपुर पहिने थे वे कुमारियां सुन्दर कान्ति वाली थीं देवी के मन के क्षुभित होने पर इस प्रकार की हजारों कुमारियां पैदा हुई कोटिशः विविध प्रजा हुई उस देवी ने उन कुमारियों को देखकर उसी मन्दराचल पर्वत में सैकड़ों महलों वाला नगर निर्माण किया उस नगर में बड़ी लम्बी चौड़ी सड़कें बनाई गई थीं उस नगर के महल सोने के प्रासादों से सुशोभित थे ॥४॥५॥ ॥६॥ घरों के अन्दर पानी के कुयें खुदे थे तथा उन घरों में मणियों की सीढ़ियां लगी थीं रत्न जालों से झरोके तथा खिड़कियां सजाई गई थीं। उन घरों के आस पास बगीचे लगे थे ॥७। हे धराधरे ! असंख्य महल तथा कुमारियां थीं परन्तु उनमें प्रधान कुमारियों के नाम कहता हूं ॥८॥ विद्युत प्रभा चन्द्रकान्ति सूर्य कान्ति गम्भीरा चारुकेशी सुजाता तथा मन्जु केशनी ॥९॥

घृताची उरवसी शील मन्डिता शशिनी विशालाची चारु कन्या पीन पयोधरा तथा धन्या ॥१०॥ चन्द्र प्रभा गिरि सुता तथा सूर्य प्रभा वाली मृता स्वयं प्रभा वाली चारु मुखी शिव दूती तथा विभावरी ॥११॥ जया विजया जयन्ती जिता आदि तथा अन्य भी सैकड़ों कुमारियां उस नगर में पाश अंकुश धारण करके उस वैष्णवी देवी की सेवा करती थीं। उन कुमारियों से परिवृत वह देवी सिंहासन पर बैठती थी ॥१२॥१३॥ वे कुमारियां उस विलासिनी देवी के ऊपर श्वेत चंवर डुलाती थीं वह देवी कौमार व्रत धारण कर तप करने को उद्यत हुई। १०॥ श्रेष्ठ स्त्रियों तथा कुमारियों से पूजित हो सर्वाङ्ग शोभिनी देवी जभी तपोनिष्ठ ठहरी थी तभी वहां पर ब्रह्म पुत्र नारद आ पहुँचा। नारद को देख देवि ने अपनी अनुचरी विद्युत प्रभा को कहा कि आसन दीजिये तथा इन नारद जी को शीघ्र पाद्य आचमनीय दीजिये ॥१५॥ ॥१६॥१७॥ देवी के इस प्रकार कहने पर कुमारी विद्युत प्रभा ने नारद जी को आसन पाद्य अर्ध्य निवेदन किया ॥१८। तदनन्तर आसन पर बैठे प्रणत नारद मुनि को देख देवी परम हर्ष युक्त हो कहने लगी हे मुनि श्रेष्ठ! आपका स्वागत हो आप कहां हो आप कहां से यहां आये हो, आपका क्या कार्य है शीघ्र कहिये। जिससे आपका समय व्यत्यय न होवे ॥१९। २०॥ देवी के इस प्रकार कहने पर लोक पित् नारद जी कहने लगे कि मैं ब्रह्म लोक से इन्द्र लोक, इन्द्र लोक से रौद्राचल में आया हूँ। पुनः आपको देखने यहां आया हूं। ऐसा कह नारद मुनि देवी को देखने लगा ॥२१॥२२॥ देवी को देख नारद क्षण भर तक विस्मित हुआ अहो! आश्चर्य युक्त इसका रूप अहो! इसकी कान्ति अहो! इसका धैर्य, अहो! इसकी अवस्था, अहो! इस देवी की निरकामता इस प्रकार नारद खेद को प्राप्त हुआ देव गंधर्व सिद्ध यक्ष, किन्नर, तथा राक्षसों में ऐसा मनोहर रूप किसी भी स्त्रियों

में कहीं नहीं देखा जाता। विस्मय युक्त नारद इस प्रकार मन से सोच कर शीघ्र देवी को प्रणाम कर आकाश की ओर चला तथा शीघ्र दैत्येन्द्र पालित नगर को पहुँचा ।।२३।।२४।। ।।२५।।२६।। हे पृथ्वि ! महिपासुर से पालित समुद्र के अन्दर स्थित पुरी को गया। वहां नारद ने महिषाकृति वाले लब्ध वर देव सेना नाशक महा वीर दैत्य को देखा वहां उस दैत्य ने नारद मुनि का सत्कार किया ।।२७।२८।। प्रसन्नात्मा ने जो समाचार देवता पुर में था उई देवी का अनुराम रूप उस दैत्य को सुनाया ।।२६।। नारद ने कहा– हे असुरेन्द्र ! सावधानता से एक कन्या रत्न सुनिये, वरदान के प्रभाव से चराचर त्रैलोक्य तेरे आधीन है। ३०।। हे दैत्य ! मैं ब्रह्म लोक से मन्दरा पर्वत में आया हूँ। वहां मैंने सैकड़ों कुमारियों से सेव्यमान देवी का नगर देखा है ।।३१।। वहां जो तापस व्रत धारिणी प्रधान कन्या है वैसी देव दैत्य तथा यक्षों में कहीं नहीं दीख पड़ती है ।३२।। जैसी मैंने वह देखी वैसी ब्रह्मान्ड कान्ड के मध्य घूमते हुये मैंने कभी और कहीं नहीं देखी है ।।३३।। देव, गंधर्व ऋषि सिद्ध चारण तथा अन्य दैत्य नायकादि सभी उसकी उपासना करते रहते हैं ।।३४ उस देवी को देख मैं शीघ्र आया हूं बिना देव गंधर्वों के जीते उसको कोई नहीं जीत सकता है ।।३५।। ऐसा कह क्षण भर स्थित हो उस दैत्य को आज्ञा देकर बुद्धिमान नारद शीघ्र जहां से आया था वहीं अंतर्धान हो गया ।।३६।। इति श्री वाराह पुराणे प्रागितिहासे त्रिशक्ति माहात्मे श्री वैष्णवी माहात्मम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम द्विनवतितमोऽध्याय ।।६२।।

अथ तिरानवेवाँ अध्याय

दोहा— तिरानवे अध्याय में, महिषासुर सम्वाद ।
मन्त्रियों से सलाह कर, सुर जय हित आजाद ।।

अथः मन्त्री महिषासुर सम्वाद— श्री वाराह जी ने कहा– नारद के मुख से उस देवी का वर्णन सुन नारद के चले जाने पर महिषासुर दैत्य विस्मित मन हो उस देवी के लिये चिन्ता करने लगा ॥१॥ उसी की चिन्ता करते दैत्य ने जब मंत्री सलाह ही कल्याण रूप देखकर मंत्रियों को बुलाया ॥२॥ उस महिषासुर के महा आठ मंत्री थे प्रघस विघस शंकुकर्ण विभावसु सुराजी विद्युन्माली पर्जन्य क्रूर यह पूर्वोक्त उस महिषासुर के प्रधान मन्त्री कहे गये हैं ॥३॥४॥ वे मन्त्री आकर बैठे हुये दानवेन्द्र को कहने लगे कि क्या कार्य है सो कहिये दानवेन्द्र उन मन्त्रियों का वचन सुन नारद से ज्ञात कन्या लाभार्थ कहने लगा महिषासुर ने कहा– महर्षि नारद ने मेरे लिये एक बाला कन्या कही है उस वरांगना के जीते विना सुराध्यक्षता नहीं मिल सकती है अतः इसी कार्य के लिये आप लोग विचार कर कहिये ॥५॥६॥७॥ किस उपाय से वह बाला प्राप्त हो तथा किस उपाय से देवता पराजित हों यह सब विचार कर शीघ्र मुझे सुनाइये ॥८॥ दानवेन्द्र के ऐसा कहने पर मंत्री कहने लगे प्रघस नाम का मंत्री दानवेश्वर से कहने लगा कि हे दानवेश्वर ! जो वह महा सती बाला नारद मुनि ने कही है, वह वैष्णव रूप धारणी परम शक्ति देवी है । ६॥१०॥ गुरु पत्नी, राज पत्नी तथा सामंत स्त्रियों को ग्रहण करने से तथा अगम्या गमन करने से राजा नष्ट हो जाता है ॥११॥ प्रघस के ऐसा कहने पर विघस कहने लगा हे राजन् ! प्रघस ने उस देवी के प्रति ठीक ही ठीक कहा है ॥१२॥ परंतु मतैक्य बुद्धि स्मर्ण आ जावे तो जय की इच्छा वालों को सर्वदा कुमारी का वरण करना चाहिये ॥१३॥ कन्या का प्रकर्षण कार्य स्वतंत्रता से कहीं नहीं हो सकता । हे मंत्रिगण ! यदि मेरा वाक्य आप लोगों को रुचिकर लगता है तो जाकर उस शुभ कन्या देवी की प्रार्थना कीजिये । जो उस देवी का श्रेष्ठ बंधु होगा उस देवी

की याचना करेंगे ॥१४॥१५॥ पहिले साम से फिर प्रदान से फिर भेद से पुनः दण्ड से कृम पूर्वक उस देवी को वस में करेंगे ॥१६॥ इस कृम से यदि वह नहीं मिलेगी तो सज धज करे युद्ध के मुख से उस देवी को प्राप्त करेंगे ॥१७॥ विघस के ऐसा कहने पर शेष सब मन्त्री गण हर्षित मन हो प्रशंसा करते हुये शुभ वचन बोले ॥१८॥ विघस ने जो उस वरानना के प्रति कहा है वह ठीक है अतः उस कार्य को शीघ्र कीजिये वहाँ दूत भेजना चाहिये ॥१६॥ जो सर्व शास्त्र नीतिज्ञ है पवित्र है सौर्य युक्त है उस दूत को भेजना चाहिये पुनः उस दूत से देवी का वर्ण रूप तथा गुणों को पराकृम, बल सौण्डीर्य्य आदि जानकर तथा उस देवी के वन्धु वर्ग और सामग्री तथा स्थान कारण जानकर तदन्न्तर कार्य करना उचित है तब दैत्य के वचन सुन मन्त्री श्रेष्ठ विघस को पद पद में प्रशंसा करने लगे प्रशंसा करके वे सारे सचिव दूत को सन्देश सुनाने लगे ॥२०॥२१॥२२॥२३॥ वह माया जानने वाले महा भाग्यवान विद्युतप्रभ को दूत कार्य में भेजकर विघस मन्त्री कहने लगा ॥२४॥ हे प्रभो ! जभी दूत आता है तभी देव सेना के प्रति विजय की तय्यारी कीजिये चतुरन्ग सैना से दानवेन्द्रों को सनध कीजिये ॥२५॥ हे असुरेन्द्र आपके पराकृम द्वारा देवताओं के भग्न हो जाने पर तथा आपके इन्द्र पदा रूढ़ हो जाने पर वह कन्या आपके बस में सरलता से हो जायगी ॥२६॥ सारे लोकपालों के जीते जाने पर तथा मरुद्गणों के पराजित हो जाने पर नाग विद्याधर, सिद्ध, गंधर्व गरुड़, रुद्र, वसु आदित्यादियों से आप ही इन्द्रपदारूढ़ अवश्य हो जावेंगे। इंद्रस्वरूप आप के लिये सैकड़ों देव गंधर्व कन्या स्त्रियां हो जायेंगी ॥२७॥२८॥ सबके वस में आने पर वह देवी भी अवश्य वस में आ जायेगी। विघस मन्त्री के ऐसा कहने पर महिषासुर महा मेघ वर्ण तथा नीला जन समान कान्ति वाले

विरूपाक्ष नाम वाले सेनापति से कहने लगा कि शीघ्र हाथी घोड़े रथ, तथा पैदल सेना तैयार कर लाइये ॥२६॥३०॥ जिस सेना से कि युद्ध में दुर्जय देव गंधर्वों का नाश करूं। महिपासुर के ऐसा कहने पर सेनापति विरूपाक्ष अनन्त महा बलवान सेना तय्यार कर ले आया उस सेना के एकैक दानव युद्ध के लिये वज्र समान हस्त थे ॥३१॥३२॥ एकैक दानव योधा एक एक देव को जीतने की स्पर्धा करने लगे उनमें प्रधान एक अरब नौ करोड़ थे ॥३३॥ बराबर वज्र पराक्रम वाले दैत्य योधाओं ने आपस में सलाह कर देव सेना मारने की इच्छा से प्रयाण किया ॥३४॥ ॥३५॥ विचित्र रथ, ध्वजा, शस्त्र तथा अनेक विध उग्र रूप वाले दैत्य आयुध ग्रहण कर देव पराजय इच्छा कर नाचने लगे ॥३६॥ इति श्री वाराह पुराणे मन्त्री महिपासुर सम्वादो नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम त्रिनवतितमोऽध्याय ॥६३॥

अथ चौरानवेवाँऽध्याय

दोहा:— सुरासुर संग्राम कहूँ, चतुर नवति अध्याय ।
असुर हत सुर भागे सब, ब्रह्म सदन अकुलाय ॥

अथः सुरासुर युद्ध वर्णनम्— वाराह ने कहा– तदनन्तर काम रूपी महा बलवान महिपासुर मेरु पर्वत पर जाने की इच्छा से मदमस्त हाथी पर सवार हो देवताओं से युक्त शत ऋतु इन्द्र की पुरि को प्राप्त कर क्रोध से देवताओं की ओर दौड़ा अपने अपने शस्त्र ग्रहण कर अच्छे अच्छे घोड़ों वाले रथों पर बैठ कर सारे दैत्य नायक प्रसन्नता पूर्वक देवताओं की ओर झपटने लगे ॥१।२॥३॥ उन प्रचण्ड योधाओं का परस्पर गर्जन पूर्वक रोंगटे खड़े करने वाला घोर युद्ध हुआ ॥४॥ उस युद्ध में अञ्जन, नील,कुक्षि, मेघ वर्ण, बलाहक, उदराक्ष, ललाटाक्ष, सुभीम भीम, विक्रम, तथा स्वर्भानु आदि आठ दैत्य अष्ट वसुओं के साथ लड़ने लगे तथा यथा संख्य अन्य द्वादश दैत्य द्वादश आदित्यों के साथ लड़ने लगे उन द्वादश महा

दैत्य योधाओं के नाम इस प्रकार हैं कि भीम ध्वांत अश्वस्थ कर्ण संकु कर्ण वज्रक ज्योति वीर्य्य विद्युन्माली रक्ताक्ष भीम दंष्ट्र विद्युज्जिह्व अतिकाय महाकाय दीर्घ वाहु कृतान्तक ये बारह दैत्य आदित्यों से लड़ने लगे ॥५।६॥७॥८॥९॥ उसी प्रकार अन्य दानव भी अपनी सेना लेकर क्रोधित हो यथा संख्य एकादश रुद्रों से लड़ने लगे ॥१०॥ काल कृतान्क रक्ताक्ष हरण मित्रहा बल यज्ञहा ब्रह्महा गोघ्न स्त्रीघ्न तथा संवर्त्तकादि ग्यारह युद्ध दुर्मद, भीम, विक्रम, वाले दैत्य ग्यारह रुद्रों के साथ लड़ने लगे ॥११॥१२॥ शेष देवताओं के साथ शेष दैत्य यथा योग पूर्वक लड़ने लगे स्वयम् महिषासुर वेग पूर्वक इन्द्र से लड़ने लगा ॥१३॥ ब्रह्मा के वरदान से गर्व वाला वह बलवान दैत्य युद्ध में पुरुष से अवध्य था। चाहे शिव क्यों न हो ॥१४॥ संख्या पूर्ति करने वाले यातुधान वसुओं के सहित आदित्य तथा रुद्रों ने खूब मार गिराये। और असुरों ने भी देवताओं की सेना मार गिराई ॥१५॥ इस प्रकार देवेन्द्र सेना भग्न होने पर तथा शूल पट्टिश, मुग्दगरादि आदि शस्त्रों से पीड़ित हो असुरों के भय से सारे देवता ब्रह्म लोक को दौड़ भाग गये ॥१६॥१७॥ इति श्री वाराह पुराणे त्रिशक्ति माहात्मे सुरासुर युद्ध वर्णनम् नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम चतुर नवतितमोऽध्यायः ॥६४॥

अथ पिचानवेवाँ अध्याय

दोहा:— पिचानवे अध्याय में, महिषासुर इतिहास।
दश सहस्र सम युद्ध कर, असुर वध किया खास॥

अथः महिषासुर वध वर्णनम्— श्री वाराह ने कहा— इस ओर दूत कार्य के लिये भेजा हुआ विद्युतप्रभ नाम का दैत्य अरथानों में विजयापन्न कुमारी शत युक्त देवी के समीप जाकर

नम्रता पूर्वक प्रणाम कर कहने लगा । विद्युतप्रभ ने कहा–हे देवि ! आदि सर्ग में ब्रह्मा से उत्पन्न ऋषि था उसका सुपार्श्व नाम सारस्वत सखा हुआ । उसका प्रतापवान महा तेजा सिंधु द्वीप हुआ उस सिंधु द्वीप ने श्रेष्ठ पुरी महिषमती में घोर तप किया । हे सोभेन ! जब कि निराहार रह वह सिन्धु द्वीप घोर तप कर रहा था ॥१॥२॥३॥४॥ विप्र चिति की परम सुन्दर पृथ्वी में अद्वितीय रूप वाली माहिष्मती नाम की पुत्री अपनी सखियों के साथ विहार करती यदृच्छा से मन्दर द्रोणी में आ पहुँची वहां उसने एक सुन्दर तपोवन देखा ॥५॥६॥ वहां अस्वर संज्ञक मुनि का आश्रम था वह आश्रम अनेक वृक्षों से शोभायमान था तथा अनेक लता गृहों से परिवृत था । वकुल, लकुच, चन्द्रन, स्पन्दन, साल, ताल, तमाल सरल आदि वृक्ष जातियों से और विचित्र वन खण्डों से उस मुनि का आश्रम अति रमणीय था ॥७॥८॥ रम्य शुभ आश्रम को देख वह माहिष्मती नाम वाली आसुरी कन्या सोचने लगी कि मैं इस तपस्वी को डराकर सखियों के साथ क्रीड़ा करती परम पूजित हो स्वयं में ही इस रमणीय आश्रम में ठहरूंगी ॥६॥१६॥ ऐसा विचार कर उसने सखियों के साथ तीक्ष्ण शृंग धारिणी महिषी का रूप धारण किया और अपनी सखियों के साथ उस ऋषि को भय दिखाने उसके पास जाकर भय दिखाने लगी परन्तु ऋषि ज्ञान चक्षु से पहिचान लिये और क्रोध युक्त हो उस आसुरी कन्या को शाप दिया जिससे कि कि महिषी का रूप धारण कर तू मुझे डराती है अतः हे पाप धर्मे ! सौ वर्ष तक महिषी ही रहेगी । ऋषि के इस प्रकार कहने पर सखियों सहित वह कांपने लगी ॥११॥१२॥१३॥१४। और ऋषि से कहने लगी कि हे मुने ! आप शाप मिटा दीजिये और उस ऋषि के पैरों में गिर पड़ी उसका ऐसा वचन सुन उस मुनि ने करुण युक्त हो शाप का अंत कर कहा कि इस स्वरूप से एक

पुत्र पैदा करके तेरा शाप मिट जायगा हे भद्रे ! मेरा वचन झूठ नहीं होता है ॥१५॥१६॥ मुनि के ऐसा कहने पर वह महिष रूपिणी कन्या उत्तम नर्मदा तीर पर पहुँची जहां कि महा तप सिन्धु द्वीप अति घोर तप कर रहा था। वहां अति सुन्दर इन्दुमती नाम की दैत्य कन्या वस्त्र रहित नदी जल में स्नान करती हुई सिन्धु द्वीप मुनि ने देखी ॥१७॥१८॥ उसको देख मोहित होकर मुनि ने शिला द्रोणी में अपना शुक्र पात किया उस माहिष्मती ने दिव्य गंध सुगन्धित वीर्य्य जल को देख सखियों से कहा कि मैं इस शुभ जल का पान करती हूँ। इस प्रकार कह वह उस मुनि के शुक्र को पीकर मुनि के वीर्य्य से गर्भवती हुई। और समय पर पैदा किया उसका पुत्र महा बल पराक्रम तथा बुद्धिमान ब्रह्म वंश वर्द्धक महिषासुर नाम से विख्यात् हुआ वही देव सेना विनर्दन करने वाला महिषासुर आपके साथ विवाह करना चाहता है ॥१९॥२०॥२१॥२२॥ हे निष्पापे ! वह महिषासुर आपके ऊपर प्रसन्न होकर संग्राम में देवताओं को भी जीतकर त्रैलोक्य सर्वस्व आप ही को दे देगा ॥२३॥ हे देवि ! उसको अपनी आत्मा अर्पण करने से महत् कीजिये । इस प्रकार उस दूत ने देवी से कहा ॥२४॥ तदनन्तर कुछ न कहकर देवी ने हास्य किया। देवी के हंसने पर दूत ने संभ्रान्त हो देवी की कुक्षि में चराचर त्रैलोक्य देखा, और तभी अति तेज वाली, पतली कमर वाली जया नाम की देवा की प्रतिहारी देवी के हृदय में स्थित हो कहने लगी। जया ने कहा हे दूत ! जो तूने कन्या विवाहार्थ कहा है। वह कह दिया यानी देवी ने सार्व कालिक कौमार व्रत धारण किया है और देवी की सेवा करने वाली अन्य कुमारी भी यहां हैं। परन्तु उनमें से एक भी नहीं मिल सकती स्वयम् देवी का मिलना तो कठिन ही है। हे दूत तू शीघ्र चला जा नहीं तो मार खायेगा ॥२५॥२६॥२७॥२८॥२९॥ जया के ऐसा कहने

पर दूत चला गया। तभी शीघ्र आकाश से महातपा मुनि नारद में बहुत प्रसन्न हूँ कहता हुआ' आया मंगल मय नारद मुनि आ कर देवी को प्रणाम कर आतिथ्य सत्कार पाय परमासन पर बैठकर कहने लगा ॥३०॥३१॥ और सब देवियों को प्रणाम कह कर बोला हे देवि सब देवताओं ने आपके पास भेजा है ॥३२॥ महिषासुर दैत्य ने युद्ध में सारे देवता जीत लिये हैं। और उस महिषासुर ने आपके साथ अपना विवाह करने का भी प्रयत्न किया है ॥३३॥ हे वरानने! देवताओं के कथनानुसार मैं आपको कहता हूँ कि स्थिर होकर उस दैत्य का वध कीजिये ॥३४॥ ऐसा कह नारद मुनि अन्तर्धान हो स्वेच्छा से चला गया तदनन्तर देवी ने सब अपनी अनुचरियों को कहा कि सब की सब सज धज कर लड़ाई के लिये तैयार हो जाओ ।३५॥ तब देवी की आज्ञानुसार सारी महा भागा कन्याओं ने खड्ग, ढाल धनुष धारण कर भयङ्कर रूप धारण किया ॥३६॥ दैत्य मारने के लिये युद्ध की इच्छा वाली हो सन्नद्ध हो गई थीं तभी सारी दैत्य सेना देव सेना छोड़कर जहां देवी की स्त्री सेना सन्नद्ध थी वहीं आयी। तब क्रोधित हो वे कन्या दानवों के साथ लड़ने लगीं ॥३७॥३८॥ उन कन्याओं ने क्षण भर में ही महिषासुर का सारा चतुरंग बल मार गिराया। वहां किसी के सिर काट गिराये किसी की छाती फाड़ कर क्रव्याद रुधिर पीने लगे अन्य कितने ही कबन्ध भूत हो दैत्य नायक नाचने लगे इस प्रकार वे सब पापी क्षण भर में मर गये। और अन्य बचे खुचे महिषासुर के पास दौड़ भागे ॥३९॥४०॥४१॥ तब बड़ा हाहा कार मच गया। तथा सारा दैत्य बल हाहा कृत हो गया। इस प्रकार अपनी सेना को व्याकुल देख महिषासुर कहने लगा हे सेनापते! यह क्य बात है। जो कि मेरे रहते हुये सारी सेना

नष्ट हुई है। तब हस्ति स्वरूप वाला यज्ञ हनु नाम का दैत्य बोला कि यह सारी सेना कुमारियों ने नष्ट की है तदनन्तर महिषासुर खड्ग धारण कर उन शुभ लोचना कुमारियों को मारने दौड़ा। जहां कि देव गंधर्व पूजित देवी स्थित थी वहीं जा पहुँचा ॥४२॥४३॥४४॥४५॥ वह दैत्य वहीं गया, जहाँ देवी स्थित थी उस दैत्य को आते देख देवी ने वीस भुजा धारण कीं। ४६॥ धनुष, खड्ग, शक्ति वाण, शूल, गदा, मूसल, चक्र, भिंदिपाल, दण्ड, पाश, ध्वजा, पद्म आदि वीस हथियार वीस भुजाओं से ग्रहण कर कवच पहिन सिंह की सवारी हो देवी ने संहार कारक रुद्र भगवान् का स्मर्ण किया स्मरण करते ही रुद्र भगवान देवी के सम्मुख आय पहुँचे ॥४७।४८॥४६॥ देवी ने रुद्र को प्रणाम कर कहा कि हे देव देव सनातन! मैं आपके सामने ही सारे दैत्यों को जीत लेती हूँ ॥५१॥ ऐसा कह देवी परमेश्वरी ने एक महिषासुर को छोड़ सारे दैत्य हरा लिये फिर महिषासुर की ओर दौड़ी ॥५१॥ जभी देवी उसके पास पहुँची तभी देवी को देख महिषासुर भाग गया और कभी युद्ध करता था कभी छिप जाता था ॥५२॥ फिर कभी युद्ध करने लगता था, कभी चुप हो जाता था एवम् प्रकार देवी के साथ लड़ते उस दैत्य के दस हजार वर्ष व्यतीत हुये। डरता हुआ वह दैत्य सकल ब्रह्माण्ड में घूमा ॥५३॥ ॥५४॥ तदनन्तर बहुत समय पश्चात् देवी ने उस दैत्य को शतशृंग नाम महा पर्वत में पैरों से पकड़ शूल से मार गिराया। खड्ग से सिर काट डाला सिर काटने पर उस महिषासुर दैत्य शरीर के अन्तस्थ पुरुष देवी के शस्त्राघात से दैत्य शरीर को छोड़कर स्वर्ग को गया ॥५५॥५६॥ दैत्य महिष को मारे देख सारे ब्रह्मादि देवता प्रसन्न चित्त से देवी की स्तुति करने लगे ॥५७॥ देवता बोले हे देवि! हे महाभागे! हे गम्भीरे! हे भीम दर्शने हे जयस्थे! हे स्थित सिद्धान्ते! हे त्रिनेत्रे! हे विश्वतोमुख!

आपको नमस्कार हो ॥५८॥ हे विद्या विद्ये ! हे जये ! हे जाये ! हे महिषासुर मार्दिन ! हे सर्वत्रे ! हे सर्व देवेशि ! हे विश्व रूपिणि हे वैष्णवि ! आपको नमस्कार हो ॥५६॥ हे शोक रहिते ! हे निश्चले ! हे देवि ! हे पद्म पत्र समान शुभ नेत्र वाली ! हे शुद्ध सत्व व्रत धारण करने वाली ! हे चण्ड रूपे ! हे विभावरि ! आपको नमस्कार हो ॥६०॥ हे ऋद्धि सिद्ध देने वाली ! हे विद्ये हे अविद्ये ! हे अमृते ! हे शिवे ! शांकरी वैष्णवी ब्राह्मी हे सर्व देव नमस्कृते ! आपको नमस्कार हो ॥६१॥ हे घण्टा धारण करने वाली ! हे त्रिशूल धारण करने वाली ! हे महामहिष दैत्य को मारने वाली ! उग्र रूपे ! हे विरूपाक्षि ! हे महामाये ! हे अमृत सर्वे आपको नमस्कार हो ॥६२॥ हे सर्व प्राणियों का हित चाहने वाली हे सर्व सत्व मये ! हे ध्रुवे हे विद्या पुराण तथा सिल्पादियों की जननि हे भूत धारिणि आपको नमस्कार हो ॥६३॥ हे शुभे हे सर्व वेद रहस्य सर्व सत्व वालों की आपही शरण हो। हे विद्ये हे अविद्ये हे अम्बिके आपको नमस्कार हो ॥६४। हे विरूपाक्षि ! हे शान्ति हे शुद्ध किये जल के समान निर्मल हे महादेवि हे परमेश्वरि आपको नमस्कार हो ॥६५॥ हे देवि परमेश्वरि ! जो आपकी शरण आते हैं उनका रण संकट में भी कुछ अनिष्ट नहीं होता ॥६६॥ जो घोर व्याघ्र में तथा चोर भय, राज भय, में वन्धन में, यत् चित से इस स्तोत्र का पाठ करेगा और आपका स्मरण करेगा वह सब दुखों से अवश्य छूट जायगा ॥६७।६८॥ देवता के स्तुति करने पर देवी ने कहा कि हे देवगण ! श्रेष्ठ वरदान की याचना कीजिये ॥६६॥ देवता बोले हे निष्पापे जो आपके इस स्तोत्र को पढ़ेंगे उनकी सर्व कामना पूर्ण कीजिये यही हम वरदान मांगते हैं ॥७०॥ देवी ने ऐसा ही होगा कहकर देवताओं को विदा किया । और अपने आप वहीं पर स्थित रही ॥७१॥

हे पृथ्वी जो मनुष्य देवी के इस दूसरे जन्म को जानता है वह शोक रहित हो निर्मल अनामय पद को प्राप्त करता है ॥७२॥ इति श्री वाराह पुराणे त्रिशक्ति महात्मे महिषासुर वधोनाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम पंच नवतितमो अध्यायः ॥९५॥

अथ छियानवेवाँ अध्याय

दोहाः— छियानवें अध्याय में, रौद्री तप व्रत्तान्त ।
महा दैत्य रुरु नाम का, मार गेरो नितान्त ॥

अथः त्रिशक्ति रहस्ये रौद्री व्रतम्— श्री वाराह ने कहा— हे पृथ्वी जो वह तमोगुण से उत्पन्न रौद्री शक्ति तप करने नील गिरि पर गई थी उसका व्रत सुनिये ।१॥ चिरकाल तक तपस्या करके सारे जगत् का पालन करूंगी इस उद्देश्य से उस रौद्री देवी ने पंचाग्नि साधन किया ॥२॥ वह देवी घोर तपस्या कर रही थी कि कुछ समय पश्चात् ब्रह्मा से वरदान पायकर महा तेजस्वी रुरु नाम का असुर समुद्र के मध्य सर्व रत्नों से अलंकृत एक महा नगर का स्वामी था। वह रुरु दैत्य सैकड़ों हजारों करोड़ों दैत्यों से युक्त हो माना दूसरे नमुची दैत्य के समान श्री मान् बलवान था ॥३॥४॥५॥ बहुत समय पश्चात् इस रुरु दैत्य ने लोकपालों के नगर जीतने की इच्छा से देवताओं के साथ लड़ना आरम्भ किया ॥६॥ उस महा सुर रुरु के समुद्र से उठने पर अनेक नक्र, ग्रह, मीन वाले समुद्र ने अपनी मर्यादा छोड़ पर्वत सिखरों को भी प्लावित किया ॥७॥ जिसके भीतर अनेक असुर संघ थे, उसी विशाल समुद्र जल के भीतर से विचित्र कवच तथा आयुधों से वि चत्र शोभा वाली कवच अस्त्र शस्त्र धारण किये भयङ्कर सेना निकली ॥८॥ उस सेना मदमस्त हाथियों पर एक एक बड़े घंटे और सैकड़ों क्षुद्र घन्टिकायें सजायी गई थीं उन हाथियों में बड़े बड़े दैत्य बैठे थे वे हाथी अपनी ही आकृति से भयङ्कर तथा समान ऊँचे थे ॥९॥

और उस सेना के साथ सुवर्ण पीठ वाले लाखों करोड़ों घोड़े घुड़सवार दैत्यों से तथा श्वेत चंवरों से अलंकृत हो शीघ्र गति से चल रहे थे ॥१०॥ सूर्य रथ के समान वेगवाले सुन्दर पहिये दन्ड, अक्ष तथा त्रिवेणु वाले और शस्त्र यंत्रों से परिपीड़ित अङ्ग वाले, असंख्य रथ विशक्त हो शीघ्र गति से चल रहे थे तथा अन्य पैदल सेना के योधा भी जीतने की इच्छा वाले श्रेष्ठ तूणरि हाथ में लेकर पद पद पर जय प्राप्त करने वाले प्रहरण शील असुर योधा अत्यंत शोभा को प्राप्त हो रहे थे ॥११॥१२॥इस प्रकार समुद्र जल से निकल चतुरन्ग सेना युक्त हो रुरु दैत्य के भग्न हो जाने पर इन्द्र पुरि को गया ॥१३॥ वहां जाकर देवता ओं के साथ लड़ने लगा तथा अन्य सेना प्रधान दैत्य भी मुग्दर मुसल वाण, दण्ड आदि आयुधों से देवताओं को मारने लगे तथा देवता भी दैत्यों को मारने लगे। इस प्रकार क्षण भर युद्ध कर इन्द्र सहित सब देवता असुरों से हार मानकर विमुख हो भागने लगे। देवतओं के इस प्रकार भग्न हो भाग जाने पर बलवान रुरु दैत्य देवताओं की ओर दौड़ा तब सारे देवगण भय विह्वल हो दौड़ते दौड़ते नील पर्वत पर पहुँचे जहां कि वह रौद्री तामसी शक्ति देवी तप कर रही थी ॥१४॥१५॥१६॥१७॥ ॥१८॥ जिसको कि संहार कारिणी काल रात्रि देवी कहते हैं। उस देवी ने उन भय विह्वल देवताओं को देखकर कि हे श्रेष्ठ देवताओ! भय दूर कीजिये। हे देवगण! आप लोगों की यह व्याकुल गति क्यों दीख रही है ॥१६॥२०॥हे देवगण अपने भय का कारण शीघ्र कहिये देवगण बोले कि यह भयङ्कर पराक्रम वाला रूरू दैत्य आ रहा है हे परमेश्वरि इससे डरे हुये हम सब देवताओं की रक्षा कीजिये। देवताणों के इस प्रकार कहने पर भीम पराक्रमी देवी परम प्रीति पूर्वक देवताओं के सामने हंसी। उसके हंसने पर उसके मुख से बहुत देवियां निकलीं ॥२१॥२२॥२३॥ जिन विकृत स्वरूपा

वालियों से यह विश्व अनेकशः व्याप्त है । वे देवियां निकलीं उन सब देवियों के पास अंकुश धारण किये थे । सबके पीन पयोधर थे सब ही ने शूल धारण किये थे । तथा सबने धनुष धारण किये थे भयङ्कर रूप वाली वे कोटिशः देवियां उस प्रधान रौद्री देवी को घेर कर स्थित हुई । ॥२४॥२५॥ तदनन्तर महाबल पराक्रम वाले देवताओं ने देवी का बल पाय तूणीरादि धारण कर दैत्यों के साथ लड़ना शुरू किया । क्षण भर ही में उस सारी दानव सेना को देवताओं ने पराजित किया संपन्न हो सारे देवता दानव सेना के साथ लड़ने लगे, जो देव बल था वह काल रात्रि का ही बल था । कालरात्रि के बल से देवताओं ने सारी दानव सेना यम घाट पहुँचा दी । और संग्राम में एक ही महा दैत्य रुरु बचा रहा ॥२६॥२७॥२८॥ उस रुरु दैत्य ने अपनी सेना को पराजित देख महा भयङ्कर रौरवी माया छोड़ी सब देवताओं को मोहित करने वाली वह माया वृद्धि को प्राप्त हुई । उस रौरवी माया से मोहित होकर सारे देवता निद्रा वश हो गये । और देवी ने त्रिसिखास्त्र से उस दैत्य को ताड़ित किया ॥२९॥३०॥ हे पृथ्वि देवी के ताड़ित करने पर उस दैत्य के चर्म मुण्ड दोनों अलग- अलग हुये । रुरु दैत्य के चर्म मुण्ड देवी ने क्षण भर में हरण किये । अतः देवी का नाम चामुण्डा हुआ है ॥३१॥३२॥ सर्व प्राणियों को भय करने वाली संहारिणी परमेश्वरी देवी काल रात्रि नाम से कही गई है । उसके अनुचर असंख्यक देवियां देवी को घेर कर स्थित हुई । और भूक से पीड़ित हो देवी से प्रार्थना करने लगीं कि हे देवि ! हम से भूक से पीड़ित हो रहीं हैं । अतः हमें भोजन दीजिये ॥३३ ३४॥३५॥ उनके इस प्रकार कहने पर देवी उन अनुचरियों के लिये भोजन सोचने लगी । जबकि अपने पास से उनके लिये कुछ भी भोजन न विचार सकी तब महादेव रुद्र का ध्यान करने लगी ध्यान

करने से त्रिलोचन महादेव भी एक दम प्रकट हो देवी से कहने लगे हे देवि क्या कार्य है। जो तेरे मन में है वह शीघ्र कह ।२६॥३७॥३८॥ देवी ने कहा– हे देवेश ! इन मेरी अनुचरियों के लिये भोजन का प्रबन्ध कीजिये ये मेरे साथ बलात्कार कर रही हैं अन्यथा बलात्कार से ये मुझे खा जायंगी रुद्र ने कहा हे देवेशि ! इनके अर्थ एक भोजन बतलाता हूँ आप सुनिये ॥३६।४०। हे वरारोहे देवि हे काल रात्रे हे महा प्रभे मुझसे कहे गये भोजन सुनिये । हे देवेशि जो गर्भवती स्त्री दूसरी स्त्री का वस्त्र धारण करे अथवा विशेष करके दूसरे पुरुष को स्पर्श भी करे वही भाग किसी के लिये पृथ्वी में भोजज होगा ॥४१॥ ॥४२॥ और मूर्खों के उन छिद्रों से बलि गृहण कर, उस बलि सैकड़ों वर्षों तक कितनी ही प्रसन्न रहेंगी। तथा अन्य कितनी ही सूतिका गृह में छिद्र देखें । छिद्र मिलने पर वहां पूजा को प्राप्त करेंगी तथा अन्य कोई अनुचरियां जात हारिका हो निवास करेंगी ॥४३॥४४॥ घरों में, क्षेत्रों में, तड़ागों में तथा उद्यानों में जो स्त्रियें अन्य चित्त हो रोदन करती रहेंगी उनके शरीरों में प्रवेश कर कितनी ही अनुचरियां तृप्त हो जायंगी । स्वयम रुद्र ने देवी को इस प्रकार कहकर तथा सेना सहित असुरेन्द्र रुरु को मारा दक्ष भगवान् त्रिलोचन महादेव देवी की स्तुति करने लगे ॥४५ ४६॥४७॥ रुद्र ने कहा– हे देवि चामुन्डे जय को प्राप्त हो। हे भूता पहारिणी आपकी जय हो हे काल रात्रे आपके लिये नमस्कार है ॥४८॥ हे विश्व मूर्ते ! हे शुभे हे शुद्धे हे विरूपाक्षि हे त्रिलोचने हे भीम रूपे हे शिवे हे विद्ये ! हे महामाये हे महोदये ! आपके लिये नमस्कार हो ॥४९॥ हे मनोजवे हे जये हे जृम्भे हे भीमाक्षि ! हे (क्षुभितक्षये, महामारि, विचित्रांगे, नृत्य प्रिये, शुभे) ! आपकी जय हो । ॥५०॥

हे विकराले हे महाकलि हे कालिके हे पाप हारिणी हे पाश हस्ते हे दन्ड हस्ते हें भीम रूपे हे भयानके ! आपको नमस्कार हो ॥५१॥ हे चामुन्डे हे ज्वलमानाशे हे तीक्ष्ण दंष्ट्रे हे महाबले हे शत यानस्थिते हे देवि हे प्रेतासन गते हे शिवे ! आपको नमस्कार हो ॥५२॥ हे भीमाक्षि हे भीषणे हे देवि हे सर्व भूत भयङ्करि हे कराले हे विकराले हे महाकालि हे करालिनि आपको नमस्कार हो ॥५३॥ कालि, करालि, विक्रान्ते हे कालरात्रि आपको नमस्कार हो, परमेष्ठी रूद्र के इस प्रकार स्तुति करने पर परमा देवी प्रसन्न होकहने लगी कि हे देवेश जो आपको अभिलाषित है वह वरदान मांगिये ।५४॥५५॥ रूद्र ने कहा– हे वरानने जो इस स्तोत्र से तेरी स्तुति करेंगे उनके लिये सर्वगता होकर तू वरदान दिया कर ॥५६॥ जो इस त्रिप्रकार से भक्ति युक्त हो तेरी स्तुति करेंगे । वे पुत्र- पौत्र तथा पशु वाले हो समृद्धि को प्राप्त हो जावेंगे ॥५७॥ जो इस त्रिशक्ति की उत्पत्ति भक्ति पूर्वक सुनेगा वह सर्व पाप विनिर्मुक्त हो अनामय पदवी को प्राप्त होगा ॥५८॥ रूद्र इस प्रकार चामुन्डा देवी की स्तुति करके क्षण भर में अन्तर्धान हो गये और वे देवता भी स्वर्ग को चले गये ।५६॥ जो देवी की त्रविध उत्पत्ति को जानता है वह कर्म पाश से छूटकर निर्वाण पद को प्राप्त होता है ॥६०॥ राज्य भ्रष्ट राजा शुद्धत. से नवमी के दिन अष्टमी के दिन अथवा चतुर्दशी के दिन उपवास करें एक सम्वत्सर तक व्रत करने से निष्कंटक राज्य को प्राप्त करता है । यह नय सिद्धान्त गामिनी त्रिशक्ति कही गई है ॥६१॥६२॥ यह ब्रह्म संस्थिता श्वेता सात्विकी प्रधान सृष्टि है और रक्ता राजसी वैष्णवी कही है ॥६३॥ और यही कृष्ण तामसी रौद्री देवी कही है । जिस प्रकार एक परमात्मा त्रिविध स्थित है प्रयोजन वश एक ही शक्ति त्रिविध प्रकार हुई है । जो इस त्रिशक्ति का परम कल्याण रूप सर्ग याने उत्पत्ति सुनेगा वह सर्व पापों से छुटकारा पाकर परम निर्वाण को प्राप्त होगा । जो

इसको नियत चित्त से नवमी के दिन सुनना है वह अतुल राज्य को प्राप्त करता है। तथा भय से दूर होता है। तथा इस उत्पत्ति की लिखित पुस्तक जिसके घर में है उसको अग्नि, चोर, सर्पादि भय नहीं होता है जो इस चरित्र लिखित देवी को पूजा करता है। उसने मानो सचराचर त्रैलोक्य पूज लिया है वह धन दौलत पुत्र परिवार को प्राप्त करता है ॥६४॥६५॥६६॥६७॥ ॥६८॥६९॥ उसके घर में रत्न अश्व, दास दासी सर्व सम्पत्ति होती है।७०॥ श्री वाराह ने कहा– हे भूत धारिणी ! यह रहस्य तथा रुद्र का सारा माहात्म्य तुझे सुना दिया है ॥७१॥ नव करोड़ भेद वाली चामुण्डा कही है। जो तामसी शक्ति रौद्री है वही चामुण्डा है ॥७२॥ तथा अट्ठारह करोड़ वैष्णवी का भेद कहा है जो विष्णु की राजसी शक्ति है वही पालिनी वैष्णवी है ॥७३॥ जो सत्वस्था ब्रह्म शक्ति है वही अन्नता कही है। इनके सब भेदों में रुद्र भगवान् सर्वगत होकर स्थित हैं जितने महा शक्ति के रूप हैं उतने ही रूप शंकर ने भी धारण किये हैं उन शंकर के रूपों को महा शक्ति के रूप सर्वदा पति रूप से भजती हैं। जो रूद्र की आराधना करता है उसके ऊपर रूद्र प्रसन्न हो उसके मन चिन्तित कार्य सफल कर देते हैं ॥७४॥ ॥७५॥७६॥ इति श्री वाराह पुराणे त्रिशक्ति महात्म्ये ॥ दैत्य वधो नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम षट नवतितमो अध्याय ९६॥

अथ सतानवेवाँऽध्याय

दोहा:— सतानवे अध्याय में, रुद्र व्रत विख्यात।
कपाल मोचन तीर्थ इक, वाराणसी प्रख्यात ॥

अथः रुद्र महात्म्यम्— वाराह जी ने कहा– हे वरानने पृथ्वी ! अब रूद्र व्रत सुनिये जिसको सुनने से मनुष्य निसन्देह मुक्त हो जाता है ॥१॥ जबकि पहिले तीसरे जन्म में ब्रह्मा से पिङ्गाक्ष नील लोहित भगवान् रुद्र हुये तो ब्रह्मा

ने कौतुहल से रुद्र को स्कन्ध प्रदेश में धारण किया रुद्र के के स्कन्धा रूढ होने पर ब्रह्मा का जन्म से जो पांचवां सिर था वह पांचवां मुख निम्नोक्त आथवर्ण मन्त्र कहने लगा, जिससे कि रुद्र शीघ्र मुक्त होता है ॥२॥३॥४॥ हे कपालिन् हे रुद्र हे विभो हे भव हे कैरात हे सुव्रत हे कुमार हे विशालाच्च हे वरविक्रम विश्व की रक्षा कीजिये ॥५॥ ब्रह्मा के पांचवे मुख के रुद्र को भविष्य नामों से ऐसा कहने पर रुद्र ने कपाल शब्द से कुपित हो ब्रह्मा का विचक्षण वह पांचवां सिर वामांगुष्ठ के नख से काट दिया। और कटा हुआ वह ब्रह्मा का सिर रुद्र के हाथ में चिपक गया फिर महादेव ब्रह्मा को नमस्कार कर कहने लगा ॥६॥७॥८॥ रुद्र ने कहा– हे सुव्रते मेरे हाथ से कपाल किस तरह छूटेगा और किस प्रकार मेरा पाप नष्ट होगा वह कहिये ॥९॥ ब्रह्मा ने कहा– हे देव रुद्र समयाचार संयुक्त अपने ही तेज से यही का पालिक व्रत कीजिये ॥१०॥ अव्यक्त मूर्ति ब्रह्मा के ऐसा कहने पर महादेव पाप नाशक माहेन्द्र पर्वत पर आये ॥११॥ उस माहेन्द्र पर्वत पर स्थित होकर महादेव ने उस शिर के तीन भेद किये उसके भेद करने पर रुद्र ने केशों को पृथक ग्रहण किया ॥१२॥ यज्ञों पवीत केश महास्थि तथा नेत्र तथा रुधिर पूर्ण समग्र कपाल हाथ में स्थित रहा अपर हिस्से के टुकड़े टुकड़े कर जय जूट में धारण किया। ऐसा करके महादेव पृथ्वी में घूमने लगा ॥१३॥१४॥ तीर्थों में स्नान करता हुआ सप्त द्वीप वती पृथ्वी में घूमने लगा पहिले समुद्र में स्नान किया, तब गंगा में स्नान किया। फिर सरस्वती में, फिर यमुना संगम में, फिर समुद्र में, देविका नदी में, वितस्ता में, चन्द्र भागा में, गोमती में, सिंधु में, तुङ्ग भद्रा में, गोदावरी में, तथा गंडकी नदी में जाकर स्नान किया ॥१५॥१६॥ तदनन्तर नेपाल में जाय रुद्र महालय में जाकर फिर दारू वन फिर केदार में, फिर भद्रेश्वर में, पुनः गया में जाकर फल्गु तीर्थ

में स्नान कर पितरों के अर्थ श्राद्ध तर्पण दिये। हे पृथ्वी इस प्रकार वेग से महादेव ने सकल ब्रह्माण्ड घूमा। छटे वर्ष महादेव के परिधान तथा कोपीन गिरा तब महादेव नग्न कापालिक हुआ महादेव के भ्रमण करने पर परिधान कोपीन तथा रसना गिरी अतः महादेव का नाम नग्न कापालिक हुआ ॥१८॥१९॥२०॥ ।२१॥२२॥ फिर कपाल छोड़ने की इच्छा से स्वयं रूद्र दो वर्ष तीर्थों तीर्थों में घूमा परन्तु हाथ से कपाल नहीं छूटा तीर्थों की इच्छा से दो वर्ष और घूमा हर एक तीर्थ में स्नान कर महादेव कपाल छोड़ना चाहता था परन्तु वह कपाल नहीं छूटता था फिर दक वर्ष हिमाल में घूमा, वहां घूमते हुये महादेव को विभ्रम हुआ फिर रूद्र तीर्थों में घूमने लगा ॥२३॥२४॥२५॥ ॥२६॥२७॥ हे पृथ्वि बारहवें वर्ष महादेव वाराणसी क्षेत्र में पहुँचा और वहाँ जाकर स्नान करने लगा जभी देव देवेश महादेव गंगा में स्नान करने लगे तभी हाथ से वह ब्रह्म कपाल छूट गया, तब से ही वाराणसी क्षेत्र में कपाल मोचन तीर्थ सारी पृथ्वी में विख्यात हुआ ॥२८॥२९॥३०॥ हरिहर क्षेत्र में जा कर देवांगद तीर्थ में स्नान कर सोमेश्वरि की पूजा कर चक्रतीर्थ में गया वहां स्नान कर तथा त्रिजलेश्वर को प्रणाम कर फिर अयोध्या जाकर वाराणसी गया बारह वर्ष घूमने पर सीमाचारी गणों ने रूद्र के हाथ से बलात्कार कपाल गिराया तभी अघ-नाशक कपाल मोचन तीर्थ हुआ तब गंगाजल में विश्वेश का स्नान कराकर तथा भक्ति पूर्वक पूजकर विशुद्धि को प्राप्त हो रूदर ब्रह्म हत्या से मुक्त हुआ। कपाल मोचन तीर्थ त्रैलोक्य विख्यात है ॥३१॥३२॥३३॥३४॥३५॥ कपाल मोचन तीर्थ में स्नान करने से मनुष्य की ब्रह्म हत्या भी छूट जाती है रुद्र के हाथ से कपाल मुक्त हुआ देख देवताओं सहित ब्रह्मा आकर कहने लगा कि हे भव हे रुद्र हे विशालाक्ष हे लोक मार्ग व्यवस्थित

हे भव हे रुद्र हे विरूपाक्ष हे लोकमार्ग व्यवस्थित महादेव आपके किये व्रतों को जो करेगा) कपाल व्यग्र हाथ से कपाल ग्रहण कर जो आपने भ्रमण किया है इह पृथ्वी में मनुष्यों के लिये नग्न कापालिक व्रत होगा ॥३६॥३७॥३८॥ और हिमायय में घूमते जो आपको विभ्रमता हुई है वह मनुष्यों के लिये, वाभ्रव्य व्रत होगा ॥३९॥ और जो विशुद्ध होकर इस समय इस तीर्थ के स्नान से इस समय देह शुद्ध हुई है वह आपका शुद्ध शैव व्रत मनुष्यों के लिये पाप नाशक होगा ॥४०॥ जो देवता गण पूज्य आपको अग्र गण्य कर जिस विधि से आपका पूजन करेंगे उन सबके उन शास्त्रों को कहूँगा अन्यथा नहीं ।४१॥ हे शिव जो आपके किये व्रतों को करेगा वह आपके प्रसाद से ब्रह्म हत्या से मुक्त हो जायगा ॥४२॥ जो नग्न कापालिक व्रत तथा वाभ्रव्य व्रत और शुद्ध शैव व्रत आपने किये हैं वह उन उन नामों से विख्यात होंगे हे देव ! मुझे लक्ष्य कर जिन विधानों से आपकी पूजा होती है हे महादेव उनके लिये सर्व शास्त्र पाशुपत शास्त्र विधि पूर्वक संक्षेप से कहिये अव्यक्त मूर्ति ब्रह्मा के इस प्रकार कहने पर तथा देवताओं के जय ध्वनि करने पर रुद्र संतुष्ट होकर अपने कैलाश धाम को गया ब्रह्मा भी देवताओं के साथ स्वर लोक को गया ॥४४॥४५॥४६॥ देवता भी स्वर्ग को गये हे पृथ्वि ! यह रुद्र का महात्म्य मैंने तुझ से कह दिया जो रुद्र के इस चरित्र को सुनता है उसकी धन सम्पत्ति बढ़ती है ।.४७॥ ॥४८॥ इति श्री वाराह पुराणे रुद्र महात्म्यम नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम सप्त नवतितमोऽध्याय ॥९७॥

अथः अठानवेवाँऽध्याय

दोहा— अठानवें अध्याय में, सत्य तपा आख्यान ।
इन्द्र विष्णु वर पाय कर, कियो हरि पद पयान ॥

अथ: पर्वाध्याय— पृथ्वी ने कहा– जो लुब्धक शिकारी सत्य तपा द्विज हुआ जिसने आरुणी ऋषि की व्याघ्र भय से रक्षा की थी, तथा दुर्वाशा के उपदेश से हिमालय पर्वत पर गया। आपने कहा कि उस दुर्वासा के उस हिमालय में आश्चर्य जनक समाचार होगा उस आश्चर्य सुनने की मेरी बड़ी अभिलाषा है। वह आप कहिये। श्री वाराह जी ने कहा– वह सत्य तपा पहिले भृगुवन्शी ब्राह्मण था। चोरों के संसर्ग से चोर हुआ फिर ऋषि संग से ब्राह्मण हुआ है ॥१॥२।३॥४॥ दुर्वासा के उपदेश से ज्ञान वान हुआ ज्ञान वान् हो हिमालय के उत्तर पाद में पुष्प भद्रा नदी के तीर पर दिव्य चित्रशिला नाम शिला है और महान भद्र नाम का वट वृक्ष है। उस पुष्प भद्रा नदी के तीर पर सत्य-तपा घोर तप करने लगा किसी समय सत्य तपा ने कुठार से समिधा काटी और बायें हाथ की तर्जनी अंगुली काटी अंगुली के कट जाने पर भस्म चूर्ण हुआ ॥५॥६॥७॥८॥ रुधिर मांस- मजा कुछ नहीं दिखाई दिया और उस सत्य तपा ने अंगुली जुड़ाई तो पहिले के समान हो गई ॥६॥ उस भद्र वट में एक किन्नर मिथुन स्थित था। रात्रि में सोते हुये उस किन्नर मिथुन ने अद्भुत वार्ता देख प्रभात समय वह किन्नर मिथुन इन्द्रलोक में गया तदनन्तर इन्द्र, यक्ष, गन्धर्व, किन्नर तथा देवताओं को पूछने लगा कि यदि कोई आश्चर्य किसी ने देखा है तो कहिये। इन्द्र के पूछने पर रुद्र सर के तीर पर जो वह किन्नर जोड़ा था वह कहने लगा महाराज पुष्प भद्रा नदी के तीर पर एक आश्चर्य हमने देखा है ।१०॥११॥१२॥१३ हे पृथ्वि । किन्नर मिथुन ने कहा– हिमालय पर्वत पर पुष्प भद्रा नदी के तट में एक आश्चर्य हमने देखा है सत्य तपा की अंगुली के कट जाने पर भस्म का निकलना आदि जो कुछ देखा था सब कहा ऐसा सुन इन्द्र विस्मित हो शीघ्र विष्णु से कहने लगा हे विष्णो आइये

शीघ्र हिमालय के पास जावें वहां का अपूर्व आश्चर्य किन्नरों ने मुझसे कहा है २१४॥१५॥१६॥१७॥ इन्द्र के ऐसा कहने पर विष्णु ने वाराह रूप ग्रहण किया तथा इन्द्र ने शिकारी का रूप धारण किया और हिमालय में सत्य तपा के समीप पहुँचे विष्णु वाराह रूप से सत्य तपा के दृष्टि पथ में स्थित हुआ। स्थित होकर फिर अदृश्य पुनः दृश्य अदृश्य होते गया ॥१८॥१६॥ तभी तीखे धनुष बाण धारण कर शिकारी के भेष में इन्द्र आकर सत्य तपा से पूछने लगा ॥२६॥ हे भगवन् ! आपने यहां एक बड़ा भारी वाराह भी देखा है? बताइये जिससे कि मैं उसे मार कर अपने कुटम्ब का पालन करूं ॥२१॥ उस शिकारी भेष इन्द्र के ऐसा कहने पर सत्य तपा सोचने लगा कि यदि मैं वाराह को इसके पास दिखाता हूँ तो यह वाराह को मारता है ॥२२॥ और यदि नहीं बताता हूँ तो इसक. कुटम्ब भूक से पीड़ित होगा यह व्याध कुटम्ब -परिवार सहित भूका है ।।२३॥ और घाव युक्त हो यह वाराह मेरे आश्रम में आया है। अब ऐसा होने पर क्या किया जाय कह सोचने लगा ॥२४॥ जब कुछ न सोच सका तब क्षण भर में उस सत्य तपा को यह बुद्धि हुई ।२५॥ दृष्टम् चनु निहितम् जङ्गमेषु इत्यादि कहा ॥२६॥ इस प्रकार सुन इन्द्र विष्णु दोनों ही सत्य तपा के उपर प्रसन्न हो उसको मूर्ति दिखाकर कहने लगे हे सत्य तपा ! हम तेरे उपर प्रसन्न हैं तू अभिलपित वरदान मांग ऐसा सुन सत्य तपा कहने लगा ॥२७॥ पृथ्वी में मैंने आपका दर्शन कर लिया है अब इससे बढ़कर वरदान क्या है? वरदान से बढ़कर कृतार्थता है तथापि जो ब्राह्मण सर्वदा पर्व काल में ब्राह्मणों की अर्चना भक्ति पूर्वक करते हैं उनका एक महीने का किया पाप नष्ट होवे। एक यह अभीष्ठ वरदान मेरे लिये हो, और दूसरा वरदान यह होवे कि मैं मुक्ति को प्राप्त हो जाऊँ उस सत्य तपा के ऐसा कहने पर इन्द्र विष्णु उसको वरदान देकर अन्तर्धान हो गये। और सत्य तपा वहीं स्थित रहा

वरदान पाकर वह ब्रह्म मय हो गया ॥२८।२६। ३०॥३१॥ जभी वह सत्य तपा हिमालय के शुभ देश में स्थित था तभी उसी का गुरु आरुणी वहां दिखाई दिया ॥३२॥ तीर्थ कारण पृथ्वी की परिक्रमा कर आया अतः महा भक्ति पूर्वक इसने गुरु का पूजन किया।॥३३। पाद्य, आचमन, गोदान आदि पाकर आसन पर बैठ तप से पाप नष्ट हो जाने पर सिद्ध हुये शिष्य को देख विनयापन्न हाथ जोड़ते हुये शिष्य को आरूणी कहने लगा। हे पुत्र तपस्या से सिद्ध ब्रह्म भूत हो गया है अब अपने साथ तेरा मुक्ति समय मैंने जान लिया है। हे पुत्र उठिये मेरे साथ परम पद को चलिये ॥३४॥३५॥३६॥ जहां जाकर फिर जन्म मरण नहीं होता है ऐसा कह वे दोनों सिद्ध सत्य तपा आरूणी नारायण का ध्यान कर नारायण की देह में लय को प्राप्त हुये हैं जो इस पर्वाध्याय को सुने या विस्तार पूर्वक सुनावे वह शुभ गति को प्राप्त होता है ॥३७॥३८॥ इति श्री वाराह पुराणे पर्वाध्याय नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम अष्ट नवतितमो अध्याय ६८॥

अथः निन्यानवेवाँऽध्याय

दोहाः नव नवति अध्याय कहूं, तिलधेनुन का दान।
वशिष्ठ मुनि नृप राज के, सम्वाद सों बखान॥

अथः तिलधेनु महात्म्यम— पृथ्वी ने कहा– अव्यक्त जन्मा ब्रह्मा के शरीर से जो माया ने अष्ट भुजा गायत्री होकर वेत्रासुर के साथ युद्ध किया, उसी ने नन्दा देवी होकर देव कार्य करने की इच्छा से ब्रह्मा से प्रेरित होकर महिषासुर वध किया ॥१॥२॥ हे देव ! तदनन्तर वैष्णवी किस प्रकार हुई यह मुझसे कहिये श्री वाराह जी बोले यह जगत की कारिणी शंकर की प्रिया गन्गा देवी है। सर्ववेत्ता जन कहीं कुछ दिया होवे वह सब स्वपद ही जानता है वैष्णवी ने मन्दर पर्वत पर

स्वयम् के अर्थ महिषासुर दैत्य मारा है पश्चात् वह चैत्रासुर मारा है। नन्दा ने विन्ध्य पर्वत में महावल पराक्रम दैत्य को मारा है ॥३। ४॥५॥ अथवा वह देवी ज्ञान शक्ति है और वह महिषासुर अज्ञान शक्ति है अज्ञान ज्ञान साध्य होता है ॥६॥ मूर्ति पक्ष में इतिहास रूप से और अमूर्ति पक्ष में यहां वह देवी वेद वाक्यों से और वेद वादियों से हृदय में एक ही वत् कही जाती है ॥७॥ हे देवि पृथ्वि ! इस समय मुझसे पञ्च पातक नाशक विधान सुनिये देव देव विष्णु का यजन धन पुत्रादि देने वाला है ॥८। इस जन्म में दरिद्रता व्याधि, कुष्ठादि से पीड़ित निर्धन तथा अपुत्र पुरुष भी देव देव विष्णु का यजन करने से शीघ्र ही लक्ष्मी आयु धन पुत्राति सुख युक्त होता है देवी से युक्त मण्डलस्थ देव देव को देखकर परम देव नारायण को जो विधान से देखता है। हे देवि ! आचार्य से दिखाये मन्त्र मूर्ति अयोनिज देव को देखता है विशेष कर कार्तिक शुक्ल द्वादशी दिन अथवा सब द्वादशियों में विधान से भगवान का पूजन करे ॥६॥१० ११॥१२॥ हे पृथ्वि अथवा संक्रान्ति में चन्द्र सूर्य ग्रह में जो गुरु से पूजित हरि को देखता है। उसकी शीघ्र तुष्टि हो जाती है तथा उसके सारे पाप दूर हो जाते हैं। सामान्य देवताओं की पूजा करने से भी ऐसा हो जाता में पर देवता की पूजा से तो कहना ही क्या है ॥१३॥१४। गुरु जाति शौच क्रियादि से सम्वतसर तक ब्राह्मण क्षत्री, वैश्य वर्ण के भक्तों की परीक्षा करे ॥१५॥ फिर उपासन्न जानकर हृदय से धारण करें, वे भक्ति वाले भी आत्मा को परमेश्वर जान विष्णु के समान गुरु की अचल भक्ति करें। सम्वत्सर के पूर्ण होने पर गुरु को प्रसन्न करें। तथा कहें कि हे भगवत तपोधन ! आपके प्रसाद से भव सागर पार होना तथा विशेष इस लोक में लक्ष्मी चाहते हैं ॥१६॥१७॥ १८॥ विष्णु के समान पहिले इस प्रकार मेधावी गुरु की पूजा करें शिष्यों से पूजित

हो वह गुरु भी शीघ्र कार्तिक दशमी के दिन मन्त्र करके चीर वृक्ष का दातुन करवाकर शिष्यों को देव देव भगवान का स्मर्ण करवाकर सुलावे ॥१६॥२०॥ गुरु के सामने सोये हुओं को देख विचक्षण गुरु शिष्यों को शुभाशुभ विधान सुनावे ॥२१॥ एवम् प्रकार एकादशी दिन उपवास करे स्नान कर देवालय में जाय गुरु कल्पित भूमि में मण्डल बनावे ॥२२॥ विविध लक्षणों से भूमि को विधि पूर्वक लक्षित कर षोडशार चक्र लिखें तथा सर्व तो भद्र बनावें ॥२३। अथवा अष्टदल बनाकर दिखावें और यत्न पूर्वक श्वेत वस्त्र से नेत्र बन्द करे ॥२४॥ वर्णानुक्रम पूर्वक यानी ब्राह्मादि वर्णों के लिये निर्दिष्ट फूल हाथ से ग्रहण कराकर शिष्यों को मण्डप में प्रवेश करावे पंडित जन वर्णक से याने रङ्ग से नव-नाभ मन्डल करे। प्रथम पूर्व की ओर इन्द्र की पूजा करे लोक पालों के साथ अग्नि की आग्नेय दिशा में पूजा करे। २५॥२६॥ तद्वत् अपनी दिशाओं में सबकी पूजा करे याम्य दिशा में यम की, नैऋत्य दिशा में नैऋति की, वारुण दिशा में वरुण की वायव्य दिशा में वायु की, उत्तर में कुबेर की, ईशान में रुद्र की, पूजा करे अपनी अपनी दिशाओं में स्थित लोकपालों की एवम् प्रकार से पूजा करे ॥२७॥२८॥ तथा अष्टदल कमल के मध्य में परमेश्वर विष्णु की पूजा करे पूर्व दल में बलदेव की, दक्षिण दल में प्रद्युम्न की, पश्चिम दल में अनिरुद्ध की, तथा उत्तर दल में सर्व पातक नाशक वासुदेव भगवान की पूजा करे ॥२६॥३०॥ ईशान दिशा में शंख, आग्नेय दिशा में चक्र, याम्य दिशा में गदा, वायव्य दिशा में पद्म स्थापित करके पूजा करे ईशान दिशा में मूसल की पूजा करे, दक्षिण में गरुड़ की स्थापना करे। और बुद्धिमा पुरुष देव देव के वाम भाग में लक्ष्मी की स्थापना करे ॥३१॥३२॥ खङ्ग तथा धनुष भगवान के आगे से रखे श्री वत्स कौस्तुभ के लिये नौवाँ स्थान कल्पित करे। एवम् यथा न्याय देव

देव जनार्दन की पूजा कर अष्ट दलों में आठ कलशों को स्थापित करे। और नौवां वैष्णव कलश स्थापित करे मुक्ति की इच्छा वाला पुरुष वैष्णव कलश से स्नान करे लक्ष्मी चाहने वाला इन्द्र कलश से स्नान करे प्राजापत्य चाहने वाला आग्नेय कलश से स्नान करे ॥३३॥३४॥४५॥३६॥ मृत्यु जीतने की इच्छा वालों को याम्य कलश से स्नान करावे। दुष्ट दलन करने की इच्छा वाला नैऋत्य कलश से स्नान करे। शान्ति चाहने वालों को कलश से अभिषिक्त करे पाप नाश के लिये वायव्य कलश से स्नान करावे द्रव्य सम्पत्ति चाहने वाला कुवेर कलश से स्नान करे ॥३७॥३८ ज्ञान के लिये यथा लोकपाल पद चाहने वाला ·रो कलश से स्नान करे। एक कलशसे भी स्नान करने से पुरुष सर्व पाप मुक्त तथा अव्याहत ज्ञानवान् श्रीमान विचक्षण हो जाता है पुनः नौ कलशों से स्नान करने से तो कहना ही क्या है। अर्थात् सर्व पातक मुक्त हो जाता है ॥३६॥४०॥ विष्णु सदृश हो जाता है अथवा इस लोक में राजा हो जाता है अथवा विधान को जानने वाला स्व शास्त्रोक्त विधि से सब दिशाओं में यथा संख्य से लोकपालों का पूजन करे। एवम् प्रकार प्रसन्न चित्त से लोकपाल तथा देवताओं की पूजा करे पश्चात् प्रदक्षिण करा कर नेत्र मिचवा कर शिष्यों को प्रवेश करावे। तदनन्तर वायु विधि से आग्नेयी वारुणी दग्धा सोमरस से त्रिप्त करवा कर विद्वान जन समय सुनावे अनिन्ध ब्राह्मणों को वेदों को विष्णु को ब्रह्मा, रुद्र, आदित्य, अग्नि, लोकपाल, गृह, गुरु तथा वैष्णवों को विद्वान पुरुष पूर्व दीक्षा पूर्वक स्मरण करे ॥४१॥४२॥ ॥४३॥४४॥ इस प्रकार समय बिताकर हवन करावे। "ॐ नमो भगवते सर्व रूपिणे हुम् फट् स्वाहा" इस षोडशाक्षर मन्त्र से प्रज्वलित अग्नि में हवन करे। और अग्नि की भगवान् के समीप तीन आहुतियों से गर्भाधानादि क्रिया करे हवन करने के पश्चात

दीक्षित हो गुरु को दक्षिणा देवे। गुरु के लिये राजा ता हाथी, घोड़ा कंकण सुवर्ण ग्रामादि देवे। और साधारण पुरुष दक्षिणा देवे अथवा गुरु के अतिरिक्त के लिये साधारण दक्षिणा देवे ॥४५॥ ॥४६॥४७॥४८॥ ऐसा करने मे जो पुण्य प्राप्त होता है हे पृथ्वि वह सैकड़ों वर्षों में भी नहीं कहा जा सकता दीक्षितात्मा हो यदि वाराह अवतार सुने तो उसने सारे वेद पुराण ससंग्रह सारे मन्त्र पढ़ तथा जप लिये जानो पुष्कर तीर्थ में प्रयाग में, सिन्धु संगम में, देवागार में, कुरु क्षेत्र में, वाराणसी में, ग्रहण में, तथा विपुव में मन्त्र जपने वालों को जो फल प्राप्त होता है। उससे दुगुना फल दीक्षित हो वाराह कथा सुनने का है ॥४६॥५०॥ ॥५१॥५२॥ देवता भी तप करके ध्यान करते और कहते हैं कि हमारा जन्म भारत वर्ष में कब होगा और वहां जन्म लेकर दीक्षित हो वाराह की कथा सुनकर पोडशात्मा वाराह परम स्थान को इस देह को छोड़ कब प्राप्त होवेंगे। जहां जाकर कि फिर वापिस नहीं आया जाता देवता इस प्रकार कहते और सोचते जाते हैं ॥५३. ५४॥५५॥ इस विषय में एक इतिहास वशिष्ठ ऋषि और श्वेत राजा के सम्वाद में कहते हैं। स्वर्ग लोक के एक महा यशस्वी श्वेत राजा का इतिहास कहते हैं हे पृथ्वि! इलावृत्त वर्ष में श्वेत नाम का बड़ा तपस्वी राजा था वह वन पर्वत सहित सारी पृथ्वी दान देने की इच्छा से वशिष्ठ ऋषि से बोला हे भगवन्! मैं सारी वसुन्धरा का दान देना चाहता हूँ आप आज्ञा दीजिये ऐसा सुन वशिष्ठ ऋषि ने राजा से कहा कि हे राजन्! सर्व कालिक सुख देने वाले अन्न का दान दीजिये अन्न के देने से पृथ्वी में कोई दान बाकी नहीं रहता है ॥५६॥ ॥५७॥५८॥५६॥६०॥ अन्न दान सब दानों से बढ़कर है। अन्न से ही प्राणी होते तथा बढ़ते हैं अतः हे राजन! सर्व प्रयत्न से अन्न दान दीजिये, वशिष्ठ के वचन सुनकर राजा ने वशिष्ठ

कहना नहीं किया ॥६१॥६२॥ रत्न वस्त्र अलङ्कार तथा वड़े बड़े नगर और कोप जात का दान ब्राह्मणों को बुला बुलाकर दिया और हाथी मृग चर्म भी ब्राह्मणों को दिये । किसी समय वह परम धार्मिक राजा पृथ्वी को जीतकर पुरोहित वशिष्ठ से कहने लगा भगवन हजारों अश्वमेध यज्ञ करने की मेरी इच्छा है पुनः हजारों अश्वमेध यज्ञ करते समय भी उस राजा ने सुवर्ण, चांदी, ताम्र आदि का दान ब्राह्मणों को दिया तथा अन्न जल नहीं दिया ॥६३॥६४॥६५॥६६॥ अन्न को स्वल्प वस्तु समझ कर उसने अन्न दान नहीं दिया। इस प्रकार विभव सम्पन्न उस महात्मा राजा की काल धर्म वश मृत्यु हुई । परलोक में रहता हुआ वह राजा भूक प्यास से पीड़ित हुआ अप्सराओं का भाग गृहण कर श्वेताख्य पर्वत में आकर वहां पूर्व जन्म की जलाने से वचत जो अपनी हड्डी थीं उनको चाटने लगा ॥६७॥६८॥६९॥७०॥ फिर विमान में बैठ स्वर्ग को गया अव कुछ समय पश्चात् उस राजा को उन हड्डियों को चाटते हुये वशिष्ठ ऋषि ने देखा । राजा को हड्डी चाटते-देख वशिष्ठ ने उस राजा से कहा- से राजन्! तू अपने पूर्व शरीर की हड्डियों को क्यों चाट रहा है ॥७१॥७२॥ वशिष्ठके इस प्रकार कहने पर राजा ने कहा हे भगवन्! मैं भूखा हूँ हे मुनि शार्दूल ! पूर्व जन्म में मैने अन्न जल दान नहीं दिया अतः मुझे भूख सताती है ॥७३॥७४॥ राजा के इस प्रकार कहने पर मुनि पुङ्गव वशिष्ठ श्वेत राजा से इस प्रकार कहने लगा कि हे राजेन्द्र ! तुम भूखे का क्या उपकार करूं विना दिये हुये किसी को कुछ भी नहीं मिलता है ॥७५॥७६॥ रत्न सुवर्णादि दान देने से मनुष्य भोग वाला होता है और अन्न पानादि दान देने से मनुष्य सर्व कामों से तृप्त होता है । हे हे राजन्! स्वल्प वस्तु जानकर तूने अन्न दान नहीं दिया है। श्वेत राजा ने कहा- न देने पर भी यदि मिल सकता है, तो

मुझे बताइये ॥७७॥७८॥ हे महामुने ! भक्ति पूर्वक मस्तक झुकाकर प्रार्थना करता हूं आप उपाय बता दीजिये । वशिष्ठ ने कहा– एक उपाय है जिससे कि निसन्देह कार्य सिद्ध हो सकता है हे नर व्याघ्र ! उसको मैं कहता हूं आप सुनिये । पहिले कल्प में अति विख्यात् एक विनीतास्व राजा था ॥७९॥८०॥ उसने सर्व मेध यज्ञ आरम्भ किया । यज्ञ करते उसने ब्राह्मणों को गाय, हाथी धन आदि का दान नहीं दिया और तेरे समान उस राजा ने भी अन्न को स्वल्प जान अन्न दान नहीं दिया फिर कुछ समय पश्चात विनीतास्व राजा जाह्नवी जल में मृत्यु को प्राप्त हुआ । ८१॥८२॥ वह चक्रवर्ती राजा विनीताश्व पुन्य करके आपकी तरह स्वर्ग को गया और वह भी भूख से पीड़ित हो सूर्य समान देदीप्यमान विमान मृत्यु लोक में नील पर्वत पर गंगा के तट पर आया । राजा ने अपना कलेवर भूख से पीड़ित देख जाह्नवी के तट पर आकर अपने पुरोहित होता नाम वाले को दिखाया और पुरोहित को पूछने लगा कि महाराज ! मेरी क्षुधा का कारण क्या है । तब वह मुनि कहने लगा कि हे राजन् तिलधेनु, जलधेनु, घृतधेनु, रसधेनु का शीघ्र दान दीजिये जिससे कि आप भूख से पीड़ित न होंगे ॥८३॥८४॥८५॥८६॥८७॥८८॥ जब तक सूर्य तपता रहे जब तक चन्द्रमा तपता रहेगा तब तक भूख से पीड़ित न होगा, मुनि के इस प्रकार कहने पर राजा फिर पूछने लगा ॥८९ विनीतास्व ने कहा– हे ब्रह्मन् ! जय की इच्छा वालों को तिलधेनु दान किस प्रकार देना चाहिये । जिस विधि से कि स्वर्ग का भोग भोगा जाय वह मुझसे कहिं ॥९०॥ होता मुनि कहने लगा– हे नराधिप ! तिलधेनु दान की विधि सुनिये । चार कुटवों का एक प्रस्थ कहा जाता है सोलह प्रस्थ की तिलधेनु बनानी चाहिये । चार प्रस्थ तिलों से रस लनावे नासिका गन्धमयी बनावे । जिह्वा गुड़मयी बनावे । पुच्छ की भी कल्पना करे । धेनु का घन्टा आभूषण से भूषित कर सुवर्ण शृंगी बनावे ॥९१॥९२॥९३॥

कांस्य दोहा बनावे, चांदी के खुर बनावे। इस प्रकार कल्पित कर विधि विधान से उस धेनु को ब्राह्मण को देवे ॥६४॥ शुभ वन्दित कृष्णा जिनको धेनु वस्त्र करे सर्व रत्नों से समन्वित सूत्र से सूत्रित करके सर्वोषधि समायुक्त कर मन्त्र से पवित्र कर दान दे देवे। फिर प्रार्थना करे कि मेरे लिये अन्न होवे पानादिक सर्व रस होवें हे तिलधेनु! ब्राह्मण को अर्पित करने से आप मुझे सब कुछ दे देजिये। हे देवि! विशेष करके कुटम्बार्थ में आपको भक्ति से ग्रहण करता हूँ हे तिलधेनो! मेरी सर्व कामना पूर्ण कीजिये। आपको नमस्कार हो इस प्रकार प्रार्थना कर तिलधेनु दान करे ॥६५॥६६॥ ६७ ६८॥ ऐसा करने से सब कामना पूर्ण हो जाती हैं जो इसको भक्ति से सुने, वा दान करे करावे वह सर्व पाप मुक्त हो विष्णु लोक को प्राप्त होता है। गोचर्म मात्र भूमि में मण्डल बनाकर पूजन तथा दान करे ॥६६॥१००॥ इति श्री वाराह पुराणे श्वेत विनीताश्वो पाख्याने तिलधेनु दान महात्म्यम नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम नव नवतितमोऽध्याय ॥६६॥

अथः सौवाँऽध्याय

दोहाः— जलधेनु दान विधि कहूँ, इस सौवें अध्याय।
सुपात्र विप्रहु दीजिये, स्वर्ग सुख सकल पाय॥

अथः जलधेनु दान विधि— होता ने कहा— जलधेनु दान कहता हूँ आप सुनिये पुण्य दान में विधि पूर्वक गोचर्म मात्र भूमि को गोमय से लीपन करे ॥१॥ उसके मध्य में जलपूर्ण कलश स्थापित करे। जल पूर्ण कलश को करपूर अगुरु चन्दनादि सुगन्धित जल से सुवासित करे और उसी को धेनु कल्पित करे तथा अन्य जलपूर्ण कलश से वत्स की कल्पना करे ॥२॥३॥ हे महाराज! वर्द्धनी कलश को पंच फूलों से युक्त दुर्वाङ्कुर से आच्छादित कर मालाओं से विभूषित कर, उसमें

पंचरत्न गेर देवे तथा मांसी, उशीर, कुष्ट, शैलेय, वालुक, धात्री फल सरसों तथा सब धान्य उस कलश में गिरा देवे चारों दिशाओं में चार पात्र रक्खे ॥४।५॥६॥ एक घृत पात्र दूसरा दधि पात्र, तीसरा मधु पात्र चौथा शरकरा घृत पात्र स्थापित करे। ७॥ उस जलधेनु के सुन्दर मुख आंख शृंग कल्पित करे। शुभ लम्बे चौड़े पत्तों से कान बनावे मुक्त. फल के समान आंख रचे ॥८॥ पीठ ताम्रमय, कांस दोहा बनावे कुशाओं से रोम कल्पित करे पुच्छ को सूत्रमय रचे तथा आभरण घंटिका लगावे ॥९॥ गलकम्बल में पुष्प माला पहिनावे गुड़ का मुख बनावे शुक्तियों से दांत शर्करा से जिह्वा तथा माखन के स्तन बनावो॥१०॥ ईख के पैर बनावो, गन्ध पुष्पों से सुशोभित करे। कृष्णजिन पहिनावो वस्त्र से आच्छादित करे। गन्ध पुष्पादि से पूजन कर उस जलधेनु को ब्राह्मण को दान देवो एवम् प्रकार वेद पारन्गत साधु पोत्रिय अग्नि होता तपोवृद्ध कुटम्बी सुपात्र ब्राह्मण को जलधेनु दान देना चाहिये। हे राजन्! जो जलधेनु दान देता है अथवा गृहण करता है अथवा जो देखता है वा सुनता है वे सब अखिल पातकों से छूट जाते हैं ।११॥१२॥१३॥१४॥ ब्रह्म हत्या वाला, पितृ हत्या वाला, गौ हत्या वाला, मदिरा पीने वाला, गुरु की शय्या पर सोने वाला, भी जलधेनु दान करने सब पापों से छूट विष्णु लोक को जाता है ।१५॥ जो पुरुष प्रचुर दक्षिणा पूर्वक अश्वमेघ यज्ञ करता है वह सर्व पापों को छोड़ विष्णु लोक को जाता है। और जो जलधेनु का दान करता है उसको भी वही फल है जलधेनु दान करने वाला एक दिन तक जलाहार व्रत करे और दान लेने वाला तीन रात्रि तक जलाहार व्रत करे। जलधेनु वा जलदान देने वाले जहां क्षीर वहां नदी है, जहां मधु पायश का कीचड़ है। जहां अप्सराओं का गान होता है वहां जाते हैं। देने वाले दिलवाने वाले, तथा गृहण

करने वाले सभी स्वर्ग जाते हैं ॥१६॥१७॥१८॥१६॥ सर्व पाप मुक्त होकर विष्णु सायुज्यता को प्राप्त होते हैं। जो कि जलधेनु दान सुने, वा कीर्तन करे वह सर्व पाप निर्मुक्त हो, जितेन्द्रिय हो स्वर्ग को जाता है ॥२०॥२१॥ इति श्री वाराह पुराणे श्वेत विनीताश्वो पाख्याने जलधेनू विधिर्नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् शततमोऽध्याय॥१००॥

अथः एक सौ एक अध्याय

दोहा— इक सो इक अध्याय में, कहूँ रस धेनु दान।
मनोकामना पूर्ण हो, तस माहात्म्य महान॥

अथः रस धेनु दान माहात्म्यम्— होता ने कहा- हे विजिताश्व! अब संक्षेप से रसधेनु दान सुनाता हूं। प्रथम भूमि में गोमय से लेप करे फिर कृष्ण मृग चर्म बिछाकर तथा कुशासन को बिछावे, तदनन्तर इक्षुरस से पूर्ण कलश से उस उपलिप्त भूमि के मध्य में स्थापित करे उसी प्रकार चतुर्थांश से वत्स कल्पित करे। चौथे भाग से उसके समीप वत्स की स्थापना करे चांदी के खुर बनावे इक्षुदण्ड के पैर बनावे। इस प्रकार ईख के पैरों से युक्त रसधेनु बनावे ॥१॥२॥३॥४॥ सुवर्ण के शृंग तथा भूषण बनावे कपड़े का पूछ बनावे। घृत के स्तन बनावे फूलों का गलकम्बल बनावे शर्करा से मुख जिह्वा बनावे, तथा फलों के दांत बनावे ताम्रमय पीठ कल्पित करे। पुष्पों से अंग रूम कल्पित करे मुक्ता फल से आंख बनावे ॥५॥६॥ कलश में सप्त धान्य गेरे। चारों ओर मे मन्डप को सुशोभित करे नाना प्रकार की भेंट रक्खे सर्व वासनादियों से सुगन्धित करे चारों दिशाओं में चार तिलपात्र स्थापित करे इस प्रकार विधिवत् पूजा कर स्वर्ग की इच्छा वाला पुरुष रसधेनु का दान सर्व लक्षण सम्पन्न श्रोत्रिय कुटम्बी ब्राह्मण को को देवे। रस गाय दान देने मे पुरुष सर्व पाप मुक्त होकर स्वर्ग को जाता है। रस गाय दान देने वाला, तथा ग्रहण करने वाला

एक भुक्त करे उनके लिये सोमपान फय होता है ॥७॥८॥६॥१०॥ दान करते हुये को जो देखता है वह परम गति को प्राप्त होता है। प्रथम गन्ध, धूप, मालादि से धेन की पूजा कर पूर्वोक्त मन्त्रों से धेनु की प्रार्थना करे और प्रार्थना पूर्वक भक्ति से वह धेनु ब्राह्मण को देवे ॥११॥१२॥ रसधेनु के दान देने वाला दश पहिले के दश पिछाड़े के अर्थात् इकीस कुल के पितरों को स्वर्ग पहुंचाता है और स्वर्ग जाकर फिर वापिस नहीं आते हैं ॥१३॥ हे राजन ! यह उत्तम रसधेनू आपको कह दी है। रसधेनु का दान दीजिये और परम स्थान को प्राप्त कीजिये ॥१४॥ इस विधि को जो पढ़े या नित्य भक्ति से सुने वह सर्व पाप मुक्त हो विष्णु लोक को जाता है ॥१५॥ इति श्री वाराह पुराणे श्वेत विनीताश्वो पाख्याने रसधेनु दान महात्म्यम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम एकाधिक शततमो अध्याय ॥१०१॥

अथः एकसौ दोऽध्याय

दोहाः— गुड़ धेनु माहात्म्य कहूं, एक सौ दो अध्याय।
विधि पूर्वक दान दीजे, भव सागर-तर जाय ॥

अथः गुड़ धेनु दान माहात्म्यम्— होता ने कहा– अब सर्व कामार्थ साधिनी गुड़ धेनु दान विधि कहता हूं भूमि को गौमय से लीपकर कृष्णाजिन कुशादि का आसन बिछाकर, उस भूमि में वस्त्र बिछावे और बहुत सा गुड़ लाकर वत्स सहित गुड़ धेनु बनावे कांस्य की दोहनी बनावे मुख तथा शृंग सुवर्णमय रचे दांत मणि मुक्ताओं से बनावे ग्रीवा रत्नमय प्राण गन्ध मय रचे नात दीर्घ काष्ट से याने छोटे काष्ट से शृंग बनावे, पीठ ताम्रमय बनावे कपड़े का पूछ बनावे और उस धेनु के ऊपर नाना विधि आभूषण पहिनावे ईख के पैर, चांदी के खुर, रेशमी वस्त्र का गलकम्बल बनावे घण्टा, चामर पहिनाकर रेशमी वस्त्र से आच्छादित कर देवे ॥१॥२॥३॥४॥५। प्रशस्त पत्र से कर्ण रचे माखन के स्तन बनावे उस गुड़धेनु के समीप के स्थान को फल फूलों

से सुशोभित करे ॥६॥ चार भार गुड़ से उत्तम गुड़ धेनु होती है और अर्द्ध भाग के चौथे भाग से वत्स बनाना चाहिये ॥७॥ दो भार गुड़ से मध्यमा गुड़ धेनु होती है। और एक भार से अधम गुड़ धेनु होती है. वित्त हीन मनुष्य यथा शक्ति आठ सौ सुवर्ण मुद्रिकाओं से दान करे इसके उपरान्त गृह वितानुसार दान करे। गन्ध पुष्पादि से गुड़ धेनु की पूजा कर ब्राह्मण को दे देवे ॥८॥९॥ घृत, नैवेद्य, दीप, गन्ध,पुष्पादि से पूजन कर याज्ञिक ब्राह्मण को दान देवे। श्रोत्रिय ब्राह्मण को दान देवे। सहस्र सुवर्ण अथवा उससे अर्द्ध अथवा उससे भी अर्द्धसौ मुद्रिका से अथवा अर्द्ध शत मुद्रिका से यथा शक्ति मुद्रिका, भूषण, गन्ध, पुष्पादि से पूज कर धेनु अर्पण करे। छत्रिका तथा खड़ाऊ आदि देकर यह मन्त्र कहे– हे गुड़ धेनो! हे महा वीर्ये! हे सर्व सम्पत्प्रदे! हे देवि! इस दान से भक्ष्य भोज्यादि सर्व सम्पत्ति मुझे दीजिये। विद्वान पूर्वोक्त श्री आदि मन्त्रों का स्मरण करे अथवा दाता पूर्व मुख होकर ब्राह्मण को दान देवे। वाणि तथा कर्म से किये मन से चिन्तित मानकूट, तुलाकूट, कन्या गौ के लिये कहा असृत वाक्य हे गुड़ धेनो! ब्राह्मण को अर्पण करने से सब पाप नष्ट कर दीजिये ॥१०॥११॥१२॥१३॥१४॥१५॥१६॥ जो पुरुष गुड़ गाय का दान देखते भी हैं वे परम गति को प्राप्त होते हैं। गुड़ गाय दान करने वाले जहां क्षीर वहा नदी है जहां घृत पायश कर्दम हैं, जहां सिद्ध ऋषि मुनि हैं, वहां जाते हैं दश पहिले के दश पिछले एवम् प्रकार इकीस कुल के पितर गुड़ गाय दान के पुन्य से विष्णु लोक में जाते हैं। उत्तरायण दक्षिणायण में, विषुम में, पुण्य दिन में, व्यतीपात में, दिन क्षय में, यही उपस्कर कहे हैं ॥१७॥१८॥१९॥२०॥ श्रद्धा युक्त हो दान देना चाहिये ऐसा करने पर भुक्ति मुक्ति मिलती है। सब कामना पूर्ण होती हैं नित्य सर्व पाप दूर हो जाते हैं गुड़ गाय के प्रसाद से पुरुष

अखिल सौभाग्य प्राप्त करता है इस लोक में अतुल सौभाग्य आयु आरोग्यता सम्पत्ति प्राप्त करता है ॥२१॥२२॥ दान देने वाले की दुर्गति नष्ट होती है तथा वैष्णव पद को प्राप्त करता है दश, द्वादश, हजार, दश आठ हजार जन्मों तक उसको शोक दुखादि दुर्गति नहीं प्राप्त होती हैं ॥२३॥२४॥ इस गुड़ धेनु दान विधि को पढ़ता व ध्यान से सुनता है अथवा मन से स्मरण करता है वह इस लोक में चिरकाल तक विभव युक्त हो, चिरकाल तक स्वर्ग में निवास करता है ॥२५॥ इति श्री वाराह पुराणे श्वेत विनीताश्वो पाख्याने गुड़ धेनु दान महात्म्यम् नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम द्वयधिक शततमो अध्याय ॥१०२॥

अथ एक सौ तीन अध्याय

दोहाः— शर्करा धेनु दान विधि, इक शत त्रया अध्याय ।
इस लोक भोग भोगि सब, मरकर स्वर्ग जाय ॥

अथः शर्करा धेनु माहात्म्य—होता ने कहा– हे राजन्! तद्वत् शर्करा धेनु दान माहात्म्य सुनिये। प्रथम भूमि को गोमय से लीपकर कृष्णा जिन कुशादि बिछाकर चार भार शर्करा की धेनु बनाकर, तथा चतुर्थांश से वत्स बनाकर वह धेनु उत्तम कही है। तदर्द्ध दो भार शर्करा की मध्यमा होती है। तथा एक भार शर्करा से कनिष्ठा धेनु कही है। तद्वत चतुर्थांश से वत्स बनावे हे नृपति सत्तम! तदनन्तर अपनी शक्ति के अनुसार आठ सौ से ऊपर धेनु को रचे अपनी आत्मा को दुख न देवे ॥१॥२॥३॥ ॥४॥ चारों तरफ से चारों दिशाओं में सर्व बीजों को स्थापित करे। सुवर्ण के मुख शृंग मौक्तिक नयन रचे ॥५॥ सोने के मुख शृंग बना, मोती के नयन बना गुड़ से मुख रचे। पिष्टान्न से जिह्वा बनावे रेशमी वस्त्र से गल कम्बल बनाकर कण्ठा भरणों से भूषित करे। ईख के पैर, चांदी के खुर माखन के स्तन,

लम्बे चौड़े पत्तों से कान रचे तथा श्वेत चामारादि से भूपित कर कर पञ्चरत्न से भूपित कर वस्त्र से आच्छादित करे ॥६।७।८॥ गन्ध पुष्प से अलंकृत करके श्रोत्रिय दरिद्री साधु स्वभाव बुद्धिमान ब्राह्मण को शर्करा धेनु का दान देवे ॥६॥ वेद वेदाङ्ग के जानने वाले सात्विक कुटम्बी भला मानस ब्राह्मण को शर्करा धेनु का दान देना चाहिये मत्सरी ब्राह्मण को नहीं देना चाहिये ।१०॥ उत्तरायण दक्षिणायण में, विषुव में, पुण्य में, व्यतीपात में, दिन क्षण में इन पुन्य' कालों में, यथा विभव शक्ति के अनुसार सत्पात्र श्रोत्रिय द्विज:को आया देख पुच्छ पकड़ शर्करा धेनू का दान देवे ॥११॥१२॥ पूर्वाभि मुख बैठे अथवा उत्तर मुख होकर बैठे गाय को पूर्व मुख कर वत्स को उत्तर भाग में स्थापित करे। तथा दान समय के जो मन्त्र हैं उनका उच्चारण करे। और मुद्रिका कर्ण भूपणादियों से ब्राह्मण की पूजा कर दान देवे। अपनी शक्ति के अनुसार वित साठ्य रहित हो दक्षिणा देवे। हाथ में दक्षिणा देकर गन्ध, पुष्प, चन्दनादि से धेनु को पूजकर ब्राह्मण को समर्पण करे। और फिर मुख न देखे। एक दिन शर्कराहार देने वाला रहे, तीन दिन ग्रहण करने वाला रहे ॥१३॥१४।१५।१६॥ शर्करा धेनु सर्व पाप हरने वाली सर्व कामना पौर्ण करने वाली, तथा सर्व सम्पत्ति देने वाली निश्चय से है ॥१७॥ जो शर्करा दान देखता भी है वह भी परम गति को प्राप्त होता है। जो इस शर्करा धेनू दान विधि को पढ़ता है, वा सुनता है.वह सर्व पाप मुक्त हो विष्णु लोक को जाता है ॥१८॥१६॥ इति श्री वाराह पुराणे श्वेत विनीताश्वो पाख्याने शर्करा धेनु माहात्म्यम् नाम काशीराम शर्म्मा कृत भापा टीकायाम त्र्यधिक शत तमोऽध्याय ॥१०३॥

अथ एक सौ चार अध्याय

दोहा— मधु धेनु माहात्म्य कहूँ, एक सौ चार विधान।
राज्य भोग इस लोक में, जाय स्वर्ग महान ॥

अथः मधु धेनु माहात्म्यम्— होता ने कहा- अब सर्व पातक नाशिनी मधु धेनु दान विधि कहता हूँ प्रथम भूमि को गोमय से लेपन करे। कृष्णा जिन कुशा बिछावे मधु पूर्ण षोडश कलश युक्त मधु धेनु बनावे तथा चतुर्थांश से वत्स कल्पित करे ॥१॥२॥ सुवर्ण से मुख बनावे, अगुरु चन्दनादि से सींग बनावे, ताम्रमय पीठ रेशमी वस्त्र से गलकम्बल बनावे, ईख के पैर बनावे तथा पैरों को श्वेत कम्बल में वेष्ठित करे। मुख गुड़मय बनावे, जिह्वा शर्करामय बनावे, फलों के ओष्ठ फलों से दांत, दर्भा के रोम चांदी के खुर प्रशस्त पत्तों से कान बनावे। अंग प्रमाण अनुसार सर्व लक्षण युक्त सर्व धान्य युक्त बनावे ॥३॥४॥५॥६॥ चार तिलपात्र चार दिशाओं में रक्खे वस्त्र युग्म से आच्छादित कर, वस्त्राभरणों से अलंकृत करे। कांस्य की उपदोहिनी रचे। गन्ध पुष्पादि से पूजन करके अयन में, विषुव में, पुण्य व्यतिपात में दिन क्षय में संक्रान्ति में उपराग में तथा यद्दीच्छा से सर्व काल में द्रव्य ब्राह्मण सम्पत्ति देख मधुधेनु को प्रति पादन करे। दरिद्री श्रोत्रिय अग्नि होत्री आर्या वर्तोत्पन्न वेद वेदाङ्ग पारग ब्राह्मण को मधु धेनु दान देना चाहिये। पुच्छ देश में विमर्शकर जल पूर्ण सदक्षिणा मधु धेनु को मन्त्र पूर्वक ब्राह्मण को देवे। (पुच्छ देश में बैठ गन्ध धूपादि से पूजन कर वस्त्र युग्म से आच्छादित कर, उदारता पूर्वक मुद्रिका वर्ण मात्रक से स्व शक्ति अनुसार दक्षिणा देवे जल पूर्वक समर्पण करे पश्चात् यान समर्पण करे) सर्व देवताओं के रसों को जानने वाली सब प्राणियों की भलाई करने में तत्पर हे मधु धेनो आपको नमस्कार हो पितर प्रसन्न हों इस प्रकार प्रार्थना कर उस धेनु को ब्राह्मण को दे देवे ॥७ ८॥९॥१०॥११॥१२॥ १३॥ हे देवि! हे मधु धे-

विशेष कर में आपको ग्रहण करता हूँ हे काम दुघे ! आप मेरे कुटम्बार्थ सर्व कामो को दीजिये आपको नमस्कार हो ॥१४॥ मधुवाता ऋतायेत इस मन्त्र से आशुचिक से मधु धेनू का दान करे तथा छत्र उपानह देवे हे नराधिप ! इस प्रकार जो दान करता है वह जहां मधु वहा नदियां हैं जहां पायश कर्दम हैं जहां सिद्ध ऋषि मुनि हैं वहाँ जाता है ॥१५॥१६॥१७॥१८॥ और वहाँ भोगों को भोग कर ब्रह्म लोक में जाता है और चिरकाल तक वहाँ निवास कर मृत्यु लोक में आय अनेक भोगों को भोग कर विष्णु लोक को जाता है । दश पहिले के दश पिछले के एवम् प्रकार इकीस पितरों को विष्णु सायुज्यता को, मधु धेनू दान के पुन्य से प्राप्त करवाता है जो इस मधु धेनू दान को सुने वा सुनावे वह सर्व पाप निर्मुक्त हो विष्णु लोक जाता है ॥१९॥२०॥२१॥ इति श्री वाराह पुराणे श्वेत विनीताश्वो पाख्याने मधु धेनू माहात्म्यम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम चतुरधिक शततमोऽध्याय ॥१०४॥

अथ एक सौ पाँच अध्याय

दोहाः— पातक नाश करे सकल, मिले स्वर्ग में मान ।
क्षीर धेनु सब दीजिये, भुक्ति मुक्ती निधान ॥

अथः क्षीर धेनु दान विधि— होता ने कहा— हे नराधिप ! अब क्षीर धेनू दान विधि कहता हूं उसको सुनिये । गोमय से भूमि को लेप कर गोचर्म मात्र मान से भूमि में कुशाओं को बिछाकर उसके ऊपर कृष्णा जिन बिछावे ॥१॥२॥ फिर उस भूमि में गोमय से सुविस्तृत कुन्डलिका बनावे तदनन्तर क्षीर कलश को स्थापित करे चतुर्थांश से वत्स कल्पित करे ॥३ सुवर्ण के अथवा चन्दन गुगल के मुख शृंग बनावे लम्बे चौड़े पत्तों से कान बनावे । और तिलपात्र के ऊपर स्थापित्त करे ॥४॥ मुख गुड़मय बनावे, शर्करा से जिह्वा बनावे, फलों से दांत, मुक्ता फलों

से नेत्र बनावे ॥५॥ ईख के पैर दर्भ से रोम बनाकर, श्वेत कम्बल से युक्त करे। ताम्र की पीठ, कांस्य दोहा, रेशमी सूत्र से पूंछ माखन के स्तन स्वर्ण शृंगी, चांदी के खुर, बनावे तथा पंच रत्न से युक्त करे ॥६॥७॥ चार तिलपात्र चार दिशाओं में रखे। और सात धान्य पात्र सब दिशाओं में रखे ॥८॥ इस प्रकार सर्व लक्षण युक्त क्षीर धेनु बनाकर वस्त्र युग्म से आच्छादित कर गन्ध, पुष्प धूपादि से पूजाकर ब्राह्मण को देवे वस्त्रादियों से तथा मुद्रिका कर्ण कुण्डलों से अलंकृत कर खड़ाऊ उपानह छत्रादि देकर दान समर्पण करे। निम्नोक्त मन्त्र से प्रयत्न पूर्वक क्षीर धेनु का दान देवे ॥६।१०॥११॥ विधि विधान से वेदोक्त "आप्यायस्वेति" मन्त्र से सर्व मूर्तों का आश्रय रूप इत्यादि पढ़कर क्षीर धेनु को प्रसन्न करे। ग्रहण करने वाला मन्त्र पढ़े यही दान की विधि कही है ॥१२।१३। दान देते हुये को जो देखता है वह परम गति को प्राप्त होता है। अपनी शक्ति पूर्वक क्षीर धेनु दान को जो पुरुष सहस्र सुवर्ण मुद्रिका अथवा शत मुद्रिका सहित देता है। हे राजन्! उसक. भी फल सुनिये वह साठ हजार वर्ष तक इन्द्र लोक में रहता है। पुनः पितरों के सहित ब्रह्म लोक जाता है। वहां बहुत समय बिताकर दिव्य विमान में चढ़ दिव्य आभरण पहिन वहां से विष्णु लोक जाता है। द्वादश सूर्य्यों की कान्ति वाले श्रेष्ठ विमानों से युक्त गीत वदित्रों से शब्दायमान दिव्य अप्सराओं से सेवित उस विष्णु लोक में निवास कर विष्णु के सायुज्यता को प्राप्त होता है ॥१४॥१५॥ ॥१६॥१७॥१८॥ जो इस रहस्य को भक्ति भाव से पढ़े अथवा सुने वह सर्व पाप विनिर्मुक्त हो, विष्णु लोक जाता है ॥१६॥ इति श्री वाराह पुराणे श्वेत विनीताश्वो पाख्याने क्षीर धेनु दान विधिर्नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम पञ्चाधिक शत ततमोऽध्याय ॥१०५॥

अथः एक सौ छः अध्याय

दोहाः— इस सौ छे अध्याय में, दधि धेनु विधि विधान।
राज्य लक्ष्मी भोग यहाँ, करे स्वर्ग प्रयान॥

अथः दधि धेनु दान माहात्म्यम्— होता ने कहा- हे महाराज! इस समय दधि धेनु दान विधान सुनिये प्रथम गोमय से भूमि का लेपन करे पुनः सुगन्धित फलों से भूमि के आस पास सजावट करे। कृष्णाजिन कुशा बिछाकर उपलिप्त भूमि में सप्त धान्य समूह के ऊपर दधि कलश स्थापित करे। चतुर्थांश से वत्स कल्पित करे सुवर्ण मुख से मण्डित वस्त्र युग्म से दधि धेनू को आच्छादित कर गन्ध पुष्पादि से धेन की पूजा कर कुलीन, साधु स्वभाव क्षमादिक गुणयुक्त ब्राह्मण को वह दधि धेनू दान देवे पुच्छ देश में बैठकर मुद्रिका कर्ण भूषण आदि ब्राह्मण को पहिनाकर खड़ाऊ जूते छत्री आदि देकर दधि क्राव्णेति मन्त्र से दधि धेनु को ब्राह्मण को दे देवे ॥१॥२॥३॥४॥५॥ ६॥ हे राजर्षि सत्तम! इस प्रकार दधि धेनु दान देकर एक दिन तक दधि से एक भुक्त करके देने वाला रहे तथा तीन रात्रि तक दधि भोजन कर दान लेने वाला ब्राह्मण रहे। जो इस दान को देखता है वह भी परम पद को प्राप्त होता है ॥७॥८॥ जो इस दधि धेनु दान विधि को भक्ति से सुनता है अथवा सुनाता है वह अश्वमेध यज्ञ के फल को प्राप्त कर विष्णु लोक जाता है ॥९॥ इति श्री वाराह पुराणे श्वेतविनोताश्वो पाख्याने दधि धेनू दान माहात्म्यम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् षड्धिक शततमोऽध्याय ॥१०६॥

अथः एक सौ सात अध्याय

दोहाः— नव नीत धेनु दान अब, कहूं सकल समझाय।
स्वर्ग मिले विधि से किये, अरु शिव जाय मिलाय॥

अथः नवनीत धेनु दान माहात्म्यम्— होता ने कहा- हे राजन् ! अब प्रयत्न पूर्वक नवनीत धेनु दान विधि सुनिये। जिसको सुनकर पुरुष निश्चय सर्व पाप मुक्त हो जाता है ॥१॥ गोचर्म मान से गोमय से उपलिप्त भूमि में कृष्ण मृग चर्म बिछावे ॥२॥ फिर प्रस्थ मात्र माखन का कलश स्थापित करे उस कलश से उत्तर तरफ चतुर्थ भाग से वत्स कल्पित करे ॥३॥ हे राजसिंह ! विधान से करके वह नवनीत धेनु सुवर्ण शृंगी तथा सुन्दर मुख वाली बनावे उस धेनु के नेत्र मणि मोक्तिकों से रच कर गुड़ से जिह्वा रचे ॥४॥ फूल से ओठ, फलों से दांत, स्वेत सूत्रों से पूछ तथा शर्करा से जिह्वा और रेशमी वस्त्रों से गलकम्बल रचना चाहिये ॥५॥ हे राजन ! माखन के स्तन, ईख के पैर ताम्रमय पीठ, चांदी के खुर, दर्भ के रोम बनाने चाहिये ॥६॥ स्वर्ण शृंगी, रौप्य खुरा पञ्चरत्न युक्त बनाकर चार तिलपात्रों से युक्त कर देवे ॥७॥ दिशाओं में दीपक प्रज्वलित कर नवनीत धेनु को वस्त्र युग्म से आच्छादित कर गन्ध पुष्पों से अलंकृत कर ब्राह्मण को दे देवे ॥८॥ मन्त्र वही उचारण करे जो कि सब धेनुओं के लिये कहे हैं। पहिले देवासुरों के समुद्र मथते समय यह शुभ दिव्य अमृत रूप नवनीत उत्पन्न हुआ है हे सब प्राणियों के आप्यायन रूप नवनीत ! आपके लिये नमस्कार है ॥६॥१०॥ इस प्रकार उचारण कर उस नवनीत को कुटम्बी ब्राह्मण के लिये दे देवे। और ब्राह्मण भी उस सुदुघा सोपधाना नवनीत धेनु को अपने घर ले जावे। हे भूपते ! इस प्रकार द्विज श्रेष्ठ की हवि रूप तथा रस रूप यह धेनु है। हे राजन् ! दान देने वाला एक दिन माखन भोजन करे। तथा लेने वाला ब्राह्मण तीन दिन तक माखन भोजन करे ॥१२॥ हे नरोत्तम ! उस धेनु दान का जो अपने नेत्रों से देखता है वह सर्व पाप मुक्त हो शिव सायुज्यता को प्राप्त होता है ॥१३॥

पहिले और पिछाड़ी के पितरों के साथ विष्णु लोक जाकर कल्प पर्यन्त निवास करता है ॥१४॥ जो मनुष्य नवनीत धेनु दान विधि को भक्ति से सुने, वा सुनावे वह सर्व पाप निर्मुक्त हो विष्णु लोक जाता है ॥१५॥ इति श्री वाराह पुराणे श्वेत विनीताश्वो पाख्याने नवनीत धेनु दान माहात्म्यम् नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम सप्ताधिक शततमोऽध्याय ॥१०७॥

अथः एक सौ आठ अध्याय

दोहा:— इक सौ आठ में वरण, लवण धेनु का दान।
इक लौकिक सुख भोगि सब, मिले स्वर्ग में मान ॥

अथः लवण धेनु दान माहात्म्यम्— होता ने कहा– हे नृपोत्तम ! लवण धेनु दान विधि कहता हूँ उसे सुनिये। सोलह प्रस्थ लवण की धेनु बनाकर गोमय से उपलिप्त भूमि में कृष्णाजिन कुश बिछाकर लवण धेनू को स्थापित करे ॥१॥२॥ चार प्रस्थों से लवण धेनू का वत्स बनावे हे राजेन्द्र ! लवण धेनु के पैर ईख के, मुख तथा सींग सोने के, खुर चांदी के बनावे ॥३॥ उस लवण धेनू का मुँह गुड़मय बनावे। दांत फूलों से, जिह्वा शर्करा से, नासिका गन्धमय बनावे। तथा नेत्र रत्नमय बनावे, कर्ण पत्तों से बनावे, ओठ श्रीखण्ड से, स्तन माखन से बनावे ॥४॥ सूत्र से पूछ बनावे, ताम्रमय पीठ, तथा दर्भा के रोम बनावे हे राजेन्द्र ! कांस्योप दोहा लवण धेनू को घंटा भर्णों से अलंकृत कर सुगन्ध, पुष्प, धूप, से विधिवत् पूजकर वस्त्र युगम से आच्छादित कर ब्राह्मण को दे देवे ॥५॥६॥ नक्षत्र ग्रह पीड़ा में, ग्रहण में, संक्रान्ति में, व्यतिपात में, तथा अयन में, अथवा सर्व काल में, साधु स्वभाव, साधु आचार वेद वेदाङ्ग के जानने वाले कुलीन बुद्धिमान ब्राह्मण को श्रोत्रिय अग्नि होता वेद वेदाङ्ग का विद्वान तथा अकुटिल ब्राह्मण को लवण धेनू का दान देना चाहिये

॥७॥८॥ मन्त्र पढ़कर पुच्छ प्रदेश में बैठ मुद्रिका कर्ण मात्रक, छत्र, खड़ाऊँ, जूते, आदि देकर वस्त्र युग्म से आच्छादित कर कम्बल दक्षिणा देवे और हे नृप! पूर्वोक्त विधि से अपनी शक्ति के अनुसार सुवर्ण से ब्राह्मण की विधिवत् पूजाकर दक्षिणा के सहित गोपुच्छ को ब्राह्मण के हाथ में देकर निम्नोक्त इस मन्त्र को पढ़कर कहे हे विप्र! आपके लिये नमस्कार हो आप इस रुद्र रूपा लवण धेनु को ग्रहण कीजिये ॥६॥१०॥११॥१२॥१३॥ हे देवि! रुद्र रूपे आपके लिये नमस्कार हो। आप सर्व प्राणियों की रसज्ञा हो सर्व देवों से नमस्कृता हो आप मेरी कामना पूर्ण कीजिये ॥१४॥ लवण धेनु दान कर यजमान एक दिन लवण भोजन करे तथा ब्राह्मण तीन रात्रि तक लवण भोजन करे॥१५॥ यजमान हजार अथवा सौ अपनी शक्ति के अनुसार सुवर्ण सहित इस लवण धेनु का दान करके स्वर्ग जाता है। जहां कि महादेव निवास करते हैं॥१६॥ जो इस लवण धेनु दान विधि को भक्ति से सुने अथवा सुनावे वह समस्त पापों से छूटकर रुद्र लोक जाता है ॥१७॥ इति श्री वाराह पुराणे श्वेत विनीताश्वो पाख्याने लवण धेनु माहात्म्यम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम अष्टाधिक शततमो अध्याय॥१०८॥

अथः एकसौ नौऽध्याय

दोहाः— कपास धेनु दान कहूं, इक सौ नव अध्याय।
कोटि जन्म कृत पाप सब, दान दिये जल जाय॥

अथः कपास धेनु दान माहात्म्यम्— होता ने कहा— हे नृप कपास धेनु दान कहता हूं जिसको देने से पुरुष श्रेष्ठ इन्द्र लोक को चला जाता है ॥१॥ विषुव में, पुन्य अयनों में युगादि ग्रहण में, ग्रह पीड़ाओं में दुस्वप्न दर्शन में मनुष्यों के ग्रह पीड़ा में, पुन्य आयतन में, शुद्ध देश में, गवाङ्गण में, गोमय से उपलिप्त भूमि में, तिल दर्भा बिखेर कर उनके मध्य में वस्त्र माल्यादि युग्म

धेनु को रचकर स्थापित करे ॥२॥३॥४॥ धूप, दीप, नैवेद्यादि से पूजन करे चार भार कपास से उत्तम, दो भार से मध्यमा, एक भार से अधमा धेनु कही है। कुंजसी न करके चतुर्थांश से वत्स कल्पित करे ॥५॥६॥ सोने के सींग, चांदी के खुर, नान फलों के दांत, रत्न गर्भ समन्वित्त कपास धेनु बनाकर श्रद्धा युक्त हो, धेनु की मन्त्रों से प्रार्थना करे ॥७॥८॥ चर्मपाणि हो श्रद्धा पूर्वक मन्त्र पुर सर पूर्वोक्त विधि के अनुसार कर्पास धेनु द्विज को देवे ॥९। हे देवि ! जिस प्रकार देवगण तुझ से अलग नहीं हैं उसी प्रकार तू मुझे संसार सागर से पार कर ॥१०॥ इति श्री वाराह पुराणे श्वेत विनीताश्वो पाख्याने कार्पास धेनु दान माहात्म्यम् नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम् नवाधिक शत तमो-अध्याय ॥१०९॥

अथः एक सौ दस अध्याय

दोहाः— इक सौ दस अध्याय में, धान्य धेनु का दान।
सब धेनुन में श्रेष्ठ यह, दीजो वे परिमान।

अथः धान्य धेनु दानमहात्म्यम्— होता ने कहा– हे राजन् ! श्रेष्ठ धान्य धेनु दान विधि कहता हूं आप सुनिये। जिसके संकीर्तन से ही स्वयं पार्वती प्रसन्न हो जाती हैं ॥१॥ विषुव में, अयन में, विशेषकर कार्तिक में जिसका दान देने से मनुष्य राहु से चन्द्र के समान पापों से छूट जाता है ॥२॥ उस धान्य धेनु विधि को इस समय कहता हूं, हे राज सत्तम ! दश धेनु दान से जो फल प्राप्त होता है वह सब एक धान्य धेनु दान से ही मिलता है ॥३॥ पहिले की तरह गोमय से उपलिप्त भूमि में कृष्णाजिन बिछा धान्य धेनु को स्थापित कर धेनु की पूजा करे ॥४॥ चार द्रौण से उत्तमा, दो द्रौण से मध्यमा, और एक द्रौण से अधमा धान्य धेनु कही है दान के समय कंजूसी न करे

चतुर्थांश से धेनु का वत्स कल्पित करे।५॥६॥ सोने के सींग, चांदी के खुर, गोमेद अथवा अगुर चन्दनादि से नासिका, मुक्ता फल से दांत घृतक्षोद्र से मुख प्रशस्त पत्तों से कान कांश्य दोहा बनावे ॥७॥८॥ ईख के पैर, वस्त्र से पूछ बनावे, रत्न गर्भ याने धान्यों के अन्दर पञ्च रत्नादि रखे, धान्य धेनु को नाना फलों से युक्त करे ॥६॥ खड़ाऊं जूते छत्र तथा पात्र आदि से पहिले की तरह द्विज की पूजा करे। धेनु के अंग पूर्ववत् करे क्षौद्रमय मुख शुभ होता है ॥१०॥ उस धान्य धेनु को पहिले की तरह पूजकर धूप दीप से आरती करे पुण्य काल के आने पर यजमान स्नान करके श्वेत वस्त्र पहिन कर उस धेनु को तीन परिक्रमा करे। पुनः ब्राह्मण की प्रार्थना करे कि हे विप्र! हे महाभाग! हे द्विजोत्तम! आप प्रसन्न होइये और मुझसे दी गई धेनु को ग्रहण कीजिये जिससे कि मेरे ऊपर देवेश भगवान मधु सूदन प्रसन्न होवें ॥११॥ ॥१२ १३॥ गोविन्द की जो लक्ष्मी है विभावसू की जो स्वाहा है इन्द्र की शचि है। शिव में जिस प्रकार गौरी स्थित है। ब्रह्मा की गायत्री जिस प्रकार कही है चन्द्र की ज्योत्स्ना, रवि की प्रभा, बृहस्पति की बुद्धि, मुनियों की मेधा जिस प्रकार है। तथैव सर्वमयी देवी धान्य रूप से स्थित है इस प्रकार कह उस धान्य धेनु को विप्र को देवे ॥१४॥१५॥१६॥ दान देकर प्रदक्षिणा कर और उस ब्राह्मण से क्षमा मांगे। हे भूपते! धान्य धेनु दान के पुन्य फल जितने सारी पृथ्वी में वसु रत्नादि हैं उनके दान से जो फल हैं उससे भी कुछ ज्यादा फल होता है। हे नरेन्द्र! अतः धान्य धेनू दान अवश्य देना चाहिये जो कि भुक्ति मुक्ति देने वाली है ॥१७॥१८॥ इस लोक में सौभाग्य आयु आरोग्य वाला हो, सूर्य समान देदीप्यमान किंकणी जाल से शोभायमान विमान में बैठ अप्सराओं से स्तूयमान हो शिव मन्दिर में जाता है और

जभी जन्मों को याद करता है, तभी स्वर्ग में पहुँचता है ॥१६॥ ॥२०॥ तदनन्तर स्वर्ग से भ्रष्ट हो जम्बू द्वीप का पति होता है। इस प्रकार रुद्र से कहे वाक्य सुनकर समस्त पाप मुक्त हो रुद्र लोक जाता है ॥२१॥२२॥ इति श्री वाराह पुराणे श्वेत विनीताश्वो पाख्याने धान्य धेनु दान माहात्म्यम् नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम दशाधिक शततमोऽध्याय । ११०॥

अथ एक सौ ग्यारह अध्याय

दोहा:— एक सौ ग्यारह में कहूँ, कपिला धेनु विधान ।
भुक्ति मुक्ति सब कुछ मिले, अरु स्वर्ग में मान ॥

अथः कपिला धेनु दान माहात्म्यम्— होता ने कहा— अब कपिला धेनु दान कहता हूँ जिस दान के करने से पुरुष विष्णु लोक को जाता है ॥१॥ पूर्वोक्त विधान से सर्व रत्न समन्वित, सर्वालंकार संयुक्त बछड़े के सहित कपिला का दान करे ॥२॥ हे भामिनि पृथ्वि ! कपिला के शिर और ग्रीवा में पितामह के आज्ञानुसार सब तीर्थ निवास करते हैं ॥३॥ जो पुरुष प्रातःकाल उठकर कपिला के गल तथा मस्तक से विगलित पानी को शिर मे धारण करता है। उसके उस पुन्य जल से पाप नष्ट हो जाते हैं। अग्नि जिस प्रकार लकड़ियों को जलाती है उसी प्रकार वह पुन्य जल तीस साल के किये पापों को जलाती है ॥४॥५॥ प्रातःकाल उठ करके जो कपिला की प्रदक्षिणा करता है हे वसुन्धरे उसने सारी पृथ्वी की परिक्रमा करली है समझो ॥६॥ श्रद्धायुक्त हो कपिला की एक परिक्रमा करने से दश जन्म के पाप शीघ्र नष्ट हो जाते हैं ॥७॥ कपिला के मूत्र से स्नान करने वाले ने मानो सब तीर्थों में स्नान कर लिया है ॥८॥ एक उस स्नान से यावत् जन्म के किये पाप नष्ट हो जाते हैं ॥९॥ हजारों गायों का दान करे और एक कपिला का दान करे तो दोनों का पुन्य ब्रह्मा ने समान बतलाया है ॥१०॥ गौ के मूत गन्ध से अपने

को पूरित करे जभी उस गन्ध से सूंघता है और जितना सूंघता है उतने ही पुन्यों से युक्त होता है ॥११॥ गाय को खुजाना तथा गाय का पालन करना श्रेष्ठ है भय रोगादि में पालन करना तो सैकड़ों गायों के दान का फल प्राप्त होता है ॥१२॥ जो पुरुष भूखी गाय को घास पानी से गवाह्निक भोजन देता है वह गोमेध के फल को प्राप्त करता है ॥१३॥ विविध दिव्य विमानों से युक्त हो कन्याओं से अर्पित सुगन्धों से दिप्यमान अग्नि के समान सेव्यमान होता है। पहिले सुवर्ण कपिला दूसरी अग्निङ्गा गौ तीसरी रक्ताक्षी, चौथी गुड़ पिङ्गला, पांचवीं बहुवर्णा, षष्ठी श्वेत पिंगला, सातवीं श्वेत पिंगाक्षी, आठवीं कृष्ण पिंगला, नवीं पाटला, दशवीं पुच्छ पिंगला, ग्यारहवीं श्वेत खुरा इनके सर्व लक्षण हैं ॥१४॥१५॥१६॥१७॥ भुक्ति मुक्ति को देने वाली सर्वालंकार सुन्दरी सर्व लक्षणा युक्त कपिला द्विज को देनी चाहिये वह भुक्ति मुक्ति देने वाली विष्णु मार्ग दिखाने वाली है॥१८॥ इति श्री वाराह पुराणे कपिला दान माहात्म्यम् काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम एकादशाधिक शततमोऽध्याय॥१११॥

अथ एक सौ बारह अध्याय

दोहाः— इक सौ बारह में कहूँ, उभग मुखी गौ दान ।
सुवर्ण कलश दान तथा, दिये मिले सनमान ॥

अथः अभयतो मुखी दान माहात्म्यम— होता ने कहा- हे महाराज ! अब उभय मुखी गौदान विधि सुनिये जो कि पहिले वाराह ने पृथ्वी को कहा था उसी का पुन्य फल मैं आपको सुनाता हूँ। पहिले पृथ्वी नेवाराह जी से पूछा था कि हे प्रभो ! जो आपने कपिला कही है वह प्रथम पैदा हुई सर्वदा पाविनी होम धेनु कितने लक्षणों वाली है। स्वयंभू ने स्वयं कितनी कपिला कही हैं और प्रसूयमाना कपिला के दान से क्या पुन्य होता है। हे जगतगुरो ! यह विस्तार से सुनना चाहती हूं ॥१॥२॥३॥४॥ श्री वाराह ने

कहा– हे देवि ! तत्व से पवित्र पाप नाशक रहस्य सुनिये जिसके सुनने से सब पाप नष्ट हो जाते हैं ॥५॥ हे वरानने ! सब तेजों से सार भूतों को निकाल कर अग्नि होत्र के लिये तथा यज्ञ के लिये ब्रह्मा ने सर्व प्रथम कपिला गाय रची है ॥६॥ हे वसुन्धरे ! यह कहिला गाय पवित्रों में पवित्र है मंगलों की मंगल है पुन्यों की परम पुन्य है । तपों में अग्र तप है व्रतों में उत्तम व्रत है दानों में उत्तम दान वही है खजानों में अच्चय खजाना यही है पृथ्वी में जितने तीर्थ हैं गुह्य से गुह्य स्थान है और सब लोकों में जितने पवित्र पुन्य हैं तथा जितने हवन करने योग्य जितने अग्नि होत्र द्विजातियों से सायं काल प्रातः काल द्विजातियों से हवन किये जाते हैं उन सब में कपिला गाय ही श्रेष्ठ है । जो कपिला गाय के घी से, अथवा दधि से,, अथवा दूध से विविध मन्त्रों द्वारा सदा हवन करते हैं तथा परम भक्ति पूर्वक अतिथियों की पूजा करते हैं । वे सूर्य समान वर्ण वाले विमानों में बैठे सूर्य मन्डल को भेद कर मुक्ति पद को पहुँचते हैं । ॥७॥८॥६॥१०॥ ॥११॥१२॥ ब्रह्मा से निर्मित जो पिंगलाची कपिला गाय है वह सर्व सौख्य बढ़ाने वाली है अनन्त रूपिणी कपिला धेनु सिद्धि बुद्धि को देती है ॥१३॥ सर्व लच्चणों से पूर्वोत्तम जो कपिला है वह सबही तारने वाली यानी भव सागर को पार करने वाली है ॥१४॥ संगमों में अर्थात् गंगा यमुनादि संगमों में सब पापों को नाश करने वाली कपिला गायों का दान शुभ कहा है । अग्नि पुच्छा, अग्नि मुखी, अग्नि लोमा, अनल प्रभा, आग्नायी तथा सुवर्णाश्या आदि उनके औपम्य नाम कहे हैं लोभ से जो नर शूद्र से कपिला दान गृहण करे और उसका दुग्धादि पान करे, वह चान्डाल सदृश पतित जानना चाहिये इसलिये ब्राह्मणशूद्र से दान गृहण न करे ॥१५॥१६॥१७॥ जो शूद्र से दान गृहण करते हैं उनको यज्ञ में कुत्ते के समान दूर हटाने चाहिये । पर्व कालों में

ेत्रादि श्राद्धों में, शूद्रादि से प्रतिगृह लेने वाले ब्राह्मण वर्जित
हे हैं ॥१८॥ और उन प्रतिगृह लेने वालों के साथ भाषण भी
करे। वे शूद्र समान पाप कर्मी जब तक उस कपिला का दूध
ीते हैं तब तक उसके पितामह भूमि में कुत्ते की योनि से पैदा
ो विष्ठा खाते हैं। कपिला के दूध, घृत, अथवा माखन से जो
ूद्र अजीविका करते हैं उनकी गति सुनिये कपिला से
ाजीविका करने वाले शूद्र रौरव नरक को जाते हैं ॥१६। २०।
२१॥ हे पृथ्वि! महा रौद्र रौरव नरक में करोड़ों वर्षों तक
हते हैं वहां से छूटकर कुत्ते की योनि को प्राप्त होते हैं। और
ुत्ते की योनि से मुक्त हो विष्ठा खाने वाले कीड़े होते हैं।
ुर्गन्धित विष्ठा के स्थानों में हमेशा पैदा होते, तथा बराबर पैदा
ोते जाते हैं और वहां से छुटकारा नहीं होता। विद्वान ब्राह्मण
ादि शूद्रों से दान लेवे तो उसके पितर स्वधा के बिना सो जाते
ैं अर्थात् उसका दिया हुआ अन्न जल पितरों को नहीं पहुँचता
ास प्रतिगृह लेने वाले ब्राह्मण के साथ न तो बोल चाल करे
और न उसको एक आसन बिठलावे ॥२२॥२३॥२४॥२५॥ वह
द्विजों को हमेशा दूर कर देना चाहिये यदि कोई ब्राह्मण शूद्र
े प्रतिगृह लेने वाले ब्राह्मण के साथ भाषण करे अथवा एक ही
ासन पर बैठे तो वह कृच्छ्र प्राजापात्य व्रत करे, तब शुद्ध होता
ै। एक गौ दान के सहस्रांश से पवित्र होता है ॥२६॥२७॥
अन्य कोटि सङ्ख्या विस्तार वाले दानों से क्या लाभ है? यदि
एक ही गौ दान से महत् पुन्य प्राप्त होता है तो श्रोत्रिय दरिद्री
साधु स्वभाव अग्निहोत्र द्विज के लिये नजदीक ब्याहने वाली
ेनु का दानार्थ पालन करे अर्द्ध प्रसूता कपिला गाय
का दान ब्राह्मण को देना चाहिये ॥२८॥२६॥ पैदा होते हुये
वत्स का मुख योनि में दीखता रहे तो वह कपिला जब तक
गर्भ को पृथ्वी में न छोड़े तब तक पृथ्वी जाननी चाहिये। हे

वसुन्धरे ! उस सवत्सा कपिला के अंग में जितने रोम हैं उतने करोड़ वर्षों तक ब्रह्म वादियों से पूजा पाकर ब्रह्म लोक में निवास करते हैं। जो कि नित्य कपिला का दान करें अर्द्ध प्रसूता कपिला के सींग चांदी के खुर बनाकर सुवर्ण चांदी ब्राह्मण के हाथ में रख कपिला का पूछ पकड़ कर संकल्प करके ब्राह्मण के हाथ में समर्पण करे और जल हाथ में देकर शुद्धि वाणि से मन्त्र पढ़ावे इस प्रकार जिसने कपिला दान दिया है उसने समुद्र वन पर्वत सहित रत्न पूर्ण पृथ्वी का दान दिया समझो। यह दान समग्र पृथ्वी के दान के तुल्य है ॥३०॥३१॥३२॥३३॥३४॥ ॥३५॥ यह दान देने से मनुष्य प्रसन्न हो विष्णु के परम पद को पितरों के साथ जाता है। ब्रह्म धन हरण करने वाला, गौ तथा भ्रूण हत्या करने वाला, पापी महा पापी, वनचक ब्रह्म दूषक निन्दक ब्राह्मणों की निन्दा करने वाला, दुष्ट कर्म करने वाला महा पातकी पुरुष भी गौ दान से शुद्ध होता है। जो प्रचुर स्वर्ण युक्त उभय मुखी कपिला दान देता है उस दिन पायश का अथवा दूध का भोजन करे। हजार सुवण मुद्रिका से वा तदर्द्ध अथवा उसके अर्द्ध का अर्द्ध, सौ, पचास, पचीस, यथा शक्ति सुवर्ण मुद्रिका दान समय देवे वित्त साठय न करे ॥३६॥३७॥३८॥३६॥४०॥ दान समय ब्राह्मण से कहे कि हे विप्र ! इस उभय मुखी गाय को ग्रहण कीजिये। जिससे कि यह दोनों तरफ कल्याण करे। मैं इसको वंश वृद्धि के लिये दे रहा हूं। यह धेनु सर्वदा कल्याण करने वाली हो ॥४१॥ अब ब्राह्मण कहे कि हे धेनो ! विशेषतः कुटम्ब के लिये मैं आपको ग्रहण कर रहा हूँ। हे देवि धात्रि ! मेरा कल्याण हो, आपको नमस्कार करता हूं। मेरा हमेशा कल्याण हो। हे रुद्राङ्गे आपको नमस्कार करता हूं। "ॐ द्यौस्त्वा ददातु पृथ्वी त्वाप्रति गृह्णातु कइदम् कस्माअदात्" इस प्रकार कह ब्राह्मण को छोड़ वह यजमान उस धेनु को ब्राह्मण के घर पहुंचावे

॥४२॥४३॥४४॥ इस प्रकार अर्द्ध प्रसूता गाय का जो दान देता है हे वसुन्धरे! वह सप्त द्वीपा पृथ्वी के दान का फल प्राप्त करता है उस चन्द्र समान मुख वाली प्रतप्त सुवर्ण समान वर्ण वाली, तनु वृत मध्या हो देवता आकुलित हो निरन्तर भजते हैं ॥४५॥४६॥ जो मनुष्य प्रातः काल उठकर शुद्ध होकर इस कल्प को सावधानता से भक्ति पूर्वक पढ़े, तीन आवृति करने से एक वर्ष का किया हुआ पाप वायु से धूलि के समान शीघ्र ही नष्ट होता है ॥४७॥४८॥ जो इस पवित्र रहस्य को श्राद्ध समय में पढ़े उसका अन्न पवित्र होता है और उस बुद्धिमान के पवित्र अन्न को पितर प्रीति पूर्वक खाते हैं ॥४६॥॥ जो कोई ब्राह्मणों के आगे से अमावस्या के दिन इसको पढ़ता है उसके पितर सौ वर्ष तक तृप्त होते हैं ॥५०॥ जो इस रहस्य को दत्तचित्त से सुनता है, उसके एक वर्ष के सारे पाप नष्ट हो जाते हैं ॥५१॥ होता ने कहा– हे राजेन्द्र! यह पुरातन रहस्य धेनु का माहात्म्य वाराह ने पृथ्वी से कहा था ॥५२॥ सम्पूर्ण पापों के नाश करने वाला वह रहस्य मैंने तुमसे कह दिया है। माघ शुक्ल द्वादशी में तिलधेनु दान देने से सर्व कामना पूर्ण हो विष्णु लोक जाता है। श्रावण शुक्ल द्वादशी में हे नृपोत्तम! सुवर्ण सहित प्रत्यक्ष धेनु का दान का दान करना चाहिये हे राज सत्तम! हमेशा सर्व धेनों का दान देना सर्व पापों का नाश करने वाला तथा भुक्ति मुक्ति फल देने वाला होता है यह सब रहस्य संक्षेप से तुझे कह दिया है ॥५३॥ ॥५४॥५५॥५६। धेनों का दान फल कह पुरुषों की सर्व कामना पूर्ण होती हैं हे पार्थिवोत्तम! आप भूख से अत्यन्त पीड़ित हो इस समय कार्तिकी शुक्ल द्वादशी नजदीक है भूत रत्न औषधियों से युक्त देव दानव यक्षों से समन्वुत सुवर्ण मय कलश से ब्राह्मण कल्पित करके कार्तिक द्वादसी अथवा पूर्णिमा को गुरु पुरोहित के लिये भक्ति युक्त हो वह सुवर्ण कलश दान देवे। ब्रह्मान्ड के

अन्दर जितने प्राणि हैं, वा जितनी वस्तु हैं वह सब दान कर ली हैं जिसने कि सुवर्ण कलश कल्पित ब्रह्मान्ड का दान किया है हे राजन् ! यह संक्षेप से तुझे कह दिया है । जो हजारों दक्षिणा वाले यज्ञ करता है वह एक देशिक है और जो सारे ब्रह्माण्ड का यज्ञ करता है अर्थात् दान करता है उसने सारे यज्ञ कर लिये सारे दान दे दिये सारे शास्त्र पढ़ लिये भगवान् के सारे नाम कार्तन कर लिये हैं ॥५७॥५८॥५९॥६०॥६१॥६२॥६३॥ इस प्रकार उस विनीताश्व राजा ने सुवर्ण कलश से ब्रह्माण्ड कल्पित कर विधान पूर्वक ऋषि को दिया पुनः ब्रह्मान्ड दान देने से शीघ्र ही सब कामनाओं से मनोरथ सिद्ध हो स्वर्ग को गया ॥६४॥६५। हे राजेन्द्र ! अतः तू भी सुवर्ण कलश दान देकर सुखी होजा वशिष्ठ के इस प्रकार कहने पर श्वेत राजा ने भी ऐसा ही किया और परम सिद्धि को प्राप्त किया, जहां जाकर मनुष्य शोकाकुल नहीं होता है वहीं गया । श्री वाराह ने कहा- हे देवि ! यह सर्व पातक नाशिनी वराह संहिता तुझे सुना दी है यह संहिता भगवान से उत्पन्न हुई है फिर इसको ब्रह्मा ने जाना है ॥६६॥६७॥६८॥ ब्रह्मा ने अपने पुत्र पुलस्त्य को सुनाई पुलस्त्य ने भृगुवंशी राम को सुनाई, राम ने अपने शिष्य उग्र को सुनाई, उग्र ने मनु को सुनाई हे पृथिवि ! यह पूर्व कल्पीय सम्बन्ध कह दिया इस समय द्वितिय कल्पीय सम्बन्ध सुनिये । सर्वज्ञ से यह संहिता मैंने जानी है मुझ से तुझ पृथवी ने तुझसे कपिलादि सिद्ध तापस जानेंगे क्रम पूर्वक फिर इसको व्यास सुनेगा और व्यास से व्यास शिष्य रोम हर्षणि जानेगा और सूत शौनक को सुनावेगा अन्य नहीं जानेंगे । ६९॥७०॥७१॥७२॥७३॥ अष्टादश पुराणों को द्वैपायन व्यास जानता है । ब्राह्म, पाद्म, वैष्णव, शैव भागवत, नारदीय, सातवाँ मारकण्डेय आठवाँ आग्नेय, नवाँ भविष्य, दशवाँ ब्रह्म वैवर्त ग्यारहवां लैंग, बारहवां वाराह तेरहवां

स्कन्द, चौदहवां वामन, पन्द्रहवां कुर्म्म, सोलहवाँ मत्स्य सत्तरहवाँ गरुड़ अट्ठारहवाँ ब्रह्माण्ड यह अठारह पुराण कहे हैं। इससे जो कार्तिक द्वादशी के दिन भक्ति पूर्वक पढ़े उस अपुत्रे के भी पुत्र हो जाते हैं।७४॥७५॥७६।७७॥७८॥ जिसके घर में इस रहस्य युक्त लिखी पुस्तक है। और उसका पूजन होता है उसके घर में स्वयम् नारायण स्थित रहते हैं ॥७९॥ जो मनुष्य इस रहस्य को निरन्तर भक्ति पूर्वक सुनता है और सुनकर इस वाराह शास्त्र की पूजा करता है गन्ध, धूप,वस्त्र तथा ब्राह्मणादियों को प्रसन्न करने से सनातन विष्णु तथा वराह शास्त्र की पूजा करे राजा यथा शक्ति ग्रामों में वत्सक की पूजा करे तो सर्व पाप मुक्त हो विष्णु सायुज्यता को प्राप्त होता है॥८०॥८१॥८२॥ इति श्री वाराह पुराणे श्वेत विनीताश्वो पाख्याने उभयतोमुखी गोदान हेम कुम्भ दान पुराण प्रशंसनम् नाग काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायाम द्वादशाधिक शततमोऽध्याय ॥११२॥

अथः एक सौ तेरह अध्याय

दोहाः— हरि की स्तुति धरणी करे, विविध प्रकार गाय।
रसातल से हरि अपनी, दंष्ट्रा ले प्रभुनाय॥

अथः विष्णु स्तुति— ॐ वाराह के लिये ब्रह्मपुत्र सनत् कुमार के लिये नमस्कार हो ॥१॥ जिसके खुर मध्य गत मेरु खंण खंण शब्द करता है उन लीला से पृथ्वी का उद्धार करने वाले वाराह भगवान को नमस्कार हो ॥२॥ जिसने पर्वत नदी तथा समुद्र से घिरी हुई पृथ्वी का उद्धार दाढ़ के अग्र भाग से किया है जो भक्तों के भय को नाश करने वाला है जो सुर नरक दशास्यादियों का नाश करने वाला है वही वाराह रूपी यह सर्वेश्वर विष्णु है जिसको कि पाप से छुटकारा पाकर निर्मल आत्मा वाले लीला ही से प्राप्त कर लेते हैं वह भगवान पाप को

दूर करने में समर्थ होवें तथा पापियों का नाश करें ॥३॥ पूर्व कल्प में जिस समय वाराह भगवान् ने पृथ्वी का उद्धार किया उस समय पृथ्वी भक्ति युक्त हो भगवान् को पूछने लगी ॥४॥ पृथ्वी ने कहा– हे देव ! केशव ! कल्प कल्प में आप ही मेरा उद्धार करते को, और मुझ गौ का उद्धार करते हुये वाहु मूर्ति नहीं चेष्टित होती हे ॥५॥ भगवान् ने जब पृथ्वी को शान्त किया, उस समय उस क्षेत्र में पृथ्वी को स्थित देखकर सनतकुमार आया स्वाति वाचन आदि प्रेम वाणि से पृथ्वी को कहने लगा– हे देवि ! तू जिसको देखकर वृद्धि को प्राप्त होती है तथा जिसमें तू स्थित है और जिसकी है जब विष्णु ने तुझे धारण किया था, तब तूने क्या अद्भुत वार्ता हरि के मुख से सुनी है वह तत्व से सुनाइये ।५॥६॥७॥८॥ ब्रह्म पुत्र सनत् कुमार का वाक्य सुन पृथ्वी कहने लगी– हे ऋषे ! जो गुह्य बात भगवान से पूछी तथा हे विप्रेन्द्र ! महा पराक्रम युक्त जो गुप्त धर्म भगवान् ने मेरे लिये कहे उन भगवान के कहे धर्मों में परम गुप्त धर्म है उसको में कहती हूँ ॥९॥१०॥ उन भगवान् ने संसार से मुक्त करने वाला धर्म विष्णु भक्त से करने योग्य धर्म, व्यास, निश्चय युक्त धर्मों में परम गुह्य धर्म मुझे सुनाया है, तब महातपा ब्रह्म पुत्र सनत् कुमार पृथ्वी के वचन सुनकर कोकामुख क्षेत्र में जो ब्रह्म वादी थे उन सबको जहां पृथ्वी स्थित थी, वहीं बुला लाया और फिर पृथ्वी को पूछने लगा ॥११॥१२॥१३॥१४॥ सनत् कुमार ने कहा– हे वरानने ! जो मैंने पहिले प्रश्न किया है, उसको कहिये। अप्रमेय गति वाले धर्म को तत्व से कहिये । सनत् कुमार के वचन को सुनकर पृथ्वी ऋषि को नमस्कार कर प्रसन्नता पूर्वक मधुर वाणि से कहने लगी ॥१५॥१६॥ हे ऋषियो ! जो मैंने विष्णु के मुख से सुना है वह सुनिये, ऋषियों ने अच्छा ठीक है, कहिये कहा– फिर वह कहने लगी । १७॥

लोक में जिस समय चन्द्र, अनिल, भास्कर, तारे आदि नष्ट हो जाते हैं, सारी दिशायें स्तम्भित हो जाती हैं, उस समय कुछ नहीं जाना जाता है, उस समय न वायु बहता है, न अग्नि न बिजली, न तारागण, और न राशियें उस समय वहां कुछ नहीं रहता, वेदों के नष्ट हो जाने पर मत्स्यावतार धारण कर रसातल से वेदों का उद्धार कर ब्रह्मा को दिये हैं ॥१८॥१९॥२०॥ हे देव ! समुद्र मथते समय आपने कच्छवावतार लेकर मन्दराचल को पीठ पर उठाया है फिर मुझ पृथ्वी को रसातल में जाती देख वाराह अवतार के एक दाढ़ से मेरा उद्धार समुद्र से किया। फिर ब्रह्मा से वरदान पाकर घमन्ड वाले हिरण्य कस्यिपु को नृसिंह रूप से नाश किया है। फिर रामरवतार ले मुझको इक्कीस वार क्षत्रिय रहित किया हैं। और मुझे देखा है ॥२१॥२२॥२३॥ ॥२४॥ पुनः रामावतार से रावण का नाश किया है। और वामनावतार से वलि राजा को बांधा है। हे देव ! मैं आपकी लीलाओं को नहीं जान सकती हूँ। मेरा उद्धार कर किस प्रकार सृष्टि रचते हो, और किस कारण रचते हो तथा रचकर क्या आज्ञा करते हो यह कुछ नहीं जाना जाता उस समय पवन नहीं चलता, अग्नि नहीं जलती, किरणें नहीं रहतीं ग्रह नक्षत्र नहीं होते उस समय वहां मंगल शुक्र बृहस्पति शनिश्चर बुध इन्द्र कुबेर यम वरुण तथा अन्य कोई भी देवता नहीं रहते केवल ब्रह्मा विष्णु महेश्वर तीन देवता रहते हैं। उस समय में पृथ्वी भार से पीड़ित होकर ब्रह्मा की शरण गई थी ॥२५॥२६॥२७॥ ॥२८॥२९॥३०॥ शरण जाकर कहने लगी कि हे देवेन्द्र ! आप प्रसन्न हो जाइये मैं भार से पीड़ित होकर डूब गई हूं हे पितामह अतः पर्वत वनों सहित मेरा उद्धार कीजिये। लोक पितामह ब्रह्मा पृथ्वी के वचन सुन मुहूर्त मात्र ध्यान धर पृथ्वी से कहने लगा हे वसुन्धरे ! ऊँची नीची स्थित जो तू है मैं तेरा उद्धार नहीं कर

सकता हूं। अतः सुरश्रेष्ठ आदि कर्ता लोक नाथ माया के स्वामी विष्णु के पास चली जा वह सबके जो कुछ कार्य होते हैं उन सबको वही सिद्ध करते हैं। फिर तेरा उद्धार करना उनके लिये क्या कठिन है। अनन्त शय्या में सोये हुये योगशायी भगवान के पास चली जा। तदनन्तर ब्रह्मा के इस प्रकार कहने पर कमल पत्राची पृथ्वी हाथ जोड़कर भगवान की स्तुति करने लगी पृथ्वी ने कहा– मैं भार से पीड़ित होकर ब्रह्मा की शरण गई थी ब्रह्मा ने कहा कि हे पृथवी मैं तेरा उद्धार नहीं कर सकता हूं अतः विष्णु की शरण चली जा ॥३१। ३२॥३३। ३४॥३५॥३६॥३७॥ ॥३८॥ वह तेरा उद्धार कर सकता है। हे भगवन्! लोकनाथ! आप प्रसन्न हो जाइये मैं भक्ति से आपकी शरण आई हूं आप मेरे ऊपर प्रसन्न हो जाइये, हे माधव! आप ही सूर्य हो चन्द्रमा हो, यम हो, कुवेर हो, इन्द्र हो, वरुण हो अग्नि हो तथा मरुद्गण भी आप ही हो चर अचर दिशा विदिशा तुम्ही हैं मत्स्य कूर्म, वराह, नृसिंह वामन राम परशुराम कृष्ण बुद्ध कलकी तुम्ही हैं इस प्रकार आप योग मे अनेक अवतार धारण करते हैं। तुम महायश वाले सुने जाते हैं कितने ही युगों के चले जाने पर भी आप यथावत् रहते हो ॥३६।४० ४१॥४२॥४३॥ पृथवी वायु आकाश जल तेज शब्द स्पर्श रूप रस गन्ध सब आप ही के स्वरूप हैं। ग्रह नक्षत्र दिशा मुहूर्त सब आप ही हैं। जो काल मुहूर्तक संग्रह जो नक्षत्र कला है सब में आप ज्योतिप चक्र ध्रुव प्रकाशित होते हो, मास पक्ष अहोरात्र ऋतु सम्वत्सर आदि भी आप ही हो कला काष्ठा अयन आपही हो छः रस संयम नदियें सागर पर्वत महोरग भी आप ही हो ॥४४।४५।४६॥४७॥४८॥ तुम ही मेरु हो मन्दर हो विन्ध्य मलय दर्दुर हिमालय निषध सब आप ही हो तुम चक्र वाले हो श्रेष्ठ आयुध वाले हो धनुषों में पिनाक धनुप तू ही है श्रेष्ठ साङ्ख्य योग तू ही है लोकों का परे से

परे परायण नारायण तू ही है संक्षेप विस्तार तू ही है। रक्षा करने वाला तू ही है। यज्ञ रूप तू ही है नित्य स्वरूप तू ही है यज्ञों में तू महायज्ञ है स्तम्भों में तू निश्चल स्तम्भ है वेदों में साम वेद है तथा सांगोपांग महा व्रत है गर्जन रूप वर्षण रूप तू ही है। तू ही वेधा है तू ही सच झूंठ है। हे विष्णो! तू ही अमृत को रचता है उसी से लोकों को धारण करता है तू ही प्रीति है तू ही श्रेष्ठ प्रीति है तू ही पुराण पुरुष है धेय अधेय तू ही है जो कुछ सर्व जगत् में प्रवर्तित होता है वह तू ही है सातों लोकों का तू ही स्वामी है तू ही असंग्रह है। ४६॥५०॥५१॥५२॥५३॥ ॥५४। तू ही काल है तू ही मृत्यु है तू ही भूत है तू ही भूत भावन है आदि मध्यान्त रूप तू ही है तू ही मेधा, तू ही बुद्धि, तू ही स्मृति, तू ही आदित्य, तू ही युगों का चलाने वाला, तू ही तपस्वी, तू ही महातपा, तू ही अप्रमाण, तू ही प्रमेय, ऋषियों में महान ऋषि, नागों में अनन्त, सर्पों में तू रक्षक, उद्वह तू ही है और प्रवह भी तू ही है। तू ही वरुण वारुण, तू ही क्रिया विक्षेपण, तू ही घरों में गृह देवता, सर्वात्मक, सर्वगत, वर्द्धन, तथा मन तू ही है ॥५५।५६॥५७।५८॥ बिजुलियों में मूर्ति रूप बिजुली हो वैद्युतों में महा द्युति हो युगों में मन्वंतरों में तुम ही स्थित हो और वृक्षों में वनस्पति हो। तू ही श्रद्धा तू ही दोष हन्ता अण्डज उद्भिज स्वेदज जरायुजों में तू ही माधव है गरुड़ है तू ही महान आत्मा धारण करता है दुन्दुभि आदि शब्दों में तू ही निर्मल आकाश, तू ही जय तू ही विजय, तू ही गृहों में गृह देवता सर्वात्मक सर्वगत चेतन है मन है भग तू ही है तू ही विपलिङ्ग तू ही प्रधान तू ही प्रमात्मक तू ही सर्व भूतों से नमस्कृत है। हे देवे! तुझको नमस्कार है हे लोकनाथ! तू मुझ डूबी हुई की रक्षा करने योग्य है आदि कालात्मक है। कृष्ण है तेरी सर्व लोक आत्मा है तू विभु है ॥५६॥६०॥६१॥

॥६२॥६३।६४॥ जो भगवान के इस स्तोत्र को पढ़ता है वह व्याधि रोग से छूटता है वध बंधन से छूटता है। अपुत्रा पुत्र दरिद्री धन, अभार्य भार्या को, और अपति पति को, प्राप्त करता है। दोनों संध्याओं में जो विष्णु के स्तोत्र को पढ़ता है वह विष्णु लोक को जाता है। इस प्रकार अक्षरोक्त भी परिकल्पना होती है उतने हजार वर्ष तक स्वर्ग लोक में निवास करता है।६५॥६६॥६७॥६८॥ इति श्री वाराह पुराणे विष्णु स्तवनम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम त्रयोदशाधिक शततमो अध्याय ॥११३॥

अथः एकसौ चौदहवाँऽध्याय

दोहाः— इक सौ चौदह में इला, हरि से पूछे प्रश्न।
विविध धर्म अरु कर्म सब, साङ्ख्य योग के कृत्स्न॥

अथः श्री वराहावतार— श्री वाराह ने कहा– मन्त्रवादि मुनियों के स्तुति करने पर भगवान नारायण देव प्रसन्न हुये ॥१॥ तदनन्तर भगवान ध्यान में तथा दिव्य योग में स्थित हो, मधुर वाणि से पृथ्वी को कहने लगे ॥२॥ हे देवि ! तूने भक्ति से जो कुछ कहा है मैं तेरी अभिलाषा को पूर्ण करूंगा, सप्त द्वीप, नदी, समुद्र, पर्वत, कानन, समन्वित तुझे मैं धारण करूंगा ॥३ ४॥ भगवान ने पृथ्वी को इस प्रकार आश्वासना देकर महा वाराह रूप धारण किया। छः हजार योजन उन्नत्त तीन हजार योजन विस्तार अर्थात् नौ हजार योजन वाराह शरीर धारण किया, और वांयी दाढ़ से पृथ्वी को ग्रहण कर ऊपर उठाई सप्त द्वीप पर्वत वन नगरों रहित पृथवी का उद्धार किया ॥५॥६॥७॥ कोई विज्ञान संसृत पर्वत टकराने से गिर पड़े और विचित्राङ्ग होने से सन्ध्या कालीन मेघों के समान शोभा पाने लगे। चन्द्र के समान निर्मल वाराह के मुख में स्थित हो कीचड़ में कमल की शोभा पाने लगे ॥८॥९॥ इस प्रकार वज्र के समान दाढ़ वाले वाराह

भगवान ने हजारों वर्षों तक ससागरा सप्तद्वीप पृथ्वी धारण की है ।।१०।। उस समय युगों के एक सप्ततिक कल्प में करदम्ब प्रजापति हुआ है तब पृथ्वी और भगवान अव्यय विष्णु उत्तम वाराह कल्प में अन्योन्य अभिमत हुये ।।११।।१२। यह पृथ्वी उस पुराण पुरुष की स्तुति करने लगी और परम योग से भगवान् के शरण गई ।।१३।। पृथ्वी पूछने लगी हे देव ! आधार किस प्रकार होता है। समय समय में कर्मों का उपयोग किस प्रकार करना चाहिये। पूर्व सन्ध्या सायम मध्याह्नि की संध्या किस प्रकार होती है और समान दृष्टि वाले आपके निमित कर्म करते हैं। संस्थापन में आवाहन में विर्जन में अगुरु गन्ध धूप किस प्रकार ग्रहण करते हैं ।१४।।१५।।१६।। किस प्रकार पाद्य स्नापन लेपनादि ग्रहण करते हैं। दीपक किस प्रकार देना चाहिये कन्द मूल फल आसन शयनादि किस प्रकार प्राप्त किया जाता है। पूजनादि किस प्रकार करनी चाहिये प्राण कितने हैं। पूर्व पश्चिम संध्या में क्या पुन्य होता है। शरद ऋतु में क्या कर्म करने चाहिये। शिशिर में किस प्रकार का कर्म किया जाता है। वसन्त ऋतु में किस प्रकार कर्म करे ग्रीष्म में किस प्रकार का कर्म करे। वर्षा ऋतु में क्या कर्म करे और वर्षा के बाद क्या कर्म करे ।।१७।।१८।।१९।।२० उन ऋतुओं के उपभोग्य फल फूल क्या हैं। जो शास्त्र वहिष्कृत कर्म करते भी अकर्मण्य कौन हैं। किस भोग वाले कर्म से भगवान मिलते हैं। अन्नादियों में किस प्रकार का कर्म नहीं किया जाता है अथवा किस प्रकार का कर्म करने से अत्याचार होता है पूजन का क्या परिमाण है। स्थापना किस प्रकार होती हैं उपवास किस प्रकार करना चाहिये। लाल पीले सफेद कौन वस्त्र योग्य हैं किन वस्त्रों से भलाई होती है। किन द्रव्यों के मिलाने से मधुपर्क दिया जाता है हे माधव ! मधुपर्क के कर्म गुण क्या हैं ।।२१।।२२।।२३।।२४।।

॥२५॥ मधुपर्क के खाने से पुरुष किस लोक में जाते हैं। हे माधव! तेरे भक्त के परम स्तोत्र समय मधुपर्क युक्त क्या प्रमाण देना चाहिये। कौन मांस देने चाहिये। हे देव! शाक का क्या फल है। शास्त्रोक्त कर्म प्रापणों में भी होता है हे धर्म वत्सल बुलाने के मन्त्र से आपके आ जाने से किस मन्त्र विधान से आपको नैवेद्य दिया जाता है। व्रत के उपचारों में आपकी यथा विधि पूजा करने पर कौन कर्म करने चाहिये। आपके भक्त के भोजनान्तर जो प्रापण दोष प्रासादिक नहीं है हे देव! वह सर्व शुद्धि कर परम प्रापण कौन खाता है। जो एक भुक्त कर भगवान की स्तुति करते हैं उन भगवान के मार्गानुयायियों की क्या गति होती है? यथोक्त विधान से जो भगवान का व्रत कर भगवान की भक्ति करते हैं, उनकी क्या गति होती है?। २६। २७॥ ॥२८॥२६॥३०। ३१॥३२॥ कृच्छ सांतपनादि व्रत करके जो आपकी भक्ति करते हैं वे आपके कर्म करने वाले किस गति को प्राप्त होते हैं? जो वायु भक्षण करके भगवान की आराधना करते हैं उनकी क्या गति होती है? जो खारा लवण न खाकर भगवान् की भक्ति करते हैं वे आपके अनुष्ठान करने वले किस गति को प्राप्त होते हैं? जो पयोव्रत करते हैं वे किस गति को पाते हैं? जो गवाह्निक देकर भगवान को प्राप्त होते हैं वे किस गति को प्राप्त होते हैं? जो उञ्च वृत्ति करके भगवान को प्राप्त होते हैं उन भिक्षोपजीवियों को कौन गति मिलती है? ॥३३।३४॥३५॥३६॥३७॥३८॥ जो गृहस्थ धर्म में रह भगवान की आराधना करते हैं उनको कौन गति मिलती है? हे वैकुंठ! आपके क्षेत्रों में प्राण छोड़ने वालों को कौन कौन लोक मिलते हैं जो पंचातप व्रत करके भगवान को अर्पण कर देते हैं उनको पंचातप में मरने वालों को कौन गति मिलती है? कंटक शय्या में सोकर जो भगवान को देखते हैं उनको कौन गति मिलती है?

जो आकाश शयन करके भगवान की आराधना करते हैं उनको कौन गति मिलती है ? गोव्रज में शयन करके जो भगवान की भक्ति करते हैं, हे ब्रह्मन् ! उन भक्ति मार्ग वालों की कौन गति होती है ? शाकाहार कर जो भगवान की पूजा करते हैं उनकी क्या गति होती है ? कंण भक्षण करने वालों को कौन गति मिलती है ? पंचगव्य पीकर जो भगवान् की पूजा करते हैं उनकी क्या गति होती है ? ॥३६।४०॥४१॥४२॥४३॥४४॥४५॥ भोजन करने वालों की कौन गति होती है ? गोमय जो भक्षण कर भगवान की पूजा करते हैं उनकी क्या गति होती है ? और नारायण गति वालों को कैसी विधि कही है तथा जो सक्तु खाकर भगवान् की पूजा करते हैं उनकी क्या गति होती है ? जो शिर से दीपक धारण कर भगवान के पास जाते हैं सिर से दीपक धारण करने से उनकी क्या गति होती है ? जो हमेशा दूध पीकर आपका ही स्मरण करते हैं उनकी कौन गति होती है ॥४६॥ ॥४७॥४८॥४६॥५०॥ अश्माशन व्रत करके जो नित्य भागवत् भक्ति में लीन हैं वे किस गति को प्राप्त होते हैं ? दूर्वा खाकर जो भगवान का ध्यान करते हैं उनको कौन गति मिलती है हे देव ! स्वधर्म गुरु चारियों की कौन गति होती है ? घुटनों से जो स्थित हो प्रीति पूर्वक जो भगवान का ध्यान करते हैं उनको कौन गति मिलती है उत्तान शयन करके जो दीपक धारण करते हैं वे किस निश्चल गति को प्राप्त होते हैं ! घुटनों से स्थित हो दीपक धारण कर जो केशव की पूजा करते हैं उनको कौन गति मिलती है ॥५१॥५२॥५३॥५४॥५५॥ अवाङ्मुख हो जो भगवान की आराधना करते हैं उन अवाङ्मुख शायियों को कौन गति मिलती है पुत्र परिवार घर को छोड़ जो भगवान का ध्यान करते हैं उनको कौन गति मिलती है इस प्रकार सर्व लोक सुखा वह गमनागमन आदि गति मैंने आपसे पूछी हैं माधव ! आप प्रसन्नता पूर्वक कहिये ।

आप जानने वाले हो, आप पिता हो, सर्व धर्मों का निश्चय करने वाले हो अतः सांख्य योग का निश्चय आप ही कहिये। और यह कहिये कि मधुपर्क युक्त हो आपको भजता हुआ जीव यदि चले जावे भस्मा कुलों में अग्नि को किस प्रकार प्राप्त होते हैं ? जल में स्थित आपके भक्त किस गति को प्राप्त होते हैं ? ॥५६॥५७॥५८॥५६॥६०। ६१॥ आपके क्षेत्र में स्थित पुरुष आपको किस प्रकार प्राप्त होते में ? सो कहिये स्मरण में तथा पुत्रादि नामों से हे कृष्ण ! जो नमोनारायणाय ऐसा कह जो आपका नाम उच्चारण करते हैं उनको कौन गति मिलती है रण में उद्यत शास्त्रों से मारे गये यदि आपका नाम कीर्तन करें तो उनको कौन गति मिलती है? मैं शिष्या हूं, दासी हूँ और भक्ति से आपको पूछती हूँ अतः हे जगत गुरो ! हे माधव ! मेरी प्रीति से वह धर्म संयुक्त परम गुप्त रहस्य सोच विचार कर लोक धर्म के लिये आप कहिये ॥६२॥६३॥६४॥६५॥ इति श्री वाराह पुराणे पृथ्वीव्या प्रश्नो नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम चतुर्दशाधिक शततमोऽध्याय ॥११४॥

अथः एक सौ पन्द्रह अध्याय

दोहा— धरणी के पूछने पर, विविध धर्म भगवान् ।
करि हैं द्विजादि जाति के, नाना धर्म बखान ॥

अथः विविध धर्मोत्पत्ति— तदनन्तर पृथ्वी के वचन सुन कर नारायण देव कहने लगे कि हे देवि ! जो कुछ तूने पूछा है वह स्वर्ग सुख देने वाले धर्म कहता हूं ॥१॥ हे देवि वसुन्धरे ! जो तूने भक्ति में स्थित पुरुषों की गति पूछी है वह सुनिये। मैं हजारों दानों से, हजारों यज्ञों से तथा धन से स्वल्प चित्त वाले पुरुषों के ऊपर प्रसन्न नहीं होता हूँ ॥२॥३॥ हे माधवि ! जो एक चित्त से मुझे जानता है उस वहु दोष वाले पुरुष के ऊपर भी मैं नित्य प्रसन्न होता हूं ॥३॥ हे भद्रे ! जो स्वर्ग सुख देने वाले

कर्म तूने पूछे हैं वह मुझसे सुनिये ।।५।। जो वह चेतस पुरुष मुझको नमस्कार करते हैं, अर्द्ध रात्रि में अन्धकार में, मध्याह्न में, अथवा अपराह्न में, जिसका चित्त मेरी भक्ति करते विचलित न होवे, और जो भक्ति तत्पर होकर द्वादशी दिन उपवास करता है, वे मेरी भक्ति में परायण मुझे प्राप्त होते हैं गुणज्ञ स्थिर चित्त भक्ति परायण मनुष्य को इच्छा से भी स्वर्ग में निवास होता है। हे वरानने ! वे पुरुष स्वल्प उपाय से मुझे नहीं प्राप्त करते हैं मैं दुष्प्राप्य हूं ।। ६।।७।।८।।६।। हे माधवि ! कर्मों को करते हुये जो भक्ति पूर्वक मुझे देखते हैं उनको तुझे सुनाता हूं। जो मनुष्य मेरी भक्ति में तत्पर होकर द्वादशी का उपवास करते हैं वे मुझे प्राप्त होते हैं तथा उपवास करके जलांजली ग्रहण कर नारायणायनमः कह सूर्य को देखता है उस अञ्जली जल की जितनी बूंदें होती हैं उतने हजार वर्ष तक स्वर्ग लोक में निवास करता है ।।१०।। ।।११।।१२।।१३।। और जो धर्म वादी पुरुष विधि पूर्वक प्रयत्न से द्वादशी के दिन मेरी पूजा करते हैं, सफेद फूलों से, धूप, दीप से पृथ्वी में मेरी पूजा करते हैं उनकी गति सुनिये। मस्तक पर फूल रखकर यह मन्त्र उच्चारण करे। हृदय में मन्त्रों को रख शङ्खांवरधर भगवान फूलों को ग्रहण करने पर मेरे ऊपर प्रसन्न होवें। विष्णु के लिये नमस्कार हो व्यक्त, अव्यक्त, गन्धि, गन्ध सुगन्धों को ग्रहण कीजिये ! ग्रहण कीजिये !! भगवान् विष्णु के लिये नमस्कार हो, इस मन्त्र से गन्ध देवे। आये हुये सवन पति के लिये, भव प्रविष्ट सुनकर अच्युत भगवान मेरी धूप धूपन को ग्रहण करे। इस मन्त्र से धूप देवे ।।१४।।१५।।१६।।१७।। ।।१८।। इस प्रकार शास्त्रों को सुन जो मेरी पूजा करे वह मेरे लोक को आता है। और चतुर्भुज रूप होता है। हे देवि ! यह श्रेष्ठ मुझे प्रिय लगने लगने वाला व्रत कह दिया है। और तेरी प्रसन्नता के लि सुख देने वाली यह मन्त्र पूजा कही है।

श्यामक, स्वम्तिक, गोधूम, मुद्गक, शालय, मन, निवारक, अंगुक आदि कर्म परायण हो जो भक्षण करता है वह शङ्ख, चक्र, लांगल, मूसल, आदि देखता है ॥१६॥२०॥२१॥२२। हे वसुन्धरे ! ब्राह्मण कर्म कहता हूं उसे सुनिये भक्ति परायण हो ब्राह्मण को कर्म करने चाहिये, वह सुनिये । ब्राह्मण षट्कर्म करे। अहङ्कार रायगे लाभ, अलाभ छोड़ देवे भिक्षाहार करे । जितेन्द्रिय रहे मेरे कर्म कर्त्ता रहे पैशुन्यता छोड़ देवे। शास्त्रानुसार मध्यस्त रहे। नवृद्ध, शिशु, चेतन रहे । यह ब्राह्मण के कर्म हैं हे वसुन्धरे जितेन्द्रिय हैं जो एक चित्त से इष्टापूर्त करता है वह मुझे प्राप्त होना है ॥२३॥२४॥२५॥२६॥ मेरे कर्म में स्थित क्षत्रियों के धर्म कहता हूं । मध्य संस्थित क्षत्रिय जिन कर्मों को करे, वह कहता हूं। क्षत्री दान शूर होवे कर्मज्ञ होवे । यज्ञों में कुशल होवे, पवित्र होवे मेरे कर्मों में मेधावी होवे, अहङ्कार वर्जित होवे, अल्प भाषा गुणज्ञ और नित्य भगवान का तथा गवान के भक्तों का प्रिय होवे, गुरु विय होवे, अनुसूय होवे, निन्द्य कर्म रहित होवे, अभ्युत्थानादि कुशल होवे पैशुन्य रहित होवे । इन गुणों से युक्त होकर जो क्षत्रिय मुझे भजता है वह मुझे प्राप्त करता है । अब मेरे कर्म में स्थित वैश्यों के धर्म कहता हूँ ॥२७॥२८॥२६॥३०॥३१॥ वैश्य मेरी भक्ति में स्थित हो जिन कर्म को करता है उन गुणों से स्वधर्म पूर्वक लाभालाभ की लालसा न करे। ऋतु काल में स्त्री गमन करे शान्तात्मा होवे मोह वर्जित होवे पवित्र चतुर तथा मेरे कर्म में स्थित होने पर सदा निराहार रहे नित्य गुरु की पूजा करे । भक्त वत्सल होवे । इस प्रकार जो वैश्य कर्म करता है उसको मैं नष्ट नहीं करता तथा वह मेरे विरुद्ध नहीं है । हे माधवी अब शूद्र धर्म कहता हूँ उन्हें सुनिये ॥३२॥३३॥३४॥३५। शूद्र जिन कर्मों को करके मेरे में लवलीन होता है उन्हें सुनिये । जो शूद्र

दम्पति मेरे भक्त हों, मेरे कर्म में तत्पर हों, और भक्त के भक्त अपने कर्म में स्थित हों, देश काल जानने वाले हों रजोगुण, तमोगुण से रहित हों निरहंकार वाले हों शुद्धात्मा हों अतिथि वर्तने वाले हों, नम्र हों, अति पवित्र आत्मा वाले हों, श्रद्धालु हों. लोभ मोह रहित हों, नित्य नमस्कार करने वाले हों, मेरा ध्यान करने वाले हों, हे देवि ! जो शूद्र इस प्रकार कर्म करे मैं ऋषि सहस्रों को भी छोड़ शूद्र ही को भजता हूं । जो तूने चातुर्वर्ण के कर्म पूछे हैं वह कह दिये ॥३६॥३७॥३८॥३९॥ ॥४०॥ जो वर्ण तूने भक्ति में तत्पर हो अपने वर्णानुसार कर्म करे मेरी भक्ति करे वह मुझे प्रिय है । हे देवि ! अपर क्षत्रिय में वर्ण के अर्थ धर्म सुन जिससे वह योग प्राप्त होवे । हे वसुन्धरे वह सुनिये लाभ अलाभ छोड़कर मोह कामादि को त्याग देवे । शीत, ऊष्ण प्राप्त कर भी अप्राप्त के समान समझे । मधुर, अमल कटु तिक्त कषाय आदि रसों में जिसकी स्पृहा नहीं है वह परम सिद्धि को प्राप्त होता है । सांसारिक सुख देने वाले भार्या पुत्र, पिता, माता आदियों को छोड़ सदा मेरे कर्म में स्थित हो जो धृतिज्ञ कुशल श्रद्धालु धृत व्रत है । नित्य कर्म तत्पर है अन्य कार्य जुगुप्सक है उपभोगी है कुल वाला है करुणा युक्त है सब सत्वों पर दया करने वाला है क्षमा करने वाला है समय पर मौन व्रत धारण करने वाला है । वह योग सिद्धि को प्राप्त करता है ।४१॥४२॥४३॥४४ ४५॥४६॥४७। त्रिकाल में जो दिशाओं का भाग देता है । सदा कर्म मार्ग में स्थित रहता है, प्राप्त हुओं को न भोगने वाला, अभोजनादि कर्म करने वाला अनुष्ठान करने वाला, मेरा ध्यान करने वाला समय में सौचादि क्रिया कर स्नान कर गन्ध फूल धूप दीप आदि देकर मेरे कर्म में तत्पर होवे कभी कन्द मूल फल खावे, कभी दूध, कभी यावक कभी वायु भक्षण करे । कभी छटे दिन खावे कभी अनायास महाफल भी चतुर्थ दिन मे साधारण ही फल कभी दशवें दिन

कभी पक्ष में, कभी महीने में खावे। हे वसुन्धरे! जो इस प्रकार सात जन्मों तक मेरा कर्म करे। उन पूर्वोक्त कर्मों में लवलीनों को योगी लोग देखते हैं ॥४८॥४९॥५०॥५१॥५२॥५३। इति श्री वाराह पुराणे विविध कर्मोत्सवो काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् पञ्चदशाधिक शततमोऽध्याय ॥११५॥

अथः एक सौ सोलह अध्याय

दोहाः— इक सौ सोलह में कहें, धरणी सों भगवान्।
किस विधि मे सुख होत है, अरु कौन दुख निदान ॥

अथः सुख दुख निरूपणम्— वाराह जी ने कहा- हे महाभागे! जिसमे सफलता मिलती है ऐसे मेरे कहे हुये विधान से जो कार्य करता है उसकी सफलता सुनिये ॥१॥ एकाग्र चित्त होकर अहङ्कार छोड़कर मेरा ध्यान करता हुआ नित्य शांत दांत जितेन्द्रिय मनुष्य द्वादशी दिन फल मूल शाक खावे अथवा पयोव्रत यानी भोजन करे मांस न खावे ॥२॥३॥ तथा हे प्रिये! षष्ठी, अष्टी, अमावस्या दोनों पक्षों की चतुर्दशी तथा द्वादशी दिन मैथुन न करे ॥४॥ एवम् योग विधान से दृढ़ व्रत हो कर्म करे कर्म करने से मनुष्य धर्म संयुक्त पवित्रात्मा होकर विष्णु लोक को जाता है ॥५॥ वहां जाकर उस पुरुष को ग्लानि, जरा, मोह रोगादि नहीं सताते हैं और उसकी अष्टादश भुजा हो जाती हैं तथा खड्ग, सर, गदादि धारण करता है ॥६॥ मदीय कर्म करने वालों की फलोदय व्यूष्टि कहता हूँ, साठ हजार साठ सौ वर्ष तक मेरी पूजा करके मेरे लोक को प्राप्त होते हैं। हे वसुन्धरे! सर्व प्रकार दुख कहता हूँ सुनिये ॥७॥८॥ उचित प्रकार से दुख मोक्ष विनाशन होता है नित्य अहङ्कार तथा मोह से युक्त हो जो पुरुष मेरी आराधना नहीं करता है तो उससे ज्यादा दुख क्या है। अर्थात् वही दुख की पराकाष्ठा है नमस्कार करने वाला सर्व भक्षण करने वाला, सर्व वस्तु बेचने वाला जो पुरुष मेरी भक्ति

न करे उससे ज्यादा दुख क्या है। समय पर विश्वेदेवा तथा अतिथियों को आये देख जो मनुष्य उनको भोजनादि न देकर अपने आप ही भोजन करता है, तो उससे ज्यादा दुख क्या है सब अन्न पके हुये हों और उनमें जो पाक भेद करे, उसका अन्न देवता नहीं खाते हैं। अतः उसमे ज्यादा दुख क्या है। वैषम्य में जो असन्तुष्ट हो, परदारा से बलात्कार करने वाला, परोपतापी मन्दात्मा हो तो उससे ज्यादा दुख क्या है समग्र कार्य न करके जो घर में रहता है, और मृत्यु को प्राप्त होता है तो उससे अधिक दुख क्या है ॥६॥१०॥११ १२॥१३॥ १४॥ यदि किसी निर्धन मुसाफिर के आगे पीछे से हाथी घोड़े रथ चलते हों तो उससे अधिक दुख क्या है कोई मांस भोजन करते हैं कोई शालि ओदन खाते हैं और यदि कोई सूखा अन्न खाता हो तो उससे अधिक दुख क्या है। कोई श्रेष्ठ पलंग पर शयन करता है कोई तृण में शयन करता है तो उससे ज्यादा दुख क्या है कोई पुरुष अपने किये कर्मों से सुन्दर रूप वाला है और कोई कुरूप दीखता है तो इससे अधिक दुख वाला कौन है। कोई विद्वान हैं कृतज्ञ हैं, गुणज्ञ हैं, सर्व शास्त्र विशारद हैं और कोई गूंगे दीख पड़ते हैं तो इससे अधिक दुख क्या है धन के होने पर भी कोई कृपण हैं, और कोई दरिद्री पुरुष दाता हो जाता है तो इससे अधिक दुख क्या है ॥१५॥१६॥१७॥१८॥१६॥२०॥ जिस पुरुष की दो स्त्री हों एक की प्रशंसा करता तथा एक स्त्री दुर्भगा हो तो इससे अधिक दुख वाला कौन है। ब्राह्मण क्षत्री वैश्य तीनों वर्ण यदि पाप करने लगें तो इससे ज्यादा दुख क्या है। पांच भौतिक मानव शरीर पाकर यदि मेरा भजन न करते हों तो इससे अधिक दुख क्या है हे भद्रे ! यह दुख कर्म निश्चय कह दिया है ॥२१॥२२॥२३॥ ॥२४॥ जो तूने पूछा था कि दुखदायी पाप कहो सो कह दिये अब तेरे पूछने पर सुखदायी सत्कर्म कहता हूँ वह सुनिये।

हे धरणि ! विपुल कर्म कर मेरे भक्तों में निवेदन करे जिसकी बुद्धि विचलित हो, वह दुख प्राप्त करता है जो मेरी पूजा कर नाना प्रकार का नैवेद्य अर्पण करे और शेषान्न को प्रसादी रूप से खाले तो उससे ज्यादा सुख क्या है । हे वसुन्धरे ! सायाह्निक कर्म करके जो मनुष्य मेरे से कही विधि के अनुसार त्रिकाल को प्राप्त होते हैं तो उससे अधिक सुख क्या है। २५॥२६॥२७॥ ॥२८॥ हे वसुन्धरे ! जो देवता अतिथि मनुष्यों को भोजन कराके अपने आप भोजन करता है उससे अधिक सुख क्या है । जिसके घर में अतिथि आजाय और वह जिस किसी से आतिथ्य सत्कार पाकर निराश होकर नहीं जाता तो उससे ज्यादा सुख क्या है महीने महीने में जो अमावस्या आती है उस दिन जो पितरों को तृप्त करता है तो उससे अधिक सुख क्या है । भोजनों के यथाविधि विभवानुसार सिद्ध हो जाने पर जो अभिन्न मुख राग से यवान्न देता है तो उससे ज्यादा सुख क्या है दो भार्या होने पर भी जिसकी बुद्धि पक्षपात नहीं करती दोनों स्त्रियों को समान देखे तो उससे ज्यादा सुख क्या है विशुद्ध अन्तरात्मा से जो हिंसा नहीं करता उसे सुखी कहते हैं । दूसरे की स्त्री को खूबसूरत देखकर भी जिसकी दृष्टि चंचल नहीं होती जिसका चित नहीं जाता उससे अधिक सुख क्या है ॥२६॥३०॥३१॥३२॥३३॥ ॥३४॥३५॥ मौक्तिकादि रत्न तथा सुवर्ण को, जो लोष्ट वत देखता है तो उससे ज्याद सुख वाला कौन है । जो प्रसन्न चित्त से हाथी घोड़े वाली दोनों सेनाओं के मध्य मार्ग में प्राणी को छोड़े तो उससे अधिक सुख क्या है । जो लाभ अलाभ से कुत्सित कर्म की निन्दा करता हुआ सन्तुष्ट होकर जीवे, तो उससे अधिक सुखी कौन है । हे वसुन्धरे ! एवं प्रकार स्त्रियों को पतीव्रत धर्म पालन करना चाहिये, जो स्त्री अपने पति को प्रसन्न रखे तो

उससे अधिक सुखी कौन है व्यसन में जो अपमान त्याग करे दुर्जन से नहीं जिसने यह सब जान लिया है तो उससे अधिक सुख वाला कौन है ॥३६॥३७॥३८॥३९॥४०॥४१॥ हे वसुन्धरे चाहे अकाम हो, सकाम हो, परन्तु जो मेरे क्षेत्र में प्राणों को त्यागे, तो उससे अधिक सुखी कौन है। जो सर्वदा माता पिता की सेवा करे, और देवताओं के समान देखे, तो उससे अधिक सुख वाला कौन है। महीने महीने के ऋतुकाल में ही जो मैथुन करे अपनी स्त्री को छोड़ अन्य किसी से भी प्रेम न रखे, तो उससे अधिक सुखी कौन है। सर्व देवताओं के उद्देश्य से जो मेरी ही पूजा करता है वह मुझे नहीं छोड़ता, तथा मैं उसे नहीं छोड़ता हूं, अर्थात् उसी के हृदय में स्थित रहता हूँ। हे भद्रे ! जो कि सर्व लोक हित के लिये तूने मुझसे पूछा है, यह शुभ निर्देश कह दिया है ॥४२॥४३॥४४॥४५॥४६॥ इति श्री वाराह पुराणे सुख दुख निरूपणाम नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम षोड़शाधिकशततमोऽध्याय ॥११६॥

अथः एकसौ सत्रह अध्याय

दोहाः— इक सौ सत्रह में कहें, धरणी सौं समुझाय।
अपराध हरि वाराह जी, सब बत्तीस गिनाय॥

अथः द्वात्रिंशदपराधः— श्री वाराह जी ने कहा– हे भद्रे ! हे वसुन्धरे ! भोजन विधि और आहार अन्नाहार मुनियें हे माधवि ! खाता हुआ जाता है मेरे योग के लिये जो भोजन करता है अशुभ कर्म करके भी धर्म के आधार पर रहने वाले धर्मज्ञ पुरुष व्रीहि तथा शालियों को [illegible] निश्चयः [illegible] करे, यह कर्मण्य अर्थात् विधि से [illegible] हैं। इनका [illegible] करे। ॥१॥२॥३॥ अब अकर्मान्न कहता हूं। जिन [illegible] भोजनों को मेरे निमित्त [illegible] करता है। [illegible]

यानी अनूक्त भोजनों के करने से बड़ा अपराध होता है हे प्रिये! यह पहिला अपराध है कि, अकर्मण्य भोजन करे तो वह प्रथम पराधान मुझे ठीक नहीं लगता है। पुनः दूसरे का अन्न खाकर जो उसी से निर्वाह करे, उसी मे लालसा रखे तो वह दूसरा अपराध है। और वह धर्म विघ्न के लिये होता है जो मैथुन संयोग कर मुझको स्पर्श करे, वह तीसरा अपराध है। जो रजस्वला स्त्री को देखकर मेरे मन्दिर में आय पूजन करने लगे, वह चौथा अपराध है। हे वसुन्धरे! इस अपराध को मैं कभी क्षमा नहीं करता जो मृदक को देख विना आचमन किये मेरी मूर्ति को छूता है हे वसुन्धरे! उस छटे अपराध को भी मैं कभी नहीं भूलता हूँ। जो मेरी पूजा करते समय पुरीपोत्सर्ग करने जाता है वह सातवाँ अपराध है ॥४॥५॥६॥७॥८॥६॥१०॥ हे वसुन्धरे! जो नीला वस्त्र पहिन कर मेरी पूजा करता है वह मेरा आठवाँ अपराध है जो मेरी पूजा के समय ईर्ष्या- राग की बातें करता है वह नौवाँ अपराध है जो विना-विधि के मेरी पूजा करता है वह मेरा अप्रिय करने वाला दसवां अपराध है हे वसुन्धरे जो कर्म कारक क्रोधित हो जिन कर्मों को करता है वह मेरा ग्यारहवां अपराध है हे वसुन्धरे! जो अकरमन्य को करता है वह बारहवाँ अपराध है जो लाल रंग के कौसुम्भी वस्त्र पहिन कर मेरी पूजा करे वह तेरहवाँ अपराध है ॥११॥१२॥१३॥१४॥ ॥१५॥१६॥ हे वसुन्धरे! जो अन्धकार में मेरी मूर्ति को स्पर्श करे वह चौदहवाँ अपराध है। जो काले वस्त्र पहिन कर मेरी पूजा करे वह पंद्रहवाँ अपराध है। मलिन वस्त्रों को पहिन जो मेरी पूजा करे वह सोलहवां अपराध है। हे माधवी! जो अज्ञान से भी अपने आप ही भोजन करे, बांटे नहीं वह मेरा सत्रहवाँ अपराध है। जो मत्स्य मांस खाकर मेरी पूजा करे वह अठारहवाँ अपराध है जो जाल पाद खाकर मेरी पूजा करे वह उन्नीसवाँ

अपराध है ॥१७॥१८॥१६।२०॥२१॥२२॥ हे वरानने ! जो मेरे ही दीपक का स्पर्श कर बिना हाथ धोये मेरी पूजा करता है वह बीसवाँ अपराध है जो श्मशान भूमि में जाकर एक दम मेरे मन्दिर में आवे उसे मेरा इक्कीसवाँ अपराध कहते हैं जो पिण्याक तिलादियों का चूरा खल अथवा हींग खाकर मेरी पूजा करे उसे बाइसवाँ अपराध कहते हैं। जो वाराह माँस को प्रापण नैवेद्यादि से अर्पण करता है वह तेईसवाँ अपराध है जो सुरा पीकर कदाचित् मेरी पूजा करे तो उसे चौबीसवाँ अपराध कहते हैं जो कुसुम्भ शाक खाकर मेरी पूजा करे उसे मेरा पचीसवां अपराध कहते हैं। जो दूसरे के कपड़ों से पूजा करे उसे सबीसवाँ अपराध कहते हैं ॥२३॥२४॥२५॥२६॥२७॥२८॥२९॥ जो मनुष्य नवान्न भक्षण करे, और देवता पितरों का पूजन न करे पहिले उनको नवान्न भोग न लगावे उसे मेरा सत्ताइसवाँ अपराध कहते हैं जो जूते पहिन बावड़ी में जावे वह अट्ठाइसवाँ अपराध है। जो शरीर को तेलादि से मर्दन करे और बिना स्नान किये मेरी पूजा करता है वह उन्तीसवाँ अपराध है वह पुरुष स्वर्ग नहीं जाता। हे वसुन्धरे जिसको भोजन खाने से अजीर्ण हो जावे और वह मेरे मन्दिर में आवे तो वह तीसवां अपराध है जो गन्ध पुष्पादि न देकर खाली धूप धुकाता है वह इकत्तीस अपराध है जो नगाड़े आदि शब्द के बिना मेरे मन्दिर के किवाड़ खुलाता है वह बत्तीसवां अपराध है। हे वसुन्धरे ! अब अन्य दृढ़ व्रत सुनिये ॥३०॥३१॥ ॥३२।३३॥३४॥३५।३६। आवश्यक कर्म करके पुरुष मेरे लोक को जाता है नित्य कर्म करने वाला शास्त्रज्ञ मेरे कर्म परायण अहिंसक सर्व प्राणियों पर दया करने वाला सामान्य पवित्र दक्ष नित्य मेरे में स्थित इन्द्रिय निग्रह करने वाला अपराध रहित उदार धार्मिक अपनी स्त्री से प्रेम रखने वाला कुशल चातुरवर्ण के सत्कार्य में स्थित पुरुष मेरे लोकको प्राप्त होता है ॥३७। ३८। ३९॥४०॥

आचार्य भक्त, देश भक्त, तथा पति वत्सला स्त्रियें संसार में रहती भी यदि आगे जाती हैं तो वे मेरे लोक में स्थित हो अपने पति को देखती रहती हैं। और यदि मेरा भक्त पुरुष स्त्री को छोड़कर जाता है तो वह भी वहां अपनी प्रिय पत्नी की प्रतीक्षा करे हे वसुन्धरे! अन्य कर्मों में उत्तम कर्मों को भी कहता हूं। मेरे कर्म पथ में स्थित ऋषि गण मुझे नहीं देखते हैं। मेरे लोकों में ऋषि भी देखने चाहिये और फिर मेरे कर्म मार्ग में स्थित मनुष्यों को तो कहना ही क्या है। जो मूर्ख पाप चित्त वाले अन्य देवों की भक्ति करते हैं वे मेरी माया से विमूढ़ हो, विष्णु लोक को नहीं प्राप्त होते। हे वसुन्धरे! मोक्ष की इच्छा वाले जो मुझे प्राप्त होते हैं उनको मैं भाव संसिद्ध जानकर विभक्त करता हूं। हे धरे! जिससे कि मैंने तुझको प्रधान शक्ति से धारण किया है ॥४१॥४२॥४३॥४४॥४५॥४६ ।४७॥ हे देवि अतः तुझे यह धर्म संयुक्त आख्यान सुनाया है। हे वसुन्धरे! यह आख्यान पिशुन, मूर्ख, तथा उपदिष्ट के लिये धूर्त के लिये, उप सर्प्प के लिये, तथा शठ नास्तिक को नहीं सुनाना चाहिये केवल मम कर्म परायण भक्तों को सुनाना चाहिये। हे देवि! सर्व लोक हित के लिये मैंने महत् धर्म कह दिया है। अन्य क्या पूछना चाहती हो ॥४८॥४९॥५०॥५१॥ इति श्री वाराह पुराणे द्वात्रिंशदपराध कथनम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम सप्त दशाधिक शत तमोऽध्याय ॥११७॥

अथः एक सौ अठारहवांध्याय

दोहा— इक सौ अट्ठारह में कहूं, हरि उपचार विधान।
किये हिये हरि बसत हैं, भुक्ति मुक्ति निधान ॥

अथः— देवो पचार विधि— श्री वाराह जी ने कहा- भद्रे! जिस प्रकार मेरा भक्त यथा विधि विद्या से पाप प्रायश्चित

करता है वह तत्व से सुनिये ॥१॥ वक्ष्यमाण मन्त्र से दन्त काष्ट ग्रहण करे, जब तक पृथ्वी का स्पर्श न किया, तब तक दीपक न जलावे ॥२। दीप प्रज्वलित करने पर हाथ धो लेना चाहिये हाथ धोकर फिर इस प्रकार आकर भगवान के चरणों की वन्दना कर, दन्त काष्ट मगावे । इस निम्नोक्त मन्त्र से दातुन देवे ॥३॥ ॥४॥ मन्त्र– भुवन, भवन, रवि संहरण अनंतो मध्यश्चेति गृह्ण मम मुदनम् दन्त काष्ठम् ॥५॥ जो आपने इस प्रकार सर्व धर्म विनिश्चय कहा है । हे वसुन्धरे ! यावत् कर्म दन्त धावन दांतों में देवे ॥६॥ सिर से निर्माल्य उतार अपने सिर में धारण करे । तदनन्तर जल से अपने हाथ धोकर स्वल्प जल से मुख कर्म करे हे सुन्दरि ! मुख प्रक्षालन का मन्त्र सुनिये । ॥७ ८॥ उक्त मन्त्र से पूजन कर मनुष्य संसार से मुक्त होता है । ६॥ मन्त्र तद्भगवन् त्वाम् गुणश्च आत्मनश्चापि गृह्ण वारिणः इस प्रकार सब देवताओं का मुख प्रक्षालन करे । इस मन्त्र से सुगन्ध, धूप, दीप, नैवेद्य फिर इसी प्रकार समर्पण करे ॥१०। तदनन्तर पुष्पाञ्जलि देकर हे भगवन् ! भक्त वत्सल ! नमोनारायणाय इस प्रकार कह यह मन्त्र उच्चारण करे । ॥११॥ हे माधवि ! प्रातःकाल उठकर अन्य पुष्प ग्रहण कर ज्ञानी पवित्रात्मा भक्त मन्त्रों के यत्न यथा भूत श्रद्धा देव देवेश भगवान की पूजा करे । और सर्व कर्म समन्वित दण्डवत् पृथ्वी पर गिर कर हाथ जोड़ हे जनार्दन ! हे भगवन् ! प्रसन्न हो जाइये । यह मन्त्र पढ़े ॥१२॥१३॥१४॥ हे नाथ ! मन्त्रों से संज्ञा प्राप्त कर आपके प्रसन्न होने पर आपकी इच्छा से योगियों की भी मुक्ति होती है । जिससे कि मैं आपमें कहे हुये आपके कर्म करने वाला हूं । अतः हे देव ! प्रसन्न हो जाइये ॥१५॥१६। इस प्रकार मन्त्र विधि करके मेरी भक्ति में स्थित पुरुष जभी क्षीण न हो तभी शीघ्र ही अनुपद पीछे से जावे और मदीय कर्म में दृढ़ व्रत मनुष्य इस प्रकार

सर्व सामिग्री लाकर शीघ्र मेरे लिये अभ्यन्जन देवे, तेल से अथवा घृत से अभ्यंजन देवे तदनन्तर मन्त्रज्ञ कर्म कर्ता स्नेहाभ्यन्जन उद्देश्य से सावधान चित्त हो यह मन्त्र पढ़े ॥१७॥१८॥ ॥१६॥ हे लोकनाथ ! स्नेह से स्नेह पाकर लाया हूँ। सर्व लोकों में सिद्धात्मा अपने हाथ से स्नेह देता हूं। मेरा कहा क्षमा करो आपके लिये नमस्कार हो ! नमस्कार हो !! इस प्रकार मन्त्र पढ़ कर प्रथम सिर पर स्नेह लगावे ॥२०॥२१॥ फिर दाहिने अंग पर तेल मले, फिर वांये अंग में तेल मले तदनन्तर पीठ में कटि प्रदेश में तेल लगावे। फिर गोमय से भूमि का लेप करे। हे भद्रे ! वह दृढ़ व्रत गोमय लेपन से निश्चय शास्त्रज्ञ होता है ऐसा करने से जो पुण्य प्राप्त होता है उनका वर्णन करता हूं सुनिये। जितने तेल विन्दु होते हैं उतने हजार वर्षों तक स्वर्ग लोक में निवास करता है और जो पुण्य कृत लोकों का लेपन करता है वह उनकी एकैक कण संख्या तक स्वर्ग लोक में रहता है। इस प्रकार जो तेल अथवा घृत से गात्र का अभ्यंजन करे वह उतने हजार वर्षों तक मेरे लोक में निवास करता है। हे भद्रे ! अब जो मुझे प्रिय लगता है वह उद्वर्त्तन कहता हूं ॥२२॥२३॥२४॥ ॥२५॥२६॥२७॥ जिस उद्वर्त्तन से कि अंग शुद्ध होते हैं और मेरी प्रीति होती है। लोध्र का छिलका पिपीलिका मधु मधूक अश्व पर्ण अथवा वट का छिलका, करकट, छोटा आंवला इत्यादियों में किसी को भी प्राप्त कर चूर्ण बनाकर अथवा पिष्ट चूर्ण से अपने हाथ से उद्वर्तन लगावे। वह उद्वर्तन मेरे गात्र को सुख देने वाला होता है यदि मेरे कर्म करने वाला परम सिद्धि को चाहता है तो इस प्रकार उवटन लगाकर स्नान करावे ॥२८॥२९॥३०॥३१॥ तदनन्तर दृढ़ व्रत आमलक और अष्ट सुगन्धियों से मेरे सर्व गात्र को मलकर जल कुम्भ ग्रहण कर यह मन्त्र कहे। हे देव ! आप देवताओं के भी अनादि प्रधान देव हो हे अनघ ! प्रकट

रूप मूर्ति से ग्रहण कीजिये। इस प्रकार कह मदीय कर्म परायण मनुष्य स्नान करावे सुवर्ण के कलश से अथवा चांदी के कलश से स्नान करावे। सुवर्ण चांदी के कलश न मिलें तो ताम्रमय कलश से उत्तम स्नान करावे। इस प्रकार विधि निर्दिष्ट कर्म से स्नान कराकर मन्त्र पूर्वक प्रकृष्ट गन्ध देना चाहिये सुन्दर सौमनष्य सर्व वर्णों के सर्व गन्ध आपको अभीष्ट हैं · सर्व लोकों में उत्पन्न हुये आपने सत्यादि लोकों में भेजे हैं यानी योजित किये हैं। हे प्रभो! वह सर्व गन्ध आपके अंग में लगाता हूं उन पवित्र वस्तुओं को ग्रहण कीजिये ॥३२॥३३॥३४॥३५॥३६। ३७।३८॥ हे माधव! मेरी भक्ति से प्रसन्न होकर ग्रहण कीजिये कह गन्धादि देवे उत्कृष्ट कर्म कर विधि अनुसार माला पहिनावे कर्म कर्त्ता मनुष्य इस प्रकार विधि समिति कर्म करके पुष्पांजलि ग्रहण करे और यह मन्त्र पढ़े हे अच्युत! जल में, अथवा स्थल में, समय पर पैदा हुआ यह पवित्र फूल ग्रहण कीजिये और मुझे संसार विच्युति दीजिये इस प्रकार पूजन करने के अनन्तर सुगन्ध द्रव्य युक्त धूप धुकावे मदीयोक्त विधान से सुखदायक धूप ग्रहण कर उभय कुलात्मक धूप मन्त्र पढे हे भगवन् वह द्रव्य युक्त दिव्य वनस्पति रस रूप यह धूप मेरे संसार मोक्ष के लिये ग्रहण कीजिये ॥३९॥ ॥४०॥४१॥४२। ४३ ।४४॥ मन्त्र— निश्चय से सर्व देवों की शान्ति है शान्तिमय परायण है सांख्यों के शान्ति योग से आप धूप ग्रहण कीजिये आपको नमस्कार है जगद्गुरो आपके अति-रिक्त मेरा और कोई रक्षक नहीं है ॥४५॥४६॥ इस प्रकार माला गन्धानु लेपनों से पूजन करने के पश्चात् निर्मल सफेद अथवा पीला वस्त्र पहिनावे ।४७॥ इस प्रकार करके हाथ जोड़ दिव्य योग धारण कर यह मन्त्र कहे ॥४८। हे पुरुषोत्तम! श्री निवास परमानंद रूप गोप्ता करता अधिकर्त्ता मान्य नाथ भूत नाथ, आदि अव्यक्त रूप भगवन् प्रसन्न होवें हे भगवन! अपने गात्र प्रच्छादन

के लिये, मनोज्ञ पति रूप वस्त्र ग्रहण कीजिये। इस प्रकार वस्त्र पहिनावे जो कि मेरे गात्र के अनुसार हो पश्चात् पुष्प ग्रहण कर आसन कल्पित करे ॥४६ ५०॥ प्रणवादि से ग्रहण कर धर्म पुण्य से युक्त हो, यह परस्पर प्रीति कारक परायण प्राण रक्षण प्राणियों के लिये स्वीष्ट तदनुकल्प सत्य उपयुक्त है देव! यह आत्मा के लिये ग्रहण कीजिये। इस प्रकार नैवेद्यादि देकर शीघ्र मुख प्रक्षालन करे देवतादियों का यही परायण पवित्र कहा है। शुद्धि के लिये जल गृहण करता हुआ नैवेद्यादि करके इस प्रकार भोजन करवा, और शेष भोजन अलग रखकर पान सुपारी गृहण कर यह मन्त्र पढ़े ॥५१॥५२॥५३॥५४ ५५॥ मन्त्र– अलङ्कारम् सर्वतो देवानाम् द्रव्यानुक्तो सर्व सौगन्धिकाभी गृह्ण ताम्बूलम् लोकनाथ विशिष्टम् अस्माकम् च भवनम् तव प्रतिमा चह ॥५६॥ हे देव! आपकी प्रीति से यह मुख प्रसाधन रूप श्रेष्ठ ताम्बूल मैने रचा है उसको मुख में धारण कीजिये ॥५७॥ इस उपचार से मेरा भक्त कर्म करो वह अनमुक्त हो नित्यशः मेरे लोकों को देखता है ॥५८॥ इति श्री वाराह पुराणे भगवच्छास्त्रे देवोपचार विधिर्नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम अष्टादशाधिक शततमोऽध्याय ॥११८॥

अथ एक सौ उन्नीसवाँध्याय

दोहा— इक सौ उन्नीस में कहूँ, भोजन नियम विधान।
धरणी पूछन से कहे, हरि भोजन परधान॥

अथः भोज्य नियम विधि— पृथ्वी ने कहा– इस प्रकार सर्व संसार मोक्षण कर्म सुनकर धरणी प्रसन्न वदन भगवान से पूछने लगी ॥१॥ हे भगवन्! इस प्रकार आपके मार्गानुसार महोजस कर्म कथा प्रापण विधि आपकी प्रीति से मैंने आपसे सुनी है हे माधव! किन किन द्रव्यों के मिलाने से प्रापण यानी भोजन किया जाता है वह कहिये पृथ्वी के वचन सुनकर वाक्य

कोविद धर्मज्ञ वाराह जी प्रसन्न चित्त से धर्म संयुक्त वचन बोलने लगे। श्री वाराह जी ने कहा– जिस मन्त्र से मेरा प्रापणक किया जाता है, वह सुनिये। जिन जिन द्रव्यों में प्रापणक किया जाता है वह सुनिये। दूध के साथ सात धान्यों को ग्रहण करे तथा मधूक उदम्बर का प्रधान शाक बनावे ये तथा और भी हजारों प्रापणक द्रव्य हैं। जो कि कर्मन्य मैंने कहे हैं ।३॥४। ॥५॥६॥ हे सुन्दरि ! अब धान्यों में भी जो प्रापणक के उपयोग्य हैं उनको एकाग्र चित्त से सुनिये, धर्म ि िल्लक शाक सुगन्ध रक्त शालिक दीर्घ शालि, महा शालि वर, कुम्कुम, मात्रिक, आमोद, शिव सुन्दर्य, शिरीक कुल शालिक तथा विविध यावकान्न इस कर्म में जानने चाहिये। मुद्ग माष तिल कङ्गु कुलिथ गवेधुक महामोह मुकुष्ट अहिजा श्यामाक आदि कर्मन्य कहे हैं। यह शाक कहे हैं ॥७॥८॥९॥१०॥११॥ इनको मैं ग्रहण करता हूं। और जो भक्त को प्रिय हैं वे मार्ग, मांस, श्रेष्ठ छागमांस, शस-मांस भी मुझे अच्छा लगता है इनको प्रापण में मुझे देवे, ये मुझे प्रिय हैं वेद पारग ब्राह्मण के विस्तृत यज्ञ में प्रापण रूप किया छागलादि पशुओं के मांश में भी मेरा भाग है मेरे लिये माहिष मांस न देवे, दूध दधी घृत आदि वर्जित करे वैष्णव के होने पर युजुर्वेद से मांस वर्जित करे वह वैष्णव पायसादि भोजन करे। उसको मांस वर्जित करना चाहिये ॥१२॥१३॥१४।१५॥ हे वसुन्धरे अब पक्षियों में जो प्रयोज्य हैं उनको कहता हूं सुनिये जो कि नियमशः मेरे क्षेत्रों में उपयुक्त होते हैं लावक, वार्तिक कपिञ्जल आदि पक्षी विशेष तथा अन्य सैकड़ों हजारों मेरे कर्म में योग्य हैं। जो कि मैंने कहे हैं जो कर्म कर्ता इस प्रकार सर्व कर्म जाने वह अपराध को प्राप्त नहीं होता जो मैंने कहे हैं वह मांगल्य हैं। भोज्य तथा भक्त सुखा वह हैं अतः जो परम सिद्धि को चाहे वह इस प्रकार यजन करे हे वसुन्धरे ! जो इस

विधि से यजन करते हैं वे मेरे कर्म करने वाले परम सिद्धि को प्राप्त होते हैं ॥१६॥१७॥१८॥१६॥२०॥ इति श्री वाराह पुराणे भगवच्छास्त्रे प्रापण द्रव्य कर्त्तव्य भोज्य नियम विधिर्नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम ऊन विंशत्यधिक शततमो अध्याय ॥११६॥

अथ: एक सौ बीस अध्याय

दोहा— त्रिसंध्योपस्थान कहें, वराह हरि भगवान् ।
पात मुक्त हरि लोक को, जावे किये विधान ॥

अथ: त्रिसंध्यामन्त्रो पस्थानम्— श्री वाराह जी ने कहा— हे पृथ्वी जो तूने पहिले संसार से तरने का गुप्त उपाय पूछा है, वह सब कहता हूँ ॥१॥ जो मेरे कर्म परायण कदलाशा जितेन्द्रिय, यथा न्याय स्नान करके भक्ति पूर्वक मेरा भजन करते हैं और जो मेरा यह सनातन रूप कहा जाता है उसका ध्यान करते हैं। हे भद्रे ! सब प्राणियों में सनातन मैं ही हूँ नीचे ऊपर तिरछा में ही स्थित हूँ तथा दिशा विदिशाओं में मैं ही स्थित हूँ यदि परम सिद्धि की चाहना हो तो क्रिया समूह युक्त मेरा भक्त सर्वदा उनकी वन्दना करते रहे ॥२॥३॥४॥५॥ अन्य गुप्त महत्व यश कहता हूँ, जिस प्रकार कि मेरे मार्गानुसारियों की वन्दना करनी चाहिये, प्रधान कर्म करके तद्विद्ध बुद्धि ग्रहण कर पूर्व मुख हो, जल की अंजली ग्रहण करे "ॐ नमोनारायणाय" कह कर यह मन्त्र पढ़े। ६ ७॥८॥ संसार मोक्ष के लिये धर्म परायणोद्भव नारायणाय सर्व लोक प्रधान ईशान आद्य पुराण पुरुष कृपा करने वाले को नमस्कार करता हूं। फिर पश्चिम मुख करके जल की अंजली ग्रहण करे, द्वादशाक्षर मन्त्र उचारण कर यह मन्त्र कहे ॥६॥१०॥ जिस प्रकार कि देव प्रथम आदि कर्ता है पुराण कल्प है विभूति स्वरूप है उस प्रकार स्थित आदि अनन्त रूप अमोघ संकल्प अनन्त की स्तुति करता हूं ॥११॥ फिर उसी

प्रकार जल की अंजली ग्रहण कर उत्तर मुख हो, नमोनारायणाय कहकर यह मन्त्र पढ़े ।।१२।। दिव्य परम पुराण अनादि मध्यान्त अनंत रूप भवोद्भव विश्वकर प्रशान्त संसार मोक्ष वह अद्वितीय भगवान की स्तुति करता हूं । १३।। फिर उसी प्रकार दक्षिण मुख हो "नमः पुरुषोतमाय" कह यह मंत्र पढ़े ॥१४॥ यज्ञ पुरुष अहोरूप, सत्य रूप, ऋतु रूप, कालादि अरूप, आद्य अनन्य रूप महानुभाव संसार मोक्ष के लिये जिसने अवतार धारण किया है ऐसे भगवान् की स्तुति करता हूं ।।१५।। पुनः काष्ट के तुल्य हो इन्द्रिय निग्रह कर तथा अच्युत भगवान में मन लगा कर यह मंत्र पढ़े ।।१६ सोमरस पान करने वाले, सूर्य चन्द्र नेत्र वाले, कमल समान नेत्र वाले, जगत् प्रधान, लोकनाथ, मृत्यु त्रिसंसार विमोक्षण रूप, आपकी स्तुति करता हूं ।।१७।। परम गति चाहने वाला पुरुष बुद्धि से, युक्ति से, मति से, इसी विधि पूर्वक तीनों संध्याओं में उपस्थान करे ।।१८।। यह उपस्थान गुप्त से गुप्त है। योगों का परम खजाना है सांख्य में परम सांख्य है तथा कर्मों में उत्तम कर्म है ।।१९। यह उपस्थान मूर्ख, पिशुन, शठ आदियों को न सुनावे केवल दीक्षित दृढ़ परम शिष्य को देना चाहिये ।।२०।। यह विष्णु का कहा गुप्त उपस्थान मरण समय भी बुद्धि से धारण करना चाहिये भूलना नहीं चाहिये ।।२१।। जो इस उपस्थान को नित्य पढ़ता है उसके हृदय में सर्वदा निवास करता हूँ जो इस विधान से तीनों संध्याओं में कर्म करे वह तिर्यक योनियों में गया हुआ भी मेरे लोक को प्राप्त करता है ।।२२।। ।।२३।। इति श्री वाराह पुराणे त्रिसंध्योपस्थान मन्त्र कर्णम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम विंशत्यधिक शततमो- अध्याय ।।१२०।।

अथ: एक सौ इकीस अध्याय

दोहा— इक सौ इकीस में कहा, जस हो जन्म अभाव ।
कोटि जन्मन पाप मिटे, होत हरि सदृश राव ।।

अथः जन्माभावः— श्री वाराह जी ने कहा-वसुन्धरे ! जिन कर्मों के करने से पुरुष गर्भ में नहीं जाता है कहता हूं तुम सुनिये ॥१॥ विपुल कर्म करके भी जो अप प्रशंसा नही करता है और शुद्ध अन्तरात्मा से बहुत कर्म करता मदीय कर्म कर समर्थ हो अनुग्रह में रत होकर कार्य अक को जाने तथा सर्व धर्मों में निष्ठा वाला होवे ॥२॥३॥ शी ऊष्ण वात वर्षादि तथा भूख प्यास सहन करने वाला हो निरालस्य होवे सत्य वक्ता होवे किसी की निन्दा न करे नि स्वदार रत होवे परायी स्त्री पर दृष्टि न लगावे सत्यवादी हो विशुद्धात्मा होवे नित्य भगवत् प्रिय होवे बाँट कर खाने वाल होवे विशेषज्ञ ब्राह्मण वत्सल, प्रिय भाषी देव ब्राह्मणों का सत्का करने वाला होवे तो वह पुरुष कुत्सित योनि में न पैदा होकर मे लोक को प्राप्त करता है। हे वसुन्धरे ! तुझे और भी सुनात हूं तू सुन ॥४॥५॥६॥७॥ जो कि वियोनियों में न जावें वला सुनिये। जीव हिंसा न करे सर्व प्राणियों पर दया करे पवित्र र सर्वत्र समानता से देखे लोष्ठ काञ्चन सब समान देखे वाल्य अवस्थ में स्थित रहने पर भी शान्त रहे दान्त रहे शुभ कर्म रत रहे कभी भी दूसरे का अपकार न करे कृतज्ञ होवे भगवत् कर्म परायण होवे सत्य भाषी होवे झूठ से अलग रहे नित्य वृतिमान होवे परोक्ष में भी किसी की निन्दा न करे ॥८॥९॥१०॥११॥ ऋतु काल में अपत्यार्थ अपनी स्त्री से गमन करे हे भद्रे ! इस प्रकार मम कर्म परायण पुरुष वियोनियों में नहीं जाते हैं मेरे लोक को जाते हैं। हे वसुन्धरे ! फिर और भी कहता हूं उ हें सुनिये ॥१२॥१३॥ प्रसन्न पुरुषों का जो सनातन धर्म है उसे कहता हूं। मनु ने भी अन्यथा धर्म देखा है अङ्गिरस ने भी अन्यथा धर्म देखा है शुक्र ने, गौतम ने, सोम ने रुद्र ने शंख ने लिखित ने कश्य ने तथा धर्म ने भी अन्यथा देखा है। अग्नि ने वायु ने धर्म ने

इन्द्र ने वरुण ने कुबेर ने शाण्डिल्य ने पुलस्त्य ने तथा आदित्य ने पितरों ने तथा स्वयम्भु ने भी अन्यथा देखा है जो निश्चिन व्रत पुरुष धर्म पूर्वक आत्मा से आत्मा में परमात्मा को देखते हैं स्वमत ही से कहे हुये स्वकीय धर्म पालन करते हैं तथा सब धर्मों में निश्चित रूप हो परापवाद नहीं करते हैं तथा आत्म धर्म मार्ग में स्थित हो धर्म कार्यों की निन्दा न करे इन गुणों से युक्त हो मनुष्य मदीय कर्म करे तो वह वियोनियों में नहीं जाता है। अपितु मेरे लोक को प्राप्त करता है ॥१४॥१५॥१६॥१७॥१८॥ ॥१९॥२०॥२१। हे माधवि ! फिर और भी कहता हूं जिससे मनुष्य संसार सागर से तर जाते हैं इन्द्रियों को जीतने वाले क्रोध, लोभ, मोह जीतने वाले, आत्मा का उपकार करने वाले देवता अतिथि और गुरुओं की भक्ति करने वाले मधु मांसादि छोड़कर हिंसा न करने वाले तथा मन से भी ब्राह्मण के साथ गमन करने वाले ब्राह्मण को कपिला दान देने वाले, शान्ति पूर्वक वृद्धों की सेवा करने वाले, सब पुत्रों में समान दृष्टि वाले क्रोधित ब्राह्मण को शांत करने वाले जो भक्ति पूर्वक कपिला का स्पर्श करे जो कुमारी को दूषित न करे पैर से अग्नि को न लांघे, पुत्र के साथ भाषण न करे जल में पुरीषोत्सर्ग न करे, गुरु का भक्त होवे, बहुत न बोले, इस प्रकार धर्म युक्त हो जो मेरी भक्ति करता है वह गर्भ में नहीं जाता मेरे लोक को ही प्राप्त होते हैं ॥२२॥२३॥२४॥२५॥२६॥२७।२८॥२९॥ इति श्री वाराह पुराणे जन्मा भावो नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् एक विंशत्यधिक शततमोऽध्याय ॥१२१॥

अथ: एक सौ बाईस अध्याय

दोहा:— कोका मुख माहात्म्य अब, कहा सकल समुझाय।
वियोनि गत जीव भी सब, दिव्य रूप हो जाय॥

अथ: कोकामुख माहात्म्यम्— श्री वाराह जी ने कहा–

हे वसुन्धरे ! अब गुप्त से गुप्त रहस्य सुनिये । जिसके माहात्म्य से तिर्यश्योनि गत जीव भी पाप से छूट जाते हैं ॥१॥ जो अभीष्ट चतुर्दशी दिन मैथुन नहीं करता तथा पराया अन्न खाकर निन्दा नहीं करता है जो बाल्यावस्था में भी मेरी भक्ति करता है जो येन केन प्रकार सन्तुष्ट रहे जो माता पिता की पूजा करता रहे, जो पश्रिम से नहीं जीवता है, जो प्रतिभागी है, गुणान्वित है, दाता है, भोक्ता है, कार्यों में स्वतन्त्र है, नित्य संगत है कौमार व्रत में स्थित होकर जो विकर्म नहीं करता है, जो सर्व भूतों में दया करता है जो सतोगुणी है जो मति से अत्यंत निस्पृह है जो प्रार्थ में स्पृहा नहीं करता है ऐसे पुरुष मेरे लोक को जाते हैं । हे वरारोहे! यह गुप्त रहस्य देवताओं को भी दुर्लभ है ॥२॥३॥४॥५॥६॥ हे अनघे ! मेरे से कहे रहस्य को सुनिये । जो जरायुज अण्डज स्वेदज उद्भिजादि प्राणियों को दया युक्त होकर नहीं मारते हैं और जो कोकामुख क्षेत्र में प्राणों को छोड़ता है जो मन से चलायमान नहीं होता है और मेरे वल्लभता को प्राप्त होता है वह विष्णु लोक को प्राप्त करता है । इस प्रकार विष्णु वचन सुन पृथ्वी वाराह रूपी भगवान से पूछने लगी ॥७॥८॥९॥१०॥ पृथ्वी ने कहा– हे माधव ! मैं शिष्या हूं दासी हूं तथा आपकी भक्ति परायण हूं इस प्रकार का परम गुप्त स्थान प्रेम पूर्वक कहिये चक्र तीर्थ वाराणसी अट्टहास नैमिष तथा भद्र कर्ण ह्रद को छोड़कर कोकामुख की प्रशंसा करते हो नगर हिरण्ड मुकुट मण्डलेश्वर केदार आदि को छोड़ किस प्रकार कोकामुख की प्रशंसा करते हो, दे। रू वन को छोड़ तथा जालमेश्वर दुर्ग महाबल को छोड़ किस प्रकार कोका की प्रशंसा कर रहे हो गोकर्ण शुद्ध जालमेश्वर तथा एक लिंग को छोड़कर किस लिये कोका की प्रशंसा करते हो पृथ्वी के इस प्रकार भक्ति पूर्वक पूछने पर वाराह रूपी भगवान पृथ्वी से कहने लगे– हे पृथ्वी ! जो

तू पूछ रही है वह कहता हूँ ॥११॥१२॥१३॥१४॥१५॥१६॥ ॥१७॥ वह गुप्त रहस्य कहता हूँ जिससे कि कोका माहात्म्य बढ़कर है जो रुद्राश्रित चेत्र तूने कहे हैं वे पाशुपत चेत्र हैं और कोका चेत्र भगवत् सम्बन्धी है। इस विषय पर एक आख्यान सुनाता हूं ॥१८॥१६॥ हे सुन्दरि! कृतयुग में कोका-मुख नाम वाले मेरे चेत्र में कोई मांसाहारी लुब्धक घूमरहा था उस कोका मुख चेत्र में अल्प जल वाले तालाब में एक मत्स्य रहता था, उस मत्स्य को देख उस लुब्धक ने वल्शी से वह मत्स्य गृहण किया, पर बलवान होने के कारण वह मत्स्य लुब्धक के हाथ से शीघ्र गिर पड़ा, तदनन्तर आकाश चारी श्येन अर्थात् बाज पत्ती ने उस मत्स्य को प्राप्त करने की इच्छा से उसके ऊपर झपट और उसको पाकर शीघ्र उड़ चला वह उड़ा ले जाने के परिश्रम से वह पत्ती थक गया और वह मत्स्य उसके मुँह से छूटकर कोका-मुख चेत्र में गिर पड़ा, अब मत्स्य को कोकामुख में गिरने पर उस चेत्र के माहात्म्य से वह मत्स्य दूसरे जन्म में रूपवान गुणवान् कुल तथा अवस्था से युक्त राज पुत्र हुआ ॥२०।२१॥ ।२२॥२३॥ कुछ समय पश्चात् उसी मृग व्याध की स्त्री उसी चेत्र से होकर मांस ले जारही थी एक चिल्ली नाम की पत्ती उसके हाथ से मांस नोचने की इच्छा से शीघ्र झपट कर मांस हरने को तैयार हुई तभी व्याध की स्त्री ने उस मांस हरने वाली चिल्लिका को एक ही बाण से मार गिराया। और वह शीघ्र जमीन पर गिर पड़ी। हे पृथ्वी! वह चिल्ली आकाश से कोकाचेत्र में गिरी और वह भी कोकाचेत्र के प्रभाव से चन्द्रपुरी में राजपुत्री हुई है तथा दिनोदिन बढ़ने लगी वय रूप तथा गुणों से युक्त हो चौंसठ कला वाली वह कन्या पुरुष को शर्मिन्दा करती थी ॥२४॥ ॥२५॥२६॥२७॥२८॥ वह कहती थी कि रूप गुण वाला शूर योद्धा तथा सौम्य पुरुष कोई है ही नहीं रूपवान् गुणवान शूर योद्धा सभी सौम्य पुरुषों की निन्दा करती थी तदनन्तर कुछ

समय पश्चात् युवावस्था आने पर उस राज पुत्री रूप चिल्ली तथा शकु नामवाले राजपुत्र रूप मत्स्यका पुरोहितसे कही विधि अनुसार यथा न्याय प्रारब्धानुसार विवाह हुआ ॥२९॥३० ३१।३२॥उन दोनों का आपस में घनिष्ट प्रेम हुआ, दोनों ही एक दूसरे के प्रेम में जकड़ कर रमण करते रहे, और मुहूर्त मात्र भी अलग नहीं होते थे। इस प्रकार बहुत समय व्यतीत होने पर वह अनिन्दित राजपुत्री नम्र भाव से तथा सुहृदता से प्रेम सम्मान पूर्वक उस राज पुत्र की सेवा करती रही, एवम् प्रकार कामभोग में लवलीनों को रमण करते हुये बहुत समय व्यतीत हुआ, तदनन्तर शकवंश में पैदा हुये उस राज पुत्र के सिर में मध्याह्न समय अत्यन्त पीड़ा हुई जो कोई वैद्य रोग हटाने में चतुर थे उन्होंने नाना प्रकार की औषधियों का उपयोग किया, परन्तु वह सिर पीड़ा शांत नहीं हुई । इस प्रकार बहुत समय व्यतीत हुआ परंतु विष्णु की माया से मोहित होकर उसको अपनी आत्मा की सुध बुध भी न रही ॥३३॥३४॥३५॥३६॥३७॥३८॥ पूर्ण समय में वह उन दोनों का अंतर उस सम्मृन का काल पूर्व प्रति स्तव था, अयन व्यतीत होने पर पृथ्वी बृहत कौतूहल हुआ, परस्पर प्रीति युक्त हो, वे दोनों बिछोह को नहीं प्राप्त हुये, तदन्तर वह श्रेष्ठ अंग वाली अपने पति से इस प्रकार पूछने लगी कि हे स्वामिन् ! किस कारण आपके सिर में पीड़ा है, यह तत्व से कहिये, यदि मैं आपकी प्रिया हूं तो, अवश्य कहिये, अनेक शास्त्रों के जानने वाले वैद्यों ने भी आपकी चिकित्साह करली है, परंतु सिर की वेदना नहीं जाती है, प्रिया के इस कहने पर वह राजपुत्र अपनी प्यारी से इस प्रकार कहने लगा ॥३९॥४०॥४१॥४२॥४३॥ हे भद्रे ! सर्व व्याधि युक्त यह क्या भूल गयी है, जो कि सुख दुख वाला यह मानुष शरीर प्राप्त किया है, संसार सागरारूढ़ को इस समय तू पूछने के योग्य नहीं सुनने की इच्छा वाली अपने भर्ता के इस प्रकार कहने पर बहुत समय पश्चात् कभी दोनों

दम्पति शयन पर सोये थे, उस प्रिया ने पुनः अपने भर्ता से यह पूछा कि हे स्वामिन् ! उस बात को कहिये जो कि मैंने पहिले पूछी थी, क्या आप मुझसे नहीं कहते हो ? हे नाथ ! आपका साभिप्राय: वचन है। अथवा क्या गुप्त रहस्य है, मेरे से क्यों छिपाते हो मैं तो आपकी प्यारी हूँ, अतः मुझसे कहिये, इस प्रकार प्रिया के निर्बन्ध पूर्वक पूछने पर, वह शकाधि पति नृप पुत्र सम्मान पुरःसर प्रेम पूर्वक अपनी वल्लभा से कहने लगा ॥४४ ४५॥४६॥४७॥४८॥४६॥ मानुष भाव छोड़िये, उस पहिली जाति को स्मरण कीजिये हे भद्रे ! पूर्वजन्म के सुनने में बड़ा कौतूहल है, हे सुचिस्मिते ! मेरे माता पिता के पास जाकर उनको प्रसन्न कीजिये जिन्होंने मुझे गर्भ से धारण किया है, और हम उनकी आज्ञा लेकर कोकामुख क्षेत्र में चलेंगे और वहां अवश्य ही पूर्व जन्म वृत्तान्त कहूँगा अपना पूर्व जन्म वृतान्त तो देवताओं को भी दुर्लभ है, हे अनिन्दिते ! वहाँ जाकर मैं सब कुछ कहूँगा ॥५० ५१॥५२।५३॥ तदन्तर वह श्रेष्ठ अंगवाली सास ससुर के सामने जाकर उनके चरण पकड़ यह कहने लगी कि, मैं कुछ कहना चाहती हूं आप सावधान होकर सुनिये आपकी आज्ञा लेकर आप से सम्मानित होकर हम कोकामुख में जाना चाहते हैं। आप हमारे गुरु हैं, वहां जाना आवश्यक कार्य है अतः आप हमें वहां जाने से न रोकिये आजतक पहिले कभी भी मैंने आपके सामने कुछ याचना नहीं की है अतः आप मेरी याचना पूर्ण कीजिये यह आपका पुत्र नित्य सिर वेदना से दुखी रहता है और विना चिकत्सा के मध्याह्न समय को मृत प्राय: हो जाता है सुखादि सर्व विषयों को छोड़ कर बहुत दुखी है कोकामुख गये विना कष्ट दूर नहींहो सकता है यह प्रधान रहस्य कभीआपके सामने पहिलेनहीं कहा है शीघ्र ही उस विष्णुभगवानके परम पदको जाना चाहती हूँ।।५४।.५५॥५६॥५७॥५८।।५६ ।६०।।दम्पतियोंका मनन सर्वथा ही रुचिकर होवे तदन्तर शकाधिपति पत्नु वधू के वचनसुनकर

स्वयम् हाथ से पुत्र को पकड़ कर पुत्र तथा वधु से कहने लगा हे वत्स ! कोका मुख जाने की क्यों ठानी है । हाथी, घोड़े, रथ, तथा विमान हैं । अप्सराओं के समान रूपवाली स्त्रियाँ हैं । कोष कोष्ठादि युक्त यह सब सप्ताङ्ग पूर्ण हैं । धन राज्य सब आप के ही निमित्त है । हे पुत्र ! मन्त्रियों से समन्वित हो जा राज्य सिंहासन ग्रहण कीजिये ॥६१॥६२॥६३॥६४ हे पुत्र सन्तान का प्रेम तो अलग है । परन्तु प्राण तेरे ही में स्थित हैं । हे यशस्विनि ! इस प्रकार पिता के वचन सुनकर वह पिता के चर्णों में गिर विनय पूर्वक कहने लगा राज्य से खजाने से, वाहनों से तथा सेना से मुझे कुछ प्रयोजन नहीं है । मैं तो शीघ्र कोकामुख जाना चाहता हूं । हे पिता ! यदि सिर पीड़ा से बच जाऊंगा तो राज्य बल कोषादि सब मेरा ही तो है और वहीं जाने से मेरी सिर पीड़ा दूर होगी । पुत्र के इस प्रकार कहने पर शकाधिपति ने आज्ञा दी कि पुत्र तेरे लिये नमस्कार है कोकामुख चले जाइये। वणिये नगर निवासी वैश्य तथा श्रेष्ठ स्त्रियाँ भी कोकामुख जाते हुये राजपुत्र के साथ चलने लगे ॥६५॥६६॥६७॥६८॥६९॥७०॥ तदनन्तर बहुत समय में कोका मुख पहुँचे । वहाँ जाकर वह वरारोह अपने भर्ता से पूछने लगी कि जो मैंने आपसे पूछा था, और आपने कहा था कि, कोका मुख में जाकर कहूँगा, वह पूर्व जन्म वृतान्त कहिये ॥७१। ७२॥ हे वसुन्धरे ! इस प्रकार प्रिया के वचन सुनकर वह राज पुत्र कुछ हँसकर प्रिया का आलिंगन कर कहने लगा हे प्रिये ! इस समय रात्रि है सुख पूर्वक शयन कीजिये, कल कल प्रातः काल जो कुछ तेरी मनसा होगी सब कुछ कहूँगा प्रातः काल होने पर स्नान कर वस्त्रादि से विभूषित होकर सिर से विष्णु को नमस्कार कर प्रिया को हाथ से पकड़ कर पूर्व जन्म की शेष हड्डियाँ दिखाने लगा, हे प्रिये ! ये मेरी पूर्व जन्म की हड्डियां हैं । मैं पूर्व जन्म में मत्स्य था, कोकामुख के एक तालाब में विचरता

था कि एक व्याध ने बलूशी से मुझे ग्रहण किया, परन्तु भारी होने से मैं उसके हाथ से पृथ्वी पर गिर पड़ा ७३।७४।७५।। ७६।७७।।७८।।तदनन्तर शिकार के लोभी श्येन पक्षी ने मुझे आँखों से वेदन किया और आकाश में उड़ा लेगया, पुनःउससे भी मैं यहाँ पर गिर पड़ा हूँ अतः उसके प्रहार से ही मेरे सिर पीड़ा हुई है इस रहस्य को मैं ही जानता हूँ मेरे सिवाय और कोई नहीं जानता है। हे भद्रे ! जो तूने मुझसे पहिले पूछा है, वह कह दिया है सुन्दरि ! तेरा कल्याण हो, जहां तेरा मन हो वहां चली जा ॥७६ ।८०। ८१॥ तदन्तर वह श्रेष्ठ अङ्ग वाली लाल कमल के समान सुन्दर मुख वाली करुण करुण स्वर से अपने पति से कहने लगी हे भद्र ! इसीलिये मैंने अपना गुप्त रहस्य नहीं कहा है, मैं पूर्व जन्म में जिस प्रकार थी वह सुनिये, आकाश चारी चिल्ली रूप थी भूक प्यास से थक कर भक्ष्य को ढूँड़ती हुई एक वृक्ष पर बैठी थी ॥८२॥८३॥८४॥ कोई व्याध बहुत सारे जगंल के मृगों को मार मांस भार लेकर उसी मार्ग से आया, स्वयम् मांस भार को प्रियाके समीप रख कर भूख से पीड़ित हो अपने आप मांस पकाने के लिये इधर उधर काष्ट लाने चला गया, लकड़ी लाकर अग्नि प्रज्वलित करने लगा तभी शीघ्र उड़कर मैंने अपने वज्रमय नखों से एक मांस के टुकड़े का भेदन किया परन्तु मांस भार से पीड़ित हो दूर जाने में असमर्थ हो समीप ही में मांस पिण्ड को खाने लगी हूँ तदनन्तर मांस खाकर वह व्याध हृष्ट चित्त हो जिस मांस पिण्ड को मैं हरण कर लाई थी; उसको ढूंढ़ने लगा ढूँढते ढूँढते उसने समीप ही में मुझको मांस खाती हुई देखा तब उसने धनुष पर प्रत्यञ्चा चढ़ा कर वाण से मुझे मार गिराया, और मैं वाण से पीड़ित होकर निश्चेष्ट घूमती गत प्राण हुई हूँ ॥८५॥८६॥८७॥८८॥८९॥९०॥९१॥ हे भद्र ! तदनंतर अवश हो दुरासद काल तम्र में गिरी हूँ अकामा भी मैं इस क्षेत्र

के प्रभावसे राजपुत्री हुई हूँ, तथा आपकी प्रिया बनी हूँ उसपूर्व जन्म की शेष हड्डियां गली सड़ी समीप ही में पड़ी हैं उन्हें देखिये इस प्रकार अपने पूर्व जन्म की हड्डियां दिखाकर अपने पति से फिर कहने लगी ॥६२॥६३॥६४॥ हे भद्र! आपको कोकामुख क्षेत्र में ले आई हूँ, इस क्षेत्र के महात्म्य से तिर्यक योनियों में गये हुये भी मनुष्य योनि को प्राप्त हुये हैं हे यशोधन! आप जिन जिन विष्णु परोक्त धर्मों को कहोगे, मैं उन उन विष्णु लोक में सुख देने वाले धर्मों को करूंगी अपनी प्रिया के वचन सुनकर राज पुत्र ने पूर्व जन्म की स्मृति प्राप्त कर परम विस्मय को प्राप्त हुआ और साधु साधु कर अपनी प्रिया का हृ आदर किया उस क्षेत्र में करने योग्य जो धर्म युक्त कर्म थे, उनमें से कुछेक उस पतिव्रता नृपात्मजा ने स्वयम् किये, अन्य परिजन ने भी जिसको जो प्रिय लगे, विधि-निर्दिष्ट कर्म करने लगे। और उस दम्पती ने उस क्षेत्रमें रत्नादि दान दिये हे वसुन्धरे! जो उनके साथ आये थे, उन्होंने भी विष्णु की भक्ति से ब्राह्मणों को धन द्रव्य रत्नादि दान दिया हे वरारोहे! मेरे कर्म परायण मनुष्य वहां स्थित होकर कोकामुख क्षेत्र प्रभाव से श्वेत द्वीप को गये हैं, एवम् प्रकार वह राजपुत्र भी मेरे कर्म में स्थित रहा ॥६५॥॥६६॥६७॥६८ ६६॥१००॥ ॥१०१॥१०२॥१०३॥ मनुष्य योनि छोड़कर श्वेत द्वीप को गया है, और सभी पुरुष आत्मा को देखने पर शुक्ल वस्त्र पहिन दिव्य आभूषणों से विभूषित होकर सारे ही दीप्ति वाले महाशय रूप सौन्दर्य्य वाली तेज से दीप्ति वाली तथा शुद्ध सत्व से विभूषित हुई हैं और सत्य वर्चस्व वाले सब ही मेरे शुद्ध भाव को प्राप्त हुये हैं, हे देवि! यह श्रेष्ठ कोकामुख माहात्म्य कह दिया है जहां कि मत्स्य और चिल्ली मानुष भाव को प्राप्त हुये हैं जो सकाम आये थे उन्हों में किसी ने चान्द्रायण किसी ने जलाशन व्रत किये हैं ॥१०४॥१०५॥१०६॥१०७॥१०८॥ और सबही ने विष्णुमय धर्म किये हैं द्विजों को वे सब धर्म करने चाहिये

राजपुत्र के साथ गये हुये दम्पतियों ने मेरी भक्ति से अनेक कर्म किये हैं धन-धान्य तथा श्रेष्ठ रत्नादि दिये हैं वे भी इधर उधर घूमते हुये मेरे कर्म करते बहुत समय में भाव्य पञ्चत्व को प्राप्त हुये हैं तदन्तर कोकामुख चेत्र प्रभाव से मेरे कर्म प्रभाव से तथा मेरे प्रसाद से श्वे द्वीप प्राप्त किया है एवम् प्रकार सर्व गुणान्वित वह राजपुत्र मानुष भाव भोग कर उद्वेद शाख रूप स्थित हुआ जो उसका परिजन मम कर्म परायण था वह भी मानुष भाव छोड़ कर मेरे लोक को प्राप्त हुआ है और आत्मा से आत्मा को देखने पर कान्ति वाला हुआ है जो कोई उत्पन्न गन्धिनी अपने पतियों के साथ रहने वाली औरतें थीं वे सब मेरे प्रसाद से अपने पतियों सहित श्वेत द्वीप को प्राप्त हुई हैं यह धर्म है शक्ति है तथा महद्यश है ॥१०९॥११०॥१११॥११२॥॥११३॥ ११४॥११५॥११६॥ यह रहस्य कर्मों में परम कर्म है तपों में महत् तप हैं आख्यानों में प्रधान है कृतियों में परम कृति है धर्मों में परम धर्म है यह मैंने तुझे सुना लिया है यह रहस्य क्रोधी मूर्ख पिशुन अभक्त अश्रद्धालु तथा शठ को नहीं सुनाना चाहिये इसको जो मरण समय भी सावधानता से धारण करे वह पवित्रात्मा गर्भ से योनि से उत्पत्ति से तथा भय से छूट जाता है। हे भद्रे ! यह महाख्यान तुझे सुना दिया है जो इस विधान से कोकामुख चेत्र में जाते हैं वे भी मुक्त हो जाते हैं जिस प्रकार कि पहिले चिल्ली और मत्स्य मुक्त हुये हैं ॥११७॥ ११८॥११९॥१२०॥१२१॥१२२॥ इति श्री वाराह पुराणे कोका मुख माहात्मे काशीरामशर्मा कृत भाषा-टीका याम

॥ अथः एक सौ तेईसवांऽध्याय ॥

दोहा—श्री वराह जी कहें अब धरणी सों समुझाय ।
पत्र पूष्प अर्पण करो, द्वादशी दिवस गाय ॥

अथः सुमनोगन्धादि माहात्म्यम्—सूत ने कहा धार्मिक कोका मुख माहात्म्यसुनकर पृथ्वी विस्मय को प्राप्त हुई ।१। जोकोकामुख चेत्र है

उसका बड़ा ही प्रभाव है जिसके प्रभाव से तिर्यक योनियों में गये हुये भी परम गति को प्राप्त हुये हैं ॥२॥ हे देव ! आपकी प्रसन्नता से मैं कुछ जानना चाहती हूँ । जो कि पहिले मैंने आपसे पूछा था कि मनुष्य किस धर्म से, तपस्या से अथवा कर्म से, आपको देखते हैं, प्रसन्नता युक्त हो समग्र कहिये ॥३॥४॥ पृथ्वी के इस प्रकार पूछने पर भगवान कुछ हँस कर फिर कहने लगे॥५॥ श्री वराह जी ने कहा हे भीरु ! हे महाभागे ! जिस प्रकार तू पूछती है, वह संसार से मुक्त करने वाला गुप्त धर्म तुझे सुनाता हूं ॥६॥ वर्षा ऋतु के चले जाने पर प्रसन्न शरद ऋतु के आने पर आकाश तथा चन्द्रमा के निर्मल हो जाने पर न अति शीत न अति ऊष्ण हंसों को प्रकट करने वाले कुमुद उत्पन्न कल्हार पद्म आदि कमल जाति के फूलों की सुगन्धि से सुगन्धित समय में कार्तिक महीने की जो शुक्ल द्वादशी होती है, उस दिन जो मेरा पूजन करे उसका फल सुनिये, जब तक ये लोक हैं, जब तक सूर्य-चन्द्र हैं, तब तक हे वसुन्धरे ! द्वादशी दिन पूजन करने वाला मनुष्य मेरा भक्त रहता है, अन्य भक्त नहीं होता है ।७॥८॥९॥१०॥ हे माधवि ! उस कार्तिक शुक्ल द्वादशी के दिन मेरा पूजन कर मेरी आराधना के लिये यह मन्त्र उच्चारण करे ॥११॥ मन्त्रः—जो आप ब्रह्मा से रुद्र से स्तूयमान हो ऋषियों से आपकी वन्दना की गयी है, तथा वदना करने योग्य हो यह कार्तिक शुक्ल द्वादशी आपहुँची है, आप उठिये नींद को दूर कीजिये, मेघ चले गये हैं, पूर्ण चन्द्र है, हे लोक नाथ ! आपकी प्रीति के लिये धर्म हेतु शरद ऋतु के फूल आपको समर्पण करता हूँ, हे लोकनाथ ! प्रबुद्ध तथा जाग्रत अवस्था वाले आपका भजन करते हैं, याज्ञिक यजन से यज्ञ करते हैं, मन्त्र से सत्री लोग, वेदों से पढ़ते हैं, हे लोकनाथ! ऐश्वर्य शाली शुद्ध प्रबुद्ध तथा जाग्रत जनसमूह आपका भजन कर रहे हैं, आप उठिये ॥१२॥ हे वसुन्धरे ! जो इस प्रकार धर्म

करते हैं और द्वादशी दिन मेरा व्रत ग्रहण करते हैं, वे परम गति
को प्राप्त होते हैं ॥१३॥ हे देवि ! संसार से छुटकारा पाने के
लिये, तथा अपने भक्त को सुख देने के लिये यह शरद ऋतु का
समग्र कर्म मैंने कह दिया है ॥१४॥ इति प्रबोधिनी कर्म ॥
अन्य शिशर ऋतु का शुभ कर्म सुनाता हूँ जिसको करने से
मनुष्य परम गति को प्राप्त होते हैं ॥१५॥ शीत तथा वायु से
दुःखी हुये मेरी अनन्य भक्ति में स्थित हो एकाग्र चित हो योग
के लिये निश्चय करके शिशर ऋतु में जो करने योग्य कर्म हैं,
उन्हें उसी ऋतु में फूली हुई वनस्पतियों के फूलों से मेरा पूजन
करके घुटने पृथ्वी पर टेक कर हाथों से अञ्जली बांध यह मन्त्र
कहे ।१६॥१७॥१८॥ मन्त्रः—हे धातः ! आप शिशर रूप हैं हे
लोक नाथ, इस दुष्प्रवेश, दुस्तर हिमकाल को धारण करने वाले
हो हे त्रिलोकी नाथ आप मुझे संसार से पार कीजिये ॥१६॥
जो भक्ति में तत्पर होकर इस मन्त्र से शिशर ऋतु में कर्म करे
या करवावे वह परम सिद्ध को प्राप्त होता है ॥२०॥ हे वसुन्धरे !
तुझे और भी सुनाता हूं तू सुन मार्गशिर तथा वैसाख महीना
मुझे प्रिय है उनमें पुष्पादि चढ़ाने से जो फल होता है वह कहता
हूँ नौ हजार नौ सौ वर्ष तक विष्णु लोक में निवास करता है
जो कि इन महीनों की द्वादशी तिथि में फूल तथा गन्ध पत्र मेरे
ऊपर समर्पण करता है कर्म अल्प है और फल बहुत है ।२१॥
२२।२३॥ मतिमान यथा धृति मान होकर गन्ध-पुष्पादि देवे
और गन्ध पत्र का जो फल है उसे कहता हूँ ॥२४॥ तीन महीनों
की द्वादशी दिन सावधान होकर कार्तिक मार्गशिर वैसाख में जो
एकाग्र चित से खिली हुई वन माला तथा गन्ध पुष्पों को मेरे
अर्पण करता है उसने मानो बारह वर्ष तक पूजा करली है
वैसाख में शालपुष्प से कार्तिक में गन्धक पुष्प से तथा मार्गशिर
में उत्पन्न मिश्रित पुष्पों से मेरी पूजा करे या फलों को मेरे ऊपर
चढ़ावे हे भद्रे ! इस प्रकार गन्ध पत्र समर्पण करने से बहुत फल

कहा है ॥२५॥२६॥२७॥२८॥ नम्रता पूर्वक इस प्रकार भगवान् के वचन सुनकर वसुन्धरा कुछ हंस कर नम्रता पूर्वक कहने लगी हे प्रभो ! बारह महीने हैं और तीन सौ साठ दिन हैं उनमें से आप दोनों ही की प्रशंसा मुझे सुनाते हो तथा हे देवेश ! आप सदा द्वादशी की प्रशंसा करते हो पृथ्वी के इस प्रकार पूछने पर भगवान् हंस कर पृथ्वी को धर्मयुक्त वचन कहने लगे । ॥२६॥३० ३१॥३२॥ तिथियों में द्वादशी तिथि सर्व यज्ञों के फल से अधिक फल वाली है मनुष्य तेरे द्वारा हजारों ब्राह्मणों से जो फल प्राप्त करता है वह द्वादशी दिन सेवन से मिलता है कार्तिक द्वादशी में मैं जाग्रत होता हूँ और वैसाख द्वादशी में समुदभृ होता हूँ हे पृथ्वि ! यह अनेक आधि व्याधि को हरने वाला योग है इसलिये कार्तिक तथा वैसाख द्वादशी के दिन सावधानता से गन्ध पत्र ग्रहण कर यह मन्त्र कहे मन्त्रः—भगवन् आज्ञा पय इमं वहुतरं नित्यम् वैशाखम चैवकार्तिकम् ॥३३॥३४॥३५॥३६॥ गन्ध ओम् नमोनारायणाय कह कर गन्ध पत्र समर्पण करे, फूलों का जो गुण जो फल है वह कहता हूँ गन्ध पत्र देकर पवित्र होकर फूल हाथ में धरण करे, ओम् नमो वासुदेवाय कहकर मन्त्र पढ़े, मन्त्रः—हे भगवान् ! आज्ञा दीजिये आपकी पूजा के लिये यह फूल हैं मुझे सुमनस कीजिये हे देव ! सुगंध से सुमनष्क ग्रहण कीजिये आपके लिये नमस्कार है जो इस प्रकार से भगवा न्को फूल चढ़ाता है वह जन्म मरण भूख तथा ग्लानि को नहीं प्राप्त करता है और दिव्य सहस्र वर्षों तक विष्णु लोक में निवास करता है एकेक पुष्प दान का वह महत् फल है, गंध युक्त फूल का यह फल है जो तूने पहिले पूछा था, ३७॥३८॥३६॥४०॥४१ ४२। इति श्री वराह पुराणे सुमन गन्धादि माहात्म्यम् ।

॥ अथः एक सौ चौबीस अध्याय ॥

दोहा—इक सौ चौबीस में अब, ऋतु पस्कर विधान।
सर्व पाप मुक्त होकर करे स्वर्ग प्रयान ॥

अथः ऋतु परक्रम्–श्री वराह जी ने कहा-फाल्गुन महीने की शुक्ल द्वादशी दिन श्वेत पाण्डुरक सुगन्धित सुन्दर वासनिक फूलों को ग्रहण करके प्रसन्नात्मा से विधि मन्त्र से विधि पूर्वक वह विधि निर्दिष्ट कर्म से शान्त तथा निर्मल चित्त से ओम् नमोनारायणाय कह कर इस मन्त्र को पढ़े मन्त्रः–हे देव देवेश! हे शंख-चक्र-गदाधर ! आपके लिये नमस्कार हो, हे लोकनाथ ! आपके लिये नमस्कार हो, हे प्रवीर ! आपके लिये नमस्कार हो, वसन्त समय में फूली हुई वनस्पति के गंध रस से प्रयुक्त हुये, वसन्त काल के आने पर पुष्पित पादपेन्द्र तथा मेरा दर्शन करते हुये मेरी स्तुति करें ।।१।।२।।३।।४।।५।।६।। जो इस विधान से फाल्गुन मास में कर्म करे वह संसार को प्राप्त न होकर लोक को जाता है ।।७।। हे वसुन्धरे ! जो उत्तम वैसाख महीने की शुक्ल द्वादशी दिन कर्म करता है उसका फल सुनिये जो कि आपने पूछा है शाल वृक्षों के फूल जाने पर तथा अन्य वृक्षों के फूलने पर मेरे कर्म में स्थित हो शाल के फूलों को ग्रहण कर मेरे शुभ कर्मों को करे तथा आगे से सब भागवतों को स्थापित करे । ८।।९।।१०।। हे माधवि ! ऋषि वेदोक्त मंत्र से स्तुति करते हैं, देव लोक वासी गंधर्व अप्सरा गीत वादित्र तथा नृत्यादियों से पुराण पुरुषोत्तम की स्तुति करते हैं, सिद्ध विद्याधर यक्ष, पिशाच, उरग, राक्षस आदि सर्व लोकेश्वर भगवान् की स्तुति करते हैं, द्वादश आदित्य अष्टवसु, एकादस रुद्र, अश्विनीकुमार तथा मरुदगण युगों के सत्त्वय में अक्षय भगवान की स्तुति करते हैं, तदनन्तर वायु, विश्वेदेवा अश्विनीकुमार आदि कालमय केशव भगवान् की स्तुति करते हैं तदनंतर अग्नियुक्त ब्रह्मा, सोम, शुक्र आदि सर्व लोक महेश्वर भूतनाथ की स्तुति करते हैं ।।११।।१२।।१३।।१४।।१५।। नारद, पर्वत, अशित, देवल, पुलह, पुलस्त्य, भृगु तथा अङ्गिरा आदि ऋषि गण, तथा और भी बहुत मित्रावसु योगियों के उत्तम रूप भूत नाथ की स्तुति करते हैं देवताओं

का प्रति निर्घोष सुनकर भगवान पृथ्वी से कहने लगे कि यह ब्रह्म घोष युक्त क्या सुनाई देता है । हे महाभागे ! यह देवताओं का महाशब्द सुना जा रहा है । तदनन्तर भगवान के वचन सुनकर पृथ्वी वाराह रूपी भगवान से कहने लगी कि हे देव! आपके नियोग में स्थित देवता आपके वाराह रूप को देखने की इच्छा कर रहे हैं । ०६॥१७॥१८॥१९॥२०॥२१॥ तब नारायण भगवान ने पृथ्वी से कहा कि हे देवि ! उन ढूंढते हुये देवताओं को जो उपस्थित हुये हैं मैं जानता हूँ हे वसुन्धरे ! लीला पूर्वक दाढ़ के एक अग्र भाग से ही दिव्य हजार वर्ष तक मैंने तुमको धारण किया है तेरा कल्याण हो ब्रह्मा के सहित आदित्य, वसु स्कन्द इन्द्रादि देवता देखने की इच्छा से आरहे हैं । भगवान के इस प्रकार वचन सुनकर हाथ जोड़कर पृथ्वी भगवान् के चरणों में गिर पड़ी और वाराह भगवान से कहने लगी कि, हे देव! आपने रसातल से मेरा उद्धार किया है । मैं आपकी भक्तिनी हूँ आपकी शरण में आई हूँ आप ही मेरी गति हैं । आपही मेरे प्रभु हैं । कर्म क्या है, किस कर्म से जन्म उद्धार होता है आप किस प्रकार प्रसन्न होते हैं, किस कर्म से आपकी पूजा होती है जो मुख्य हो सुख देने वाला हो वह आपका कर्म करना चाहती हूँ ॥२२॥२३॥२४॥२५॥२६॥२७॥२८॥ आपके कर्म करते मुझे कुछ दुख नहीं है, ग्लानि जरा कुछ नहीं है तथा जन्म मरण का दुख कुछ नहीं है हे यशोधर ! रुद्र इन्द्र ब्रह्मा के सहित सारे सुरासुर लोक एकैक कहाँ सुख पूर्वक निवास करते हैं हे माधव ! जो आपको देखते हैं वे किन कर्मों को करते हैं । उनके क्या भोजन हैं । कैसे उनके आचार हैं ब्राह्मण क्या कर्म है वैश्य क्या कर्म करता है तथा शूद्र को क्या कर्म करना चाहिये । किस कर्म से योग प्राप्त होता है तथा किस कर्म के करने से तपस्वी होता है आपके कर्म करने से मनुष्य को क्या क्या फल मिलता है दुख किस कर्म करने से होता है भोजन तथा पान किस प्रकार करना

चाहिये, हे माधव ! आपके भक्तों को कौन कर्म करना चाहिये, प्रापण किस प्रकार किन दिशाओं में बनाना, तथा देना चाहिये, किस कर्म के करने से मनुष्य योनि तथा वियोनि में नहीं जाता है हे अच्युत ! किस कर्म के करने से गर्भवास नहीं होता है किन कर्म के प्रभाव से मनुष्य संसार में नहीं रहता है पृथ्वी के इस प्रकार कहने पर भगवान ने कहा कि मेरे भक्तों के मन्त्रों को सुनिये । जो कि मोक्ष देने वाले हैं उन मन्त्रों को कहूँगा जिनसे कि मनुष्य सर्वदा तुष्टी को प्राप्त होता है ॥२६। ३०॥३१ ३२॥ ॥३३॥३४॥३५॥३६॥३७॥३८॥३६॥ मन्त्राः- सब महीनों में मुख्य भूत तू माधव ही माधव मास वैशाख है, गन्ध रस प्रयुक्ती से वसन्त काल के आने से उन भगवान का दर्शन करे जिनका यज्ञों से यजन होता है तथा जो सात लोकों में वीर नारायण हैं उनका दर्शन तथा पूजन करना चाहिये, एवम प्रकार मेरे कहनानुसार ग्रीष्म में भी कर्म करे और इस मन्त्र का उच्चारण करे । सब महीनों में मुख्य भूत आप ग्रीष्म हैं ग्रीष्म आने पर भक्त आपका दर्शन पूजन करे और दर्शन पूजन ही से भक्त दुख से मुक्त हो जावे हे वरारोहे ! इस प्रकार ग्रीष्म में मेरा पूजन तथा दर्शन करके पुरुष जन्म मरण के दुख को न प्राप्त कर मेरे लोक को जाता है जो इस विधि से मेरा पूजन करता है उसने सारे सुगन्धित फूलों से मेरी पूजा करली समझो ॥४०॥४१। ४२॥ ॥४३। ४४॥ हे पृथ्वि ! इसी प्रकार वर्षा ऋतु में भी मेरा कार्य करे, ऐसा करने पर स्वच्छ बुद्धि होती है तथा संसार से मुक्त होता है । हे वसुन्धरे तुझे संसार से मुक्ति करने वाला एक और कर्म सुनाता हूँ कदम्ब, मुकुल, अर्जुन आदि वृक्षों के फूलों से आदर पूर्वक मेरी पूजा करनी चाहिये, विधि पूर्वक मेरी स्थापना करके "ॐ नमोनारायणाय" कह यह मन्त्र पढ़े जो ध्यान वाले आपके आश्रित मनुष्य महिमा से पूज्यमान मेघ कान्ति वाले, आपको देखते हैं । हे लोकनाथ ! आप भजने वालों की निद्रा

दूर कीजिये वर्षा ऋतु में इसको मेघ वर्ण देखे, आषाढ़ महीने की शुक्ल द्वादशी दिन जो इस विधान से सर्व शान्ति कारक शुभ कर्म करता है, वह मनुष्य इस संसार में युग युग तक भी नहीं नष्ट होता है देवि यह ऋतुओं का उत्तम कर्म तुझे सुना दिया है ॥४५॥४६॥४७॥४८॥४९॥५०॥ जिससे मनुष्य संसार से तर जाते हैं। ऐसे इस गुप्त ऋतु पस्कर को मुझ वाराह रूप के सिवाय और कोई देवता भी नहीं जानते, यह कर्म अदीक्षित मूर्ख पिशुन दुशिष्य तथा शास्त्रार्थ दूषकों को नहीं सुनाना चाहिये। गौ हत्या वालों के बीच तथा पठों के बीच यह रहस्य नहीं सुनाना चाहिये उनके बीच में बाँचनेसे बाँचने वाले का धन तथा धर्म शीघ्र नष्ट हो जाता है, यह रहस्य जो धर्म के अधिकारी हैं, उन्हीं को सुनाना चाहिये हे भद्रे! जो तूने पूछा है, वह सब कह दिया, और क्या पूछना चाहती है ॥५१॥५२॥५३॥५४॥ ।५५॥ इति श्री वाराह पुराणे ऋतु पस्करणम् ।

अथः एक सौ पच्चीस अध्याय

दोहाः— श्री वाराह जी कहें सब, माया चक्र बताय।
सोम शर्मा कथा कही, धरणी सों समुझाय ॥

अथः माया चक्रम्— सूत जी ने कहा— भगवान से छः ऋतुओं के कर्मों को सुनकर पृथ्वी पुनः नारायण भगवान् से पूछने लगी कि हे भगवन्! जो आपने कहे हैं वे आपके कर्म माङ्गलमय हैं, तथा पवित्र हैं तथा लोकों में प्रसिद्ध हैं और मेरे मन को आल्हादित कर रहे हैं हे भगवन! शरद काल के चन्द्रमा के समान "आपके मुख से कहे कर्मों को सुनकर के निर्मल हो गई हूं। मेरी बड़ी अभिलाषा है आप मेरे हित के लिये अवश्य परम गुप्त माया बतलाने योग्य हो। हे देव! जिसको आप हमेशा कहते हो कि मेरी माया है वह माया कौन है किस प्रकार है जिसको माया कहा जाता है वह क्या वस्तु है माया का अर्थ परम उत्तम रहस्य जानना चाहती हूं। पृथ्वी के वचन सुनकर माया कारण्डक

विष्णु भगवान हँसकर पृथ्वी से कहने लगे कि हे वसुन्धरे ! जो तूने प्रेम पूर्वक माया का अर्थ पूछ रही है वह मत पूछ ॥१॥२॥ ॥३॥४॥ ५॥६॥७॥ जिस माया को पूछकर उसे जानने से वृथा ही क्लेश को क्यों प्राप्त कर रही है रुद्र इन्द्र ब्रह्मा आदि आज तक भी मुझे तथा मेरी माया को नहीं जानते हैं से वसुन्धरे ! और तू तो क्या ही जानेगी, जहां मेघ वर्षते हैं वहां जल से परिपूर्ण हो जाता है और जहां नहीं वरपते वह देश निर्जलता को प्राप्त हो जाता है हे प्रिये ! यह मेरी माया है पक्ष में चन्द्रमा बढ़ता हैं और अन्य पक्ष में क्षीण होता है अमावस्या के दिन चन्द्र नहीं दिखाई देता है यह मेरी माया है। हिमन्त काल में कुये का जल ऊष्ण होता है, ग्रीष्म में शीतल होता है यह मेरी माया है।हे सुन्दरि ! सूर्य पश्चिम दिशा में अस्त होता है प्रातः काल पूर्व दिशा में उदय होता है यह भी मेरी माया है शोणित और शुक्र से प्राणि होता है प्राणि गर्भ में पैदा होता है गर्भ में प्रवेश कर जीव सुख दुख का अनुभव करता है और गर्भ से बाहर आने पर सब कुछ भूल जाता है यह मेरी ही माया है अपने कर्मों के आश्रित रहने वाला जीव नष्ट संज्ञ तथा गतस्पृह हो कर्मों द्वारा अन्यत्र से अन्यत्र पहुँचता है शुक्र शोणित के संयोग से जन्तु होते हैं अङ्गुलियाँ हाथ पैर सिर कटि पेट पीठ दांत ओठ नासिका कान नेत्र कपाल ललाट तथा जिह्वा के सहित मेरी माया से युक्त हो जन्तु पैदा होते हैं ॥८॥६॥१०॥११ १२॥१३॥ ॥१४॥१५। १६॥१७॥१८॥ उसी जन्तु का खाया हुआ अग्नि से पकता है तथा पिया हुआ भी इन्द्रिय द्वारा अधस्त्रवण होता है शब्द स्पर्श रूप रस गन्ध अन्न से जन्तु होता है हे सुन्दरि ! सब कालों में तथा स्थावर जंगम में वह निज स्वरूप है उसका तत्व नहीं जाना जाता दिव्य जल तथा पृथ्वी जल जिनमें प्रतिष्ठित हैं ॥१६॥२०॥२१॥२२॥ वृष्टि के होने पर पल्वल तथा तालावों में जल बहुत हो जाता है ग्रीष्मकाल आने पर सब सूख जाते हैं पृथ्वी

में आने से गंगा कही जाती है यह मेरी ही माया है चार समुद्र से जल लेकर मेघ मधुर जल को वर्षाते हैं यह भी मेरी ही माया है कोई मनुष्य रोग से पीड़ित होकर महोषधि खाते हैं उस औषधि में भी मेरी माया का बल है औषधि देने पर भी जो प्राणी मर जाते हैं उस समय औषधि को निर्वीर्य्य करके काल होकर मैं प्राणोंको हरणकरता हूं पहिलेगर्भ होता है फिर बच्चापैदा होता है फिर बुढ़ापा आजाता है यह मेरी मायाका बल हैपृथ्वीमेंबीज बोने पर उस बीज से अंकुर आजाता है फिर पत्तों से भरपूर पौधा होजाता है यह मेरी माया का बल है एक बीज के बोने से हजारों बीज होजाते हैं वहां मैं अपनी माया योग से अमृत सींचता रहता हूँ लोग ऐसा जानते हैं कि अच्युत भगवान को गरुड़ धारण करके लेजाता है।।२३।।२४।।२५।।२६।।२७।।२८।।२६।। ३०। ३१।। परन्तु मैं ही वेग से गरुड़ होकर अपनी आत्मा से आत्मा को ले चलता हूँ जो ये सारे देवता यज्ञ भाग से सन्तुष्ट हो जाते हैं वह मैं ही अपनी माया को करके देवताओं को प्रसन्न करता हूं सब लोग यह जानते हैं कि देवता नित्य यज्ञ भाग खाते हैं वह भी मैं ही अपनी माया से देवताओं का यजन करता हूं सब लोग यज्ञ कर्त्ता बृहस्पति का भजन करते हैं वह भी मैं ही अपनी माया की आङ्गिरसी करके देवताओं से यजन करवाता हूँ सब लोग यह जानते हैं कि वरुण समुद्र की रक्षा करता है परन्तु वह भी मैं ही वारुणी माया से महा समुद्र की रक्षा करता हूं सब लोग यह जानते हैं कि कुवेर धन का मालिक है परन्तु कुवेर माया लेकर मैं ही धन की रक्षा करता हूँ लोग यह जानते हैं कि वृत्रासुर को इन्द्र ने मारा है परन्तु ऐन्द्री माया ग्रहण कर वृत्रासुर मैंने ही मार गिराया है लोग ऐसा जानते हैं कि आदित्य ध्रुव यानी निरन्तर चलता है मैं ही मेरु को माया बनाकर सूर्य्य को धारण कर चलाता हूं लोक ऐसा कहता है कि समग्र जल नष्ट हो जाता है ।।३२।।३३।।३४।।३५। ३६।।३७।।३८

३६।। परन्तु बड़वाग्नि में प्रवेश कर मैं ही समग्र जल को पीता हूँ मायामय वायु बनाकर मेघों में फेंकता हूँ जो लोक यह कहता है कि जल कहां ठहरता है उस बात को देवता भी नहीं जानते कि अमृत कहाँ स्थित है मेरी माया नियोग से औषधियां वन में रहती हैं लोक यह जानता है कि राजा प्रजा का पालन करता है परन्तु मैं ही राज माया होकर पृथ्वी का पालन करता हूँ जो कि प्रलय के समय बारह सूर्य्य उदय होते हैं हे भूमे ! मैं उन में प्रवेश कर लोक में माया को रचता हूँ हे वसुन्धरे ! सूर्य्य अपनी किरणों से सर्वदा लोकों में तपता रहता है वह भी मैं ही अपनी अंशुमयी माया करके सारे जगत को किरणों से परिपूर्ण करता हूं जहां मूसल के समान धारा वाले सम्वर्त नाम के मेघ वर्षते हैं वह भी मैं ही सम्वर्त की माया ग्रहण करके अखिल जगत को परिपूर्ण करता हूं हे पृथ्वि ! जो मैं शेष के ऊपर शयन करता हूं वह मैं अनन्त माया से धारण करता हूँ तथा सोता हूं हे भूमे ! बारह माया ग्रहण कर जो कार्य्य करता हूँ वह क्या तू नहीं जानती है ।४०। ४१॥४२॥४३॥४४॥४५॥४६॥४७॥ जिसमें देवता लीन होते हैं वह माया मेरी कही गयी है तू भी वैष्णवी माया करके वह कृत्य नहीं जानती है हे सुश्रोणि ! जलसे तेरा उद्धार किया है सत्रहवीं मेरी यह देवी माया पृथ्वी को एक समुद्र वाली करके यह मेरी माया का बल है जिससे कि मैं जल में ठहरता हूं प्रजापति और रुद्र को रचता हूं तथा धारण करता हूं ॥४८।४६ ५०।। ब्रह्मा रुद्र भी माया से मोहित होकर मेरी माया को जानते हैं जो ये सूर्य्य कान्ति वाले पितृगण हैं वह मैं ही पितृमयी माया को ग्रहण करता हूं हे सुन्दरि ! और भी सुनिये माया से एकरूपि स्त्री की योनि में प्रवेश हुआ है तदन्तर विष्णु भगवान् के वचन सुनकर सुननेकी इच्छा वाली पृथ्वी हाथजोड़ विष्णु भगवान् से पूछने

लगी हे भगवान ! उस ऋषि ने क्या दुष्कर्म किया था जिससे कि वह स्त्री योनि में प्रवेश कर स्त्रीत्व को प्राप्त हुआ है मुझे बड़ा कौतूहल है यह सारी कथा सुनाइये उस ब्राह्मण का जो स्त्रीत्व होने का पातक है वह कहिये तदन्तर भगवान् पृथ्वी के वचन सुन पृथ्वी को मधुर वाणी से कहने लगा हे सुन्दरि ! तत्व से धर्माख्यान सुनिये ॥५१॥५२॥५३॥५४॥५५॥५६॥५७॥ हे विशालाक्षि ! लोम हर्षिणी मेरी माया सुनिये मेरी माया से सोम शर्म्मा आकर्षित हो कर अनेक उत्तम, मध्यम, अधम गति को प्राप्त हुआ है फिर ब्राह्मणत्व प्राप्त किया है सामेशर्म्मा ने जिस प्रकार स्त्री योनि प्राप्त की है उसने कोई पाप कर्म नहीं किया था उसका कुछ अपराध नहीं था केवल मेरी आराधना करता था नित्य मेरी मनोहर मूर्ति का चिन्तन करत था तप से कर्म से भक्ति से अनन्य मन से स्तुति करने पर बहुत समय में मैं उसके ऊपर प्रसन्न हुआ हूँ और उसको दर्शन देकर वरदान देने की इच्छा करके मैंने उससे कहा कि हे विप्र ! मैं तेरी तपस्या से प्रसन्न हूँ तेरा कल्याण हो जो तेरी इच्छा है वह वरदान मांग रत्न, सुवर्ण, गाय तथा अकण्टक राज्य अथवा स्वर्ग जहां कि अनेक सुख, हैं श्रेष्ठ स्त्रियें हैं धन रत्न आदि से समृद्ध तथा सुवर्ण भाण्डों से विभूषित स्वर्ग की याचना करिये जहां की सारी प्रधान अप्सरायें दिव्य रूप वाली होती हैं हे विप्र जो तेरे मन में हैं वह सब कुछ तुझे वरदान देता हूँ ॥५८॥५९॥ ६०॥६१॥६२॥६३॥६४॥६५॥६६॥ हे वसुन्धरे ! मेरे वचन सुनकर वह श्रेष्ठ ब्राह्मण मेरे लिये पृथ्वी में सिर झुकाकर मुझसे प्रिय वचन कहने लगा हे देव ! आप क्रोधित होंगे कि वरदान मांगता हैं जो आपने कहा कि वरदान मांग वह इच्छानुसार दीजिये मैं सुवर्ण, गाय, स्त्री तथा राज्य को नहीं चाहता हूं स्वर्ग की अप्सरा ऐश्वर्य्य तथा हजारों स्वर्गों में मुझे एक भी नहीं चाहिये हे माधव आप जिस प्रकार क्रीड़ा करते हैं केवल उस आपकी माया

को जानना चाहता हूँ ॥६७। ६८॥६६॥७०॥तब उसके वचन सुनकर मैंने उससे कहा कि हे विप्रेन्द्र अकार्य क्यों पूछता है माया से तुझे क्या प्रयोजन है विष्णु की माया से विमोहित होकर देवता भी मेरी माया को नहीं जानते हैं तदन्तर मेरे वचन सुन माया से प्रेरित हो वह ब्राह्मण मधुर वाक्य कहने लगा हे देव ! तप से अथवा कर्म से यदि आप मेरे ऊपर प्रसन्न हैं तो मुझे यही वरदान दीजिये तब मैंने उस तपस्वी ब्राह्मण को कहा कि कुब्जाम्रक तीर्थ में चले जा वहां गंगा में स्नान करने मेरी माया को प्राप्त होजायेगा मेरे वचन सुनकर माया के अभिलाषी ब्राह्मण ने मेरी परिदक्षिणा करके कुब्जाम्रक तीर्थ में गमन किया वहां जाकर यत्न से मात्रा भाण्ड तथा कुन्डी को नदी किनारे पर स्थापित कर तीर्थ की आराधना करने लगा तब विधि निर्दिष्ट कर्म से गंगा में उतर कर स्नान करने से सारे शरीर के भीग जाने पर तभी वह ब्राह्मण एक निषाध के घर में उसकी स्त्री के गर्भ में प्राप्त हो गया। ।७१॥७२ ७३।.७४॥७५॥७६॥७७॥७८ गर्भ क्लेश से पीड़ित होकर गर्भ में ही सोचने लगा कि आश्चर्य्य है कि मैंने क्या दुष्कर्म किया है जो कि निषाध के गर्भ में तथा नरकों में वास कर रहा हूँ मेरे तप के लिये धिक्कार है मेरे कर्म फल तथा जीवन के लिये धिक्कार है जो कि मल व्याप्त निषाध के गर्भ में दुख भोग रहा हूँ तीन सौ हड्डियों से संकीर्ण नौ दरवाजों से युक्त मूत्र पुरीष से व्याप्त मांस खून के कीचड़ वाले दुर्गन्ध वाले दुपः वातश्लेष्म पित्त वाले बहुत रोगों से युक्त बहु दुख समाकुल निषाध गर्भ में भोग रहा हूं कहने से क्या लाभ दुखों का अनुभव कर रहा हूँ कहां विष्णु कहाँ मैं और कहां गंगा जल गर्भ संसार से निकल कर उस क्रिया को प्राप्त करूँगा इस प्रकार चिन्ता करता हुआ शीघ्र गर्भ से निकल गया गर्भ पृथ्वी में गिरते ही जो पहिले सोचा था वह सब भूल गया निषाध के घर में वह ब्राह्मण कन्या रूप

हो गया, विष्णु की माया से मोहित होकर उसको कुछ भी ज्ञान न रहा, कुछ समय पश्चात् उस कन्या का किसी अन्य निषाध के साथ विवाह हुआ ॥७६॥८०॥८१॥८२॥८३॥८४॥८५॥८६॥८७॥ माया से पुत्र तथा कन्याओं को पैदा करने लगी। भक्ष्य, अभक्ष्य को खाती थी। पेय अपेय पान करती थी निरन्तर जीवों को मारती थी। कार्य अकार्य को नहीं जानती थी वाच्य, अवाच्य का ज्ञान नहीं था माया जाल से मोहित होकर गम्या-गम्य नहीं जानती थी। पचास वर्ष होने पर फिर मैंने उस ब्राह्मण को माया से अन्यत्र पूर्ववत् किया एक दिन वह घड़ा लेकर विष्टा से लिप्त वस्त्र प्रक्षालन के कारण गंगा तीर पर आयी किनारे पर घड़ा और वस्त्र रख कर गंगा जल में स्नान करने लगी प्रस्वेद धर्म से संतप्त हो सिर का स्नान किया तभी स्नान करते ही तपस्वी हो गया। दन्डी, कुन्डीधर हो गया वह ब्राह्मण तपोधन जहां पहिले स्थापित किये थे उन अपने वस्त्रों को तथा मात्रा कुन्डी त्रिदन्डक को देखने लगा। पूर्ववत् ज्ञान होने पर उसने सब कुछ देखा माया को जानने की इच्छा से उस तपोधन ब्राह्मण ने जिस प्रकार गन्गा के उत्तर तट पर वस्त्र रखे थे, योग को सोचता हुआ लज्जा पूर्वक वस्त्रों को ग्रहण किया और समान रेत वाले गंगा के तट पर बैठ गया तदनन्तर आत्मा को तप से जानने लगा कि मुझ पापी ने क्या निन्दित दुष्कर कर्म किया है ॥८८॥८९॥९०॥९१॥९२॥९३॥९४॥९५॥९६॥९७॥ इस प्रकार अपने को धिक्कार देने लगा अपनी निन्दा करने लगा मेरा आचार भृष्ट हो गया है जिससे कि मैं इस दशा को प्राप्त हो गया हूँ निषाध के कुल में पैदा होकर भक्ष्य अभक्ष्य भक्षण किया है जल स्थल आकाश चारी सब जीव मारे हैं पेय अपेय पान किया है अविक्रेय भी वेचे हैं अगम्या गमन किया है वाच्य अवाच्य कुछ नहीं समझा है। भोज्य अभोज्य सब कुछ भोजन

किया है निषाध से पुत्र तथा कन्यायें पैदा की हैं वह क्या अपराध होगा, और किस प्रकार मुझे मालूम होगा जिससे मैं इस नैषादी दशा को प्राप्त हुआ हूँ तदनन्तर वह निषाध क्रोध मे मूर्छित होकर पुत्रों सहित उसी माया तीर्थ में आया जहां पर कि उसकी स्त्री स्नान करती हुई तपोधन ब्राह्मण हो गई अपनी मृगनयना, पिकवयना भार्य्या को इधर उधर ढूढ़ने लगा एकैक को पूछता था कि किसी ने मेरी स्त्री देखी है। फिर उसी सन्तप्त तपोधन ब्राह्मण से पूछने लगा ॥६८ ६६॥१००॥१०१॥ ॥१०२॥१०३॥ १०४ हे प्रिये! तू हमें छोड़कर कहां चली गई पुत्रों को तथा मुझको घर में छोड़कर कहां चली गयी है छोटी जो कि स्तन्य पान करने वाली है वह दुहिता भूख से पीड़ित होकर रो रही है ॥१०५॥ क्या किसी ने जल लेने के लिये घड़ा ले कर गङ्गा के तट पर आई हुई, मेरी औरत देखी है ॥१०६॥ वहीं सब मनुष्य माया तीर्थ में आकर परिव्राज को देखने लगे, तथा उस तट पर यथा स्थित घड़े को देखा। तदनन्तर वह निषाध अपनी प्यारी को न देख घड़े तथा वस्त्र को देख कर, दुख से पीड़ित हो विलाप करने लगा यह वस्त्र और घड़ा नदी तट पर स्थित हैं तथा गङ्गा तीर पर मेरी स्त्री नहीं दीख पड़ती है किसी ग्राह ने जिह्वा के लोलुपता से नहाती हुई मेरी स्त्री को हर लिया होगा? मैंने कभी भी अपनी प्रिया को अप्रिय वचन नहीं कहे थे, स्वप्न में भी मैंने कभी उसको अप्रिय वचन कहे हैं अथवा पिशाच ने उसे खा लिया है अथवा भूत राक्षसों ने ग्रहण कर ली होगी? या गङ्गा तीर में रोग ग्रस्त होकर मर गई होगी? यह कुछ पता नहीं चलता कि क्या हुआ है मैंने पहिले क्या दुष्कर्म किये हैं जो कि मेरे सामने से मेरी भार्या अदृष्ट हो विगति को प्राप्त हो गयी है ॥१०७॥१०८॥१०६॥११०॥१११॥११२॥११३॥ हे सुभगे! हे

कान्ते ! हे मेरे चित के अनुसार चलने वाली प्रिये ! आइये, इन डरे हये इधर उधर क्लिश्य मान बालकों को देखिये हे वरारोहे! मुझको देखो तीन अति छोटे बच्चों को भी देखो दुहिताओं को देखो हे मानदे ! ये मेरे पुत्र रो रहे हैं ये बच्चे तेरी राह देख रहे हैं मुझ दुष्कर्मी की इस नन्हीं सी दुहिता को दूध पिलाकर रक्षा कीजिये हे कल्याणि ! तू मुझे भूख प्यास से पीड़ित देख रही है दर्शन देकर हृदय को शान्त क्यों नहीं कर रही हो, इस प्रकार कह वह मुक्ति के लिये व्यवस्थित हो गया उस निषाध के इस प्रकार इधर उधर घूमकर विलाप करने पर वह ब्राह्मण लज्जा पूर्वक उस निषाध से कहने लगा कि हे निषाध ! तू चला जा यहां तेरी प्रिया नहीं है तेरे सुख संयोग को लेकर वह तेरी प्रिया हमेशा के लिये चली गई है रोते हुये निषाध को देख ब्राह्मण ने करुण युक्त होकर कहा कि हे निषाध ! तू अपने घर को चला जा क्यों दुखी हो रहा है भोजनादि से बालकों की रक्षा करते रहो इन पुत्रों को कभी नहीं छोड़ना, परिव्राज ब्राह्मण के वचन सुनकर निषाध शोक युक्त हो, ब्राह्मण से मधुर वचन कहने लगा। हे मुनिवर श्रेष्ठ ! आपने मधुराक्षर वाले वचनों से मेरे हृदय को शान्त कर लिया है। ॥११४॥११५॥११६॥११७॥११८॥११९॥१२०॥१२१॥ ॥१२२॥१२३॥ निषाध के वचन सुनकर दुख शोक युक्त हो वह मुनि मधु वाक्य कहने लगा हे निषाध ! मत रो मैं तुझे सुनाता हूँ तेरा कल्याण हो तेरी वह प्रिया से मैं ब्राह्मण हो गया हूं गङ्गा तीर पर आकर मैं मुनि ब्राह्मण हो गया हूं मैं ही तेरी औरत रूप था परिव्राज के वचन सुनकर निषाध का दुख कुछ कम हुआ और कोमल वाणि मे ब्राह्मण को पूछने लगा, हे विप्र ! आप यह क्या कह रहे हो स्त्री से पुरुष कैसे हो सकता है यह अव्यक्त बात क्यों कहते हो निषाध के वचन सुनकर ब्राह्मण दुख से मूर्छित होकर गङ्गा तीर पर धीवर को मधुर वाक्य कहने लगा कि अपने बालकों को ग्रहण कर शीघ्र अपने देश को जाइये और सब बालकों के

साथ यथा संख्य बराबर स्नेह कीजिये ब्राह्मण के ऐसा कहने पर भी निषाध को कुछ पता नहीं चला और ब्राह्मण को मधुर स्वर से कहने लगा हे विप्र ! आपने पूर्व जन्म में क्या दुष्कृत कर्म किया था, जिससे कि जो आप कह रहे हैं कि मैं स्त्री योनि को प्राप्त हुआ हूं वह किस प्रकार हुये हो, किस दोष से स्त्री योनि मिली है और फिर पुरुष होगये हो, यह सब वृतान्त कहिये ॥१२४॥ ॥१२५॥१२६॥१२७॥१२८॥१२९॥१३०॥१३१॥१३२॥ इस प्रकार निषाध के वचन सुनकर वह ऋषि माया तीर्थ में निषाध से मधुर वचन बोलने लगा हे निषाध तत्व से मेरी कथा सुनिये मैं कहता हूँ मैंने कभी कहीं दुष्कृत नहीं किया है सदाचार में मैंने एक भुक्त किया है अभक्ष्य कभी भक्षण नहीं किया है दर्शन की इच्छा से जनार्दन की आराधना की है आराधना करते हुये मुझे भगवान ने दर्शन दिया और अनेक प्रकार से वरदान देने को उद्यत हुआ परन्तु मैंने भगवान के कहे वरदान नहीं मांगे हैं मैंने कहा मुझे विष्णु की माया दिखाइये तदनन्तर विष्णु ने कहा हे द्विज माया देख कर क्या करोगे यह वरदान मांगना छोड़ तब मैंने बारम्बार भगवान से आगृह किया कि मेरी प्रीति से अवश्य अपनी माया दिखाइये ॥१३३॥१३४॥१३५॥१३६॥१३७॥१३८॥ तब भगवान ने कहा कि यदि तेरा हठ ही है तो मेरी माया को देख लेगा कुब्जाम्रक तीर्थ में गंगा स्नान करके तू माया को अवश्य प्राप्त होगा इतना कह भगवान अन्तर्धान हो गये, तदनन्तर माया के लोभ से मैं कुब्जाम्रक तीर्थ में गन्गा तट पर आया। और यत्न दन्ड कुन्डी तथा वस्त्र को तीर पर रख निर्मल जल में गोता खाने लगा तब मैंने कुछ नहीं जाना कि क्या हुआ और निषाधी के गर्भ से पैदा हुआ हूं और आपकी पत्नी हुआ हूँ किसी कारण से इस गन्गा जल में प्रवेश किया और स्नान करके पहिले की तरह ऋषि हो गया हूं हे निषाध ! यह कुन्डी, वस्त्र जैसे मैंने रखे थे वैसे ही स्थित हैं पचास वर्ष आपके घर में निवास –

किया है तथापि ये दण्ड वस्त्रादि न तो जीर्ण हुये हैं और न गंगा ने हरण किये हैं ब्राह्मण के इस प्रकार कहने पर निषाध अदृश्य हो गया और जो वे बालक थे वे सब अदृश्य होगये हे वसुन्धरे ! तदनन्तर वह ब्राह्मण ऊर्द्ध श्वास ऊर्द्ध बाहु होकर वायु भक्षण कर तप करने लगा ॥१३६॥१४०॥१४१॥१४२॥१४३।१४४। १४५ तप करते हुये उसको अपराह्न समय होगया तब वह यथोचित जल छोड़ता था कर्म योग्य फूलों को श्रद्धा पूर्वक लाकर वीरासन से बैठे यथा न्याय पूजन करता था गंगा स्नान में मुख्य ब्राह्मण उस द्विज तपस्वी को पूछने लगे कि तूने पूर्वाह्न में मात्रा कुण्डी तथा त्रिदण्डक यहां पर स्थापित किये हैं और यहां स्थापित कर इधर उधर गया है शीघ्र नहीं आया क्या तू उस स्थान को भूल गया था ब्राह्मणों के वचन सुनकर वह ब्राह्मण चुप रहा और ब्राह्मणों से अनुगत स्थान को प्राप्त हो आत्मा से आत्मा का ध्यान करने लगा १४६॥१४७॥१४८॥१४६॥१५०॥ हे देवि ! तदनन्तर वह ब्राह्मण सोचने लगा कि आज पचास वर्ष होगये हैं जबकि मैंने यह दण्ड मात्रा स्थापित किये थे आज अमावास्या है ये ब्राह्मण मुझ से क्यों कह रहे हैं कि तूने अपनी मात्रा पूर्वाह्न में स्थापित की हैं और फिर अपराह्न में यहां पर आया है यह क्या बात है १५१॥१५२॥ हे देवि ! तदनन्तर ब्राह्मण को अपना रूप दिखाया और कहाकि हे विप्र तू भ्रान्त रूप क्यों हुआ है तैंने क्या देखा है तुझे व्यग्र के समान में देख रहा हूँ हे विप्र ! सावधान होजा मेरे इस प्रकार कहने पर उस दुखी दीन ब्राह्मण ने पृथ्वी में शिर झुका कर बार बार श्वास लेकर मुझसे कहा कि हे जगत गुरो ! आश्चर्य है ये ब्राह्मण मुझसे कह रहे हैं कि पूर्वाह्न में आपने दंड,कमंडल तथा वस्त्रोंको स्थापित करके तू गया था और अपराह्न में आरहा है क्या तू स्थान को भूल गया है इस प्रकार ये ब्राह्मण मुझसे कह रहे हैं ॥१५३॥१५४॥१५५॥१५६॥ और हे देव ! मैं तो

व्याध योनी से पैदा होकर निषाद की भार्या हुआ हूँ पंचास वर्ष निषाद के घर में रहकर मैंने निषाद से तीन पुत्र तथा तीन कन्या पैदा की हैं और अनेक दुष्ट कर्म किये हैं कभी स्नान करने के लिये गंगा के तट पर आकर वस्त्रों को तीर पर स्थापित कर निर्मल जलमें स्नान करता हुआ फिर मुनि रूप को प्राप्त हुआ हूँ हे माधव ! मैंने आपकी आराधना करते हुये कौन सा विकृत कर्म किया है तथा तप करते हुये क्या दुष्कर्म किया है ॥१५७॥१५८ १५६॥१६०॥ हे अच्युत ! आपकी सेवा करते हुये मैंने क्या अभक्ष्य भक्षण किया है आपकी पूजा करते कौन व्यभिचार हुआ है यह तत्व मे कहिये जिससे मैं नरक गया हूँ हे भगवन ! मैं इसी चिन्ता से व्याकुल हूं आप मुझे बताइये पहिले मैंने माया के लोभ से आपकी कहा था अन्य किसी पाप को मैं स्मरण नहीं करता हूँ जिससे कि नरक में गया हूं ॥१६१॥१६२॥१६३॥ तदन्तर उस दुख से पीड़ित ब्राह्मण का कारुण्य विलाप युक्त वचन सुनकर मैंने उसको कहाकि हे विप्रेन्द्र ! अपने से पैदा किये दुख को न सोचिये हे विप्र ! मेरी पूजा करते तूने कोई भी विकृत कर्म नहीं किया है जिससे कि तू तिर्यक योनि के दुख को प्राप्त हुआ है हे ब्राह्मण श्रेष्ठ ! मैंने पहिले तुझ से कहा था कि हे ब्रह्मन् ! वरदान मांगो तब तूने माया का वरदान मांगा मैंने कहा था कि तेरी इच्छानुसार वह लौकिक तथा पार लौकिक वरदान देता हूँ वह तूने अस्वीकृत किये और माया का ही दर्शन तूने माँगा है इच्छानुसार तूने वैष्णवी माया देखली है दिवस अपराह्न तथा निषाध के घर में पचास वर्ष नहीं व्यतीत हुये हैं हे द्विजोत्तम ! और भी कहता हूं कि यह वैष्णवी माया की तूने इच्छा की है तूने कुछ भी शुभ अशुभ नहीं किया है जो कुछ किया वह माया मय भ्रान्ति है उसी से तू दुखी हो रहा है ॥१६४॥१६५॥१६६॥१६७॥ १६८॥१६६॥१७०॥ जो तूने दुष्कृत कर्म तथा व्यभिचार

किया है उससे तेरा तप तथा पूजन किया हुआ नष्ट नहीं हुआ है जन्मान्तर में जो कर्म तूने किये हैं उसी से इस महत दुख को तू प्राप्त हुआ है हे ब्राह्मण सुनिये कि तूने पूर्व जन्म में क्या पाप किया है पूर्व जन्म में तू ने शुद्ध मेरे भक्त ब्राह्मणों को नमस्कार नहीं किया है अतः उसी पाप से तुझे यह दुख मिला है जो पवित्रात्मा भगवान् के भक्त हैं वे मेरी ही मूर्तियां हैं उनको जो प्रणाम करता है वे मुझको ही प्रणाम करते हैं हे विप्रेन्द्र ! उन्होंने यहां मुझे निसन्देह जान लिया है मेरे दर्शन की कामना वाले जो मेरे भक्त हैं तथा ब्राह्मण हैं मनुष्यों को सर्वदा उनका दर्शन तथा पूजन करना चाहिये विशेष करके कलियुग में मैं द्विज रूप से स्थित हूँ अतः जो ब्राह्मणों के भक्त हैं वहीं मेरे भी भक्त हैं जो मुझे प्राप्त हुये चाहते हैं तथा जो अवाच्य भाषण नहीं करते हैं अनन्य मन होकर वे मेरे भक्त हैं हे ब्राह्मण ! तू सिद्ध होगया है अपने स्थान को चले जा जब प्राणों को छोड़ेगा तब मेरे स्थान श्वेत द्वीप को निसन्देह प्राप्त करेगा हे वरारोहे ! इस प्रकार कह कर मैं वहीं पर अन्तरध्यान होगया था और वह ब्राह्मण भी सुदुष्कर कर्म करके माया तीर्थ में प्राणों को छोड़कर श्वेत द्वीप को प्राप्त हुआ है और मेरी माया के बल से धन्वी तूणीं, शरी, खड्गी होकर नित्य मुझे देखता रहता है ॥१७१॥१७२॥१७३॥१७४॥ १७५॥१७६॥१७७॥१७८॥१७९॥१८०॥ हे वसुन्धरे ! तुझे माया से क्या प्रयोजन तू माया जानने के योग्य नहीं है मेरी माया को देव, दानव, राक्षस, कोई नहीं जानते हैं हे भूमे ! यह महोजश वाला माया का आख्यान तुझे सुनादिया है मायाचक्र कह दिया है जो कि सर्व पुण्यों के सुख को देने वाला है यह आख्यान आख्यानों में श्रेष्ठ है तपों में परमतप है पुण्यों में परम पुण्य है गतियों में प्रधान गति है जो इस रहस्य को मेरे

भक्तों को सुनावे अभक्तों को न सुनावे नीच तथा शास्त्र दूषकों को यह रहस्य नहीं सुनाना चाहिये आगे पीछे से मेरे भक्तों के स्थिति होने पर जो इस रहस्य को पढ़ता है वह शोभा को प्राप्त होता है तथा शास्त्र दूषकों को सुनाने से ग्लानि को प्राप्त होता है हे वसुन्धरे ! जो प्रातः काल उठकर इस रहस्य को पढ़ता है उसको बारह वर्ष मेरे सामने पढ़ने का फल प्राप्त होता है और इस रहस्य को पढ़ने से मनुष्य पूर्ण समय पर मरकर मेरा भक्त होता है और तियोनियों में नहीं जाता है हे वसुन्धरे ! जो इस महाख्यान को नित्य सुनता है वह मन्दात्मा नहीं होता तथा तियोनियों में नहीं जाता है हे वरारोहे ! जो तूने पहिले इच्छानुसार पूछा है वह कह दिया और क्या पूछना चाहती है १८१।१८२॥१८३॥१८४॥१८५॥१८६॥१८७॥१८८॥१८६ ॥ इति श्री वराह पुराणे भगच्छास्त्रे मायाचक्रम् नाम काशीरामशर्मा कृत भाषा टीकायाम पञ्चविंशत्यधिक शततमोऽध्याय ॥१२५॥

॥ अथः एक सौ छबीसवांऽध्याय ॥

दोहा—कुब्जाम्रक है तीर्थ इक सारे जग विख्यात ।
नाग नैवली की कथा, करें सत्र प्रख्यात ॥

अथः कुब्जाम्रक माहात्म्य—रैभ्यानुग्रहः मायाचक्र सुनकर पृथ्वी वराह रूपी भगवान् से पूछने लगी ॥१॥ पृथ्वी ने कहा हे देव ! जो आपने कुब्जाम्रक तीर्थ का माहात्म्य तथा वहीं माया तीर्थ में अनन्त माया बल सुनाया है उसको मैं नहीं जानती हूँ कुब्जाम्रक का जो पुण्य है तथा सनातनी पुष्टी है वह परम गुप्त से गुप्त रहस्य कृपा करके सुनाइये ।२॥३॥ वराह ने कहा—हे अनिन्दिते ! जो कुब्जाम्रक में पुष्टी है तथा जितने तीर्थ हैं उन सबको मैं सुनाता हूं सर्व लोक सुखा वह उन सब तीर्थों को समग्रता से सुनिये जिस

प्रकार कि कुब्जाम्रक हुआ, तथा वह तीर्थ हुआ, जो वहां का कर्म है जो वहां स्नान करने से फल मिलता है तथा वहां प्राण त्यागने से जो फल मिलता है वह सब सुनाता हूँ हे भू रे । सत्रह युग में एक वसुन्धरा को करके तथा ब्रह्मा,के वचन से जल संहार कर मधुकैटव को मारकर मेरे आश्रय को प्राप्त हुआ उस समय मैंने महामुनि रैभ्य को प्रणाम करते देखा, वह मेरी ही आराधना में लगा था, सर्व कर्मों में निष्ठित था युक्तिमान था तथा गुणग्य पवित्र दक्ष और जितेन्द्रिय था । उस रैभ्य ने दस हजार वर्ष तक ऊपर को हाथ उठाये स्थित हो तप किया ॥४ ५॥६ ७॥८॥६॥ हजार वर्ष तक पानी पीकर ही रहा पाँच सौ वर्ष शैवाल खाकर ही वह मुनि तप करता रहा । हे देवि ! उसकी इस प्रकार परम भक्ति से मेरी आराधना करने पर मैं उस रैभ्य महात्मा के ऊपर प्रसन्न हुआ हूँ और गङ्गा द्वार पर तप करते हुये रैभ्य के पास जाकर आम्र वृक्ष के आश्रय में स्थित होकर मैंने उस रैभ्य मुनि को देखा और किसी हेतु से उसको अपना रूप दिखाया । जिस आम्र के आसरे से मैं खड़ा था वह आम्र कुब्जत्व को प्राप्त हुआ है । हे पृथ्वी इसी लिये यह स्थान कुब्जाम्रक नाम से विख्यात हुआ है उस कुब्जाम्रक तीर्थ में प्राणों को त्यागने से मनुष्य मेरे लोक को प्राप्त होते हैं ॥१०॥११॥१२॥१३ ।१४॥ हे वसुन्धरे ! उस रैभ्य ने मुझे देखकर जो वाक्य कहे हैं उनको भी कहता हूं सुनिये इस प्रकार कुब्जरूप से स्थित घुटनों के बल खड़ा हुआ रैभ्य कुछ कहते हुये को मैंने देखा, नमस्कार कर शंसित व्रत वाले रैभ्य को स्थित देख मैंने वरदानों से तृप्त किया । मेरे वचन सुनकर उस रैभ्य ने मेरी प्रसन्नता के लिये मधुर वचन कहता हुआ बोला कि, यदि लोकनाथ जनार्दन भगवान् प्रसन्न हैं तो हे देव ! आपका निवास नित्य इस कुब्जाम्रक तीर्थ में चाहता हूं हे महाप्रभो ! हे मधुसूदन ! जब तक ये लोक रहेंगे तब तक आपका यह

स्थान रहेगा और जब तक ये कुब्जाम्रक स्थान रहे तभी तक मेरी आपमें भक्ति बनी रहे हे विभो! अन्य भक्ति मुझे कभी अच्छी नहीं लगती ॥१५॥१६॥१७।१८॥१६ २०॥२१॥ इतनी ही मेरे हृदय में इच्छा है हे उपेन्द्र! यदि आप प्रसन्न हैं तो यही मुझे वरदान दीजिये इस प्रकार उस रैभ्य ऋषि के वचन सुनकर मैंने उससे कहा कि हे ब्रह्मर्षे! ऐसा ही होगा हे वसुन्धरे मेरे वचन सुनकर वह रैभ्य मुहूर्त मात्र ध्यान में स्थित होकर प्रसन्नता पूर्वक मुझसे कहने लगा हे प्रभो! इस तीर्थ की महिमा सुनने की इच्छा है हे लोकोपकारक! आप सुनाइये इस क्षेत्र के आश्रित अन्य जितने तीर्थ हैं उनको भी आपसे सुनना चाहता हूं सो सुनाइये तब मैंने कहा– हे ब्रह्मन् जो सुना वह कुब्जाम्रक तीर्थ का पुन्य मुझसे पूछते हो वह सुनिये ॥२२॥२३॥२४॥२५॥२६॥२७॥ कुब्जाम्रक तीर्थ में कुमुदाकार नाम का तीर्थ है उसमें स्नान करने से मनुष्य स्वर्ग प्राप्त करता है कार्तिक, मार्गशीर्ष, वैशाख, महीने की शुक्ल द्वादशी दिन अति कठिन कर्म करके जो स्त्री पुरुष वा नपुंसक प्राणों को छोड़ता है वह समग्र सिद्धि को प्राप्त करके विष्णु लोक को जाता है ॥२८॥२६॥३०॥ हे वसुन्धरे और भी कहता हूं आप सुनिये कि इस कुब्जाम्रक तीर्थ में एक विख्यात मानप तीर्थ भी है। जिसमें स्नान करके मनुष्य नन्दन वन को जाता है और दिव्य हजार वर्षों तक अप्सराओं के साथ क्रीड़ा करता है। हजार साल पूरे होने पर अच्छे कुल में पैदा होकर धनवान तथा गुणवान पुरुष होता है और जो मनुष्य मानप तीरथ में कार्तिक द्वादशी दिन प्राण त्याग करता है वह समग्र सिद्धि को प्राप्त करता है तथा विष्णु लोक जाता है अब अन्य पूसिद्ध माया तीर्थ को सुनाता हूं जिससे माया जानी जाती है उसे सुनिये ॥३१॥ ॥३२॥३३॥३४।३५॥ उसमें स्नान करने से पुरुष दस हजार साल तक मेरा भक्त होता है तथा कुबेर भवन के समान परम पुरी को

प्राप्त करता है एक हजार वर्ष तक पुष्टी तथा स्वच्छन्द गमन से तुष्टी- पुष्टी आदि प्राप्त करता है अथवा जो माया तीर्थ में प्राणों को छोड़ता हैं वह माया योगी होकर मेरे लोक को जाता है ॥३६॥३७॥३८॥ हे वसुन्धरे! सर्वात्मक तीर्थ कहता हूं जो कि, सर्व तीर्थ गुणों से युक्त है, उसे सुनिये जो मनुष्य सर्वात्मक नाम तीर्थ में वैशाख द्वादशी दिन स्नान करता है वह पन्द्रह हजार वर्ष तक समग्रता मे स्वर्ग में वास करता है और जो मनुष्य सर्व संग त्याग कर सार्पक तीर्थ में प्राणों को छोड़ता है वह विष्णु लोक जाता है ॥३६॥४०॥४१॥ हे वसुन्धरे ! फिर और भी कहता हूं सुनिये पूर्ण मुख नाम एक तीर्थ है उसे कोई नहीं जानता है उसमें सब गङ्गाओं का जल शीतल होता है जहां ऊष्ण जल होवे वह पूर्ण मुख तीर्थ जानना चाहिये पूर्ण मुख में स्नान करने से मनुष्य सोम लोक को जाता है और पन्द्रह हजार साल तक सोम को देखता रहता है। तदनन्तर स्वर्ग से उतर कर ब्राह्मण कुल में पैदा होकर पवित्र चतुर तथा सर्व कर्म गुणान्वित हो मेरा भक्त होता है अथवा जो पुरुष मार्गशीर्ष शुक्ल द्वादशी दिन पूरण मुख में प्राणों को छोड़ता है वह विष्णु लोक में जाता है और वहां दीप्तिमान् मुक्त चतुर्भुज नारायण को देखता रहता है उसका जन्म मरण कभी नहीं होता है।॥४२॥४३॥४४॥४५॥४६॥४७॥ हे वसुन्धरे! फिर और भी कहता हूं उसे सुनिये। अनन्य मन से जो मेरा भक्त उस पूर्णमुख में कभी भी स्नान करता है वह दस हजार साल तक स्वर्ग में रहता है तदनन्तर स्वर्ग से भ्रष्ट होकर तीरथ के प्रभाव से धनवान, गुणवान तथा मेरा भक्त होता है ॥४८॥४६॥५०॥ वैशाख शुक्ल द्वादशी दिन जो कठिन कर्म करके प्राणों को छोड़ता है उसको जन्म मरण तथा भय कुछ नहीं प्राप्त होता। वह सर्वसंग निर्मुक्त हो विष्णु लोक जाता है॥५१॥५२॥ अब अन्य समस्त लोकों में सुख देने वाले करवीर तीरथ को सुनाता

हूँ जिससे वह करवीर तीरथ जाना जाता है वह चिन्ह कहता हूँ ज्ञानवान पुरुष मेरी भक्ति से दृढ़ होकर माघ मास शुक्ल द्वादशी दिन मध्याह्न समय स्नान करने से विमान में चढ़कर स्वच्छन्द गमन वाला हो अप्सराओं से सेवित होकर घूमता रहता है और माघ शुक्ल द्वादशी को जो करवीर में प्राणों को छोड़ता है वह विष्णु ब्रह्मा महेश्वर का दर्शन करता है ॥५३॥५४॥५५॥५६ ५७॥ हे वसुन्धरे! जो पहिले रैभ्य को सुनाया था वह और भी कहता हूं उस कुब्जाम्रकतीरथ में ईम्व महत् फल देने वाला पुन्डरीक तीरथ है उसका चिन्ह कहता हूं उस पुन्डरीक में स्नान करके पुरुष पुन्डरीक यज्ञ के फल को प्राप्त करता है अथवा प्राणों को छोड़े वह दस पुन्डरीक यज्ञों के फल को प्राप्त करता है यज्ञ फल भोगकर जाति शुद्ध महातपा होकर सिद्ध पुरुष के समान मेरे लोक को जाता है ॥५८॥५९॥६०॥६१॥६२॥६३॥६४॥६५॥ कुब्जाम्रक क्षेत्र में एक अग्नि तीरथ विख्यात है जिसको निष्पापी पुरुष द्वादशी दिन पहिचानते हैं कार्तिक आषाढ़ तथा माधव महीने की शुक्ल द्वादशी दिन यत्न से जो मनुष्य अग्नि तीरथ में रहता है वह इस तीरथ को पहिचानता है उसका चिन्ह कहता हूं जिससे कि वह मेरा पवित्र तीरथ जाना जाता है उसे एकाग्र मन से सुनिये शुद्ध भागवत संहिता पाठकों को छोड़कर और कोई नहीं जान सक्ता जिस विषय पर कोई शास्त्र नहीं है, उस अग्नि तीरथ में स्नान करने से अथवा प्राणों को छोड़ने से जो फल मिलता है हे वसुन्धरे! उसे एकाग्र चित्त से सुनिये कुब्जाम्रक क्षेत्र के अन्तर्गत अग्नि तीर्थों में जो मनुष्य स्नान करता है वह सात अग्नि मेध यज्ञों के फल को प्राप्त करता है ॥६६॥६७॥६८॥६९॥७०॥ ॥७१॥७२॥७३॥ हे प्रिये! यह फल स्नान मात्र से मिलता है और जो एकैक द्वादशी करके बीस दिन रात तक उसमें निवास कर प्राणों को छोड़े वह विष्णुलोक जाता है उस तीरथ का चिन्ह कहता हूं

उसे सुनिये जिससे कि बुद्धिमान मनुष्य मेरे अग्नि तीर्थ को जानते हैं उसे सुनिये हेमन्त ऋतु में अग्नि तीर्थ का जल ऊष्ण होता है तथा ग्रीष्म में शीतल होता है यही उसका चिन्ह है हे महाभागे यही अग्नि तीर्थ आग्नेय में है जिससे कि मनुष्य घोर संसार सागर को पार करते हैं हे वसुन्धरे ! और भी कहता हूं कुब्जाम्रक क्षेत्र में धर्म से निकला हुआ एक महत् विख्यात वायव्य तीर्थ है उस तीर्थ में जो स्नान करता है वह वाजपेय यज्ञ के फल को प्राप्त करता है अथवा उस वायु तीर्थ में जो प्राणों को छोड़ता है और पन्द्रह दिन तक निवास करता है उसका पृथ्वी में पुनः जन्म मरण नहीं होता ।७४ ।७५।।७६।।७७।।७८।।७९।।८० ।८१। मेरे लोक में प्रतिष्ठित होकर चतुर्भुज रूप होजाता है हे सुन्दरि जिससे वायु तीर्थ जाना जाय वह चिन्ह कहता हूं पीपल वृक्ष के पत्ते चौबीस द्वादशियों में नित्य जंगल में उड़ते रहते हैं यही वायु तीर्थ का चिन्ह है कुब्जाम्रक में अन्य विख्यात संसार से मुक्त करने वाला शक्र तीर्थ कहता हूँ हे वरारोहे ! उस शक्रतीर्थ में वज्र हाथ में लिये इन्द्र नित्य निवास करता है दस रात तक जो मनुष्य शक्रतीर्थ में उपवास कर प्राणों को छोड़ता है वह विष्णु लोक को प्राप्त करता है उसका चिन्ह कहता हूं सावधानता से सुनिये हे सुन्दरि ! शक्र तीर्थ से दक्षिण दिशा में पांच वृक्ष स्थित हैं यही शक्र तीर्थ का चिन्ह है हे वसुधे ! यह सुनादिया है अन्य वरुण तीर्थ कहता हूं जहां कि वरुण ने पाँच सात हजार वर्ष तक तप किया है वहां स्नान करने का फल कहता हूँ ।८२ ८३।।८४।।८५।।८६।।८७।।८८।।८९। ९०।। वरुण तीर्थ में स्नान करने से तथा प्राणों को छोड़ने से जो फल प्राप्त होता है वह कहता हूं वरुण तीर्थ में स्नान करने से मनुष्य आठ हजार वर्ष तक वरुण लोक में जाकर स्वच्छन्द चारी होता है तथा वरुण तीर्थ में बीस वर्ष निवास करके जो सर्व संग को छोड़ मनुष्य

ाणों को छोड़ता है, वह विष्णु लोक जाता है हे वसुन्धरे ! ुमसे कहे गये वरुण तीर्थ का चिन्ह सुनिये उस वरुण तीर्थ में क धारा गिरती है जो कि सदा एक रूप रहती है वर्षा ऋतु में बढ़ती है और न ग्रीष्म ऋतु में घटती है ६१॥६२॥६३॥ ६४॥ उस कुब्जाम्रक क्षेत्र में एक सप्त सामुद्रक तीर्थ है, उसमें ो मनुष्य धर्म परायण होकर स्नान करता है उसको तीन अश्व- धों का फल प्राप्त होता है और दस पांच हजार वर्ष तक शीघ्र र्ग में निवास करता है तदनन्तर स्वर्ग से भ्रष्ट होकर वेद दाङ्ग कुशल तथा सोम रस पान करने वाला द्विज कुल में पैदा ता है जो पुरुष इस तीर्थ में मुक्त संग जितेन्द्रिय हो सप्त रात्र वास करके प्राणों को छोड़े वह विष्णु लोक जाता है ॥६५॥ ६६ ६७॥६७॥६८॥ हे सुन्दरि ! उस सप्त सामुद्रक तीर्थ का न्ह सुनिये वैशाख शुक्ल द्वादशी दिन जो वहाँ विभूति होती वह निर्मल विभूति गङ्गा जल में मिलने से क्षीर वर्ण वाली जाती है फिर पीत, रक्त वर्ण पुनः मरकत के समान कान्ति वाली पुनः मुक्ता समान कान्ति वाली होती है विदितात्माओं को चिन्हों से यह तीर्थ जानना चाहिये कुब्जाम्रक में एक अन्य भागवत प्रिय मानसर नाम तीरथ कहता हूँ हे वरारोहे ! में स्नान करने वाले मानस सर को जाते हैं रुद्र इन्द्र मरुद्गणों सहित सब देवताओं को देखते हैं और इस तीर्थ में निवास जो प्राणों को छोड़ते हैं वे समस्त संग विनिर्मुक्त हो विष्णु क जाते हैं जिससे मनुष्य उस तीरथ को जानें वह चिन्ह कहता यह तीरथ पञ्चाशत क्रोश विस्तृत तथा पुरुषों को दुरासद है इस स सर को मेरे कर्मों में निष्ठित शुद्ध भागवत ही इसे जान ते हैं यह मानस सर तीर्थ कुब्जाम्रक क्षेत्र मेरे कर्मों में गया है यह सिद्धि की इच्छा वाले रैभ्य को मैंने सुनाया था सुन्धरे ! तुझे और भी सुनाता हूं तू सुन ॥६६॥१००॥ ०१॥१०२॥१०३॥१०४॥१०५॥१०६॥१०७॥१०८॥ उस

कुब्जाम्रक में एक अद्भुत समाचार हुआ है उसे सुनिये। मेरी निर्माली के पास एक सर्पिणी रहती थी और यदृच्छा से गन्ध, माल्य, नैवेद्यादि खाती रहती थी कि किसी समय एक नेवला वहाँ आया और उसने यदृच्छा से रमती हुई सर्पिणी को देखा उस सर्पिणी का उस नकुल के साथ युद्ध हुआ, माघ मास द्वादशी दिन मध्याह्न समय में युद्ध करने पर उस सर्पिणी ने नेवले को मारने के हेतु डस लिया, विष से पीड़ित होकर नेवले ने भी शीघ्र सर्पिणी को मार गिराया। दोनों के आपस में लड़ने पर दोनों ही मर गये, सर्पिणी प्राग् ज्योतिषपुर में यशस्विनी राजपुत्री हुई है और नकुल कौशलाधिपति पुत्र हुआ है। हे देवि! वह रूपवान गुणवान् तथा सर्व शास्त्र कलाओं के जानने वाला हुआ है वे दोनों बहुत समय तक सुखपूर्वक यथा समय शुक्ल पक्ष के चन्द्रमा के समान बढ़ने लगे वह कन्या नकुल को देखकर शीघ्र मारना चाहती थी ॥१०६॥११०॥१११॥११२॥११३॥११४॥ ॥११५॥११६। और राजपुत्र सर्पिणी को देखकर सहसा मारने की चेष्टा करता था समय आने पर उस कौशलाधिपति राजपुत्र ने उस प्राग् ज्योतिप कन्या का विधिवत पाणिग्रहण मेरे प्रसाद से किया है कौशलाधिपति तथा राजा प्राग् ज्योतिप ने मेरे प्रसाद से बड़ी धूम धाम से विवाहोत्सव मनाकर सम्बन्ध जुड़ाया, उन दोनों की आपस में दृढ़ प्रीति हुई है। जिस प्रकार जतु और काष्ट की धूमकेतु और अग्नि की, सचि और इन्द्र की जिस प्रकार प्रीति हुई है उसी प्रकार उनकी भी आपस में दृढ़ प्रीति क्षीण नहीं हुई एवम् प्रकार वे विहार करते हुये बगीचों में घूमा करते थे। समुद्र तट के समान अविछिन्न रूप से निवास करते थे इस प्रकार प्रीति पूर्वक रहते हुये उनको सतहत्तर वर्ष व्यतीत हो गये। परन्तु विष्णु माया से मोहित होकर उन्होंने अपनी आत्मा को नहीं पहिचाना। तदनन्तर वे दोनों दम्पति एक दिन बगीचे

में विहार कर रहे थे कि राजपुत्र एक सर्पिणी को देखकर मारने को तय्यार हो हुआ ॥११७॥११८॥११९॥१२०॥१२१॥१२२॥ ॥१२३।१२४॥ विनिता पुत्र गरुण सर्पों को देखकर ही मारता है। इस प्रकार रानी के रोकने पर भी उस राजपुत्र ने सर्पिणी को मार डाला, तदनन्तर वह रानी क्रोधित हो राजपुत्र से बोली तक नहीं तब उसी समय राजकन्या के समक्ष बिल से एक नेवला निकल कर आहार के लिये सर्प की इच्छा करते हुये नेवला को हृष्ट पुष्ट तथा शुभ दर्शन चलते हुये देखकर राजकन्या उसको क्रोध से मारने को उद्यत हुयी। राजपुत्र ने प्राग् ज्योतिष कन्या बहुत रोकी परन्तु उसने नेवले को मार ही दिया तदनन्तर माङ्गल्य शुभ दर्शन नेवले को मारा हुआ देख राजपुत्र कुपित होकर राजकन्या से कहने लगा कि स्त्रियों का सर्वदा भर्ता मान्य है मेरी आज्ञा उल्लंघन करके तूने मेरे रोकने पर भी राजाओं का मांगल्य रूप शुभ दर्शन दर्शनीय प्रिय नेवले को किस लिये मारा है। इस प्रकार पति के वचन सुनकर राज कन्या ने क्रोध में अपने पति से कहा ॥१२५॥१२६॥१२७॥१२८॥१२९॥१३०॥ ॥१३१॥१३२॥ जिससे कि बारबार रोकने पर भी आपने सर्पिणी को मारा है। अतः मैंने भी सर्प घातक नेवले को मारा है। राजकन्या के वचन सुनकर राजपुत्र कटुक वचनों से झिड़कता हुआ अपनी प्रिय पत्नी से कहने लगा कि हे भद्रे! सर्प तीव्र विष वाला है तीक्ष्ण द्रंष्ट्र वाला है। वह दुष्ट मनुष्यों को डसता है अतः जिससे मनुष्य सर्प को मारते हैं अतएव मैंने भी यह अहितकारी विष वाला सर्प मारा है हे भद्रे! हम प्रजापाल कहे जाते हैं जो कोई कुमार्ग में स्थित हैं उन सबको हम यथोचित तीव्र दण्ड देते हैं। जो अपराध सहित साधुओं को तथा स्त्री को भी मारते हैं वे कर्मकार मनुष्य राजधर्म के अनुसार दन्ड तथा मारने योग्य है मुझे भी राजकर्म में राजधर्म करना चाहिये नेवले ने क्या अपराध किया था।

वह मुझे बताइये। दर्शनीय स्वरूप राजाओं के पालने योग्य मांगल्य तथा पवित्र नकुल तूने किस लिये मारा है ।१३३॥ ॥१३४॥१३५॥१३६॥१३७,१३८॥१३६॥१४०॥ मेरे रोकने पर भी तूने नकुल मारा है अतः तू मेरी भार्य्या नहीं है और मैं तेरा पति नहीं हूं। स्त्री अवध्य कही गई हैं अतः मैं तुझे नहीं मारता हूं इस प्रकार कह वह राजपुत्र नगर को लौट आया और क्रोध से आपस का प्रेम नष्ट हो गया इस प्रकार बहुत समय बीतने पर उस कौशलाधिपति ने नकुल तथा सर्प की सारी वध की कथा तथा उस दम्पति का आपस में क्रोध पूर्वक प्रेम विछोह सुनकर अपने कञ्चुकी तथा मन्त्रियों को कहा कि, शीघ्र मेरे पुत्र तथा पुत्रवधू को यहाँ बुला लाइये ॥१४१॥१४२॥१४३। १४४। १४५॥ तदनन्तर राजा के प्रिय राज भृत्य उस राजा की आज्ञा को पाकर शीघ्र पुत्र और पुत्रवधू को आदर पूर्वक जहाँ राजा था, वहीं बुलाकर राजा को दिखाने लगे। पुत्र और पुत्रवधू को देखकर राजा कहने लगा, हे पुत्र! आपका वह प्रेम कहाँ चला गया स्नेह कहाँ गया विरुद्धाचारी क्यों हुये हो, जो आपकी आपस में जतुकाकाष्ट के समान प्रीति थी, दर्पण में अपने प्रतिविम्ब के समान दीखते थे, वह प्रेम कहाँ चला गया, जो पहिले आपका वधू में अविच्छिन्नि प्रेम था वह क्यों नष्ट कर दिया वह राजवधू दक्ष है, सुशीला है, धर्मिष्ठा है तू इसको छोड़ने के योग्य नहीं है ॥१४६। १४७ १४८॥१४६॥१५०॥ इस वधू ने पहिले कभी भी कुटम्ब में अप्रिय भाषण नहीं किया है यह वधु मिठाई पकाने में चतुर है तुझे वधू का त्याग नहीं करना चाहिये धन पूर्वक तेरा धर्म है और वह स्त्रीकृत है अहो! पुरुषों का सत्य, वह तो सुत तथा कुल स्त्रियों से हुआ करता है हे वसुन्धरे! तदनन्तर पिता के वचन सुनकर राजपुत्र पिता के दोनों चरण पकड़कर कहने लगा हे तात! वधू में कोई भी दोष नहीं है किन्तु मेरे रोकने पर भी इसने मेरे सामने नेवले को मारा है।

तब नेवले को मरा देख मुझे गुस्सा आया और गुस्से में मैंने इसे ऐसा कहा कि तू मेरी भार्या नहीं है और में तेरा पति नहीं हूँ। हे राजन्! यही कारण है और कुछ नहीं तदनन्तर पति के वचन सुनकर राजपुत्री शिर से प्रणाम कर यह वचन बोली कि, अपराध रहित डरा हुआ सांप बारबार रोकने पर भी इन्होंने शीघ्र मार गिराया है। तब सर्प वध देखकर क्रोध से सन्तप्त मन होकर मैंने कुछ न कह नेवला मारा है पुत्र और वधू के वचन सुनकर कौशलाधिपति सभा में दोनों को मधुर वाक्य कहने लगा ॥१५१॥१५२॥१५३॥१५४। १५५॥१५६॥१५७। १५८॥१५६। ॥१६०॥ इसने सर्प मारा और तूने नेवल मारा है अब कहिये कि आपस में क्रोध क्यों कर रहे हो, हे पुत्र! नकुल के मारने र तुझे क्रोध क्यों आ रहा है हे राजपुत्र! सर्प मारने पर तुम्हें क्यों क्रोध आया है। इस प्रकार पिता के वचन सुनकर कौशलेश्वर नन्दन मधुर वचन बोला कि, इस प्रश्न से क्या प्रयोजन यह पूछना तुम्हें योग्य नहीं है। हे महाराज! इसे पूछिये काय चिष्टा मानी जायगी पुत्र के वचन सुन कौशलेश्वर धर्म संयोग साधन रूप मधुर वचन बोला कि हे पुत्र! जो तेरे मन में है वह कहिये प्रीति विच्छेद का कारण कहिये सब कामों में निष्ठा वाले सम्बन्धित पुत्र पिता के पूछने पर जो गुप्त बात भी छिपाता है वह पुत्राधम है। सच हो, या झूठ हो जो अपने पिता के पूछने पर नहीं कहता वह घोर तप्तवालु वाले रौरव नरक को गिरता है पिता के पूछने पर जो पुत्र शुभाशुभ सब कह देते हैं वे सत्यवादियों की दिव्य गति को प्राप्त करते हैं। अतः जिस दोष से आपकी प्रीति नष्ट हुई है वह अवश्य मुझे सुनाइये ॥१६१॥१६२॥१६३। ॥१६४॥१६५॥१६६ ।१६७॥१६८॥१६६॥१७०॥ पिता के वचन सुनकर राजपुत्र राजसभा में ही मधुर वाणि से बोला कि, यह सब लोग अपने घर चले जावें, प्रातः काल में आपको वह अवाश्यक वक्तव्य सुनाऊँगा प्रातः काल भेरी, नगाड़े आदि बाजों

के शब्दों से तथा सूत मागध वन्दियों के गानों से राजपुत्र उठा और स्नान कर राजद्वार पर पहुँचा तब कञ्चुकी ने राजा के पास जाकर निवेदन किया कि आपके दर्शन की इच्छा से आपका पुत्र दरवाजे पर खड़ा है। कञ्चुकी का वचन सुनकर कौशलेश्वर ने कञ्चुकी से कहा कि, पुत्र को शीघ्र प्रवेश करवाइये, राजा की आज्ञा पाकर कञ्चुकी ने राजपुत्र को प्रवेश करवाया राजपुत्र पिता के घर में प्रवेश करके शिर से चरणों में वन्दना की, राजा ने कहा–बैठ जा जीता रह, तथा जय हो ॥१७१॥१७२॥१७३॥ १७४॥१७५॥१७६॥१७७॥१७८॥ जनों से पिता पुत्र एकत्र स्थित जानने चाहिये, तदनन्तर हर्षित अन्तरात्मा से राजा हंसकर पुत्र को कहने लगा कि, हे पुत्र ! जो मैंने पहिले पूछा था, वह कहिये, जो कि आपने अपने प्रीति विच्छेद का कारण छिपा रखा है, वह कहिये, तब राजकुमार पिता से कहने लगा कि, हे महाराज ! वह गुप्त प्रीति विच्छेद कारक रहस्य आपके पूछने पर अवश्य कहूँगा, हे महाराज ! जो आप इस गुप्त रहस्य को सुनना चाहते हो तो, कुब्जाम्रक तीर्थ में मेरे साथ चलिये, वहाँ जाकर यह गुप्त रहस्य आपको सुनाऊँगा ॥१७६॥१८०॥१८१॥ १८२॥१८३॥१८४॥ तदनन्तर पुत्र के वचन सुन पुत्र प्रेम से राजा ने कहा कि अच्छा ऐसा ही करेंगे, राजपुत्र के चले जाने पर जो वहाँ आये थे, उन मन्त्रियों के समक्ष राजा ने मधुर वाक्य कहा कि, हे मन्त्रियो ! मेरा वचन सुनिये हमने निश्चय कर लिया है, कुब्जाम्रक क्षेत्र में जाना चाहते हैं, उसका साधन शीघ्र सम्पादन कीजिये, हाथी घोड़े सजाइये, राजा के वचन सुनकर उन्होंने कहा कि अच्छा शीघ्र कर लिया समझो, ऐसा कहकर मात रात्रि में सर्व साधन सम्पादन कर हाथी घोड़े पशु यानादि कार्षापणक, धेनुक, सुवर्ण, रत्न, वस्त्र, अन्न तथा और भी योग्य सामग्री सम्पादन करके, वे राजा के पास आकर कहने लगे कि हे राजन् ? सब साधन तय्यार करलिये हैं ।।१८५॥१८६

॥१८७॥१८८॥१८९॥१९०॥ हे वसुन्धरे ! तदनन्तर वह राज सार्दूल पुत्र से कहने लगा कि, हे पुत्र ! हम शून्य राज्य को छोड़कर किस प्रकार जायँगे, पिता के वचन सुनकर राजपुत्र पिता के चरण पकड़कर मधुर वाक्य बोलने लगा, हे जनक ! यह एक ही उदर से पैदा हुआ मेरा छोटा भाई है, इसको यथा न्याय मे राज्य दीजिये पुत्र के वचन सुनकर राजा ने कहा कि जेष्ट पुत्र के होते हुये कनिष्ठ को किस प्रकार राज्य दिया जाय, तब पिता के वचन सुनकर राजपुत्र धर्म कारण पिता से मधुर वचन बोला कि, हे तात ! मैं जानता हूँ छोटे भाई को राज्य देने से किंचित मात्र धर्म की क्षति नहीं है, मैं कुब्जाम्रक क्षेत्र में जाकर वापिस नहीं आऊँगा, हे तात ! यह धर्म तथा सत्य आपको सुना लिया है, जेष्ठ पुत्र से आज्ञा पाकर राजा ने कनिष्ठ पुत्र को राजगद्दी पर अभिषिक्त किया ॥१९१॥१९२॥१९३॥१९४॥१९५॥१९६॥१९७॥१९८॥ तब बहुत समय पश्चात् अन्तः पुर तथा सर्व द्रव्य सहित कुब्जा म्रक क्षेत्र में पहुँचा, वहाँ तीर्थ विधि करके अनेक दान देकर अन्न वस्त्र सुवर्ण गौ हाथी घोड़े पृथ्वी का दान देकर बहुत समय व्यतीत होने पर कदाचित राजा नें उपस्थित हुये पुत्र को गुप्त दम्पति का प्रीति विच्छेद कारण पूछा, हे वत्स ! यह विष्णु के चरणों से अङ्कित पवित्र स्थान है, इसमें विधि पूर्वक धन रत्नादि दान दे दिये हैं, अब सच कहिये कि, जिस लिये तूने कुल शील तथा गुण वाली अदुष्ट कारिणी सुन्दरी वृथा ही त्यागी है, हे पुत्र ! वह गुप्त समाचार सुनाइये, तब राजपुत्र ने राजा से कहा कि, इस समय रात्रि है, सुख पूर्वक शयन कीजिये, कल प्रातःकाल वह सब कह दूँगा, तदनन्तर रात्रि के व्यतीत हो जाने पर सूर्य के उदय होने पर, गंगा में स्नान कर निर्मल वस्त्र पहिन विधिपूर्वक मेरा पूजन करके, गुरु वत्सल राजपुत्र ने पिता की परिक्रमा कर यह वचन कहा—हे तात ! जो आप गुप्त रहस्य पूछते हो, चलिये, जो आपने पहिले पूछा है, वह तत्व से सुनिये ॥१९९॥२००॥२०१॥२०२॥२०३॥२०४॥२०५॥२०६॥२०७॥२०८॥ राज-

पत्र और राजा तथा वह पङ्कज लोचना राजपुत्र वधू निर्माल्य कूट के पास जाकर जहां पर पुरातन वृत हुआ था निर्माल्य के पास जाकर राजपुत्र पिता के चर्ण छूकर कहने लगा कि हे महाराज ! मैं पूर्व जन्म में नेवलथा और कदली वृक्ष के तले निवास करता था कदाचित् काल से प्रेरित हो निर्माल्य कूटक के समीप आ पहुँचा हूँ । तदनन्तर हे जनाधिप ! विविध सुगन्धित पुष्पों को खाती हुई सर्पिणी यहां घूम रही थी उस महा व्याली सर्पिणी को देखकर मुझे क्रोध आया और शीघ्र ही काल प्रेरित होकर सर्पिणी के समीप पहुंचा । फिर सर्पिणी का और मुझ नकुल का घोर युद्ध हुआ उस दिन माघ मास की द्वादशी थी हमें कोई नहीं देख रहा था । युद्ध करते हुये मैं अपने गात्र को छिपा रहा था कि सर्पिणी ने मेरी नासिका वंश में डस दिया और विष से पीड़ित होकर मैने भी वह सर्पिणी मार डाली तब दोनों ही प्राणों को छोड़ पञ्चत्व को प्राप्त हुये हैं ।२०६॥२१०॥ ॥२११॥२१२॥२१३॥२१४॥२१५॥२१६॥ हे राजेन्द्र ! उस समय मरकर क्रोध मोह से युक्त हो मैं आपका पुत्र हुआ हूँ उसी पूर्व जन्म के क्रोध से मैंने सर्प को मारा है हे राजन् ! जो आपने पूछा था यह गुप्त आपको सुना दिया है । राजपुत्र के वचन सुकर वधू कहने लगी हे महाराज ! मैं पहिले इस निर्माल्य कूटक में सर्पिणी थी, और युद्ध करने पर नकुल ने मुझे मार गिराया है । मरकर प्रग ज्योतिष कुल में पैदा होकर आपकी पुत्रवधू हुई हूँ । हे नृपते ! उसी क्रोध से मरण के प्रति मूर्छित होकर मैंने नकल को मारा है । हे प्रभो ! यही पूर्व जन्म का गुप्त वृतान्त है यह आपको सुना दिया । वधू तथा पुत्र के वचन सुनकर राजा माया तीर्थ में जाकर पञ्चत्व को प्राप्त हुआ है और राजपुत्र तथा राजपुत्री पुण्डरीक तीर्थ में जाकर पञ्चत्व को प्राप्त हुये हैं । और जहां जनार्दन भगवान् हैं उस परम स्थान को प्राप्त हुये हैं । हे वसुन्धरे ! वह राजा राजपुत्र और राजपुत्र

सुनोव केवल दाक्षित भक्तों को सुनावे। जो इसको प्रातः उठकर पढ़ता है वह इक्कीस कुल के पितरों को तार देता है इसको पढते हुये जो प्राणों को छोड़ता है वह चतुर्भुज रूप हो मेरे विष्णु लोक को जाता है। हे भूमे! भक्त सुख के लिये यह कुब्जाम्रक क्षेत्र माहात्म्य सुना दिया है। और क्या पूछना चाहती है ॥२२७॥२२८॥२२९॥२३०॥२३१।२३२॥२३३॥२३४। इति श्री वाराह पुराणे कुब्जाम्रक माहात्मे रैभ्यानुग्रहणम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम षड़ विंशत्यधिक शत तमो अध्याय ॥१२६॥

अथः एक सौ सत्ताइसवां अध्याय

दोहा:— इक सौ सत्ताइस कहा, ब्राह्मण दीक्षा विधान।
भली भांति समुझाय सब, धरणी सों भगवान ॥

अथः ब्राह्मण दीक्षा सूत्र वर्णनम्— सूत ने कहा— इस प्रकार मोक्षादि देने वाले धर्मों को सुनकर पृथ्वी लोकनाथ जनार्दन से कहने लगी। अहो! कहे गये इस समग्र कुब्जाम्रक क्षेत्र का बड़ा ही प्रभाव है। इस क्षेत्र माहात्म्य कथा को सुनने से अतिशय भार पीड़ित हुई भी मैं हल्की हो गई हूँ। दौड़ती हुई, मोह रहित तथा विशुद्ध हो गई हूँ। हे प्रभो! आपके मुख

से निकलकर सर्व लोकों में विख्यात हो गई हूँ। हे देव! मैं फिर भी धर्म युक्त संशय पूछती हूं। जिस धर्म विधान से कि, मनुष्य समग्र दीक्षा को प्राप्त करता है। मुझे बड़ा कौतूहल है। अतः आप धर्म से गूह के लिये अवश्य परम गुप्त रहस्य मुझे सुनाइये ।१।।२। ३।।४।।५।। पृथ्वी के वचन सुनकर वाराह रूपी भगवान् गम्भीर मेघ वाणि से वसुन्धरा को कहने लगे ।।६।। श्री वाराह ने कहा– हे देवि! तत्व से मेरे सनातन धर्म को सुनिये इस धर्म को देवता तथा जो योग व्रत में स्थित है वे भी नहीं जानते, हे वरारोहे! इस मुख से निकले माङ्गल्य धर्म को, एक मैं जानता हूँ। तथा पृथ्वी मे जो मेरे भक्त है वे भी जानते हैं। हे भद्रे! जो तू मुझसे भागवती दीक्षा कथा पूछ रही है उस कर्म संसार मोचक कथा को सुनिये। जो कोई चातुर वर्ण्य विधान से मुझसे कही सुखावह दीक्षा प्राप्त करता है, उसे सुनिये। हे सुन्दरि! मेरे में शान्त मन करके मनुष्य जिस दीक्षा के द्वारा गर्भ संसार सागर से तर जाते हैं। उस उत्कृष्ट दीक्षा को सुनिये ।।७।।८।।६।। ।।१०।।११।। हे देवि! दीक्षा ग्रहण करने वाला मनुष्य गुरु के पास जावे और कहे कि, हे गुरो! मै आपका शिष्य हूं। मुझे शिक्षा दीजिये, तब गुरु की आज्ञा ग्रहण दीक्षा योग्य द्रव्यों को एकत्रित करे, लाजा यानी साटी के खील मधु तथा कुशा और अमृत समान घृत, गन्ध, धूप, दीप नैवेद्य कृष्णाजिन पलाश और दन्ड, कमन्डलु, कलश, वस्त्र, खड़ाऊँ, शुल्क, यज्ञोपवीत यंत्रिका अर्घ पात्र चरुस्थली, दूर्वा, तिल व्रीहि, जौ, विविध फलोदक, भक्ष्य, भोज्य, अन्नपानादि तथा कर्मण्य पदार्थों को एकत्रित करे। जिनको कि, मेरे कर्म परायण दीक्षित मनुष्य खाते हैं। अनेक प्रकार के बीज, तथा अनेक प्रकार के रत्न, तथा काकादियों को एकत्रित करे १२।।१३।।१४।।१५।।१६।। ।।१७।। पूर्वोक्त ये सब वस्तु गुरु के समीप ले आवे। सब

वस्तु लाकर दीक्षा की इच्छा वाला ब्राह्मण माङ्गल पूर्वक स्नान करे फिर गुरु के चरण पकड़कर कहे कि गुरु जी ! कहिये कि आपका क्या कार्य करूं । पुनः गुरु से आज्ञा पायकर ब्राह्मण वर्ण की दीक्षा के लिये चोकोर सोलह हाथ परिमित वर्ग वाली वेदी बनावे, उस वेदी में धान्य के ऊपर नया मजबूत कलश विधि विधान से स्थापित करे । उस कलश को जल से भर लेवे । पुष्प तथा पल्लवादि से सुशोभित करे । फिर उस कलश के ऊपर विधान से तिलों का पूर्ण पात्र स्थापित करे । फिर गुरु शिष्य मे एकत्रित किये गये द्रव्यों से मेरा पूजन करे ।१८। ।१६।२०।।२१ २२।। विधि पूर्वक पूजन करके पूर्वोक्त द्रव्यों को वेदि के मध्य में स्थापित करे । हे सुन्दरि ! चारों ओर चार कलश स्थापित करे पुनः द्विज तथा शुक्ल कलशों को जल तथा आम्र पल्लवों से विभूषित करे तथा चारों ओर से शुक्ल सूत्र से वेष्ठित करे । और चारों ओर चार पूर्ण पात्र रखे । एवम् प्रकार करके दीक्षा प्रयोजक मन्त्र देवे । और गुरु कर्म परायण होकर शिष्य यथा न्याय पूर्वक उस मन्त्र को गृहण करे जिससे कि गुरु प्रसन्न हो जाय । विष्णु मन्दिर में जाकर दीक्षा चाहने वालों का यथा न्याय स्पर्श कर आचमन करके पूर्व मुख हो, सब शिष्यों को दीक्षा सुनावे ॥२३॥२४॥२५॥२६॥२७॥२८। जो स्वयम् भक्त होकर भगवान के भक्तों का अभ्युत्थानादि सत्कार नहीं करता है वह मेरी हिंसा करता है । कन्या देकर फिर उसको कर्म से उपपादन न करे तो उसने निसन्देह आठ पितृगण की हिंसा की है जो निर्घृण साध्वी प्रिय सखी भार्या की हिंसा करता है वह दुष्ट योनिज हिंसक उस हिंसा कर्म करने मे उसको नहीं प्राप्त करता हे ब्रह्म हत्या, गौ हत्या करने तथा [illegible] कृत पातक तथा अन्य पातक करने वाले शिष्यों को त्याग देना चाहिये [illegible] ॥३०॥ ३१॥३२॥ बिल्व वृक्ष उदुम्बर वृक्ष तथा अन्य [illegible]

वृक्ष हैं उनको कभी छेदन न करे यदि मोक्ष धर्म सनातन धर्म परमसिद्ध की इच्छा करे तो शिष्य को भक्ष्याभक्ष्य का ज्ञान सिखावे करीर का वध शुभ कहा है अदुम्बर के फल शुभ कहे हैं किसी सचो भची होवे पूति वासिका अभक्ष्य कहे हैं वाराह माँस तथा मत्स्य मांस दीक्षित ब्राह्मण को कभी नहीं खाना चाहिये परापवाद न करे दूसरे की हिंसा न करे पैशुन्यता न करे चोरी न करे दूर से आये अतिथी को देख यथा योग्य सत्कार करना चाहिये गुरु पत्नी तथा ब्राह्मण की स्त्री के साथ कभी मन से भी गमन न करे यह विष्णु भगवान कहते हैं सुवर्ण आदि रत्न तथा योवना स्त्री में कभी मन नहीं लगाना चाहिये विष्णु भगवान कहते हैं ॥३३॥ ३४।३५॥३६॥३७॥३८॥३९ ४०॥ दूसरे के भाग्य को तथा अपने व्यसन देख कर क्रोध नहीं करना चाहिये यही सनातनधर्म है हे वसुन्धरे ! दीक्षा की इच्छा वाले ब्राह्मण को इस प्रकार दीक्षा देवे छत्र तथा जूते-दीक्षा वाले को मन से कल्पित करने चाहिये अदुम्बर के दो दो पत्ते वेदि मध्य में स्थापित करे हे वरारोहे ! जल पूर्ण पात्र तथा उस्तरा स्थापित करके आवाहन पूर्वक विधि निर्दिष्ट मन्त्र से मेरा पूजन करे मन्त्रः—"सप्त सागरा श्चेति तथा भगवान वासुदेवेत्यादि" दो मन्त्रों को पढ़ कर शिर तथा घुटनों के बल पृथ्वी पर लेट जावे । स्वागतम् स्वागतवानिति इस मन्त्र से अर्घ्य पद्य ग्रहण कर विधि निर्दिष्ट मन्त्र से अर्घ्य पद्य देवे मन्त्रः— "अकृतघ्ने देवानुसुरा कृतघ्न रुद्रेणेत्यादि" मन्त्र पढ़कर पृथ्वी को पाद्यार्घ्य देवे पुनः छुरी ग्रहण कर यह मन्त्र पढ़े ॥४१ ४२॥४३।४४ ४५। ४६॥४७॥४८॥४९॥५०॥ मन्त्रः—एवम् वरुण पातुशिष्यते वपतशिरः इत्यादि मन्त्र पढ़कर कर्मकार को कलश देवे पुनः नाई उस दीक्षा ग्रहण करने वाले के शिर के सारे बाल बनावे बाल बनाते समय खून न निकाले फिर शीघ्र स्नान करे हे सुन्दरि ! दीक्षा चाहने वाले का इस प्रकार कर्म कराकर

सर्व काम से विनिश्चित हो संसार मोक्ष के लिये दीक्षा देवे घुटनों के बल खड़ा होकर निम्नोक्त मन्त्र पढ़े मन्त्रः—मैं सब भागवतों को जानता हूँ तथा सुदीक्षित गुरुओं को भी जानता हूँ विष्णु प्रसाद से मैंने दीक्षा प्राप्त करली है उन सब गुरु तथा भागवतों को प्रणाम करता हूँ वे सब मेरे ऊपर प्रसन्न होवे भगवान् के भक्तों को प्रणाम कर अग्नि प्रज्वलित करके मधु मिश्रित घृत से अथवा लाजा और काले तिलों से सातबार आहुति देव और बीस आहुति तिलोदिन की देवे पुनः घुटनों के बल खड़ा होकर यह निम्नोक्त मन्त्र पढ़े मन्त्रः—अश्विनो दिशः सोम सूर्यो इत्यादि सत्य से पृथ्वी धारण की जाती है सत्य से पृथ्वी स्थित है सत्य से सूर्य चलता है सत्य से वायु चलती है इस प्रकार सत्य करके ब्राह्मण का दर्शन करेक और विधि पूर्व मन्त्र से पूजन करता हुआ गुरु को प्रसन्न करे ।५१॥५२॥५३॥५४ ।५५ ।५६॥५७॥५८ ५६॥६०॥ भागवत गुरु देव की तीन परिक्रमा करके गुरु के चरण पकड़ यह निम्नोक्त मन्त्र पढ़े मन्त्रः—गुरु देव की प्रसन्नता से मैंने यह इच्छा पूर्वक दीक्षा प्राप्त करली है मैंने जो कुछ अपराध किया है गुरु क्षमा करे हे सुन्दरि! शिष्य इस प्रकार गुरु को प्रसन्न कर मन्त्र से वेदिमध्य में स्थापित कर पूर्व मुख हो जिससे कि शिष्य ही को देख कंमडलु तथा शुक्ल यज्ञो पवीत ग्रहण कर यह मन्त्र पढ़े मन्त्रः—विष्णु प्रसादेन गतो-सिसिद्धि मित्यादि तदन्तर मुख पद करके तथा गुरु से दीक्षित हो सर्व प्रदक्षिणा करके यह निम्नोक्त मन्त्र पढ़े मन्त्रः—अधोऽधो भूत्वा इत्यादि मन्त्र से मुख पद करे एवम प्रकार वस्त्र ग्रहणकरे पुनः गुरु कहे कि हे वत्स! इस लोक विख्यात सर्व कर्मों में सोदन रूप कंमडलु को ग्रहण कीजिये मन्त्रः—गृह्वी स्वगन्ध पात्राणि इत्यादि पढ़े ॥६१॥६२ ६३॥६४॥६५॥६६॥६७॥६८॥६६॥७०॥ और मधु पर्क

ग्रहण कर यह मन्त्र पढ़े मन्त्रः—गृह्वाण मधुपर्कमित्यादि तदनन्तर गुरु के चरण पकड़ कर यत्न पूर्वक गुरु को प्रसन्न करे हाथ जोड़ कर शिर मे नमस्कार करे सावधान हो एकाग्र मन से गुरु के उपदेश को ग्रहण करके यह निम्नोक्त मन्त्र पढ़े मन्त्रः—शृणवन्तु में भावगताश्च सर्वे इत्यादि सब भक्त सुने गुरु ने मेरे सर्व काम क्षय कर दिये हैं मैं दास भूत शिष्य देव समान गुरु की शरण में हूँ हे वसुन्धरे! यह ब्राह्मण दीक्षा विधि कह दी है अब तीनों वर्णों की दीक्षा विधि सुनिये हे वसुन्धरे ! इसी विधान से गुरु दीक्षा देवे तो गुरु और शिष्य दोनों ही सिद्धि को प्राप्त करते हैं ७१॥७२॥७३॥७४॥७५॥ इति श्री वाराह पुराणे ब्राह्मण दीक्षा सूत्रम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् सप्तविंशत्यधिक शततमोऽध्याय ॥१२७॥

॥ अथः एक सौ अठाइसवांऽध्याय ॥

दोहा—इक सौ अठाईस कहूँ, तीनों वर्ण विधान।
दीक्षित हो पूजन करें, मिले शीघ्र भगवान ।

अथः केकताञ्जन दर्पणम्—वराह ने कहा—हे वसुन्धरे ! अब क्षत्रिय दीक्षा सुनाता हूं वह सुनिये जो पहिले सीखे थे उन सब हथियारों को छोड़ कर हे भूमे ! मेरे पूर्वोक्त मन्त्र से क्षत्रिय की दीक्षा करे मैंने पहिले जो कुछ सामग्री कही हैं उनमें एक को छोड़ सब सामग्री एकत्रित करे क्षत्रिय को कृष्ण मृग का चर्म दीक्षा समय कभी न देवे तथा पलास दण्ड न करे क्षत्रिय को कृष्ण छाग चर्म पहिनावे तदनन्तर क्षत्रिय दीक्षा में अवश्य दण्ड काष्ट देवे द्वादश हस्त परिमित वेदी बनाकर उस वेदी का लेपन करे ॥१॥२॥३॥५॥५॥जो मैंने पहिले कहा है वह सब कुछ करे एवम् प्रकार क्षत्रिय

दीक्षा में सर्व समग्री सम्पादन करके मेरे चरण ग्रहण कर इस निम्नोक्त मन्त्र को पढ़े मन्त्रः—हे विष्णो ! मैंने सब शस्त्र त्याग दिये हैं तथा सब क्षत्रिय कर्म त्याग दिये हैं विष्णु भगवान की शरण हूँ देह धारियों के संसार से मेरा उद्धार कीजिये इस प्रकार मेरे समीप वचन कह पुनः दोनों चर्णों को पकड़ कर यह निम्नोक्त मन्त्र पढ़े मन्त्रः—हे देव ! देव मैं शस्त्रों को नहीं-छूता हूँ दूसरे की निन्दा नहीं करता हूँ आपके कहे हुये संसार मोक्षण कर्म करता हूँ इस प्रकार कह कर यथोक्त विविध धूप दीप नैवेद्य पुष्पादियों से मेरा पूजन करे ।।६।।७।।८।।६।।१०।११।। हे वसुन्धरे ! तदनन्तर वह दीक्षा कांक्षी क्षत्री यथोक्त विधान से शुद्ध भागवतों को भोजन करावे हे देवि ! यह क्षत्री की दीक्षा कहदी है यदि परम सिद्ध की इच्छा हो तो क्षत्रिय वर्ण मेरे प्रसाद से अवश्य दीक्षा गृहण करे ।।१२।।१३।। हे सुन्दरि ! अब जिस प्रकार वैश्य की दीक्षा होती है वह सुनाता हूँ मेरे कर्मों में व्यग्र हो वैश्य कर्मों को छोड़कर जिस प्रकार तृतिय वर्ण वैश्य सिद्धि को प्राप्त करता है वह सुनिये ।।१४।।१५।। जो मैंने पहिले कही है वह सब सामग्री सम्पादन कर वेदोक्त विधान से दस हस्त परिमित वेदी बनावे ।।१६।। वेदी को गोमेय से लेपन करे वैश्य अपने गात्र को छात्र चर्म से वेष्टित करे ।।१७।। दाहिने हाथ में उदूम्बर का दण्ड काष्ट गृहण करके शुद्ध भगवान के भक्तों की तीन परिक्रमा करे ।।१८।। घुटनों के बल खड़ा होकर यह मन्त्र पढ़े ।।१६।। मन्त्रः—हे भगवन मैं सारे वैश्य कर्म को छोड़कर संसार वन्धन छेदन करने वाले आपके पास आया हूं मैं वैश्य हूँ आपके प्रसाद से मैंने दीक्षा गृहण करली है ।

आप मेरे ऊपर प्रसन्न हो जाइये ॥२०॥ इस प्रकार मेरी प्रार्थना करने पर गुरु के चरण पकड़ कर यह मन्त्र पढ़े। "कृषि गौ रत्ता वाणिज्य, क्रय- विक्रय छोड़कर आपके प्रसाद से मैंने विष्णु दीक्षा प्राप्त करली है ॥२१॥२२॥ पहिले देवताओं को नमस्कार करे। तदनन्दर भक्तों को अपराध रहित भोजन करावे ॥२३॥ मेरे मार्गानुसारी वैश्यों की यह दीक्षा है जिसके ग्रहण करने से वैश्य घोर संसार सागर से छूट जाते हैं ॥२४॥ हे वरांगने ! अब मेरे भक्त शूद्र, की दीक्षा भी कहता हूँ। जिस दीक्षा के ग्रहण करने से शूद्र सब पापों से छूट जाता है ॥२५॥ पूर्वोक्त सर्व संस्कार द्रव्य दीक्षा कांक्षी शूद्र के लिये सम्पादन करे। आठ हस्त परिमित वेदी बनाकर, गोमय से लेपन कर सामिग्री समीप में स्थापित करके, शूद्र के लिये नीले छाग का चर्म कल्पित करे, वैष्णव दन्ड देवे, नील वस्त्र पहिनावे, एवम् प्रकार शूद्र भी दीक्षा के परम कल्याण को गृहण कर मेरी शरण में आ, यह मन्त्र पढ़े मन्त्रः— मैं शूद्र हूँ शूद्र कर्मों को छोड़कर तथा अभक्ष्य को छोड़कर भक्ष्या- भक्ष्य को छोड़कर तदनन्तर शूद्र दीक्षाभिकांक्षी को इस प्रकार कहे। २६॥२७॥२८ २९॥३०॥ सर्व पापों से मुक्त हो गतस्पृह हो गुरु के दोनों चरण पकड़कर गुरु की प्रसन्नता के लिये, यह मन्त्र पढ़े ॥३१॥३२॥ मन्त्रः "विष्णु प्रसादे गुह्यम्" इत्यादि यह मन्त्र उच्चारण कर यथा न्याय चार परिक्रमा करे और अभिवादन करे। तदनन्तर गन्ध माल्यादि से पूजन करे तथा अपराध रहित भोजन यथा न्याय से देवे। शूद्र की दीक्षा कही है। और इस प्रकार चारों वर्णों का दुख संसार मोचक उपचार कह दिया है ॥३३॥३४॥३५॥३६॥ हे वसुन्धरे ! चारों वर्णों को जिस प्रकार छत्र दिया जाता है वह कहता हूँ, सावधानता से सुनिये ॥३७॥ ब्राह्मण के लिये सफेद क्षत्रिय के लिये लाल वैश्य को पीला, तथा शूद्र को नीला छत्र

देना चाहिये ॥३८॥ सूत ने कहा– पृथ्वी चातुर वर्ण की दीक्षा सुनकर पुनः प्रणाम करके वाराह जी से पूछने लगी ॥३९॥ पृथ्वी ने कहा – हे केशव ! चारों वर्णों की दीक्षा मैंने सुनली है अब कहिये कि चारों वर्णों की दीक्षा ग्रहण कर क्या कर्तव्य करना चाहिये ॥४०॥ पृथ्वी के वचन सुनकर वाराह रूपी भगवान मेघ गम्भीर वाणि से कहने लगे ॥४१॥ श्री वाराह ने कहा– हे वसुन्धरे ! जो तू मुझसे पूछती है वह तत्व के सुनिये । सर्वत्र गुप्त माला में मेरा चिन्तन करना चाहिये ॥४२॥ नारायण के वचन सुनकर कमल पत्राक्षी भक्त वत्सला पृथ्वी हाथ जोड़कर वाराह रूपी भगवान् से पूछने लगी ॥४३।४४॥४५। पृथ्वी ने कहा– हे भगवन् ! हे माधव ! विधि पूर्वक दीक्षा ग्रहण कर चिन्ता युक्त आपके भक्त को क्या कर्तव्य करना चाहिये ॥४६॥ आपका चिन्तन किस प्रकार करना चाहिये । आप पर हो, मनुष्यों से अचिन्त्य हो, भक्तों को क्या कार्य्य करना चाहिये । तदनन्तर पृथ्वी के वचन सुनकर भगवान मधुर स्वर से पृथ्वी को कहने लगे ॥४७ ४८॥ वाराह ने कहा– हे देवि जो मुझे पूछती हो, वह तत्व से कहता हूँ जिस से मेरे कर्म परायण भक्त मेरा चिन्तन करें ॥४९॥ यह गणान्ति का नाम की दीक्षा अङ्ग बीज से निकली है । हे महाभागे ! इस गणान्तिका में मेरा चिन्तन करना चाहिये ॥५०॥ निश्चित कर्म वाले, शुद्ध दीक्षा वाले को विधि पूर्वक मन्त्र से यह गणान्ति का ग्रहण करनी चाहिये ॥५१॥ जो भक्त सोकर वाम संयुक्त दर्शन स्पर्श संयुक्त गणान्तिका को ग्रहण करता है उसका धर्म नहीं रहता है । उसको दीक्षा ही महा फल देने वाली होती है हे सुश्रोणि ! जो मन्त्र से पवित्र हुई गणन्तिका को ग्रहण करता है वह आसुरी नाम की दीक्षा है जिससे धर्म प्रवर्तित होता है अतः गुप्त गणान्तिका का शुद्ध मन से चिन्तन करे जो गुप्त गणान्तिका में मेरा चिन्तन करता है वह विद्वान मनुष्य हजारों जन्मान्तरों के चिन्तन के फल

को प्राप्त करता है ॥५२॥५३ ५४॥५५॥ हे वसुन्धरे! गणान्तिका ग्रहण करने का मन्त्र कहता हूं जिस प्रकार कि लोक सुख के लिये शिष्य के लिये दी जाती है वह सुनिये ॥५६ । कार्तिक मार्गशीर्ष अथवा वैसाख शुक्ल द्वादशी में यह गणान्तिका ग्रहण करनी चाहिये । प्रथम तीन दिन निर्मांस भोजन करके द्वादशी के दिन मेरे धर्म पूर्वक गणान्तिका ग्रहण करे । और मेरे सामने से अग्नि प्रज्व-लित करके कुशाओं से आसन बिछाकर गणान्तिका को स्थापित करके गुरु और शिष्य दीक्षित हो "नमोनारायणाय" कहकर यह मन्त्र पढ़े ॥५७॥५८॥५९॥६०॥ मन्त्रः– जिसको पहिले ब्रह्मन्य देव पितामह ने धारण किया है। हे शिष्य ! उस नारायण के दक्षिण गात्र से पैदा हुई गणान्तिका को गृहण कीजिये ॥६१॥ तदनन्तर इस मन्त्र से गणान्तिका को गृहण करके प्रेमी शिष्य को देकर इस मन्त्र को पढ़े॥६२॥ हे शिष्य ! समय से नारायण के दक्षिण गात्र से जायमान गणान्तिका देवी को गृहण कीजिये ऊपर होकर उसका चिन्तन कर मनुष्य फिर जन्म नहीं लेता।६३। पृथ्वी ने कहा– हे माधव ! स्नान कल्पना के बाद क्या करना चाहिये। तथा प्रसाधन विधि किस मन्त्र से करनी चाहिये ॥६४। आपके कर्म परायण मनुष्य अकर्मन्यता से मुक्त होता है पृथ्वी के वचन सुनकर लोकनाथ जनार्दन धर्म संयुक्त वाक्य से पृथ्वी को कहने लगे ॥६५॥६६॥ वाराह ने कहा– हे देवि ! जो तू मुझसे पूछती है उन स्नान के उपचार कर्मों को जिनको कि कर्मी करते हैं उन्हें तत्व से कहता हूँ ।।६७।। जल प्राधानिक उपचारों के हो जाने पर कंगती यानी केश प्रसाधिनी, कन्घी अन्जन तथा दर्पण जिस मन्त्र से देना चाहिये। हे वसुन्धरे ! वह सुनिये निर्मल वस्त्र पहिन मेरे गात्रों को स्पर्श करके शीघ्र अंजन तथा कंघी गृहण कर घुटनों के बल खड़ा होकर अंजलि में कंघी गृहण करके यह मन्त्र पढ़े ॥६८॥६९॥७०॥७१॥ मन्त्रः– हे नारायण ! इस अन्जली में रखी हुई कंघी को गृहण कीजिये और प्रसन्नता पूर्वक सिर के बाल साफ कीजिये ।।७२।। महानुभाव ! अपनी आंखों में

मन्त्र पढ़े ।८६। मन्त्रः—श्रुतिर्भगवती श्रेष्ठा श्रुती अग्नि द्विजश्चेत्यादि ॥९०॥ जो इस विधान से कर्म करता है वह सात कुलों को तार देता है हे वसुन्धरे ! जो परमगति की इच्छा धरता है उसको इस मन्त्र से प्रसन्नता पूर्वक इस प्रकार का उपचार करना चाहिये ॥९१॥९२॥ इति श्री वराह पुराणे केकताञ्जन दर्पण नाम काशीराम शर्मा कृत भाषाटीकायाम् अष्ठविंशत्यधिक शततमोऽध्याय ॥१२८॥

अथः एक सौ उन्तीसवां अध्याय

दोहा—इकसौ उनतीस में अब, ताम्रोत्पतिवखान ।
वराह धरणी सों तथा तस, माहात्म्य महान् ॥

अथः चतुर्वर्ण दीक्षा—वराह ने कहा-कर्म परायण मनुष्य भूषित तथा अलङ्कृत करके शुक्ल यज्ञों पवीत नवतन्तुओं वाला देना चाहिये ।१। (हाथ जोड़कर पृथ्वी कहने लगी कि हे भगवन् ! यह परम गुप्त रहस्य मुझे सुनाइये कि आपके भक्तों को किस मन्त्र से सन्ध्या करनी चाहिये तदनन्तर पृथ्वी के वचन सुनकर वराह भगवान् पृथ्वी से कहने लगे कि हे माधवि ! जो तुम पूछती हैं वह सुनिये हे भद्रे ! वह परम गुप्त मैं तुझे सुनाता हूँ पवित्र होकर मेरे कर्म करके संसार मोक्षिणी प्रधान सन्ध्या को करे तदनन्तर मेरी भक्ति में स्थित होकर जलाञ्जलि ग्रहण कर मुहूर्त मात्र ध्यान में स्थित होकर यह मन्त्र पढ़े मन्त्रः भवोद्भव मादित्यत्तरूपमात्रमित्यादि पढ़े यह मन्त्रों में परम मन्त्र है तपों में परम तप है जो इस प्रकार का आचार करता है वह विष्णु लोक जाता है यह गुप्त से गुप्त रहस्य है इसको जो मनुष्य नित्य पढ़ता है वह पापों से मुक्त होजाता है यह रहस्य अदीक्षित तथा यज्ञों पवीत वाले को देना चाहिये हे देवि ! फिर और भी कहता हूँ उसे सुनिये शुभ भक्तों से दिये हुये दीपक को भी नहीं ग्रहण करता मेरे कर्म करके उत्तम दीपक ग्रहण कर घुटनों के बल स्थित होकर यह मन्त्र पढ़े मन्त्रः-ओम्नमो भगवतेऽनुग्रह तेजसे विष्णो—इत्यादि इस

प्रकार करके जो दीपक देता है उसने अपने सारे पिता महादि पितरों को तार लिया है समझो) हे सुन्दरि ! गन्ध से मेरे ललाट पर तिलक देवे और भी सुखा वह कर्म कहता हूं जिस मंत्र से कि मेरे ललाट पे तिलक दिया जाता है मंत्रः मुखमण्डनंन इत्यादि हे वासुदेव ! मैं आपके कथनानुसार चिंता से मुखमण्डम चंदनादि लाया हूँ इससे आप चित्र कीजिये हे वासुदेव ! और संसार से मोक्ष कीजिये ॥२॥३॥४॥ हे वसुंधरे ! इस मंत्र से मेरे ललाट पर चित्रक तिलक करे तदनंतर फूल ग्रहण कर मंत्र पढ़े ॥५॥ मंत्रः इमाः सुमनसः सौ-मनस्याय इत्यादि पढ़कर पुष्प निवेदन करे तदनतर धूप धुकावे सुगंधियुक्त सुमनोहर धूप ग्रहण कर नमो नरायणाय कह कर यह मंत्र पढ़े मंत्रः हे केशव ! आपके अङ्ग स्वभाव ही से सुगंधित हैं तथा इस धूप के धुकाने से अपने अङ्गों को सुगंधित कर सबको सुगंधित कीजिये ६॥७॥८॥६। और यह कहे कि हे भगवन् ! सर्व ससार मोक्षण मुझसे दी हुई धूप को ग्रहण कीजिये हे वसुंधरे अब जिस प्रकार दीपक देना चाहिये वह विधि कहता हूँ विधि पूर्वक भक्त से दिये गये दीपक को मैं ग्रहण करता हूं प्रथम मदीय कर्म करके दीपक ग्रहण करे और घुटनों के बल खड़ा हो यह मंत्र पढ़े १०॥११॥१२॥ मंत्रः नमोभगवते तेजसे इत्यादि तथा तेज ससारामोचइतुम देव ग्रहीस्व दीप मित्यादि पढ़े जो इस प्रकार यथा न्याय मुझे दीपक देता है वह मनुष्य अपने समग्र पिता महादि पितरों को तार देता है ॥१३॥१४॥१५॥नारायण के वचन सुनकर विस्मित हो पृथ्वी वराह भगवान से कहने लगी हे भगवन् ! मैने कर्म परायण भक्त दीक्षा सुनली है परंतु मेरा मन कुछ सुनने की इच्छा से सत्मार्ग में दौड़ रहा है हे माधव ! किन पात्रों में आपका नैवेद्यादि करने से आप प्रसन्न होते हैं ॥१६॥१७॥१८॥ पृथ्वी के वचन सुन भगवान इस प्रकार कहने लगे कि हे देवि ! जिन पात्रों में मुझे नैवेद्य अच्छा

लगता है वह सुनिये जो तूने पहिले मुझ से पूछा है उसे कहता हूं सुवर्ण, चान्दी, कांस्य आदि के पात्रों में जो मुझे नैवेद्यादि अर्पित करता है उन सबको छोड़कर मुझे ताम्रपात्र प्रिय लगता है नारायण के मुख से इस प्रकार सुन कर धर्म की इच्छा वाली वसुधरा लोक नाथ जनार्दन भगवान से मधुर वाक्य कहने लगी कि हे भगवन् ! यह गुप्त रहस्य मुझे सुनाइये कि आपको ताम्रपात्र किस प्रकार अच्छा लगता है ॥१६।२०॥२१॥२२॥ तदन्तर पृथ्वी के वचन सुन लोक श्रेष्ठ भगवान पृथ्वी से कहने लगे ॥२३ हे वसुन्धरे ! मुझसे कहे रहस्य को एकाग्र मन से सुनिये कि मुझे ताम्रपात्र किस कारण प्रिय है ॥२४ सात हजार वर्ष पहिले जिस प्रकार प्रिय दर्शन ताम्र उत्पन्न हुआ है वह सुनिये ॥२५॥ हे माधवि ! प्रथम ताम्र रूप धारण करके गुडाकेश नाम वाले महादैत्य ने मेरी आराधना की है ॥२६॥ हे वसुन्धरे ! धर्म की इच्छा से उस दैत्य ने चौदह हजार वर्ष तक मेरी आराधना की ॥२७॥ तदन्तर उसने तीव्र तप से प्रसन्न होकर मैंने उसको दर्शन दिया जहां ताम्र की उत्पत्ति हुई है उस रम्य ताम्रमय में आश्रम देखकर हे महादेवि ! कुछ संकेत किया या कहा वह घुटनों के बल खड़ा हो कर मेरा चिन्तन कर रहा था कि चतुर्भुज रूप मुझे देखकर हाथ जोड़ सिर झुका कर मुझसे कहने लगा तथा मैंने भी प्रसन्न अन्तरात्मा से उसे देखकर कहा हे गुडाकेश कहिये कि आपका क्या कार्य्य करूँ हे सुव्रत ! मुझ दुराराध्य को भी तूने भक्ति से प्रसन्न किया है हे सौम्य ! जो तूने मन वचन कर्म से सोचा है जो तुझे रुचिकर है वह वरदान कहिये ॥२८॥ २६॥३०॥३१॥३२॥ इस प्रकार मेरे वचन सुनकर गुडाकेश दैत्य शुद्ध अन्तरात्मा से हाथों से अञ्जुली बाँधकर इस प्रकार कहने लगा कि हे देव ! यदि आप समस्त अन्तरात्मा हैं तो हजारों जन्मों तक आप में मेरी दृढ़ भक्ति होवे हे केशव ! आपके छोड़े हुये चक्र से मैं अपना वध चाहता हूँ ॥३३॥३४॥३५॥ चक्र से

मेरा वध होने पर वसा मांस आदि कुछ नहीं होगा केवल मेरे देह से ताम्र उत्पन्न होगा और वह पवित्र होगा और उसका पात्र बनाकर उस शुद्ध ताम्रपात्र में नैवेद्यादि बनाकर भगवान को देने से भगवान प्रसन्न होवें यही मेरे मनमें है हे भगवन ! यदि आप प्रसन्न हैं तो यही वरदान दीजिये हे देवेश ! उग्र तप करके यदि मैंने आपका ध्यान किया है तो मुझे यही वरदान दीजिये उसके इस प्रकार कहने पर मैंने वही वरदान दिया तब वह ताम्र में स्थिति होकर मेरे रूप को प्राप्त हुआ है हे देवि ! ताम्र पात्र में मुझे जो कुछ नैवेद्यादि दिया जाता है उसमें मेरी बड़ी प्रीति है मांगल्य तथा पवित्र ताम्र पात्र मुझे अत्यन्त प्रिय है उसको वरदान देकर मैंने फिर उससे कहा कि हे गुडाकेश ! वैषाख द्वादशी दिन दोपहर में तू चक्र को देखेगा और वही मेरा तेजोमय चक्र निसन्देह तेरा वध करेगा तदनन्तर तू मेरे लोक को प्राप्त होगा गुडाकेश दैत्य को इस प्रकार कहकर मैं वहीं पर अन्तर्धान हुआ हूँ ॥३६।३७।३८ ३६॥४०।४१॥४२॥४३॥४४॥ तदनंतर मेरे अन्तर्धान होने पर वह दैत्य चक्र से अपना वध चाहता हुआ मेरे कर्म में स्थित होकर दिन दिन में विशेष शुभ कर्म कर्त्ता हुआ तप करने लगा तथा यह सोचने लगा कि मैं कब विष्णु को प्राप्त करूँगा इस प्रकार सोचने पर शीघ्र ही वैषाख शुक्ल द्वादशी आपहुँची उस दिन धर्म में दृढ़ होकर वह दैत्य विष्णु की पूजा करके प्रार्थना करने लगा कि हे प्रभो ! अग्नि समान कान्ति वाले अपने चक्र को मेरे ऊपर छोड़िये मेरे अंगों को काट कर मेरी आत्मा को शीघ्र अपनी आत्मा में मिलाइये इस प्रकार प्रार्थना करने पर शीघ्र चक्र से उसके अवयव विदरित कर डाले और वह भक्त मुझे प्राप्त हुआ है उसके माँस से ताम्र उत्पन्न हुआ है तथा रुधिर से सुवर्ण हड्डियों से चांदी तथा अनेक धातु हुई हैं तथा अन्य पदार्थों से अन्य धातु हुई हैं हे भूमे ! ताम्रपात्र से जो मुझे नैवेद्यादि दिया जाता है उसके कणकण में जो फल होता है वह मुझसे सुनिये ॥४५॥४६।४७॥४८॥४९॥५०॥ यह मेरे भक्तों को सर्वदा,

करना चाहिये कि ताम्र पात्र में नैवेद्यादि देवें पूर्वोक्त प्रकार से ताम्र उत्पन्न हुआ है अतः वह मुझे प्रिय है। दीक्षित भक्त पाद्य अर्घादि ताम्र पात्र से ही देते हैं। इस प्रकार ताम्र उत्पत्ति तथा दीक्षा विधि तत्व से सुन ली है हे देवि! और क्या चाहती है पृथ्वी ने कहा—हे देव! देव! आपका भक्त जो कि दीक्षित हो, वह किस प्रकार किस मन्त्र से सन्ध्या करे वह सुनाइये। वाराह ने कहा— हे माधवि! उत्तम सन्ध्या मन्त्र को सुनिये ॥५१॥५२॥५३॥५४॥ जिस प्रकार पूर्व तथा पर सूर्य की संध्या कहते हैं। वह सुनिये मेरी भक्ति में स्थित हो जला- ञ्जलि ग्रहण कर मुहूर्त मात्र ध्यान में स्थित होकर यह मन्त्र पढ़े। हे पृथ्वी! ताम् प्रापणक पात्र में जितने सिक्थ याने कण उतने हजार साल तक वह मेरे लोक में आनन्त पूर्वक निवास करता है। मन्त्रः भवोद्भव आदिव्यक्त रूप मादित्य माल्यादि "तथा वयम् देव मादि मव्यक्त रूप मित्यादि" मन्त्रों से दीक्षित मनुष्य सन्ध्या करे ॥५५॥५६॥५७॥५८॥५९॥६०॥ इति श्री वाराह पुराणे चतुर्वर्ण दीक्षा ताम् वर्णनम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम एकोन त्रिंदशधिक शत तमो अध्याय ॥१२९॥

अथः एक सौ तीसवां अध्याय

दोहाः— राज अन्न मत खाइये, तस है दोष महान्।
वाराह धरणी सों करें, प्रायश्चित्त वखान् ॥

अथः राजान्न भोगे प्रायश्चितम्— सूत ने कहा— एवम् प्रकार नारायण के मुख से वर्ण दीक्षा सुनकर पृथ्वी शुद्ध मन से नारायण को पूछने लगी ॥१॥ पृथ्वी ने कहा— हे प्रभो! आप- की दीक्षा का बड़ा ही माहात्म्य है। जिसका कि बड़ा फल है। हे महाभाग! दीक्षा सुनकर मैं निर्मल होगई हूँ ॥२॥ लोकनाथ भगवान का बड़ा ही माहात्म्य है। जिसने कि, वह चारों वर्णों को सुख देने वाली दीक्षा रची है ॥३॥ हे भगवन! एक परम

गुप्त बात को मैं पूछना चाहती हूँ उसे भक्त सुख के लिये आप कहिये ॥४॥ हे देव ! पहिले आपने जो बत्तीस अपराध कहे हैं अल्प वित्त वाले मनुष्य उन अपराधों को करके फिर कर्म से शुद्ध होते हैं । हे माधव ! वह प्रीति पूर्वक मुझे तत्व से सुनाइये ॥५॥ ॥६॥ पृथ्वी का इस प्रकार वचन सुनकर भगवान हृषिकेश दिव्य ध्यान ग्रहण कर पृथ्वी से कहने लगे ॥७॥ श्री वाराह ने कहा– जो मेरे कर्म करने वाले शुद्ध भक्त होकर भी लोभ से अथवा भय से राजा का अन्न खाते हैं, हे वसुन्धरे ! वे मनुष्य दस हजार वर्ष तक घोर नरक में गिरते हैं । राजा का अन्न तो आपत्ति ग्रस्त को ही खाना चाहिये । भगवान के वचन सुनकर पृथ्वी काँपने लगी, तथा सत्रह दिन तक तीव्र भय को प्राप्त हुई है । ॥७॥८॥९॥१०॥ तदनन्तर दीन मन होकर पृथ्वी सर्व लोक सुख के लिये, भगवान् से मधुर वाक्य बोलने लगी ॥११॥ पृथ्वी ने कहा– हे देव ! आप तत्व से बतलाइये कि, राजा का अन्न खाने में क्या दोष है ॥१२॥ पृथ्वी के वचन सुनकर वाराह भगवान कहने लगे कि, हे सुन्दरि ! यह गुप्त बात तत्व से सुनिये । भगवान् के भक्तों को कभी भी राजा का अन्न नहीं खाना चाहिये ॥१३॥१४॥ यद्यपि यह राजा संसार में समानता से बर्ताव करता है । तथापि वह राजस तामस तथा गर्हित कठिन कर्मों को करता है । अतः हे वसुन्धरे ! धर्म रक्षा के लिये पृथ्वी में राजा का अन्न मुझे अच्छा नहीं लगता है ॥१५॥१६॥ हे पृथ्वी ! जो कुछ में कहता हूँ वह सुनिये । जिस प्रकार भक्त जनों को राज अन्न खाना चाहिये । वह सुनिये, विधि पूर्वक स्थापना करके, तथा मेरे भक्तों को धन धान्यादि देकर भक्तों का नैवेद्य के लिये पकाया हुआ, राज अन्न खा लेवे तो, कोई दोष नहीं है । इस प्रकार विष्णु के वचन सुनकर पृथ्वी वाराह भगवान् से पूछने लगी ॥१७॥१८॥१९॥२०॥ पृथ्वी ने कहा– शुद्ध भक्त जन राज अन्न खाकर किस कर्म से शुद्ध होता है ।

हे भगवन ! वह सुनाइये ॥२१। २२॥ वाराह ने कहा- हे देवि ! जो तू मुझसे पूछती है कि, राज अन्न खाने वाला किस कर्म से शुद्ध होता है वह सुनिये। एक चान्द्रायण व्रत करे एक सान्तपन व्रत करे तो मनुष्य शीघ्र राज अन्न खाने के पाप से छूट जाता है। हे वसुधे ! इस प्रकार करने पर कोई अपराध नहीं लगता है । इसलिये राज अन्न कभी नहीं खाना चाहिये जो कि मेरी पूजा की इच्छा तथा परम गति चाहता है वह न खावे । २२॥ ॥२३॥२४॥ इति श्री वाराह पुराणे राजान्न प्रायश्चित्तम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम त्रिंशदधिक शत तमो अध्याय ॥१३०॥

अथः एक सौ इकतीसवा अध्याय

दोहाः— दातुन करि पूजन करो, सदा विष्णु भगवान।
विना किये क्षय होत सब। पुण्य कहें भगवान ॥

अथः दन्तकाष्ठ चर्वण प्रायश्चित्तम्— वाराह ने कहा— जो विना दातुन किये मेरी पूजा करता है उसके एक दिन के दातुन न करने से पहिले के किये सब पुण्य नष्ट हो जाते हैं ॥१॥ नारायण के वचन सुनकर पृथ्वी विष्णु भक्त के सुख के लिये भगवान से पूछने लगी ॥२॥ पृथ्वी ने कहा— बड़े क्लेश से सर्व काल के किये हुये पुण्य कर्म हे भगवन ! किस प्रकार एक ही अपराध से नष्ट होते हैं ॥३॥ वाराह ने कहा— हे सुन्दरि ! जिस प्रकार एक ही अपराध से पूर्व कृत कर्म नष्ट होते हैं वह मुझसे सुनिये ॥४॥ हे भद्रे ! मनुष्य पापी है, कफ पित्त युक्त है, पूय शोणित से युक्त हो मनुष्य का मुख दुर्गन्धी वाला रहता है ॥५॥ दातुन करने से वह सब नष्ट हो जाते हैं। आचार से भ्रष्ट वालों की शुद्धि होती जाती है ॥६॥ पृथ्वी ने कहा— हे भगवन दातुन न करके जो कर्म करता है उसका प्रायश्चित्त कहिये जिससे कि धर्म नष्ट नहीं होता है ॥७॥ वाराह ने कहा— हे महाभागे ! जो तू पूछ रही है वह दातुन न करने से पुरुष शुद्ध होते हैं तुझे

सुनाता हूं ।८ दो पाँच दिन तक आकाश शयन करके दातुन न न करने वाले पुरुष शुद्ध होते हैं ॥६॥ हे भद्रे ! यह दन्त काष्ट भक्षण विधि तुझे सुना दी है, जो इस विधान से प्रायश्चित करता है उसको अपराध नहीं लग सकता है ॥१०॥११॥ इति श्री वाराह पुराणे दन्त काष्टा चर्वण प्रायश्चितम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम एक त्रिंशदधिक शततमोऽध्याय ॥१३१॥

अथः एक सौ बत्तीसवाँ अध्याय

दोहाः— मैथुन करके मृतक को, छुये जो मनुज कोइ ।
पाप निवारण के लिये, करे सदुपाय सोइ ॥

अथः मृतक स्पर्श प्रायश्चितम्— वाराह ने कहा– हे भद्रे ! जो मनुष्य मैथुन करके मृतक को स्पर्श करता है वह दुर्बुद्धि नौ पाँच हजार साल तक रेत का पान करता है । नारायण के मुख से यह सुनकर दीन मन से पृथ्वी भगवान से पूछने लगी ॥१।२। पृथ्वी ने कहा– हे देव ! यह भीषण धर्म संकट क्या कर रहे हो, पुरुष किस प्रकार रेत का पान करता है ॥३। यह मुझे बड़ा दुख है अतः आप मुझे सुनाइये । वाराह ने कहा– हे देवि ! अत्याचार करने वाले पुरुष का यह उत्तम गुप्त रहस्य तत्व से सुनिये जो निर्घृणा पुरुष स्त्रियों में विक्रम कर्म करता है उसी अपराध के फल को प्राप्त करता है हे वरारोहे जो तू मुझसे पूछती है वह यही रहस्य है कि अपराध के दोष से किये पाप का प्रायश्चित होता है उसे सुनाता हूं । हे भद्रे ! मेरे कर्म करने वाले गृहस्थी पुरुषों को पूर्वोक्त अपराध मिटाने के लिये तीन दिन तक यावकान्न तीन दिन पिण्याक तथा एक दिन वायु भक्षण करना चाहिये । तब पाप से छूटता है। हे भूमे जो इस प्रकार मन में अपराध जानकर विधि निर्दिष्ट कर्म के द्वारा प्रायश्चित करता है वह पाप से लिप्त नहीं होता है हे भद्रे ! वह मैथुन करके मृतक स्पर्श प्रायश्चित सुना दिया है जो कि सर्व लोक को सुख देने वाला है ।४। ।५।६।७।८।९।१०। हे भद्रे जो मेरे शास्त्र को बहिस्कृत करके मृतक

हे भगवन ! वह सुनाइये ॥२१। २२॥ वाराह ने कहा– हे देवि ! जो तू मुझसे पूछती है कि, राज अन्न खाने वाला किस कर्म से शुद्ध होता है वह सुनिये। एक चान्द्रायण व्रत करे एक सान्तपन व्रत करे तो मनुष्य शीघ्र राज अन्न खाने के पाप से छूट जाता है। हे वसुधे! इस प्रकार करने पर कोई अपराध नहीं लगता है। इसलिये राज अन्न कभी नहीं खाना चाहिये जो कि मेरी पूजा की इच्छा तथा परम गति चाहता है वह न खावे। २२॥ ॥२३॥२४॥ इति श्री वाराह पुराणे राजान्न प्रायश्चित्तम नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम त्रिंशदधिक शत तमो अध्याय ॥१३०॥

अथः एक सौ इकतीसवां अध्याय

दोहा:— दातुन करि पूजन करो, सदा विष्णु भगवान।
विना किये क्षय होत सब। पुण्य कहें भगवान॥

अथः दन्तकाष्ठा चर्वण प्रायश्चित्तम्— वाराह ने कहा– जो विना दातुन किये मेरी पूजा करता है उसके एक दिन के दातुन न करने से पहिले के किये सब पुण्य नष्ट हो जाते हैं ॥१॥ नारायण के वचन सुनकर पृथ्वी विष्णु भक्त के सुख के लिये भगवान से पूछने लगी ॥२॥ पृथ्वी ने कहा– बड़े क्लेश से सर्व काल के किये हुये पुण्य कर्म हे भगवन ! किस प्रकार एक ही अपराध से नष्ट होते हैं ॥३॥ वाराह ने कहा– हे सुन्दरि ! जिस प्रकार एक ही अपराध से पूर्व कृत कर्म नष्ट होते हैं वह मुझसे सुनिये ॥४॥ हे भद्रे ! मनुष्य पापी है, कफ पित्त युक्त है, पूय शोणित से युक्त हो मनुष्य का मुख दुर्गन्धी वाला रहता है ॥५॥ दातुन करने से वह सब नष्ट हो जाते हैं। आचार से भ्रष्ट वालों की शुद्धि होती जाती है ॥६॥ पृथ्वी ने कहा– हे भगवन दातुन न करके जो कर्म करता है उसका प्रायश्चित्त कहिये जिससे कि धर्म नष्ट नहीं होता है ॥७॥ वाराह ने कहा– हे महाभागे ! जो तू पूछ रही है वह दातुन न करने से पुरुष शुद्ध होते हैं तुझे

सुनाता हूं ।८ दो पाँच दिन तक आकाश शयन करके दातुन न न करने वाले पुरुष शुद्ध होते हैं ॥९॥ हे भद्रे ! यह दन्त काष्ट भक्षण विधि तुझे सुना दी है, जो इस विधान से प्रायश्चित करता है उसको अपराध नहीं लग सकता है ॥१०॥११॥ इति श्री वाराह पुराणे दन्त काष्ठा चर्वण प्रायश्चितम्‌ नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम एक त्रिंशदधिक शततमोऽध्याय ॥१३१॥

अथः एक सौ बत्तीसवां अध्याय

दोहाः— मैथुन करके मृतक को, छुये जो मनुज कोइ ।
पाप निवारण के लिये, करे सदुपाय सोइ ॥

अथः मृतक स्पर्श प्रायश्चितम्‌— वाराह ने कहा— हे भद्रे ! जो मनुष्य मैथुन करके मृतक को स्पर्श करता है वह दुर्बुद्धि नौ पाँच हजार साल तक रेत का पान करता है । नारायण के मुख से यह सुनकर दीन मन से पृथ्वी भगवान से पूछने लगी ॥१। २। पृथ्वी ने कहा— हे देव ! यह भीषण धर्म संकट क्या कर रहे हो, पुरुष किस प्रकार रेत का पान करता है ॥३। यह मुझे बड़ा दुख है अतः आप मुझे सुनाइये । वाराह ने कहा— हे देवि ! अत्याचार करने वाले पुरुष का यह उत्तम गुप्त रहस्य तत्व से सुनिये जो निर्घृणा पुरुष स्त्रियों में विकृत कर्म करता है उसी अपराध के फल को प्राप्त करता है हे वरारोहे जो तू मुझसे पूछती है वह यही रहस्य है कि अपराध के दोष से किये पाप का प्रायश्चित होता है उसे सुनाता हूं । हे भद्रे ! मेरे कर्म करने वाले गृहस्थी पुरुषों को पूर्वोक्त अपराध मिटाने के लिये तीन दिन तक यावकान्न तीन दिन पिण्याक तथा एक दिन वायु भक्षण करना चाहिये । तब पाप से छूटता है । हे भूमे जो इस प्रकार मन में अपराध जानकर विधि निर्दिष्ट कर्म के द्वारा प्रायश्चित करता है वह पाप से लिप्त नहीं होता है हे भद्रे ! वह मैथुन करके मृतक स्पर्श प्रायश्चित सुना दिया है जो कि सर्व लोक को सुख देने वाला है ।४। ।५।६।७।८।९।१०। हे भद्रे जो मेरे शास्त्र को बहिस्कृत करके मृतक

मनुष्य को स्पर्श करके श्मशान में जाता है उसके पिता महादि पितर जम्बुक होकर श्मशान में मुर्दों को खाते हैं तदनन्तर भगवान के वचन सुनकर धर्म की इच्छा वाली वसुन्धरा सर्व लोक हित के लिये भगवान से मधुर वाक्य बोलने लगी पृथ्वी ने कहा हे नाथ आपके शरण में आयों को क्या पाप मृतक स्पर्श से होता है उसका प्रायश्चित सुनाइये जिससे कि वे पाप मुक्त होते हैं वराह ने कहा हे सुन्दरि ! जो तू मुझसे पूछती है वह तत्व से सुनिये ॥११॥१२ १३। १४॥१५॥ वह पाप नाशक प्रायश्चित्त यह है कि सात दिन तक एक वक्त भोजन करे तीन रात्रि तक उपवास करे तदन्तर पंचगव्य पान करे तो पाप मुक्त होजाता है यह मृतक स्पर्श अपराध की विधि कही है भगवान के भक्तों को वह सर्वथा वर्जनीय है जो इस विधान से प्रायश्चित करता है वह सब पापों से मुक्त होजाता है और उसका कोई अपराध नही रहता है ।।१६ ।१७।।१८। जो मनुष्य राग मोह से युक्त कामके वशीभूत होकर रजस्वला स्त्री को स्पर्श कर मुझे छूता है वह हजारों वर्षों तक रजपान करता है तथा अन्धा होता है व दरिद्री मूर्ख होता है नरक में पड़े हुये के समान अपनी आत्मा को भी नहीं जानता है रजस्वला स्त्री का स्पर्श करने से अवश्य ऐसा होता है पृथ्वी ने कहा हे देव ! आपकी शरण में आये हुयों का संसार सागर से मोक्ष होता जो अपराध युक्त होकर आपका स्पर्श करता है वह किस कर्म से शुद्ध होता है हे जनार्दन मुझे सुनाइये ॥१९॥२०॥२१॥२२॥२३॥ वराह ने कहा--रजस्वला नारी को स्पर्श करके जो मनुष्य मेरी भक्ति मे तत्पर होता है उसको तीन रात्रि तक तप करके आकाश शयन करना चाहिये शुद्ध मेरा भक्त होकर मेरे कर्मपरायण होकर जो इस प्रकार प्रायश्चित करता है वह आचार से वहिष्कृत भी पाप से छूट जाता है हे भद्रे ! यह रजस्वला स्पर्श का प्रायश्चित सुना दिया है ॥२४॥२५॥२६॥ हे देवि ! जो मृतक को स्पर्श कर मेरे क्षेत्र में रहता है वह सौ हजार वर्ष तक गर्भों में घूमता रहता है दस

हजार वर्ष तक चाण्डाल होता है सात हजार वर्ष तक अन्धा होता है सौ वर्ष तक मेंढक होता है तीन वर्ष तक मक्खी होता है ग्यारह वर्ष तक सलभ होता है सात वर्ष तक डांस होता है और कितने ही वर्षों तक कृकलास होता है सौ वर्ष तक हस्ती होता है बत्तीस वर्ष तक गधा होता है नौ वर्ष तक बिल्ली होता है और पन्द्रह वर्ष तक बन्दर होता है इस प्रकार आत्म दोष से मेरे कर्म परायण मनुष्य अनेक दुखों को प्राप्त करता है इस प्रकार विष्णु के वचन सुनकर पृथ्वी सर्व संसार मोक्ष के लिये दुख से भगवान को पूछने लगी ॥२७॥२८॥२६॥३०॥३१॥३२॥ पृथ्वी ने कहा हे देव! यह मनुष्यों के लिये अत्यन्त दुरासद मर्म भेदक वाक्य मेरे लिये क्या कह रहे हो आपके कर्मों में परायण आचार से परिभ्रष्ट मनुष्य जिस प्रकार पाप के फलों से तर जाता है वह प्रायश्चित सुनाइये।।३३॥३४।। भगवान् ने पृथ्वी के वचन सुनकर धर्म रक्षा के लिये पृथ्वी से कहा कि हे भूमे! जो मृतक को स्पर्श कर मेरा पूजनादि कर्म करता है वह दस पाँच दिन तक एकाहारी रहे तदनन्तर पंच गव्य पान करे इस प्रकार करने से मनुष्य पाप कर्म से लिप्त नहीं होता है हे देवि! जो तूने पूछा था वह मृतक स्पर्श प्रायश्चित करता है वह अपराध मुक्त होकर विष्णु लोक जाता है ।३५।३६।३७॥३८॥३६। इति श्री वराह पुराणे मृतक स्पर्शन प्रायश्चित्तम् नाग काशीराम शर्मा कृत भाषा-टीका याम् द्वात्रिंशदधिक शततमोऽध्याय ।१३२॥

अथः एक सौ तेतीसवां अध्याय

दोहा—पूजा समय गुदख करि, होता पाप महान्।
करिके करना उचित है, प्रायश्चित महान् ॥

अथः पूजा समय गुदख पुरिशोत्सर्जनयोः प्रायश्चितम्—वराह ने कहा हे भूमे! जो मनुष्य वायु से पीड़ित होकर मेरी पूजा करते समय वायु छोड़ता है वह पांच वर्ष तक मक्खी होता है तीन

वर्ष तक चूहा होता है तीन वर्ष तक कुत्ता होता है और नौ वर्ष तक कछुआ होता है जो इस प्रकार मेरे शास्त्र को जानता हुआ मेरे कर्म परायण होकर अपराध करता है उसके लिये यह तापन मोहन कह दिया है भगवान् के वचन सुनकर पृथ्वी कहने लगी कि हे भगवन् ! आपके कर्म करते हुये मनुष्य को बहुत पाप फल अपराध करने से मिलता है अब उसकी शुद्धी कहिये वराह ने कहा—हे देवि ! जो तू पूछती है वह समग्रता से सुनिये ॥१॥२॥३॥४॥५॥यह अपराध करके जिस कर्म से मनुष्य शुद्ध होता है वह सुनिये तीन दिन रात्रि तक अग्नि से कर्म करे तो अपराध से मुक्त होकर सर्व संग छोड़कर मेरे लोक को जाता है हे भद्रे ! जो तूने पूछा था वह महाकर्मा पराधियों का गुण तथा दोष कह दिया है ॥६॥७॥८॥ हे भूमे ! जो मनुष्य मेरे कर्म करते हुये पुरीतोत्सर्ग करता है उसे भी तत्व से सुनिये वह मनुष्य दिव्य हजार वर्ष तक ऐस नरक वास करता है और वहां रहकर विष्ठा खाता है अब उसका प्रायश्चित कहता हूं जिसके करने से मनुष्य पापों से छूट जाता है मेरे कर्म से भ्रष्ट मनुष्य को विह्वल अन्तरात्मा से एक जलमयी शय्या एक आकाश शय्या करे तो अपराध से छूट जाता है हे भद्रे ! जो पूजा समय विष्णु करता है उसका प्रायश्चित कह दिया है ॥९॥१०॥११॥१२॥१३॥ इति श्री वराह पुराणे पूजा समये गुदस्त पुरीवात्सर्गयोः प्रायश्चितम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा–टीकायाम् त्रयस्त्रिंशदधिक शततमोऽध्याय ॥१३३॥

॥ अथः एक सौ चौंतीसवांऽध्याय ॥

दोहा—पूजा समय के करि हैं, सब अपराध महान् ।
वराह धरणी सों सकल, प्रायश्चित बखान ॥

अथः पूजा सामयीकापराधेषु प्रायश्चितानि—श्री वराह ने कहा–हे देवि ! जो मेरे कर्म करने वाला मनुष्य मेरे कर्म करना छोड़कर भाषण करने लगता है उसकी प्रायश्चित विधि सुनिये ॥१॥

हे वसुन्धरे ! जो मेरे कर्म परायण मनुष्य पूजा समय भाषण करता है वह मूर्ख होता है उसकी प्रायश्चित विधि सुनिये ॥२॥ दस पांच दिन तक आकाश शयन करके पूजा समय भाषण करने के पाप से छूट जाता है ॥३॥ इति मौन त्याग प्रायश्चितम् ॥ श्री वराह ने कहा--जो मनुष्य नील वस्त्र पहिन कर मेरी पूजा करता है वह पाँच सौ वर्ष तक कीट होकर रहता है ॥४॥ उसका अपराध मिटाने वाला प्रायश्चित कहता हूँ जिसके करने से मनुष्य पाप से छूट जाता है ॥५॥ विधि निर्दिष्ट कर्म से चान्द्रायण व्रत करके मनुष्य पूजा समय नील वस्त्र पहिनने के दोष से छूट जाता है ॥६॥ अविधान याने विना विधि के जो मेरी पूजा करता है वह मूर्ख पाप कर्मा मेरा विप्रिय करता है ॥७॥ और उसके गन्ध माल्य सुगन्धादि तथा प्रापणादि को शुद्ध भी हो परन्तु मैं कभी ग्रहण नहीं करता हूँ ॥८॥ तदनन्तर नरायण के वचन सुनकर धर्म कामा वसुन्धरा मधुर वाक्य कहने लगी ॥९॥ पृथ्वि ने कहा हे--नाथ जो आप आचार का व्यतिक्रम मुझसे कह रहे हो उसका सम्यक् आचार रहस्य कहिये ॥१०॥ पृथ्वि में आपके भक्त किस कर्म विधान से आपकी पूजा करते हैं यह मुझे बड़ा कौतूहल है इस संशय को भक्त सुख के लिये समग्रता से कहिये ॥११॥१२ वराह ने कहा हे देवि जो तू पूछ रही उस मुझसे कहे परमगुप्त रहस्य को तत्व से सुनिये ॥१३॥ सारे कर्मों को छोड़कर जो मेरी पूजा करता है उसकी उपस् पर्शन करके जो क्रिया है उसे सुनिये । १४॥ उस समय प्रथम पूर्व मुख होकर जल से पांद प्रक्षालन करके यथा न्याय पूर्वक उपस्पर्सन करके तीन प्रकार से मृतका ग्रहण कर हाथ धोवे तदन्तर जल से हाथ धोवे, तदन्तर सप्तकोश ग्रहण कर जल से प्रक्षालन करे ॥१५॥१६॥ एक एक करके पाद प्रक्षालन करतदवत् तदन्तर पांच पांच कहे और यदि मेरा प्रिय चाहता हो तो कोवों का समार्जन करे याने पञ्चपात्र गिलाशादि को

साफ करे ।।१७।। उस कर्म में सर्व पाप विशोधन तीन केशों को पीवे । हाथों से मुख साफ करे तदनन्तर चिन्ता परायण हो, सर्व इन्द्रिय निग्रह रूप प्राणायाम करके विधि निर्दिष्ट संसार मोक्षण कर्म करे । तीन बार ब्रह्म में स्थित हो शिर का स्पर्श करे । फिर तीन बार कान नाक का स्पर्श करें ।१८। १६। २०। जो जिस स्थान में स्थित है उन सब अङ्गों का स्पर्श करे तीन बार जल छिड़के, मेरा प्रिय चाहने वाला मनुष्य वाम तनु का स्पर्श करे, इस प्रकार करने पर कोई अपराध नहीं लगता है। ।।२१।।२२।।२३ नारायण के वचन सुनकर पृथ्वी भगवान से कहने लगी कि, हे भगवन् ! जो मनुष्य विधान से उपस्पर्शन करके कर्मों को प्राप्त करता है। उसको तापन शोधन कर्म कहिये वाराह ने कहा– हे भूमे ! मेरे कर्मों से वहिष्कृत मनुष्य जिस गति को प्राप्त करते हैं उसे सुनियें । जो मनुष्य व्यभिचार करके मेरी पूजा करता है वह ग्यारह हजार वर्ष तक कृमी होकर रहता है । अब उस मूर्ख का प्रायश्चित कहता हूँ जिसके करने से पुरुष कृत कृत्य हो जाता है । महासान्तपन तथा समग्रता से तप्त कृच्छ्र व्रत करके जो मेरे मत में स्थित हैं वे ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य पाप से मुक्त होकर परम गति को प्राप्त करते हैं । और जो क्रोध युक्त हो मेरा भक्त मेरे गात्रों का स्पर्श चञ्चल चित्त से करता है मैं उस रागी तथा क्रोधी को नहीं चाहता हूं ।।२४।।२५।२६।। ।।२७।।२८।।२६।।३०।।३१।।३२।। हे वसुन्धरे ! मैं सर्वदा दांत शुभ, पवित्र पंचेन्द्रिय निगृह वाले को, लाभा लाभ रहित को, अहङ्कार न करने वाले को, कर्मों में रत को, अच्छा मानता हूँ. हे वरानने ! और भी सुनाता हूँ कि जो पुरुष क्रोध युक्त होकर भक्ति करता है वह सौ वर्ष चील, सौ साल बाज, सौ साल तक मेंढक, दस साल तक राक्षस, छः वर्ष तक नपुंसक योनि को प्राप्त करके रेत भक्षण करता है। पांच, सात, नौ, वर्ष तक अन्धा होता है चवांस वर्ष तक गोध, दस वर्ष तक चक्र नाक होता है ।

सवाल भक्षण करता है आकाश गमन करता है हे भूमे ! क्रोधी ब्राह्मण इस प्रकार के अनेक जन्म प्राप्त करता है अपने ही कर्मों के अपराध से संसार सागर में घूमता रहता है पृथ्वी ने कहा हे भगवन ! जो आपने सुनाया है वह परम गुप्त मालूम पड़ता है इस समय आपके सुनाने से मेरा चित्त विह्वल होगया है और स्थिर नहीं हो रहा है जो आपने भक्तों का सुदुस्तर सार सुनाया है उससे मैं डर गई हूँ हे जगतपते! मैं आपको आज्ञा नहीं देती हूँ परन्तु आप सर्व लोक सुख के लिये यह सुनाइये जिससे कि कर्म करने वालों का अपराध मिट जाता है वह सुनाइये ।३३ ३४।।३५।।३६।।३७।।३८।।३९।।४०।।४१।।४२ लोभ मोह वाले मनुष्य जिस उपायसे पापों से मुक्त होते हैं वह सुनाइये तदन्तर वराह भगवान् पृथ्वी के वचन सुनकर कहने लगे ।।४३।४४।। तदन्तर पृथ्वी के वचन सुनकर ब्रह्म पुत्र सनतकुमार पृथ्वी से कहने लगा कि आप धन्य हो सुभाग्या हो जो कि आपने वराह रूपी भगवान् को पूछा है हे देवि ! आपके पूछने पर भगवान नारायण ने क्या कहा है वह सुनाइये सनत्कुमार का वचन सुन कर पृथ्वी ने कहा हे ब्रह्मन् ! जो मैंने भगवान से कार्य क्रिया योग तथा पार्थिव स्थित आध्यात्म भगववान से पूछा था और भगवान् ने मुझसे जो कुछ कहा था वह सुनिये माया करंडक भगवान ने मेरे से कहा कि हे वसुन्धरे ! क्रोधी भक्त जिस कर्म से शुद्ध होते हैं वह सुनिये ।।४५।४६।४७।।४८।।४९।।५०।। क्रोधी मनुष्य को व्रत करके शुद्ध भक्तों के घरों से अनिर्दिन भिक्षा ग्रहण कर छटे समय खाना चाहिये एवम प्रकार आठ दिन तक यथा न्याय भिक्षा करके छटे समय में भोजन करे जो इस विधि मे ब्रह्म कर्म करता है वह पाप से मुक्त होता है यदि भगवान से विष्णु लोक की परम सिद्धि को चाहता हो तो शीघ्र विष्णु भगवान की आराधना करनी चाहिये तदन्तर पृथ्वी के वचन सुनकर ब्रह्म पुत्र सनतकुमार धर्म की इच्छा से पृथ्वी से कहने लगा हे देवि ! जो आपने सुनाया

वह परम गुप्त रहस्य है अन्य भी जो भगवान् के मुख से आपने धर्म सुने हैं उनको सुनाइये। धरणी ने कहा– तदनन्तर लोकनाथ जनार्दन शंख, चक्र, गदाधर वाराह रूपी भगवान ने मेघ गम्भीर वाणि से भक्त कर्म सुख के लिये मधुर वाक्य कहा– कि, हे देव जो अत्याचार युक्त हो इस विधान से कर्म करता है या करवाता है वह मेरे विष्णु लोक को प्राप्त करता है मेरा पूजन लोभ क्रोध तथा शीघ्रता से नहीं करना चाहिये। मेरा पूजन यदि परम गति चाहता है तो, विधान से करना चाहिये। जो क्रोध छोड़कर जितेन्द्रिय होकर मेरा पूजन करते हैं वे अपराध रहित मनुष्य फिर संसार में नहीं पैदा होते हैं ॥५१॥५२॥५३॥५४॥५५॥५६। ॥५७॥५८॥५९॥६०॥ श्री वाराह ने कहा– हे वसुन्धरे ! जो अकर्मण्य याने अनूक्त फूलों से मेरा पूजन करता है उसका पातन कहता हूं जो फूल मुझे प्रिय नहीं है उनको मैं ग्रहण नहीं करता हूं। हे देवि ! जो अकर्मण्य फूलों को मुझे समर्पण करता है वे मेरा अहित चाहने वाले हैं और वे मनुष्य घोर रौरव नरक में गिरते हैं तथा अज्ञान के दोष से दुखों का अनुभव करते हैं दस वर्ष तक बन्दर, तेरह वर्ष तक बिल्ली, पाँच साल चूहा, बारह साल बैल आठ साल तक बकरा, एक महीने ग्राम कुकुट, तीन साल भैंस की योनि प्राप्त करता है। हे भद्रे ! जो पुण्य मुझे अच्छा नहीं लगता, उसके चढ़ाने से यह पूर्वोक्त फल है। पृथ्वी ने कहा– हे भगवन् ! यदि आप प्रसन्न हैं तो अब उसके निवारणार्थ प्रायश्चित कहिये। वाराह ने कहा– हे देवि ! जिससे मनुष्य पाप मुक्त होते हैं जो कि तूने पूछा है उस प्रायश्चित को सुनिये। हे वरानने एक माह तक एकाहार करे, और सात सात दिन तक वीरासन्न विधि करे और एक माह तक चार दिन बाद घृत पायस भोजन करे ॥६१॥६२॥६३॥६४॥६५॥६६॥६७॥ ।६८॥६९॥७०॥ तीन दिन तक यावकान्न खावे, तीन दिन तक वायु भक्षण करे। हे देवि ! जो इस विधि से कर्म करता है वह सब पापों से मुक्त होकर मेरे विष्णु लोक को जाता है ॥७१।७२॥

इति श्री वाराह पुराणे पूजा सामरिकापराध प्रायश्चितम नाम क.शी-राम शर्मा कृत भाषा टीकायाम चतुस्त्रिंशदधिक शत तमोऽध्याय

अथः एक सौ पैंतीसवां अध्याय

दोहाः— लाल वस्त्र धारण किये, लागे दोष महान् ।
जालपाद भक्षण करे, होत सूकर समान ॥

अथः जालपाद भक्षणापराध प्रायश्चितम्— श्री वाराह ने कहा– हे वसुन्धरे ! जो लाल वस्त्र पहिन कर मेरी पूजा करता है उसका भी संसार मोक्षण कर्म सुनिये रजस्वला नारि में जो रत होता है लाल वस्त्र पहिनने वाला मनुष्य अपने कर्म दोष से दस पन्द्रह साल तक रज से पुष्ट होकर रज ही होकर रहता है उसका प्रायश्चित कहता हूं जिससे कि उसका पाप नष्ट हो जाता हैं सत्रह दिन तक एकाहार करे, एक दिन जल ही पान करे हे वसुन्धरे ! इस प्रकार प्रायश्चित करने पर मेरा अपराध करने वाला मनुष्य अपराध से छूट कर मेरा प्रेमी हो जाता है हे भूमे ! यह लाल वस्त्र पहिन कर मेरा पूजन करने वाले के अपराध का प्रायश्चित कह दिया है ॥१॥२॥३॥४॥५॥६॥७ हे सुन्दरि ! जो मनुष्य शास्त्र के बिना, बिना दीपक वाले विमोहित होकर शीघ्रता से अन्धकारमें मुझे छूना है उसका पतन कहता हूं उसे सुनिये मनुष्य उसी क्लेश से दुखी रहता है एक जन्म तक अन्धा होकर सर्व भक्षी होता है। हे भूमे ! अतः अनन्य मन होकर ऐसा कभी न करे हे वसुन्धरे अब अन्धकार में जो मनुष्य मेरा स्पर्श करता है वह जिस प्रकार मेरे लोक को प्राप्त करे वह सुनाता हूँ दस पंद्रह दिन तक आँखों में पट्टी बाँध लेवे तदनन्तर बीस दिन एकाहारी रहे फिर जिस किसी महीने की द्वादशी दिन एक ही समय जलपान करे तदनन्तर गौमूत्र से पकाये हुये यवान्न को खावे इस प्रकार करने पर मनुष्य पाप मुक्त हो जाता है ॥८॥९॥१०॥११॥१२॥ ॥१३॥१४॥ हे वसुन्नरे जो काले वस्त्र पहिन कर मेरी पूजा करता है उसका पातन सुनिये पाँच साल घुण होता है पाँच साल नकुल पाँच साल कच्छप नौ साल तथा पाँच साल

होता है। और संसार में घूमता रहता है पुनः कबूतर होकर मेरे पास स्थित होता है जहाँ पर कि मैं प्रतिष्ठित होता हूँ। अब काले वस्त्र पहिनने के अपराध से जिस प्रकार मुक्त होता है वह प्रायश्चित कहता हूँ। सात दिन यावकान्न खावे। तीन रात्रि तक एकैक सत्तू पिण्ड खावे तो पाप से छूट जाता है। हे देवि! जो इस विधान से कर्म करता है वह शुद्ध भक्त होकर मेरे लोक को जाता है ॥१५॥१६॥१७॥१८॥१६॥२०॥२१॥ ॥२२॥ हे देवि! जो मेरा शुद्ध भक्त होकर भी अधौत वस्त्रों को पहिन कर मेरी पूजा करता है उसका अपराध कहता हूँ जिससे संसार में गिरते हैं। हे देवि मैले वस्त्र पहिन कर पूजा करने वाला एक जन्म मदमस्त हाथी, होकर एक ऊँट, गीदड़, वृक, घोड़ा, सारंग, मृग की योनि में एक एक जन्म लेकर सात जन्मों के बाद मनुष्य योनि प्राप्त करके गुणज्ञ निरपराध अहङ्कार रहित तथा चतुर मेरा भक्त होता है पृथ्वी ने कहा— हे देव! जो आपने कहा वह सुन लिया है अब उसका प्रायश्चित सुनाइये जिससे कि, उन योनियों में न जाना पड़े, वाराह ने कहा— हे देवि! मैले वस्त्र पहिनने का अपराध नाश करने वाला प्रायश्चित कहता हूँ उसे सुनिये। तीन दिन तक यावक से, तीन दिन पिण्याक से, तीन दिन पत्ते खाकर, तीन दिन दूध पीकर, तीन रात्रि पायस खाकर, तीन दिन वायु भक्षण कर बितावे। हे वसुन्धरे! इस प्रकार करने पर अपराध मिट जाता है तथा संसार को नहीं प्राप्त होता है २३॥२४॥२५॥२६ २७॥ ॥२८॥२६॥३०॥३१॥३२॥३३॥ जो मनुष्य कुत्ते का उच्छिष्ट देता है उसके पाप को कहता हूं उसे सुनिये। सात जन्म कुत्ता, सात जन्म गीदड़, सात वर्ष उल्लू होकर मनुष्य योनि प्राप्त करके भक्त के घर में पैदा होता है। हे वसुधे! श्वानोच्छिष्ट प्रायश्चित सुनिये जिसके करने से मनुष्य संसार सागर से तर जाते हैं, तीन दिन मूल खावे, तीन दिन फूल, तीन दिन शाक,

तीन दिन दूध, तीन दिन दधि, तीन दिन पायस, तीन दिन वायु भक्षण करे इस प्रकार स्नान करके इक्कीस दिन तक भक्षण करके कर्म करे तो वह अपराध रहित हो मेरे लोक को जाता है ।।३४।।३५।।३६।।३७।।३८।।३९।।४०।। हे वसुन्धरे ! जो वाराह मांस खाकर मेरी पूजा करता है उसका गिरना भीकहता हूं। वह मनुष्य दस वर्ष वाराह होकर वन में घूमता है पांच सात वर्ष व्याध होकर चौदह वर्ष चूहा होकर उन्नीस वर्ष यातुधान होता है । आठ वर्ष शल्लकी तीस वर्ष व्याघ्र पुनः पिशाच होता है। इस प्रकार अनेक योनियों में घूमकर पुनः सिद्धि भक्त कुल में पैदा होता है। वाराह के वचन सुनकर पृथ्वी हाथ जोड़कर कहने लगी कि हे भगवन् ! वाराह मांस खाने वाला जिस प्रकार पाप से छूट जाता है वह सुनाइये । भगवान् ने कहा– पांच दिन गोमय, सात दिन कणाहार, सात दिन पानीय, सात दिन अक्षार लवण, तीन दिन सत्तू, सात दिन तिल, सात दिन रोड़े, सात दिन दूध खाकर रहे इस प्रकार। शान्त तथा दांतमन करके अहङ्कार रहित हो, उनपचास दिन तक कर्म करे तो सर्व पाप मुक्त होकर मेरे लोक को जाता है ।।४१।।४२।।४३।।४४।।४५।। ।।४६।।४७।।४८।। ४९।।५०।।५१।।५२। हे वसुन्धरे ! जो मनुष्य जालपाद खाकर यानी मछली खाकर मेरी पूजा करता है वह जयपद होकर दस वर्ष तथा पांच वर्ष रहता है। दस वर्ष कुम्भरि पाँच वर्ष सूकर होकर संसार में घूमता है पुनः अपराध रहित होकर शुद्ध भक्त कुल में पैदा होता है और सर्व कर्मों को अतिक्रमण कर मेरे विष्णु लोक को जाता है हे वसुन्धरे ! जिस प्रकार जालपद खाने वाला पुरुष घोर संसार सागर से तर जाय वह प्रायश्चित सुनाता हूं। तीन दिन यावकान्न, तीन दिन वायु, तीन दिन फल, तीन दिन तिल, पुनः तीन दिन अक्षार लवणान्न खावे इस प्रकार पंद्रह दिन तक प्रायश्चित्त करे इस प्रकार करने पर मनुष्य जालपाद भक्षण करने के अपराध से

छूट कर पवित्र होकर शुभ गति को प्राप्त करता है अतः किसी को कभी भी जालपाद नहीं भक्षण करना चाहिये और यदि अनायास से भक्षण कर लेवे तो पूर्वोक्त प्रायश्चित करे ।।५३।।५४ ५५।।५६।।५७।।५८।।५६ । इति श्री वराह पुराणे जालपाद भक्षण पराध प्रायश्चिनम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा-टीका याम् पंचत्रिसदधिक शततमोध्याय ।।१३५।।

।। अथः एक सौ छत्तीसवांऽध्याय ।।

दोहा—बराह इस अध्याय में, लगे इला समुझान ।
अनेक दोषों के करे, प्रायश्चितहु बखान ।।

अथः प्रायश्चित कर्म सूत्रम्—श्री वराह ने कहा है देवि ! वन्सुधरे जो मनुष्य दीपक स्पर्श करके बिना शुद्ध हुये मेरा पूजनादि कर्म करता है वह मनुष्य दीपक स्पर्श अपराध से पाप को प्राप्त करता है ।।१।। हे महाभागे! उस पाप फल को सुनिये दीपक स्पर्श कर जो मेरी पूजा करता है वह मनुष्य साठ हजार वर्ष तक चाण्डाल के घर में जन्म लेकर कुष्ट रोगी होकर अपने किये कर्मों को भोगता है इस प्रकार पाप फल को भोग कर पुनः यदि मेरे क्षेत्र में मर जावे तो शुद्ध भक्त कुल में पैदा होकर मेरा भक्त होता है अब उस दीपक स्पर्श दोष का फल कहता हूं जिसके करने से मनुष्य चाण्डालादि योनियों में पैदा हो कुष्ठादि रोग से छूट जाता है वह सुनिये जिस किसी भी महीने की शुक्ल द्वादशी दिन चतुर्थ भक्त आहार कर आकाश शय्या में शयन करे तथा यथा न्याय पवित्र हो मेरे कर्म में तत्पर होकर दीपक दान करे तो मनुष्य पाप से छूट जाता है हे वसुन्धरे ! यह संसार शोधन रूप दीपक स्पर्श प्रायश्चित तुझे सुना दिया है जिसके करने से कि मनुष्य पुण्य प्राप्त करता है ।।२।।३।।४।।५।।६।।७।। जो मनुष्य श्मशान भूमि ! में जाकर बिना स्नान किये मेरा स्पर्श करता है हे वसुन्धरे ! उसका फल सुनिये कि वह मनुष्य चौदह वर्ष तक शृगाल होता है सात वर्ष तक गीध होता है और दोनों गीध तथा जम्बुक जन्म में मनुष्य का मांस

खाता है पुनः नौ पांच वर्ष पिशाच होता है और उच्छिष्ट मृत शरीर को तीस वर्ष तक खाता है ॥८॥९॥१०॥११॥ एवम् प्रकार नारायण के वचन सुनकर पृथ्वी लोक नाथ जनार्दन से कहने लगी कि हे जनार्दन ! मुझे बड़ा कौतूहल है अतः इस गुप्त रहस्य को आप मुझे सुनाइये कि ईश्वर शिव ने तो श्मशान की प्रशंसा की हैं महामति भगवान शंकर कपाल ग्रहण कर नित्य महोजस श्मशान भूमि में रमते रहते हैं हे भगवन ! महादेव को श्मशान भूमि रात्रि में प्रिय है महादेव श्मशान की प्रशंसा करते हैं आप किस कारण श्मशान की निन्दा करते हैं श्री वराह ने कहा हे वसुन्धरे ! यह उत्तम आख्यान तत्व से सुनिये ॥१२॥१३॥१४॥१५॥१६॥ हे अनघ ! सुदुष्कर कर्म करके प्रशंसित व्रत वाले सर्व भूत पति हरिको आज तक भी नहीं जानते हैं शंकर ने त्रिपुर नाम नगरी में त्रिपुरासुर तथा बालक वृद्ध और सुन्दर रूप वाली स्त्रियों का मार गिराया उसी पाप से युक्त होकर शंकर चेष्टा रहित हुआ मानस ऐश्वर्य्य तथा माया बल नष्ट हुआ तदनन्तर शिव विवरण वदन होकर अपने सब गणों से युक्त होकर उसी स्थान में स्थित हुआ हे वसुन्धरे ! उस समय में उस नष्ट माया वाले शिव की चिन्ता करने लगा तदनन्तर मैंने उसका ध्यान किया जभी में अपने दिव्य चक्षुओं से शिव को देख रहा था कि सर्व भूत महेश्वर रुद्र माया बल रहित दिखाई दिया तब मैं यजन करने की इच्छा वाले त्रियम्बक के समीप गया और संज्ञा ज्ञान योग बल जिसका नष्ट होगया ऐसे अबल महादेव से इस प्रकार कहने लगा कि हे रुद्र ! इस प्रकार दुख युक्त होकर क्यों स्थित हुये हो आप जगत के कर्त्ता हैं विकर्त्ता हैं और आप विकृत आकृति वाले हैं ॥१७॥१८॥१९॥२०॥२१॥२२॥२३॥२४॥ आप वृष वाहन हो वियोग हो आप जगत की योनि हो आप परायण हैं उग्र देव हैं देव देवों के आदि हैं आप साम हैं दिशा रूप हैं गणों

से युक्त होकर क्या अपनी आत्मा को नहीं जानते हैं ! हे देव देवेश ! यह त्रिशु लोचन आपका वदन मलिन क्यों हुआ है जो मैं आपको पूछ रहा हूं उसका उत्तर दीजिये और महान आत्मा विष्णु की योग माया का स्मरण कीजिये में आपकी भलाई ही के लिये यहां आया हूं इस प्रकार मेरे वचन सुनकर पाप से संतप्त लोचन वाला शिव मधुर वचन कहने लगा सर्व लोक महेश्वर के सिवाय अन्य कौन ऐसा करता है हे विष्णो ! हे माधव ! आपके ही प्रसाद से देवत्व तथा सांख्य और योग प्राप्त किया है इस समय आपके आने से मेरी पाप व्यथा दूर होगयी है आपके प्रसाद से पूर्ण जल वाले सागर के समान होगया हूँ हे माधव ! मैं आपको जानता हूं और आप मुझको जानते हैं हे जनार्दन ! हमारे अन्तर को कोई नहीं जानता है ॥२५॥॥२६॥२७॥२८॥२९॥ ॥३०॥३१॥३२॥ हमारे अन्तर से ब्रह्मा को नहीं जानते हैं हे सब मायाओं की पिटारी रूप ! हे विष्णो ! हे महाभाग ! साधू इस प्रकार मेरे लिये वचन कह मुहूर्त मात्र ध्यान धर कर महादेव पुनः कहने लगा कि हे विष्णो ! आपके प्रसाद से मैंने त्रिपुरासुर को मारा है अनेक दानव तथा गर्भिणी स्त्री को मार गिराया है अनेकों बाल वृद्ध मार गिराये हैं उसी पाप के दोष से मैं निर्बल होगया हूँ हे माधव ! योग माया तथा ऐश्वर्य्य नष्ट होगया है हे विष्णो ! अब इस समय मुझ को पाप मिटाने के लिये क्या करना चाहिये हे विष्णो ! मुझे ऐसा पाप सोधक उपाय बताइये कि जिससे मेरा पाप दूर होजाय एवम् प्रकार चिन्तात्मा रुद्र के वचन सुन कर मैंने कहा हे शंकर कपाल माला ग्रहण करके सम्वल को चले जाइये इस प्रकार मेरा वचन सुनकर शंकर मुझसे कहने लगा कि हे जगत्पते ! मुझे स्पष्ट समझाइये कि जहां मैंने जाना है वह समल किस प्रकार होता है शंकर के वचन सुनकर मैंने पाप मिटाने के लिये यह वाक्य कहा कि हे रुद्र ! समल श्मशान है पूतिकि व्रण गन्धिक है ॥३३॥३४॥३५॥३६॥३७॥३८॥३९॥

४० ४१॥४२॥ वहां स्वयम् विगत स्पृहा वाले मनुष्य निवास करते हैं अतः हे शंकर कपाल ग्रहण करके उसी श्मशान भूमि में रमते रहो और वहां दिव्य हजार वर्ष तक निवास करके मारे हुओं का मांस जो आपको प्रिय है पाप क्षय करने की इच्छा से उन मांसों को खाते रहो एवम् प्रकार अपने गणों के सहित दिव्य हजार वर्ष तक श्मशान भूमि में निवास करके पुनः महा मुनि गौतम के आश्रम में जाना और उस गौतम के आश्रम में गौतम मुनि के प्रसाद से पाप मुक्त होकर आप अपनी आत्मा को पहिचानेंगे और आपकी प्रसन्नता से सिर में स्थित पाप युक्त कपाल को गौतम ऋषि अवश्य गिरा सकता है एवम् प्रकार रुद्र को वरदान देकर मैं वहीं पर अन्तर्धान हुआ हूँ और रुद्र भी मेरे कहनानुसार श्मशान भूमि में रमता रहता है हे वसुन्धरे! अतः श्मशान भूमि मुझे प्रिय नहीं लगती क्योंकि वहाँ रुद्र कृत भयावना पाप स्थित है ।४३ ४४॥४५॥४६ ४७॥४८। ॥४६॥५०॥ हे भद्रे! यह निन्दित श्मशान मैंने तुझे सुना दिया है जो श्मशान में जाकर विना स्नान किये मेरा पूजादि कर्म करता है उसका प्रायश्चित सुनाता हूं जिसके करने से मनुष्य पाप मुक्त हो शुद्ध हो जाता है मनुष्य को दस पांच दिन चतुर्थ भक्त करके एक वस्त्र धारण कर कुशासन पर आकाश शयन करे और प्रातः काल पञ्चगव्य पान करे तो सर्व पापमुक्त हो विष्णु लोक को जाता है जो पिण्याक खाकर याने तिलादियों का चूरा खाकर मेरी पूजा करता है हे वसुन्धरे! अब उसका भी पाप तथा प्रायश्चित सुनिये वह मनुष्य दस वर्ष तक उल्लू तीन वर्ष तक कच्छप होता है पुनः मेरे कर्म करने वाला होता है हे वसुन्धरे! इस संसार में जिन दोषों को देखते हैं अब उस पिण्याक भक्षण दोष का प्रायश्चित सुनाता हूं जिसके करने से मनुष्य पाप मुक्त होकर संसार सागर से पार हो जाता है ॥५१॥५२॥५३॥५४॥५५॥५६॥५७॥ एक दिन गोमूत्र में पकाया

हुआ यावकान्न खावे रात्रि में वीरासन्न से आकाश शयन करे तो वह मनुष्य संसार सागर से पार होकर विष्णु लोक को जाता है और जो वाराह मांस मुझे प्रापणक देता है वह पापकर्मा मूर्ख मनुष्य संसार में जिन दोषों को प्राप्त करता है हे वसुन्धरे! वह सुनिये ॥५८॥५९॥६० उस वाराह के अङ्ग में जितने रोम हैं उतने हजार वर्ष तक वह मनुष्य नरक में रहता है हे वसुन्धरे! मैं तुझे और भी सुनाता हूं कि जो वाराह मांस से प्रापणक करे तो जितने दिन तक उस प्रतिष्ठित वराह मांस से मेरा भजन करता है वह मनुष्य उतने ही समय तक सूकर योनि को प्राप्त करता है और पतित होता है हे वसुन्धरे! मैं और भी कहता हूँ जो वाराह मांस से प्रापणक करके मेरे कर्म करता हुआ मनुष्य जिस गति को प्राप्त करता है वह सुनिये ॥६१॥६२॥६३॥६४॥ वह मनुष्य वाराह मॉंस प्रापण करने से संसार में जाकर एक जन्म तक अन्धा होता है पुनः शुद्ध भक्त कुल में पैदा होता है और और विनीत संस्कार युक्त होता है मेरे कर्म करने वाला होता है द्रव्यवान गुणवान रूपवान् तथा शीलवान होता है हे वसुन्धरे! अब वाराह मॉंस प्रापण करने वाले के कायविशोदनार्थ प्रायश्चित कहता हूँ, जिससे कि मेरा भक्त पाप से मुक्त होता है। सात दिन फलाहार सात दिन मूलाहार सात दिन पायशाहार सात दिन तक्राहार सात दिन पावकाहार करे तो पाप मुक्त होकर मनुष्य मेरे लोक को जाता है हे वरारोहे! अब जो मद्य पीकर मेरी पूजा करता है उसका दोष कहता हूं उसे सुनिये मद्य पीकर मेरी पूजा करने वाला मनुष्य दस हजार वर्ष तक दरिद्री होता है, पुनः सुन्दर पवित्र आत्मा वाला मेरा भक्त होता है और जो दीक्षित भक्त होकर भी काम राग से मोहित होकर भी मद्य पीता है उसका प्रायश्चित नहीं है। हे वसुन्धरे! तुझे और भी सुनाता हूं कि अग्नि वर्ण सुरा पीकर उसके द्वारा पाप से छूट जाता है। ॥६५॥६६॥६७॥६८॥६९॥७०॥ ॥७१॥७२॥७३। जो इस विधान से प्रायश्चित करता है वह

पाप मुक्त हो संसार सागर से पार हो जाता है । तथा हे वसुन्धरे ! जो मनुष्य मेरा पुजारी होकर कौशुम्भ शाक खाता है वह घोर नरक में कष्ट पाता है वह मनुष्य दस पाँच वर्ष तक सूकर की योनि प्राप्त करता है पुनः तीन वर्ष कुत्ते की योनि पुनः एक वर्ष शृगाल की योनि प्राप्त करता है तदनन्तर पाप से शुद्ध होकर मेरे कर्म परायण हो मेरे लोक को जाता है ॥७४॥७५॥७६॥७७॥ भगवान के इस प्रकार वचन सुनकर पृथ्वी भगवान् से कहने लगी कि हे प्रभो ! कौशुम्भ शाक नैवेद्य देने वाला मनुष्य किस प्रायश्चित के करने से पाप से मुक्त होता है वह सुनाइये श्री वाराह ने कहा– हे वसुन्धरे जो मनुष्य कौशुम्भ शाक से जो मुझे नैवेद्य देता है वह दस हजार वर्ष तक नरक में कष्ट भोगता है अब उसका प्रायश्चित कहता हूं उसे सुनिये कौशुम्भखाने पर चान्द्रायण व्रत करे तथा कौशुम्भ शाक से प्रापण करने पर बारह दिन तक पयो व्रत करना चाहिये जो इस विधान से प्रायश्चित करता है वह पापों से मुक्त होकर विष्णु लोक जाता है ॥७८।७६। ८०।८१ ।८२॥ हे माधवि ! जो मनुष्य विना धुले दूसरे के वस्त्र पहिन कर मेरा तथा पूजनादि कर्म करता है वह तीन सात वर्ष तक मृगयोनि प्राप्त करता है एक जन्म लंगड़ा होता है तथा क्रोधी और तत्पश्चात् मेरा भक्त होता है हे वसुन्धरे ! अब उसका प्रायश्चित सुनाता हूं जिसके करने से संसार सागर से तर जाता है अष्ट भक्त करके मेरी भक्ति में लवलीन होकर माघ महीने की शुक्ल द्वादशी दिन जलाशय में जाकर शान्त- दान्त पुरुष अनन्य मन से रात्रि भर मेरा चिन्तन करे प्रातः काल सूर्य के उदय होने पर पञ्चगव्य पान करे पुनः मेरी पूजनादि क्रिया करे जो इस विधान से प्रायश्चित करता है वह सर्व पाप निर्मुक्त होकर विष्णु लोक को जाता है । ॥८३॥८४॥८५॥८६॥८७॥८८॥८६॥६०॥ जो भक्त होकर नवान्न नहीं करता उसके पितर पन्द्रह वर्ष तक नहीं खाते हैं जो बिना दिये हुये नवान्न खाता है उसका कोई

भी धर्म नहीं होता है हे वसुन्धरे ! अब उसका प्रायश्चित सुनाता हूं जो कि मेरे भक्तों को सुख देने वाला है तीन रात्रि उपवास कर एक रात्रि आकाश शयन करके वह मनुष्य चौथे दिन शुद्ध होता है इस प्रकार विधि करके सूर्य के उदय होने पर पञ्च गव्य पीकर नवान्न न बांटने वाला मनुष्य पाप से शीघ्र मुक्त होता है जो इस विधान से प्रायश्चित करता है वह सर्व संग छोड़कर विष्णु लोक को जाता है जो मनुष्य गन्ध माल्यादि न देकर केवल धूप सुकाता है हे भूमे ! वह इक्कीस वर्ष तक अयस्कार के समीप निवास करने वाला कुणय यातुधान होता है हे वसुन्धरे ! अब उसका प्रायश्चित सुनाता हूँ जिस किसी महीने की शुक्ल द्वादशी दिन उपवास करे ॥९१॥९२।९३॥९४॥९५॥९६। ९७॥९८। ९९॥ १००॥ उपवास कर अष्ट भक्त तथा दश एकादश भक्त करके प्रातःकाल सूर्य के उदय होने पर पञ्च गव्य पान करे तो शीघ्र पाप से छूट जाता है जो इस विधान से प्रायश्चित्त करता है वह तथा उसके पितामहादि पितर सब ही संसार सागर से तथा दुखादि सागर से तर जाते हैं जो जूते पहिन कर मेरी परिक्रमा करे वह तेरह वर्ष तक चमार की योनि प्राप्त करता है पुनः उस चमार योनि से भ्रष्ट होकर सूकर की योनि में जाता है पुनः कुत्ते की योनि में जन्म लेता है पुनः मनुष्य योनि को प्राप्त करता है उस मनुष्य योनि में अपराध रहित नम्र स्वभाव वाला मेरा भक्त होकर संसार से मुक्त हो विष्णु लोक को जाता है हे वसुन्धरे ! जो इस प्रकार प्रायश्चित कर्म करता है वह पापों से मुक्त होता है जो विना नगाड़े के शब्द किये मेरे किवाड़ खुलाता है वह एक जन्म तक बधिर होता है ।१०१॥१०२॥१०३॥१०४॥१०५॥१०६॥१०७॥१०८ हे वसुन्धरे ! अब जो मनुष्य नगाड़े का शब्द न करके मेरे किवाड़ खुलाता है उसका प्रायश्चित सुनाता हूँ जिसके करने से मनुष्य पाप मुक्त होजाता है उस मनुष्य को जिस किसी शुक्ल पक्ष की द्वादशी दिन आकाश शयन करना चाहिये हे वसुधे ! जो इस

विधान से कर्म करता है वह अपराध रहित होकर मेरे लोक को जाता है जो मनुष्य बहुत अन्न खाकर अजीर्ण हो डकार लेता हुआ विना स्नान किये मेरा पूजन करता है वह एक जन्म कुत्ता एक जन्म वानर एक जन्म बकरा एक जन्म शृगाल एक जन्म अन्धा पुनः चूहा होता है एवम् प्रकार अपराध रहित होकर शुद्ध भक्त कुल में पैदा होता है अब उस पाप का प्रायश्चित कहता हूं कि तीन दिन पक्का हार तीन दिन मूलाहार तीन दिन पायशा हार तीन दिन सत्तू भोजन तीन दिन वायु भक्षण तीन दिन आकाश शयन करके पुनः प्रातःकाल उठकर दन्तधावन करके पञ्चगव्य पान करे जो इस विधान से प्रायश्चित करता है वह पाप से छुटकारा पाकर विष्णु लोक को जाता है ॥१०६॥११०॥१११ ११२॥११३॥११४॥११५॥११६॥११७ यह आख्यानों में महाख्यान है तपों में परमतप है हे महेश्वरि! मैं यहां ब्राह्मणों को कहूँगा यह धर्म है कीर्ति है बड़े सदाचारों में श्रेष्ठ है गुणों में परमगुण है स्मृतियों में महा स्मृति है जो मनुष्य प्रातःकाल उठकर नित्य इसको पढ़ता है उसके इक्कीस कुल के पितर तर जाते हैं यह आरोग्यों में महा आरोग्य है मंगलों का मंगल है रत्नों में प्रधान रत्न है सब पापों को नाश करने वाला है जो भक्त होकर नित्य इसको पढ़ता है वह अपराध करने पर भी पाप से लिप्त नहीं होता है यह जपने योग्य है प्रमाण है सन्ध्योपासन है जो प्रातःकाल उठ इसको पढ़ता है वह विष्णु लोक जाता है इस रहस्य को मूर्ख तथा कुशिष्यों को न सुनावे केवल मम कर्म परायण श्रेष्ठ भक्तों को सुनाना चाहिये है देवि! यह आचार विनिश्चय तुझे सुना दिया है जो कि तूने पहिले मुझ से पूछा था वह कह दिया और क्या सुनना चाहती है ॥१२०॥१२१॥ १२२॥१२३॥१२४॥१२५॥१२६॥१२७। इति श्री वराह पुराणे प्रायश्चित कर्म सूत्रम नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् षट्त्रिंशदधिक शततमोऽध्याय ॥१३६॥

॥ अथः एक सौ सैंतीसवांऽध्याय ॥

दोहा—इक सौ सैंतीस में अब, गृध्रजम्बुक का ख्यान।
धरणी सों वरणन करें हैं, श्री वराह भगवान् ॥

अथः गृध्रजम्बुकाख्यानम्—सूत ने कहा 'यह' अपराध मिटाने वाला भक्तों का प्रिय श्रेष्ठ भक्त कर्म सुनकर पृथ्वी कहने लगी हे भगवन्! आपने जो भक्त सुख के लिये तथा मेरी प्रसन्नता के लिये महा श्रेष्ठ कर्म कहा है वह सुन लिया हे महाबाहो ! अब भक्त सुख के लिये सर्व धर्म अर्थ साधक उपाय कहिये-कुब्जाम्रक चेत्र में कौन शुभ व्रत कहा गया है और वह भक्त सुख देने वाला कौन श्रेष्ठ चेत्र है वह सुनाइये ॥१॥२॥३॥४॥ श्री वराह ने कहा हे वसुन्धरे! जो तूने मेरा परम गुप्त शुद्ध जो कि भक्त सुख देने वाला मेरा चेत्र पूछा है वह सुनिये मेरा प्रधान कोकामुख चेत्र तथा सौकरव चेत्र सर्व संसार से मोच्च करने वाला है हे देवि ! जहां पर स्थित हुई तुझे मैंने रसातल से उठाया था जहां भागीरथी गंगा है वही मेरा सौकरव चेत्र है ॥५॥६॥७॥ पृथ्वी ने कहा हे प्रभो ! आपके सौकरव चेत्र में जो प्राणों को छोड़ते हैं वे किन लोक को जाते हैं तथा उस चेत्र में स्नान पान करने से क्या पुण्य प्राप्त होता है हे भगवन्! आपके सौकरव चेत्र में कितने तीर्थ हैं वह सुनाइये श्री वराह ने कहा हे देवि ! जो तू पूछ रही है वह सुनिये सौकरव चेत्र में मरने वाले जिस गति को प्राप्त करते हैं तथा स्नान करने वाले जिस पुण्य को प्राप्त करते हैं और जितने तीर्थ वहां हैं वह सुनिये हे महाभागे ! सौकरव चेत्र में जाकर जो प्राणों को छोड़ता है उसके इक्कीस कुल के पितर स्वर्ग जाते हैं हे वसुन्धरे ! वहां जाने से तथा मेरा मुख दर्शन करने से मनुष्य श्रेष्ठ कुल में सात जन्मांतर में पैदा होता है और धन धान्य युक्त रूपवान गुणवान पवित्र मेरे कर्म करने वाला मेरा भक्त होता है ॥८॥९॥१०॥११॥१२॥१३॥१४॥१५॥ एवम् प्रकार

अपराध रहित मनुष्य योनि में पैदा होकरउस क्षेत्र में जाकर प्राणों को छोड़े जो सौकरव क्षेत्र में प्राणों का छोड़ता है वह उस क्षेत्र के प्रभाव से शंख, चक्र, गदा. पद्म धनुष हाथ में लो चतुर्भुज रूप होकर शीघ्र इस कलेवर को छोड़ कर श्वेत द्वीप में जाता है हे वसुन्धरे ! तुझे और भी सुनाता हूँ उसे सुनिये उन तीर्थों में स्नान करने वाला जिस प्रधान गति को प्राप्त करता है वह सुनिये जहां चक्र स्थित है उस चक्र तीर्थ का पुण्य सुनिये मनुष्य चक्र तीर्थ में जाकर नियतासन्न हो कर वैशाख द्वादशी दिन जो विधि पूर्वक स्नान करता है वह ग्यारह हजार वर्ष तक धनधान्य युक्त श्रेष्ठ कुल में पैदा होता है और कर्म करने वाला मेरा भक्त होता है अपराध रहित होता है दीक्षित होता है और मनुष्य योनि प्राप्त कर संसार सागर से पार होने के लिये उस चक्र तीर्थ में जाकर कर्म करे तो शंख, चक्र, गदा, पद्म हाथ में लिये मेरे ही समान चतुर्भुज रूप होकर मेरे विष्णु लोक को जाता है ॥१६॥१७॥१८॥१६॥२०॥ २१॥२१॥२३॥ २४॥ भगवान् के इस प्रकार वचन सुन कर हाथ जोड़ कर पृथ्वी भगवान से कहने लगी कि हे भगवन् ! उस सौकरव तीर्थ में चन्द्रमा ने जिस प्रकार आपकी आराधना की है वह मुझे तत्व से सुनाइये पृथ्वी के वचन सुनकर माया की पिटारी रूप विष्णु मेघ गम्भीर वाणी से पृथ्वी को कहने लगा कि हे वसुन्धरे ! जिस प्रकार चन्द्रमा ने मेरी आराधना की है उसका कारण प्रयत्न से कहते हुये मुझ से सुनिये चन्द्रमा ने मेरी आराधना की और मैंने आराधना से प्रसन्न होकर अपना रूप चन्द्रमा को दिखाया जो रूप देवताओं को दुर्लभ है वह दिखाया उस रूप को देखकर मेरे तेज से मोहित होकर चन्द्रमा मुझे देखने को समर्थ न हुआ तब आंख मींच कर चन्द्रमा ने हाथ जोड़कर नमस्कार किया परन्तु डरपोक चञ्चल चुन्धाये नेत्रों वाला कुछ

बोल न सका इस प्रकार चेष्टा करते हुये ब्राह्मणों का ईश्वर चन्द्रमा को मैंने सूक्ष्म वाणि से प्रेरित किया कि हे सोम ! किस उद्देश्य से तूने कठिन तप किया है जो तेरे मन में है वह कह दीजिये मैं तेरी प्रसन्नता से सब कुछ सम्पादन कर दूंगा ॥२५॥ ॥२६॥२७॥२८॥२९॥३०॥३१॥३२॥३३॥३४॥ तदनन्तर मेरा वाक्य सुनकर ग्रहों का ईश्वर चन्द्रमा सोम तीर्थ में स्थित हो मधुर वाक्य बोलने लगा कि हे भगवन् ! यदि आप प्रसन्न हो कर यहां आये हैं तो हे योगनाथ ! जब तब ये लोक धारण किये हैं तब तक आप में मेरी अतुल भक्ति होवे हे प्रभो ! और जो आपने मेरा रूप स्थापित किया है वह वहीं स्थित हुआ सातों द्वीपों में दिखाई देवे जो ब्राह्मण यज्ञों में सोम यह कह रस-पान करेंगे वह आपके प्रसाद से परम गति को प्राप्त करें अमाव-स्या में क्षीण होकर उस दिन पिण्डादि पितृ क्रिया करें मैं सौम्य दर्शन हो जाऊँ अधर्म में मेरी बुद्धि कभी न लगे और मैं जिस प्रकार औषधियों का पति हो जाऊँ वह कीजिये । हे भगवन् ! यदि आप मेरे ऊपर प्रसन्न हैं तो मुझे यह वरदान दीजिये ॥३५॥३६॥३७॥३८॥३९॥४०॥४१॥४२॥ तब चन्द्रमा के वचन सुनकर मैं वहीं पर अन्तर्धान हुआ हूं हे महाभागे एवम् प्रकार सोम तीर्थ में तप करके परम सिद्धि प्राप्त की है । जो मनुष्य मेरी कर्म विधि में स्थित होकर अष्टम् भक्त से सोम तीर्थ में कर्म करता है उसका फल सुनिये जिस सोम तीर्थ में सोम ने पाँच हजार वर्ष तक पैर से खड़ा होकर तथा पाँच हजार वर्ष तक ऊर्ध्व मुख स्थित होकर उग्र तप किया है तथा कान्तिमान होकर मेरे अपराध से मुक्त हो ब्राह्मणों का पति हुआ है । हे वसुन्धरे सोम तीर्थ में स्नानादि क्रिया करने वाला तेतीस हजार वर्ष तक वेद वेदाङ्ग को जानने वाला ब्राह्मण होता है तथा द्रव्य गुणवान मेरा भक्त होता है और अपराध रहित हो वह ब्राह्मण संसार से मुक्त होता है हे सुन्दरि अब जिस प्रकार मेरे

मार्गानुयायी भक्त उस सोत तीर्थ को जाने उसका चिन्ह कहता हूँ उसे सुनिये वैसाख शुक्ल द्वादशी दिन वह जाना जाता है ॥४३।।४४॥४५।४६।।४७॥४८॥४९॥५०॥५१॥५२॥ उस दिन अन्धकार के आ जाने पर जहां कोई नहीं दिखाई देता वहां सौम के बिना जमीन चन्द्र कान्ति वाली दीखती है वहां चन्द्र का प्रकाश दीखता है परन्तु चन्द्र नहीं दीखता है हे भद्रे! यह परम विस्मय तुझे सुनाता हूँ हे महाभागे! यह पुण्य सौकरव क्षेत्र में सौम तीर्थ का चिन्ह है जिससे कि जन्तु मुक्त हो जाते हैं हे वसुन्धरे! और भी सुनाता हूं इस क्षेत्र का परम विस्मय कारक प्रभाव सुनिये इस तीर्थ में कर्मों के प्रभाव से बिना इच्छा से मरी हुई गीदड़ी भी मनुष्य योनि प्राप्त कर राजपुत्री हुई है उसके विशाल नेत्र थे सर्वाङ्ग सुन्दर थे गुणरूप युक्त थी चौसठ कला परिपूर्ण थी उस सोम तीर्थ के पुर्वी तरफ ग्रीध्र वट तीर्थ कहा गया है जहां बिना इच्छा से मरा हुआ गीध मनुष्य योनि को प्राप्त हुआ है एवम प्रकार नारायण के वचन सुनकर पृथ्वी विष्णु भगवान से मधुर वाक्य बोलने लगी हे भगवन् आपने तीर्थ का बड़ा ही प्रभाव सुनाया है जिस तीर्थ के प्रभाव से तिर्यक योनि में गये हुये गीध और शृगाली भी मनुष्य योनि को प्राप्त हुये हैं। हे जनार्दन! उस तीर्थ में स्नान करने तथा प्राणों को छोड़ने से कौन गति मिलती है हे केशव! वह सुनाइये ॥५३॥५४॥५५॥।५६॥५७॥५८.५९.६०॥६१॥६२॥ उनका चिन्ह किस प्रकार है जिससे कि वे उस प्रकार होते हैं बिना इच्छा के भी उस क्षेत्र में मरने से गीध और शृंगाली परम गति को प्राप्त हुये हैं तदनन्तर पृथ्वी के वचन सुनकर भगवान पृथ्वी से मधुर वाक्य कहने लगे कि हे भूमे! जो तू मुझसे पूछती है कि वे दोनों गीध तथा शृगाली किस प्रकार मनुष्य योनि को प्राप्त हुये हैं वह सुनिये त्रेतायुग के उपक्रान्त होने पर उस युग संस्थित में एक ब्रह्मदत्त नाम का

राजा अपने धर्म में दृढ़ होकर काम्पिल नगर की प्रजा का पालन करता था उसका सोमदत्त नाम से विख्यात् पुत्र सर्व धर्मों में निष्ठित था ॥६३॥६४। ६५॥६६॥६७। ६८॥ एक समय पिता के लिये शिकार लाने की इच्छा से शिकार खेलने व्याघ्र सिंहादि से सेवित जङ्गल में गया वहां जाकर पितृ कार्य के लिये कोई भी मृग नहीं मिला मृगों को ढूंढ़ रहा था कि एक शृगाली उसके दाहिनी ओर से स्थित हुई उसने उस शृगाली को एक वांण से भेदन किया वह शृगाली वाण से सन्तप्त व्यथा से पीड़ित होकर नदी किनारे जल पीकर एक वृक्ष कोटर में जा छिपी और वहां दुख से दुखी हो उसने विना इच्छा के प्राणों को त्याग दिया वह सोम तीर्थ में प्राणों को छोड़ती हुई इसी समय वह राजपुत्र सोमदत्त भूख से पीड़ित होकर गृध्र वट तीर्थ में आया और वहां पर विश्राम करने लगा तभी उसने एक वट वृक्ष की शाखा में स्थित गीध को देखकर एक वाण से मार गिराया वह गीध वाण से पीड़ित होकर प्राणों को छोड़कर वट वृक्ष के मूल पर गिर पड़ा उस मरे हुये गीध को देखकर राजपुत्र अत्यन्त प्रसन्न हुआ और उसके पंख काटकर वाण पुंख ठीक करवाने की इच्छा से घर चला आया ॥६९ ॥७०॥७१॥७२॥७३॥७४॥७५॥७६॥ ॥७७॥ वह विना इच्छा से मरा हुआ गीध भी बहुत समय पश्चात कलिंग राज का पुत्र हुआ है वह पुत्र गुणों से विभूषित तथा रूपवान पण्डित और सर्वदा प्रजा को आनन्द करने वाला हुआ है उसके राजा होनेपर कोई भी कभी भी कष्ट नहीं मालूम करते थे और जो वह शृगाली थी वह काशीराज की पुत्री हुई है। रूप गुण वाली तथा चतुर सर्वाङ्ग सुन्दरी चौंसठ कला युक्त कोकिल के समान सुन्दर मधुर स्वर वाली काशीराज की पुत्री हुई एवम् काशीराज और कलिंग राज-के घर पुत्र पुत्री उत्पन्न होने पर उन दोनों राजाओं का आपस में हार्दिक प्रीति हुई । हे भूमे ! उनका मेरे प्रसाद से अपने आप आपस में सम्बन्ध हुआ तदनन्तर बहुत समय बीतने पर जब कि वे

नौजवान हो गये कलिंग राजपुत्र ने काञ्चीराज पुत्री के साथ विधि पूर्वक विवाह किया पुत्री तथा जामाता के प्रेम से कान्चीराज ने अनेक रत्न दिव्य भूषण तथा हाथी घोड़े स्त्रियें दानाद में दिये तदनन्तर कलिंगराज भी कान्चीराज से अति सम्मानित होकर अपने पुत्र तथा पुत्रवधू को लेकर अपने घर आया एवम् प्रकार कुछ समय व्यतीत होने पर उन दोनों दम्पति का आपस में अव्युच्छिन्न प्रीति रोहिणी और चन्द्रमा के समान हुई वे दोनों विहार स्थानों में देव मन्दिरों में सुख पूर्वक विहार करने लगे ॥७८॥७९॥८०॥८१॥८२॥८३॥८४॥८५॥८६॥८७॥ नन्दन वन के समान उपमा वाले वन तथा उपवनों में विहार करते रहते थे यदि कभी वह कान्चीराज पुत्री अपने पति के समीप में नहीं देखती थी तो अपने को नष्ट प्रायः जानती थी तथा वह राजपुत्र उस अपनी भार्या को नहीं देखता था तो वह भी अपने को नष्ट प्रायः मानता था एवम् प्रकार उनकी आपस में उत्तम प्रीति दिनों दिन बढ़ती रही उन पुण्य कर्म वालों का अन्तर कोई मनुष्य नहीं देखता था हे वसुन्धरे! वह कलिंग राजपुत्र शील से, बुद्धि से, नगर निवासियों को प्रसन्न करता था तथा अन्तःपुर में जो औरतें थीं उन सबको अपने शील स्वभाव से वे दोनों प्रसन्न करते थे हे वसुन्धरे! इस प्रकार उनकी प्रीति दिनों दिन बढ़ती रही वे दोनों इन्द्र और इन्द्राणी के समान आपस में रमते रहते थे अगर किसी समय वह कान्चीराज पुत्री नम्रता पूर्वक अपने पति से कहने लगी कि हे राजपुत्र! मैं आपसे कुछ पूछना चाहती हूँ मेरे प्रेम से आप उस प्रिय को कहने योग्य हो तदनन्तर भार्या के वचन सुनकर राजपुत्र मधुर वाक्य कहने लगा हे भद्रे! जो तू वर्तती है तथा तेरी जो इच्छा है हे सुन्दरि मैं सत्य की सौगन्ध खाकर कहता हूँ कि मैं तुमने सब कुछ कहूंगा ब्राह्मणों का मूल सत्य है विष्णु सत्य में स्थित है सत्य का मूल

तप है राज्य सत्य में ही प्रतिष्ठित है हे सुन्दरि ! मैं कभी भी झूंठ नहीं कहूंगा मैंने पहिले भी कभी झूंठ नहीं कहा है कहिये आपका क्या कार्य्य करूं हाथी घोड़े रथ रत्न विमान धन आदि तुझे क्या दूं ॥८८॥८६॥६०॥६१॥६२॥६३॥६४ ६५॥६६॥ ६७॥६८॥६६। १००॥ अथवा अच्छी रेशमी साड़ी पहिनाऊँ इस प्रकार पति के वचन सुनकर काञ्ची राजपुत्री पति के दोनों चरण पकड़ कर यह कहने लगी हे भगवन् ! हाथी घोड़े रथ तथा रत्न आदि कुछ नहीं चाहती हूं जब तक गुरु हैं याने ससुरा जी हैं तब तक रेशमी साड़ी भी नहीं चाहती हूं किन्तु दो पहर में अकेला सोना चाहती हूँ बहुत ज्यादा समय तक नहीं बल्कि मुहूर्त मात्र ही शयन करना चाहती हूँ परन्तु शर्त यह है कि मुझे कोई सोते समय न देखे सास-ससुर तथा और कोई न देखें यह मुहूर्त मात्र का व्रत है अपने जो कोई घर के मनुष्य हैं वे भी कभी मुझे शयन करती न देखें तदनन्तर भार्य्या के वचन सुन कर कलिङ्ग राजपुत्र ने उसे कहा कि अच्छा ऐसा ही करूंगा तू सावधान होजा १०१॥१०२॥१०३॥१०४॥१०५॥१०६॥१०७॥ तुझे शयन करते समय कोई नहीं देखेगा एवम् प्रकार उन दोनों के समय व्यतीत होने पर कलिंग राज बुढ़ापे से युक्ति हो राज्य में पुत्र को अभिशिक्त करने लगा अपनी खानदानी से आये हुये राज्य को निष्कण्टक करके पुत्र को दिया और अपने आप पञ्चत्व को प्राप्त हुआ एवम् प्रकार पिता से दिये हुये राज्य का राजपुत्र यथोचित पालन करने लगा ८॥६॥११०॥ वह कलिंगराज पुत्री भी जहां कोई न देखे वहां शयन करती थी बहुत समयानन्तर कलिंग राजपुत्र ने उस रानी में सूर्य्य कान्ति वाले पांच पुत्र पैदा किये इस प्रकार मनुष्य लोक मेरी माया से मोहित होता है अपन कर्मों में लवलीन होकर मनुष्य जीव जन्तु, चक्र की भांति घूमते रहते हैं जन्तु पैदा होकर बालक होता है वह बालक तरुण होता है पुनः मध्यम अवस्था को प्राप्त करता है पुनः बुढ़ा होजाता है बालक अज्ञान से

जिन कर्मों को करता है वह कर्म करने पर भी पाप से लिप्त नहीं होता है उस कलिंग राजपुत्र के सुख पूर्वक निष्कण्टक राज्य पालन करते हुये सतहत्तर वर्ष व्यतीत हुये अठहत्तरवाँ वर्ष आने पर वह कलिंग राज दोपहर के समय उसी अर्थ को सोचने लगा वैशाख शुक्ल द्वादशी दिन उसकी अपनी प्रिया का व्रत देखने की इच्छा हुई कौन पूजने योग्य है यह मेरी भार्य्या किस व्रत को कर रही है यह एकान्त में सोती है शयन करते हुये कोई व्रत नहीं कहा गया है विष्णु तथा शिव ने भी शयन समय कोई व्रत विधान कर्म नहीं कहा है ॥१११॥१२।१३॥१४॥१५॥१६॥१७॥१८॥११६॥ मनुका किया हुआ धर्म भी ऐसा नहीं दीखता है यह कोई अपकारी धर्म भी नहीं है योगियों का भी यह धर्म नहीं है॥१२०॥ यह कहीं नहीं है जो कि मेरी भार्य्या शयन में व्रत करती है वारहस्पत्य धर्मों में मान्य धर्मों में भी कहीं नहीं देखा जाता कि शयन में व्रत किया जाय इच्छा नुसार मांस आदि भोग्य पदार्थों को खाकर पान सुपारी चबाकर लाल वस्त्र तथा सूक्ष्म से सूक्ष्म रेशमी कपड़े पहिनकर सर्व सुगन्धियों से सुगन्धित होकर सब रत्नों को पहिन कर मेरी कान्ता यहां क्या व्रत कर रही है देखने पर वह क्रोधित होगी परन्तु अवश्य देखना चाहिये कि वह किस प्रकार का व्रत करती है क्या किन्नरों से उत्तम वशीकरण मन्त्र जपती है अथवा योगीश्वरी होकर जहां मन चाहे वहां जाती है अथवा दूसरे से रचे कामराग से घिरी रहती है इस प्रकार कलिंग राजपुत्र के सोचने पर सूर्य भी अस्त होगया सबको रंजित करने वाली रजनी छागयी पुनः रात्री के व्यतीत होने पर सुन्दर प्रभात समय में सूत, मागध, वन्दी, वैतालिक आदियों के गान करने पर शंख दुन्दुभि आदि बाजों के शब्दों से राजा की नींद खुली सर्व लोक हित के लिये सूर्य के उदय होने पर राजा को वही पूर्व चिन्तित चिन्ता हुई प्रिया के व्रत देखने की इच्छा हृदय में प्रबल हुई १२१।२२॥ २३॥२४॥२५॥२६॥२७॥२८॥२६।१३०॥ तदन्तर कलिंगराज

ने विधिपूर्व स्नान कर वस्त्रादि पहिन कर यथोचित आज्ञा देकर सवपरिजन को हटाकर कहा कि जो स्त्री अथवा पुरुष व्रतस्थ मुझको स्पर्श करेगा वह धर्म दण्ड पूर्वक मुझसे वध्य होगा इस प्रकार आज्ञा देकर कलिङ्ग राजा शीघ्र अपनी प्रिया देखने की इच्छा से वहीं जा पहुँचा जहां कि उसकी प्रिया पलंग पर व्रत के बहाने लेटी पड़ी थी वहाँ जाकर चिताव्यग्र अपनी प्रिया को देखने लगा ॥३१॥३२ ३३॥३४॥ उसकी प्रिया कमल पत्र के समान आंख वाली महारानी शिर वेदना से पीड़ित थी और अत्यन्त दुखित होकर रोती कि लखती यह कहरही थी कि मैंने पूर्व जन्म में क्या दुष्कर्म किया होगा जिससे कि पुण्य के समाप्त होने पर मैं ऐसी दशा को प्राप्त होगयी हूं ॥३५॥३६॥ यह मेरे पति को भी मालुम नहीं है कि मेरी भार्या अनाथा की तरह दुःखित होरही है और मुझे स्वामी अथवा परिजन क्या किस प्रकार मानता है सखी की पलंग पर सोयी हुयी मैं क्या अपनी वेदना उनसे निवेदन करूं अथवा जो मैंने सोचा है वह ठीक नहीं है ३७॥३८॥ क्या यह दुःख मेरी आत्मा ही में रहेगा पति तथा अन्य लोग मुझे क्या कहेंगे कि अन्याय से किया गया व्रत विकृत हो गया है यदि कभी सौकख तीर्थ में जाऊँगी तो तब जो मेरे हृदय में है उसे कहूँगी तदन्तर प्रिया के वचन सुनकर राजा उठकर हाथों से प्रिया का आलिंगन कर के यह वाक्य बोला कि हे भद्रे ! यह क्या अपनी आत्मा की निन्दा करती है जो कि तू अपने ही मन में सोच रही है वह अशोध्य को सोच रही है क्या तेरी शिर वेदना दूर करने वाले यहां वैद्य नहीं है ? तूने व्रत के बहाने अपनी शिर वेदना छिपाई है अतः शिर वेदना के दुःख से पीड़ित हो रही है वायु से कफ पित्त से अथवा खून और पित्त के सन्निपात से तेरे शिर में पीड़ा होरही है समय ने समय में पित्तोद्रेक से तेरे शिर में पीड़ा हो रही है ॥३६॥४०॥४१॥४२॥४३॥४४॥४५॥४६॥ और तू मांस अन्न आदि भोजन करती है अतः तेरे शिर में

वेदना हो रही है यदि चिकित्सा करके शिर से खून निकाला जाय तो अवश्य ही शिर वेदना दूर हो जायगी और शिर में तैलाभ्यंग किया जाय तो अवश्य पीड़ा दूर हो जायगी हे भद्रे ! यह क्यों छिपा रखा था मुझे क्यों नहिं सुनाया तूने व्रत के बहाने से वृथा ही अपनी आत्मा को कष्ट दिया हैं और जो सौकर चेत्र में जाने के लिये वाक्य कह रही है वह क्या है जिससे कि तेरे शिर में पीड़ा है इस प्रकार पति के वचन सुनकर वह महारानी दुखसे पीड़ित हुयी पति के चरण पकड़ कर पति से कहने लगी कि हे महाराज ! प्रसन्न हो जायिये मुझ दुष्कर्मिणी की पूर्व जन्म की कथा न पूछिये भार्या के वचन सुन कर कलिंगराज मधुर वाक्य बोलने लगा-हे देवि ! हेवरवर्धिनि ! मुझसे क्यों छिपाती है हे महाभागे सचही पूछ रहा हूँ पति के वचन सुनकर विस्मय युक्त होकर पति से मधुर वाक्य बोलने लगी पति ही धर्म हैं स्त्रियों की पति ही कीर्ति हे आत्मा का प्यारा पति ही ह ॥४७ ४८॥४६॥ ५०॥५१॥५२. ५३॥५४॥५५॥ जो आप पूछ रहे हैं वह अवश्य ही कहना चाहिये तथापि जो मेरे हृदय में है मैं उसे कहने को भोत्साहित नहीं होरही हूं हे महाराज ! जो आप मुझसे पूछ रहे हो वह मेरे हृदय स्थित बात आपको दुख देने वाली है आप सर्वदा सुख में हो मेरे समान आपको स्त्रियां रनवास में बहुत हैं आप मांस आदि खाते हैं रत्न जड़ित आभूषणों को पहिनते हैं हाथी घोड़े तथा रथों से सर्वदा चलते रहते हैं सब सुख आपको परिपूर्ण हैं अतः मुझसे क्या प्रयोजन है आपकी आज्ञा अप्रति हत है अनेक भोगों को भोगरहे हो अतः मुझसे वृथा पूछ कर क्या करोगे आपही मेरे गुरु हैं आप ही मेरे साक्षात् देव हैं भर्ता आपही हैं आपही सनातन यज्ञ हैं धर्म, अर्थ, काम, यश स्वर्ग, तथा मान को देने वाले हो रतिके पूछने पर पतिव्रताओं को सर्वदा प्रिय सत्य वाणी बोलनी चाहिये परन्तु सुख में स्थित पति स्त्रियोंको दुखमें नहीं गेरना चाहिये यह मेरी पीड़ा का निश्चय करके आपमुझसे न पूछें

ये तदनन्तर रानी के वचन सुनकर रानी के दुख से पीड़ित होकर राजा पुनः मधुर वाणि से रानी को कहने लगा। हे भद्रे! तत्व से सुनिये कि शुभ हो चाहे अशुभ हो परन्तु पति के पूछने पर गुप्त मे गुप्त रहस्य भी धर्म मार्ग में स्थित होकर स्त्रियों को पति से कह देना चाहिये ॥५६॥५७॥५८॥५६॥६०॥६१॥ ॥६२॥६३॥६४॥६५॥६६॥ पति से कोई बात नहीं छिपानी चाहिये। जो राग लोभ से मोहित होकर सुदुष्कर कर्म करके गुप्त बात को छिपाती है वह स्त्री सती नहीं कही जाती है। हे भद्रे! यह विचार कर सच कहिये गुप्त रहस्य मुझे सुनाने से तुझे कोई पाप नहीं लगेगा। तदनन्तर पति के वचन सुनकर वह महारानी धर्मवादी राजा से प्रिय वाक्य कहने लगी राजा देवता, राजा गुरु तथा राजा ही सोम कहा जाता है ॥६७॥ ।६८॥६६॥७०॥ अवश्य कहना चाहिये यही सनातन धर्म है हे राज सत्तम! यदि गुप्त बात भी अवश्य कहना है तो सुनिये कि कुल की प्रथानुसार ज्येष्ठ पुत्र को राजगद्दी दीजिये और आप मेरे साथ सौकरव क्षेत्र को चलिये तब भार्या के वचन सुनकर कलिंग देश के राजा ने उसको सान्त्वना देते हुये कहा कि हे प्रिये तेरे कहने के मुताबिक जिस प्रकार पहले मैंने अपने पिता से प्राप्त किया है उसी प्रकार पुत्र को राज्य देता हूं इस प्रकार आपस में सलाह करके वे दोनों राजा तथा राजपत्नी उस घर से बाहर आये ॥७१॥७२॥७३॥७४॥७५॥ तदनन्तर राजा कञ्चुकि को देखकर ऊँचे स्वर से कहने लगा कि जो कोई यहाँ ज्ञान कौतूहल से आया है तथा अन्य भी सब जितने इकट्ठा हो रहे हैं उन सबको यहां विदा कीजिये। तब अन्तःपुर में हलहाला शब्द होने लगा ॥७६॥७७॥ यह क्या कारण है जो कि हम विदा किये गये हैं अपने कार्य से आये हुये चिन्ता वालों को आज्ञा नहीं होती है यह कोई अवश्य अश्रोतव्य रहस्य होगा जिससे कि हम विदा किये गये हैं। तदनन्तर राजा ने अपनी प्रिया

के साथ अच्छे २ भोजन खाकर आचमन कर कुछ विश्राम लेकर अपने पुत्र का अभिषेक करने की इच्छा से मन्त्रियों को बुलाकर कहाकि हे मंत्रियो ! मंगलाचार पूर्वक राजधानी की सफाई कीजिये पनः नीति शास्त्र के तत्व को जानने वाले वृद्ध मंत्री से मधुर वाणी से बोला कि हे तात आगामी दिन में पुत्र का राज्याभिषेक करना चाहता हूँ अतः आप अभिषेक सामिग्री शीघ्र सम्पादन कीजिये मन्त्रियों ने कहा हे राजन ! जो आपकी इच्छा हैं वह हमें भी प्रिय है अभिषेक सामग्री सम्पादन करली समझो ऐसा कह कर अमात्य चले गये और सूर्य भी अस्तंगत होगया। ७८॥७६॥ ८०। ८१॥८२॥८३॥८४॥८५॥८६॥ वह रात्रि सुख पूर्वक व्यतीत हुयी गान्धर्व विद्या निपुण वालों के गाने बजाने से रात्रि सुख पूर्वक व्यतीत हुयी प्रातः काल सूत मागध वन्दि वेताल आदियों की स्तुति से राजा की नींद खुली सूर्य के उदय समय राजा ने पुत्र का राज्याभिषेक किया एवं प्रकार पुत्र को शुभ मुहूर्त में राज्य देकर पुत्र का शिर सूंघकर पत्र को मधुर वाणी से कहने लगा हे पुत्रः राज्य में स्थित होकर जो कर्तव्य तुझे पालन करना चाहिये उसे सुनिये ८७। ८८॥८६॥१६०॥ यदि परम धर्म की तथा पितरों को तारने की इच्छा हो तो सर्वदान देना चाहिये दान रोकना नहीं चाहिये पारदारिकाओं को मारना चाहिये बाल घातक तथा स्त्री घातकों को मारना चाहिये दूसरे की स्त्री तथा विशेष ब्राह्मण स्त्री से लोभ नहीं करना चाहिये सुन्दर खूबसूरत दूसरे की स्त्री देखकर आंख मीच लेना चाहिये पर द्रव्य तथा अन्यायोपार्जित द्रव्य पर लोभ नहीं करना चाहिये कहीं पर चिरकाल तक स्थित न रहे चिरकाल तक किसी को न देखे कुशलता तथा न्याय पूर्वक राज्य का पालन करना चाहिये हर हमेश उद्योगी बना रहना चाहिये आमात्य की आज्ञा पालन करना चाहिये अमात्य जो कुछ कहे उस पर विचार करके अपने शरीर की रक्षा करनी चाहिये प्रजा जिस कार्य से प्रसन्न हो तथा जिस

कार्य से ब्राह्मण सन्तुष्ट होवें वह ही कार्य करना चाहिये हे पुत्र ! मेरा हित चाहेगा तो ऐसा ही करना राजाओं का महान् दोष सात व्यसन वर्ग होता है कदाचित् अर्थ दूषणक नहिं करना चाहिये राज कर्म में स्थित अमात्य को कभी अप्रिय नहीं कहना चाहिये ६१॥६२॥६३॥६४॥६५॥ ६६॥६७॥६८॥ और मैं जाने के लिये तैयार हूँ परन्तु मुझे न रोकना हे पुत्र ! यदि मेरा प्रिय चाहता है तो यह शीघ्र कीजिये हे वसुन्धरे ! तदन्तर पिता के वचन सुनकर राजपुत्र ने पिता के चरण पकड़ कर करुणा युक्त वाणी से बोलने लगा ॥६६॥२००॥ हे तात ! मुझे राज्य खजाना तथा बल से क्या प्रयोजन है आपके विना मैं चेष्टा नहिं कर सकता हूं आपने मुझे राज्याभिषक किया है परन्तु आपके विरह से मैं उसे कुछ नहीं समझता हूँ ॥२०१। २०२॥ मैं केवल क्रीड़ा जान हूँ जिसको कि बालक खेला करते हैं मैं राजाओं के करने योग्य राज्य चिन्ता को नहीं जानता हूँ तदन्तर कलिंग राजा पुत्र के वचन सुनकर साम पूर्वक मधुर वचन बोलने लगा कि हे पुत्र । जो तू यह कह रहा है उसे मैं नहीं जानता हूँ हे पुत्र ! नगर निवासी तुझे शिक्षा देंगे एवम्प्रकार धर्म शास्त्र पूर्वक पुत्र को समझाकर राजा सौकर क्षेत्र में जाने के लिये उद्यत हुआ राजा को जाते देख कर पुरवासी लोग पुत्र परिवार सहित राजा के पीछे चलने लगे हाथी घोड़े रथ तथा अन्तःपुर वासी सब स्त्रियां राजा के पीछे चलने लगे ॥२०३॥२०४॥२०५॥२०६॥२०७।२०८॥ हे वसुन्धरे ! बहुत समय में सौकर क्षेत्र में पहुंचकर सब ही धन धान्यादि दान देने लगा ॥२०६ एवम् प्रकार उन राजा रानी के धर्म कार्य्य में लगे रहने पर बहुत समय व्यतीत हुआ किसी समय कलिंग राजा ने काञ्चीराज सुता से मधुर वाक्य कहा कि हे सुन्दरि ! मेरा जीवन पूर्ण हजार वर्ष है अब वह गुप्त रहस्य कहिये जो कि मैंने पहिले आप से पूछा था ११०॥११॥१२॥ पति के वचन सुन कर वह सुन्दर नेत्रों वाली कुछ हँस कर पति के चरण पकड़ कर

कहने लगी हे महाभाग ! जो आप पूछते हो वह ठीक है परन्तु रात्रि उपवास कर के वह रहस्य आपको सुनाऊंगा १३। १४॥ राजा ने कहा अच्छा हे पूर्ण चन्द्र समान मुख वाली जो कुछ तू कहती है वह मुझे ठीक ही लगता है तदनन्तर बारह अंगुल दातुन लेकर स्नान करके संकल्प किया और तीन रात्रि तक नियम पूर्वक उपवास करने लगे तदनन्तर स्नान कर दोनों दम्पति पवित्र हो शुद्ध वस्त्र पहिनकर अलङ्कारों से अलंकृत हुये तदनन्तर विष्णु को प्रणाम करके वह सुन्दरी अपने आभूषणों को उतार कर मुक्त विष्णु के समर्पण करके अपने पति से कहने लगी हे नाथ ! आइये ! आइये !! चलें गुप्त इच्छा को देखिये तदनन्तर विवाह समय के समान पति का हाथ पकड़ कर मधुर वाक्य कहने लगी कि पूर्व जन्म में मैं श्रृगाली थी और उससमय मृगाभियापी सोमदत्त ने मुझे वाण से भेदन किया है हे राजन् ! उस वाण की चोट मेरे सिर में अभी तक भी विद्यमान है उसे देखिये।।१५॥१६॥१७ १८॥१६।२० २१।२२॥ जिस वाण के लगने से मेरे सिर में पीड़ा हो रही है उस समय श्रृगाली योनि को छोड़ कर काञ्चीराज की पुत्री हुई हूँ और पिता के देने से आपकी प्रिया हुई हूं इस क्षेत्र के प्रभाव से मुझे यह सिद्धि प्राप्त हुई है आपको नमस्कार करती हूँ, तदनन्तर कलिंग देश का राजा प्रियाके मधुर वाक्य सुनकर अपनी पूर्व जन्म की स्मृति को भी प्राप्त करके प्रिया से कहने लगा हे प्रिये मैं पूर्व जन्म में गीध था और उसी वनचारी सोमदत्त ने एक ही वाण से मार गिराया हूं तदनन्तर कलिंग राजके घर में पैदा होकर बड़ा भारी राज्य प्राप्त किया है हे सुन्दरि ! इस क्षेत्र के प्रभाव से सिद्ध मिली है देखिये विना इच्छा के भी इस क्षेत्र में मरने से उत्तम सिद्धि मिली है तदन्तर जो नारायण प्रिय थे जो भक्त श्रेष्ठ थे वे सब नगर निवासी उनके वचन सुन कर लाभ हानि छोड़कर उस क्षेत्रमें सबकर्म करने लगे और सर्व सङ्ग रहित होकर वहीं मरण को प्राप्त हुये तदन्तर चतुर्भुज रूप धारण कर श्वेतद्वीप को गये २३॥२४॥२५॥२६॥२७॥२८॥२६॥३०

तदनन्तर वे सब नगर निवासी शङ्ख आयुध आदि धारण कर और स्त्रियां भी स्तुति से मान्या होकर श्वेत द्वीप में सब भोग भोगने लगे हे वसुन्धरे ! सौकरव क्षेत्र का यह बड़ा भारी प्रभाव तुझे सुना दिया है जिस क्षेत्र में बिना इच्छा के मरने पर भी श्वेत द्वीप को प्राप्त हुये हैं जो इस विधान से इस तीर्थ में निवास करता है वह मरण उपरान्त श्वेत द्वीप में जाता है हे वसुन्धरे ! तुझे और सुनाता हूँ आखोटक तीर्थ में स्नान करने से मनुष्य जिस फल को प्राप्त करता है वह सुनिये वह मनुष्य ग्यारह हजार वर्ष नन्दन वन में आनन्द भोगता हैं तदनन्तर स्वर्ग से भ्रष्ट होकर विपुल कुल में पैदा होकर मेरा भक्त होता हैं अब गृध्र वट तीर्थ में स्नान करने से जो फल पैदा होता हैं उसे सुनिये उस तीर्थ में स्नान करने वाला मनुष्य नौ हजार नौ सौ वर्ष तक इन्द्र लोक में रह देवताओं के साथ आनन्द भोगता है इन्द्र लोक से भ्रष्ट हो मेरे तीर्थ के प्रभाव से सर्व संग छोड़कर मेरा भक्त होता है हे भद्रे ! जो संसार मोक्षण कर्म तूने पहिले पूछा था वह इस क्षेत्र में स्नान मात्र का फल मैंने तुझे सुना दिया है ॥३१॥३२॥३३॥३४॥३५॥३६॥३७॥३८॥३९॥२४०॥ तदनन्तर नारायण से पुर्वोक्त कथा सुनकर पृथ्वी मधुर वाक्य बोलने लगी कि हे जनार्दन ! वह तीर्थ किस कर्म विपाक से मिलता है स्नान अथवा मरण आदि जिस प्रकार का कर्म करके मिलता है वह यथार्तता से मुझे सुनाइये श्री वराह ने कहा– हे देवि ! सुनिये कि पहले जिन्होंने धर्म किया है वे मनुष्य किसी एक कर्म दोष से तिर्यक योनि को प्राप्त करके जन्मान्तरों से किये हुये तीर्थ स्नान जप तथा महा दान आदि पुण्यों से तीर्थ में मृत्यु मिलती है। जन्मान्तर का किया हुआ जो छोटा या बड़ा कर्म हो वह कभी न कभी फलीभूत हो ही जाता है उसका नाश नहीं होता अथवा कभी असहाय होकर पुण्य तीर्थादियों के दर्शन से दुर्बल प्रबल होता है और कभी प्रबल दुर्बल हो जाता

है पापान्तरों को प्राप्त करके यह दशा होती है क्योंकि कर्मों की गति गहन है जो छोटा दीखा जाता है वह बड़ा हो जाता है अतएव श्रृगाली और गीध इस क्षेत्र में मरने से इस क्षेत्र के प्रभाव से क्षीण पाप होकर मनुष्यत्व तथा राजत्व को प्राप्त हुये हैं पुनः पूर्व जन्म की स्मृति प्राप्त करके श्वेत द्वीप गये हैं हे वसुन्धरे ! यह अवश्य जानिये हे देवि ! तुझे और भी सुनाता हूं उसे सुनिये । ॥४१॥४२॥४३॥४४॥४५॥४६॥४७॥४८॥४६॥ ॥२५०॥ एक वैवश्वत नाम का तीर्थ है जहां पर सूर्य ने तप किया है किसी समय पुत्र की इच्छा से मार्तण्ड ने घोर तप किया है दस हजार वर्ष तक चान्द्रायण व्रत किया है सात हजार वर्ष तक वायु भक्षण कर तप किया है हे भद्रे ! सूर्य के इस प्रकार तप करने पर मैं प्रसन्न होकर मार्तन्डि के पास जाकर कहने लगा कि हे कश्यप नन्दन जो तेरी अभिलाषा है वह वरदान मांग तेरा कल्याण हो तदनन्तर मेरे वचन सुनकर कश्यप मधुर स्वर से कहने लगा कि हे देव यदि आप मेरे ऊपर प्रसन्न हैं तो मुझे यही वर दीजिये हे देव ! मैं आपके प्रसाद से पुत्र की इच्छा करता हूं मार्तन्ड के वचन सुनकर मैं प्रसन्न हुआ हूं और शुद्ध मन से मैंने उसको कहा कि तेरा यम और यमुना नाम के पुत्र पुत्री होंगे हे वसुन्धरे ! इस प्रकार उसको वरदान देकर मैं अपने प्रभाव से वहीं पर अन्तर्धान हुआ हूं। आदित्य भी अपने घर को गया है हे वसुन्धरे ! अब जो मनुष्य सौकरव क्षेत्र में कठिन कर्म करके अष्टम् भक्त से स्नान करता है उसका पुन्य सुनिये ॥५१॥५२ ५३॥५४॥५५॥५६॥ ॥५७॥५८॥५६॥२६०॥ वह मनुष्य दस हजार वर्ष तक सूर्य लोक में निवास करता है। अथवा जो मनुष्य इस क्षेत्र में मरता है वह इस क्षेत्र के प्रभाव से यम लोक में नहीं जाता है हे भद्रे यह स्नान तथा मरण का फल तुझे सुना दिया है तथा सौकरव तीर्थ में जो फल जिसको मिला वह भी सुना

लिया है यह रहस्य आख्यानों में महाख्यान है क्रियाओं की महा क्रिया है यह जपने योग्य है प्रामाणिक है सन्ध्या समय उपासना करने योग्य है यह तेज है, मन्त्र है तथा सर्व भक्तों को प्रिय है यह रहस्य पिसुन तथा मूर्ख भक्त तथा वैश्य और शूद्र को जो कि मुझे नहीं जानते हैं उनको नहीं सुनाना चाहिये पण्डितों की सभा में भक्त को सुनाना चाहिये मठ में ब्राह्मण मन्डली में सुनाना चाहिये जो शास्त्र को जानते हैं उन दीक्षित मनुष्यों को सुनाना चाहिये हे भद्रे ! यह सौ करव तीर्थ का वड़ा भारी पुण्य तुझे सुना दिया है हे वसुन्धरे ! जो प्रातःकाल उठकर नित्य इसको पढ़ता है उसने मानो बारह वर्ष तक मेरा भजन कर लिया है वह गर्भ में नहीं जाता है शाश्वती मुक्ति को प्राप्त करता है जो एक अध्याय भी पढ़ता है वह दस कुल के पितरों को तार देता है ॥६१॥६२॥६३॥२६४ ।२६५॥२६६॥ ॥२६७॥२६८॥२६६'। इति श्री वाराह पुराणे तीर्थ माहात्म्ये सौकरवे गृध्र जम्बूकाख्याने आदित्य वर प्रदानादिकम नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम सप्त त्रिंशधिक शततमो अध्याय ॥१३१॥

अथः एक सौ अठतीसवां अध्याय

दोहाः— इक सौ अठतीस में अब खन्जरीट आख्यान ।
वाराह भगवान ने सब, कहा करि व्याख्यान ॥

अथ खन्जरीटो पाख्यानम्— सूत ने कहा– सौकरव क्षेत्र का पुण्यतम माहात्म्य गुणस्व जाति परिवर्तन सुनकर सर्व धर्म ज्ञाताओं में श्रेष्ठ पृथ्वी परम विस्मय को प्राप्त होकर निवृतान्त करण से पुनः भगवान से पूछने लगी कि हे भगवन आपके सौ करव क्षेत्र का वड़ा भारी माहात्म्य है जिस क्षेत्र में बिना इच्छा के मरने पर भी तिर्यग्योनि गत जीव भी मनुष्य योनि को प्राप्त हुये हैं । अब उस क्षेत्र का कुछ और भी आख्यान सुनाइये । उस क्षेत्र के माहात्म्य का प्रभाव सुनने से मेरे चित में और

सुनने का भी कौतूहल हो रहा है। आप यह सुनाइये कि उस क्षेत्र में गान करने से क्या फल होता है। तथा नाचने, जागरण करने से क्या फल होता है बाजे बजाने से क्या फल होता है गाय दान देने से, अन्न दान देने से, जल दान देने से क्या फल होना है। सम्मार्जन करने से, लेपन करने से, तथा गन्ध पुष्पादि अर्पण करने से क्या पुण्य प्राप्त होता है तथा गन्ध धूप दीप नैवेद्यादि के अर्पण करने से क्या फल मिलता है तथा अन्न जप यज्ञादि कर्म से क्या गति मिलती है। १॥२॥३॥ ॥४॥५॥६।७। ८। अपने भक्त के सुख के लिये आप समग्र फल सुनाइये, पृथ्वी के वचन सुनकर सर्वदेव मय हरि धर्म कामा वसुन्धरा से मधर वाक्य बोलने लगे। श्री वाराह ने कहा– हे सुन्दरि! जो आप मुझसे पूछ रही हो वह तत्व से सुनिये सुख देने वाला सब पुन्य कर्म है तुझे सुनाता हूँ। उस कौरव तीर्थ में एक खन्जरीठ पक्षी रहता था। वह बहुत सारे कीड़ों को खाकर अजीर्ण होने से पीड़ित होकर मृत्यु को प्राप्त हुआ और अपने ही से गिर पड़ा ॥९॥१०॥११॥१२॥ तदनन्तर वहां पर खेल करते करते बालक आपहुँचे और उस मरे हुये खन्जीरट को देखकर ग्रहण करते हैं कहकर दौड़ने लगे। यह मेरा है यह मेरा है कह कर उस पक्षी को पकड़ने की इच्छा से सब क्रीड़ा करने के उत्सुक बालक आपस में लड़ने लगे। तदनन्तर गंगाजल में फेंक दिया और कहा कि यह पक्षी तुम्हारा ही होवे इससे हमें कुछ प्रयोजन नहीं है एवम् प्रकार वह खन्जारट पक्षी गंगा जल में गिरकर आदित्य तीर्थ में पहुंच कर उस तीरथ के जल से शरीर भीग जाने से वह पक्षी उस क्षेत्र के प्रभाव से तीर्थ योनि को छोड़कर अनेक यज्ञ करने वाले वैश्य के धन धान्य रत्नादि से समृद्धि युक्त घर में पैदा होकर रूपवान गुणवान पवित्र मेरा भक्त हुआ है हे वसुन्धरे! उसके बारह वर्ष व्यतीत होने पर कदाचित बैठे हुये अपने माता पिताओं को जो कि

हर्ष से परिपूर्ण थे हाथ जोड़ शिर से भूमि में प्रणाम कर प्रार्थना करने लगा कि मात हे पितः-यदि आप मेरी भलाई करना चाहते हो तो एक वरदान दीजिये ॥१३॥१४॥१५॥१६॥१७॥१८॥१६ २०॥ माता पिता को मुझे नहीं रोकना चाहिये मैं सच की सौगन्ध खाता हूँ कि जिस प्रकार निश्चय से किया होवे पुत्र के वचन सुनकर वे दोनों स्त्री पुरुष प्रसन्नता पूर्वक अपने कमल लोचन पुत्र से मधुर वाक्य कहने लगे हे वत्स ! जो कुछ तू कहता है जो कुछ तेरे हृदय में है वह सब कुछ करेंगे इस समय विस्त्रब्ध होकर कहिये तीस हजार गाय हैं और सबही दूध देने वाली हैं यदि आपकी इच्छा है तो बिना विचारे दान कीजिये हे पुत्र ! फिर और भी सुनाता हूं कि हमने पुत्र के कारण वाणिज्य कर्म भूल रखा है यदि आपकी इच्छा है तो हमारा वाणिज्य कर्म भी है उसे कीजिये यथा न्याय मित्रों को धन दीजिये हे पुत्र बिना रोक टोक धन धान्य रत्नादि दीजिये और सजातीय सुन्दर कन्या के साथ तेरा विधि पूर्वक विवाह करेंगे और यदि वैश्यों के करने योग्य यज्ञादियों से यजन करना चाहता है तो वह भी कीजिये आठसौ हल गाड़ी हैं उनसे वैश्य कर्म करना चाहता है तो कीजिये तू क्या चाहता है क्या ब्राह्मणों को भोजन से तृप्त करना चाहता है हे पुत्र ! इस समय अपनी इच्छानुसार सब कुछ कीजिये २१॥२२॥२३। २४॥२५॥२६।२७॥२८॥२६॥३०॥ माता पिता के वचन सुनकर बालक ने अपने माता पिता के चरण पकड़ कर कहने लगा मैं गोदान नहीं चाहता हूं मुझे मित्रों की चिन्ता नहीं है मुझे कन्यालाभ की इच्छा नहीं है यज्ञफल की इच्छा नहीं है वाणिज्य कृषि गोरक्षा आदि कुछ नहीं चाहता हूँ और न ब्राह्मणों को ही तृप्त करना चाहता हूँ केवल मेरे मनमें एक ही प्रधान इच्छा है मैं नारायण के सौकरव क्षेत्र में जाना चाहता हूँ ॥३१॥३२॥३३॥३४॥ तब पुत्र के वचन सुनकर मेरे कर्म में परायण माता पिता करुण से परिलुप्त हो रोते हुये कहने लगे

हुआ करते हैं अब कहिये कि किसके हम हैं और हमारे कौन हैं कहां हैं हे जननि ! इस चिन्ता को प्राप्त करके शोक न कीजिये इस प्रकार पुत्र के वचन सुनकर उसके माता पिता फिर कहने लगे ४३॥४४। ४५॥४६॥४७।४८॥४६। ५०॥ हे तात ! अहो ! कहिये कि वह गुप्त रहस्य क्या है उसे सुनाइये यह सुनकर वह वैश्य बालक अपनी माता तथा पितासे मधुर वाक्य बोलने लगा यदि वह गुप्त रहस्य सुनकर आपने वह कार्य करना है तो तब पूछिये नहीं तो नहीं सौकरव क्षेत्र में चलिये वहीं जाकर मैं गुप्त रहस्य कहूँगा सौकरव क्षेत्र में एक सोम तीर्थ है वहाँ जाकर जो कुछ पूछोगे सब गुप्त रहस्य सुनाऊंगा यह सुनकर उसके माता पिता ने कहा अच्छा वैसाही करेंगे और सौकरव क्षेत्र में जाने के लिये उद्यत होगये सर्व द्रव्यों से युक्त होकर सौकरव क्षेत्र में जाने लगे अमीर देश के मालिक उस वैश्य ने बीस हजार गाय सौकरव क्षेत्र में आगे से भिजवादी और अन्य भी धनद्रव्य लेकर आगे से चलने लगे उसके घर में जो कुछ भी था वह सब उसने नारायण के अर्पण कर दिया था तदन्दर अपने सब निजी आदमियों को बुला कर उनसे युक्त होकर माघ शुक्ल त्रयोदश दिन के पूर्वार्द्ध प्रहर में स्नानादि क्रिया करके उसी मुहूर्त में चलने लगे नारायण को हर्षित करने वाले वे सब लोग वैशाख शुक्ल द्वादशी के दिन सौकरव क्षेत्र में पहुँचे ५०॥५१॥५२॥५३॥५४॥५५ ५६॥५७ ५८॥५६॥६०॥ वहां पहुँच कर उन्होंने स्नान किया और पितरों को तर्पण दिये तथा रेशमी वस्त्र पहिन कर जो बीस हजार गायें पहिले ही भेजी थीं उनको विधि निर्दिष्ट कर्म से भंगुरस नाम वाले ने ग्रहण किया जोकि उसी क्षेत्र में मेरे कर्म में परायण था उसी ने ग्रहण किया उस वैश्य ने वह सब बहुमोल, माङ्गल्य, तथा पवित्र, गायें जो कि श्रेष्ठ थनों से युक्त थीं उसी को दान दीं तथा नित्य हर एक दिन में धन वस्त्रादि देकर स्त्री पुत्र और

स्वजन के साथ रहकर प्रसन्न रहता था ॥६१॥६२॥६३॥६४॥ इस प्रकार उस क्षेत्र में निवास करते हुये वैश्य को वर्षा काल आपहुंचा सर्व सस्य बढ़ाने वाली प्रावृट् ऋतु उपस्थित हुयी कदम्ब, कुटज, अर्जुनादि वृक्षों पर फूल आने लगे और अपने पतियों से विरह को प्राप्त हुयी औरतें दुख का अनुभव करने लगीं मेघ गर्ज गर्ज कर वर्षा वर्षाने लगे और विजली चमकने लगीं वक्र पंक्ति अंगद भूषित हुयी नदियों का शब्द होने लगा मयूर मधुर गान कर नाचने लगे कुटज, अर्जुन, कदम्ब वृक्षों के गन्ध से सुगन्धित वायु मयूरों को सुख देने लगा तथा प्रिय के विरह से दुखित स्त्रियों को सुख देने लगा एवम् प्रकार मेघ रूपी नगाड़े के शब्द से नादित वर्षा काल के चले जाने पर शरद ऋतु का आगमन हुआ अगस्त उदय हुआ तालाव स्वच्छ जल वाले हुये और उनमें कुमुद, कमल, आदि विकसित होने लगे पद्म वरडों से तथा समीप में फूले हुये फूलों से रमणीय दीखने लगे सप्तवर्ण की सुगन्ध वाला स्त्रियों का प्रिय करने वाला कामियों को सुख देने वाला पवन मन्द सुगन्ध शीतल गुण युक्त हो वहने लगा ॥६५॥६६॥६७॥६८॥६९॥७०॥७१॥७२॥ एवम प्रकार शरद ऋतु के चले जाने पर कुमुद मास के आने पर शुक्लपक्ष की एकादशी दिन स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहिन कर वह वैश्य दम्पती अपने पुत्र को पूछने लगे कि हे पुत्र ! हमको यहाँ रहते हुये छः महीने व्यतीत होगये हैं यह द्वादशी दिन आपहुँचा है जो तूने कहा था क्या वह गुप्त रहस्य नहीं सुनाता है जिससे कि तू हमें यहां लाया है उसे सुनाइये माता पिता के वचन सुनकर वह वालक मधुर स्वर से कहने लगा हे पितः जो आप पूछने रहे हो वह ठीक है कल प्रातःकाल उठकर मैं आपको वह गुप्त रहस्य सुनाऊंगा हे तात ! यह नारायण प्रिय विष्णु भक्त को सुख देने वाली आज द्वादशी तिथि है इस कुमद मास

की शुक्ल द्वादशी तिथि के दिन जो मनुष्य दीक्षित होकर विष्णु भक्ति में तत्पर होकर विष्णु को प्रसन्न करने वाले दान देते हैं वे संसार सागर से पार हो जाते हैं ॥७३।७४॥७५।७६॥ ॥७७॥७८॥७९॥८०॥ एवम् प्रकार वार्तालाप करने पर रात्रि व्यतीत हो गई और प्रातःकाल हो गया तब स्नानादि क्रिया कर सन्ध्योपासन करके सूर्य के उदय होने पर पवित्र हो शुद्ध वस्त्र पहिन कर शङ्ख चक्र गदाधर भगवान को शिर से नमस्कार करके माता पिता के चरण पकड़ कर वैश्य बालक कहने लगा। हे तात ! सुनिये कि यहां आये हैं जिस गुप्त रहस्य को आप पूछ रहे हैं वह सौकरव क्षेत्र का प्रभाव सुनिये हे तात ! मैं पहिले जन्म में खन्जरीट नामः पक्षि था। उस समय अनेक कीड़ों को खाकर अजीर्ण होने से अति दुखित हुआ हूँ और उसी दोष से मैं विह्वल हुआ कुछ भी चेष्टा न कर सका मुझे विह्वल देखकर बालकों ने खेलने के बहाने मुझे ग्रहण किया और आपस में हँसी करते हुये एक हाथ से दूसरे हाथ में गेरने तथा खींचने लगे एक ने कहा मैंने ही पहिले देखा तूने नहीं देखा इस प्रकार कहते कहते आपस में झगड़ा करने लगे तब एक बालक ने हाथ से पकड़ कर तथा घुमाकर तीव्र क्रोध से आदित्य तीर्थ के उत्तम गंगा जल में शीघ्रता से मुझे फेंक दिया और कहा कि लीजिये यह आपही का होवे हमें कुछ प्रयोजन नहीं है ॥८१॥८२॥८३॥ ॥८४॥८५॥८६॥८७॥८८। वहां उस गंगा जल में मैंने अपने प्राण त्याग दिये उस सूर्य तीर्थ में बिना इच्छा के भी प्राणों को त्यागने से इस तीर्थ के प्रभाव से मैं आपका पुत्र हुआ हूँ। हे मात ! बिना इच्छा से इस तीर्थ में मरे हुये मुझको आज तेरह वर्ष हो गये हैं हे तात ! जो कुछ यहां आने का प्रयोजन था तथा जो कुछ गुप्त रहस्य था वह तुझे सुना दिया है हे तात ! मैं यहां रहकर कर्म करूंगा आप चले जाइये आपको नमस्कार करता हूं तब माता पिता पुत्र को पुनः कहने लगे कि हे पुत्र !

विष्णु प्रोक्त जिन जिन धर्मों को तू करना चाहता है उन्हें विधि निर्दिष्ट कर्म द्वारा हम भी करेंगे इस प्रकार कहकर वे भी यथान्याय पूर्वक विष्णु कर्म में परायण हो गये तथा बहुत समय तक विपुल कर्म करके पञ्चत्व को प्राप्त हुये भगवान के क्षेत्र के प्रभाव से तथा अपने कर्म निश्चय से सर्व संसार से मुक्त होकर श्वेत द्वीप को गये तथा घर से जो परिजक आया था सब के सब इस मेरे विष्णु क्षेत्र के प्रभाव से रोग व्याधि रहित होकर लक्ष्मीवान् योगवान् तथा कमल के समान गन्ध वाले हुये है वसुन्धरे ! यह बड़े प्रभाव वाला आख्यान तुझे सुना दिया है ॥८९॥९०॥ ॥९१॥९२॥९३ ।९४॥९५॥९६॥९७॥९८॥ हे वसुन्धरे ! सौकरव क्षेत्र की और भी कथा सुनाऊँगा । इस सौकरव क्षेत्र का बड़ा प्रभाव है जिसमें कि तिर्यग्योनि को छोड़ कर श्वेत द्वीप को गये हैं जो मनुष्य प्रातःकाल उठकर नित्य इस रहस्य को पढ़ता है वह इक्कीस कुल के पितरों को स्वर्ग पहुंचाता है । शास्त्र की निन्दा करने वाले पापी मूर्खों के मध्य में इस रहस्य को नहीं सुनाना चाहिये तथा पिशुनों को न सुनावे केवल एकान्त में इस रहस्य को पढ़े अथवा वेदवादी ब्राह्मण तथा शुद्ध नम्र शास्त्र गुण युक्त वैष्णवों को यह परमोत्तम सर्व संसार मोक्षण रहस्य सुनावे ॥९९॥ ॥१०० ।१०१॥१०२॥१०३॥ इति श्री वाराह पुराणे खन्जरीटो उपाख्यानम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम मष्टत्रिंशदधिक शततमोऽध्याय ॥१३८॥

॥ अथः एक सौ उनचालीसवांऽध्याय ॥

दोहा:— इक सौ उनचालीस में, ब्रह्मण्त्वसाख्यान ।
ब्रह्मता को प्राप्त हुआ, चाण्डाल किये गान ॥

अथसौकर माहात्म्यम्— श्री वाराह ने कहा— हे देवि वसुन्धरे ! मेरे तीर्थ में लेपन करने से मनुष्य जिस फल को प्राप्त करता है वह मैं समग्रता से सुनाता हूं उसे तत्व से सुनिये ॥१॥ हे भूमे ! जो मनुष्य गोबर लेकर मेरे मन्दिर का लेपन करता

है लेपन करते समय उस लेप करने वाले के जितने पादन्यास होते हैं वह लेप करने वाला मनुष्य उतने ही दिव्य हजार वर्षों तक स्वर्ग में आनन्द करता है यदि जो कोई मनुष्य मेरी भक्ति में तत्पर होकर बारह वर्ष तक मेरे मन्दिर का लेपन करता रहता है वह धन धान्य से समृद्धि वाले शुद्ध अच्छे कुल में पैदा होता है और देवताओं से नमस्कृत होकर कुश द्वीप में जाकर दस हजार वर्ष तक जीता रहता है तथा शुद्ध मेरा भक्त होता है हे वसुन्धरे ! मेरी भक्ति वाला मनुष्य कुश द्वीप से भ्रष्ट होकर सब कर्मों में निष्ठा रखने वाला राजा होता है। मेरी भक्ति करने वाला मनुष्य उसी लेपन के प्रभाव से सर्व शास्त्रों को पूछता है और राजा होने के कारण मेरे मन्दिर आदि बनवाता है पुनः मेरे विष्णु लोक को प्राप्त करता है ॥२॥३॥४॥५॥६॥७॥ ॥८॥ हे वसुन्धरे ! अब गोवर का फल सुनाता हूँ उसे सावधानता से सुनिये ॥९॥ समीप या दूर जाकर जो मनुष्य गोवर को ले जाता है ले जाते समय उसके जितने पदन्यास होते हैं वह उतने ही हजार वर्षों तक स्वर्ग लोक में रहता है पुनः ग्यारह हजार ग्यारह सौ वर्ष तक शाल्मली द्वीप में निवास करता है और शाल्मली द्वीप से भ्रष्ट होकर परम धार्मिक राजा होता है तथा सर्व धर्मों को जानने वाला मेरा भक्त होता है। और जो मनुष्य मेरी भक्ति में तत्पर होकर बारह वर्ष तक गोवर ले जाता है वह मेरे विष्णु लोक को जाता है। हे वसुन्धरे ! जो मनुष्य स्नान तथा उपलेपन के लिये जल देता है उसका फल सुनिये हे वसुन्धरे उस जल की जितनी बूंदें होती हैं उतने ही हजार वर्ष तक वह मनुष्य स्वर्ग लोक में निवास करता है और स्वर्ग लोक से भ्रष्ट होकर क्रौंच द्वीप में जाता है क्रौंच द्वीप से भ्रष्ट होकर धार्मिक राजा होता है। पुनः उसी गुण योग से श्वेत द्वीप को जाता है ॥१०॥११॥१२ १३॥१४॥१५॥१६॥१७॥ हे वसुन्धरे ! अब

मेरे क्षेत्र में झाड़ू याने बोखर लगाने वाले स्त्री वा पुरुष जिस गति को प्राप्त करते हैं वह सावधानता से सुनिये । मेरी भक्ति करने वाला शुद्ध भक्त अपराध रहित होकर सम्मार्जन करते समय जितनी रज कण उड़ती हैं उतने ही हजार वर्ष तक शीघ्र स्वर्ग लोक में जाता है स्वर्ग से भ्रष्ट होकर शाक द्वीप जाता है वहाँ चिरकाल तक निवास कर पुनः धार्मिक राजा होता है और संसार सागर में रह चिरकाल तक सब भोगों को भोगकर श्वेत द्वीप में जाता है । हे वसुन्धरे ! मेरी भक्ति तत्पर होकर जो मनुष्य गान करता है उसको जो फल प्राप्त होता है उसे सुनाता हूं सावधानता से सुनिये गायमान गीत की जितनी अक्षर पंक्ति होती है उतने हजार वर्ष तक वह गान कर्त्ता मनुष्य इन्द्र लोक में रहता है ॥१८॥१९॥२०॥ ॥२१॥२२॥२३॥२४॥ सब वेद वेत्ताओं में श्रेष्ठ रूपवान गुणवान् सिद्ध होता है और नित्य देवराज इन्द्र को देखता रहता है तथा वहाँ रहकर भी मेरी भक्ति में तत्पर होकर मेरा पूजन करता रहता है इन्द्र लोक से भ्रष्ट होकर मेरे गीत गाने वाला मनुष्य नन्दन वन में देवगण के साथ विहार करता है ॥२५॥२६॥२७॥ तदनन्तर भूमि में पैदा होकर वैष्णवों के साथ स्थित हो परम भक्ति मेरा यश गाता हुआ मेरे प्रसाद से मेरे विष्णु लोक को जाता है ॥२८॥२९॥ सूत जी ने कहा– वाराह भगवान के वचन सुनकर पृथ्वी हाथ जोड़कर कहने लगी ॥३०॥ पृथ्वी ने कहा– हे भगवन् ! आपने जो गीत का बड़ा ही प्रभाव कहा है उस गीत के प्रभाव से कौन कौन सिद्धि को प्राप्त हुये हैं ॥३१॥ श्री वाराह ने कहा– हे भद्रे ! उस आश्रम में एक चाण्डाल रहता था और मेरी भक्ति में तत्पर होकर नित्य दूर से मेरे मन्दिर में जागरण करने आता था ॥३२॥ हे सुन्दरि वह चान्डाल बहुत वर्षों तक मेरा यशगान जागरण करता रहा ।३३। कुमुद महीने कीशुक्ल द्वादशी दिन सबके शयन

करने चले जाने पर वह चाण्डाल वीणा लेकर घूमने लगा। उस क्षेत्र में जागरण कर रहा था कि उस चान्डाल को ब्रह्म राक्षस ने पकड़ लिया चान्डाल कमजोर था और ब्रह्म राक्षस बलवान था। दुख शोक से सन्तप्त होकर श्वपाक कुछ न कर सका और ब्रह्म राक्षस से कहने लगा कि हे ब्रह्म राक्षस! तूने मेरे लिये यह क्या सोचा है जो कि मेरे पीछे दौड़ रहा है चान्डाल के वचन सुनकर मनुष्य मांस खाने में लोलुप ब्रह्म राक्षस ने चान्डाल से कहा कि आज मुझे बिना मांस खाये दस दिन व्यतीत हो गये हैं विधाता ने व्रत समाप्ति में तुझे मेरा भोजन बना दिया है आज सब मांस तथा रुधिर के साथ तुझे खाता हूं और विधाता से दिये गये भोजन से परम तृप्ति को प्राप्त करूंगा। ब्रह्म राक्षस के वचन सुनकर गीत गाने की लालसा से श्वपाक मेरी भक्ति में तत्पर होकर ब्रह्मराक्षस को समझाने बुझाने लगा कि महाराज मैं आपका भक्ष्य हो ही गया हूँ ॥३४॥३५ ३६॥३७॥३८॥ ॥३९॥४०॥४१॥ जो विधाता ने आपके अर्पित किया वह अवश्य करना चाहिये किन्तु मैं देव देव भगवान जनार्दन के जागरण में गीत गाने को उद्यत हुआ हूं वहाँ जाकर जागरण तथा भगवान् का यश गान कर लौट आऊँगा फिर मुझे भक्षण कर लेना क्योंकि मैंने विष्णु प्रसन्नता के लिये व्रत धारण कर रखा है वहां जागरण कर जबकि वापिस आ जाऊँगा पुनः यथेच्छा से मुझे भक्षण कर लेना चान्डाल के वचन सुनकर भूख से पीड़ित ब्रह्म राक्षस चान्डाल को कठोर वाक्य बोलने लगा कि हे मूढ़! तू झूठ क्यों कहता है कि मैं फिर वापिस आऊँगा। कोई मृत्यु के मुख में पड़कर जीता रह सकता है राक्षस के मुख से छूटकर फिर आना चाहता है राक्षस के वचन सुनकर चान्डाल कहने लगा ॥४२॥४३॥४४॥४५॥ ४६॥ ४७॥ यद्यपि मैं पूर्व पाप कर्म के दोष से चान्डाल योनि को प्राप्त हुआ हूँ तथापि मेरी प्रतिज्ञा सुनिये जिससे कि मैं पुनः वापिस आ जाऊँ हे द्विज-

राक्षस ! भगवान के समीप जाकर दूर से जागरण तथा यश गान करके सच ही में वापिस आपके पास आऊँगा यदि मेरा कहना मानते हो मुझे छोड़ दीजिये · सारे जगत का मूल सत्य है सत्य ही से भूरादि लोक प्रतिष्ठित हैं ॥४८।४६॥५०॥ सत्य से ही ब्रह्मवादी ऋषि सिद्धि को प्राप्त हुये हैं सत्य से कन्या दान दिया जाता है ब्राह्मण सत्य कहते हैं सत्य को राजा जीतते हैं सत्य से स्वर्ग मिलता है सत्य से मोक्ष मिलता है सत्य से सूर्य तपता है सत्य से चन्द्रमा प्रकाशित होता है । षष्ठी, अष्टमी, अमावस्या तथा दोनों पक्ष के चतुर्दशी दिन जो स्नान नहीं करते हैं उनको जो गति मिलती है यदि मैं वापिस आपके पास न आऊं तो मुझे भी वही गति मिले, जो मोहित होकर गुरु पत्नी तथा राजपत्नी के साथ गमन करते हैं और उनको जो गति मिलती है यदि मैं वापिस न आऊँ तो मुझे भ वही गति मिले । यदि मैं वपिस न आऊं तो जो गति याजक तथा झूठ बोलने वालों की होती है वही मेरी भी होवे । ब्रह्म हत्या वाला, मदिरा पीने वाला, चोरी करने वाला, व्रत भङ्ग करने वाला, जिस गति हो प्राप्त करता है यदि मैं वापिस न आऊं तो मुझे वही गति मिले चाण्डाल के एवम् प्रकार वचन सुनकर ब्रह्म राक्षस प्रसन्न हुआ और कहने लगा कि हे श्वपाक ! शीघ्र चले जाइये आपको नमस्कार हो एवम् प्रकार ब्रह्म राक्षस से विदा मांग वह चाण्डाल मेरे मन्दिर के समीप] आयकर मेरी भक्ति में तत्पर हो गीत गाने लगा तदनन्तर प्रभात समय नृत्य गीत जागरण के समाप्त होने पर नमो नारायणाय कह कर चान्डाल वापिस होने लगा तभी एक पुरुष शीघ्र आकर उसके सामने खड़ा हुआ ॥५१॥५२॥५३।५४॥५५।५६॥५७॥५८॥५६॥६०॥ और चान्डाल से मधुर वाक्य कहने लगा कि हे साधो! शीघ्र गति से कहां जा रहे हो आप वापिस न जाइये । उस ब्रह्म राक्षस को जानकर भी मरने को क्यों जा रहे हो । उस

ब्रह्मराक्षस को जान कर भी मरने को क्यों वहां जा रहे हो उस पुरुष के वचन सुनकर चाण्डाल कहने लगा मुझे भक्षण करते हुये ब्रह्मराक्षस से मैं सत्य प्रतिज्ञा कर चुका हूँ अतः सत्य का पालन करने के लिये मैं जा रहा हूँ तब वह पुरुष मधुर वाणी से बोला कि हे चाण्डाल उस पापी ब्रह्मराक्षस के समीप न जायिये जीवन रक्षा के लिये सत्य को त्यागने में कोई दोष नहीं होता है। उस पुरुष के वचन सुनकर वह चाण्डाल मरने का निश्चय करके मधुर वाक्य बोलने लगा कि हे महाराज ! जो आप कह रहे हो मैं वह कदापि नहीं करूँगा मेरा यह निश्चय व्रत किया है कि सत्य को कदापि नहीं छोड़ूँगा ॥६१॥६२॥६३॥६४॥६५ ६६। ६७॥ सारे जगत का मूल कारण ही है सत्य से ही कुल प्रतिष्ठित है सत्य ही परम धर्म है आत्म भी सत्य में ही प्रतिष्ठित है। मैं सत्यता को छोड़ कर कभी झूठा नहीं बनूँगा हे तात ! आपके लिये नमस्कार हो आप चले जायिये मैं कदापि झूठ नहीं कहूँगा। नित्य सत्यव्रत में स्थित हुआ चाण्डाल उस पुरुष को ऐसा कह कर ब्रह्म राक्षस के समीप पहुँच कर आदर युक्त वचन बोलने लगा ॥६८॥६६॥७०॥ हे महा भाग ? मैं प्रतिज्ञा अनुसार आ पहुँचा हूं। अब विलम्ब न कीजिये मुझे शीघ्र खायेगे। आपकी आज्ञा से मैं उत्तम विष्णु स्थान में गया हूँ अब यथेच्छानुसार मेरे गात्र को भक्षण कीजिये, आप भूख से पीड़ित हैं। अतः आप पूर्व कहे हुये वचनानुसार प्रसन्नतापूर्वक अपनी तृप्ति के लिये मेरे गरम गरम खून का पान कीजिये अपनी आत्मा को तृप्त कीजिये और मेरा हित कीजिये। चाण्डाल के वचन सुनकर ब्रह्म राक्षस चाण्डाल से मधुर वाक्य बोलने लगा हे वत्स ! मैं तेरे से प्रसन्न हूं तूने सत्य धर्म का पालन किया है जिस अवधिज्ञ तुझ चाण्डाल की इस प्रकार की बुद्धि है। सत्य प्रतिज्ञा वाला चाण्डाल ब्रह्मराक्षस का वचन सुनकर मधुर वाक्य बोलने लगा हे ब्रह्म-

राक्षस ! यद्यपि मैं सर्व कर्म रहित चाण्डाल हूँ तथापि नित्य सत्य भाषण करता हूं चाण्डाल के वचन सुनकर भयानक ब्रह्म-राक्षस प्रशंशित व्रत वाले चाण्डाल से मधुर वचन बोलने लगा। हे श्वपाक ? जो तूने विष्णु के मन्दिर के समीप जागरण करके गान किया है यदि अपने प्राणों को बचाना चाहता है तो उस गान का फल मुझे दे दीजिये । गान फल देने पर मैं तुझे छोड़ दूँगा, भक्षण नहीं करूँगा, ब्रह्मराक्षस के वचन सुनकर श्वपाक कहने लगा हे ब्रह्मरक्ष ! यह मन से अज्ञात वचन कह रहे हो ७१।।७२।।७३।।७४।।७५।।७६।।७७।।७८।।७६ ।८०।। पहिले कहा कि भक्षण करता हूँ और अब गीत का फल माँग रहे हो ? चाण्डाल के वचन सुनकर ब्रह्मराक्षस ने कहा श्वपाक ! एक प्रहर के गान किये हुये गीत का फल मुझे दीजिये तब मैं छोड़ता हूँ छूटकर तू अपने पुत्र कलत्रादियों का दर्शन करेगा ॥८१॥८२॥ गीत का लोभी चाण्डाल ब्रह्मराक्षस के वचन सुनकर राक्षस से मधुर वाक्य बोलने लगा । ८३।। हे ब्रह्मरक्ष ! आपकी इच्छानुसार गायन फल को मैं नहीं देता हूं यथान्याय मुझे भक्षण कीजिये तथा इच्छानुसार रुधिर पान कीजिये ॥८४॥ श्वपाक, वचन सुन कर राक्षस पुनः बोला जो तूने विष्णु के समीप एक गीत गाया है उस एक गीत का फल मुझे दीजिये उससे मैं मुक्त हो जाऊँगा राक्षस के वाक्यों का निवारण करता हुआ चाण्डाल राक्षस के वचन सुनकर परम विस्मय युक्त होकर पूछने लगा कि हे राक्षस ! आपने कौन सा विकृत कर्म किया है उसे सुनाइये ॥८५॥८६॥ ८७॥ जिस कर्म के दोष से कि राक्षस हुये हो श्वपाक वचन सुन कर दुःख से दुःखित होकर ब्रह्मराक्षस मधुर वचन बोलने लगा कि मैं पूर्व जन्म में ब्राह्मण कुल में पैदा हुआ था, और उस जन्म में सोमशर्मा के नाम से पुकारा जाता था सूत्र मन्त्रों

भ्रष्ट होकर भी यज्ञ कर्म में निष्ठित हुआ था और लोभ मोह से पीड़ित होकर यज्ञों को कराने लगा ॥८८॥८९॥९०॥ यज्ञ के होते समय कदाचित दैवयोग से मेरे उदर में शूल हुआ और उसी शूल रोग से मैं मर गया तदनन्तर पञ्च महा रात्र तथा यज्ञ के समाप्त होने पर उस यज्ञ के दोष से मैंने राक्षस योनि प्राप्त की है। मैंने मन्त्रहीन कर्म किया है, स्वर हीन कर्म किया है, सूत्र हीन कर्म किया है तथा प्रापध्वंशादि किया है। मैंने वहां परिमाण तथा रूप उपलक्षित किया है उसी किये हुये दोष से राक्षसी योनि को प्राप्त हुआ हूँ अब इस समय गीत फल देने से मुझे इस योनि से मुक्त कीजिये ॥९१॥९२॥९३॥९४॥९५॥ मुझ नीच को शीघ्र विष्णु गीत फल द्वारा पाप से छुड़ाइये। ब्रह्म राक्षस के वचन सुनकर श्वपाक ने अच्छा ऐसा करूंगा कह राक्षस से कहने लगा हे राक्षस ! यदि तू राक्षस योनि से छूटता है तो मैं अपने स्वरीले गीत का फल तुझे देता हूँ जो विष्णु के समीप गीत गान करता है वह दुर्गों को भी पार कर लेता है इस प्रकार कह श्वपाक ने गीत का फल राक्षस को दिया। एवं प्रकार चाण्डाल से गीत का फल प्राप्त करके वह राक्षस शरद चांद के समान शीघ्र निर्मल हुआ तथा हे वसुन्धरे ! वह चान्डाल भी मेरा गीत गान नृत्य जागरण आदि विपुल कर्म करके ब्रह्मत्व को प्राप्त हुआ है हे देवि ! मनुष्य गीत गान करने से इस प्रकार का फल प्राप्त करता है ॥९६॥९७॥९८॥९९॥१००॥१०१॥ हे वसुन्धरे ! जो मनुष्य कुमुद मास की शुक्ल द्वादशी दिन मेरे मन्दिर में जागरण करके मेरे गीत गान करता है वह मनुष्य सर्व संग छोड़कर मेरे विष्णु लोक को जाता है। जो मनुष्य जागरण में नित्य मेरे गीत गान करता है वह सर्व संग से मुक्त होकर मेरे लोक को जाता है। हे देवि ! गायन का यह बड़ा भारी फल तुझे सुना दिया है जिस गीत के शब्द से संसार सागर तर जाता है। हे वसुन्धरे ! अब तुझे बजाने का फल सुनाता हूँ

सुनिये ॥१०२॥१०३॥१०४॥१०५॥ जिस मनुष्य ने स्वयम
ताओं से सबला प्राप्त की है। शम्पाताल प्रयोग से अथवा
न्नपातादि प्रयोग से मनुष्य नौ हजार नौ सौ वर्ष तक कुवेर
न में जागर इच्छानुसार आनन्द करता है कुवेर भवन से भ्रष्ट
कर स्वच्छन्द गमन होकर शम्पादि ताल सम्पातों से मेरे लोक
जाता है ॥१०६॥१०७॥१०८॥ हे वसुन्धरे! अब नाचने
फल सुनाता हूं उसे सुनिये। भगवान के समीप नृत्य कर
नुष्य संसार बन्धन तोड़कर तेतीस हजार वर्ष तक पुष्कर द्वीप
निवास करता है फिर स्वच्छन्द गमन होता है, मेरे कर्म परायण
कर रूपवान् गुणवान् तथा शीलवान् और शूर मेरा भक्त
ता है और संसार सागर से मुक्त होता है, जो मनुष्य जागरण
मेरा गान तथा नृत्य करता है वह जम्बू द्वीप को प्राप्त होकर
क्रवर्ती राजा होता है सर्व कर्म युक्त होकर प्रजा का पालन करने
ला होता है ॥१०९॥११०॥१११॥११२॥११३॥ तथा मेरे
र्म में तत्पर होकर मेरा भक्त होता है, जो मनुष्य मेरी भक्ति
तत्पर होकर मुझे प्रिय लगने वाले फूलों को मेरे समर्पण
रता है वह मनुष्य जितने पुष्पों को मेरे ऊपर चढ़ाता है वह
मग्र कर्म करके मेरे लोक को जाता है। हे देवि! यह महोजस
क्तों का भक्त सुखकारी सर्व संसार मोचण कर्म सुना दिया है।
१४॥११५॥११६॥ हे भूमे! जो प्रातःकाल उठकर इसे पढ़ता है
ह इकीस कुल के पितरों को तार देता है इस रहस्य को मूर्ख
था चुगली खोरों के बीच न पढ़े। मुक्ति की इच्छा वाले भक्तों
मध्य इसे सुनाना चाहिये, अश्रद्धालु, क्रूर तथा देवल को यह
था न सुनावे, यदि परम सिद्धि की इच्छा हो तो इन मूर्खों के
ामने न पढ़े, यह कथा कल्याण रूप है मङ्गल रूप है मुझे प्रिय
धर्मों का परम धर्म है, क्रियाओं की परम क्रिया है परम सिद्धि
ी इच्छा वाला इस कथा को शास्त्र दूषक के समीप न सुनावे ऐ

करके इस कथा को पढ़ने वाला विष्णु लोक को जाता है। ॥११७॥११८॥११९॥१२०॥१२१॥ इति श्री वाराह पुराणे चाण्डाल ब्रह्म राक्षस सम्वादे सौकर माहात्म्यम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायामेकोन चत्वारिंशदधिक शत तमोऽध्याय

॥ अथः एक सौ चालीसवांऽध्याय ॥

दोहा–इकसौ चालीस में अब, कहें सकल समुझाय।
कोकामुख माहात्म्य अरु, अनेक तीर्थ बताय॥

अथ कोकामुख (वदरी) माहात्म्यम्— धरणी ने कहा– हे भगवन्! देवताओं के स्थान आपसे सुन लिये हैं अब जहाँ आप सर्वदा रहते हैं यह सुनाइये।१॥ और जहाँ आप मूर्तिमान होकर रहते हैं वह आपका परम स्थान कहां है। किस स्थान में कर्म करने से मनुष्य उत्तम गति को प्राप्त करता है ॥२॥ श्री वाराह ने कहा– हे भक्त वत्सले! देवि वसुन्धरे! जिन स्थानों में मैं रहता हूँ उनको तत्व से सुनाता हूँ तू सुन॥३॥ जो मैंने पहिले तुझे कोकामुख नाम का क्षेत्र सुनाया है वही गिरिराज शिलातल में वदरी नाम से विख्यात् है। वहाँ लोहार्गल नाम का स्थान है उसमें मेच्छराज रहता है उस स्थान को मैं क्षण भर भी नहीं छोड़ता हूँ॥४॥५॥ हे वरारोहे! उस मेरे स्थान को मन्दिर सहित देखिये। यह सारा चराचर जगत् है परन्तु मैं सर्वत्र स्थित हूं मेरे से रहित कोई स्थान नहीं है। हे देवि मुझे तथा मेरी गुप्त कामगति को जानते हैं वे मेरी भक्ति में तत्पर होकर शीघ्र कोकामुख क्षेत्र में जावें। तदनन्तर भगवान के वचन सुनकर निवृत्तान्तरात्मा से पृथ्वी हाथ जोड़कर कहने लगी॥६॥७॥८॥ पृथ्वी ने कहा– हे लोकनाथेश! मुझे सब तरह कौतूहल हो रहा है कोकामुख क्षेत्र सबसे श्रेष्ठ क्यों हुआ है वह मुझे समझाइये॥९॥ श्रीवाराह ने कहा– कोकामुख क्षेत्र से बढ़कर कोई दूसरा क्षेत्र नहीं है कोकामुख से कोई दूसरा पवित्र स्थान नहीं है कोकामुख के बराबर कोई स्थान नहीं है

कोकामुख से कोई दूसरा श्रिग स्थान नहीं है । १०॥ जो मनुष्य कोकामुख में जाकर पुनः वापिस नही आता और वहीं रहकर मेरी भक्ति तथा पूजनादि कर्म करता है वहां आत्मा में इष्ट रूप हो जाता है ॥११॥ हे वसुन्धरे ! जो जो स्थान तूने पूछे हैं कोकामुख के समान कोई स्थान न हुआ है अरु न होगा ॥१२॥ कोकामुख में मेरी वह परम मूर्ति है जिसको कि कोई नहीं जानते हैं इसलिये कोकामुख स्थान प्रधान हुआ है यह तुझे सुनादिया है ॥१३॥ पृथ्वी ने कहा— हे देवदेव ! हे महादेव ! हे भक्तों को अभय प्रदान करने वाले ! हे भगवन्! कोकामुख में जो भी गुप्त स्थान हैं उन्हें मुझे सुनाइये ॥१४॥ श्री वाराह ने कहा— हे देवि जो तू मुझसे पूछ रही है यह कोकामुख में स्थित रमणीय स्थान मुझसे सुनिये ॥१५॥ पर्वत से गिरती हुई एक जल विन्दु है वह गुप्त है उस तीर्थ में विपुल कर्म करके मनुष्य सर्व संग छोड़कर मेरे विष्णु लोक को जाता है तथा मेरे कोकामण्डल में अति ऊंचे पर्वत से मुसल समान विष्णु धारा गिरती है वहां रात दिन निवास कर जो स्नान करता है वह मनुष्य हजार अग्निष्टोम यज्ञों के फल को प्राप्त करता है वह कर्म में मोह को नहीं प्राप्त करता है और उत्तम फल को प्राप्त करता है तथा मेरे मार्गानुसारी शुद्ध भक्त कुल में पैदा होता है यदि जो मनुष्य विष्णु धारा तीर्थ में प्राणों को छोड़ता है वह मेरी इस परम मूर्ति का दर्शन करता है कोकामुख के आश्रय भूत एक विष्णुपद स्थान है उस स्थान को विशेष कोई नहीं जानता है। उस विष्णुपद में एक रात्रि निवास करके जो पुरुष स्नान करता है वह मेरी भक्ति में तत्पर हो क्रौञ्च द्वीप में पैदा होता है और यदि जो उस स्थान में प्राणों को छोड़ता है, वह सर्व संग छोड़कर मेरे लोक को जाता है अब एक विष्णुसर नाम तीर्थ है जहां कि मैंने तेरे साथ क्रीड़ा की थी ।.। १६॥१७॥१८॥१९॥२०। २१॥२२॥२३॥ ॥२४॥ हे वसुन्धरे जहां दंष्ट्रा प्रहार से मैंने तेरा उद्धार किया था उस विष्णु सर में स्नान करने से मनुष्य सर्व पाप मुक्त हो मेरे विष्णु लोक को जाता है । कोकामुख में एक

प्रसिद्ध सोमतीर्थ है जहां कि विष्णु नाम से अङ्कित पञ्चशिला भूमि है जो पांच रात्रि तक निवास कर उस सोम तीर्थ में स्नान करता है वह गोमेद द्वीप में जाकर पैदा होता है तथा जो सोम तीर्थ में अपने प्राणों को छोड़ता है वह सर्व पापमुक्त होकर मुझे देखता है, उस कोका मण्डल में एक तुङ्गकूट विख्यात है वहां ऊँचे पर्वत से चार धारा गिरती है उस स्थान में पांच रात्रि निवास कर जो स्नान करता है वह द्वीप को प्राप्त करके मेरे लोकों में रहता है ॥२५॥२६॥२७॥२८॥२६॥३०॥ चेत्र कर्म सुखा वह अनित्य नाम आश्रम है उस आश्रम को देवता भी नहीं जानते हैं मनुष्य तो कैसे जान सकते हैं एक अहोरात्र उसमें निवासकर जो स्नान करता है वह मेरे कर्म परायण होकर पुष्कर द्वीप में पैदा होता है हे भूमे तथा जो उस चेत्र में प्राणों को छोड़ता है वह सर्वपाप निर्मुक्त होकर मेरे विष्णु लोक को जाता है; एक अग्निसर नाम का परम गुप्त स्थान है, वहां गिरिकुञ्जों से पांच धारायें बहती हैं वहाँ भी पाँच रात्रि निवास कर जो स्नान करता है वह कुश द्वीप में जाता है। और जो वहां प्राणों को छोड़ता है वह कुश द्वीप से भ्रष्ट होकर ब्रह्मलोक को जाता है वहीं एक ब्रह्मसर नाम गुप्त चेत्र है, वहां एक धारा पर्वत से भूमि पर गिरती है। वहाँ भी पांच रात्रि निवास कर जो स्नान करता है वह मेरे मार्ग पर चलने वाला सूर्य लोक में निवास करता है और जो सूर्य धारा के आश्रित हो ब्रह्मसर में प्राणों को छोड़ता है वह सूर्य लोक को अतिक्रमण करके मेरे विष्णु लोक को जाता है ॥३१॥ ३२॥३३॥३४॥३५॥३६॥३७॥३८॥३६॥ कोका मुख में मेरा धेनुवट नाम एक प्रधान चेत्र है वहां पर एक पर्वत शिखर से पूर्ण धारा गिरती है। वहां सात दिन निवास कर एक एक दिन स्नान करके मनुष्य सात समुद्रों के स्नान का फल प्राप्त कर सातों द्वीपों में घूमता है और जो वहाँ प्राणों को छोड़ता है वह मेरी भक्ति परायण मनुष्य सप्त द्वीपों को अति क्रमण करके विष्णु लोक को

जाता है अब एक धर्मोद्भव नाम स्थान है वहां गिरि कुञ्ज से जमीन पर एक धारा गिरती है वहां एक रात्रि निवास कर जो स्नान करता है वह शूद्र भी वैश्य हो जाता है हे देवि ! जो वहां प्राणों को छोड़ता है वह सांगोपाङ्ग यज्ञ फल को पाय मुझे प्राप्त होता है ॥४०॥४१॥४२॥४३॥४४॥४५॥४६॥ एक कोटि वट नाम परम गुप्त स्थान है वहां पर वट वृक्ष मूल में एक धारा गिरती है रात्रि में उपवास कर जो स्नान करता है उस वट वृक्ष में जितने पत्ते हैं वह मनुष्य उतने हजार वर्ष तक रूप सम्पत्ति युक्त होता है और जो वहां प्राणों को छोड़ता है वह सुदुस्तर कर्म करने वाला अग्नि समान वर्ण वाला होकर मेरे लोक को जाता है उसी कोकामुख में एक पापप्रमोचन नाम का परम गुप्त स्थान है उसमें घट समान मोटी एक धारा गिरती है अहोरात्र निवास कर जो नर वहां स्नान करता है वह मेरे कर्म करने वाला चतुर्वेदी होता है और जो कौशिकी नदी में स्नान करता है तथा प्राणों को छोड़ता है वह पाँच रात्रि निवास कर वासव लोक में जाता है ॥४७॥४८॥४९॥५०॥५१॥५२॥५३॥ ॥५४॥ और जो मेरे कर्म परायण होकर वहाँ प्राणों को छोड़ता है वह वासव लोक को छोड़कर मेरे विष्णु लोक को जाता है ॥५५॥ वहीं एक यमव्यसनक नाम मेरा एक परम गुप्त स्थान है वहाँ एक स्रोत बहता है और वह स्तोत्र कौशिकी नदी से मिलता है जो मनुष्य एक रात्रि निवास कर उस यमव्यसनक में स्नान करता है वह यमराज के दुर्गों को तर जाता है जो मेरे कर्म परायण होकर वहां प्राणों को छोड़ता है वह पाप मुक्त हो विष्णु लोक जाता है ॥५६॥५७॥५८॥ कोकामुख में मेरा एक मातंग नाम क्षेत्र है वहां एक स्रोत बहता है और कौशिकी नदी से जा मिलता है जो वहां निवास करता है वह किम्पुरुष के भेद को प्राप्त करता है ॥५९॥६०॥ जो वहां प्राणों को छोड़ता है वह नर किम्पुरुष भेद को छोड़ मेरे लोक को जाता है वहीं एक

वज्रभव नाम का स्थान है वहां भी एक स्रोत बहकर कौशिकी नदी से जा मिलता है वहां एक रात्रि निवास कर जो स्नान करता है वह मेरे कर्म करने वाला शक्रलोक में जायकर स्नान प्रभाव से शरीरचक्रसंघात, वज्रहस्त स्वरूपक होता है और मेरा चिन्तन करने वाला जो नर वहां प्राणों को छोड़ता है वह नर शक्र लोक का अतिक्रमण करके मेरे लोक को जाता है। वहीं तीन कोश परिमाण मात्र एक मेरा परम गुप्त शक्ररुद्र नाम से विख्यात एक स्थान है वहाँ तीन रात्रि निवास कर जो नर स्नान करता है वह जम्बू द्वीप में पैदा होता है जहां कि जम्बू स्थित है पुनः जम्बू द्वीप को छोड़कर मेरे समीप रहता है ॥६१॥६२॥ ।६३॥६४॥६५॥६६ ।६७ ६८॥ हे भद्रे ! उस स्थान में एक और भी विशेषता है जिससे कि मनुष्य संसार सागर से मुक्त होकर जाते हैं एक विख्यात् दँष्ट्राकुर स्थान है जहां से कि कोका निकली है यह गुप्त है इसको कोई नहीं जान सकता है जिससे कि जन्तु मुक्त होते हैं ॥६९॥७०॥ हे भद्रे ! वहाँ अहो-रात्र निवास कर जो नर स्नान करता है वह शाल्मली द्वीप में जाता है और जो नर मेरी भक्ति परायण हो वहां प्राणों को छोड़ता है वह शाल्मली द्वीप छोड़कर मेरे लोक को जाता है ॥७१॥७२॥ परम गुप्त उस क्षेत्र में महाफल है मेरे भक्तों को सुख देने वाला एक विख्यात् विष्णु तीर्थ है उस पर्वत मध्य से कोका में जल गिरता है हे महाभागे! सर्व संसार मोचक वह जल त्रिस्रोतम नाम से प्रसिद्ध है ॥७३॥७४॥ उसमें स्नान करने वाला मनुष्य संसार बन्धन छोड़कर वायु लोक को जाकर वायु तुल्य होकर रहता है ॥७५॥ और वहां जो प्राणों को त्यागता है वह वायु भवन को अतिक्रमण कर मेरे लोक को जाता है। ॥७६॥ कौशिकी और कोका संगम में एक श्रेष्ठ स्थान है उत्तर में एक सर्व कामिका नाम से विख्यात एक शिला है ॥७७॥ जो नर अहोरात्र निवास कर वहां स्नान करता है वह विस्तीर्ण वंश में

पैदा होकर अपनी जाति का स्मरण करता है ॥७८॥ मनुष्य स्वर्ग या भूमि में जिस जिस कामना को करता है वहाँ स्नान मात्र से उसको वह सब कामना मिलती है ॥७९॥ और मेरे कर्म में तत्पर होकर जो वहाँ प्राणों को छोड़ता है वह सर्वसङ्ग छोड़कर मेरे लोक को जाता है ॥८०॥ कोकामुख क्षेत्र में एक प्रधान मत्स्य शिला है वहां तीन धारा गिरती हैं और कौशिकी नदी में जा मिलती हैं उस स्थान पर स्नान करते समय जो नर मछली का दर्शन करता है तो उसको मैं नारायण रूप प्राप्त हो गया हूँ समझो उस स्थान में मत्स्य को देख यजमान अर्घ्य देवे । हे भद्रे ! तदनन्तर जो मनुष्य मधुलाजा युक्त वहाँ स्नान करता है तदनन्तर वह उत्तर मेरु में पद्मपत्र में निवास करता है पुनः मेरु शृंग को लांघ कर मेरे विष्णु लोक को जाता है ॥८१॥८२॥८३॥८४॥८५॥ मेरा कोकामुख क्षेत्र पांच योजन विस्तार वाला है इसको जो जानता है वह पापों से मुक्त हो जाता है । ॥८६॥ हे वसुन्धरे ! और भी सुनाता हूँ उसे सुनिये उस रम्य कोकामुख में दक्षिण मुख होकर मैं रहता हूँ वहाँ वाराह रूप पुरुषाकृति से चन्दन समान शिला में स्थित रहता हूँ वह शिला देवताओं को भी दुष्प्राप्य है ॥८७॥८८॥ वाम उन्नत मुख करके दृष्टा समुन्नत होकर सारे जगत् को देखता रहता हूँ क्योंकि मुझे भक्त प्रिय हैं ॥८९॥ हे भूमे ! जो पाप निर्मुक्त मनुष्य मेरा स्मरण करते हैं तथा कोकामुख में संसार मोक्षण के हेतु शुद्ध कर्म करते हैं वे यदि कभी कोकामुख में चले जांय तो मेरी तुल्यता चाहने वाले वापिस न आवें ॥९०॥९१॥ यह कोकामुख क्षेत्र गुप्त में परम गुप्त है यह सिद्धों की परम सिद्धि है । मनुष्य सांख्ययोग से जिस सिद्धि को नहीं प्राप्त करता है वह सिद्धि कोकामुख क्षेत्र में जाने से मिल जाती है । हे वसुन्धरे ! जो परम गुप्त रहस्य को तूने पूछा था वह मैंने तुझे सुना दिया है और क्या सुनना चाहती है ॥९२॥९३॥९४॥ हे भूमे !

जो मनुष्य इस कहे गये कोकामुख रहस्य को सुनता वह इक्कीस कुल के पितरों को तार देता है ॥६५॥ जो वहाँ प्राणों को छोड़ता है वह शुद्ध भक्त कुल में पैदा होता है जो नित्य प्रातः-काल उठकर इसे सुनता है वह प्राणों को छोड़कर पांच सौ जन्म तक मेरा भक्त होता है तथा जो नर नित्य प्रातःकाल इस कोका ख्यान को पढ़ता है वह परम स्थान को प्राप्त होता है। ॥६६॥ ॥६७॥६८॥ इति श्री वाराह पुराणे कोकामुख माहात्म्य वर्णनं नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम चत्वारिंशदधिक शततमो

अथ एक सौ चालीसवां अध्याय

दोहा:— इकसौ इक चालीस में, पृथ्वी से भगवान्।
माहात्म्य श्री वदरीवन, करि हैं सकल बखान ॥

अथ वदरिकाश्रम माहात्म्यम्— श्री वाराह ने कहा– हे वसुन्धरे। अब हिमालय पृष्ट में गुप्त स्थान सुनिये। वदरी नाम से विख्यात भूमि है वह देवताओं को भी दुर्लभ है ॥१॥ उस भूमि को मनुष्य भी नहीं प्राप्त करता है केवल जो भक्त दुस्तर कर्म करता है वही विश्वतारिणी वदरी भूमि को प्राप्त करता है ॥२॥ हिमकूट शिलातल में स्थित वह मेरा क्षेत्र दुर्लभ है जो उस क्षेत्र को प्राप्त करता है वह मनुष्य कृतकृत्य हो जाता है। ॥३॥ उस वदरी वन में एक विख्यात ब्रह्म कुण्ड है आत्मा को हिमसंस्थ करके मैं उस ब्रह्मकुण्ड में रहता हूं ॥४॥ हे माधवि ! जो मनुष्य उस ब्रह्मकुण्ड में तीन रात्रि उपवास कर स्नान करता है वह अग्निष्टोम यज्ञ के फल को प्राप्त करता है ॥५॥ और व्रत निष्ट जितेन्द्रिय मनुष्य यदि उस कुण्ड में प्राणों को छोड़े तो वह मत्य लोक का अतिक्रमण कर मेरे विष्णु लोक को जाता है ॥६॥ उसी क्षेत्र में एक अग्निसत्यपद तीर्थ है इस तीर्थ में तीन पर्वत शिखरों से गिरकर धारा वहती है वह धारा मुसल समान है जो नर तीन रात्रि उपवास कर वहाँ स्नान करता है वह सत्यवादी तथा चतुर होकर मेरे कर्म करने वाला होता है और वहाँ जलाशय निर्माण

कर यदि प्राणों को त्याग करे तो सत्य लोक को अतिक्रमण करके विष्णुलोक में आनन्द करता है ॥७॥८।६॥ बदरी भूमि में एक इन्द्रलोक नाम से विख्यात मेरा आश्रम है वहां पर इन्द्रने मुझे प्रसन्न किया था, वहां पर्वत शिखरों से एक स्थूलधारा स्थूल-शिला तल पर गिरती है, वहां मेरा धर्म व्यवस्थित है एक रात्रि निवास कर जो स्नान करता है वह वहां स्नान करने के फल से सत्यवादी पवित्र होकर सत्यलोक को जाता है ॥१०।११॥१२॥ और जो आनाशक व्रत करके इस आश्रम में प्राणों को छोड़ता है वह सत्यलोक छोड़ मेरे लोक में जाता है ॥१३॥ बदरिका-श्रम में एक पञ्चशिख नाम का तीर्थ है जहां कि पर्वत शिखरों से पांच धारा गिरती हैं जो नर वहां उन पञ्च स्त्रोतों में स्नान करता है वह अश्वमेधयज्ञ के फल को प्राप्त करके देवताओं के साथ क्रीड़ा करता है तथा जो नर सुदुस्तर कर्म करके वहां प्राणों को त्यागता है वह स्वर्ग लोक को अतिक्रतण करके मेरे विष्णुलोक को जाता है । १४॥१५॥१६॥ उसी क्षेत्र में एक चतुःस्रोत नाम से प्रसिद्ध तीर्थ है यहाँ पर चारों दिशाओं से चार धारायें गिरती हैं इस स्थान पर जो मनुष्य एक रात्रि निवास कर स्नान करता है वह स्वर्ग जाता है और मेरा भक्त होता है और जो दुष्कर कर्म करके इस स्थान पर प्राणों को त्यागता है वह स्वर्ग को अति-क्रमण कर मेरे विष्णुलोक को जाता है ॥१७॥१८॥१६ उसी मेरे प्रधान क्षेत्र में एक वेदधार नाम से प्रसिद्ध तीर्थ है जहां पर कि ब्रह्मा के मुख से चार वेद निकसे थे उसी हिमालय के पृष्ठ भाग में विषमशिलोचय में चार धारायें गिरती हैं चाररात्रि निवास कर वहां पर स्नान करता है वह चार ही वेदों को ग्रहण करने में कारण भूत हो जाता है और जो नर मेरे कर्म में स्थित होकर यहां पर प्राणों छोड़ता है वह देवलोक छोड़कर मेरे लोक में जाता है ॥२०॥२१॥२२॥२३॥ उसी प्रधान क्षेत्र में द्वादशादित्य नाम का कुण्ड है हे देवि ! यहां पर पहिले मैंने वे बारह आदित्य स्थापित

किये थे उसी पर्वत शिखर पर बारह धारा गिरती हैं वे मेरे कर्म में सुख देने वाली हैं जिस किसी द्वादशी दिन जो नर वहां स्नान करता है वह बारह आदित्यों के स्थान को प्राप्त करता है और जो यहां पर प्राणों को छोड़ता है वह बारह आदित्यों के स्थान को छोड़कर मेरे लोक को जाता है ॥२४॥२५॥२६॥२७॥ उसी क्षेत्र में एक लोकपाल नाम का प्रसिद्ध तीर्थ है पहिले वहां पर मैंने वे लोकपाल स्थापित किये थे वहां पर पर्वत के मध्य में पृथ्वी को भेदन कर एक बड़ाभारी स्थलकुण्ड है जहां से कि सोमोत्पत्ति हुयी है उस कुण्ड में ज्येष्ठ मास की द्वादशी दिन स्नान करने से मनुष्य लोकपालों के साथ आनन्द पूर्वक रहता है तथा मेरा भक्त होता है और मेरे कर्म में तत्पर होकर जो नर यहां पर प्राण त्याग करता है वह लोकपालों को अतिक्रमण कर मेरे लोक को जाता है ॥२८।२६।३०॥३१। उसी क्षेत्र में एक मेरोर्वर नाम तीर्थ है वहीं पर स्थित होकर मेरुकी स्थापना की थी वहां पर सुवर्ण समान कान्ति वाली तीन धारा गिरती हैं वह जल भूमि में गिरता है तथा व्यक्ति को नहीं प्राप्त करता है जो नर तीन रात्रि उपवास कर यहाँ पर स्नान करता है वह मेरु शिखरों में आनन्द करता है और मेरा भक्त होता है तथा जो वहां पर प्राण त्याग करता है वह मेरु को लांघ मेरे विष्णु लोक में जाता है ।३२।३३।३४॥ ३५। एक उत्तम मानसोद्भेद तीर्थ भी उसी क्षेत्र में है वहां पर पृथ्वी का भेदन कर जल शीघ्र बहता है उस देश को देवता भी नहीं जानते हैं मानुष ही उस देश को जानते हैं वह जल पृथ्वी में गिरता है अहोरात्र निराप कर जो वहाँ स्नान करता है वह दिव्य मानस में आनन्द करता है और मेरा भक्त होता है ३६॥ ३७॥३८॥ उसी क्षेत्र में एक पञ्चशिर नाम तीर्थ है जहां कि ब्रह्माने महाद्युति वाला शिर छेदन किया था वहां पांच कुण्ड हैं और पांच शिरों के स्थान पर पांच धारा बहती हैं वहां जो मध्यम कुण्ड है वह ब्रह्मासे भिन्न ही दीखता है वहां धारसंकुला भूमि रक्त

जल वाली दिखाई देती है जो वहाँ पर पांच रात्रि निवास कर स्नान करता है वह ब्रह्मलोकमें निवास करता है तथा मेरा भक्त होता है ॥३८।३६॥४०॥४१॥४२॥ तथा जो नर पञ्चशिर तीर्थ में मेरे कर्म परायण हो जल चन्द्राय करके प्राण त्याग करता है वह रागमोह रहित बुद्धिमान होता है मतिमान् होता है और ब्रह्मलोक का अतिक्रमण कर मेरे लोक में जाता है ॥४३।४४। मेरे क्षेत्र में एक अन्य भी सोमाभिषेक नाम का प्रधान तीर्थ है वहीं पर मैंने सोम को ब्राह्मणों के राज्यत्व में अभिषिक्त किया था हे माधवि ! वहां पर अत्रिपुत्र सोम ने पैंतालीस करोड़ वर्ष कठिन तपकरके मुझेप्रसन्न किया था हे वसुन्धरे तब चन्द्र ने मेरे प्रसाद से परम सिद्धि प्राप्त की हे मारा जगत ब्रीहि तथा परमौपधि उसी चन्द्रके आधीन है स्कन्द, इन्द्र मरुद्गण इसी से पैदा होते हैं और इसी में लीन होते हैं हे भूमे ! मम संस्थ सब सोममय होगा ४५॥४६।४७॥४८ वहां सोम गिरि है जहाँ विशाल वन भूमि में एक धारा कुण्ड में गिरती है यह मैंने तुझे सुना दिया है जो मनुष्य वहांपर तीन रात्रि उपवास कर स्नान करता है वह निःसन्देह सोमलोक में निवास करता है और जो दुष्कर कर्म करके इस सोमाभिषेक तीर्थ में प्राणों को त्यागता है वह सोमलोक छोड़ मेरे लोक को जाता है ४६ ५०॥५१॥ मेरे क्षेत्र में एक उर्वशीकुण्ड है जहां कि दक्षिण उरु भेदन कर उर्वशी हुयी है वहां मैं देवताओं के कारण भी तपता हूं मेरी आत्माको कोई नहीं जानता है अपनी ही आत्मा अपने को जानती है तदनन्तर मेरे तप करने पर बहुत वर्ष व्यतीत होने से इन्द्र,ब्रह्मा,महेश्वर, आदि देवताओं ने भी मुझे नहीं जाना है इस बदरी भूमि में मैंने एक एक फल से सुनिश्चित हो बहु वर्ष तक तप किया है ॥५२॥५३॥५४॥५५॥ हे भूमे ! मैंने वहां पर दश पद्म दश अरब दश करोड़ दश वर्ष तक तप किया है ॥५६॥ तदनन्तर गुह्यमार्ग में स्थित मुझको न देख देवता विस्मय को प्राप्त होकर दुखित हुये ५७। हे वसुन्धरे ! तप स्थित होकर मैं सब देखता हूं और मुझे योगमाया से आवृत कोई नहीं जानता है ॥५८ तब वे सब देवता पितामह ब्रह्मा से कहने लगे कि विष्णु के बिना हम

लोक में शान्ति नहीं पा रहे हैं देवताओं के वचन सुनकर लोक पितामह ब्रह्मा योग माया से छिपे हुये मुझसे कहने लगा ॥५९॥६०॥ हे महाभागे ! तदनन्तर सिद्ध देव गन्धर्व ऋषि मेरी स्तुति करने लगे और कहने लगे कि हे नाथ ! आपसे विछोह पाकर हम दुखित हुये हैं हे हृषिकेश ! परम कृपा करके हमारी रक्षा कीजिये। हे विशालाक्षि उनके इस प्रकार कहने पर मैंने उनको देखा और वे परम निवृत्ति को प्राप्त हुये हैं इस उर्वशी कुण्ड में एक रात्रि निवास कर जो स्नान करता है वह सर्व पाप मुक्त हो जाता है और उर्वशी लोक प्राप्त कर अक्षय काल तक क्रीड़ा करता है ॥६१॥६२॥६३॥६४॥६५॥ तथा जो मेरे कर्म परायण हो उर्वशी कुण्ड में प्राण त्यागता है वह पुन्य पाप से मुक्त होकर मुझ विष्णु में लीन हो जाता है जहां कहीं भी स्थित होकर नर बद्रिकाश्रम पुण्य क्षेत्र का स्मर्ण करता है वह वैष्णव लोक को जाता है जहां से कि वापिस नहीं आया जाता है जो ब्रह्मचारी, जितेन्द्रिय, जित-क्रोध, सत्यवादी मेरा भक्त इस रहस्य को नित्य सुनता है वह ध्यान योग रत होकर मुक्ति को प्राप्त करता है। हे वसुन्धरे ! जो इस सब ध्यानयोग को जानता है वह परम गति को प्राप्त करता है। ६६॥६७। ६८॥६९॥७०॥ इति श्री वाराह पुराणे बदरिकाश्रम माहात्म्यम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीका-यामेक चत्वारिंशदधिक शततमोऽध्याय ॥१४१॥

अथः एक सौ बयालीसवां अध्याय

दोहा— इकसौ बयालीस कहूँ, गुह्य कर्म माहात्म्य।
कर्मयोग सन्यास अरु, कहें ज्ञान आध्यात्म्य ॥

अथ गुह्य कर्म माहात्म्यम्— सूत ने कहा— तदनन्तर धर्म की चाहना वाली पृथ्वी भगवान् से के वचन सुनकर हाथ जोड़ माधव भगवान प्रार्थना पूर्वक पूछने लगी तथा प्रसन्न करने लगी ॥१॥ धरणी ने कहा— हे माधव ! मुझ दासी में प्रेम

करके मेरी विज्ञापना सुनिये हे जनार्दन मैं कोमल स्वभाव से आपको कहती हूं ॥२॥ नारी अल्पप्राणवल वाली हैं जो आपने कहा है उस आचरण में स्त्रियाँ क्षुधा अनशनादि नहीं सहन कर सकती हैं निश्चय से यहां खाते हुये मनुष्य रजसे कल्याण को प्राप्त करते हैं हे देव ! अन्न अनुग्रह है जिससे कि आप का कर्म किया जाता है पृथ्वी के इस प्रकार वचन सुनकर भावशुद्धात्मा भगवान् कुछ हँसकर कहने लगे ॥३॥४॥५॥ श्रीवराह ने कहा-हे मेरे कर्म में तत्पर वाली देवि ! वसुन्धरे ! तूने मेरे भक्त सुख के लिये अति गुह्य प्रश्न किया है ॥६॥ हे देवि ! मेरे कर्म करने वाली जो रज से संयुक्त होजावे वह जहां में स्थित हूँ मेरा स्पर्श करती हुई यदि उस समय भोजन कायसाधन में कोई भाव हो तो मेरे में चित लगाकर भोजन करे वह रजस्वला भोजन करती हुई भी दोष से लिप्त नहीं होती है हाथ जोड़कर मेरे कहे हुये मंत्र को पढ़े (अनादि मध्यान्त अज पुराण देववर को रजस्वला नमस्कार करती हूं) इस मंत्र को पढ़कर जो रजस्वला भोजन करके जिन कर्मों को करती है उनके करने पर भी दोषों से लिप्त नहीं होती है ॥७॥८॥९॥१०॥ हे महाभागे वह रजस्वला पुनः पांचवें दिन स्नान करके मेरी चिन्ता करती मेरी भक्ति परायण हो यथा योग्य कर्म करे तो संसार चिन्ता को छोड़कर पुरुषत्व को प्राप्त करती है ११॥१२ पृथ्वी ने कहा हे भगवन् ! पुरुष, स्त्री अथवा नपुंसक, जन्म संसार बन्धन के दोष से किस प्रकार मुक्त होते हैं ॥१३॥ श्रीवराह ने कहा इन्द्रियों का निग्रह कर चित्त मेरे में लगा कर मेरे कर्म परायण हो मुझमें संन्यास योग से मेरे योगों में संन्यास कर एक चित्त दृढ़व्रत हो जो पुरुष नपुंसक, वा स्त्री ऐसा करने पर ज्ञान संन्यास तथा योग से परम गति प्राप्त करते हैं हे वसुन्धरे ! तुझे और भी सुनाता हूँ ॥१४॥१५॥१६॥ मन, बुद्धि, चित्त, ये शरीरियों के अनीश हैं हे पृथुलोचने ! ज्ञान से एक चित्त मन करके समचित्त को प्राप्त होते हैं वे मनुष्य दोष लिप्त नहीं होते हैं

सर्व भक्ष्य खाते हुये पेय अपेय को पीते हुये भी यदि मेरे में समचित्त है तो उनकी कोई क्रिया नहीं है यदि मेरे में मन बुद्धि तथा चित्त समान भाव से स्थित है तो जो कुछ भी कर्म करे वह कमल पत्र के पानी में रहते भी जिस प्रकार लिप्त नहीं होता है उसी प्रकार लिप्त नहीं होता है ॥१७॥१८॥१६॥२०॥ रात, दिन, मुहूर्त अथवा क्षण भर या कलामात्र निमेष त्रुटमात्र भी जो समान चित्त करता है वह दिन रात सर्वदा कर्म शङ्कर करता हुआ भी यदि चित्त समान है तो परम सिद्धि को प्राप्त करता है ॥२१॥ ॥२२॥ जो जागते शयन करते सुनते देखते भी मेरा चिन्तन करता ही रहता है उसको क्या भय है दुवृत्त चाण्डाल तथा कुपथ में स्थित ब्राह्मण भी मुझे प्रिय है यदि चित्त नित्य मेरे मेंहीलगता है तो और जो अन्य चित्त है उसकी मैं प्रशंसा नहीं करता हूं ॥२३॥ २४॥ सर्वधर्मज्ञ ज्ञान संस्कार से संस्कृत मेरे कर्म में तत्पर हो मुझमें चित्त लगाकर जो मेरे कर्म करते हैं वे हृदय में स्थित रहते हैं वे कर्म परायण सुख की नींद सोते हैं हे देवि ! जिनका चित्त शान्त है वे भी मुझे प्रिय हैं अपने किये हुये शुभ अशुभ सब कर्मों को समान चित्त से करता है वह प्रिय है भ्रम चित्त वाले नीच पुरुष दुःख प्राप्त करते हैं चित्त लोक का नाश है चित्त मोक्ष का कारण है ॥२५॥२६॥२७॥२८॥ हे मेदिनि ! अतः चित्त को मेरे में लगाकर मुझे प्राप्त कीजिये ज्ञान तथा योग को रख कर एक चित्त होकर मेरा भजन कीजिये जो नित्य मुझमें ही मन लगाकर मेरा भजन करता है वह दृढ़ व्रत मेरे स्थान को प्राप्त करके मेरे स्वरूपता को या भाव को प्राप्त करता है ॥२६॥ ३०॥ हे वसुन्धरे ! पहिले मैंने प्रजा के लिये महीने २ में गन्तव्य ऋतु काल व्यवस्थित किया है यदि मुझे प्रिय समझे तो एक चित्त करके ऋतु काल में स्नान करने के पश्चात स्त्री गमन करे यदि उस समय स्त्री के साथ गमन न करे

तो उसके इक्कीस कुल के पितर मारे जाते हैं अर्थात् दुःखी होते हैं हे वसुन्धरे ! मोह, काम अथवा लोभ से स्त्री गमन न करे अपितु पितर प्रसन्न करने के लिये ऋतुस्नाता स्त्री से गमन करे कभी लोभ तथा मोह से द्वितीया नारी से गमन न करे तथा तीसरी चौथी को भी स्पर्श न करे सम्भोग धर्म के कर लेने पर कृत कौतुक संस्थित होकर उत्तम शुद्धि चाहने वाला शयन में स्त्री दर्शन न करे ऋतु स्नाता स्त्री से गमन करके जल स्नान करे और अन्य वस्त्र धारण करे और जो पुरुष ऋतुकाल के न समाप्त होने पर ही स्त्री से रति क्रीड़ा करता है उसके पितर रेत का पान करते हैं पुरुष एक स्त्री से गमन करता हैं और दूसरी से काम पीड़ित पुरुष गमन करता है ॥३१॥३२॥३३॥३४॥३५॥३६॥३७॥३८। और जो तीसरी चौथी स्त्री से गमन करता हैं वह अधम पुरुष हैं सब लोक के लिये यह मैंने समय बना रखा हैं ऋतु काल में तो सब के लिये ऋतु गमन करना पितरों के लिये कहा है जो ऋतुकाल में स्त्री प्रसंग करता है वह ब्रह्मचारी ही माना जाता है जो नीच पुरुष क्रोध अथवा मोह से ऋतुकाल में गमन नहीं करता है उसको ऋतु ऋतुमें भ्रूणहत्या लगती है ॥३९॥४०॥४१॥ हे वसुन्धरे ! तुझे और भी सुनाता हूँ कि उसे सुनिये चित्तयोग का ज्ञान तथा कर्म योग की क्रिया सुनिये मनुष्य कर्म से मेरे स्थान को प्राप्त करते हैं। मेरे ज्ञान निष्ठा वाले योग वैराग्यों के स्थान को प्राप्त करते हैं इससे अन्य प्रधान गति नहीं है ज्ञान, योग, तथा सांख्य चित्त-व्यपाश्रित नहीं हैं मेरे मार्गानुसारी मनुष्य पुष्कल सिद्ध को प्राप्त करते हैं जो मनुष्य मेरा भक्त होकर ऋतु काल में व्यवस्थित होवे तो तीन दिन वायु भक्षण करके रहे और हे वसुन्धरे ! चतुर्थ दिवस के आने पर सिद्धि कर्म करके नहीं जाता है तथा अपर दिनों में नहीं जाता है तदनन्तर स्नान से शिर

का मल शोधन करे शुक्लाम्बर पहिन कर चित्त को सावधान करे हे वसुन्धरे ! तदनन्तर बुद्धि और मन को समान करके जो मेरा कर्म करता है वे मेरे हृदय में स्थित रहते हैं ॥४२।४३।४४॥ ॥४५॥४६। ४७ ४८॥ मेरा प्रापणक नैवेद्यादि करके भोजन करे और हाथ जोड़ सिर से नमस्कार करके, यथोक्त कर्म करके 'आदिर्भवान्युभमनन्त मध्यो रजस्वला देव वयम् नमामेः" इत्यादि मन्त्र से हे भूमे । जो रजस्वला शुद्ध होकर स्नातास्नात कर्म करते हैं वे नारी वा पुरुष दोष को नहीं प्राप्त होते हैं जो यथार्थ कर्म करते हैं वे मेरे प्यारे हैं ॥४६॥५० ।५१॥५२॥ हे भद्रे । जो मेरे में चित्त लगाकर नित्य कर्म करते हैं वे स्त्री अथवा पुरुष रज से दूषित होने पर भी एक चित्त हो इन्द्रिय निग्रह करने से परम गति चाहने वाले मेरे सन्यास योग को प्राप्त करते हैं ॥५३॥ ॥५४॥ इस प्रकार जो स्त्री, पुरुष अथवा नपुंसक नित्य कर्म करते हैं वे संसार वासना को छोड़ देते हैं अयोग कर्मों के ज्ञान होने पर भी जो मेरे कर्मों में तत्पर हैं वे सद्गति प्राप्त करते हैं संसार सागर की तरंगों में घूमते हुये मनुष्य आज तक भी मुझे नहीं जानते हैं हे भूमे ! मुझे वही जानते हैं जो कि मेरी भक्ति में तत्पर रहते हैं ॥५५॥।५६। सहस्रों माता पिता और सैकड़ों पुत्र कलत्र चक्र की तरह होते जाते हैं घूमते रहते हैं जिसके मोह से कि मुझे नहीं जानते हैं ॥५७। लोक अज्ञान से घिरा है और मोह के वशीभूत हो रहा है तथा अनेक सगति से जकड़ा हुआ है अतः उनमें चित्त को न लगावे ॥५८॥ माता अन्यत्र जाती है पिता अन्यत्र जाता है और पुत्र अन्यत्र जाते हैं तथा कलत्र दास आदि अन्यत्र जाते हैं ।५६॥ हे वरारोहे संसार से मोहित ज्ञान मूढ़ अपने अपने कर्म समुद्भव आत्मा के स्थान में होते हैं परन्तु मेरी भक्ति करके मुझे नहीं प्राप्त होते ॥६०॥६१॥ हे वसुन्धरे ! जिसको यह सब न्यास योग विदित है वह सत् आत्मा को योग मे रख निःसन्देह मुक्त हो जाता

है ॥६२॥ जो मानव प्रातःकाल नित्य इसे सुनता है वह सिद्धि को प्राप्त करके मेरे विष्णु लोक जाता है हे भद्रे ! मेरे भक्त सुख के लिये जो तूने मुझसे पूछा था वह परम महत् रहस्य मैंने तुझे सुना दिया है ॥६३ ६४। इति श्री वाराह पुराणे गुह्य कर्म माहात्म्य वर्णनं नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम द्वा चत्वारिंशदधिक शततमोऽध्याय ।।१४२।।

॥ अथः एक सौ तेतालीसवांऽध्याय ॥

दोहाः— विन्ध्याचल के तीर्थ अब, कहें सकल समुझाय ।
प्राण त्याग तिन में करि, विष्णु लोक नर जाय ॥

अथ मन्दर हिम निरूपणम्— श्री वाराह ने कहा— हे सुन्दरि ! पुनः और भी सुनाता हूँ उस गुप्त रहस्य को सुनिये । मेरे भक्तों को सुख देने वाला मेरा एक परम गुप्त स्थान है उसे सावधानता से सुनिये ।।१।। जाह्नवी नदी के दक्षिण कुल में विन्ध्य पर्वत है उसके पृष्ठ भाग में सर्व भक्तों का प्यारा एक मन्दरा तीर्थ है ।।२।। हे भूमे ! वहां त्रेतायुग में राम नाम का महाद्युति होगा वह मुझे स्थापित करेगा ॥३॥ धर्म की इच्छा वाली वसुन्धरा एवम् प्रकार नारायण के वचन सुनकर लोकनाथ जनार्दन से मधुर वाक्य बोलने लगी ।।४।। पृथ्वी ने कहा— हे देव देव ! हे महादेव ! हे हरे ! हे नारायण हे प्रभो ! जो आपने धर्मयुक्त मन्दरा तीर्थ कहा है उस मन्दरा में मनुष्य क्या क्या कर्म करते हैं और कर्म करके किन लोकों को पाते हैं मन्दरा में कौन कौन ऐसे तीर्थ हैं तथा वहाँ का रहस्य क्या है मुझे बड़ा कौतूहल है आप समग्रता से सुनाइये ।५।।६. ७।। श्री वाराह ने कहा हे सुन्दरि ! जो तू मुझसे मन्दरा की महा क्रिया पूछती है वह गुप्त क्रिया मैं तुझे सुनाता हूं उसे यत्न पूर्वक सुनिये ।८। उस समय में मन्दार का मनो फूल लेकर फूले हुये मन्दार में खेल कर रहा था तब मन्दार में रहते हुये मुझे चिंता हुई हे धरे ! उस पर्वत में एकादश कुण्ड निकले और विन्ध्य में मेरे प्रभाव से मन्दार महाद्रुम था हे

सुभगे! भक्तानुग्रह कामना से मैं वहां स्थित हुआ हूँ ॥६॥१०॥ ॥११॥ जहां दर्शनीयतम स्थान स्थित है और जहां मनोज्ञ शिलातल है वहां मन्दार वृक्ष के आश्रित में स्थित हुआ हूँ ॥१२॥ हे सुभगे! उस मन्दार महावृक्ष का विस्मय युक्त रहस्य सुनिये वह मन्दार महावृक्ष द्वादशी और चतुर्दशी के दिन फूलों से पुष्पित रहता है और मनुष्य उसको द्वादशी चतुर्दशी मध्याह्न समय देखते हैं अन्य दिनों में वह कभी नहीं दिखाई देता है उस मन्दार कुन्ड में नर एक रात्रि निवास कर स्नान करता है वह शुद्धात्मा परम गति को प्राप्त करता है और जो मन्दार कुण्ड में तप करके प्राणों को त्यागता है वह मेरे विष्णु लोक को जाता है ॥१३ १४ १५॥१६॥ उस मन्दार से उत्तर की ओर प्रापण नाम गिरि है वहां दक्षिण दिशा को ओर तीन धारा गिरती हैं उसी क्षेत्र में मेरा प्रसिद्ध स्नान कुण्ड है वहाँ से दक्षिण ओर धारा गिरती है और उत्तरामुख स्रवण होती हैं हे वरारोहे! एक रात्रि निवास कर जो वहाँ स्नान करता है वह मेरु के दक्षिण शिखर में आनन्द पूर्वक रहता है और जो मेरे कर्म परायण हो वहाँ पर प्राणों को छोड़ता है वह सर्व संग छोड़कर मेरे विष्णु लोक को जाता है ॥१७॥१८॥१९॥२०॥ उसके पूर्वोत्तर पार्शव में वैकुण्ठकारण नाम गुप्त स्थान है जहां कि हरिद्रा वर्ण के समान एक धारा गिरती है जो एक रात्रि निवास कर वहाँ स्नान करता है वह मनुष्य स्वर्ग में जाकर देवतारों के साथ आनन्द पूर्वक रहता है और जो वहां प्राण त्याग करता है वह सब कुल का उद्धार करके मेरे विष्णु लोक को जाता है ॥२१॥२२॥२३॥ उसके दक्षिण पूर्व से विन्ध्य शिखरों में सम स्रोत गिरता है। और एक महाह्रद है वहाँ जो नर एक भक्त निवास कर स्नान करता है वह मेरु के पूर्व पार्शव में आनन्द करता है और जो वहाँ पर प्राणों को छोड़ता है वह संसार को छोड़ मेरे लोक को जाता है ॥२४॥२५॥२६॥ मन्दार के पूर्व की ओर एक गुप्त

कोटर तीर्थ हैं वहां मुसलाकृति वाली एक धारा गिरती है वहां जो नर पञ्च भक्त निवास कर स्नान करता है वह मेरु के पार्श्व में आनन्द करता है ॥२७॥२८॥ और जो वहां प्राणों को त्यागता है वह मेरे लोक को जाता है ।।२६।। उससे दक्षिण पार्श्व में विन्ध्य से निकली मुसलाकृति वाली पाँच धारा बहती हैं जो नर अहो-रात्र निवास कर वहां स्नान करता है वह मेरु के दक्षिण शिखर में आनन्द करता है और जो यहां पर सुदुष्कर कर्म करके प्राण त्याग करता है वह मेरु शिखर को छोड़कर मेरे लोक को जाता है ॥३०। ३ ॥३२॥ मन्दार के दक्षिण पश्चिम भाग में एक आदित्य समान धारा गिरती है वहां अहोरात्र निवास कर जो स्नान करता है वह पश्चिम भाग में आनन्द पूर्वक रहता है जहां कि ध्रुव प्रतिष्ठित है और जो मेरे कर्म परायण हो इस स्थान पर प्राणों को त्यागता है वह सर्व पाप मुक्त हो मेरे लोक को जाता है ॥३३॥३४॥३५॥ उससे पश्चिम पार्श्व में चक्रावर्त तीर्थ है वहां अगाध महा तालाव है । जो नर पांच भक्त निवास कर वहां स्नान करता है वह स्वच्छन्द गमनालय हो मेरु शिखरों में निवास करता है और जो यहां पर प्राण त्याग करता है वह मेरे लोक में जाता है ॥३६॥३७॥३८॥ उस विन्ध्य में वायव्य दिशा की ओर मुसलाकृति तीन धारा बहती हैं वहां जो मनुष्य मेरे कर्म परायण होकर स्नान करता है वह मेरु के सब शिखरों में विहार करता है और जो इस गुह्य स्थान में प्राण त्याग करता है वह सर्व संग छोड़कर मेरे लोक में जाता है । ॥३६॥४०॥४१॥ उससे त्रिक्रोश मात्र में दक्षिण दिशा की ओर गुह्य गम्भीरक नाम महाह्रद है । जो आठ रात्रि निवास कर वहां स्नान करता है वह स्वच्छन्द गमन हो सब द्वीपों में विहार करता है । और जो मेरे कर्म परायण हो वहां प्राणों को छोड़ता है । वह सब द्वीपों को छोड़ मेरे लोक को जाता है । ॥४२॥४३॥४४॥

उसके पश्चिम पार्श्व में एक गुह्य अगाध महाह्रद है यहां सात धारा गिरती हैं जो नर अहोरात्र निवास करके इस तालाब में स्नान करता है वह स्वच्छन्द गमन हो शक्रलोक में निवास करता है और जो स्वकर्म निष्ठावाला मनुष्य यहां प्राणों को छोड़ता है वह सर्व संग छोड़कर मेरे लोक में जाता है ॥४५॥४६॥४७। उस मन्दार क्षेत्र का मण्डल मुझ से सुनिये और विन्ध्यपर्वत में स्यमन्त पंचक सुनिये हे वसुन्धरे! उस विन्ध्य पर्वत के शिखर पर मैं मन्दार में निवास करता हूँ दक्षिण में चक्र स्थित है और वाम भाग में गदा स्थित है जो नित्य इस मन्दार क्षेत्र वर्णन को सुनता है उसके आगे से शंख लांगल मुसल रहता है यह तेरी प्रसन्नता के लिये मम भक्त सुखावह रहस्य मैंने तुझे सुनाया है मेरी माया से मोहित कोई भी मनुष्य इसे नहीं जानते हैं केवल मुझ वाराह मूर्ति के आश्रय रहने वाले मेरे शुद्ध भक्त ही इस रहस्य को जानते हैं ॥४८॥४९॥५०॥५१॥५२॥ इति श्री वराह पुराणे मन्दार महिमा निरूपणं नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायां त्रयश्चत्वारिंशदधिक शततमोऽध्यायः। १४३॥

अथ एक सौ चवालीसवां अध्याय

दोहा—शाप मिटावन हेतु अब, तपकरि सोम महान्।
शापमिटा प्रसन्न किये, महादेव भगवान् ॥

अथ सोमेश्वरादि लिंगमुक्ति क्षेत्र त्रिवेण्यादि माहात्म्यम् ॥ सूत ने कहा–मन्दार का माहात्म्य सुनकर धर्म की चाहना वाली वसुन्धरा पुनः माधव भगवान् से विस्मित होकर पूछने लगी ॥१॥ धरणी ने कहा हे देव! प्रसन्नता पूर्वक मन्दार का वर्णन मैंने सुना दिया है अब मन्दार से भी जो परम स्थान है उसे सुनाइये ॥२॥ श्री वराह ने कहा–हे देवि! जो तू मुझसे पूछ रही है वह तत्व से सुनिये मेरा गुह्य शालिग्राम क्षेत्र है उसे सुनाता हूँ ॥३॥ हे भूमे! द्वापर युग में यादव कुल में यदकुल वर्द्धक एक शूर राजा होगा उसका पुत्र महाभाग वसुदेव होगा हे वसुन्धरे! उस वसुदेव की

सर्वावयव सुन्दरी देवकी नाम की स्त्री होगी। हे महाभागे! उस वसुदेव से मैं निःसन्देह देवकी के गर्भ से पैदा होकर वासुदेव मेरा नाम होगा और मैं उस समय देवताओं के शत्रुओं का नाश करूँगा ॥४ ५॥६॥७॥ और उस समय मेरे यादव कुल में स्थित रहने पर एक सालङ्कायन नाम परम ब्रह्मर्षि मेरी ही आराधना के लिये दशों दिशाओं में घूमा। पुत्र प्राप्ति के लिये उसने मेरु शिखर पर कठिन तप किया। हे वसुन्धरे! तब वह मेरे पिन्डारक क्षेत्र में गया तदनन्तर लोहार्गल क्षेत्र में जाकर हजार वर्ष तक तप किया। पहिले ईश्वर के सदृश सर्वयोगेश्वर स्थित था हे देवि! परन्तु वह इधर उधर मुझे ढूंढता हुआ भी मेरा दर्शन न कर सका हे वसुन्धरे! पहिले मैं ईश्वर, ईश्वर के समान था उस सालङ्कायन के उसी क्षेत्र में तप करने पर वहीं शालग्राम पर्वत पर मेरे स्वरूप से शिलारूप होकर महादेव रहता था ॥८॥९॥१०॥११॥१२॥१३॥ और मैं भी नित्यशः गिरिरूप होकर रहता था। उस पर्वत की समग्र शिला निःसन्देह मेरे स्वरूप वाली हैं ॥१४॥ उस पर्वत की चक्र लाञ्छित शिलाओं की प्रयत्न से पूजा करनी चाहिये और वहीं लिंग रूप से महादेव की पूजा करनी चाहिये उस पर्वत में शिव नाभा शिला हैं तथा चक्रनाभा शिला हैं सोमेश्वर से अधिष्ठित शिव रूप गिरि हैं ॥१५॥१६॥ सोम ने वहां पर अपने नाम से उत्तम लिंग की स्थापना कर अपने शाप मिटाने के लिये हजार वर्ष तक तप किया फिर तप करने पर शाप से मुक्त हो तेज से युक्त हो अपने तेज बल को प्राप्त करके गिरिजा पति की स्तुति करने लगा ॥१७॥१८॥ सोमेश्वर से आविर्भूत वरद त्र्यम्बक की स्तुति करने लगा। ॥१९॥ सोम ने कहा— सौम्य शिव, उमाकान्त भक्त की मनोकामना पूर्ण करने वाले पञ्चवदन नील कन्ठ त्रिलोचन को नमस्कार करता हूँ। ॥२०॥ चन्द्रशेखर, दिव्य, सर्वदेव नमस्कृत, पिनाक पाणि, भक्तों को अभय प्रदान करने

वाले देवेश को नमस्कार करता हूँ । ॥२१॥ त्रिशूल धारण करने वाले डमरू से शोभायमान हाथ वाले वृषध्वज नाना रूप भयानक गणों से युक्त महादेव को नमस्कार करता हूँ ॥२२॥ त्रिपुरासुर को मारने वाले; महाकाल अन्धक दैत्य को मारने वाले, गजचर्म पहिनने वाले व्याघ्र चर्म से विभूषित स्थाणु रूप शिव को नमस्कार करता हूँ । ॥२३॥ नाग फण से वेष्ठित रुद्राक्ष की माला धारण करने वाले प्रभु को निराकार होते हुये भी भक्त मनोरथ सिद्धि के लिये मूर्ति धारण करने वाले महादेव को नमस्कार करता हूँ । अग्नि, सूर्य, चन्द्र नेत्र वाले मन वाणी से अगोचर जटाजूट से निकली गंगा से पाप दूर करने वाले महादेव को मैं नमस्कार करता हूँ । ॥२५॥ कैलाश निलय वाले को हिमालय में आश्रम रचने वाले को मैं नमस्कार करता हूं । सोम के इस प्रकार स्तुति करने पर महादेव चन्द्र से कहने लगा कि हे चन्द्र ! जो तेरे मन की अभिलाषा है वरदान मांग हे गोपते ! जिससे कि तूने मेरा यह दुर्लभ दर्शन प्राप्त किया है ॥२६॥२७॥ सोम ने कहा– हे देव ! यदि वरदान चाहते हो तो आप सर्वदा मेरे रचे हुये शिव लिंग में निवास कीजिये । और इस लिंग के भक्तों के मनोरथ पूर्ण कीजिये ॥२८॥ देव देव महादेव ने कहा– इस स्थान में विष्णु सानिध्य है तथापि मैं यहाँ नित्य निवास करता हूं और आज से लेकर इस तुझसे निर्मित लिंग में विशेषता से निवास करूंगा । ॥२६॥ तू शशाङ्क मेरी ही प्रधान मूर्ति है इस लिंग की पूजा करने वाले भक्तों को मैं देवताओं को भी दुर्लभ वरदान प्रदान करूंगा । तेरा कल्याण हो । हे कलानिधे ! सालकायन मुनि की तपस्या के बल से विष्णु के साथ में यहां निवास करता हूं । विष्णु शालग्राम गिरि है और मैं सोमेश्वर नाम से विख्यात हूँ उन दोनों पर्वतों की

जो शिला हैं वे शिव शिला और विष्णु शिला नाम से विख्यात् हैं । पहिले रेवा ने शिव प्रसन्नता के लिये तप किया है और यह मनोकामना करी कि मेरा शिव सदृश पुत्र होवे तदनन्तर में किसी का पुत्र नहीं क्या करूं ऐसा सोचता हुआ कहने लगा तथा विचारने लगा कि रेवा को वरदान अवश्य देना चाहिये ऐसा विचार कर मैंने प्रसन्नान्तरात्मा से रेवा को कहा । ३०॥३१॥३२॥३३॥३४॥३५॥ हे देवि ! शिव प्रिये ! गजानन पुरःसर में तेरे गर्भ में लिंग रूप से वास करूंगा और पुत्र रूप हूंगा । तू शिवा है मेरी अपरा जलमयी मूर्ति है केवल शिव शक्ति मात्र भेद है नहिं तो हम एकत्र स्थित हैं ॥३६॥३७॥ एवम् प्रकार शिव से वरदान पाय रेवा मेरे सानिध्य इस स्थान पर आई है और तभी से यह रेवा खण्ड प्रसिद्ध हुआ है । ॥३८। हे विधो ! पहिले गन्डकी ने भी अयुत वर्ष तक कठोर तप किया है । स्वयम् गिरे हुये वृक्ष के पत्तों को खाकर तदनन्तर वायु का भक्षण कर गण्डकी ने विष्णु भगवान का चिन्तन करते हुये दिव्य सौ वर्ष तक कठोर तप किया है तब भक्त जनों का प्यारा प्रणत वत्सल साक्षात् जगन्नाथ हरि भगवान मधुर वाक्य बोलने लगे कि हे गन्डकी ! हे अनघे ! अविच्छिन्न भक्ति से तूने मेरा तप किया है अतः मैं तेरे ऊपर पूर्ण रूप से प्रसन्न हूँ हे सुव्रते ! तू वरदान मांग हे वरवर्णिनि ! तुझे क्या वरदान दूं वह शीघ्र कहिये ॥३६ ।४० ४१॥४२॥ गन्डिकी सामने से शङ्खचक्र गदाधर भगवान को देखकर नम्रता पूर्वक भगवान की स्तुति करने को उद्यत हुई । अहो हे देव मैंने योगियों के भी दुष्प्राप्य को देख लिया है यह सब स्थावर,जङ्गम रूप जगत आप ही ने रचा है तदनन्तर आप उसमें प्रविष्ट हुये हो उसी कारण आपको पुरुष कहते हैं

आपकी लीला से उन्मीलित विश्व में कौन पुरुष स्वतन्त्र है अर्थात् कोई भी स्वतन्त्र नहीं है सब आपके आधीन है अनादि अन्त पर्यन्त जो श्रुति बोधित ब्रह्म है हे महाविष्णो ! वही आपहो जो आपको जानता है वही वेद ज्ञाता है ॥४३॥४४॥४५॥४६॥ जो आपकी ही परम शक्ति जगन्माता कही गयी है उसी योगमाया का प्रकृति प्रधान कहा जाता है पुरुष निगुर्ण है अव्यक्त है विश्वरूप है निरञ्जन है आनन्द रूप शुद्धात्मा है अकर्ता निर्विकार है ॥४७। ४८॥ अपनी योगमाया को लेकर के ही आपको लोग कर्ता कहते हैं प्रकृति के द्वारा जगत् के रचे जाने पर आप द्रष्टा तथा साक्षी कहे जाते हो प्रकृति के तीन गुणों के द्वारा जगत रचना होजाने पर भी अन्यथा नहीं होता हैं हे देवि ! सानिध्यमात्र से कारणरूप आप में प्रतीत होता है ॥४६॥५०। जिस प्रकार स्वच्छ स्फटिक में जपाकुसुम प्रकाशित होता है जिस आपके प्रकाश से यह जगत् प्रकाशित होता है ऐसे ज्योतीरूप आपको मैं नमस्कार करती हूं ब्रह्मा आदि कवि लोग भी आपको यथार्थ से नहीं जानते हैं तो मैं मूढ़ा किस प्रकार आपके निरञ्जन रूप को जान सकती हूँ ॥५१॥५२॥मैं कुछ न जानती हुयी मूढ़ जगत के मध्य में स्थित हूं योग्यायोग्य को न जानती हुयी मैं आपसे धारण की हुयी हूं मैं मूर्खता से इच्छा पूर्वक आपके प्रसाद से लोक में महत्व मांगती हूँ हे उदार ! वह मुझे दीजिये ॥५३॥५४॥ आप दीनों पर दया करने वाले हो हे प्रभो ! आप वरदान देने को इनकार न कीजिये तब भगवान् ने कहा कि हे देवि ! जो कुछ तू चाहती है वह अदेय वरदान भी तू मांगले जो मनुष्यों को दुर्लभ है वह वरदान मुझसे शीघ्र मांग लीजिये ॥५५॥५६॥ मेरा दर्शन पाकर अपूर्ण मनोरथ कौन हो सकता है हे देवांशो ! तब वह लोक तारिणी गण्ड की देवी हाथ जोड़कर नम्रता पूर्वक मधुर वाक्य बोलने लगी कि हे देव !

यदि आप मेरे ऊपर प्रसन्न हैं तो आप मुझे मनोवाञ्छित वरदान दीजिये ॥५७॥५८॥ हे विष्णो! मेरे गर्भ में जाकर मेरे पुत्रता को प्राप्त कीजिये हे गोपते! तब प्रसन्न हुये भगवान सोचने लगे कि मेरे संग के लोभी गण्ड की नदी ने क्या मांगा है अस्तु उसने जो कुछ याचना की है वह दे देता हूँ जिससे कि लोकों का भव मोक्ष हो जाय ॥५६॥६०॥ इस प्रकार भगवान ने कृपा से मन में निश्चय करके गण्ड की से कहने लगे कि हे देवि! मेरा वचन सुनिये भक्तानुग्रह के कारण शालग्राम शिला रूपी हो सर्वदा तेरे गर्भ में रहकर मैं तेरे पुत्रत्व को प्राप्त हूँगा ॥६१।६२॥ मेरे सानिध्यता से तू सब नदियों में श्रेष्ठ होगी दर्शन स्पर्शन स्नान पान तथा अवगाहन से तू मन वचन शरीर से किये महा पापों को भी हरण करेगी जो देव ऋषि पितृ तर्पण करने वाला विधान से स्नान करेगा और अपने पितरों को तर्पण देगा वह नर पितरों का उद्धार कर स्वर्ग पहुंचता है और स्वयं मेरा प्यारा होकर ब्रह्मलोक जायेगा और यदि जो नर तुझे गण्ड की नदी में प्राणों को त्याग करे वह मेरे लोक को प्राप्त करेगा जहाँ जाकर कि नर शोक नहीं करता हैं ॥६३॥६४।६५।६६। इस प्रकार गण्ड की नदी वरदान देकर भगवान वहीं पर अन्तरध्यान होगये हे विधो! उसी दिन से मैं भी इस क्षेत्र में रहता हूँ भक्त की इच्छा से विग्रह प्राप्त कर मैं तथा भगवान विष्णु यहाँ पर रहते हैं ऐसा कह कर महादेव ने द्विजपति को ग्रहण किया ॥६७॥६८॥ चन्द्रमा के अंगों को प्रकाशित कर प्रमार्जन किया और कल्याण करने वाले हाथ से अंगों को पीड़ा रहित करके उस चन्द्रमा के देखते ही महादेव अन्तर ध्यान होगये सोमेश्वर से दक्षिण भाग में वाण से पर्वत को भेदन करके रावण ने एक

अति पुण्य दायक जलधारा प्रकटित की हैं उसका नाम त्राण गंगा हैं उसमें स्नान करने से पाप दूर होते हैं सोमेश्वर से पूर्व दिशा में रावण का तपोवन है जहां कि तीन रात्रि निवास करने से तपस्या का फल मिल जाता है ॥६६'। ७०॥ ७१॥ ७२। जहां नृत्य से देवेश ने प्रसन्न होकर रावण को वरदान दिया है उस रावण के नृत्य से नर्तनाचल प्रख्यात है वाण गंगा में स्नान करके जो वागेश्वर प्रभु का दर्शन करता है वह गंगा स्नान फल प्राप्त करके देवताओं की तरह स्वर्ग में आनन्द करता है ॥७३॥७४॥ सालङ्कायन ने भी शीघ्र उसी क्षेत्र में महातीव्र तप किया है हे वसुन्धरे ! तुझे और भी परम गुप्त रहस्य सुनाता हूं उस सालंकायन मुनि के तप करने पर और उस मुनि का यह भाव कि ईश्वर के समान मेरा पुत्र होवे जान कर महेश्वर देव ने अपना ही अति सुन्दर नयनों को तृप्त करने वाला दूसरा रूप बनाकर योगमाया से सालङ्कायन मुनि के पुत्रत्व को प्राप्त हुआ पुत्रत्व को प्राप्त होने पर भी मुनिने नहीं जाना कि मेरे दक्षिण भाग में शंकर रूप पुत्र स्थित है योगमाया बल से युक्त महादेव रूपवान् गुणवान् था तथा शरीर से सूर्य समान देदीप्यमान था और मुनिने समीपस्थ उसको नहीं देखा केवल मेरी आराधना ही करता रहा तब महादेव की आज्ञा से नन्दी हँसकर मुनि से कहने लगा हे मुनि शार्दूल ! उठिये आपका मनोरथ सफल होगया है आपके दक्षिण अङ्ग से मैं आपका पुत्र पैदा होगया हूं हे प्रभो ! आप मुझे शिक्षा दीजिये ॥७५॥७६॥७७॥७८॥ ७६॥ ८०॥ ८१॥ आपने ईश्वर के समान पुत्र प्राप्त करने की इच्छा से तप किया है सो मैं पैदा होगया हूं मेरे समान धन्य कौन हो सकता है ऐसा विचार करके शंख चक्र गदा

धर भगवान की आराधना करने वाले तेरा पुत्र मैं स्वयं होगया हूँ आपने परम सिद्धि प्राप्त करली है जिससे कि मैं आपका पुत्र होगया हूं नन्दि के वचन सुनकर प्रहृष्ट वदन मुनि विस्मित होकर कहने लगा कि क्यों अभी भी हरि भगवान यदि तपस्या का फल होगया है तो दृष्टि गोचर नहीं होरहे हैं ।८२॥ ८३॥ ८४॥ ८५॥ जब तक मैं विष्णु का दर्शन न कर पाऊँ तब तक तप की समाप्ति नहीं होगी जब अच्युत दर्शन न मिला तब तक इसी स्थान में निवास करूँगा हे पुत्र! तू भी योग से शीघ्र मथुरा पुरी में जा वहां से धन और गोव्रज सहित आमुष्यायण को शीघ्र यहां ले आवो तदनन्तर आज्ञा पाकर नन्दी शीघ्र मथुरा में गया और वहां उस ऋषि का आश्रम देख तथा आमुष्यायण को देख उसे उसका नाम पूछकर गृह, धन, गोधन की कुशलता पूछने लगा ॥८६॥ ८७॥ ८८॥ ८९॥ ९०॥ सालङ्कायन के शिष्य आमुष्यायण ने भी नन्दी के पूछने पर कहा कि गुरु प्रभाव से सर्वत्र कुशल है परन्तु आप गुरु की कुशल सुनाइये कि वह मेरे तपोधन गुरु कहां हैं आप कहां से यहां आये हैं आपके आने का क्या कारण है ॥९१॥ ९२॥ वह विस्तार पूर्वक मुझे सुनाइये और मुझे दिया हुआ पाद्य अर्घ्य ग्रहण कीजिये उसके ऐसा कहने पर नन्दी ने अर्घ्य ग्रहण किया और विश्राम करके गुरु का वृत्तान्त तथा अपने आगमन का कारण सुनाने लगा तदनन्तर उसी आमुष्यायण के सहित धन तथा गोधन लेकर कतिपय दिनों में गण्डकी नदी के तीर पर पहुँचे और धीरे धीरे उतर कर त्रिवेणी को प्राप्त कर हर्षित हुआ तप करते हुये देवताओं के

प्रभात से निष्मार्थ देविका नदी उत्पन्न हुई और गन्डिकी नदी से जा मिली। पुलस्त्य और पुलह के आश्रम से एक अन्य नदी निकलकर गन्डकी नदी से जा मिली अतः गन्डकी त्रिवेणी वाली हुई।६३॥६४॥६५॥६६॥६७॥ पितरों का अति प्याग वह कामिक महा तीर्थ है वहां त्रिजलेश्वर संज्ञा वाला महा लिंग स्थित है वह लिंग भुक्ति मुक्ति देने वाला है तथा पापों का नाश करने वाला है ॥६८ ६६॥ धरणी ने कहा— प्रयाग में जो त्रिवेणी है जहाँ कि महेश्वर भगवान् हैं शूलटङ्क, यह प्रसिद्ध स्थान है तथा सोमेश प्रसिद्ध स्थान है वेणी माधव नाम से भी जहां स्वयम् विष्णु स्थित हैं और जहाँ गगा, यमुना तथा सरस्वती नदी है वहां मैंने सब देवता, ऋषि, सरोवर तीर्थों का समाज सुना है ॥१००। १०१॥१०२॥ वहाँ स्नान करने से मनुष्य स्वर्ग जाते हैं और मरने से मुक्ति को प्राप्त करते हैं उसका नाम तीर्थराज कहा गया है वह तीर्थ केशव भगवान को प्रिय है। ॥१०३॥ वही त्रिवेणी नाम से विख्यात है और आप किसी अन्य अपूर्ण स्थान की प्रशंसा कर रहे हो वह आपने गुप्त स्थान सुनाया है हे महाभाग! लोक हित कामना से और मेरी अनुक्रोश बुद्धि से आप मेरे ऊपर कृपा कीजिये ॥१०४॥१०५॥ श्री वाराह ने कहा— हे देवि! आपका कल्याण हो। सुनिये कि जो गुप्त रहस्य तू मुझसे पूछ रही है वह शुभ इतिहास सहित कथा सुनाता हूँ ॥१०६। पहिले लोक भलाई के लिये विष्णु ने देवतागण से सेवित रम्य हिमालय पर्वत पर तप किया है बहुत समय तक बड़ी कठिन तपस्या करने पर तप करते विष्णु से तीव्र तेज प्रादुर्भूत हुआ जिससे कि चराचर लोक उसकी गर्मी से कपोल स्थलों में पसीने से तरातर हुये उस पसीने से लोक का पाप नाश करने वाली दिव्य धुनी गंगा उत्पन्न हुई। महर्लोकादि सब चारों ओर से विस्मित हुये उसकी उत्पत्ति जानने की इच्छा वाले होकर भी कोई जानने को समर्थ न हुये तब सारे देवता

उत्सुक होकर ब्रह्मा के समीप गये और बार बार प्रणाम कर उसका प्रभाव पूछने लगे ॥७॥८॥९॥१०॥११॥ विष्णु की माया से मोहित होकर जबकि ब्रह्मा ने भी उसका प्रभाव नहीं जाना तब देवताओं के सहित शङ्कर की शरण गया। देवताओं के सहित आये हुये ब्रह्मा को देख महादेव ने उसे उसका आगमन कारण पूछा ब्रह्मा नम्रता पूर्वक महादेव से कहने लगे कि हे महेश्वर ! एक अति अद्भुत महातेज निकला है जिससे कि क्षमा प्रत्याहत हो गई है यह तेज जगत् का व्यतिकर करने वाला है यह क्या है कैसा है किससे पैदा हुआ है तदनन्तर शिव ने क्षण भर ध्यान धरकर ब्रह्मादि देवताओं से कहा इस महत् की उत्पत्ति महत् से दिखाता हूँ॥१२॥१३॥ १४॥१५॥१६॥ ऐसा वह ब्रह्मादि देवताओं सहित शङ्कर जहाँ विष्णु भगवान् महतप कर रहे थे वहीं जाय पहुंचा और विस्मित हो परम प्रसन्न महादेव कहने लगा हे जगत के स्वामी ! आप किस लिये तप कर रहे हो। आप जगत कर्त्ता सबके आधार हैं सबके अध्यक्ष हैं फिर क्यों तप कर रहे हो जो कि आपको अप्राप्य है याने आपको अप्राप्य वस्तु कुछ नहीं है अतः तप करना वृथा है शिव के इस प्रकार कहने पर विष्णु ने प्रणाम करके कहा– कि मैं लोक हित के लिये तप कर रहा हूं और आपका दर्शन करके आपसे वरदान चाहता हूँ। ॥११७॥११८॥११९॥१२०॥ हे जगतपते ! आपका दर्शन पाकर मैं कृतार्थ हो गया हूँ ॥१२१॥ शिव ने कहा– हे देव ! यह मुक्ति क्षेत्र है इसके दर्शन ही से मुक्ति मिलती है जहां आपके कपोल के पसीने से उत्तम गण्डकी नदी होगी जिसके किनारे में आप निवास करेंगे तुम जगन्नाथ के स्थित होने पर उस सानिध्यता से हे केशव ! मैं, ब्रह्मा, तथा सब देवता, ऋषि, चारों वेद यज्ञ तथा सब तीर्थ सर्वदा इस गन्डकी में निवास करेंगे हे प्रभो ! जो नर सारे कार्तिक महीने में इसमें स्नान करेगा वह सर्व पापों से मुक्त होकर मुक्ति को प्राप्त करेगा यह

तीर्थों में श्रेष्ठ तीर्थ है तथा मंगलों का मंगल है जिसमें कि स्नान करने से मनुष्य गंगा स्नान का फल करता है स्मरण, दर्शन स्पर्शन से नर निष्पापी होता है ॥१२१॥१२२॥१२३॥१२४॥ ॥१२५॥१२६। २७॥ जिसका ऐसा फल है उसकी बराबरी गंगा नदी के सिवाय कौन दूसरा कर सकता है जहाँ वह पुण्य गन्डकी है जो कि भुक्ति मुक्ति को देने वाली है और जहां दूसरी देविका नदी है वह गन्डिका से संगत होती है पहिले पुलस्त्य और पुलह ने सृष्टि विधान के लिये आश्रम निर्माण कर परम तप किया है और सृष्टि निर्माण सामर्थ्य प्राप्त की है तदनन्तर सब सरिताओं में श्रेष्ठ पुण्य ब्रह्म तनया नाम नदी निकली है और ब्रह्मपुत्री नाम नदी गन्डकी से जा मिली है वही तीन नदियों के मिलने से त्रिवेणी तीर्थ महा पुन्य दायक है और देवताओं को भी दुर्लभ है। हे धरे! वह क्षेत्र योजन परिमाण विस्तृत है ॥१२८॥१२९॥१३०॥१३१॥१३२॥ पहिले वेद निधि के पुत्र वे कर्दमात्मज राजा से वरण पायकर यज्ञ करवाने गये। ॥१३३॥ तृण विन्दु के पापी पुत्र दृष्टि से ही सुव्रत तथा यज्ञ विद्या निपुण और वेद वेदाङ्ग पारंग हुये। मनसा वाचा कर्मणा तानेष्ठा वाले भक्ति से हरि की आराधना करते थे। उनके हरि की आराधना करने पर केशव भगवान् सानिध्यता को प्राप्त हुये भक्ति के वश में होकर भगवान उनको पूजा समय में दिया करते थे। कदाचित् वे कुशल ब्राह्मण यज्ञ के लिये राजा से बुलाये गये और यज्ञ समाप्त होने पर राजा ने उनको सम्मान पूर्वक दक्षिणादि देकर विदा किया तथा दोनों ब्राह्मण अपने घर आये। बाँट करते समय दोनों ब्राह्मण आपस में स्पर्द्धा करने लगे। ज्येष्ठ ने कहा कि बराबर बांट करनी चाहिये ।३४। ॥३५॥३६॥३७॥३८। और विजय ने कहा कि जिसको जितना मिला है उसको उतना ही होना चाहिये। जय ने कहा कि क्या तू मुझे असमर्थ जानकर ऐसा कह रहा है ग्रहण करके

जो तू मुझे बराबर बांट नहीं दे रहा है अतः तू ग्राह होजा और विजय ने भी कहा कि क्या तू धन से अन्धा हो गया है जो तू मुझे ऐसा कहता है अतः तू भी मदान्ध गज होजा। इस प्रकार आपस में शाप देने से दोनों ही हाथी तथा मगर मच्छ हो गये १३६॥१४०॥१४१॥ पूर्व स्मृति युक्त वह द्विज गन्डकी नदी में ही ग्राह हुआ और जय नाम का ब्राह्मण त्रिवेणी क्षेत्र में महागज हुआ वन में निवास करके हाथी हथिनियों तथा करि पोतकों के साथ क्रीड़ा किया करता था एवम् प्रकार उनको बहुत हजार वर्ष व्यतीत हुये। हे भूमे। शाप के मोह से मोहित होकर वन में रहता हुआ वह हाथी कदाचित करेणुगुण से युक्त हो स्नान करने के लिये त्रिवेणी के समीप आय पहुंचा और उस नदी में अवगाहन करके अपनी सूंड़ में पानी भर भर कर अपने कुटुम्बी हाथि हथिनियों को भी स्नान कराने लगा ॥१४२॥१४३॥१४४॥१४५॥ तथा स्वयम् भी स्नान करने पानी पीने लगा एवम् प्रकार क्रीड़ा करने पर पूर्व वैर का स्मरण कर ग्राह ने उस हाथी का पैर मजबूती से अपने दांतों से पकड़ा।४६॥४७॥ हाथी ग्राह को कुचलने लगा और ग्राह हाथी को घसीटने लगा इस प्रकार अनेक वर्ष तक उनका आपस में युद्ध हुआ। दन्त प्रहारों से उनके आपस में अनेक वर्ष तक युद्ध करने पर अनेक जन्तु पीड़ित होकर नष्ट हो गये तदनन्तर जलेश्वर राजा वरुण ने भगवान से कहा– जलेश्वर से समाचार पाकर भक्त वत्सल भगवान् हरि ने सुदर्शन चक्र लेकर ग्राह का मुख काट गिराया।४८॥४६॥५०॥५१॥ तथा बार बार चक्र के प्रहार से वहां की शिला चक्र लाञ्छित हुयीं उस मेरे प्रधान क्षेत्र में वज्रकीट से जानने योग्य सारी शिला चक्र की चिह्न वाली हुई वह चारों ओर देखिये। हे सुन्दरि ! त्रिवेणी के प्रति सन्देह न कीजिये। इस प्रकार त्रिवेणी की महिमा वर्णन करदी है। ५२॥५३॥५४॥ जब राजा भरत ने

पुलस्त्य के आश्रम में रहकर विष्णु की परिचर्या कर त्रिजलेश की पूजा करी है उसी दिन से उसकी भरत मे मत्यच्च आरति है पुनः मृग देह के बाद वह जड़ भरत हुआ है ॥१५५' १५६॥ उसी से पूजित होने पर वह त्रिजलेश्वर कहा गया है जिस त्रिजलेश्वर को भक्ति पूर्वक पूजने से कि शीघ्र योग सिद्धि प्राप्त होती है हे सुभगे ! जब मैं प्रधान शालग्राम क्षेत्र में स्थित था तब जलेश ने मुझे वहां जानकर मेरी स्तुति की है ॥१५७॥१५८॥ तदनन्तर भक्त के ऊपर कृपा के आवेश से मैंने सुदर्शन चक्र फेंका प्रथम जहां वह चक्र गिरा है वहीं वह तीर्थ हुआ उस तीर्थ में स्नान करने वाला तेजस्वी होकर सूर्य लोक में जाता है और यदि जो वहां पर प्राणों को त्यागता है वह सीधा मेरे लोक को जाता है ॥१५९॥१६०। भक्त संरक्षण के लिये मैंने सुदर्शन को आज्ञा दी है जहाँ जहाँ वह सुदर्शन घूमता है वहां की शिला चक्र से अङ्कित होती हैं एवम प्रकार भ्रमाक्षिप्त वह सब चक्रमय हुआ तदनन्तर वह पञ्चरस्त्र विधि पूर्वक रहकर आगे से गोधन करके हरिक्षेत्र में गया हरि से अधिष्ठित क्षेत्र पूजनीय तभी कहा है, जब गोधनादि लेकर शूलपाणि नन्दी यहां स्थित हुआ तभी से यह हरि हर क्षेत्र प्रसिद्ध हुआ है ॥१६१॥१६२॥॥१६३ १६४॥ देवताओं के घूमने से देवाट कहा गया है उस देव की महिमा कौन वर्णन कर सकता है वह देवेश शूलपाणि भक्तों को अभय प्रदान करने वाला है उस अचिन्त्य शक्ति वाले की मुनि देव गन्धर्व सेवा करते हैं ॥१६५॥१६६॥ उस स्थान में साक्षात् शिव महादेव नन्दि स्वरूप से सालंकायन मुनि के पुत्रत्व को प्राप्त हुये हैं और स्वयं योगसिद्धि विधायक महायोगी त्रिधारक तीर्थ में परम पीठ में स्थित हुये हैं ॥१६७॥१६८॥ तीन जटाओं से तीन धारा निकली हैं और ये गंगा यमुना तथा सरस्वती नाम से विख्यात हुयी हैं यह त्रैधारिक तीर्थ जटा से निकला है जहां साक्षात् योगीश्वर महेश्वर स्थित है

१६६॥ १७०॥ हरिशीलन तत्पर हो शालग्रामाभिध क्षेत्र में स्व भक्तों को ज्ञान सिखाता रहता हैं जिस ज्ञान से कि नर संसार से मुक्त होता है ।।१७१।। जो मनुष्य त्रिधार तीर्थ में स्नान करके पितरों को तर्पण देता है तथा महायोगी की पूजा करता है वह पुनः जन्म ग्रहण नहीं करता है ।।१७२।। उसी के पूर्व दिशा में हंस तीर्थ कहा जाता है वहां का एक कौतुक सुनिये ॥१७३॥ कदाचित् शिव रात्रि के पूजा महोत्सव में भक्तों ने नैवेद्यों से महा योगी की पूजा करी वहां अन्न में भूखे कौये उड़कर गिरे और अन्न ग्रहण कर वापिस चले गये अब एक कौये से अन्न ग्रहण करने की इच्छा से दूसरा कौवा लड़ने लगा वे दोनों काक आकाश में लड़ते लड़ते उस कुण्ड में गिर पड़े और उस कुण्ड में गिरने से वे दोनों काक चन्द्रकान्ति वाले हंस होकर उड़ गये हे सत्तमे ! वहां के इकट्ठा हुये लोगों ने यह आश्चर्य देख कर उस तीर्थ का नाम हंस तीर्थ रखा तभी से वह हंस तीर्थ कहा जाता है पहिले यक्ष से रचे तीर्थ को यक्ष तीर्थ कहते हैं वहाँ स्नान करने से मनुष्य शुद्ध होकर यक्ष लोक में जाता है और यदि जो नर वहाँ अपने प्राण त्याग करता है वह यक्ष लोक का अति क्रमण करके मेरे विष्णु लोक में जाता है ॥१७४॥१७५॥१७६॥१७७॥ १७८॥ १७६॥१८०॥ महायोगी के प्रभाव से उस तीर्थ का ऐसा प्रभाव है मैं और शिव लोक भलाई में लगे रहते हैं हे वसुन्धरे ! यह गुप्त क्षेत्र तुझे सुना दिया है यह क्षेत्र मुक्ति क्षेत्र बारह योजन पर है शालग्राम स्वरूप से मैं स्वयं वहां रहता हूं विशेष कर अपने भक्तों को आनन्द देता रहता हूँ हे धरणि ! यह गुप्त से गुप्त क्षेत्र तुझे सुनादिया है और क्या सुनना चाहती है ॥१८१॥ १८२॥ १८३॥ १८४॥ इति श्री वराह पुराणे भगवच्छास्त्रे सोमेश्वरादि लिंग हरि हर मुक्ति क्षेत्र त्रिवेण्यादि महिमा निरूपणं

नाम काशीराम शर्मा कृत भाषाटीकायां चतुश्चत्वारिंशदधिक शततमोऽध्यायः । १४४॥

अथ एक सौ पैंतालीसवां अध्याय-:

दोहा—शालग्राम क्षेत्र का अब माहात्म्य बखान ।
विविध भांति वर्णन करें श्रीवराह भगवान् ॥

अथः शालग्राम क्षेत्र माहात्म्यम्–धरणी ने कहा–हे भगवन् ! हे देव देवेश ! मुक्ति देने वाले आपके क्षेत्र में रहकर तप करते हुये सालंकायन मुनिने क्या किया है ॥१॥ श्री वराह ने कहा–उस ऋषि ने दीर्घ काल तक तप करके एक उत्तम साल देखा ॥२॥ वह साल अभिन्न उत्तम घनी छाया वाला था और विशाल था फूलों से झकाझोर खिला हुआ था उसके फूलों की गन्ध अति मनोहर थी जोकि देवता -ों को भी दुर्लभ मालुम होती थी ॥३॥ सालंकायन ऋषि ज्ञान से परिश्रान्त हो पुनः उस अद्भुत सालवृक्ष को देखने लगा ॥४। उस महासाल को देख उस मुनि को थकावट मालुम हुयी और मेरे दर्शन की अभिलाषा से वह मुनि वहां पर विश्राम करने लगा ॥५। वह मुनि सालवृक्ष के पूर्व की ओर से साल वृक्ष के तरफ पीठ करके बैठ गया वह मूढ़ात्मा मेरी माया से मोहित होकर मुझे न देख सका ।६॥ हे सुन्दरि ! तदनन्तर वैशाख शुक्ल द्वादशी दिन उस मुनि ने साल के पूर्व तरफ से मेरा दर्शन किया ।७॥ प्रसंशित व्रत वाले मुनि मेरा दर्शन पाकर बार बार प्रणाम करके वैदिक सूक्तों से मेरी स्तुति करने लगा ॥८॥ मेरे तेज से आंख चुंधिया गयी तो जभी आंख मीच कर वह मुनि स्तुति करता हुआ मुझे देखता है तभी उस मुनि ने मुझे वृक्ष के दक्षिण ओर देखा और वह भी पूर्व स्थान छोड़ कर मेरे सामने स्थित होकर मुझे प्रिय लगने वाली ऋग्वेद की ऋचाओं से मेरी स्तुति करने लगा ऋचा तथा स्तोत्रों से स्तूयमान तथा सम्पूज्यमान होने पर मैं पश्चिम दिशा में चला

गया। हे माधवि ! तब वह भी पश्चिम दिशा में आपहुँचा और यजुर्वेद के मन्त्रों से मेरी स्तुति करने लगा हे देवि ! एवम् प्रकार उसके स्तुति करने पर मैं उत्तर दिशा में पहुंचा ॥६॥१०॥११ १२॥१३। वह मुनि वहीं आयकर सामवेद के मन्त्रों से मेरी स्तुति करने लगा हे सुन्दरि ! तदनन्तर उसके स्तुति करने पर मैं परम प्रसन्नता को प्राप्त होकर उस ऋषि से कहने लगा कि हे ब्रह्मन् ! सालंकायन मैं आपकी तपस्या से तथा स्तुति से प्रसन्न होगया हूं आप तपस्या से संसिद्ध होगये हो आपका कल्याण हो वरदान की याचना कीजिये ॥१४॥१५।१६॥१७। मेरे इस प्रकार कहने पर सालंकायम मुनि साल वृक्ष का आश्रय ले निभृत अन्तरात्मा से मुझसे कहने लगा कि हे हरे ! आपकी आराधना के लिये ही मैंने तप किया है हे महाप्रभो ! मैंने वन पर्वत सहित सारी पृथ्वी घूम दी हैं परन्तु अब इस समय आपका दर्शन प्राप्त किया है ॥१७॥१८।१६॥ हे देवि ! यदि सर्व शान्ति करने वाले पर पुरुष आप मेरे ऊपर प्रसन्न हैं और यदि तप से आपकी आराधना करने पर आप मुझे वरदान देना चाहते हो तो हे जगन्नाथ ! मुझे ईश्वर समान पुत्र दीजिये हे मधुसूदन ! मुझे यही वरदान दीजिये दीर्घकाल तप करके पुत्र की इच्छा वाले भीमकर्मा मुनिने इस प्रकार का वरदान मुझसे मांगा है उसके वचन सुनकर मैं मधुर वाणी से उस ऋषि से कहने लगा ॥२०॥ २१।२२।२३॥ हे मुने ! चिरकाल तक व्रत तप करते हुये जो आपने अपने मनमें ठाना है वह होगया है आप तप से सिद्ध होगये हो हे मुनीश्वर ? ईश्वर की प्रधान मूर्ति नन्दि-केशव नाम से विख्यात है वह आपके दाहिने अंग से आपका पुत्र रूप होगया है हे महामुने ! शान्ति प्राप्त कीजिये हे ब्रह्मन् ! अब तप करने से बस हो जाइये और इसके हुये सात सात कल्प हो गये हैं हे विप्रर्षे ! आप नहीं जानते हैं।

वह नन्दिकेश्वर हो चुका है और मेरे माया बल से युक्त हो वह मेरे द्वारा गोव्रज में स्थित है ॥२४।२५॥२६।२७॥ वह शूल पाणि मथुरा से आपके आमुष्यायण नामक शिष्य को लाकर स्थित है ॥२८॥ हे तप के निधि उस आश्रम में निवास करके पुत्र से परम प्रसन्न होकर मेरे क्षेत्र में मेरे समान होजा ।२९॥ हे सालङ्कायन ! आपको और भी सुनाता हूं वह सुनिये। आपकी प्रीति से आपको यह उत्तम गुप्त क्षेत्र सुनाता हूं ॥३०॥ हे मुने ! शालग्राम नाम क्षेत्र प्रसिद्ध हैं उसे जानिये कि जो वृक्ष आपने देखा है वह निःसन्देह मैं ही हूं । इस बात को महादेव के सिवाय और कोई नहीं जानता है मैं माया के द्वारा छिपा हुआ हूं आपके प्रेम से आपको सुनाया है एवम् प्रकार सालङ्कायन मुनि को वरदान देकर मैं उसको देखते ही वहीं पर अन्तर्धान हुआ हूं और मुनि भी उस वृक्ष की परिक्रमा करके अपने आश्रम को गया ॥३१।३२॥३३॥१४॥ गिरि कूट शिलोच्य में मुझे वह शालग्राम क्षेत्र अति प्रिय लगता है वह क्षेत्र भक्त संसार मोक्षण हैं हे भूमे ! वहाँ के गुप्त स्थान मुझसे सुनिये। जिनसे कि मनुष्य घोर संसार सागर से पार हो जाते हैं हे वसुन्धरे ! वहां दस पन्द्रह गुप्त स्थान हैं जिनसे कि मनुष्य तर जाते हैं उनको आज तक भी कोई नहीं जानता है वहाँ एक मेरा अति प्यारा विल्वप्रभ नाम क्षेत्र है और वहां क्रोशमात्र में चार कुञ्ज हैं। ३५॥३६ ३७॥३८॥ वह क्षेत्र अति मनोहर तथा भक्त कर्म सुखावह है वहां पर जो मनुष्य अहोरात्र निवास करके स्नान करता है वह चार अश्वमेधों के फल को प्राप्त करता है और यहाँ मेरे कर्म परायण होकर प्राणों को छोड़ता है वह अश्वमेध यज्ञ के फल को भोगकर मेरे लोक में जाता है। उस क्षेत्र में मेरा प्रधान चक्रस्वामी नाम से विख्यात तीर्थ है वहाँ इधर उधर चक्र से चिह्नित शिलायें दीख पड़ती हैं हे वसुन्धरे ! जहां चक्राङ्कित शिला है वह स्थान तीन योजन है वहां तीन

रात्रि निवास करके स्नान करना चाहिये ॥३६।४०॥४१॥४२॥ ॥४३ स्नान करने से मनुष्य तीन यज्ञों का फल प्राप्त करता है और जो नर मेरे कर्मपरायण होकर वहां पर प्राण त्याग करता है वह वाजपेय यज्ञ फल भोगकर मेरे विष्णु लोक को जाता है अब वहीं मेरा अति गुप्त विष्णुपद नाम का क्षेत्र है वहां हेमकूट के आश्रित तीन धारा गिरती हैं वहां तीन रात्रि निवास करके मनुष्य स्नान करे तो तीनों रात्रियों की फल प्राप्ति मनुष्य समग्रता से करता है और जो नर मुक्तसंग हो निरालस्य होकर इस क्षेत्र में प्राण त्याग करता है वह अतिरात्र का फल प्राप्त करके मेरे लोक में जाता है वही कालीहर नाम का मेरा प्रधान क्षेत्र है ॥४४॥४५॥४६॥४७।४८॥ और यहीं वदरीवृक्ष से निकला ह्रदस्त्रोत है वहां पष्ठिकाल निवास कर जो मनुष्य स्नान करता है वह नरमेध यज्ञ के फल को प्राप्त करता है और जो यहां मुक्तराग होकर प्राण त्याग करता है वह मनुष्य नरमेध यज्ञफल को भोगकर विष्णु लोक को जाता है हे वसुन्धरे तुझे अन्य आश्चर्य भी सुनाता हूं ।४६॥५०॥५१॥ वहां शंखप्रभ नाम मेरा गुप्त स्थान है द्वादशी की अर्ध रात्रि में वहाँ शंख शब्द सुनाई देता है ॥५२॥ उस क्षेत्र में मेरा एक प्रसिद्ध गदाकुण्ड है जहां कि दक्षिण दिशा में स्त्रोत कम्पायमान होता है जो मनुष्य वहां तीन रात्रि उपवास कर स्नान करता है वह वेदान्त वेत्ताओं के फल को प्राप्त करता है और जो गुणान्वित कृतकृत्य मनुष्य वहाँ प्राणों का त्याग करता है वह गदापाणि महाकाय हो मेरे लोक को जाता है ॥५३॥५४॥५५। पुनः वहीं मेरा एक गुप्त अग्निप्रभ क्षेत्र है वहां पूर्वोत्तर समाश्रित एक धारा गिरती है चार रात्रि उपवास करके जो नर वहां स्नान करता है वह मनुष्य अग्निष्टोम का पंचगुना फल प्राप्त करता है और जो यहाँ प्राण त्याग करता है वह अग्निष्टोम यज्ञका फल भोग कर मेरे विष्णुलोक में जाता है ५६॥ ५७।५८ हे महाभागे! मुझसे कहे वहां का आश्चर्य सुनिये कि वह

तीर्थ हेमन्त ऋतु में गरम होता है और ग्रीष्म में शीतल होता है ॥५६॥ उस क्षेत्र में मेरा सर्वायुध नाम का क्षेत्र है वहां हिमालय से निकले सात स्रोत गिरते हैं ।६०॥ जो नर सात रात्रि निवास करके वहां स्नान करता है वह सर्वायुध कलायुक्त हो राजा होता है ६१॥ और मनुष्य मेरे कर्म परायण होकर वहां प्राण त्याग करता है वह राज्य भोगों को भोगकर मेरे विष्णु लोक को जाता है ॥६२॥ अब वहां एक मेरा देवप्रभ नाम का गुप्त क्षेत्र है उस क्षेत्र में पर्वत से पंचमुखा धारा गिरती है ६३ जो मनुष्य वहां पर अष्टकाल निवास कर स्नान करता है वह चारवेदों के पार को जाता है ॥६४॥ और जो नर लोभमोह रहित होकर यहां पर प्राणों को छोड़ता है वह वेद कर्म का त्याग कर मेरे लोक में जाता है ॥६५॥ पुनः वहां मेरा एक प्रधान विद्याधर नाम का क्षेत्र है इस क्षेत्र में हेमकूट से पाँच धारा गिरती हैं जो मनुष्य वहां एक रात्रि निवास कर स्नान करता है वह कृत्यकृत्य होकर विद्याधर लोक को जाता है ६६ ६७ और जो मनुष्य रागमोहादि छोड़कर अपने प्राणों का त्याग करता है वह विद्याधरों के भोगों को भोगकर मेरे विष्णुलोक को जाता है ६८॥ वहां एक पुण्यनदी नाम मेरा गुप्त क्षेत्र है और वह पुण्य नदी शिलाकुञ्ज लताओं से व्याप्त है गन्धर्व अप्सराओं से सेवित है जो मनुष्य आठरात्रि निवास कर वहाँ स्नान करता है वह स्वच्छन्द गमन हो सातों द्वीपों में घूमता है ६६॥७०॥ और जो मनुष्य मेरे कर्म परायण हो वहां पर प्राणत्याग करता है वह सप्तद्वीपों को छोड़ कर मेरे लोक को जाता है ॥७१॥ वहां पर एक प्रधान गन्धर्व नाम का मेरा प्रधान क्षेत्र है उस क्षेत्र में पश्चिम दिशा से एक धारा गिरती है ॥७२॥ जो मनुष्य चार रात्रि निवास कर वहां पर स्नान करता है वह स्वच्छन्द गमन होकर लोकपालों के साथ आनन्द करता है ७३॥ और जो मनुष्य मेरे कर्म परायण होकर वहां पर प्राण त्याग करता है वह लोकपालों को छोड़कर मेरे विष्णुलोक को जाता है ७४॥ हे

वसुन्धरे ! वहां देवह्द नाम का मेरा एक विख्यात क्षेत्र है हे भूमे ! जहां कि बलिराजा के यज्ञ विध्वंस करने से तू मेरी कान्ता थी वह तालाब मनोहर सुखशीतल तथा श्रेष्ठ वर देने वाला है ७५।।७६ उस नियमादक परिमित जल वाले मेरे तालाब में चकवे विहित मछलियां इधरउधर घूमती हैं ७७।। वहां जो महाश्चर्य है वह सुनिये ७८।। वहां के महाश्चर्यों को श्रद्धालु पुरुष देखता है अश्रद्धालु पुरुष नहीं देखता है उस देवह्द में सूर्योदय के समय छत्तीस सुवर्ण कमल दिखाई देते हैं और मध्याह्न तक जन्तु उनको देखते हैं ।।७६ ८०।। वहां स्नान करने वाले मनुष्य वाणी तथा शरीर से किये पापों से शुद्ध होकर स्वर्ग जाते हैं वहां दशरात्रि निवास कर जो नर स्नान करता है वह दश अश्वमेधों के समग्रफल को प्राप्त करता है वह अश्वमेध के फल को भोगकर मेरी समानता को प्राप्त करता है एक अन्य प्रधान क्षेत्र तुझे सुनाता हूं देवनदियों का संभेद अन्तर समस्त सुख वल्लभ है जहां कि प्रियाओं के सहित देवता स्वर्ग से उतर कर ठहरते हैं ।।८१।।८२।।८३।।८४ गन्धर्व अप्सरा सर्पों के सहित नागकन्या देव ऋषि मुनि समस्त सुर नायक तथा सिद्ध किन्नर आदि स्वर्ग से उतर कर वहां निवास करते हैं समस्त सुख वल्लभ नेपाल में जो शिव स्थान हैं उन उन स्थानों से तीर्थों से विशेषकर महादेव जटाजूट से शिवालय है ।।८५। ८६।८७।। जो श्वेतगंगा कही है उससे नानानदी निकल कर दृश्यादृश्यता से स्थित हैं गण्डकी से कृष्णा से जोकि कृष्ण के शरीर से निकली है उससे शिवशरीर से उत्पन्न हुयी जो है वह संभेद को प्राप्त हुयी है त्रिशूल गंगा जो कही है वह भी वहाँ महानदी कही है सर्व तीर्थ कदम्बक नदी समुद्र द परम पावन मेरे क्षेत्र में कहा है हे वसुन्धरे ! आप जानिये कि वह देवताओं को भी दुर्लभ है ।।८८।।८६।।६०।।६१।। जो पुण्य वर्द्धन सिद्धाश्रम विख्यात है वहां शम्भु का तपोवन है कदली षण्ड से मण्डित रहता है निचुल, पुन्नाग, तथा केशर से

शोभायमान रहता है खजूर, अशोक, वकुल, आम्र, प्रियालक, नारिकेल, सुपारी, चम्पक, जामुन, नारंग, बेर, जम्भीर, मातुलुंगक कीतकी, मल्लिका जाती, यूथिका आदि वृक्ष पंक्तियों से वह तपोवन सुशोभित है और कुन्दकुरवक, नाग, कुटज, दाडिम आदि से मनोहर हैं वहां देव मिथुन आ आकर क्रीड़ा किया करते हैं। ॥६२॥६३॥६४॥६५॥६६॥ उस पुण्य नदी के संगम में महा पुण्य ह्रद में स्नान करने से मनुष्य सौ अश्वमेधों के फल को प्राप्त करता है और वैसाख महीने में वहाँ स्नान करने से सहस्र गौ दान का फल होता है पुनः माघ मास में स्नान करने से प्रयाग स्नान का फल मिलता है तुला के सूर्य कार्तिक मास में जो स्नान करता है वह निःसन्देह मुक्ति भागी होता है जो तीन रात्रि निवास कर नियत भोजन करके रहता है वह राजसूय फल को प्राप्त करके देव समान स्वर्ग में आनन्द करता है ॥६७॥ ॥६८॥६६॥१००॥ यज्ञ, तप, दान अथवा श्राद्ध इष्ट पूजन यहां जो कुछ भी कर्म किया जाय वह अनन्त फल देने वाला होता है ॥१०१॥ हे भूमे! मैं उसके सारे अपराध क्षमा करता हूँ जिस प्रकार गंगा यमुना का संगम मनुष्यों को दुर्लभ है उसी प्रकार देव नदी का संगम भी दुर्लभ कहा है। हे वसुन्धरे! यह परम गुप्त नदी मेरे क्षेत्र में है ॥१०२॥ हे धरे! मैं इस महा क्षेत्र में पूर्व मुख होकर स्थित हूँ हे भूमे! शालग्राम महाक्षेत्र में मैं सर्व भक्तों को प्रिय करता रहता हूं॥१०४॥ हे धरे! मैं तुझे और सुनाता हूँ वह सुनिये परम गुह्य श्रेष्ठ अन्तर्गुह्य कहता हूं जिसको कि मोहित होकर मनुष्य नहीं जानते हैं लोकों का प्रवर सर्व लोक श्रेष्ठ शिव विगतज्वर होकर मेरे दक्षिण स्थान में रहता है ॥१०५॥१०६ उसको जो जानता है वह मुझे ही जानता है और हे देवेशि! जो मुझे जानता है वह परम शिव को जानता है।१०७॥ हे वसुन्धरे! जहाँ मैं रहता हूँ वहां शिव रहता है और जहां शिव रहता है वहाँ मैं रहता हूँ इसमें कुछ भी

अन्तर नहीं है ॥१०८ हे भूमे! जो शिव को प्रणाम करता है
ह मुझे प्रणाम करता है इस प्रकार जो तत्व से जानता है वह
मग्र सिद्धि को प्राप्त करता है ॥१०९। हे महाभागे! एवम्
कार हरिहरात्मक क्षेत्र है जो मेरे कर्म परायण हो यहां प्राण
याग करता है वह परम गति को प्राप्त करता है ॥११०। प्रथम
क्ति क्षेत्र तब रुरुखरड और तदनन्तर देव नदियों का संभेद
नः त्रिवेणी है ॥१११। गन्डकी संगम प्रधान क्षेत्र प्रमाण
ानना चाहिये एवं प्रकार नदियों में उत्तम गन्डकी नदी है।
१२॥ जहां पर वह गंगा भागीरथी से संगत हुई है वह स्थान
हा फल दायक है अपर वह महा क्षेत्र हरिहर क्षेत्र कहा गया
॥१३॥ प्रथम वह गन्डकी नदी से संगत हुई है उस क्षेत्र की
हिमा देवता भी नहीं जानते हैं ॥१४॥ हे भद्रे! यह शाल-
म तथा गण्डकी का माहात्म्य तुझे सुना दिया है जो कि सर्व
पों का नाश करने वाला है ॥११५॥ जो तूने पहिले मुझसे
ा था वह सब भक्तों को प्रिय लगने वाला आख्यानों में
ाख्यान कान्तियों में परम कान्ति तुझे सुना दिया है ॥१६॥
पुन्यों का परम पुन्य तप है गुप्त में परम गुप्त है गतियों
परम गति है ॥११७॥ लाभों का महा लाभ है इससे बड़ा
ई नहीं है यह रहस्य पिशुन को शठ को गुरु द्रोही को न सुनाना
हिये ॥११८॥ जो पापी हैं कृतघ्न हैं द्विज देवों का अपराध
ने वाले हैं कुशिष्य हैं शास्त्र दूषक हैं उनको यह नहीं
ाना चाहिये ॥११९॥ तथा जो सेवा करना नहीं जानते उन
ों को नहीं सुनाना चाहिये। धीर शुभ बुद्धि वाले शिष्य
सुनाना चाहिये ॥१२०॥ लोभ मोह से मदादि से रहित
पुन्य बुद्धि वाले हैं इनको सुनाना चाहिये जो मनुष्य नित्य
ःकाल उठकर इसे पढ़ता है वह इक्कीस कुल का उद्धार कर पार
देता है और वह मरण समय मोह को नहीं प्राप्त करता है
२१॥१२२॥ परम सिद्धि को चाहे वह इस कर्म को कर मेरे लोक

जाता है हे महादेवि ! शालग्राम का माहात्म्य तुझे सुना दिया है और क्या सुनना चाहती है ॥२३॥२४॥ इति श्री वाराह पुराणे शालग्राम माहात्म्यम् नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् पञ्च चत्वारिंशदधिक शततमोऽध्याय ॥१४५॥

॥ अथः एक सौ छियालीसवांऽध्याय ॥

दोहाः— इक सौ छियालीस कहूं, रुरु क्षेत्र भगवान् ।
हृषीकेश माहात्म्यम् फल, भली प्रकार बखान ॥

अथ रुरु क्षेत्रस्थ हृषीकेश माहात्म्यम्— सूत ने कहा- शालग्राम का परम महौजस माहात्म्य सुनकर परम विस्मय को प्राप्त होकर पृथ्वी हृष्ट वचन बोलने लगी ॥१॥ पृथ्वी ने कहा- हे हरे ! जो आपने क्षेत्र का माहात्म्य सुनाया है उसे सुनकर मैं विगतज्वरा हो गई हूं ।२॥ हे जनार्दन ! जो आपने परम श्रेष्ठ रुरु खण्ड कहा है वह रुरु नाम कौन था किस प्रकार था जिसके नाम से कि हे हृषीकेश ! वह स्थान आपको प्रिय हुआ है। हे भगवन यदि आपकी मेरे ऊपर कृपा है तो वह सुनाइये ॥३॥४॥ श्री वाराह ने कहा- पहिले भृगुवंश में पैदा हुआ वेद वेदाङ्ग को जानने वाला एक देवदत्त नाम का ब्राह्मण था ॥५॥ वह यज्ञ विद्या निपुण था व्रत निष्ठ था अतिथियों का प्रिय था वहां उसका पुण्यद्रुमलतादि युक्त आश्रम था वह आश्रम शान्तमृग गणों से आकीर्ण कन्द मूल फलों से युक्त था वहां उस मुनीश्वर देवदत्त ने अयुत वर्षों तक तीव्र तप किया तब इन्द्र चिन्ता करने लगा और मन्त्रियों सहित गन्धर्व तथा वसन्त सहित गन्धर्वों को इच्छानुसार बुलाकर क्षुब्धेन्द्रिय मन होकर इन्द्र मधुर वाक्य बोलने लगा हे मित्रो ! मेरा कोई बड़ा कार्य उपस्थित हो गया है मुझ चिंता से व्याकुल हुये की आप ही प्रधान गति हो जिस प्रकार आप लोगों के प्रसाद से मैं स्वस्थ्य तथा निर्भय हो जाऊं वह सोचिये तथा वह कार्य कीजिये ॥६॥७॥८। ६॥१०॥ इस प्रकार इन्द्र का वचन सुनकर वे कामगण मलयानिलादि देवराज इन्द्र से

कहने लगे कि महाराज! अपना प्रिय कार्य हमें सुनाइये। किस जितेन्द्रिय के मन को भी संक्षुब्ध करें किसके तीव्र तप को भ्रष्ट करें आपकी आज्ञा की देर है शीघ्र कहिये और सुखी हो जाइये उनके ऐसा कहने पर इन्द्र अपनी शतमन्युता को रोक सम्मान पूर्वक कहने लगा॥ ११॥१२॥१३॥ मेरी चिंता आपके दर्शन मात्र से ही चली गई है मेरा समग्र कार्य सिद्ध हो गया है ॥१४॥ महाराम्य हिमालय पर्वत पर हृषीकेश भगवान के आश्रित देवदत्त मुनि घोर तप कर रहा है ।१५। वह निश्चय से मेरे पद को चाहता है अतः उसे शीघ्र तप से हटाइये इन्द्र की आज्ञा को स्वीकार कर कामदेव के सहित सब कामदेव के गण जाने को उद्यत हुये। आगे से वसन्त को भेजा फिर मलयानिल भेजा और तब इन्द्र ने प्रम्लोचा नाम वाली अप्सरा से प्रेम पूर्वक कहा कि जाइये उस मुनि की विजय के लिये शीघ्र पृथ्वी में जाइये जहां कि उस मुनि का आश्रम है अपने ललित विलासों से मुनि को मोहित कर वश में कीजिये। जिस प्रकार कि आप सर्वदा मेरी प्रीति करने वाली हो उसी प्रकार उस मुनि को हृषीकेश के समीप स्थल से जाकर हटा दीजिये। इस प्रकार इन्द्र की आज्ञा ग्रहण करके वह प्रम्लोचा नाम की अप्सरा उस मुनि के समीप जाने को तत्पर हो गई। ॥१६॥ ।१७॥१८॥१९ २०॥२१॥ उस मुनि आश्रम के समीप के उपवन में वह वरारोहा उतर गई वह उपवन नाना द्रुम लताओं से व्याप्त था कोकिलाओं के स्वरालाय से मनोहर था ॥२२॥ आम की बौर के रस को चूसने के लिये आम्र मञ्जरियों पर बैठे हुये भौंरों से गुन्जायमान उपवन था। गुंजार करते हुये मत्त भँवरों के सन्नाद से वह उपवन श्रुतिधरों से युक्त मालूम होता था उस उपवन में शीतल मलयानिल के साथ गन्धवों [illegible] मिला हुआ था, सुनिर्मल जलाशयों में कमल [illegible] ।२३॥२४॥ मुनि के प्रभाव से वहाँ वालों ने [illegible] अथवा मुनि प्रभाव से त्याग दिया है कौर्यस्थान [illegible]

उपवन में मधुर गन्ध से मधुर उपवन में चित्त क्षुभित करने वाले उपवन में उस वरारोहा प्रम्लोचा अप्सराने प्रवेश किया और मधुर गीत गाने लगी जभी वह मुनि ध्यान से चिरकाल की समाधि से विराम को प्राप्त हुआ तभी वे गन्धर्वादिगण गन्धर्व विद्या से गान करने लगे और उसी समय पंचसायक काम देव ने मौका पाकर पुष्प धनुप की प्रत्यञ्चा खींच कर होने वाले देवबल से किये उस शान्त मुनि को लक्ष्य करके वाण चलाने लगा वह संशितव्रत मुनि पंचमस्वर वाले मधुर गीत को सुनकर क्षुब्धचित्त वाला हुआ ॥२५ ।२६॥२७॥२८ ।२९॥ और कामदेव ने निरालस्य हो बार बार धनुप प्रत्यञ्चा खींच कर मुनि को क्षुब्ध किया देवव्रत भी वह मुनि नियतात्मा होता हुआ भी क्षुब्ध होगया और सन्तुष्ट मन वाला आश्रम पद को घूमता हुआ देखने लगा तो कन्दुक से खेल करती प्रम्लोचा अप्सरा को देखा और उस श्रेष्ठ अंग वाली को देखते ही कामदेव ने उसे वाण से भेदन किया वह मुनि स्मयमान होकर उसके समीप गया ।३०॥३१॥३२॥ उस मृगनयनी पिक वयनी ने भी देवदत्त मुनि को देखकर आसक्त होने लगी सहसा कटाक्ष मारने लगी शर्मिन्दी हो अपने अंग को छिपाने लगी वह चञ्चल नेत्रों वाली कोमल कर कमलों से गेंद को ताड़ित कर उछालने लगी बिखरे बालों से तथा गिरते हुये कबरी के फूलों से शोभायमान वह अप्सरा अपने ललित विभ्रमों से उस ऋषि के मन को हरने लगी तभी दक्षिण पवन ने उस अप्सरा का सूक्ष्म वस्त्र हर लिया तथा काञ्चीदामगुण से विभूषित उसकी लज्जा खुल गयी कामदेव ने भी समय पाकर उसी समय वाण मारा और वह मुनि मोहित होकर अप्सरा के समीप जाकर कहने लगा कि हे सुभगे ! तू कौन है और किसकी है तथा इस वनमें क्या चाहती है ।।३३॥३४॥३५॥३६॥३७। क्या बाहुरूपी फाँसी से मुझ सरीखों को ढूँढ़कर बांधकर ग्रहण करना चाहती हो ॥३८॥ मैं सर्वथा आपके आधीन हूं आप जो

शिव दर्शन की लालसा से घोर तप करने लगा तदनन्तर बहुत समय में महादेव प्रसन्न हुआ ॥५३॥ ऊपर नीचे तिरछी जलधाराओं से युक्त जोकि उसके ताप शान्त करने वाली थी लिंगरूपधर प्रसन्नात्मा महादेव ने कहा हे मुने ! मुझ शिव को देखिये और मुझको ही विष्णु जानिये हम में कोई भी अन्तर नहीं जानना चाहिये ॥५४॥५५॥ पहिले तूने विष्णु के भेद भाव से मेरा दर्शन किया है उसी से तेरे तप में विघ्न हुआ है और तप नष्ट हुआ है ॥५६॥ हमें एक भाव से देखने पर तू परम सिद्धि को प्राप्त करेगा। जहां तप के प्रभाव से लिंग प्रादुर्भूत हुये हैं यह स्थान संगम नाम से विख्यात होगा गण्डकी तीर्थ में स्नान करके जो मनुष्य मेरे लिंगों की पूजा करे उसका योग सम्यक फलीभूत होजाता है इस प्रकार वरदान देकर महादेव वहीं पर अन्तर ध्यान होगये और वह मुनि देवदत्त भी उत्तम ज्ञान प्राप्त करके शिव से शिक्षित मार्ग के द्वारा परम सायुज्य को प्राप्त हुआ हैं ॥५७॥५८॥ ५९॥६०॥ प्रम्लोचा अप्सरा ने आश्रम के समीप रह मुनि के गर्भ को धारण कर पैदा हुयी कन्या को वहीं छोड़ अपने आप स्वर्ग प्रयाण किया ॥६१॥ उस शुचिस्मिता अप्सराने अपने को पुनः पैदा हुयी के समान समझा और उस कन्या की उस उपवन में रुरु सम्बन्धी मृगों ने रक्षा की है अतः रुरु नाम से विख्यात होकर वह कन्या अपने पिता के आश्रम में ही निवास करने लगी। युवाओं के प्रार्थना करने पर भी उस रुरु कन्या ने किसी पुरुष से प्रेम तथा विवाह न किया ॥६२॥६३॥ तदनन्तर सुनिश्चय करके वह रुरु नामू की कन्या तपस्या की इच्छा करके रमापति जगन्नाथ भगवान् का चिन्तन करने लगी ।६४॥ वह बाला प्रथम मास में फलाहार करके भगवान् का भजन करने लगी दूसरे महीने में तीन दिन में फलाहार खाकर भजन करती तीसरे महीने में पांचवें दिन फलाहार खाकर चौथे महीने सातवें दिन फलाहार खाकर पांचवें महीने नौवें दिन में फलाहार खाकर छटे सातवें महीने में पन्द्रह दिन में फलाहार खाकर आठवें महीने में बिखरे हुये पत्ते खाकर

भगवान् का भजन करने लगी पुनः वाय्वाहार रह तप करने लगी एवम् प्रकार साल भर तक तप करती रात दिन एकाग्र मन की समाधि से स्थाणु के समान निश्चल होगयी ॥६५ ६६॥६७॥६८। और आत्मभूतान्तर बिना द्वन्द भेद को नहीं जानती थी पराकाष्ठाको प्राप्त हो प्रकाश मय कान्ति को धारण करने लगी हे वसुन्धरे ! उसके तेज से सारा जगत् व्याप्त देख में विस्मय को प्राप्त होकर उसके दृष्टि पथ में अवतीर्ण हुआ ॥६९॥७०॥ वह सब इन्द्रयों को जीतकर अपने हृदय कमल में ही मेरा दर्शन कर रही थी उसने वहिस्थित मुझको नहीं देखा तब में उसकी इन्द्रयों में प्रवेश कर उसके हृदय कमल से अपनी मूर्ति हटाकर बाहर ही स्थित हुआ हूं हे देवि ! पुनः उसने मेरा प्रत्यक्ष दर्शन किया हृषीकों को रोक कर जोकि में प्रत्यक्षता को प्राप्त हुआ हूं अतः उसी दिन से हृषीकेश नाम से विख्यात होकर वहीं स्थित हुआ हूं जब उसने मुझे हृदय कमल में नहीं देखा तब आँख खोलकर मुझे वहिःस्थित देख हाथ जोड़कर प्रणाम करने लगी गद्‌गद् स्वर वाली आंसुओं से तरातर नेत्र वाली रोमाञ्चित शरीर वाली तथा कदम्ब मुकुल सदृश आकृति वाली उस अगना को देख कर मैंने कहाकि अयि बाले ! अयि विशालाक्षि ! मैं तेरी तपस्या से प्रसन्न होगया हूं जो तेरे मनमें है वह मुझसे वरदान मांग ॥७१ ।७२॥७३ ७४॥७५॥७६॥ औरों को जो दुर्लभ है वह अदेय वरदान भी मैं तुझे देता हूँ एवम् प्रकार प्रभु का वचन सुनकर बार बार प्रणाम कर देव देवेश भगवान् की स्तुति कर हाथ जोड़कर कहने लगी कि हे देवदेव ! हे जगत्पते ! यदि आप मुझे वरदान देना चाहते हो तो आप इसी स्वरूप से यहां स्थित हो जाइये भगवान् ने कहा मैं यहीं स्थित हूँ तेरा कल्याण हो किसी दूसरे वरदान की याचना कर तूने मुझे तप से प्रसन्न किया है अतः

यदि आप मेरे ऊपर प्रसन्न हैं तो मुझे पवित्र कीजिये मेरे नाम से ही यह क्षेत्र प्रसिद्ध होवे अन्यथा नहीं। हे देवि ! पुनः मैंने उस रुरु से कहा कि यह तेरा देह तीर्थों का परम तीर्थ होवे और तेरे नाम से यह क्षेत्र विख्यात होगा जो मनुष्य इस तेरे तीर्थ में तीन रात्रि निवास कर स्नान करता है मेरा दर्शन करके निःसन्देह वह पवित्र जाता है। जानबूझ कर या विना जाने किये ब्रह्म हत्यादि पाप भी शीघ्र नष्ट हो जाते हैं इस प्रकार वरदान देकर मैं वहीं अन्तर्धान होकर स्थित हुआ हूँ ॥८१॥८२॥८३॥८४॥८५। वह रुरु भी समय पाकर तीर्थ रूप हुई है हे देवि ! तुझे यह उत्तम रुरु माहात्म्य सुना दिया है। यह मेरी रुरु क्षेत्र की उत्पत्ति परम गुप्त है ॥८६, ८७॥ इति श्री वाराह पुराणे भगच्छास्त्रे रुरु क्षेत्र हृषीकेशयो माहात्म्यम नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायम् षट् चत्वारिंशदधिक शततमोऽध्याय ॥१४६॥

अथः एक सौ सैंतालीसवाँ अध्याय

दोहाः— और्व ऋषि केहि शाप से, तप्त हर भगवान्।
हरि ढिग जा गो स्नान से, शाप मेट्यो महान ॥

अथ गोनिष्क्रमण माहात्म्यम्— धरणी ने कहा– यह अत्याश्चर्य जनक रुरु क्षेत्र माहात्म्य तथा हृषीकेश की महिमा जो आपने वर्णन की है वह सुन ली है ।१॥ हे देवेश ! मुझे बड़ा कौतूहल हो रहा है अब कोई अन्य परम पावन गुप्त क्षेत्र सुनाइये ॥२॥ श्री वाराह ने कहा – हे भूमे ! मेरे परम कारण को प्रयत्न से सुनिये। हिमालय के उच्च शिखर में एक अन्य गोनिष्क्रमण नाम का क्षेत्र है जहाँ कि गायों का प्रतारण किया है हे वसुन्धरे ! जिस प्रकार सुरभियों के निष्क्रमण को प्राप्त करके जहां पर कि और्व ऋषि ने सप्तति कल्प तक मेरी माया से मोहित होकर तप किया है उसके इस प्रकार तप करते बहुत समय व्यतीत होने पर सर्व लोक को संशय हुआ कि यह लाभालाभ युक्त होकर वरदान नहीं मांगता है वलिकर्मों में संयत होकर सूचक भी नहीं रहता है तब बहुत समय

में कोई उस औौर्व मुनि के उस शिलोच्चय में तप करने से ब्रह्म समान होने लगा ।३। ४॥५। ६॥७॥८॥ हे महाभागे ! विख्यात उस गो-निष्क्रम तीर्थ में उसके समीप ईश्वर भी गया वहां औौर्व समदर्शन होकर तप करता था। कमल फूल लाने के निमित्त औौर्व गंगा द्वार पर पहुंचा ॥६॥१०॥ उस औौर्व को आश्रम से बाहर गया जान सारे तपस्वी लोग तथा संभ्रम से महातेजा महेश्वर उस आश्रम में आ पहुंचा उस आश्रम में फल पुष्पों के होने से लक्ष्मी वेविद्यमान थी। फल फूलों से सुशोभित रूप सम्पन्न आश्रम को देख वह आश्रम महादेव तेज से भस्मीभूत हो गया । औौर्व के पुण्य दायक अति प्यारे आश्रम को जलाकर ईश्वर महादेव भी हिमालय चला गया हे देवि! तदनन्तर फूलों की वरराडी[8] लाकर औौर्व अपने आश्रम में आया। शान्त, दान्त क्षमाशील तथा सत्यव्रत परायण औौर्व फल फूलों से सुशोभित अपने आश्रम को भस्मीभूत देखकर अति क्रोध युक्त हो दुख भरी आंखों से डमाडोल होकर क्रोध से लाल हुई आंखों से जलाते हुये के समान कहने लगा कि जिसने मेरा आश्रम जलाया है वह भी दुख संतप्त होकर सब लोकों में घूमेगा एवं औौर्व के शाप देने पर ॥११॥१२॥१३॥१४॥१५॥१६॥१७॥१८॥ महाभय के कारण उसे किसी ने नहीं रोका। हे देवेशि! जगत का मालिक भी विभु महादेव उसी समय महा दाह से युक्त हो अति संतप्त होकर देवी पार्वती से कहने लगा कि हे शिवे! औौर्व के तप को देखकर देवताओं ने भी भयभीत होकर कहा कि औौर्व के तेज से सारा जगत जल रहा है और वह वरदान भी नहीं मांगता है कब ऐसा कौन उपाय है जिससे कि सारे जगत् का कल्याण होवे। ॥१६ २०॥२१॥ देवताओं से इस प्रकार कहने पर मैंने उसका आश्रम देखा और मेरी दृष्टि से उसका आश्रम क्षण भर में ही भस्मीभूत होगया तथा हम शीघ्र वहां से वापिस चले आये हैं। ॥२२॥ हे शिवे! उसी दुख से दुखित हो क्रोध से उसने शाप दिया है उसी शाप से हम पीड़ित हो रहे हैं। ॥२३॥ तदनन्तर

विरूपाक्ष भ्रमण करने लगा तथा कहीं भी कल्याण न देखने लगा औ
में ईश्वर की आत्मा होने के कारण दुख संतप्त हो रहा हूं ॥२४॥ उस
दाह से संतप्त होकर मैं कुछ नहीं कर सकता हूँ तब पार्वती ने क
कि हम नारयण के पास जाते हैं चलिये नारायण के वाक्य से जा
सुख होगा वहीं जावेंगे तदनन्तर महादेव सहित पार्वती नारायण
समीप जाकर कहने लगी कि उस और्व ऋषि की प्रार्थना करके क
कि रुद्र का शाप दूर कीजिये हे और्व ! हम सब शाप से संतप्त ह
रहे हैं अतः आप शाप को दूर कीजिये ॥२५॥२६ २७॥ और्व
कहा मेरा वचन कभी झूठ नहीं हो सकता है । सुरभी गायों व
बुलाकर इस मेरे आश्रम में जाकर सुरभी गण का स्नान करावो त
रुद्र का शाप मिट सकता है अन्यथा नहीं मिट सकता है हे वसुन्ध
उसी समय मैंने गायों का अवतरण किया सतहत्तर सुरभी गाय रुद्र
प्लावित देह हो परम निवृति को प्राप्त हुई हैं वही मेरा परम पाव
गो निष्क्रम नाम तीर्थ है जो मनुष्य उस तीर्थ में एक रात्रि उपवा
कर स्नान करता है वह गोलोक में जाकर आनन्द करता है औ
जो नर दुष्कर कर्म करके इस क्षेत्र में प्राण त्याग करता है वह शंख
चक्र गदाधारी होकर मेरे विष्णु लोक में जाता है यहाँ वटमूल के
मूल में पांच धारा गिरती हैं ॥२८॥२६॥३०॥३१॥३२॥३३॥ पांच
रात्रि निवास करके जो नर वट मूल में स्नान करता है वह मनुष्य
पञ्च यज्ञों के फल को प्राप्त करता है ॥३४॥ और जो सुदुष्कर कर्म
करके इस वटमूल स्थान में प्राण त्याग करता है वह नर पञ्च यज्ञों के
फल को भोगकर मेरे लोक में जाता है ॥३५॥ उसी क्षेत्र में एक
पञ्चपद नाम तीर्थ है मुझसे पूर्व की ओर वहां पांच शिला हैं
॥३६॥ तथा मुझसे पूर्व दिशा में वहां ब्रह्मा के दो स्थान हैं "उस
कुण्ड के मध्य में विस्तीर्ण शिला है । ॥३७॥ वहां ऊर्द्धनाल परी
णाह मेरा विष्णु पद स्थान है जो मनुष्य पांच रात्रि निवास
कर वहां स्नान करता है वह भक्त प्रिय नर शुद्ध लोक को
प्राप्त करता है । और जो नर इस पञ्चपद तीर्थ में प्राण त्याग

करता है वह सर्व संसार से मुक्त होकर मेरे लोक को जाता है तदनन्तर ब्रह्मपद नाम मेरा प्रधान क्षेत्र है। ॥३८॥३६॥४०॥ वहां पश्चिम दिशा की ओर एक धारा गिरती है एक रात्रि निवास करके जो वहां स्नान करता है वह ब्रह्म लोक प्राप्त करके ब्रह्मा के साथ आनन्द करता है और कार्तिक कौमुद मास की शुक्ल द्वादशी दिन जो यहां स्नान करता है वह वाजपेय यज्ञों के फल को प्राप्त करता है और जो यहां मेरे कर्म परायण होकर प्राण त्याग करता है वाजपेय यज्ञ फल को भोगकर वह नर मेरे लोक में जाता है। वहां से वायव्य दिशा में पांच कोश की दूर पर कोटि वट नाम तीर्थ है वहाँ षष्ठकाल निवास कर जो नर स्नान करता है ॥४१॥ ॥४२॥०३॥४४॥४५॥ वह कोटि यज्ञों के फल को प्राप्त करता है और जो कोटिवट तीर्थ में प्राण त्याग करता है वह यज्ञ कोटि फल को भोगकर मेरे लोक को प्राप्त करता है उसी क्षेत्र में विष्णु-सर नाम तीर्थ है ॥४६॥४७॥ वह कोटिवट से पूर्वोत्तर की ओर पांच कोश दूर है वह विष्णुसर अगाध है॥४८॥ और पर्वत परिमण्डल वाला वह विष्णुसर पांच कोश विस्तार वाला है जो नर वहाँ भ्रमण करता है तथा परिक्रमा करता है तीन रात्रि उपवास करके सुदुष्कर कर्म कर जो परिक्रमा करता है हे सुन्दरि ! भ्रमण करते उस मनुष्य के जितने पद न्यास होते हैं वह उतने ही हजार वर्ष तक ब्रह्म लोक में निवास करता है और स्वकर्म परायण हो जो नर यहाँ प्राण त्याग करता है वह ब्रह्म लोक को छोड़कर मेरे लोक में जाता है हे सुन्दरि ! उस क्षेत्र का आश्चर्य सुनिये ।४६। ।५०।५१॥५२॥ उस क्षेत्र में मम कर्म सुखावह गायों का शब्द सुनाई देता है वह गायों का शब्द ज्येष्ट मास शुक्ल द्वादशी के दिन सुना जाता है वह स्वयम् सुना जाता है एवम् पुन्य गोस्थल में जो भक्त शुभ कर्म करता है वह पापों से शीघ्र छूट जाता है हे वसुन्धरे ! महादेव ने इस प्रकार शाप का दाह मिटाया है सब मरुद्-गणों के रुथ शाप का दाह दूर किया है यह गोस्थलक नाम क्षेत्र

सर्व शान्ति करने वाला है ५३॥ ५४॥५५॥५६॥ हे देवि! तेरे अनुग्रह से मैंने यह सब समग्रता से सुना दिया है हे महाभागे! यह अध्याय सबका मंगल करने वाला है और मेरे मार्गानुसारियों को मेरीप्रीति बढ़ाने वाला है यह श्रेष्ठों का श्रेष्ठ है मंगलों का मंगल है ॥५७ ५८॥ लाभों का परम लाभ है धर्मों का उत्तम धर्म है मेरे मार्गानुयायी इसको पढ़कर तेज श्री लक्ष्मी तथा सर्व कामनाओं को प्राप्त करते हैं और इस अध्याय में जितने अक्षर हैं उतने हजार वर्ष तक वह मेरे लोक में रहता है और जो इसे नित्य पढ़ता है उसका कभी भी पतन नहीं होता है ॥५९॥६०॥६१॥ और इसका पाठ करने वाला इकीस कुल को तार देता है पिशुन, शठ, तथा मूर्ख को यह रहस्य नहीं सुनाना चाहिये ॥६२। जो सेवा करना जानता है ऐसे शिष्य तथा पुत्र को यह रहस्य सुनाना चाहिये इस को जो मनुष्य मरण समय भी स्मरण करता है श्लोक अथवा श्लोक पाद भी स्मरण करे तो परम गति को प्राप्त करता है हे महाभागे! वह क्षेत्र तो पांच योजन मण्डल वाला है ।।६३। ६४॥ हे वसुन्धरे! उसके पूर्व दिशा में मैं परम प्रीति से रहता हूं और पश्चिम मे गंगा बहती है ॥६५॥ हे भद्रे! यह सर्व कर्म सुखावह परम गुप्त रहस्य धर्मयुक्त मैंने सुना दिया है जोकि तूने मुझसे पूछा था कह दिया ।।६६॥६७॥ इति श्रीवाराह पुराणे गोनिष्क्रमण माहात्म्यं नाम काशीराम शर्मा कृत भाषाटीकायां सप्तचत्वारिंशदधिक शततमोऽध्यायः ॥१७४॥

अथ एक सौ अठचालीसवां अध्याय

दोहा—इकसौ अठचालीस में, स्तुतस्वामि माहात्म्य ॥
वाराह जी वर्णन करें, धरणी सों आध्यात्म्य ॥

अथः स्तुतस्वामि माहात्म्यम्—सूतने कहा परम गुप्त गोनिष्क्रमण माहात्म्य सुनकर मनोरत्न विभूषित पृथ्वी परम विस्मय को प्राप्त होकर वराह से कहने लगी हे जगन्नाथ! आपके द्वारा गायों का माहात्म्य मैंने सुना दिया है जिसको सुनकर कि मैं परम निर्वृत को प्राप्त होगयी हूँ हे नारायण! हे प्रभो इसी प्रकार इस क्षेत्र से कोई अन्य परम

चाहिये एवम् प्रकार मैंने आत्मा को समान कहा है वे प्रणाम करके सिद्धि को प्राप्त करेंगे ॥२०॥२१॥२२॥ हे भूमे ! यह महा ज्ञान भक्तों में देखा जाता है यह शास्त्र सब शास्त्रों में श्रेष्ठ है और सर्व संसार मुक्त करने वाला है ॥२३॥ हे वसुन्धरे ! कुछ और कहता हूं उसे सुनिये हे महाभागे ! यह शास्त्र महोजस स्थूल कर्म वाला है ॥२४॥ कोई ज्ञान से पार होते हैं कोई कर्म करने से कोई यथेष्ट दान कर्म से पार होते हैं ॥२५॥ कोई योगवल को भोगकर मेरी संस्थित को देखते हैं कोई निष्ठित मनुष्य विधि से मुझे प्राप्त होते हैं ॥२६॥ कोई सर्व धर्म करने वाले हैं कोई सर्वाशा हैं कोई सर्व विक्रीय हैं हे भूमे ! वे एकचित्त से व्यवस्थित नर मुझको देखते हैं ॥२७॥ हे देवि ! इस प्रकार यह महा शास्त्र सर्व संसार मोक्ष करने वाला है यह परम प्रिय शास्त्र मैंने अपने भक्त व्यवस्था के लिये प्रयुक्त किया है २८॥ जो जिसको रुचिकर होगा वे उसी प्रकार कहेंगे जिसका प्रयोग ऋषियों ने किया है अन्य दर्शों का अन्यथा प्रयोग ॥२६॥ हे भूमे ! वह युग के प्रभाव से मनुष्य करेंगे हे देवि जो शास्त्र नियोजित हैं वे सब मेरे प्रसाद से अपने शिष्यों के साथ मेरी परम सिद्धि को प्राप्त करेंगे जो मात्सर्य से उपहत आत्मा वाले मेरे शिष्यों में और मेरे शास्त्रों में दोष लगाता है उनकी पुनः उत्पत्ति होती है जो मेरे धर्म में तथा परम भक्त जन में मात्सर्य करते हैं उन मात्सर्य से उपहत वालों को यह प्रधान लोक नहीं मिलता है हे वसुन्धरे ! तुझे और भी सुनाता हूँ उसे सुनिये ॥३०॥३१॥३२ ३३। हे प्रिये ! मेरे मार्गानुसार से मेरे परम गुप्त शास्त्र वाले विनीत तथा वह दोष रहित जो हैं वे मात्सर्य दोष से नष्टाचार होकर नीचे गिरते हैं मात्सर्य सर्व नाश के लिये होता है मात्सर्य धर्म नाशक है ॥३४॥३५॥ जो मात्सर्य युक्त है वह मेरा दर्शन कभी नहीं करता है बहु कर्म करने वाले दान अध्ययन में निष्ठा वाले तप अथवा ज्ञान वाले नित्य कर्म करने वाले यदि ईर्षा स्वभाव से मात्सर्य करते हैं तो हे भूमे ! वे माया से दूषित मनुष्य मेरा दर्शन नहीं पाते हैं इसलिये धर्म नाश करने वाला मात्सर्य कभी

नहीं करना चाहिये जो परम गति चाहे तो मेरे शास्त्र में अभ्यास रखे ॥३६॥३७.३८॥ हे महाभागे ! इस गुप्त रहस्य को कोई बुद्धिमान भी नहीं जानते हैं मात्सर्य के दोष से बहुत सारे निधनता को प्राप्त हुये ॥३६॥ हे महाभागे ! यह सर्व भक्तों को प्रिय लगने वाला शास्त्र मैंने वाराह रूप धरकर विधि से किया है ॥४०॥ हे महाभागे उस मेरे भूतगिरि में एक महाश्चर्य है उसे सुनिये वहां अभेद्य लोहे की प्रतिमा दिखाई देती है ॥४१॥ कोई कांस्य प्रतिमा कहते हैं और कोई लोहे की प्रतिमा बतलाते हैं तथा कोई पाषाण की और कोई वज्रमयी प्रतिमा कहते हैं ॥४२॥ हे वसुन्धरे जो ऊर्द्ध भाग में अथवा अधोभाग में मेरी पूजा करते हैं और जो मनुष्य मणिपूर पर्वत में मेरा दर्शन तथा स्तुति करता है वह मेरे प्रसाद से आचार्यों के फल को भोगकर समस्त पापों से मुक्त होकर परम गति को प्राप्त करते हैं ॥४३॥ ॥४४॥४५॥ हे महाभागे ! उस क्षेत्र में उत्तर दिशा की ओर पञ्चारु नाम से विख्यात एक मेरा परम गुप्त क्षेत्र है ॥४६। जो नर पञ्च काल निवास करके वहां पर स्नान करता है वह अप्सराओं के साथ दीव्य नन्दन वन में आनन्द करता है ॥४७॥ और जो मनुष्य यहाँ पर प्राण त्याग करता है वह कृतकृत्य हो नन्दन वन को छोड़ मेरे लोक में जाता है ॥४८॥ वहीं मेरे दक्षिण पार्श्व में आधे योजन से कुछ कम दूर पर मेरा भृगु कुण्ड नाम से विख्यात परम क्षेत्र है जो मनुष्य मेरे कर्म परायण होकर वहां स्नान करता है वह नर भूमि में नहीं पैदा होता जहां मेरु शिखिर में ध्रुव स्थित है वहां अप्सराओं के साथ सुख से निवास करता है ।४६।५०।५१। और जो मनुष्य मेरे कर्म परायण हो यहां प्राण त्याग करता है वह ध्रुव लोक को छोड़कर मेरे लोक को जाता है ।५२। वहां एक विख्यात मणिकुन्ड नाम क्षेत्र है जहां कि अनेकाlयसस्थित मणि देखने में आती हैं ॥५३॥ हे भद्रे वहां अगाध ह्रद देवताओं को भी कठिन है वहां विस्मय क्या है मलय चञ्चल स्थित है। ॥५४॥ जो नर पञ्च काल निवास कर वहां स्नान करता है वह धीर पुरुष राजलक्षण युक्त हो रत्न भागी होता है ॥५५॥ और जो मेरे कर्म

पथ में स्थित होकर यहां प्राण त्याग करता है वह सर्व संसार वासना को छोड़कर मेरे विष्णुलोक में जाता है।।५६। हे सुन्दरि ! मेरे क्षेत्र में पूर्वकी ओर मेरा तीन कोश परिमाण वाला गुगुह्य स्थान है वहां स्नान करने से मनुष्य मेरे लोक में जाता है वहीं मेरे क्षेत्र से पश्चिम की ओर पांच कोश की दूरी पर विख्यात धूतपाप नाम क्षेत्र है हे महाभागे ! वहां एक कुण्ड है वहां का जल मुझे प्रिय लगता है सुवर्ण कान्ति वाला वह कुण्ड मैंने मरकत मणियों से बनाया है पंचभक्त निवास कर जो नर वहां स्नान करता है वह दुष्कर कर्मों को कपाता हुआ पंचभूतात्मा निष्ठा वाला हो इन्द्रलोक में जाकर देवताओं के साथ आनन्द करता है और जो मेरे कर्मपरायण हो यहां प्राण त्याग करता है वह इन्द्रलोक को छोड़कर मेरे लोक में जाता है हे वसुन्धरे ! वह एकआश्चर्य है वसे सुनिये ॥५७॥५८॥५६॥६० ६१॥६२॥६३॥ हे विशालाक्षि मेरे मणिपूर पर्वत में तब तक धारा नहीं गिरती है जब तक पाप दूर न होजाँय और पाप मिटजाने पर वहां भूमि में धारा गिरती है हे विशालाक्षि ! एवम् प्रकार वहां अश्वत्थ मिश्रित वृक्ष है वहां पापी नर नहीं प्रवेश कर सकते केवल निष्पापी वहां प्रवेश करते हैं हे वरारोहे ! जहां मैं रहता हूं वहां से आध योजन की दूरी पर चार और पांच योजन विस्तृत पश्चिम दिशा की ओर आमलक क्षेत्र है मेरे प्रभाव से वहां हरेक समय फल फूल रहते हैं उस स्थान को पाप कर्मा नहीं जानते हैं मेरे कर्म में परायण श्रद्धालु जितेन्द्रिय शुद्ध मेरा भक्त तीन रात्रि उपवास करके सूर्योदय समय वहां जाकर अथवा मध्याह्न अथवा सूर्यास्त समय वहां जावे धैर्य्य धारण कर एक चित्त से वहां जाना चाहिये उस मेरे भूत गिर में पांच रात्रि में आमलकी सिद्धि मनुष्य भगवत्कर्म परायण होकर प्राप्त करता है ॥६४॥६५॥६६॥६७॥६८॥६६॥७०॥७१॥ तदनन्तर हरि के वचन सुनकर प्रसंशित व्रतवाली पृथ्वी पुनः विनय पूर्वक नारायण से पूछने लगी कि भगवन् ! आपने जो स्तुत स्वामी क्षेत्र तथा अन्य भी जो स्थान सुनाये हैं इस समय आप उनके नाम की निरुक्ति

कहिये ॥७२॥७३॥७४॥ श्री वराह ने कहा हे भूमे ! संसार को छोड़ तथा जो देवकरटक स्थान हैं उनको छोड़ मैं द्वापर युग में वहां निवास करूँगा ॥७५॥ तब मणिपूर पर्वत में स्थित हुये मेरी मंत्रों के जानने वाले ब्रह्मादि देवता स्तुति करने लगे तदनन्तर हे देवि ! नारद, असित, देवल, पर्वत, आदि ऋषि मेरी भक्ति से उस मणिपूर पर्वत में मेरे नाम करने लगे अतः मेरे कर्म के व्यापाश्रित स्तुत स्वामी क्षेत्र विख्यात हुआ ॥७६॥७७॥७८॥ हे भद्रे ! जो तूने मुझ से पूछा था वह सर्वभागवतप्रिय क्षेत्र नाम निरुक्ति करण मैंने सुना दिया है ॥७६ हे देवि ! जहां द्वापर युग तक ठहरूँगा उस स्तुत मणिपूर का माहात्म्य मैंने सुना दिया है ८०॥ हे भूमे ! उस भूतगिरि में ये पूर्वोक्त क्षेत्र गुप्त हैं ये श्रद्धालु मनुष्य को सुनाना चाहिये हे भद्रे ! यह सर्व धर्मव्यपाश्रय रूप श्री स्तुत स्वामि माहात्म्य सुना दिया है और क्या पूछना चाहती है ॥८१॥८२॥ इति श्री वराह पुराणे भगवच्छास्त्रे स्तुत स्वामि महात्म्यं नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायां अष्टचत्वारिंशदधिक शततमोऽध्यायः ॥१४८॥

अथ एक सौ उनपचासवां अध्याय

दोहा—एक सौ उनपचास में, धरणी से भगवान् ।
द्वारिका पुरीका करें, वराह सकल बखान ॥

अथ द्वारिका माहात्म्य–सूतने कहा–धर्मपरायण वसुन्धरा श्री स्तुत स्वामी माहात्म्य सुनकर प्रसन्न मनसे वाक्य बोलने लगी ॥१॥ धरणी ने कहा हे देव ! हे देववर ! हे प्रभो ! यह माहात्म्य सुनकर मेरे चित्त को परम अनुत्तम शान्ति होगयी है ॥२ बाण कवच तलवार धारण करने वाले सुर शत्रुदलन करने वाले पृथ्वी को धारण करने वाले हाथों से शंख चक्र गदा धारण करने वाले भगवान नें स्वयं इस प्रधान शास्त्र को धारण किया है अथवा कहा है ॥३॥ हे कृपा निधे ! एवम् प्रकार गुण वाले स्तुत स्वामि क्षेत्र का माहात्म्य मैंने सुनादिया है अब इससे अन्य जो प्रधान क्षेत्र है उसे सुनाइये ॥४॥ श्री वराह ने कहा—हे भूमे ! एवम् प्रकार सर्व पाप भय दूर करने वाले अन्य प्रधान क्षेत्र का

वर्णन करता हूं। ५॥ द्वापर युगमें यादव कुलावतंश शौरि नाम से विख्यात मेरा पिता होगा ॥६॥ और उस युगमें वहां द्वारिकापुरी होगी. वह विश्व कर्मा से निर्मित, विख्यात, रमणीय देवपुरी, पांच योजन विस्तार तथा दश योजन आयत होगी। उस द्वारिका पुरी में मैं एक सौ पाँच वर्ष तक निवास करूँगा हे सुन्दरि! उस पुरी में रहकर देवताओं के लिये प्रिय लगने योग्य पृथ्वी का भार उतार कर पुनः मैं स्वर्लोक में आऊँगा ॥७॥८॥६ हे वरारोहे! उस समय ईश्वर के समान विख्यात दुर्वासा मुनि होगा और वह दुर्वासा मेरे कुल को शाप देगा ॥१०॥ हे धरे! उसके शापके सन्ताप से वृष्णि, अन्धक भोज आदि खानदानी वाले द्वारिका निवासी सबके सब समाप्त हो यमराज के घाट उतर जायेंगे अथवा समाप्त होकर अक्षय को प्राप्त होंगे ॥११॥ चन्द्रकान्ति समान धवल वर्ण वाले हलायुध बलराम जी नगर को हल से घसीट कर समुद्र में फेकेंगे ॥१२॥ धर्म की चाहना वाली पृथ्वी नरायण के वचन सुनकर भगवान के चरण पकड़ कर पुनः पूछने लगी ॥१३॥ पृथ्वी ने कहा हे देव! हे मायाकारण्डक! आप सब लोकों के स्वामी हैं यह कहिये कि वह दुर्वासा ऋषि यादव कुल को क्यों शाप देगा ।१४॥ श्रीवराह ने कहा वहां मेरे भोगयुक्त रूप-योवन सम्पन्ना जाम्बवती नाम वाली मेरी पत्नी होगी ॥१५॥ उस का रूपयोवन के घमण्ड वाला साम्ब नाम का पुत्र मेरा प्रिय होगा ॥१६॥ उस साम्बका झूठा गर्भ बनाकर खेल करते हुये द्वारिका वासी बालक उस परम श्रेष्ठ ऋषि दुर्वासा से पूछने लगे कि हे परमश्रेष्ठ! मुने! यह बाला गर्भिणी है और आपको पूछना चाहती है मेरे गर्भ से क्या पैदा होगा सो आप बतलाइये दुर्वासा ने यह जान लिया कि यह साम्ब है और मुझे परीखना चाहते हैं एवम् प्रकार जान दुर्वासा क्रोध मूर्च्छित हो कहने लगा कि साम्ब के गर्भ से कुलनाशक मुसल पैदा होगा जिससे कि वृष्णि अन्धक आदि नाश को प्राप्त होजायेंगे १७॥१८॥१६ दुर्वासा का शाप सुनकर सारे कुमार शाप से सन्तप्त युद्ध हो भय से कहने लगे २०॥ तब उन आये हुये कुमारों को देख

मैंने उनसे पूछा और उन्होंने ममुत्सुक हो सब समाचार कहे ॥२१॥ उनके वचन सुन कर मैंने जो कुछ उनसे कहा वह सुनिये मैंने कहा हे कुमारो दुर्वासा ने जो कुछ कहा है वह सत्य ही होगा ॥२२॥ हे भूमे! यह वृष्णयादियों का शाप का कारण मैंने तुझे सुना दिया है हे भूमे! अब वहाँ के स्थानों को मुझसे सुनिये ॥२३॥ हे महाभागे! वैष्णवों को सुख देने वाली द्वारिका में पंचसर नाम का मेरा एक गुप्त क्षेत्र है ॥२४॥ वह मेरे कर्म सुखावह क्षेत्र समुद्रतीर से अलग है वहां जो मनुष्य पष्ठकाल निवास कर स्नान करता है वह स्वर्ग में जाकर अप्सराओं के साथ क्रीड़ा करता है और जो मनुष्य इस पंचसर क्षेत्र में प्राणत्याग करता है वह देवलोक को छोड़कर मेरे विष्णुलोक में जाता है वहां सैकड़ों शाखाओं से व्याप्त एक वृक्ष का महावृक्ष है २४ २५॥२६। २७॥ वह महावृक्ष कुम्भाकृति वाले शोभन बहुत फलों से परिपूर्ण रहता है उस वृक्ष के समीप लाभ की चपलतासे बहुत मनुष्य जाते हैं विना भक्त नर के वहां कोई भी फल प्राप्त नहीं करता है केवल जो पाप से रहित हैं वही वहां पर फल प्राप्त करता है ॥२८ २६॥ मेरे कर्म परायण मनुष्य परम सिद्ध को प्राप्त करते हैं वहीं द्वारिका में मेरा विख्यात प्रभास क्षेत्र है ॥३०॥ जिस क्षेत्र को कि रागमोह वाले मनुष्य नहीं जानते हैं पंच भक्त निवास कर जो वहां स्नान करता है वह सातों द्वीपों में घूमता है और वह गुह्य स्थानों में जाता है और जो पापमुक्त मनुष्य इस प्रभास क्षेत्र में प्राण त्याग करता है वह सर्वसंग छोड़कर मेरे लोक में जाता है हे धरे! वहां का आश्चर्य मुझसे सुनिये ३१३२३३॥ जिस प्रभाग में सुनते हैं नगर के प्रति या नगर के प्रति वहां भ्रमण करते हुये मकर दिखाई देते हैं ॥३४॥ जल में स्नान करते हुये वहां कोई अपराध नहीं करते हैं और मनुष्य इस क्षेत्र के स्वच्छ जल में पिंडो को फेंके ३५। एनम् यह निःसन्देह असम्प्रात में ग्रहण करते हैं पापकर्म रतका जलग्रहण नहीं करते हे ३६ धर्मात्माओं के पिंडों को ग्रहण करते हैं उसमें मेराप्रसिद्ध पंचपिंड नाम क्षेत्र हैं ३७ कोश विस्तारवाला अगाध अपार पंचपिंड क्षेत्र है उसमें पंचकाल निवास कर जोस्नान करता है वह शक्रलोक में

जाता है और जो इस क्षेत्र में प्राण त्याग करता है वह शक्रलोक को छोड़ मेरे लोक में जाता है हे महाभागे ! अब वहां का आश्चर्य मुझसे सुनिये। ३८॥३९॥४०॥ इस क्षेत्र को पाप कर्मा नहीं जानते हैं शुभकर्मा ही जानते हैं चौबीस द्वादशियों में मध्यान्ह सूर्य के होने पर वहां रौप्य सुवर्णाक कमल दिखाई देता है उस तीर्थ में संगमन नाम क्षेत्र है ॥४१॥४२॥ मणिपूर गिरि से यहां चार धारा गिरते हैं जो नर वहां चतुर्भक्त निवास कर स्नान करता है वह निःसन्देह वैखानसों के लोकों में आनन्द करता है और जो नर यहाँ प्राण त्याग करता है वह वैखानस लोकों को छोड़कर मेरे लोक में जाता है हे धरे ! वहाँ का आश्चर्य भी मुझसे सुनिये ॥४३॥४४॥४५॥ कुन्डों में तथा मणिपूर पर्वत में जो देखे जाते हैं पाप के नष्ट होने पर वह जल भूमि में जाता है ॥४६॥ पापों के स्नायमान होने पर वह पहिले की तरह नहीं गिरता है उस क्षेत्र में मेरा प्रधान हंस कुण्ड है ॥४७॥ यहाँ एक मणिपूर गिरि से धारा गिरती है पष्ठकाल निवास कर जो वहाँ स्नान करता है वह मुक्तसंग हो वरुणलय में आनन्द करता है हे वरानने ! और जो नर इस हंस कुन्ड में प्राण त्याग करता है वह वारुण लोक छोड़कर मेरे लोक में जाता है हे वसुन्धरे ! हंस कुन्ड में जो आश्चर्य है उसे सुनिये ॥४८॥४९॥ ॥५०॥ चौवीस द्वादशियों में मध्यान्ह समय वहाँ चन्द्र तथा कुन्द समान वर्ण वाले हंस दिखाई देते हैं शुद्ध मनुष्य देखते हैं पाप कर्मा नहीं देखते हैं जो नर वहां घूमते हुये हन्सों को देखता है वह निःसन्देह परम सिद्धि को प्राप्त करता है उस मेरे प्रधान क्षेत्र में विख्यात हन्स कुन्ड है ॥५१॥५२॥५३॥ जहाँ कि वृष्णि शुद्ध होकर मेरे स्थान को प्राप्त हुये हैं जो मनुष्य वहाँ चतुःकाल निवास करता है और जो सुदुष्कर कर्म करके इस हन्स कुन्ठ में प्राण त्याग करता है वह ऋषि लोक को छोड़कर मेरे लोक में जाता है हे महाभागे! वहाँ का आश्चर्य मुझसे सुनिये ॥५४॥५५॥५६॥ वहां पूर्व से निकली कदम्ब से धारा गिरती है वह कदम्ब माघ मास द्वादशी

दिन सूर्योदय समय पुष्प प्रकट करता है मेरे मार्गानुसारी जो मनुष्य उस कदम्ब के फूलों को प्राप्त करता है वह परम सिद्धि को प्राप्त करता है उसी क्षेत्र में मेरा एक विख्यात चक्रतीर्थ है ॥५७॥५८ ५६॥ यहां मणिपूर पर्वत से पांच धारा गिरती हैं वहां जो नर पांच काल निवास करके चक्रतीर्थ में स्नान करता है वह दशहजार वर्ष तक स्वर्ग लोक में आनन्द करता है और जो मनुष्य लोभ मोह रहित होकर इस तीर्थ में प्राणत्याग करता है वह मनुष्य सर्व स्वर्गों को छोड़कर मेरे लोक में जाता है वहां का मैं आश्चर्य कहता हूँ उसे सुनिये ॥६०॥६१॥६२॥ उस आश्चर्य को और नहीं देखते हैं केवल मेरी भक्ति परायण ही देखते हैं चौबीस ही द्वादशियों में वहां मन और कानों को सुख देने वाला निर्घोष सुना जाता है बहुमाल्य युक्त वायु सुगन्ध धारण करता है वह पापियों को दुर्लभ और पुण्य कर्म वालों को सुलभ है उसके उत्तर पार्श्व में अशोक महा वृक्ष है ॥६३॥६४॥ ६५॥ और वह भी सूर्योदय समय प्रफुल्लित होता है जो मेरे मार्गानुसारी वहां पुष्पको प्राप्त करता है वह परम सिद्धि को प्राप्त करता है वहीं एक रैवतक पर्वत है वह रैवतक सर्वलोक विख्यात है वहीं मैंने क्रीड़ा की थी वह स्थान बहुत लता गुल्मों से आकीर्ण तथा बहु पुष्पों से सुशोभित है ॥६६॥६७॥६८॥ उस पर्वत में अनेक वर्णों की शिलाओं की पंक्ति हैं तथा अनेक गुहा हैं और उसके चारों ओर बावड़ी है कन्दरा हैं वे देवताओं को भी दुर्लभ हैं जो मनुष्य षष्ठकाल निवास कर वहां अभिषेक करता है वह कृतकृत्य होकर सोम लोक में जाता है और जो नर मेरे कर्मपरायण हो यहां प्राण त्याग करता है वह सोमलोक को छोड़ मेरे लोक में जाता है ॥६६॥७० ७१॥ हे महाभागे! वहां का आश्चर्य मुझसे सुनिये उस आश्चर्य को धर्माभिलाषी मनुष्य देखते हैं ॥७२॥ सब वृक्षों के बहुत पत्ते गिरते हैं और एक नहीं दीखता है वह जल प्रसन्न रहता है ॥७३॥ पूर्व की ओर मेरे समीप स्थान में एक महावृक्ष पांच कोश विस्तार से सुशोभित रहता है उसके समीप पद्म उत्पन्न तथा सुगन्धित फूल विकशत

रहते हैं और मछली रहने योग्य जल के तालाव तथा फल वृक्षों से वह भूमि अति रमणीय लगती है सुगन्धित फूलों से वहां की कन्दरा तथा शिलातग ढकी हुयी हैं जो मनुष्य अष्टभक्त निवास करके वहां स्नान करता है वह अप्सराओं के साथ नन्दन वन में क्रीड़ा करता है ॥७४॥७५ ।७६॥७७॥ हे महाभागे ! वहां का आश्चर्य मुझसे सुनिये उस आश्चर्य को धर्मपरायण मनुष्य देखते हैं ॥७८॥ मध्याह्न में पूर्ण तथा अर्द्ध रात्रि में समान रहता है जिस प्रकार समुद्र घटता और वढ़ता है ।।७६।। उसके पश्चिम पार्श्व में विल्व का महावृक्ष है और वह वृक्ष चौवीस द्वादशियों में प्रफुल्लित होता है ॥८०॥ उसे शुभकर्मा देखता है पाप कर्मा नहीं देखता है और सूर्यास्त समय वह दिखायी देता है जो मेरे कर्म परायण मनुष्य फूल को वहां प्राप्त करता है हे भूमे ! वह निःसन्देह परम सिद्धि को प्राप्त करता है ॥८१॥८२॥ उसी क्षेत्र में विष्णुसंक्रमण नाम का मेरा प्रधान क्षेत्र है जहां पर कि व्याध ने मुझे भेदन किया और मैं अपनी विभूति को प्राप्त हुआ हूं ॥८३॥ वहां एक कुण्ड है मणिपूर पर्वत से वहां एक धारा गिरती है जो नर लाभालाभ रहित हो वहां स्नान करता है वह सूर्य लोक जाता है और जो मनुष्य लाभालाभ हीन हो वहां प्राण त्याग करता है सूर्यलोक छोड़कर मेरे लोक में जाता है वहां के आश्चर्य रूप शत्रुगणेश्वर विष्णु को कहता हूं जोकि पापियों को दुर्दर्श और पुण्य चारियों को सुदृश्य है उससे दक्षिण की ओर अश्वस्थ का महावृक्ष है ।।८४॥८५॥८६॥ और वह अश्वस्थ का महावृक्ष यथान्याय चौवीस द्वादशियों में मध्यान्ह समय फलता है वह वृक्ष भक्तों को प्रिय लगने वाला है ॥८७॥ तथा वह वृक्ष ऊँचा है विशाल है मनोज्ञ शीतल है जो मेरे मार्गानुसारी मनुष्य वहां फल को प्राप्त करते हैं वे परम सिद्धि को प्राप्त करते हैं हे महाभागे ! उस क्षेत्र में मैं उत्तरमुख हो रहता हूँ ॥८८॥ ८६॥ मैं वलराम के सहित तथा एकादशी के सहित सर्व भागवतों की प्रीति बढ़ाते समुद्र तटपर रहता हूं हम तीनों द्वारिका में रहते हैं हे महाभागे ! हम तीनों उसी क्षेत्र में आनन्द करते

हैं ॥६०।६१॥ वह क्षेत्र चारों ओर से तीस योजन विस्तार वाला है हे वरारोहे! वहां जाकर जो मुझे भक्ति भाव से देखता है वह शीघ्र परम गति को प्राप्त करते हैं यह आख्यान आख्यानों में महा आख्यान है शान्तियों में परम शान्ति है ॥६२॥६३॥ धर्मों में परम धर्म है कान्तियों में परम कान्ति है लाभों में परम लाभ है क्रियाओं की परम क्रिया है ॥६४॥ श्रुतियों की परम श्रु ति है तपों का परम तप है इसको मरण समय भी नहीं भूलना चाहिये ॥६५। यदि परम सिद्धि को चाहे तो इसको पढ़े इसको पढ़ने वाला मेरे लोक में जाता है जो मनुष्य प्रातःकाल उठ इसका पाठ करता है वह अपने इक्कीस कुल के पितरों को पार कर लेता है हे भद्रे ! यह द्वारिका का माहात्म्य उचित उपचार से तुझे सुना दिया है और क्या सुनना चाहती है ॥६६॥६७॥६८॥ इति श्रीवराह पुराणे भगवच्छास्त्रे द्वारिका महात्म्यं नाम काशीरामशर्मा कृत भाषाटीकायामेकोन पंचशदधिक शततमोऽध्यायः॥१४६॥

अथ एक सौ पचासवां अध्याय

दोहा—मलय गिरि से दक्षिण में, स्थानहु सानन्दूर ॥
तसमँथ हरि पूजन करे, होत कामना पूर ॥

अथ सानन्दूर माहात्म्य-सूतने कहा-द्वारिका पुरी का माहात्म्य सुनकर धर्मकी चाहना वाली वसुन्धरा हृष्ट मन हो पुन भगवान से पूछने लगी १॥ पृथ्वी ने कहा हे देव ! जो आपने द्वारिका पुरी का माहात्म्य वर्णन किया है उसे सुनकर मैं परम लक्ष्मी को प्राप्त होगयी हूँ २॥ तदनन्तर पृथ्वी के वचन सुनकर कमल लोचन वराह रूपी भगवान पृथ्वी से कहनेलगे ३॥ पृथ्वी ने कहा भगवान यदि आपकी मेरे ऊपर परम कृपा है तो उससे भी अन्य विख्यात क्षेत्र मुझे सुनाइये ४॥ श्री वराहने कहा हे भूमे ! समुद्र के उत्तर और मलयके दक्षिण में सान्दूर नाम से विख्यात क्षेत्र है ५॥ हे वसुन्धरे ! वहां उदीची दिशा के आश्रित मैं रहता हूँ वहां मेरी मूर्ति नतो अति ऊँची और न अति छोटी है ६। उस मेरी प्रतिमा को कोई लोहे की कोई तामे की कोई कांसे की कोई रीति की कोई सीसे की वतलाते हैं ॥७॥ और उस आश्चर्य रूप

मेरी प्रतिमा को कोई शिलामय कहते हैं हे भूमे! वहां के स्थान मुझसे सुनिये ॥८॥ हे वसुन्धरे! जहां जाकर मनुष्य भवसागर पार हो जाते हैं उस सानन्दूर क्षेत्र में महा आश्चर्य वर्णन करता हूँ ॥९॥ वहां मध्यान्ह समय सुवर्णमय पद्म दिखाई देता है हे वसुन्धरे! जहां रामगृह नाम गुप्त क्षेत्र है वहां का आश्चर्य भी सुनिये वहां लताओं के मध्य एक ऊंचा स्थूल महा द्रुम है ॥१०॥११॥ वह समुद्र के मध्य में है उसको कोई नहीं देखता है हे वसुन्धरे! तुझे और आश्चर्य भी सुनाता हूँ ॥१२॥ उसको मेरे ही भक्त विद्यमान स्वकर्म से जानते हैं वहाँ हजारों करोड़ों अरबों मत्स्य रहते हैं उनमें से एक बड़ा भारी मत्स्य चक्र से चिन्हित है जिस किसी विकर्मी से फेंका हुआ पिण्ड तब तक अन्य मछली नहीं ग्रहण करती जब तक कि उस चक्राङ्कित मछली ने नहीं भोजन किया वहीं रामसर नाम का मेरा गुप्त क्षेत्र है ॥१३॥१४॥१५॥ वह रामसर अपार है अगाध है तथा रक्त पद्मों से विभूषित है जो मनुष्य एक रात्रि निवास कर वहां स्नान करता है वह बुध के भवन में जाकर आनन्द पूर्वक निवास करता है हे सुन्दरि और जो वहां प्राण त्याग करता है वह बुध भवन में आनन्द भोग पुनः मेरे विष्णु लोक जाता है हे सुन्दरि! उस रामसर का आश्चर्य सुनिये ॥१६॥१७॥१८॥ उस आश्चर्य को मेरे कर्म परायण मनुष्य जानते हैं जो मेरे कर्म परायण नहीं हैं वे नहीं जानते हैं वह सर क्रोश विस्तार वाला है बहुत लतागुल्मों से घिरा है मनोज्ञ है रमणीय है कमलों से सुशोभित है उस तालाव के प्रफुल्लित कमल दिशाओं को प्रकाशित करते हैं तथा एक रुक्मय श्वेत कमल वहां दिखाई पड़ता है वहां ब्रह्मसर में उंचे से उत्तर की ओर एक मुसल समान धारा गिरती है जो मनुष्य पक्षकाल निवास कर वहां स्नान करता है वह ब्रह्मलोक में आनन्द पूर्वक निवास करता है और जो ब्रह्मसर में प्राण त्याग करता है वह ब्रह्मा की आज्ञा से मेरे लोक में जाता है हे महाभागे! उस सम्य ब्रह्मसर का आश्चर्य सुनिये। ॥१९॥२०॥२१॥२२॥२३॥२४॥ उस आश्चर्य को मेरे ही भक्त

है और जो दुष्कर कर्म करके वहां प्राण त्याग करता है वह अग्निलोक को छोड़कर मेरे लोक में जाता है तथा जो वहां पर जाकर मुझे नमस्कार करता है उसने मानो बारह वर्ष तक नमस्कार कर लिया है उस स्थान में जो आश्चर्य है उसको भक्ति निष्ठ वाले मनुष्य ही देखते हैं जो शुद्ध भक्त मनुष्य चौबीस द्वादशियों में शाल्मली के समीप आता है वही उस दृश्य को देखता है हे महाभागे ! उसी क्षेत्र में मेरा एक जटाकुण्ड नाम से विख्यात क्षेत्र वायव्य दिशा की ओर है वह कुन्ड परिमाण से चारों ओर दश योजन है ॥४३॥४४. ४५॥४६॥ ॥४७॥४८॥४६॥ और वह कुन्ड मलय से दक्षिण तथा समुद्र से उत्तर की ओर है जो मनुष्य पंच काल निवास करके वहां स्नान करता है वह अगस्ति भवन में जाकर सुख पूर्वक निवास करता है वह और जो मनुष्य मेरी चिन्ता परायण होकर जटाकुन्ड में प्राण त्याग करे वह अगस्ति भवन को छोड़कर मेरे लोक में जाता है उस कुन्ड में नौ धारा गिरती हैं उस कुन्ड का विस्तार परिमाण समुद्र समान अगाध है हे महाभागे ! वहां का जो बड़ा भारी आश्चर्य है उसको सुनिये ॥५०॥५१॥५२॥५३॥ जिस आश्चर्य को कि इतर मनुष्य चौबीस द्वादशियों में सूर्योदय होने पर चारों ओर से देखता है और जब तक वह ठहरता है तब तक वह जल नहीं बढ़ता है हे भद्रे ! मैंने जो यह सानन्दूर क्षेत्र का वर्णन वहां का आश्चर्य परिमाण कहा है वह भक्ति तथा कीर्ति को बढ़ाने वाला है यह परम गुप्त स्थानों में परम श्रेष्ठ स्थान है ॥५४॥५५॥५६॥ जो नर अष्ट भक्त पथ में स्थित होकर उस स्थान में जाता है वह परम सिद्धि को प्राप्त करता है । जो इस अध्याय को नित्य को पढ़ता है और प्रसन्नता पूर्वक सुनता है वह अठारह कुल के पितरों का उद्धार कर लेता है ॥५७॥५८॥ यदि नर विष्णु लोक की चाह करे तो इसको मरण समय भी न भूले ॥५६॥ हे भद्रे ! भक्त हित के लिये जो तूने मुझसे पूछा वह सुना दिया और क्या पूछना चाहती है।६०।

इति श्री वाराह पुराणे सानन्दूर क्षेत्र माहात्म्यम् नाम काशीराम कृत

को मार उन महोजसों की मैंने वहां संस्थापना की है जो मनुष्य प्रयत्न से कदाचित वहां देखे तो वह निश्चय से मेरा भक्त होता है हे वसुन्धरे ! उस कुण्ड में जो मनष्य नियत स्नान करता है विधिनिर्दिष्ट कर्म से तीन रात्रि निवास कर स्नान करता है वह सहस्र स्वर्गों में सुख पूर्वक निवास करता है ॥१५॥१६।१७॥१८॥ और जो मनुष्य अपने कर्म परायण हो इस क्षेत्र में प्राणत्याग करता है वह सब स्वर्गों को छोड़ मेरे लोक में जाता है ।१६॥ मैंने लोक विस्मय के लिये जो वहां किया है वह अन्य भी वहां के परमाद्भुत तुझे सुनाता हूँ ॥२०। वहां सर्व कामना सिद्धि के लिये चौवीस द्वादशियों में मास विधि अनुसार वलि दी जाती है ॥२१॥ वहां सफेद कुमुद के समान वर्ण वाला शंख कुन्द समान कान्ति वाला सर्वरात्र विभूषित मेरा अश्व कल्पित है ॥२२। वहां मेरे वाण धनुष अक्षसूत्र कमण्डल तथा दिव्य स्थिर आसन घोड़े के ऊपर विस्तृत है ॥२३॥ श्वेत पर्वत में आरूढ़ हो वहुत कुरुओं में गिरता हुआ वह दीखता है तथा क्षन नहीं दीखता है।२४॥ आकाश से ही अनेक ही रूप गेर कर शान्त, दान्त, परिक्लिष्ट वह घोड़ा आकाश में रहता है ॥२५॥ सूत ने कहा तदन्तर भूमि के वचन सुनकर विष्णुमाया से उपवृंहित महामुनि ब्रह्म पुत्र परम विस्मय को प्राप्त होकर महामति ब्रह्मपुत्र सनत्कुमार भगवान् पुनः एवम् प्रकार बोला ॥२६॥२७। सनत्कुमार ने कहा हे देवि ! हे वरानने ! तू धन्य है तू सुपुण्या है जो कि तूने साक्षात् लोकनाथ का दर्शन किया है ॥२८। पद्मपत्र विशालाक्ष जो तूने कहा है उससे कही सकल पुण्य वढ़ाने वाली कथा सुनाइये ।।२६॥ जिस जिस भगवान् के कहे धर्मयुक्त गुप्त वचन कह रही हो उसी प्रकार मेरा मन कारण सम्प्रयुक्त श्रेष्ठ युग सुनने को उत्सुक हो,रहा है ॥३०॥ तब सर्वभागवत प्रिय भगवान ने विधिदिष्ट कर्म से क्या कहा है ॥३१॥ सूतने कहा उस कुमार के इस प्रकार महोजस वचन सुनकर ब्रह्मपुत्र को मधुर वाक्य कह कर कहने लगी कि हे वत्स ! मेरे पूछने अनुसार जिस प्रकार भगवान् ने मुझसे कहा है

वह सुनिये श्री वाराह ने कहा– एवम् प्रकार वहां जो मनुष्य पाप शोधक मृदु शुभ कर्म विधि पूर्वक करता है हे सुमध्यमे ! वह उस कुल के घोड़ों को प्राप्त करता है ॥३२॥३३॥३४॥ वे दुरत्यय मेरे घोड़े अन्य को नहीं धारण करते हैं उसी । क्षेत्र में मेरा प्रधान पञ्च-सर नाम क्षेत्र है ॥३५॥ यहां शङ्ख समान वर्ण वाली मन के समान वेग वाली चार धारा गिरती हैं, जो मनुष्य चार भक्त निवास कर वहां स्नान करता है वह चैत्राङ्गद लोक में जाकर गन्धर्वों के साथ सुख पूर्वक निवास करता है और जो मेरे उस प्रधान क्षेत्र में प्राण त्याग करता है वह गन्धर्व लोक को छोड़कर मेरे लोक में जाता है तदनन्तर मेरे प्रधान नारद कुण्ड में ताल वृक्ष के समान पाँच धारा गिरती हैं एक भक्त निवास कर जो वहाँ स्नान करता है वह देवर्षि नारद को देखता है तथा उसके साथ सुख पूर्वक निवास करता है और जो यहाँ गुप्त कर्म का आसरा लेकर प्राण त्याग करता है वह नारद लोक को छोड़कर मेरे लोक में जाता है तदनन्तर उसी क्षेत्र में मेरा प्रसिद्ध वशिष्ठ कुण्ड तीर्थ है ॥३६॥३७॥३८॥३९॥४०॥ ॥४१॥ उस कुन्ड में नाति सूक्ष्म नाति दीर्घ तीन धारा गिरती हैं। पञ्च काल निवास कर जो वहां स्नान करता है वह वशिष्ठ लोक को प्राप्त करके उसी के साथ सुख पूर्वक निवास करता है और जो मनुष्य मेरे कर्म परायण होकर यहाँ प्राण त्याग करता है वह वशिष्ठ लोक को छोड़कर मेरे लोक में जाता है उसी क्षेत्र में मेरा विख्यात पञ्च कुन्ड तीर्थ है ॥४२॥४३॥४४॥ यहां पर हिमकूट से निकली पांच धारा गिरती हैं जो नर पञ्चकाल निवास कर वहां स्नान करता है वह जहां पंच शिख मुनि है वहीं जाता है और जो जितेन्द्रिय मेरा भक्त वहां प्राण त्याग करता है वह पञ्चचूड को छोड़ मेरे लोक में जाता है उसी क्षेत्र में मेरा विख्यात सप्तर्षि कुन्ड नाम तीर्थ है ॥४५॥४६॥४७॥ यहाँ हिमालय पर्वत से सात धारा गिरती हैं जो मनुष्य सात दिन निवास कर वहां अभिषेक करता है वह ऋषि कन्याओं से युक्त हो ऋषि लोक में सुख पूर्वक निवास करता है और

जो रागमोह से हीन होकर यहां प्राण त्याग करता है वह सप्तर्षियों को छोड़ मेरे लोक में जाता है उसी चेत्र में मेरा प्रसिद्ध शरभङ्ग कुन्ड नाम तीर्थ है ॥४८॥४६।५०॥ वहां एक धारा गिरती है शरभंग श्रिता नदी है जो मनुष्य षष्ठ भक्त निवास कर यहां पर स्नान करता है वह ऋषि कन्याओं के साथ प्रमोदित होता हुआ शरभंग लोक में जाता है और जो मनुष्य सर्व संग को छोड़ इस तीर्थ में प्राण त्याग करता है वह शरभंग लोक को छोड़ मेरे लोक में जाता है। सर्व माया से अभिसंवृत अग्निसर नाम एक कुन्ड है हे वरानने! वहां भूमि को प्राप्त कर जल ठहरता है जो मनुष्य षष्ठकाल निवास कर इस अग्निसर कुन्ड में स्नान करता है वह अंगिरा के लोक में सुख पूर्वक निवास करता है और जो नर मेरे कर्म परायण हो इस अग्निसर में प्राण त्याग करता है वह अग्नि लोक को छोड़ मेरे लोक में जाता है। हे भूमे! सर्व वेदोदकाश्रित एक बृहस्पति कुन्ड है ॥५ ॥५२॥५३॥५४॥५५॥५६॥ यहां पर हिमालय से एक धारा गिरती है जो मनुष्य षष्ठकाल निवास कर यहां स्नान करता है वह बृहस्पति लोक में जाकर मनुकन्याओं के साथ क्रीड़ा करता है और जो नर मेरे कर्म परायण हो इस स्थान में प्राण त्याग करता है वह बृहस्पति लोक को छोड़कर मेरे लोक में जाता है उसी चेत्र में मेरा एक विख्यात वैश्वानर चेत्र है वहां हिमालय से एक धारा गिरती है जो पुरुष षष्ठकाल निवास करके इस वैश्वानर कुन्ड में स्नान करता है वह बृहस्पति लोक में जाकर मुनि कन्याओं के साथ क्रीड़ा करता है और जो मेरे कर्म परायण हो वैश्वानर कुन्ड में प्राण त्याग करता है वह वैश्वानर लोकों को छोड़कर मेरे लोक में जाता है ॥५७॥५८॥५०॥६०॥६१॥६२॥ मेरा एक कार्तिकेय कुन्ड चेत्र है जहां कि हिमालय से पन्द्रह धारा गिरती हैं जो पुरुष षष्ठकाल निवास कर इस कुन्ड में स्नान करता है वह षण्मुख शुभदर्शन कुमार कार्तिकेय का दर्शन करता है और जो इस कुन्ड में चान्द्रायण व्रत करके पवित्र हो प्राण त्याग करता है वह कार्तिकेय को छोड़कर

मेरे लोक में जाता है ॥६३॥६४॥६५॥ उसी क्षेत्र में एक उमा कुन्ड से विख्यात मेरा तीर्थ है जहां पर कि महादेव की वरांगना वह गौरी उत्पन्न हुई है जो पुरुष दश रात्रि निवास कर वहां स्नान करता है वह गौरी देवी का दर्शन करता है तथा उसी के लोक में सुख पूर्वक निवास करता है और जो नर इस उमाकुन्ड में दश रात्रि निवास कर प्राण त्याग करता है वह उमालोक को छोड़कर मेरे लोक में जाता है ॥६६॥६७।६८॥ एक महेश्वर कुन्ड है जहां कि शङ्कर के साथ उमा का विवाह हुआ था वह महेश्वर कुन्ड कादम्ब, चक्रवाक, हंस सारसों से सेवित है वहां पर हिमालय से तीन धारा गिरती हैं और वह धारा स्थूल है रमणीय हैं तथा नाति ह्रस्व है तथा अति निर्मल हैं ॥६९॥७०॥ जो पुरुष बारह दिन यहाँ निवास कर स्नान करता है वह रुद्र कन्याओं से युक्त होकर रुद्र लोकों में सुख के साथ निवास करता है और जो पुरुष यहाँ पर दुष्कर कर्म करके प्राण त्याग करता है वह रुद्रलोक को छोड़कर मेरे लोक में जाता है ॥७१॥७२॥ जहाँ पर वेद प्रकट हुये थे, वहाँ पर एक प्रख्यात वेद कुन्ड है उसमें हिमालयसे चार धारा गिरती हैं उसके पूर्व पार्श्व में पान्डुरोदक वाली सम धारा गिरती हैं पुनः इसके उत्तर पार्श्व में सुवर्ण सदृश उपमा वाली प्रसन्न निर्मल जल वाली ऋग्वेद धारा गिरती है और पश्चिम पार्श्व से यजुर्वेद धारा गिरती है तथा दक्षिण पार्श्व से अथर्वण वेद युक्त धारा गिरती है ।७३॥७४।७५।७६॥ एक धारा यहाँ पर इन्द्रगोप के समान रंग वाली गिरती है इन्द्र गोप वर्षांत में पैदा होने वाला एक कीड़ा "जो पुरुष सात रात्रि निवास कर स्नान करता है वह ब्रह्मलोक में जाय ब्रह्मा के साथ सुख से निवास करता है और जो यहाँ प्राण त्यागता है वह ब्रह्मलोक को छोड़ मेरे लोक जाता है मेरे गुप्त लोहार्गल क्षेत्र में सिद्धि चाहने वाले को अवश्य जानना चाहिये वह क्षेत्र चारों ओर से पचीस योजन विस्तार वाला है ।७८।७९।८०। एवं प्रकार करने वाले का कोई कर्म बाकी नहीं रह जाता है यह आख्यान जिस किसी को नहीं देना चाहिये जो इसे पढ़ते व सुनते हैं वह दश कुलों को तार देता है इस-

को मरण समय भी कभी न भूले ॥८१॥८२॥८३॥ जो मनुष्य सर्व संसार मोचिणी परम सिद्धिकी चाह करे वह इस लोहार्गला आख्यान को अवश्य पढ़े ! हे भद्रे यह भक्तको सुख देने वाला परम पवित्र मांगल्य माहात्म्य तुझे सुना दिया है ॥८४ ।८५॥ इति श्रीवराह पुराणे भगवच्छास्त्रे लोहार्गल माहात्म्य नाम काशीराम शर्मा कृत भाषाटीकाया मेक पंचाशदधिक शततमोऽध्यायः ॥१५१॥

॥ अथः एक सौ बावनवां अऽध्याय ॥

दोहा—इकसौ बावन में कहें, श्रीवराह भगवान् ॥
मथुरा तीर्थ प्रशंसा, धरणी को समुझान ॥

अथ मथुरा तीर्थ प्रशंसा--सूतने कहा--लोहार्गल क्षेत्र निवासी त्रैलोक नाथ का माहात्म्य सुनकर पृथ्वी परमविस्मय को प्राप्त हो श्री वराह जी से कहने लगी १॥ धरणी ने कहा–हे पद्मपत्रविशालाक्ष ! हे लोकनाथ हे जगत्पते आपके प्रसाद से मैंने महौजस शास्त्र सुना दिया है ॥२॥ मैं आपकी शिष्या हूँ आपकी दासी हूँ आपके शरण में आयी हूं हे जगद्धातृ हे जगज्योति ! मैं आपकी सम्भावना से ही सुवर्ण समान उज्वल होगयी हूं हे मान को देने वाले आपने मुझे शास्त्र सुनाकर अलंकृत कर लिया है । ३ ४॥ जगत् के शास्त्र रचने वाले आप में यह कोई अचम्भे की बात नहीं है जगत् सर्वस्व जो कुछ भी है वह सब आपके आधीन है ॥५॥ यह जानकर मेरा हृदय अति आह्लादित हो रहा है लोहार्गल क्षेत्र से जो परम दुर्लभ तीर्थों में उत्तम तीर्थ हैं वह मुझे सुनाइये हे प्रभो ! यदि कोई दुर्लभ तीर्थ है तो उसे मुझे सुनाइये ॥६॥७। श्रीवराह ने कहा हे वसुन्धरे ! मेरा मथुरा के समान प्रिय क्षेत्र पाताल अन्तरिक्ष तथा मर्त्यलोक में अन्य कहीं नहीं है ॥८॥ सूतने कहा--भगवान् के प्रिय वचन सुनकर पृथ्वी देवी प्रणाम करके पुनः वराह भगवान से कहने लगी ॥९॥ पृथ्वी ने कहा हे महाभाग ! पुष्कर नैमिष वाराणसी पुरी को छोड़कर आप किस कारण मथुरा पुरी की प्रशंसा कर रहे हो ॥१०॥ श्रीवराह ने कहा हे वसुन्धरे ! मुझसे कथा सुनिये मथुरा पुरी प्रसिद्ध है उससे बढ़कर मुझे कोई

अन्य तीर्थ अच्छा नहीं लगता है ॥११॥ वह पुरी रमणीय है तथा शुभ है वहां मेरी जन्म भूमि है हे देवि ! जिसप्रकार में पापहारिणी मथुरा की स्तुति करता हूँ वह सुनिये ॥१२॥ मथुरा में निवास करने वाले मनुष्य की मुक्ति होती है मनुष्य महामाघमास में प्रयाग स्नान करने से जो फल प्राप्त करता है वह फल मथुरा में दिन दिन स्नान करने से प्राप्त होता है एक हजार वर्ष तक वाराणसी में स्नान करनेसे जो फल प्राप्त करता है वह फल मथुरा में क्षण भरमें मिलजाता है हे वसुन्धरे ! पुष्कर में कार्तिक के महीने में स्नान करने से जो फल मिलता है,हे देवि वह फल जितेन्द्रिय मनुष्य मथुरा स्नान से प्राप्त करता है जो मथुरा को छोड़कर अन्यत्र प्रीति करता है वह मेरी माया से मोहित होकर संसार में घूमता है हे वरारोहे ! जो मेरे माथुर मण्डल को सुनता है दूसरे से कहे भी माथुर मंडल को जो सुनाता है वह सब पापों से शीघ्र मुक्त हो जाता है पृथ्वी में जितने तीर्थ हैं तथा समुद्र तक जितने तालाव हैं १३॥ १४॥१५॥१६॥१७॥१८॥ जनार्दन के शयन करने पर सब मथुरा में जाते हैं मथुरा मंडल में जाकर यथाविधि श्राद्ध करने से पितर तृप्त हो जाते हैं हे महाभागे ! जो इतर मनुष्य मथुरा में निवास करते हैं वे भी मेरे प्रसाद से परम सिद्धि को प्राप्त हो जाते हैं कुब्जाम्रक में सौकरव में विशेष करके मथुरा में जो निवास करते हैं वे परम सिद्धि को प्राप्त करते हैं १६।२०॥२१ मेरे प्रसाद से बिना साख्य योगसे जो महापुरी मथुरा में निवास करते हैं बलिभिक्षादि देने वाले वे देवता नर विग्रह वाले हैं हे वरारोहे ! मैं द्वापर युगमें मथुरा में अवतार धारण करूँगा २२॥२३॥ ययाति राजा के वंश में क्षत्रिय कुल बढ़ाने वाला मैं मथुरा में अवतार लूंगा ।२४॥ चतुर्विधि मूर्ति धारण करके ऋषियों से संस्तुत होकर वहां रहकर युद्धका निश्चय कर सौ वर्ष तक वहां रहेंगे ॥२५॥ एक मूर्ति चन्दन समान दूसरी सुवर्ण समान तीसरी अशोक सदृश चौथी कमल समान होगी ।२६॥ हे प्रिये ! वहां गुप्त नाम होंगे वह संसार छेदन पुण्य पवित्र नाम होंगे ॥२७॥ हे वसुन्धरे ! उस मथुरा में धर्मदूषक कंसादि बत्तीस दैत्योंको मारूँगा २८॥ जहांकि सन्निहिता यमुना नित्य

बहती है जहां कि वैवस्वत सुता यमुना वहां प्रसिद्ध है ॥२६॥ जो प्रयाग में गंगा को प्राप्त कर वेणी नाम से पृथ्वी में विख्यात हुयी है मेरे माथुर मण्डल में गंगा से शत गुणापुण्य वाली यमुना विख्यात है हे देवि ! इसमें कोई विचार नहीं करना चाहिये हे अनघे ! वहां मेरे गुप्त तीर्थ अनेक होंगे ॥३० ३१॥ जिनमें स्नान करने से मनुष्य मेरे विष्णु लोक में जाता है और जो मनुष्य मेरे कर्म परायण हो मथुरा में प्राणत्याग करता है वह पुनः मर्त्यलोक में जन्म धारण नहीं करता है चतुर्भुज रूपी होता है अविमुक्त क्षेत्र में स्नान करने से मनुष्य मुक्ति को प्राप्त करता है ॥३२॥३३॥ और जो मनुष्य अविमुक्त क्षेत्र में प्राणत्याग करता है वह मेरे विष्णुलोक में जाता है मथुरा में विश्रान्ति नाम का तीर्थ त्रैलोक्य विख्यात है जिसमें स्नान करने से मनुष्य मेरे लोक में जाता है सवतीर्थों में स्नान करने से जो फल प्राप्त करता है हे देवि ! वह फल गतश्रम हो देव दर्शन से मिल जाता है वह फल न यज्ञ से न तपसे न ध्यान से न संयम से मिलता है जो कि विश्रान्ति तीर्थ में स्नान करने से मिलता है हे वसुधे ! जो नर गतश्रम हो तीन वार दिन में देखता है तथा दो प्रदक्षिणा करता है वह विष्णुलोक जाता है एक अन्य परम गुप्त सर्वसंसार मोक्षण प्रयाग नाम तीर्थ है जोकि देवताओं को भी दुर्लभ है जिसमें स्नान करने से मनुष्य मेरे लोक में जाता है तथा जिसमें स्नान करने से मनुष्य अग्निष्टोम यज्ञ के फल को प्राप्त करता है इन्द्रलोक को प्राप्त करके स्वर्ग में आनन्द करता है ३४॥३५॥३६॥३७॥३८॥३९॥४०॥ और जो इस क्षेत्र में प्राण त्याग करता है वह मेरे लोक में जाता है तथा मेरा कनखल नाम का क्षेत्र है ।४१॥ उस क्षेत्र में स्नान करने से मनुष्य स्वर्ग में जाता है एक मेरा तिन्दुक नाम का परम गुप्त क्षेत्र है ॥४२॥ हे देवि ! उसमें स्नान करने से मनुष्य मेरे लोक में जाता है हे वसुन्धरे ! इस क्षेत्र की पुरातन कथा सुनिये ॥४३॥ हे देवि ! पांचाल विषय में काम्पिल्य नाम का श्रेष्ठ नगर है उस धनधान्य युक्त नगर का पालन ब्रह्मदत्त करता था

॥४४॥ हे देवि ! उस काम्पिल नगर में तिन्दुक नाम वाला नाई रहता था उस नाई के उस नगर में रहने पर समय पर उस नाई का सारा कुटुम्ब नष्ट होगया कुटुम्ब के नष्ट होने पर वह नाई अत्यन्त दुखसे पीड़ित हुआ तथा सर्वसंग छोड़कर मथुरा में गया हे वसुन्धरे ! पुरी जाकर वह ब्राह्मण के घर में निवास करता हुआ उसके कर्मशत करके यमुना नदी में स्नान करके ही वह नित्य दृढ़व्रत हो यमुना में स्नान करता था तदनन्तर समय पाकर वह मृत्युको प्राप्त हुआ वह उस तीर्थ स्नान के प्रभाव से श्रेष्ठ ब्राह्मण हुआ है ४५॥४६।४७॥४८।४६॥ हे देवि ! वसुन्धरे ! वह योगिश्रेष्ठ श्रेष्ठ ब्राह्मण घरमें पैदा होकर जातिस्मर तथा विष्णुभक्त हुआ है ॥५०॥ उस तीर्थ के प्रभाव से सुदुर्लभ मुक्ति मिली है उससे आगे सर्वपाप नाशक सूर्य तीर्थ है ५१। हे सुन्दरि ! विरोचन के पुत्र राजा वलिने राज्यभ्रष्ठ हो धन कामना से इस तीर्थ पर सूर्य की आराधना की है ॥५२॥ ऊर्द्ध्वबाहु निराहार रहकर एक सम्वत्सर से ज्यादा समय तक उसने परम तप किया है तदनन्तर उसने यथेच्छ कामना प्राप्त की है ॥५३॥ सूर्यभगवान उसके ऊपर प्रसन्न होकर कहने लगा कि हे वले ! तू किस कारण घोर तप कर रहा है ॥५४॥ वलि ने कहा-हे देवेश ! भ्रष्टराज्य होगया हूँ पाताल में निवास करता हूं वित्त से भी हैरान हूँ कुटुम्ब का पालन किस प्रकार करूँ ॥५५॥ तदनन्तर सूर्य भगवान ने उसे मुकुट से चिन्तामणि निकाल कर प्रदान की चिन्तामणिको प्राप्त करके वलि पाताल में गया ॥५६॥ उस तीर्थ में स्नान करने से मनुष्य सर्वपापों से मुक्त होता है

हे वसुधे! जो ध्रुव तीर्थ में श्राद्ध करता है वह सब पितरों को तार देता है विशेष कर पितृ पक्ष में स्नान करना चाहिये ध्रुव तीर्थ के दक्षिण में, तीर्थराज कहा गया है। उस तीर्थराज में स्नान करने से मनुष्य मेरे लोक में जाता है हे महादेवि! उससे दक्षिण दिशा में ऋषितीर्थ है ॥६०॥६१॥६२॥ वहां स्नान करने से मनुष्य ऋषि लोक में जाता है और जो ऋषितीर्थ में प्राण त्याग करता है वह नर मेरे लोक में जाता है ॥६३ ऋषि तीर्थ से दक्षिण में परम प्रिय मोक्ष तीर्थ है वहां स्नान मात्र से ही मनुष्य मोक्ष प्राप्त करता है। ॥६४। वहां एक कोटि तीर्थ है जो कि देवताओं को भी दुर्लभ है वहां पर स्नान दान करने से मनुष्य मेरे लोक में जाता है। ॥६५॥ पुरुष कोटि तीर्थ में जाकर पितरों देवताओं को तृप्त करता है वह पितामहादि पितरों को तार देता है ॥६६॥ कोटि तीरथ में स्नान करने से पुरुष ब्रह्म लोक को जाता है। वहीं वायु तीरथ है, जो कि देवताओं को भी दुर्लभ है ॥६७॥ उस तीरथ में पिन्ड दान दान देने से पितर पितृ लोक में चले जाते हैं। गया में पिन्ड से जो फल मिलता है वह फल ज्येष्ठ के महीने इस तीरथ में पिण्ड दान से मिलता है ॥६८॥ यह बारह तीरथ देवताओं को भी दुर्लभ हैं इनमें किया हुआ दान तप, जप, होमादि सहस्र गुणा होता है। जिन तीर्थों के स्मरण करने से ही पुरुष पाप मुक्त हो जाता है उन तीर्थों का माहात्म्य सुनकर पुरुष समस्त कामनाओं से भरपूर हो जाता है ॥६९॥७०॥ इति श्री वाराह पुराणे भगवच्छास्त्रे मथुरा माहात्म्ये मथुरा तीरथ प्रशंसा नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम द्वापञ्चाशदधिक शततमोऽध्याय ॥१५२॥

अथ एक सौ त्रेपनवां अध्याय

दोहा:— इक सौ त्रेपन में कहैं, मथुरा का माहात्म्य।
तस समान दूजा नहीं, जो देता आध्यात्म्य।

अथ मथुरा तीरथ माहात्म्यम्— श्री वाराह ने कहा– शिव कुन्ड से उत्तर में नौ तीर्थ हैं उस नव तीर्थ से बढ़कर दूसरा क्षेत्र

न हुआ और न होगा ।१।। वहां स्नान करने ही से सौभाग्य बढ़ता है तथा निःसन्देह रूपवान हो स्वर्ग लोक में जाता है ।।२।। उसमें स्नान करने से मनुष्य मेरे लोक में जाता है वहां एक त्रैलोक्य विख्यात संयमन नाम तीर्थ है ।।३।। वहां स्नान करने तथा प्राणत्यागने से मनुष्य मेरे लोक में जाता है हे वसुन्धरे ! पुनः और भी कहता हूँ उसे सुनिये ।।४।। उस संयमन तीर्थ की पुरातन कथा सुनिये कोई पाप समाचार दुष्टमानस अतिपाप करने वाला निषाद नैमिषा रण्य में निवास करता था कभी वह निषाद मथुरा पुरी के प्रति चलपड़ा ।।५।।६।। तथा वहां मथुरा में आकर कृष्णपक्ष चतुर्दशी के दिन यमुना पार जाने की इच्छा से उस निषाद ने यमुना तैर कर परली पार संयमन तीर्थ जाकर स्नान किया उस निषाद के उस शुभ श्रेष्ठ संयमन तीर्थ में स्नान करने पर शीघ्र वह पापी निषाद प्राणों से वियोग को प्राप्त हुआ अर्थात् मर गया उस तीर्थ के प्रभाव से वह पापी निषाद भी पृथ्वी का मालिक हुआ है ।।७।।८।।६ हे देवि ! वह निषाद सौराष्ट्र देश में धनुष धारी क्षत्रिय कुलावतंस हुआ है वह प्रिय दर्शन यक्षधनुः नाम से विख्यात हुआ है क्षत्रधर्म का आश्रय लेकर उसने पृथ्वी का पालन किया है पीवरी नाम वाली काशीराज की पुत्री के साथ उसने विवाह किया हे वसुन्धरे ! वह काशीराज पुत्री निषाद की सैंकड़ों रानियों में सबसे मुख्य हुयी उसके साथ यक्षधनु नाम राजा ने उद्यानों में वनों में प्रासादों में रमणीय नदी पुलिनों में प्रेम पूर्वक रमण विहार किया प्रजा का पालन करते दान देते हुये राजा के समय व्यतीत होने पर राजा ने भोगासक्ति नहीं जानी एवम् प्रकार उस भोगासक्त राजा को सतहत्तर वर्ष व्यतीत होगये उसके पांचपुत्र तथा पांच कन्या हुयीं वे कमल लोचना पांचों कन्या उसने राजाओं को व्याहदी और पुत्रों को बांटकर अलग अलग राज्य देदिया पुनः कभी वह राजा अपनी प्रियपत्नी के पीवरी के साथ रात्रि में सोगया १०।।११।।१२ १३।।१४।१५।१६।। शयन से उठकर मथुरा तथा संयमन तीर्थ का स्मरण कर वह राजा बार २ हाय हाय करने लगा तब वह उसकी रानी पीवरी

कहने लगी हे नृप यह क्या कह रहे हो ! प्रिया के वचन सुनकर राजा कहने लगा कि मत्तप्रमत्त तथा सोया हुआ मनुष्य असम्बद्ध भाषण करता है अतः निद्रावश होकर के मैंने जो कुछ भी कहा है उसे न पूछिये ॥१७॥१८॥१९॥ पीवरी ने कहा-यदि मैं आपकी प्यारी हूं तो वह मुझे सुनायिये जो कि आपने हाय हाय शब्द किया है, यदि नहीं कहते हैं, तो मैं अभी प्राण त्याग करती हूं ॥२०। प्रिया के वचन सुनकर राजा कहने लगा कि, यदि अवश्य कहना ही है तो मथुरा पुरी में चलिये हे शुभानने ! वहां जाकर यथा तत्व से कहूँगा हे सुलोचने ! ब्राह्मणों को विपुल दान दीजिये हे प्रिये ! पुत्र तथा दौहित्रों को अपने राज्य में स्थापित करके ग्राम खजाना रत्न तथा पुत्रों को बार बार देख कर पुरवासी जनों को सम्मान पूर्वक कहने लगा कि पितृ पैतामहादियों के राज्य का यथा क्रम पालन कीजिये । २१। २२॥२३॥२४॥ यदि आपको ठीक लगे तो मैं पुत्रों को राज्य में नियुक्त करता हूं राज्य पुत्र कलत्र तथा बन्धु वर्ग को लोक नित्य चाहते हैं अन्यथा यम को नहीं चाहते हैं एवम् प्रकार जानकर अपना हित करना चाहिये अतः सर्व प्रयत्न से मथुरा पुरी को चलें अहो ! बड़ा कष्ट है जोकि मैंने पहिले राज्य ग्रहण किया है ॥२५॥२६॥२७॥ इस समय मैने जान लिया है कि त्याग से बढ़कर अन्य किसी में सुख नहीं है विद्या के समान चक्षु नहीं चक्षु के समान दूसरा बल नहीं है ॥२८॥ राग के समान दूसरा दुख नहीं है त्याग से बढ़कर दूसरा सुख नहीं है जो काम से सब कुछ करता है और जो केवल त्याग करता है प्रायः करके सब कामों में त्याग करना ही श्रेय है अपने ज्येष्ठपुत्र को राज्य में अभिषिक्त कर और सब को अनुयुक्त कर पुरवासी लोगों को देख चतुरंग सेना सहित बहुत समय में मथुरा पुरी में पहुँचा॥२९॥३०॥३१॥ उसने वह मथुरा पुरी अति रमणीय इन्द्र पुरी के समान देखी वह मथुरा पुरी बारह तीर्थों से युक्त शुभ पुण्य दायक तथा पाप हरने वाली थी ॥३२॥ रम्य मधुवन नाम विष्णु स्थान को देखा उस मधुवन को देखकर मनुष्य कृत कृत्य होजाता है ॥३३॥ भादों महीने की शुक्ल पक्ष की

एकादशी दिन वहां स्नान करने से मनुष्य कृत्य कृत्य हो जाता है ३४॥ तीसरा उत्तम कुन्दवन है वहां जाने से मनुष्य कृत्य कृत्य हो जाता है ॥३५॥ जो मनुष्य भादों कृष्ण एकादशी दिन वहां स्नान करता है वह रुद्र लोक में जाता है ॥३६॥ वनों में उत्तम चौथा काम्यक नाम का वन है हे देवि! वहां जाने से मनुष्य मेरे लोक को प्राप्त करता है ॥३७॥ वहां के निर्मल कुण्ड में स्नान करने से मनुष्य सर्व पापों से मुक्त होता है और जो वहां प्राणत्याग करता है वह मेरे लोक में जाता है ॥३८॥ पांचवां वनों में उत्तम वन वकुल नाम का वन है हे देवि! वहां जाने से मनुष्य अग्निलोक को जाता है। ३९॥ देवताओं को भी दुर्लभ यमुना के परले पार छटा बन भद्रवन है ॥४०॥ हे वसुधे! वहां जाकर जो मनुष्य मेरे कर्म परायण होता है उस वन के प्रभाव से वह मनुष्य नाग लोक में जाता है।४१॥ हे भूमे! सातवां खादिर नाम वन लोक विख्यात है वहां जाने से मनुष्य लोक को प्राप्त करता है। ४२॥ अठवां महावन नाम का वन मुझे नित्यप्रिय है उस वनमें जाने से मनुष्य इन्द्रलोक को प्राप्त करता है ॥४३॥ लोहजंघ से रक्षित नौवां लोहाजंघ नाम का वन है वह सर्वपातकों का नाश करने वाला है। ४४ दशवां देव पूजित बिल्ववन नाम का वन है वहां जाने से मनुष्य ब्रह्म लोक को प्राप्त करता है ॥४५॥ ग्यारहवां योगियों को प्रिय लगने भाण्डीर नाम का वन है उस वन के देखने ही मात्र से मनुष्य गर्भ

अथ: एक सौ चौवनवाँ अध्याय

दोहा:— एक सौ चौवन में अब, कहें वराह भगवान्।
यमुना का प्रभाव सकल, पुरी के दरम्यान॥

अथ यमुना तीर्थ प्रभाव:— श्री वाराह ने कहा– एवम् प्रकार की मथुरा पुरी को देख कर, वे दोनों दम्पती प्रसन्न हुये। हे वसुन्धरे ! एवम् उस राजा के मथुरापुरी में निवास करने पर, उसकी भार्या उस पूर्वोक्त गुप्त बात को पूछने लगी, जो कि नगर में रहते हुये राजा ने कहा था कि इस रहस्य को मथुरा में जाकर कहूंगा। हे महाराज ! वह रहस्य कहिये जो कि आपने पहिले कहा था। राजा ने कहा– जो तूने मुझे पहिले कहा था उस गुप्त रहस्य को तू ही प्रथम मुझे सुना दे, पुनः मैं भी अपने गुप्त रहस्य को सुनाऊंगा। इस प्रकार कहने पर, गुण वाली पीवरी जानकर हँसकर कहने लगी कि मैं तो गङ्गा तीर निवासिनी पीवरी नाम वाली कुमुद मास की द्वादशी दिन इस पुरी को देखने आई थी, नौका में चढ़कर जा रही थी कि यमुना जल में गिर पड़ी हूँ॥१॥२॥३॥४॥५॥६॥ और शीघ्र मर गई, उस तीर्थ के प्रभाव से हे राजन्! मैं काशीराज की कन्या हुई हूँ॥७॥ तथा आपके साथ विवाहित हुई हूँ पूर्व जन्म की स्मरण शक्ति मुझे बनी रही, धारापतनक तीर्थ में प्राण त्याग कर इस तीर्थ के प्रभाव से मैं धर्म युक्ता हुई हूँ। एवम् प्रकार अपनी रानी का कहा सुनकर राजा ने भी अपने पहिले जन्म की कथा जो कि संयन तीर्थ में हुयी थी वह सब कथा अपनी रानी को कह सुनाई एवम् वे दम्पती मथुरा पुरी को प्राप्त कर यमुना में स्नान करके नित्य मेरा दर्शन करते हुये, वहीं मर गये। सब कुछ त्याग कर मरने के पश्चात वे मेरे लोक में गये हैं॥८॥९॥१०॥११॥ हे देवि! धारापतनक नाम तीर्थ में प्राण त्याग करने से जो महान अचम्भा हुआ है वह तुझे सुना दिया है वहां पर प्राण त्याग करने से मनुष्य सर्व पाप मुक्त हो स्वर्ग जाता है जो पुरुष यमुनेश्वर तीर्थ में प्राण त्याग करता है वह विष्णुलोक में जाता है और दिव्य मूर्ति चतुर्भुज रूप होता है धारा-

पतनक में स्नान करने से पुरुष स्वर्ग में जाता है।१२।१३।१४। और जो नर इसमें प्राण त्याग करता है वह मेरे लोक में जाता है इससे आगे तीर्थ है जिसमें स्नान करने से स्वर्ग मिलता है तथा प्राण त्याग करने से मुक्ति मिलती है एक समस्त पापों को हरने वाला घण्टाभरणक तीर्थ है।१५।१६ जिसमें स्नान करने से मनुष्य सूर्यलोक में जाता है और जो नर प्राण त्याग करता है वह मेरे लोक में जाता है॥१७॥ हे वसुन्धरे! पुनः और भी कहता हूँ उसे सुनिये। ब्रह्मलोक में भी विख्यात तीर्थों में उत्तम तीर्थ को सुनिये वहां स्नान कर. वहां का जल पीकर नियत तथा नियताशन हो, ब्रह्मा की आज्ञा से मेरे लोक में जाता है॥१८॥१९॥ पवित्र यमुनाजल वाले, सोम तीर्थ में जहां कि द्वापर युग में चन्द्रमा मुझे देखता है वहां जो नर स्वकर्म परायण हो स्नान करे वह निश्चय से सोम लोक में जाता है।२०।२१॥ और जो नर सोम में प्राण त्याग करता है वह मेरे लोक में जाता है सरस्वती का पतन याने प्रवाह समस्त पाप हरने वाला है॥२२ वहां पर स्नान करने से अवर्ण मनुष्य भी यति होता है पुनः माथुर मन्डल में और भी वर्णन करता हूँ।२३। तीन रात्रि निवास कर जो नर वहां स्नान करता है वह स्नान मात्र से ही ब्रह्म हत्या से मुक्त होता है। ॥२४॥ और जो नर इस तीर्थ में प्राण त्याग करता है वह मेरे लोक में जाता है ऋषियों से सर्वदा हर्ष से पूजित दशाश्वमेध तीर्थ है। जो वहां स्नान करता है उसको स्वर्ग दुर्लभ नहीं है मथुरा के पश्चिम पार्श्व में नित्य ऋषि वृन्द से पूजित मानस नाम का तीर्थ है यह तीर्थ ब्रह्मा ने सृष्टिकाल में मन से निर्मित किया है।२५।२६।२७। उस मानस तीर्थ में स्नान करने से मनुष्य स्वर्ग जाता है तथा प्राण त्याग करने से उत्कृष्ट

वह मेरे लोक में जाता है ॥२८॥२६। ३०॥३१॥ उससे आगे परम प्रधान कोटि तीर्थ है वहां स्नान करने से कोटि गायों के दान का फल मिलता है ३२॥ और जो लोभ मोह रहित होकर इस तीर्थ में प्राण त्याग करता है वह सोम लोक का अतिक्रमण कर मेरे लोक में जाता है ॥३३॥ यहां से अर्द्ध कोश की दूरी पर दुष्कर शिव क्षेत्र हैं वहां स्थित होकर महादेव सर्वदा मथुरापुरी की रक्षा करते रहते हैं ॥३४॥ वहां स्नान पान करने से माथुर फल मिलता है तथा प्राण त्याग करने पर मेरे लोक की प्राप्ति होती है ॥३५॥ इति श्री वाराह पुराणे मथुरा माहात्म्ये यमुना तीर्थ प्रभावो नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् चतुष्पञ्चाशदधिक शततमोऽध्याय ॥१५४॥

अथ एक सौ पचपनवाँ अध्याय

दोहा:— एक सौ पचपन में अब, कहैं सकल समुझाय ।
प्रभाव अक्रूर तीर्थ अरु, तस पूजा विधि गाय ॥

अथ अक्रूर तीर्थ प्रभावः— श्री वाराह ने कहा— पुनः मर्त्य लोक में दुर्लभ अन्य परम विख्यात अनन्त अचल भव अव्यय तीर्थ वर्णन करता हूं ॥१॥ हे देवि ! मैं लोक भलाई के लिये नित्य उस तीर्थ में रहता हूं वहां मेरा दर्शन करके मनुष्य भव सागर पार होते हैं। ॥२॥ अयन में, विषुव में, विष्णुपदी में जो मनुष्य उस अनन्त का दर्शन करता है वह सर्व पातकों से छूट जाता है ।३॥ हे वसुन्धरे ! अक्रूर नाम से विख्यात मेरा क्षेत्र है हे महाभागे ! वहां पर जो सूर्य ग्रहण में स्नान करता है वह नर राजसूय तथा अश्वमेध यज्ञ के फल को प्राप्त करता है अक्रूर तीर्थ तीर्थराज है गुप्तों में परम गुप्त है ॥४॥ वहां स्नान करने से प्रयाग स्नान का फल मिलता है हे वसुन्धरे ! इस अक्रूर तीर्थ की पुरातन कथा सुनिये ॥६॥ धन धान्य पुत्र परिवार युक्त सुधन नाम का एक मेरा भक्त था बन्धु पुत्र कलत्र होने के कारण उसकी घर में भी अत्यन्त प्रीति थी । हे वसुन्धरे ! वह अपने परिवार समेत मेरी भक्ति परायण था । ७॥८॥ दिन, महीने, सम्वत्सर व्यतीत होते गये, वह धनोपाय से घर का कारोबार चलाता गया ॥६॥ मान-

कूट तुलाकूट, वह कभी नहीं करता था एवं प्रकार निवास करते उसको बहुत वर्ष हो गये ॥१०॥ वह नित्य सुगन्धित चन्दन से पुष्प, दीप, प्रदान से हरि पूजन करता था ॥११॥ नैवेद्य धूपादि से पूजन करता था दोनों पक्ष की एकादशी दिन उपवास तथा रात्रि में जागरण करता था और यथा समय में अक्रूर तीर्थ में आकर नाचता था। वह सुधन नाम का श्रेष्ठ वणियां कदाचित् रात्रि के जागरण में जारहा था कि उसको रास्ते में ब्रह्म राक्षस ने पकड़ लिया कृष्ण वर्ण, बड़े शरीर वाले ऊर्द्धकेश भयङ्कर ब्रह्मराक्षस ने उसे पैर से पकड़ कर यह वचन कहा कि हे वणिक्श्रेष्ठ ! मैं राक्षस हूं और जंगल में रहता हूं आज तुम्हे खाकर तृप्ति को प्राप्त हूंगा ॥१२॥१३॥१४॥१५ ।१६॥ ॥१७॥ सुधन ने कहा- क्षण भर ठहरिये मैं आपको अपना शरीर अर्पण कर दूंगा। मिठाई से बढ़े हुये मेरे शरीर को खावोगे- हे राक्षस ! मैं देव देव का जागरण करना चाहता हूं मेरा सार्वकालिक व्रत है जिससे कि मैं हरि के सामने जागरण करता हूं मैं वहां जागरण करके प्रभात सूर्योदय के समय शीघ्र आपके पास आऊँगा। तब आप जागरण से निवृत्त हुये मेरे गात्र को खावोगे मैंने सर्वकामना पूर्ण करने वाला यह व्रत विष्णु तुष्टि के लिये किया है ॥१८॥१९॥ ।२०॥२१॥ हे राक्षस ! मेरा नारायण का व्रत भंग न कीजिये, जागरण से निवृत्त होने पर यथेच्छ मुझे भक्षण कर लेना ॥२२॥ सुधन के वचन सुनकर भूख से पीड़ित ब्रह्मराक्षस वणियां से आदर के साथ मधुर वचन बोलने लगा हे साधो ! तू झूठ बोलता है तू पुनः कैसे लौट आयेगा राक्षस के मुख से भ्रष्ट होकर फिर कौन वापिस आता है ॥२३॥२४॥ राक्षस के वचन सुनकर सुधन ने कहा- सर्व जगत् का मूल सत्य है सब सत्य ही में प्रतिष्ठित है।२५। वेद के पारंगत ऋषि भी सत्य से ही सिद्धि प्राप्त करते हैं यदि मैं वणियां भी हूं तो भी कर्म से दूषित नहीं हूं।२६। मैंने विहित अन्तरात्मा से मानुष भाव प्राप्त किया है हे राक्षस मेरी प्रतिज्ञा सुनिये जिससे कि मैं फिर वापिस आ जाऊं।२७। वहां नृत्य कर पुनः वापिस आऊंगा मैं झूंठ नहीं कहता

हूं २८॥ सत्य मे कन्या प्रदान करते हैं ब्राह्मण सत्य कहते हैं सत्य से राजा होते हैं सत्य से पृथ्वी धारण की है सत्य से स्वर्ग मिलता है सत्य से मोक्ष होता है सत्य से सूर्य तपता है सत्य से चन्द्र प्रकाशित रहता है ॥२९॥३०॥ यम सत्य से जन्तुओं को हरण करता है सत्य से इन्द्र इन्द्रपदारूढ़ है यदि मैं वापिस न आऊँ तो मेरा वह सत्य नष्ट होवे ॥३१॥ काम मोह से पीड़ित होकर जो परदारा से गमन करता है यदि मैं वापिस न आऊँ तो वही पाप मेरे ऊपर लगेगा ॥३२॥३३। जो भूमिदान देकर अपकार करता है यदि मैं वापिस न आऊँ तो मेरे ऊपर वही पाप लगेगा ॥३४॥ पहिले स्त्री के साथ भोग कर रति क्रीड़ा विहारादि सुख प्राप्त करे और पुनः कदाचित् द्वेष से उसको त्याग कर देवे तो उसको जो दोष होता है, मेरे पुनः वापिस न आने पर मेरे ऊपर भी वही दोष लगेगा ॥३५॥ जो एक पंक्ति के खाने वालों में पंक्ति भेद करता है उसी पाप से मैं भी लिप्त हूंगा यदि मैं तेरे सामने वापिस नही आऊँगा तो ॥३६॥ जो अमावस्या के दिन श्राद्ध करके स्त्री गमन करता है यदि मैं पुनः वापिस न आऊँ तो मेरे को भी वही पाप होगा ॥३७॥ अष्टाष्टमी अमावस्या उभय पक्ष की चतुर्दशी दिन जो स्नान नहीं करते उनको जो पाप लगता है यदि मैं वापिस न आऊँ तो मुझे भी वही पाप लगेगा ॥३८। गुरु भ्राता पुत्र, मित्र मामा की स्त्री से जो मोहित होकर व्यभिचार करता है उनको जो पाप लगना है मुझे भी वही पाप लगे राजपत्नी ब्रह्मपत्नी और विधवा स्त्री से जो गमन करता है यदि मैं वापिस न आऊँ तो मुझे भी वही पाप लगेगा जो मनुष्य एक बार कन्या देकर पुनः दूसरे को देवे तो यदि मैं वापिस न आऊँ तो मुझे भी वही पाप लगे यदि मैं वापिस न आऊँ तो मेरे ऊपर राजयाजक या ज्यों का पाप लगे ग्रामयाजकों का पाप लगे ॥३९॥४०।४१।।४२॥ ब्रह्मघ्न सुराप चोर भग्नव्रत शठ को पाप गति मिलती है यदि मैं वापिस न आऊँ तो मुझे भी वही गति मिले श्रीवराह ने कहा-सुधन के वचन सुनकर ब्रह्मराक्षस सन्तुष्ट हो सुधन से मधुर वाक्य कहने लगा

कि शीघ्र चले जायिये आप को नमस्कार हो ब्रह्मराक्षस के वचन सुनकर सुधन दृढ़निश्चय होकर मेरे सामने जागरण कर नाचने लगा तदनन्तर प्रभात समय नृत्य कला कुशल सुधन बार २ नमो नारायणाय उच्चारण कर जागरण से निवृत्त हो यमुना में स्नान कर दिव्यरूप मेरा दर्शन कर मथुरा पुरी जाने को उद्यत हुआ और उसने आगे से दिव्यरूप वाले मेरे पुरुष रूप को देखा ॥४३॥४४॥४५॥ ४६।४७ ॥४८॥ और मैंने सुधन से कहा कि तू कहां जारहा है मुझ पुरुष रूप का वचन सुनकर सुधन बोला मैं शीघ्र ब्रह्मराक्षस के समीप जारहा हूं तब दिव्य पुरुष ने कहा कि वहां नहीं जाना चाहिये ।४६॥५०॥ जीता रहने पर धर्म है माहात्म्य है और मरने पर कहां धर्म है कहां यश है पुरुष के वचन सुनकर सुधन कहने लगा ॥५१॥ राक्षस के पास सत्य की सौगन्ध खाकर मैं यहां आया हूँ अतः मैं अवश्य उसके पास जाऊँगा जागरण तथा नृत्य के आवश्यकीय व्रत होने से मैं शपथ खाकर यहां आया था अब वहां जाता हूं लोकनाथ विष्णु के जागरण से निवृत्त होकर अब मेरा शरीर राक्षस की भूख मिटाने के लिये है इस प्रकार बात चीत करके सुधन ब्रह्मराक्षस के सामने जाकर कहने लगा यथान्याय विधान से जैसा आपको ठीक लगे मुझे भक्षण कीजिये हे राक्षस ! मैं झूठ नहीं बोलता हूँ हे दारुण ब्रह्मराक्षस ! उसी सत्यता से आप मुझे भक्षण कीजिये तदनन्तर सुधन के वचन सुनकर ब्रह्मराक्षस मधुर वाक्य बोलने लगा कि मैं आपके ऊपर प्रसन्न हूँ आपने सत्यधर्म का पालन किया है ॥५२॥५३ ॥५४॥ ५५॥५६॥ तू वणियां होकर भी अति विज्ञ है जो कि तेरी इस प्रकार की बुद्धि है मुझे समस्त जागरण का पुण्य दीजिये ॥५७॥ जिससे कि सत्य के पुण्य प्रभाव से मैं मुक्ति को प्राप्त करलूं सुधन ने कहा–हे राक्षस ! मैं जागरण तथा नृत्य का फल तुझे नहीं दूंगा मेरा आधा प्रहर अर्ध प्रहर का फल भी तुझे नहीं दूँगा सुधन का वचन सुनकर ब्रह्मराक्षस ने कहा कि हे श्रेष्ठ वणिये ! एक नृत्य का फल मुझे दीजिये सुधन ने कहा–मैं तुझे पुण्य नहीं दूँगा अपना कहा करले ॥५८॥५६॥६०॥ किस कर्म दोष से तू ब्रह्मराक्षस हुआ

हे महाभागे ! जो गुप्त बात है वह सब कहिये सुधन के वचन सुनकर ब्रह्मराक्षस हंसकर कहने लगा क्या तू मुझे जानता है मैं तेरा प्रतिवासी हूँ अग्निदत्त नाम का मैं छान्दस ब्राह्मण था सर्वदा परकीय ईंटों को हरण करता था सुगृह कामना से मैं मरकर ब्रह्मराक्षस हुआ हूं अब मैंने तुझे प्राप्त कर लिया है अतः मेरा उपकार कीजिये ॥६१॥६२ ६३॥ ६४। हे श्रेष्ठ वणिये ! एक विश्राम का पुण्य मुझे दीजिये कृपायुक्त हो वणियां कहने लगा हे राक्षस ! ठीक है अच्छा एक नृत्य का फल मैंने तुझे देदिया है एक नृत्य के प्रभाव से राक्षस मुक्त होगया ॥६५॥ ६६॥ श्रीवराह ने कहा हे देवि ! तब सुधन आगे से खड़े हुये विश्वरूप जनार्दन भगवान् को देख कर प्रणाम करने लगा तब देवदेव जनार्दन ने कहा चतुर्भुज दिव्यतनु शंख चक्र गदाधर ने कहा कि विमान में चढ़कर मेरे लोक में जायिये ऐसा कह माधव भगवान वहीं अन्तरध्यान होगये सकुटुम्ब शरीर सहित सुधन विमान में चढ़कर विष्णुलोक में गया ॥६७॥६८॥६६ ।७०॥ हे वसुन्धरे ! यह तीर्थ प्रभाव तुझे सुना दिया है अक्रूर तीर्थ के बराबर कोई दूसरा तीर्थ न है और न होगा ७१॥ उस तीर्थ के प्रभाव से सुधन मुक्त हुआ है कुमुद महीने की शुक्ल द्वादशी दिन जो यहां स्नान करता हे उसको राजसूय का फल मिलता है हे वसुन्धरे ! कार्तिकी को प्राप्त कर जो इस तीर्थ में वृषोत्सर्ग करता है वह अपने समग्र कुलका उद्धार करलेता है और जो मनुष्य कार्तिकी के दिन नियत चित्तसे इस तीर्थ पर स्नान करता है उसने मानो हमेशा के लिये पितरों को तृप्त कर लिया है ॥७२॥७३॥७४॥७५ इति श्रीवराह पुराणे मथुरामाहात्म्ये अक्रूर तीर्थ प्रभावो नाम काशीरामशर्मा कृत भाषाटीकायां पञ्चपंचाशदधिक शततमोऽध्यायः ॥१५५॥

अथ एक सौ छप्पनवां अध्याय

दोहा—इक सौ छप्पन में कहें मथुरा प्रादुर्भाव ॥
धरणी से समुझाय कर, श्रीवराह हरिराव ॥

अथ मथुराप्रादुर्भावः—श्रीवराह ने कहा–अब वत्सक्रीडनक नाम परम

विख्यात तीर्थ कहता हूँ वहां रक्तशिलावद्ध रक्तचन्दन भूषित मेरी मूर्ति है ॥१॥ वहां पर स्नान करने से मनुष्य वायु लोक में जाता है और जो यहां पर प्राणत्याग करता है वह मेरे लोक में जाता है ।।२।। हे वसुन्धरे ! पुनः ौर भी सुनाता हूँ उसे सुनिये एक परम विख्यात भाण्डीरक तीर्थ है ।३।। वह तीर्थ साल, ताल, तमाल, अर्जुन, इंगद पीलुक करीर तथा रक्त पुष्प वाले वृक्षों से अति रमणीय है उस भाण्डीरक तीर्थ में जो मनुष्य नियत नियताशन होकर स्नान करता है वह सर्वपाप मुक्त हो इन्द्रलोक जाता है ।।४।।५।। और जो नर वहां प्राणत्याग करता है वह मेरे लोक में जाता है पुनः और भी कहता हूं कि मेरा वृन्दावन क्षेत्र है वहां मैं गो, गोपालों के साथ क्रीड़ा करूँगा वह क्षेत्र रम्य है विख्यात है तथा देवताओं को भी दुर्लभ है ।७।। हे महाभागे । उस बहुगुल्मलताओं से घिरे कुण्ड में जो मनुष्य एक रात्रि निवास करके स्नान करता है ।।८।। वह मनुष्य गन्धर्व तथा अप्सराओं के साथ क्रीड़ा करता है और जो यहां पर प्राण त्याग करता है वह मेरे लोक में जाता है ।।६। अब उस वृन्दावन तीर्थ में अन्य महापातक नाशन तीर्थ कहता हूं जहां पर कि केशी नाम का राक्षस मार गिराया था ।।१०।। जहां पर केशी मारा गया वहां पर तीर्थ मे सौ गुणा पुण्य है तथा केशी स्थान से सौ गुणा पुण्य जहां पर हरि विश्राम करते हैं वहां पर है अतः उससे सौ गुणा पुण्य है इसमें समालोचना नहीं करनी चाहिये हे वसुन्धरे ! उस केशी तीर्थ में भी विशेषता है ।।११।।१२।। उस तीर्थ में पिण्ड दान देने से गया के बराबर फल मिलता है स्नान दान तथा होम करने से अग्निष्टोम यज्ञ का फल प्राप्त होता है ।।१३।। हे वसुन्धरे ! द्वादश दित्य नाम वाले सूर्य्य तीर्थों मे यमुना के निर्मल जल में कालीय नाग क्रीड़ा करता है ।।१४।। वहां मैने कालीय नाग को दमन कर आदित्य स्थापित किये हैं मैने आदित्यों मे कहा कि जो आपके मन में है वह वरदान मांगिये ।।१५।। आदित्यों

ने कहा–'हे देव ! यदि आप वरदान देते हो, और हम वरदान के योग्य हैं तो, इस श्रेष्ठ तीर्थ में हमें स्नान करने का अधिकार दीजिये ।।१६। आदित्यों के वचन सुनकर मैंने आपको वही वरदान दिया । हे वसुन्धरे उस तीर्थ में स्नान करने से मनुष्य सब पापों से मुक्त हो जाता है ।।१७।। और जो मनुष्य इस तीर्थ में प्राण त्याग कर देता है वह मेरे लोक में जाता है उत्तर में हरि देव का दक्षिण में कालीय का तीर्थ है । इन दोनों के मध्य में जो मरता है वह मुक्त हो जाता है । ।।१८।१६।। इति श्री वाराह पुराणे मथुरा महात्म्ये मथुरा प्रादुर्भावो नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् षट् पञ्चशदधिक शततमोऽध्याय ।।१५६।।

अथः एक सौ सत्तावनवाँ अध्याय

दोहाः— इक सौ सत्तावन में अब, इक है तीर्थ महान।
मलयार्जुन में स्नान कर, स्वर्ग करे पयान ।।

अथः मलयार्जुन तीर्थ स्नानादि प्रशंसा— श्री वाराह ने कहा– यमुना को मैं लाँघ कर उसके पार वहीं महामुनि का मलयार्जुनक तीर्थ है और वहां पर एक कुन्ड है ।।१।। वहां सकट है भिन्न- भाण्ड कुटी घट है वहां स्नान उपवास करने से अनन्त फल प्राप्त होता है।२। जेष्ठ मास शुक्ल पक्ष की द्वादशी में वहां स्नान करने से महापातक भी नष्ट हो जाते हैं ।३। जेष्ठ द्वादशी दिन जो जितेन्द्रिय मनुष्य उस तीर्थ में स्नान करके मथुरा में हरि का दर्शन करता है वह परम गति को प्राप्त करता है ।।४।। यमुना जल में स्नान करके पवित्र हो जो जितेन्द्रिय नर अच्युत भगवान की विधि विधान से पूजा करता है वह परम गति को प्राप्त करता है । ।।५ हमारे कुल में पैदा हुआ कोई यमुना जल में स्नान कर मथुरा में उपवास कर गोविन्द भगवान की पूजा करेगा । इस प्रकार परलोक में गये हुये पितर निरप कहते रहते हैं । जेष्ठ महीने की द्वादशी में जो मनुष्य जनार्दन की पूजा करके यमुना में पिण्ड दान करेगा वह धन्य होगा, वहीं बहुल वन नाम वाले महातीर्थ में स्नान करने से मनुष्य

रुद्र लोक में जाता है हे वसुन्धरे ! चैत्र महीने की शुक्ल पक्ष द्वादशी में जो महातीर्थ में स्नान करता है वह निःसन्देह मेरे लोक में जाता है यमुना के पर्लीपार भान्ड ह्रद नाम दुर्लभ तीर्थ है ।६॥७॥८॥९॥१०। वहाँ दिन दिन शुभकारी आदित्य दिखाई देते हैं वहां अर्क स्थल नाम वाले कुन्ड में जो मनुष्य स्नान करता है वह सब पापों से मुक्त होकर सूर्य लोक में जाता है। ॥११॥१२॥ अर्क स्थल के समीप निर्मल जल वाला सत सामुद्रिक नाम का कूप है वह देवताओं को भी दुर्लभ है । उस कूप में स्नान करने से मनुष्य स्वेच्छाचारी होता है और प्राण त्याग करने से विष्णु लोक में जाता है ॥१३॥१४। वहीं मेरा गुप्त वीरस्थल नाम का क्षेत्र है उसके नजदीक कमल जाति फूलों से सुशोभित जल है जो मनुष्य एक रात्रि निवास कर वीरस्थल क्षेत्र में स्नान करता है हे वसुन्धरे ! वह मेरे प्रसाद से वीरलोक में जाता है ॥१५॥१६॥ और जो इस क्षेत्र में प्राण त्याग करता है वह मेरे लोक में जाता है वहीं एक कुशस्थल नाम का क्षेत्र है उसमें स्नान करने से मनुष्य ब्रह्मलोक में जाता है और प्राण त्याग करने से विष्णु लोक में जाता है ॥१७॥१८॥ वहां एक अति उत्तम पुष्पस्थल नाम का शिव क्षेत्र है। वहाँ स्नान करने से मनुष्य शिव लोक में जाता है ॥१९॥ ये महापाप नाश करने वाले पांच देश प्रसिद्ध हैं उनमें स्नान करने से पुरुष ब्रह्मा के साथ सुख पूर्वक निवास करता है ।२०। वहां महापतक नाश करनेवाला गोपीश्वर नाम का क्षेत्र है। कृष्ण के रमण करने के लिये सोलह हजार रूप गोपियों के हुये वहां हरि के खेल में गोपियां थीं। जब कृष्ण ने बचपन में यमलार्जुन को उखाड़ डाला । सकटासुर को भेदन किया, घट भान्ड कुटीरक भेदन किये उन गोपियों ने यद्रिच्छा से क्रीड़ा करते हुये गोविन्द भगवान् की छाति से लगा कर धर्म से तथा व्याज से रक्षा की। वहां देवताओं के कहने के अनुसार मातली ने आकर गोप भेष धारी भगवान् कृष्ण का अभिषेक किया, रत्न तथा औषधियों से युक्त सात कलशों को लाकर गोपी मन्डल द्वारा सुवर्ण कुन्डल धारी कृष्ण का स्नान

करवाया । उस समय कृष्ण कृष्ण कहती हुई गोपियां नाचती तथा गान करती थीं . २१॥२२॥२३ २४ २५॥२६॥ उस स्नान पर मातली ने गोपीश्वर की स्थापना की, तथा मांगल्य शुभ कलशों से कूप की स्थापना की । हे वसुन्धरे ! गोपीश्वर देव के सामने निर्मल जल वाला सप्त सामुद्रिक नाम का कुआ है, जिसके माहात्म्य से गोपाल तथा पितर भी उसके पानी को तथा उस स्थान में दिये गये पिन्डों की प्रशंसा करते रहते हैं । सप्त सामुद्रिक कूप में जो श्राद्ध करता है वह सतहत्तर कुल के पितरों का उद्धार करता है जो मनुष्य सोमावती अमावस्या के दिन इस कूप में पिण्ड दान करता है उसके पितर करोड़ों वर्ष तक तृप्त होते हैं, गोविन्द देव तथा गोपीश्वर के मध्य में जो मरता है वह इन्द्र लोक में जाता है । तथा वहुल रुद्र और गोविन्द के मध्य से तद्गत गोपीश के मध्य में जो मरता है वह ब्रह्म लोक जाता है । हे वसुन्धरे ! इनमें स्नान दान तथा पिन्ड प्रदान करने से मनुष्य इक्कीस कुल के पितरों को तार देता है। इसमें स्नान करने से मनुष्य स्वर्ग लोक में देवताओं के साथ सुख पूर्वक निवास करता है । ॥२८॥२६॥३०॥३१॥३२॥३३॥३४॥ और जो मनुष्य इन तीर्थों में प्राण त्याग करता है, वह मेरे विष्णु लोक में जाता है परम उत्तम वसु पत्र नाम महा तीर्थ है ॥३५॥ मथुरा के दक्षिण भाग में फाल्गुनक तीर्थ है वहां स्नान पान करने से पुरुष परलोक जाता है । उस परम दुर्लभ फाल्गुन तीर्थ में मेरा वृष भाञ्जनक नाम का दुर्लभ क्षेत्र है । जो उस क्षेत्र में स्नान करता है वह देवताओं के साथ सुख पूर्वक निवास करता है और जो वहां प्राण त्याग करता है वह विष्णु लोक जाता है ॥३६॥३७॥३८॥ धेनुकासुर से रक्षित तालवन नाम क्षेत्र मथुरा से पश्चिम की ओर अर्द्ध योजन की दूरी पर है। वहां नीले कमलों से सुशोभित निर्मल जल वाला कुन्ड है उसमें स्नान तथा दान करने से वाञ्छित फल मिलता है ॥४६॥५०। एक सम्पीठक नाम का क्षेत्र है वहां निर्मल जल का कुण्ड है। जो पुरुष एक रात्रि निवास कर उस कुन्ड में स्नान करते हैं। वे अग्नि

स्टोम यज्ञ के फल को प्राप्त करते हैं ॥४१॥४२॥ तथा जो नर इस कुन्ड में प्राण त्याग करता है वह मेरे लोक में जाता है देवकी के गर्भ से वसुदेव के घर में वहां मैंने पैदा हो पुन्य मे सूर्य की आराधना की है मैंने रूपवान गुणवान पुत्र प्राप्त किया है वहीं पद्म हस्त दिवाकर देखा है हे देवि ! भाद्रपद महीने में कृष्ण पक्ष की सप्तमी तिथि में तिग्म तेजा सूर्य नित्य रहता है जो उस दिन उस कुन्ड में सावधान होकर स्नान करता है उसको कोई भी वस्तु सूर्य के प्रभाव से दुर्लभ नहीं है । हे वसुन्धरे ! रविवार की सप्तमी तिथि में जो स्त्री अथवा पुरुष इस कुन्ड में स्नान करता है वह समग्र फल को प्राप्त करता है । पहिले राजा सन्तनु ने आगे से सूर्य की स्थापना कर वहीं पर तप करके महा बलवान भीष्म नाम का पुत्र प्राप्त किया है उस भीष्म नाम के पुत्र को पाकर सन्तनु अपनी राजधानी हस्तिनापुर को गया है वहां पर स्नान दान करने से मन वांछित फल प्राप्त होता है । ॥४३॥४४॥४५॥४६॥४७॥४८॥४६॥५०॥ इति श्री वाराह पुराणे मथुरा माहात्मे गलयार्जुन तीर्थादि स्नानादि प्रशंसा नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् सप्त पञ्चशदधिक शततमोऽध्याय ॥१५७॥

अथ एक सौ अठावनवाँ अध्याय

दोहा:— इक सौ अठावन में अब, मथुरा प्रादुर्भाव ।
धरणी को समुझाय कर, कहि हैं वराह राव ॥

अथः मथुरा तीर्थ प्रादुर्भाव— श्री वाराह ने कहा— बीस योजन मेरा माथुर मण्डल है, वहां जिस किसी स्थान में भी स्नान करने से पुरुष सब पापों से मुक्त हो जाता है ॥१॥ जो हर्ष को बढ़ाने वाला स्थान है उस अति पुन्यदायक मेरे माथुर मन्डल में, वर्षा काल में निवास करना चाहिये मेरे शयन करने पर वर्षाकाल में सारे सात द्वीपों के पुन्य तीर्थ मथुरा में आकर निवास करते हैं शयन कर उठे हुये मुझको मथुरा में जो नर देखते हैं वे मुझे सर्वकाल में देखते हैं ।२।३।४। सोकर उठे हुये मेरे मुख पङ्कज को जो देखे वह सात जन्मों के पाप से मुक्त

होता है ॥५॥ मथुरा वासियों को मुक्ति मिलती है मथुरा में जाकर केशव भगवान् का दर्शन करके जो यमुना में स्नान करता है वह विष्णु लोक में जाता है वह मनुष्य राजसूय तथा अश्वमेध यज्ञ के फल को प्राप्त करता है ॥६॥७॥ जो मथुरा में केशव भगवान् की परिक्रमा करता है वह सप्तद्वीप वाली पृथ्वी की परिक्रमा का फल प्राप्त करता है ।८॥ हे वसुन्धरे ! जो मनुष्य केशव के सामने घृत पूर्ण पात्र तथा सब अंगों के वस्त्रों सहित दीपक दान करता है वह पांच योजन आयाम पांच योजन विस्तार तथा दीप माला से युक्त वाले विमान को प्राप्त करता है ।।६ १० । वह विमान अप्सराओं से सेवित रहता है सर्व कामनाओं से समृद्ध रहता है रमणीय मालाओं से व्याप्त तथा सर्व कामनाओं को पूर्ण करने वाले प्रभा मण्डल से मण्डित उस विमान में पूर्वोक्त दान करने वाला मनुष्य सर्वदा आरूढ़ रहता है और जितने देवता हैं गन्धर्व, सिद्ध, चारण, पन्नग उसकी पदवी को चाहते रहते हैं कि कब हम भी पृथ्वी में जन्म लेकर इस दान को करके इस पद में आरूढ़ होंगे यदि कालान्तर में उसका पुण्य क्षीण होजाय तो वह सज्जनों के घर में पैदा होता है पृथ्वी ने कहा--हे देव ! इस क्षेत्र की कौन रक्षा करता है पशु, भूत पिशाच, राक्षस, विनायक आदियों से आक्रुष्ट वह क्षेत्र फल को देने वाला होता है ॥११। १२॥१३॥१४ १५ । श्रीवराह ने कहा--वे पशु, भूत, पिशादि मेरे प्रभाव से कभी भी मेरे क्षेत्र को नहीं देखने हैं तथा मेरी भक्ति करने वाले प्राणियों का वे कभी भी अपकार नहीं करते हैं हे वरानने ! मैंने रक्षा के लिये दिग्पाल दिये हैं जो कि चार लोकपाल मेरे तीर्थ की हमेशा रक्षा करते रहते हैं पूर्व दिशा की इन्द्र रक्षा करता है यमराज दक्षिण दिशा की रक्षा करता है पश्चिम दिशा की रक्षा स्वयम् वरुण करता है उत्तर दिशा की रक्षा महाबल पराक्रम वाला कुबेर करता है तथा मध्य की रक्षा उमापति शिव भगवान् नित्य करते रहते हैं जो मनुष्य मथुरा में घर बनाता है और छत बनाता है वह चतुर्भुज रूप जानना चाहिये तथा वह जीवन मुक्त है ॥१६॥१७॥१८॥१६॥२०॥ हे महाभागे !

निर्मल जल वाले मथुरा के गम्भीर कुन्ड में सर्वदा चतुर्भुज रहता हैं हे वसुन्धरे ! जो मनुष्य उस कुन्ड में स्नान कर प्राण त्याग करता है वह विष्णु लोक में सुख पूर्वक क्रीड़ा करता है। हे वसुन्धरे ! उस कुन्ड में जो आश्चर्य हैं उसे सुनाता हूँ आप सुनिये हिमन्त ऋतु में उस कुन्ड का जल गरम रहता है, और ग्रीष्म में मेरे तेज से वर्फ के समान शीतल रहता है ॥२१॥२१॥२३॥२४। वर्षा ऋतु में न तो वढ़ता है, और न ग्रीष्म में घटता है यह उस कुन्ड में बड़ा भारी आश्चर्य है। हे वसुन्धरे ! मथुरा में पद पद में तीर्थ फल है वहां स्नान करने से मनुष्य सर्व पातकों से छूट जाता है वर्षा ऋतु में स्थूल तीर्थों में यत्न पूर्वक स्नान करना चाहिये। कूप में तालाव में छप्पर में गर्तों में, तथा नदियों में, प्रवाह में नदियों के दिव्य संगमों में वर्षा ऋतु के आने पर यत्न पूर्वक स्नान करने से परम गति मिलती है। ॥२५॥२६॥२७ २८॥ यहां एक मुचकुन्द नाम का परम दिव्य क्षेत्र है दानव असुरों को मारने वाला मुचकुन्द राजा यहां शयन करता रहता है। वहां के कुन्ड में स्नान करने से मनुष्य इच्छानुसार फल प्राप्त करता है और जो यहां पर प्राण त्याग करता है वह विष्णुलोक जाता है ॥२९॥३०॥ केशव भगवान के नाम कीर्तन करने से इस जन्म तथा अन्य जन्म के किये हुये सारे पाप शीघ्र नष्ट हो जाते हैं ॥३१॥ जिसकी भगवान् में भक्ति है उसे अनेक मन्त्रों से क्या प्रयोजन है हे देवि नरक यातना भोगते हुये की गति जनार्दन ही है। ।३२। हे देवि जो परिक्रमा करके नारायण के समीप विश्राम करता है वह अनन्त फल को प्राप्त करता है ॥३३॥ हे वसुन्धरे ! जो मनुष्य मथुरा पुरी में शयन करने से उठे हुये भगवान् का दर्शन करता है वह फिर जन्म नहीं लेता, अपित चतुर्भुज रूप होता है ॥३४॥ हे वसुन्धरे ! जो कुमुद मास की नवमी तिथि में भूमि की परिक्रमा करता है वह सर्व पापों से छूट जाता है ।३५। ब्रह्म हत्या वाला, मदिरा पीने वाला, गौ हत्या वाला, तथा भग्न व्रत वाला मनुष्य मथुरा की परिक्रमा करके पवित्र हो जाता है ।३६। अष्टमी तिथि में मथुरा में आकर दन्त

धावन पूर्वक कर्म करके ब्रह्मचर्य से उस रात्रि को संकल्प करके बितावे स्वच्छ वस्त्र पहिन मैंने व्रत धारण कर जो मनुष्य सब पातकों को हरने वाली परिक्रमा करता है वह मनोरथ पूर्ण करता है परिक्रमा करते हुये मनुष्य को यदि अन्य कोई स्पर्श कर लेवे तो, वह सब कामनाओं को प्राप्त कर देता है। मथुरा में जाकर जो स्वयंभुव भगवान् का दर्शन करता है वह मथुरापुरी की परिक्रमा का फल प्राप्त करता है ॥३७॥३८॥३९॥४०॥ हे वसुधे! भगवान् के सामने निर्मल जल वाला कूप है उसके पानी को तथा उसमें दिये हुये पिन्ड दान को पितर चाहते हैं। चतुःसामुद्रिक नाम तीर्थ तीनों लोकों में विख्यात है वहां स्नान करने से मनुष्य देवताओं के साथ क्रीड़ा करता है और जो मनुष्य वहां पर प्राण त्याग करता है वह विष्णु लोक में जाता है ॥४१॥४२॥४३॥ इति श्री वाराह पुराणे मथुरा माहात्मे मथुरा तीर्थ प्रभावो नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम अष्टमे चतुःशतकि शततमोऽध्याय ॥१५८॥

अथ एक सौ उनसठवाँ अध्याय

दोहाः— इक सौ उनसठ में कहें, श्री वराह भगवान।
मथुरापुरी परिक्रमा, समुझाय विधि विधान॥

अथ मथुरा प्रदक्षिण विध्यादिकम्— धरणी ने कहा— हे देव! हे जनार्दन! आपके प्रसाद से आपसे कहे तीर्थों का विस्तार मैंने खूब सुन लिया है ॥१॥ वह फल दान, तप, यज्ञों से नहीं मिलता है जो कि तीर्थ सेवा से भूमि की परिक्रमा से मिलता है। २॥ चतुरन्ता पृथ्वी का हरि के तीर्थ की परिक्रमा सर्व तीर्थों में गमन करना, मनु के लिये दुर्गतर है ।३। जिससे सम्यक् प्रकार प्राप्त किया जाय वह यदि कोई उपाय है तो प्रसन्नता से सुनाइये ।४। श्री वाराह ने कहा— हे भद्रे! महत्पुन्य सुनिये पृथ्वी में चारों ओर परिक्रमा करके जिस प्रकार मार्ग प्रमाण गणित शुभ फल मिलता है ।५। सम्यक् प्रकार भूमि की परिक्रमा में योजनों के प्रमाण साठ करोड़ हजार साठ करोड़ हों ये तीर्थ हैं और देवता हैं तथा नभ स्थल में तारागण हैं जगत् का

आयु वाले वायु से समस्त गिने हैं ६ ७। ब्रह्मा से लोमश ऋषि ने ही नारद ने, ध्रुव ने, जाम्बवती के पुत्र ने, रावण ने हनुमान ने वलि राजा ने सभागर वन पर्वत वाली पृथ्वी की वाह्यमण्डल की रेखा से अनेक वार परिक्रमा की है।८।९। अन्तर भ्रमण से महात्मा सुग्रीव ने, तथा पहिले देवेन्द्रों ने, पांच पाण्डुपुत्रों ने तथा कितने ही सिद्ध योगियों ने मार्कण्डेय प्रमुखों ने परिक्रमा की हैं अन्य न पहिले के और पीछे वाले परिक्रमा करेंगे।१०।११। अल्प सत्व वल तथा बुद्धि वाले प्राणि मन से भी परिक्रमा नहीं कर सकते हैं गमन की तो क्या गति है।१२। सप्तद्वीप वाली वसुन्धरा की परिक्रमा से जो फल होता है वह फल क्या उससे भी अधिक फल मथुरापुरी की परिक्रमा से मिलता है ॥१३॥ जो नर मथुरापुरी में जाकर सम्यक् प्रकार परिक्रमा करता है उसने मानो सात द्वीप वाली पृथ्वी की परिक्रमा करली है।१४। अतः सर्व कामनाओं की चाह वाला नर मथुरा में जाकर मथुरापुरी की प्रदक्षिणा यत्न से करे।१५। धरणी ने कहा— हे भगवन ! जिस विधि विधान से परिक्रमा करने पर जो फल प्राप्त होता है वह सुनाइये।१६। श्री वाराह ने कहा जो तू पूछती है यही बात प्रथम सप्तर्षियों ने ब्रह्मा से पूछी थी।१७। सर्व पुराणोक्त परम प्रधान तीर्थानुक्रमण सुनकर चतुरन्ता पृथ्वी की परिक्रमा कहने लगा।१८। सब वेदों का जो पुन्य है सब तीर्थों का जो फल है समस्त दानों तथा इष्टपूर्तादियों का जो पुन्य है। हे सप्तर्षियो उससे सौगुना पुन्य मथुरापुरी की परिक्रमा से होता है मैं यह सत्य कहता हूँ।१९ २०। ब्रह्मा के इस प्रकार कहने पर सप्तर्षि मथुरा में आकर अपना आश्रम निर्माण करने लगे ॥२१॥ और ध्रुव के सहित कुमुद मास के शुक्लपक्ष की नवमी तिथि की प्रतीक्षा करने लगे।२२।२३ इति श्री वाराह पुराणे मथुरा माहात्म्ये मथुरा प्रदक्षिणादिकम् नाम काशीराम

अथः एक सौ साठवां अध्याय

दोहाः— मथुरापुरी परिक्रमा, कीजिये विधि विधान।
सारी इलासेहु अधिक, फल कहि हैं भगवान् ॥

अथ मथुरा परिक्रमा प्रादुर्भाव— श्री वाराह ने कहा कार्तिक कृष्णअष्टमी

में मथुरा में जाकर विश्राम घाट पर स्नान करके पितृ देवार्चन करना चाहिये ।।१।। विश्रान्ति दर्शन करके केशव की पूजा करके मनुष्य परिक्रमा का फल प्राप्त करता है ।।२।। उपवास करे अल्प तथा हविष्यान्न भोजन करे तथा आत्म शुद्धि के लिये सायंकाल दातुन करके मनमें संकल्प कर उस रात्रि को ब्रह्मचर्य्य से रहकर व्यतीत करे प्रातःकाल स्नान करके शुद्ध वस्त्र पहिन कर मौनव्रत धारण करे ॥३॥४। तिल अक्षित कुशाओं को ग्रहण कर पितृ देवार्चन में उद्यत हो दीपक ग्रहण कर वन में जाकर विश्रान्ति जागरण में श्रान्त हो जिस प्रकार उन भृ्वादि ऋषियों ने परिक्रमा की है एवम् परम्परा से आई परिक्रमा मनुष्यों को करनी चाहिये भक्ति श्रद्धायुक्त होकर जो परिक्रमा करता है वह अश्वमेध यज्ञ के फल को प्राप्तकर सब कामनाओं को प्राप्त करता है एवम् अष्टमी के दिन जागरण करके नमवी प्रातः कालस्नानादि कृत्य से पवित्र होकर यात्रा करे ।।५।।६।।७।।८ सूर्य्योदय के पहिले यात्रा आरम्भ करनी चाहिये तथा प्रातःकाल दक्षिण कोटिक में स्नान करे हाथ पैर धोकर आचमन करके हनुमान की पूजा करके सर्व मंगल सिद्धि करतार यात्रा सिद्धि देने वाले ब्रह्मचारी कुमार की स्तुति गायकर कृत्य करे जिससे कि स्मरण मात्र से ही सारे उपद्रव नष्ट होजाते हैं जिस प्रकार रामकी यात्रा में आपने सिद्धि की है उसी प्रकार आज परिक्रमा करते मुझे सिद्धि प्रदान कीजिये ।।६।।१०।।११।।१२।। एवम् प्रकार विधिवत् दीप पुष्प उपहारों से हनुमान गणेश्वर की पूजा करके विसर्जन करे तथा भय को नाश करने वाले दीर्घ विष्णु पद्मनाभ की पूजा करे तदन्तर देवियों की पूजा करे अपराजिता वसुमति देवी को देख उसी प्रकार पूजा करे सर्व भयों को दूर करने वाली आयुधागार संस्था की पूजा करे तथा कंश वासनिका की पूजा करे तथा औग्र सेना चर्चिका वधूटी दानव क्षय कारिणी जयदा देव पूजिता देवताओं की माता गृहदेवियां वास्तुदेवियां इन सबकी आराधना पूजा दर्शनादि करके मौन व्रत धारण कर दक्षिण कोटिक में जावे वहां जाकर स्नान करके पितरों के तर्पण करके भगवान् को देख प्रणाम करे

॥१३॥१४॥१५॥१६॥१७॥१८॥ हे वसुन्धरे ! प्रणाम कर कृष्ण पूजित इत्तुवासा देवी के समीप जाकर पूजन करे भगवान् ने गोपालों के साथ खेल के बहाने जो किये थे महर्षियों ने वही तीर्थ स्थापित किये हैं और ये सब पाप हरने वाले तीर्थ ख्याति को प्राप्त हुये हैं तदन्तर सब पापों को हरनेवाले वत्सपुत्र तीर्थ में जावें अर्कस्थल में जावें वीर स्थल में जावें तदन्तर कुशस्थल में पुण्यस्थल में महास्थल में जावे वहां सर्व पाप हरण करने वाले ये पांच स्थल हैं जिनके दर्शन मात्र से ही मनुष्य ब्रह्म लोक में निवास करता है सिद्ध मुख शिव का दर्शन करके मनुष्य स्थलों के पुण्य को प्राप्त करता है ॥१९॥२०॥२१ ॥२२॥ तदनन्तर हय मुक्ति सिन्दूर ससहायक क्षेत्र में जावे ऋषियों से गायी हुई पुरातनी गाथा सुनी जाती है जहां उसी ने अश्वारूढ़ हो यह यात्रा की है वहां अश्वमुक्ति को प्राप्त हुआ तथा सहायकों के सहित राजपुत्र वहीं स्थित हुआ रथ में बैठकर यात्रा करना मुक्ति देने वाली नहीं होती है अतः फल की इच्छा वाला मनुष्य रथ में बैठकर यात्रा न करे उस तीर्थ में उसका दर्शन कर तथा स्पर्श कर मनुष्य पापों से बड़ा भारी फल मिलता है ॥२३॥२४॥२५॥२६॥ कृष्ण की मल्लिका का दर्शन करके जय की प्राप्ति होती है तदनन्तर कदम्ब खण्ड में जाने से सिद्धि प्राप्त होती है वहां योगियों से परिवारित चर्चिका योगिनी कृष्ण की रक्षा के लिये दक्षिण दिशा में स्थित है अस्पृश्या अस्पृशा लोक पूजित माता बालकों की महारक्षा करेंगी तदनन्तर पाप हरने वाले वर्ष स्नात कुण्ड में जाकर स्नान करके पितृ तर्पण करने से मनुष्य सर्व पापों से छूट जाता है ॥२७॥२८।२९॥ ॥३०॥ तदनन्तर क्षेत्र पाल में जाकर भूतेश्वर महादेव की पूजा करने से मथुरा पुरी की परिक्रमा सफल होती है ॥३१॥ कृष्ण के खेल का सेतुबन्ध महापातक नाश करने वाला है वह गदाधर भगवान् ने बालकों के खेल के लिये रचा था गोपालों के साथ भगवान् नित्य क्रीड़ा करने क्षणभर वहां जाते थे ॥३२।३३॥ वहीं जल क्रीड़ा से किया हुआ एक बलि हृद है जिसके देखने ही से

मनुष्य सब पापों से मुक्त होता है ॥३४॥ उससे परे कृष्ण ने कुकुर्यों के साथ खेल किया है उस स्थान के दर्शन मात्र से चण्ड मनुष्य भी शुभ गति को प्राप्त करता है ॥३५॥ सुगन्धि युक्त सुन्दर सिखर वाला स्तम्भोंच्चय स्थान है वहाँ पर अक्लिष्ट कर्म्मा कृष्ण ने उस स्तम्भ को भूषित तथा पूजित किया है उसकी प्रयत्न पूर्वक प्रदक्षिण तथा पूजा करके मनुष्य सर्व पापों से मुक्त हो विष्णु लोक में जाता है वसुदेव ने देवकी के गर्भ की रक्षा के लिये एकान्त शयन किया है वह स्थान महापातक नाश करने वाला है तदनन्तर मुक्ति की इच्छा से नारायण स्थान में जाकर नारायणादि देवताओं की परिक्रमा करे तदनन्तर विधि विनायक गण को देख प्रार्थना करे कुब्जिका वामना तथा कृष्ण पालित ब्राह्मणों की आराधना कर गतेश्वर शिव के स्थान में जावे वहाँ दर्शन मात्र से ही यात्रा का फल प्राप्त होता है महाविजेश्वरी देवी यात्रा की सिद्धि देने वाली है और वह क्षेत्र रक्षा के लिये स्थित है उसका दर्शन पूजन करने से मनुष्य पाप मुक्त होता है ॥३६॥३७॥ ३८॥३९॥४०॥४१॥४२॥ वहीं प्रभामली का दर्शन कर सब कामना पूर्ण होती है यहां विद्येश्वरी देवी कृष्ण रक्षा के लिये उद्यत रहती है वह सिद्धि को देने वाली पापनाशिनी महाविद्येश्वरी देवी नित्य समीप में स्थित रहती है कृष्ण बलभद्र ने तथा गोपालों ने कंश मारने की इच्छा से उस स्थान में सलाह पूर्वक संकेत किया है उस समय संकेतकों से वह सिद्धा देवी प्रतिष्ठित हुई है सिद्धि को देने वाली तथा भोग्य देने वाली है अतः उसका नाम सिद्येश्वरी कहा है तदनन्तर संकेतकेश्वरी का दर्शन कर सिद्धि प्राप्त होती है वहां महापातक नाश करने वाला स्वच्छ जल का एक कुण्ड है तदनन्तर गोकर्णेश्वर महादेव का दर्शन कर मनुष्य सब पापों से मुक्त होता है तदनन्तर सरस्वती नदी का दर्शन करके मनुष्य कल्याण को प्राप्त होता है ॥४३॥४४॥४५॥४६॥४७॥४८॥ तदनन्तर विघ्नराज विघ्न नायक गणेश के स्थान में जावे जिसके दर्शन मात्र से सर्व सिद्धि मिलती है और वहीं महापातक नाशिनी साध्वी गंगा है उसके दर्शन स्पर्शन तथा

ध्यान से सर्व कामना पूर्ण होती हैं ॥४६॥५०॥ महादेव मुखाकार नाम से रुद्र महालय है उस प्रधान चेत्रपति का दर्शन करने से चेत्र वास का फल मिलता है उससे उत्तर कोटि गणेश्वर देव का दर्शन करे जहां कि भगवान ने गोपजनों के साथ द्यूत क्रीड़ा की है नाना उपहास रूप मे गोपी तथा धन जीते हैं और गोपो ने उनको लाकर कृष्ण के अर्पण किया है गोपाल कृष्ण गमन महापातक नाश करने वाला है समस्त बाल चरित्र भ्रमण सुखदायक हैं वहां यथा रूप जिम जिस प्रकार ऋषियों ने विष्णु के उत्तम माहात्म्य का ध्यान सेवन किया है उसी प्रकार करना चाहिये ॥५१॥५२॥५३॥५४॥५५॥ तदनन्तर महातीर्थ निर्मल यमुना जल में स्नान कर आचमन कर पितरों को तर्पण देकर रुद्र महालय की यात्रा करे महापुण्य गार्ग्य तीर्थ में भी उसी प्रकार यात्रा करे भद्रेश्वर महातीर्थ में तथा सोम तीर्थ में भा इसी प्रकार यात्रा करे सोमेश्वर देव का स्नान कर दर्शन करने मे यात्राफल मिलता है सरस्वती के संगम में पितृ देव ऋषि मनुष्यों को विधिवत् तृप्त करने से विष्णु सायुज्यता प्राप्त होती हैं तथा घण्टा भरणक में गरुड़ केशव में उसी प्रकार दर्शन करे धारा लोपनक वैकुंट में खण्ड वेलक में मंदाकिनी के संयमन में असि कुण्ड में गोपतीर्थ में मुक्ति केश्वर में महापातक नाशन वैलच गरुड़तीर्थ में यात्रा करे ये सारे तीर्थ विश्रान्ति तीर्थ के समान पुण्य देने वाले हैं भक्ति मान जितेन्द्रिय मनुष्य इन तीर्थों में जाकर देव पितरों का पूजन करके सप्तर्षियों से अभिष्टुत अविमुक्तेश देव को प्रसन्न करे और कहे कि आपकी आज्ञा से मेरी मथुरा पुरी की परिक्रमा सफल होजावे इस प्रकार चेत्रपति शिव की प्रार्थना करके विश्राम घाट में स्नान कर पितृ तर्पण कर निरालस्य हो परिक्रमा कर भगवान् का दर्शन कर स्तुति गाय प्रणाम करे ।५६ ॥५७॥५८॥५९॥६०॥६१॥६२॥६३॥६४ ६५॥ तदनन्तर सुगंगजा स्थान में जाकर यात्रा सिद्धि की प्रसन्नता करे सब मंगलों के मांगल्यभूत हे शिवे! हे सर्वार्थ साधिके! आपकी प्रसन्नतासे मेरी यह यात्रासफल होजावे पिपलाद से पूजित पिपलादेश्वर भगवान् का दर्शन पूजन करे विश्रान्त हो

परिक्रमा कर पूजन करे । वहां महातमा की की रक्षा हुई है । तदनन्तर उसके सिर के ऊपर लेपन करे, अपने नाम से चिन्हित महत् शिव की स्थापना किरे । तब यात्रा फल प्राप्त होता है तथा महा दुष्ट निवारण करकोटक नाग का दर्शन करके, कृष्ण से विनिर्मित देवि के समीप जावे जहां कि प्रथम कुमन्त्रित कंश भेद सुनाथा ॥६६॥६७॥६८॥६६॥७०॥ और अविलष्ट कर्मा कृष्ण ने सुखावास में जावे। वहीं शकुन के लिये सुखासीन स्थापित किया है जहां शशानुकूल स्वर है प्रवेश में दक्षिण स्वन है कृष्ण ने वह अति सुख देने वाली स्वसा को स्वभाव में ध्यान किया है। भय से पीड़ित होकर कृष्ण ने चण्डिका देवी का ध्यान कर स्थापना की हैं अतः उस सिद्धि प्रदान करने वाली का आर्तिहरा नाम हुआ है । सर्वार्तिहरा देवी का दर्शन करने से मनुष्य सुखी होता है शुभ वरदान की शकुन के लिये कृष्ण ने कंस मारने के लिये ध्यान किया है। वह देवी उत्तर में पैदा हुई है उसका दर्शन करने से मनुष्य सब कामनाओं को प्राप्त करता है ॥७१॥७२॥७३॥७४॥७५॥ तदनन्तर कृष्ण ने मल्ल योद्धाओं को मारने की इच्छा से वज्रानन का ध्यान किया है। पश्चात् मल्ल योद्धाओं को मारकर वज्रानन की स्थापना की है कृष्ण ने इसके मनोरथ पूर्ण किये हैं वाञ्छितार्थ फल किये हैं और जिस किसी देवता का ध्यान किया उन सबको पूजा प्रदान की है। उपयाचित मांगल्य सर्व पाप नाश करने वाला है कृष्ण का बाल चरित्र महापातक नाशक है मथुरा निवासियों के कुल के ईश्वर उस सूर्य का दर्शन करके और वहीं दान-देकर यात्रा समाप्त करे । एवम् प्रकार कार्तिक शुक्ल नवमी के दिन जो परिक्रमा करता है वह सारे कुल को लेकर विष्णु लोक में जाता है ।७६॥७७॥७८॥७६॥८०॥ परिक्रमा करके जितने पादन्यास होते हैं उतने ही कुल के पितर सूर्यलोक में निवास करते हैं। ब्रह्म हत्या वाला, मदिरा पान करने वाला, चोर तथा भग्न व्रत, अगम्या गमन करने वाला और चेत्रदारा हरण करने वाला, मथुरा की परिक्रमा करके निष्पापी हो जाता है। जो मनुष्य अन्य देश से आकर

परिक्रमा करता है उसके दर्शन मात्र से ही पापी भी निष्पापी हो जाते हैं और दूर रहने वाले मनुष्यों में यात्रा करने वाले मनुष्य का नाम भी सुना जाता है तो वे भी सर्व पाप मुक्त हो परम पद को जाते हैं ॥८१॥८२॥८३॥८४॥८५॥ इति श्री वाराह पुराणे मथुरा परिक्रमा प्रादुर्भावो नाम काशीराम शर्मा कृत भाषाटीकायाम् षष्टयधिक

अथः एक सौ इकसठवां अध्याय

दोहाः— मथुरापुरी वास किये, पाप सबहि मिट जाय।
देववन प्रभाव वहैं, श्री वराह समुझाय ॥

अथ देववन प्रभावः— पृथ्वी ने कहा– हे कृष्ण ! जो धर्म विमुख हैं। मूढ़ हैं तथा ज्ञान रहित हैं देवताओं ने उनकी नरक में कौन गति रची है अर्थात् नरक में किस प्रकार दुख भोगते हैं ॥१॥ इसे पाप कर्म करने वाले जिस पुन्य प्रभाव से बिना नरक यातना भोगे परम गति को प्राप्त करते हैं वह सुकृतोपाय मुझे सुनाइये ।२॥ श्री वाराह ने कहा– सर्व धर्म रहित दुरात्मा पुरुषों की नरक यातना हटाने वाली पाप घातिनी मथुरापुरी है ।३॥ जो मथुरा निवासी हैं जो मथुरापुरी के तीर्थों का सेवन करने वाले हैं जो मथुरापुरी के वनों का दर्शन करने वाला है तथा जो मथुरापुरी की परिक्रमा करने वाले हैं जिसने इसमें से एक भी कर लिया वह नरक नहीं जाते हैं केवल स्वर्ग जाते हैं ।४।५। प्रथम मधुवन है, दूसरा तालवन है, तीसरा सर्व श्रेष्ठ कुन्दवन हैं । ६॥ चौथा काम्यकवन है, पांचवां बहुवन है, छटा भद्रवन कहा गया है ।७। सातवां लोक विख्यात खादिरवन है, आठवां महावन है वह मुझे सर्वदा प्रिय है ।८। नौवां महापातक नाश करने वाला लोहार्गल नाम का वन है दशवां देव पूजित विल्व नाम का वन है ।९। ग्यारहवां भान्डीरक नाम का वन है बारहवां वृन्दकावन है । जो मनुष्य इन वनों का दर्शन करते हैं वे नरक के भागी नहीं होते हैं । ।१०। हे वरारोहे ! जो जितेन्द्रि मनुष्य यथाक्रम से इन वनों की यात्रा करते हैं वे इन्द्र लोक में जाते हैं ॥११॥ इतिश्री वाराह पुराणे मथुरा-माहात्म्ये नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायामेकषष्टयधिक शततमो

अथ एक सौ बासठवाँ अध्याय

दोहा:— मथुरा से उत्तर दिशा, चक्रतीर्थ विख्यात।
तस अतुल प्रभाव सकल, करें विष्णु विख्यात॥

अथ चक्रतीर्थ प्रभाव–– श्री वाराह ने कहा– हे वसुन्धरे! पुनः और भी कहता हूं। मथुरा से उत्तर दिशा में चक्रतीर्थ है उसकी पुरातन कथा सुनिये ॥१॥ जम्बू द्वीप का भूषण स्वरूप एक महागृहोदय नाम का नगर है उसमें एक ब्राह्मण निवास करता था। कदाचित् उस वेदवेत्ता ब्राह्मण ने अपनी कन्या और पुत्र को साथ लेकर महापुण्यदायक शालिग्राम तीर्थ में गमन किया ॥२॥३॥ पुण्य की इच्छा से उस ब्राह्मण ने वहाँ निवास किया और तीर्थ का सेवन करते नित्य स्नान तथा देव दर्शन उस तीर्थ में करने लगा ॥४॥ उस समय उस ब्राह्मण का एक सिद्ध से मेल हुआ वह सिद्ध कलापग्राम में रहता था हे वसुन्धरे! और वह सिद्ध नित्य शालग्राम तीर्थ में जाया करता था और उस कान्य कुब्ज देश निवासी ब्राह्मण की संगति होने से वह सिद्ध नित्य कलापग्राम की विभूति वर्णन करता था। वह ब्राह्मण कलापग्राम की विभूति सुनकर वहीं जाने की इच्छा से सिद्धि की प्रार्थना करने लगा कि, हे सिद्ध! आप मेरे मित्र हैं मुझे भी अपने निवास स्थान में ले जाइये ॥५॥६॥७॥८॥ ब्राह्मण के वचन सुनकर सिद्ध कहने लगा वहां कलापग्राम में सिद्ध ही जाते हैं वहां तेरी गति नहीं हो सकती है ॥६॥ हे ब्राह्मण श्रेष्ठ प्रार्थना दुख देने वाली होती है। अतः आत्मयोगबल से ही मैं तुझे पुत्र सहित वहां ले चलता हूँ। ॥१०॥ दाहिने हाथ से वेदपारग ब्राह्मण को तथा बायें हाथ से उसके महा बुद्धि वाले पुत्र को ग्रहण कर वह सिद्ध उन दोनों को उड़ा ले गया। और हे वसुन्धरे कलापग्राम में पहुँच कर उन्हें छोड़ दिया। ॥११॥१२॥ तदनन्तर वे दोनों पिता पुत्र कलापग्राम में निवास करने लगे बहुत समय पश्चात शरीर में रोग पैदा हुआ और रोग से पीड़ित होकर दशवीं दिशा को प्राप्त होगया पुनः मरने की इच्छा वाला वह ब्राह्मण नजदीक आने पर अपने पुत्र को देखकर पुत्र से कहने लगा कि

हे पुत्र मुझे शीघ्र गंगा तीर पर ले जाइये विलम्ब न कीजिये पिता की आज्ञामुताबिक पुत्र ने वह अपना पिता गङ्गा तीर पर पहुँचाया, और पितृ स्नेह से युक्त होकर वह पुत्र रोदन करने लगा वेदाध्ययन-शील वह पुत्र पिता की भक्ति करन लगा भक्ति करते करते बहुत समय व्यतीत होगया।१३ १४।१५।१६।१७। कलापग्राम में एक सिद्ध रहता था उसकी अति सुन्दर कन्या थी वह कन्या अपने वर को ढूंढती थी परन्तु उसने अपनी इच्छानुसार किसी को वर लायक नहीं देखा कदाचित दैवयोग से कान्यकुब्ज निवासी का पुत्र महामति भोजन के लिये उस घर में चला गया उस घर में रहने वाले सिद्ध ने उस ब्राह्मण को पूछा तू कौन है और कहां से आया है। पुनः उस महामति ने सब समाचार कह सुनाये उस सिद्ध ने दिव्य ज्ञान के द्वारा उसे जानकर उसकी विधिवत पूजा सम्मान करके उसको अपनी कन्या व्याह दी तदनन्तर वह महामति ब्राह्मण पुत्र नित्य श्वसुर के घर में ही भोजन किया करता था और पिता के समीप प्रतिचारी के समान रहता था अब जबकि उसने रोग से पीड़ित अपने पिता को अति क्षीण देखा तो श्वसुर से पूछने लगा हे श्वसुर जी मेरे पिता अत्यन्त दुखी हैं क्या मर जायगा मुझे सुनाइये जामाता के वचन सुनकर श्व-सुर हंसकर कहने लगा।१८।१९।२०।२१।२२।२३।२४। हे द्विजोत्तम उसने नित्यकाल शूद्रान्न खाया है अतः उस शूद्रान्न भक्षण के दोष से तेरे पिता की मृत्यु दूर चली गई है ॥२५॥ और वह शूद्रान्न तेरे पिता के पैरों में है घुटनों से ऊपर शूद्रान्न नहीं है जब शूद्रान्न मिट जायगा तब तेरे पिता की मृत्यु होगी श्वसुर के वचन सुनकर उसने पिता से निवेदन किया पुत्र के वचन सुन वह ब्राह्मण अपनी निन्दा करने लगा तदनन्तर निर्मल प्रातःकाल में सूर्य के उदय होने पर वह पुत्र अपने श्वसुरके घर गया पुत्र के चले जाने पर वह ब्राह्मण रोग से अत्यंत पीड़ित हुआ दुख से पीड़ित हो वह क्षीण ब्राह्मण मरने की इच्छा से गंगा तीर पर खड़ा होकर चारोंदशाओं की ओर देखता हुआ समीप ही उपल को देख कर उसने उसे ग्रहण किया। और उस ब्राह्मण ने उस

उपल से अपने दोनों पैर चूर्ण चूर्ण कर दिये पीड़ा से मोहित होकर प्राणों का त्याग करके, काल वर्शन को प्राप्त हुआ। स्नान करके भोजन खाकर उसका पुत्र जभी श्वसुर घर से वापिस आता है तो मरे हुये पिता को देखकर अत्यन्त रोदन करने लगा बहुत समय रोकर शास्त्र को देखकर सोचने लगा ।२६॥२७॥२८॥२९॥३०॥३१॥३२॥३३॥ संस्कार योग्यता नहीं है। इस प्रकार बार बार कहने लगा सर्प से, सींग वाले से, दाढ़ वाले से, ब्राह्मण से, जिसकी मृत्यु हुई है तथा अपने आप अपनी मृत्यु करने वाले को संस्कार योग्यता नहीं है। यह आपस्तम्ब ने कहा है आत्मघाती मनुष्य चिरकाल तक नरक यातना भोगता है ॥३४॥३५॥ प्रायश्चित करना चाहिये उदक क्रिया नहीं करनी चाहिये । अहो ! दैव बलवान है । और पुरुषार्थ निरर्थक है। ॥३६॥ हे महाभागे ! उसका पुत्र अपने श्वसुर घर चला गया उस दिन मन मलीन, जामाता को देख श्वसुर कहने लगा कि, तेरे ऊपर ब्रह्म हत्या लग गई है अतः तू इच्छानुसार यहां से चला जा। श्वसुर के वचन सुनकर जामाता ने कहा कि मैंने कभी भी ब्राह्मण का वध नहीं किया है किस दोष से मुझे ब्रह्म हत्या का फल मिला है जामाता के वचन सुनकर श्वसुर कहने लगा हे पुत्र ! तूने पिता से वध का उपाय कहा है अतः उसी दोष से तुझे ब्रह्म हत्या का फल मिला है। पतित के साथ शयन करने भोजन करने बातचीत करने से एक संवत्सर में दूसरा भी पतित हो जाता है अतः हे द्विजोत्तम ! तेरा मेरे घर में निवास नहीं हो सकता है ॥३७॥३८॥३९॥४०॥४१॥४२॥ श्वसुर के वचन सुनकर जामाता कहने लगा हे सुव्रत ! आपने मुझे त्याग दिया है अब मुझे क्या करना चाहिये वह कहिये जामाता के वचन सुनकर श्वसुर ने कहा– हे सुव्रत ! आप मथुरा में जाइये। कल्प ग्राम को छोड़ दीजिये। तुझ पितृ हत्या वाले की अन्यत्र कहीं भी शुद्धि नहीं हो सकती है तब उसने शीघ्र कल्पग्राम को छोड़कर मथुरा पुरी को गमन किया तदनन्तर बहुत समय में वह मथुरा पुरी में पहुंचा और ब्राह्मणों से अलग बहिस्थान में नित्य निवास करने लगा

समय आपकी ब्रह्म हत्या दूर हो गई है यह चक्रतीर्थ का प्रभाव है हे कान्त ! उठिये सुशोभित कल्पग्राम में चलें प्रिया के इस प्रकार कहने पर वह अपनी प्रिया के साथ कल्पग्राम में गया । और भद्रेश्वर के निमित्त शुभ द्रव्य कहा— और वह नित्य जहां भोजन करता था, द्रव्य सपर्पित पात्र को भद्रेश्वर देव का दर्शन कर चक्रतीर्थ का स्नान दानादि फल पूर्ण होता है । ६१॥६२॥६३॥६४॥६५॥ हे वसुन्धरे ! कल्पग्राम में सौगुना पुण्य चक्रतीर्थ का है एक अहोरात्र निवास करने से मनुष्य ब्रह्म हत्या से मुक्त हो जाता है हे वसुन्धरे ! कल्पग्राम तथा वाराणसी से क्या प्रयोजन जो कोई मनुष्य मथुरापुरी में जाकर प्राण त्याग करता है वह अथवा कीट पतंग भी चतुर्भुज रूप हो जाता है ॥६६॥६७॥६८॥ इति श्री वाराह पुराणे मथुरा माहात्म्ये चक्रतीर्थ प्रभावो नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् द्विषष्ट्यधिक शततमोऽध्याय ॥१६२॥

अथः एक सौ त्रेसठवाँ अध्याय

दोहाः— इक सौ त्रेसठ में कहें, श्री वाराह भगवान् ।
कपिल वराह माहातम, अरु कथानक बखान ॥

अथ कपिल वराह माहात्म्य— श्री वाराह ने कहा– हे वसुन्धरे ! पुनः और भी कहता हूँ वैकुण्ठ तीर्थ को प्राप्त करके जो पुरातन कथा है उसे सुनिये ।१। मिथिला में जनक राजा से पालित रमणीय पुरी है एक समय मिथिला निवासी लोग तीर्थ यात्रा में आये । हे वसुन्धरे ! ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र सबके सब तीर्थ यात्रा के लिये आये सौकरव तीर्थ में स्नान करके मथुरापुरी में आये हे सुन्दरि ! उनकी मथुरापुरी के प्रति भक्ति उत्पन्न हुई है और वे सब लोग वैकुन्ठ तीर्थ में आकर स्थित हुये ।२।३।४। उनमें कोई ब्राह्मण ब्रह्म हत्या से युक्त था उसके हाथ से रुधिर की धारा बहती थी ।५। वह धारा साक्षात् ब्रह्म हत्या स्वरूपिणी दिखाई देती थी सब तीर्थों में स्नान करने पर भी उस ब्राह्मण की ब्रह्म हत्या दूर न हुई पहिले के समान ही रही तदनन्तर उसने वैकुन्ठ तीर्थ में स्नान किया फिर वह रुधिर धारा

अदृश्य हो गई तब सब लोग विस्मित होकर कहने लगे कि, यह क्या हुआ। देव ब्राह्मण रूप से सब लोगों को पूजने लगा कि किस दोष से रुधिर धारा ब्राह्मण को छोड़ कर चली गई है वह सब उस ब्राह्मण का विचेष्टित कहने लगे कि इस ब्राह्मण ने वैकुण्ठ तीर्थ में स्नान किया है तब इसकी ब्रह्महत्या दूर हो गई है इसमें विस्मय नहीं करना चाहिये इस तीर्थ का बड़ाभारी महात्म्य है ॥६॥७॥८॥१०॥ उनके इस प्रकार कहने पर देव देव भगवान् वहीं अन्तर्धान हो गये हे वसुन्धरे! यह वैकुण्ठ तीर्थ का माहात्म्य है जो वैकुण्ठ तीर्थ में स्नान करता है वह सर्वपातकों से छूट जाता है और सर्वपापों से मुक्त हो विष्णुलोक जाता है ॥११॥१२॥ सूत ने कहा-पुनः अति पुण्य देने वाले असि-कुण्ड में अतिपुण्य दायक तीर्थ श्रेष्ठ गन्धर्व कुण्ड कहता हूँ ॥१३॥ उस गन्धर्व कुण्ड में स्नान करने से मनुष्य गन्धर्वों के साथ सुखपूर्वक निवास करता है और जो वहां प्राणत्याग करता है वह विष्णु लोक में जाता है ॥१४॥ बीस योजन विस्तार का मेरा माथुर मण्डल है हे महाभागे! यह पद्मरूप माथुर मण्डल सबके लिये मुक्ति दायक है ॥१५॥ इस कमल की कर्णिका में क्लेश नाशन केशव भगवान रहते हैं जो कर्णिका भाग में मरते हैं वे अमर मुक्ति के भागी होते हैं ॥१६ हे वसुन्धरे! उस मध्यकर्णिका में जो मरता है वह मुक्त होता है मथुरा से पश्चिम की ओर गोवर्द्धन निवासी हरि भगवान् रहते हैं उस देव देवेश का दर्शन करके मन खिन्न नहीं होता है उत्तर से गोविन्द का दर्शन करके प्रलय पर्यन्त मनुष्य संसारमें नहीं गिरता है विश्रान्ति संज्ञा वाले तीर्थ में भगवान् पूर्व पत्र में व्यवस्थित है उनका दर्शन करके मनुष्य भवसागर से मुक्त हो जाता है दक्षिण की ओर केशवाकार के समान आकार वाली महाकाया सुन्दर रूप वाली दिव्यरूपिणी मेरी मनोहर प्रतिमा है उस प्रतिमा का दर्शन करके मनुष्य ब्रह्मा के साथ सुख पूर्वक निवास करता है ।१७॥ १८॥ १९॥ २०॥ २१॥ सत्य युग में एक मान्धाता नाम का राजा था, उसने भक्ति युक्त चित्त से मेरी आराधना करके मुझे प्रसन्न किया है उसके ऊपर प्रसन्न होकर

मैंने उसे यह प्रतिमा अर्पण की है और उसने आत्ममुक्ति की इच्छा से इस प्रतिमा का पूजन किया है जबकि मथुरा में आकर लवणासुर को मार गिराया है तभी से यह दिव्य प्रतिमा मथुरा में व्यवस्थित हुई है ॥२२॥२३॥२४॥ यह तैजसी दिव्य रूपिणी प्रतिमा बहु पुन्य दायक है। कपिल नाम का विप्रर्षि मेरी भक्ति परायण था उसने मन से शुभ वाराही प्रतिमा निर्मित की है वह कपिल विप्रर्षि उस प्रतिमा का नित्य ध्यान करता तथा पूजन करता था ॥२५ २६॥ हे देवि ! इन्द्र ने कपिल की आराधना की है पुनः उसके ऊपर प्रसन्न होकर वाराह रूपी भगवान् प्रदान किये हैं। हे वरारोहे ! भगवान के प्राप्त करने पर इन्द्र बहुत प्रसन्न हुआ और भक्ति से भगवान की पूजा करके इन्द्र नित्य प्रति भगवान् का ध्यान करता था, तब इन्द्र ने अति उत्तम दिव्य ज्ञान प्राप्त किया है तदनन्तर बहुत समय पश्चात् रावण नाम का राक्षस स्वर्गलोक जीतने की इच्छा से इन्द्रलोक में गया और इन्द्र के साथ सङ्गम करके युद्ध शुरू कर दिया ॥२७॥२८॥ ॥२९॥३०॥ रावण ने सारे देवता जीतकर इन्द्र को भी जीतकर और बाँधकर अपने आप इन्द्र भवन में गया उस रत्न विभूषित इन्द्र भवन में प्रवेश कर रावण ने कपिल वाराह प्रतिमा का दर्शन किया। और देखकर सिर से प्रणाम किया ॥३१॥३२॥ हे देवि ! उसने रावण नाम राक्षस संमोहित किया तब रावण ने हे देव ! हे धरणीधर ! हे माधव आप मेरी रक्षा करने योग्य हो ॥३३॥ हे दामोदर ! हे हृषीकेश ! हे हिरण्याक्ष ! विदारण ! हे वेद गर्भ ! आपको नमस्कार है। हे वसुदेव ! आपको नमस्कार है ॥३४॥ हे कूर्मरूप ! हे नारायण ! आपको नमस्कार हो मत्स्य रूप धारी कैटभ हारी भगवान को नमस्कार है। हे भगवन् ! मैं आपको देखने तथा पूछने को समर्थ नहीं हो रहा हूँ। भक्तों का अभय प्रदान करने वाले भगवन् ! आपको नमस्कार हो। ॥३५॥३६॥ मुझ भक्ति से नम्र हुये के ऊपर आप प्रसन्नता कीजिये इस प्रकार रावण ने देव देव जगत्पति की स्तुति की लोकनाथ जनार्दन सौम्य रूप हुआ, रावण नजदीक जाकर उस प्रतिमा को

पुष्पक विमान में रखने की इच्छा करने लगा। परन्तु उस प्रतिमा को उठाने की अपनी सामर्थ्य न देख परम विस्मय को प्राप्त हुआ और कहने लगा कि मैंने पहिले शङ्कर के साथ कैलाश पर्वत को उठाया है। हे देव! आपकी तो स्वल्प प्रतिमा होनेपर भी मैं उठानहीं सकता हूँ हे देवदेवेश! हे सुरनाथ! आपको नमस्कार करताहूँ आप प्रसन्न होजायिये ॥ ३७ ॥ ॥ ३८ ॥ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ मैं आपको उत्तमलङ्कापुरी में ले जाना चाहता हूँ ॥ ४१ ॥ श्रीवराह ने कहा —तू जो अवैष्णव राक्षस है। तेरी इसप्रकार की भक्ति कहां से हुयी है। कपिल वराह के वचन सुनकर रावण ने कहा कि भगवन् आपके दर्शन मात्रसे ऐसी अव्यभिचारिणी भक्ति मुझ में हुयी है! हे देवदेव! आपको नमस्कार करता हूँ मैं आपको लंका में पहुँचाऊँगा। उस रावण की दृढ़ भक्ति को देखकर भगवान् लघु होगये। तब रावण ने त्रैलोक्य विख्यात भगवान् को पुष्पक विमान में रख कर अपनी लंका में लाकर अपने घरमें स्थापित किया। हे वसुन्धरे! उस समय लङ्का में स्थापित होकर रावण की पूजाग्रहण करता गयाहूँ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ अयोध्या का मालिक श्रीरामचन्द्र अपने ही पराक्रम से राक्षसों को मारने के लिये लङ्कापुरी में गया। और सब रावणादि राक्षसों को मारकर विभीषण को लङ्का की राजगद्दी पर अभिषिक्त किया। तथा विभीषण ने राम के लिये सर्वस्व अर्पण किया ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ श्रीरामने कहा — विभीषण! इससे मुझे कुछ प्रयोजन नहीं है। मुझे तो केवल त्रलोक से आयी कपिलवाराह प्रतिमाको दीजिये मैं नित्यप्रति उसका पूजन करूँगा। तथा हे राक्षस! तुझसे दी गयी उस प्रतिमा को मैं अयोध्यापुरी में लेजाऊँगा। राम के कहने पर विभीषण ने वह प्रतिमा श्रीराम के अर्पण की और श्रीरामचन्द्रजी उस दिव्य प्रतिमाको अपनी नगरी अयोध्या में लाये ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ अयोध्या में उस दिव्य प्रतिमा की स्थापना करके एक सहस्र दशवर्ष तक निरन्तर उस प्रतिमा का पूजन किया। तदनन्तर लवणासुर मारने के लिये श्रीरामने शत्रुघ्न को भेजा शत्रुघ्न श्रीरामचन्द्रजी को प्रणाम करके चतुरङ्ग सेना सहित मथुरापुरी

ओर चला वहां जाकर भयङ्कर रूप वाले राक्षस श्रेष्ठ लवणासुर को
रकर शत्रुघ्नने मथुरा पुरी में प्रवेश किया और मेरे सदृश महापराक्रम
ले ब्राह्मणों को स्थापित किया ५१ ।५२॥५३॥५४॥ छब्बीस हजार
वेदाङ्ग के जानने वाले ब्राह्मण स्थापित किये जहांकि लवणासुर के
ने से माथुर मण्डल अनृच था और अब शत्रुघ्न के लवणासुर वध
के चतुर्वेद वेत्ता ब्राह्मणों की स्थापना करने पर माथुर मंडल चतुर्वेद
क होगया मथुरापुरी में एक ब्राह्मण को भोजन कराने पर करोड़
ह्मणों को भोजन कराने का फल होता है हे वसुन्धरे ! लवणासुरकी
था तुझे सुनादी है लवणासुर का वध सुनकर रामचन्द्रजी ने कहाकि
शत्रुघ्न ! जो तेरे मनमें है वह वरदान मांगिये राघव के वचन सुन-
र शत्रुघ्न ने कहा-हे देव ! यदि आप मेरे ऊपर प्रसन्न हैं और यदि
वरदान पाने के योग्य हूँ तो आप मुझे कपिलवराह की प्रतिमा
जिये शत्रुघ्न के वचन सुनकर राघव कहने लगे हे शत्रुघ्न ! वराहरूपी
दिव्य प्रतिमा को लेजाइये लोक में मथुरा पुरी धन्य है ॥५५। ५६।५७
५८॥५९॥६० और जो मथुरा निवासी लोग भी धन्य हैं जोकि नित्य
कपिल वाराह प्रतिमा का दर्शन करेंगे हे शत्रुघ्न ! कपिल वराह प्रतिमा
का नित्य दर्शन स्पर्शन, ध्यान, स्नान, अनुलेपन करने से सारे पाप दूर
हो जाते हैं जो मनुष्य नित्य वराह प्रतिमा का दर्शन कर स्नानादि
पूजन करते हैं भगवान् उनके सारे पापहरकर उनको मुक्ति प्रदान करते
हैं हे वसुन्धरे ! इस प्रकार कहकर राघवने शत्रुघ्न को वह कपिल वाराह
प्रतिमा दी उस प्रतिमा को लेकर शत्रुघ्न मथुरापुरी में पहुंचा और
ब्राह्मण को स्थापित कर मेरे समीप आया ॥६१॥६२॥६३॥६४॥ और
उस मथुरा पुरी के मध्य में स्थापित कर के शत्रुघ्न पूजा करने लगा
इसी क्रमयोग से यह प्रतिमा मथुरा पुरी में स्थित हुयी है । गया
में पिण्डदान से तथा ज्येष्ठ के महीने पुष्कर में स्नान दानादि कृत्य
करने से जो फल मिलता है सर्वदा श्वेत का दर्शन करने से वही फल प्राप्त
होता है विश्रान्ति तीर्थ में गोविंद के दर्शन करने पर हरिका दर्शन करने
पर केशव तथा दीर्घविष्णु के दर्शन करने पर भी वही फल मिलता है

६५।६६ ६७॥ सूर्योदय समय सदा मेरा तेज विश्रान्ति तीर्थ में है और मध्याह्न समय दीर्घविष्णुमें स्थित है और दिनके चौथे भाग में मेरा तेज केशव में है हे देवि ! यह विद्या प्रथम नित्यगुप्त थी तू मेरी भक्तातथा शिष्या होने से तुझे मैंने सुनाया है ।।६८। ६९ इति श्रीवराह पुराणे मथुरामाहात्म्ये कपिलवाराह माहात्म्यं नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायां त्रिषष्ठ्यधिक शततमोऽध्याय ॥१६३॥

अथ एक सौ चौंसठवाँ अध्याय

दोहा—वराह इस अध्याय में, कहें सकल समुझाय ।।
अन्नकूट प्रदक्षिण, का प्रभाव सब गाय ।

अथान्नकूट परिक्रमप्रभाव-श्रीवराह ने कहा–मथुरा पुरी से पश्चिम की ओर दो योजन से कुछ कम दूर पर परम दुर्लभ गोवर्द्धन नाम क्षेत्र है ।।१।। हे महाभागे ! वहां द्रुम गुल्मलताओं से युक्त तालाब है और वहां बहुपुण्य दायक चार तीर्थ हैं ॥२॥ पूर्वकी ओर से इन्द्र तीर्थ है दक्षिण की ओर से यम तीर्थ है पश्चिम की ओर वारुण तीर्थ है तथा उत्तर की ओर कौबेर तीर्थ है ॥३। हे भद्रे ! उन तीर्थों में स्थित होकर मैं यह यदृच्छा से क्रीड़ा करूंगा उस शक्रतीर्थ में जो दृढ़व्रत होकर स्नान करता है वह शक्रलोक में सुख पूर्वक निवास करता है यथा विधि जो यमतीर्थ में स्नान करता है वह यमलोक में सुख पूर्वक निवास करता है और जो मनुष्य यमतीर्थ में प्राणत्याग करता है वह यमलोक को छोड़कर मेरे लोक में जाता है तथा वारुण तीर्थ में जाकर जो मनुष्य स्नान करता है वह सर्व पाप मुक्त होकर वरुण लोक में जाता है तथा जो कामक्रोधरहित होकरजो वारुणतीर्थ में प्राणत्याग करता है वह वारुण लोकको छोड़कर मेरे लोकमें जाता है और उसके मध्य में जो स्नान करता है वह मेरे साथ क्रीड़ा करता है ४।।५।।६ ।७।।८।।९।। और जोइसके मध्यमें प्राणत्याग करता है वह मेरे लोकमें जाता है तदनन्तर अन्नकूटमें जाकर अन्नकूट की प्रदक्षिणाकरे १०उसकीपुनरावृत्तिनहीं होती है हे देवि ! मैं तुझे सच कहता हूँ मानसगंगा में स्नान करके गोवर्द्धन पर्वतपर हरि भगवान्‌कादर्शनकरके अन्नकूटकी परिक्रमाकरके११।

देवगिरि में जावे। जहां कि स्नान तथा दर्शन करने से वाजपेय यज्ञ का फल प्राप्त होता है। तदनन्तर महादेव को देख जाकर ध्यान करनेसे वह फल मिलता है २८।२६।३०॥ कुण्डमें स्नान कर पितरोंको तर्पण देकर कृत कृत्य हो स्वर्ग में जाता है जबकि गंगाके उत्तर भाग में देवदेव चक्रधारी भगवान् का अरिष्ट के साथ महा युद्ध हुआ था। इस वृषरूपी अरिष्ट को मारकर क्रोधसे पार्ष्णिघात से पृथवी में तीर्थ हुआ है। वृषभ के वध से महद्भुत तीर्थ जानना चाहिये उस समय कृष्णने महासुर वृषासुर को मारकर वहां स्नान किया था। वृषहत्या मुक्त होकर कृष्ण चिन्ता करने लगे कि मैंने यह वृषरूपी पापी अरिष्टासुर का वध किया है वहां पर राधाने अक्लिष्टकारी कृष्ण को आलिङ्गन करके अपने नाम से समीप ही में विख्यात कुण्ड तीर्थ किया। वह राधा कुण्ड सर्वपापों को हरने वाला है। ३१। ३२। ३३। ३४।३५।३६। अरिष्ट कुण्ड तथा राधा कुण्डमें स्नान करने से राजसूय अश्वमेध का फल प्राप्त होता है। तथा वो नर ब्रह्महत्या का पाप शीघ्र नष्ट होजाता है। एक मनुष्य को मुक्ति देने वाला मोक्षराज नाम का तीर्थ है। जिसके दर्शन मात्र से मनुष्य सर्वपाप मुक्त होजाता है, जहांकि पूर्व दिशा में इन्द्रध्वजोच्छ्रय किया है। वह इन्द्रध्वज नाम का तीर्थ मुक्ति को देने वाला है। वहां स्नान करने से स्वर्ग तथा प्राणत्याग करने से मोक्ष मिलता है ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३६ ॥ ४० ॥ तदनन्तर समग्र यात्रा फल हरि को निवेदक करके चक्रतीर्थमें स्नान कर पञ्चतीर्थाख्य कुण्ड में स्नान कर तीर्थयात्रा समाप्त करदेवे। और गोवर्द्धन में रात्रि में जागरण करना चाहिये। वह जागरण महापातक नाश करने वाला है। एकादशी की रात्रि में जागरण करके द्वादशी प्रातः काल स्नान करके शक्ति पूर्वक पिण्डदान देकर यात्रा समाप्त कर जो मनुष्य पितरों की मुक्ति के लिये इसप्रकार करता है। वह सर्वपाप मुक्त होकर परब्रह्म को प्राप्तकरता है ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४॥ हे भद्रे ! यह अन्नकूट परिक्रम विधान सुनादिया है वह विधान आषाढ़ में भी कहागया है। जोइस हरि के तीर्थानुक्रमण को भक्तिपूर्वक सुनता है वह गोवर्द्धन का

गया में पिण्डदान देनेसे मनुष्य जोफल प्राप्त करते वही फलवहां प्राप्त होता है। इसमें कोई विचारनहीं करनाचाहिये। गोवर्द्धनपर्वत की परिक्रमा करके हरि भगवान् का दर्शन करने से राजसूय तथा अश्वमेध का फल प्राप्त होता है॥ ११॥ १२॥ १३॥ १४॥ १५।पृथिवी ने कहा अन्नकूट की परिक्रमा किस विधिसे किस प्रकार की जाती है हे भगवन् आप उसका प्रभाव गुण माहात्म्य सुनायिये॥ १६॥ श्रीवराहने कहा भाद्रपद महीने की जोशुक्ल एकादशी है। उस दिन गोवर्द्धनमें उपवास तथा उसकी परिक्रमा करनी चाहिये॥ १७॥ मानस गंगा में स्नान करके सूर्यदिय समय गोवर्द्धन कोप्रसन्न कर पर्वत मस्तक पर हरि भगवान् की पूजा करे॥ १८। तदन्तर पुण्डरीक क्षेत्र में जावे। वहां कुण्ड में स्नान करके पितरों को यथाविधि पिण्डदानादि देकर पुण्डरीक भगवान् का पूजन करे॥ १६॥ वह मनुष्य सर्वपापमुक्त होकर विष्णुलोक में जाता है। वहीं एक निर्मल जलवाला अप्सराओं का कुण्ड है। उस कुण्ड में स्नान कर पितरों को तर्पण पिण्डदान देने से मनुष्य पाप, मुक्त होकर राजसूय तथा अश्वमेधयज्ञका फल प्राप्त करता है॥ २०॥ ॥ २१॥ बलभद्र से रचित संकर्षण नामका कुण्ड है। पहिले की लगी गोहत्या वहां दूर भागती है। उस कुण्डमें स्नान करने से गोहत्या शीघ्र नष्ट होजाती है। इसमें सन्देह नही है। अन्न के नजदीक में इन्द्र का रचा हुआ एक तीर्थ है। वहां पर कृष्णने इन्द्र की पूजा के लिये यज्ञ रचाथा भक्ष्य भोज्य युक्त महदिन्द्रका उत्थान करके तुष्टिकरों को करके साक्षात् इन्द्र के साथ संकथा की इन्द्रर के उनको पीड़ा करने निमित्त अत्यन्त जल वर्षाने पर कृष्णने गोरक्षा के हेतु गोवर्द्धनपर्वत धारण किया। अतः वह शक्रसे पूजित पर्वत अन्नकूट नाम से विख्यात हुआ है।'। २२॥ २३॥ २४॥ २५॥ २६॥ देवता देवियां तथा ऋषियों के सहित गायों का प्रथम विष्णु ने श्रमसे पूजन तर्पण किया है॥ २७॥ उस स्थान में तर्पण करने से सौयज्ञों का फल प्राप्त होता है। तदनन्तर निर्मल जल युक्त कादम्बखण्ड नाम का कुण्ड है। उसमें स्नान कर तर्पण देनेसे ब्रह्मलोक की प्राप्ति होती। है तदनन्तर शतबाहु समुच्छ्रित

देवगिरि में जावे। जहां कि स्नान तथा दर्शन करने से वाजपेय यज्ञ का फल प्राप्त होता है। तदनन्तर महादेव को देख जाकर ध्यान करनेसे वह फल मिलता है २८।२६।३०॥ कुण्डमें स्नान कर पितरोंको तर्पण देकर कृत कृत्य हो स्वर्ग में जाता है जबकि गंगाके उत्तर भाग में देवदेव चक्रधारी भगवान् का अरिष्ट के साथ महा युद्ध हुआ था। इस वृषरूपी अरिष्ट को मारकर क्रोधसे पार्ष्णिघात से पृथवी में तीर्थ हुआ है। वृषभ के वध से महद्भुत तीर्थ जानना चाहिये उस समय कृष्णने महासुर वृषासुर को मारकर वहां स्नान किया था। वृषहत्या युक्त होकर कृष्ण चिन्ता करने लगे कि मैंने यह वृषरूपी पापी अरिष्टासुर का वध किया है वहां पर राधाने अक्लिष्टकारी कृष्ण को आलिङ्गन करके अपने नाम से समीप ही में विख्यात कुण्ड तीर्थ किया। वह राधा कुण्ड सर्वपापों को हरने वाला है। ३१। ३२। ३३। ३४।३५। ३६। अरिष्ट कुण्ड तथा राधा कुण्डमें स्नान करने से राजसूय अश्वमेध का फल प्राप्त होता है। तथा वो नर ब्रह्महत्या का पाप शीघ्र नष्ट होजाता है। एक मनुष्य को मुक्ति देने वाला मोक्षराज नाम का तीर्थ है। जिसके दर्शन मात्र से मनुष्य सर्वपाप मुक्त होजाता है, जहांकि पूर्व दिशा में इन्द्रध्वजोच्छ्रय किया है। वह इन्द्रध्वज नाम का तीर्थ मुक्ति को देने वाला है। वहां स्नान करने से स्वर्ग तथा प्राणत्याग करने से मोक्ष मिलता है ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३६ ॥ ४० ॥ तदनन्तर समग्र यात्रा फल हरि को निवेदन करके चक्रतीर्थमें स्नान कर पञ्चतीर्थाख्य कुण्ड में स्नान कर तीर्थयात्रा समाप्त करदेवे। और गोवर्द्धन में रात्रि में जागरण करना चाहिये। वह जागरण महापातक नाश करने वाला है। एकादशी की रात्रि में जागरण करके द्वादशी प्रातः काल स्नान करके शक्ति पूर्वक पिण्डदान देकर यात्रा समाप्त कर जो मनुष्य पितरों की मुक्ति के लिये इसप्रकार करता है। वह सर्वपाप मुक्त होकर परब्रह्म को प्राप्तकरता है ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ हे भद्रे! यह अन्नकूट परिक्रम विधान सुनादिया है वह विधान आषाढ़ में भी कहागया है। जोइस हरि के तीर्थानुक्रमण को भक्तिपूर्वक सुनता है वह गोवर्द्धन का

माहात्म्य सुनता है, वह गंगा स्नान के फल को प्राप्त करता है, ॥४५। ।४६॥ इति श्रीवराह पुराणे मथुरामाहात्म्यान्तर्गते गोवर्द्धन माहात्म्ये ऽन्नकूट परिक्रम प्रभावोनाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायां चतुः षष्ठ्यधिक शततमोऽध्यायः ॥१६४॥

अथः एक सौ पैंसठवां अध्याय

दोहा—इसकों पैंसठमें कहें, श्रीवराह समुझाय।
मथुरा में विधियात्राकर, प्रेतमुक्त होजाय॥

श्री वराह ने कहा—हे वसुन्धरे! इससे आगे और भी सुनाता हूं, सुनिये दक्षिणापथ मण्डल में जो समाचार हुये हैं, वह सुनिये।१। उस नगर में एक सुशील नाम का वैश्य निवास करता था, वह धन धान्य युक्त तथा बहुपुत्र युक्त हो समृद्ध शाली था ॥२॥ नित्य अपने कुटुम्ब का पालन करता था स्नान, दान, जप होम तथा देवार्चन नहीं करता था, उस व्यापार करने वाले का बहुत समय व्यतीत होगया, उसने कभी भी साधु संग नहीं किया ।३।४। उससे कभी भी धर्म कथा नहीं सुनी थी, उसमें देवता तथा ब्राह्मणों की भक्ति नहीं थी ॥५। और नित्य शरीर पोषण के निमित्त पाप करता था, और बहुत समय व्यतीत होने पर भी उसने अपने समय को नहीं जाना ॥६॥ उसकी कभी दान देने की बुद्धि नहीं होती थी उसके इस प्रकार श्रेष्ठनगर में रहने पर धनयुक्त होने पर भी कभी नहीं देता था, और न किसी दाता को ही देखना चाहता था।।७॥८॥ एवं प्रकार कुटुम्ब का पालन पोषण करता हुआ बहुत समय पश्चात् कदाचित दैवयोग से वह सुशील नाम वाला वैश्य अपनी प्रिया भार्या तथा अपने प्रिय पुत्रों को छोड़कर मर गया, और मरकर प्रेत योनिको प्राप्त हुआ विना जल वाले देशों में विना छाया वाले वनों में घूमता हुआ भूख प्यास से पीड़ित होकर मरुदेश में गया, और बहुत समय तक वहीं मरुदेश में निवास किया कदाचित् दैवयोग से वहां सार्थ वाह आया, उसके मध्य में जो बनिये थे, वे मथुरापुरी से आये थे, सार्थ वणियों के चले जाने पर वह वणियां उसी वृक्षके आसरे चले गया, और उसी वृक्षके नीचे एक अति भयानक रौद्ररूप

वाला प्रेत रहता था जो कि दीर्घदाढ़ से भयङ्कर था, जिसकी छोटी २ बाहु थीं, विभीषण था उसकी ठोडी बड़ीभारी थी विशाल नेत्र थे और विडाल के समान उसका मुख था हे भद्रे ! बहुत समय पश्चात् दैवयोग से वहां कोई व्यापारी आपहुँचा, उसको दूर से ही आते देख प्रेत अतिहर्षयुक्त हुआ और नाचते २ उस व्यापारी के समीप पहुँचकर के वचन कहने लगा कि आज तो आप मेरे भक्ष्यभूत हो गये हो अब कहाँ जा रहे हो, प्रेत के वचन सुनकर वह व्यापारी शीघ्र गति से दौड़ने लगा उस दौड़ते हुये व्यापारी को पकड़कर वह प्रेत कहने लगा कि हे मानव ! तू स्वयं मेरे समीप आया है, अतः तुझे विधाता ने मेरा भक्ष्य बना लिया है तेरे माँस को खाऊँगा और तेरे रुधिर का पान करूंगा इसप्रकार प्रेत के वचन सुनकर व्यापारी कहने लगा।६।१०।११।१२ १३।१४।१५।१६। १७।१८।१६ कुटुम्ब के पालन पोषण के लिये में अटवी दुर्ग में आया हूँ मेरे घर में बूढ़े माता पिता हैं और पतिव्रता औरत है, आप यदि मुझे भक्षण करलेंगे तो मेरा कुटुम्ब भी खतम हो जायगा, व्यापारी के वचन सुनकर प्रेत कहने लगा कि हे महामते ! सच कहिये कि आप किस स्थान से आये हैं।२०।२१।२२। विभु नाम के व्यापारी ने कहा गोवर्धन गिरिराज है और महानदी यमुना है उनके बीच में रमणीक मथुरा पुरी है हे प्रेत ! उसी लोक प्रसिद्ध मथुरापुरी में मेरे पिता पितामहादियों का घर है उसी घरमें मैं निवास करता हूँ वहां रहकर मैंने जोकुछ भी धन कमाया था वह चोरों ने हरण करलिया है तदनन्तर मैं बचा खुचा धन लेकर मरुस्थल में आया हूं और आपके नजदीक आने से आपकी दृष्टिपथ में आगया हूं अब आपकी जो इच्छा है सो कीजिये।२३।२४

सुख पूर्वक चले जाइये प्रेत के वचन सुनकर विभु कहने लगा-में बिनाधन के किसी भी प्रकार मथुरा पुरी में नहीं जा सकता हूं मेरे शरीर को भक्षण कीजिये और अपनी भूख मिटायिये ।।२८ ३०।।३१।। प्रेत ने कहा-हे विभो ! तेरे घर में बहुत धन है जायिये और कार्य कीजिये। अपर्याप्त धन है अतः शीघ्र जायिये विलम्ब न कीजिये ।।३२।। विभु ने कहा—जो आपने कहा है सो मेरे घर में धन नहीं है गृहशेष मेरा धन वही है और कुछ नहीं है उस पितृ पैतामहादियों की सम्पत्ति रूप घर को मैं बेच नहीं सकता हूँ तब प्रेत हंसकर इस प्रकार कहने लगा हे विभो ! जो मैंने कहा कि तेरे घर में धन है वह अवश्य है तेरे घरके भीतर एक भार सुवर्ण खड्डे में रखा है सन्तुष्ट होकर वापिस हो जायिये और अपने मित्रों की प्रीति बढ़ाइये जिस मार्ग से मथुरापुरी को जाते हैं उस मार्ग में मैं आपकी बाट देखता रहूँगा ।।३३।।३४३५।। ।।३६।सूतने कहा-विभु वणियाँ प्रसन्नचित्त होकर फिर कहने लगाकि इस अवस्था को प्राप्त होकर भी आपको ज्ञान किस प्रकार हुआ है तब वह प्रेत अपनी पुरातन कथा कहने लगा- प्रतिष्ठान नगर में एक बड़ा भारी विष्णु का मन्दिर है उस शुभ विष्णु के मन्दिर में प्रातःकाल ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य तथा शूद्र सब पहुँचे उस मन्दिर में कथावाचक कथा बांचता था और मेरा मित्र नित्य ही वहां जाता था ।।३७।।३८।।३६।४० उस समय मेरा मित्र मुझे बार बार समझा बुझा प्रसन्न कर अति आदर पूर्वक विष्णु मन्दिर में लेगया और मित्र के साथ मैंने वहीं बैठकर कथा सुनी तथा उस पापनाशक चातुःसामुद्रिक कूप की भी कथा सुनी इस कूप में चारों समुद्र आकर निवास करते हैं वहां महाफल देने वाले उस कूप का माहात्म्य सुन कर सब महाजन श्रोताओं ने कथा वाचक को दान दिया है मित्रने मुझे भी दान देने को प्रेरित किया परन्तु मैंने मौन धारण किया मित्र ने पुनः कहाकि यथाशक्ति दीजिये तब मित्र के आग्रह से मैंने एक माषा भर सुवर्ण दान किया है ४१।।४२४३।४४४५ तब बहुत समय पश्चात् में मृत्यु को प्राप्त हुआ हूं तदनन्तर वैवस्वतकेनियोग से अपने पूर्वकर्मों के द्वारा दुर्गम दुस्तर प्रेतयोनि को प्राप्त हुआ हूं न दान

किया है न हवन किया है और न किसा तीर्थ में स्नान किया है तथा न पितरों को तर्पण दिये हैं अतः मैं प्रेत योनि को प्राप्त हुआ हूँ जो आपने मुझसे पूछा है, वह मैंने कहदिया है ॥४६॥४७॥४८॥आप शीघ्र मथुरापुरी में जायिये प्रेत के वचन सुनकर विप्र कहने लगा कि वृक्ष-मूल में रहकर आप के प्राण किस प्रकार जीवित हैं ॥४९॥५०॥ प्रेत ने कहा-जो मैंने अपने पूर्व जन्म के वृत्तान्त कहे हैं याचक के लिये जो एक माषा सुवर्ण दान दिया है, उसीसे उसी दान प्रभाव से मैं जीवीत नित्य तृप्त हूं अकामना से दिये का भी यह फल है ॥५१॥५२ प्रेत योनि को प्राप्त होनेपर भी मेरा ज्ञान नष्ट नहीं हुआ है तदनन्तर उस व्यापारी ने मथुरापुरी में आकर जो कुछ प्रेतने कहे थे वह सब कार्य किये उस कृपसे , वह प्रेत योनि से छूटकर शीघ्र स्वर्ग गया।५३।५४ हे भूमे ! यह मथुरा माहात्म्य मैंने तुझे सुनालिया है चतुःसामुद्रिक कूप में पिण्डदान देने से परम गति मिलती है इस मथुरापुरी में तीर्थ में घर में देवस्थान में अथवा चत्वर में चाहे जिस किसी में भी मरे परन्तु मुक्ति को प्राप्त होते हैं।५५ ५६। अन्यस्थान का किया पाप तीर्थ आकर नष्ट होता है और तीर्थ में जो पाप किये जाते हैं वे वज्रतुल्य होजाते हैं और मथुरापुरी में किया पाप वहीं नष्ट हो जाते हैं यह मथुरापुरी महा पुण्य दायक है जिसमें कि पाप रहते ही नहीं हैं।५७।५८।कृतघ्न मदिरा पान करने वाला चोर तथा भग्नव्रत वाला मनुष्य मथुरापुरी में जाकर सर्व पापों से मुक्त होता है जो पुरुष एक हजार वर्षतक एक पैर से स्थित होकर व्रत करे उसका जो फल है उससे भी अधिक फल मथुरापुरी में निवास करने का है ।५९।६०। जो मनुष्य दूसरे की स्त्री के साथ गमन करने वाला है जो मनुष्य अजितेन्द्रिय है मथुरा निवासी वे सब देवता होते भी नर विग्रह वाले हैं, बलिभिक्षा देने वाले वे मत क्रोध रहित और जो तीर्थ स्नान करने वाले हैं वे नर विग्रह देवता हैं ॥६१॥६२॥ जो फल अन्य हजार ब्राह्मणों का पूजन करने से मिलता है, वह मथुरा में एक ब्राह्मण के पूजन से मिलता है जहां कि मथुरा मण्डल अनूच है तथा

अपर चतुर्वेद है चारों वेदों से युक्त होने पर भी मथुरा के समान कोई नहीं हो सकता है ।।६३।।६४। जहां मथुरा निवासी लोग वास करते हैं वह सब स्थान तीर्थ रूप होते हैं तथा मङ्गल रूप होते हैं चतुर्वेद को छोड़कर सर्वदा मथुरा निवासी की पूजा करनी चाहिये पृथिवी में जितने सिद्धगण, भूतगण, तथा देवगण हैं वे सब मथुरा निवासियों को चतुर्भुज रूप देखते हैं जो मथुरा पुरी में निवास करते हैं वे विष्णु रूप ही हैं ज्ञानी मनुष्य मथुरा निवासियों को विष्णुरूप देखते हैं और मूर्ख नहीं देखते हैं ।।६५।।६६।।६७।।६८।। इति श्रीवराह पुराणे मथुरा माहात्म्ये कूप प्रभागे ब्राह्मण माहात्म्यं नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायां पञ्चषष्ठ्यधिक शततमोऽध्यायः ।।१६५।।

अथ एक सो छासठवाँ अध्यायः ॥

दोहा—असिकुण्डकी महिमा अब, करि हैं सकल बखान ।।
पुरातन कथा सुनाकर, श्रीवराह भगवान् ।।

पृथिवी ने कहा- हे महादेव ! अनेक प्रकार के तीर्थों का वर्णन सुनादिया है हे प्रभो ! अब असिकुण्ड का माहात्म्य सुनाइये ।।१।। श्रीवराह ने कहा हे भद्रे ! लोक विख्यात एक सुमति नाम वाला राजा था वह तीर्थ यात्रा के व्याज से पहिले स्वर्ग में गया था ।।२।। उसके स्वर्ग में चले जाने पर उसका पुत्र विमति नाम वाला अपने पितृ पैतामहादियों से चले आये राज्य में स्थित होकर राज्य करने लगा ।।३।। उस विमति के राज्य करने पर उसके सामने नारद मुनि आया और उस विमति नाम राजा ने नारद मुनि को यथोचित आसन पाद्य अर्घ्य दिया उसके दिये आसन अर्घ्यादि को ग्रहण करके नारद मुनि ने कहाकि पितृ ऋण से जो पुत्र उऋण होता है वह पुत्र धर्म का भागी होता है ।४।।५।। इतना कह कर नारद मुनि वहीं पर अन्तर्धान होगया नारद के चले जाने पर राजा अपने मंत्रियों से पूछने लगा कि नारद मुनि ने पितरों के निमित्त क्या कहा है अनृण्य जो वाक्य कहा है वह मेरी समझमें नहीं आया है तदनन्तर मंत्रगणतीर्थ यात्रा निमित्त उस राजा के पिता का मरण जान कर राजा को निवेदन किया

कि तीर्थयात्रा प्रसंग से आपका पिता स्वर्ग गया है अतः एवम् नारद ने आपके पिता का आनृण्य सुनाया है अमात्यों के वचन सुनकर राजा ने तीर्थ यात्रा की है ।६॥७॥८॥९॥ राजा विमति की बुद्धि हुयी कि मैं मथुरा पुरी में गमन करूं और वर्षात् के चार महीनों में वहां निवास करूँ क्योंकि वर्षात में वहां सब तीर्थ आकर निवास करते हैं विमति नाम राजा के मथुरा में आने पर तीर्थ अपने आपस में कहने लगे कि विमति के साथ हम स्वयं युद्ध नहीं कर सकते हैं अतः कल्पग्राम में जाते हैं जहां कि वराह रहते हैं हे वसुन्धरे ! इस प्रकार आपस में सलाह करके सब तीर्थ कल्पग्राम में गये वहां पर मैं इच्छानुसार वाराह रूप से स्थित हूँ जभी मैं सामने से देखता था तभी आगे से सारे तीर्थ स्थित थे सारे तीर्थ कहने लगे कि हे विष्णो ! हे अच्युत ! हे अचिन्त्य ! आपकी जय हो ।।१०॥११॥१२॥१३॥१४॥ हे देव हे विश्वेश ! हे कर्त्तेश ! आपको नमस्कार करते हैं श्रीवराह ने कहा हे वसुन्धरे ! तीर्थों के इस प्रकार स्तुति करके मैंने इस प्रकार कहा कि जो आपके मनमें है वह वरदान मांगिये तीर्थों ने कहा है देवेश ! हे वराह ! यदि हमें अभय देना चाहते हैं तो पापी विमति ने हमें दारुण दुःख देदिया है अतः यदि हमें सुख देना चाहते हो तो उसको मथुरा पुरी से वापिस कीजिये ॥१५॥१६ ।१७॥ श्रीवराह ने कहा कि सब तीर्थों की भलाई के लिये मैं उस विमति को मारूँगा और तीर्थों के नियोग से मथुरा पुरी में आयकर उसके साथ युद्ध करके दिव्य तलवार से वह बलके घमंड वाला राजा विमति मैंने मार गिराया है और मैंने तलवार की नोंक पृथिवी पर रखी तलवार की नोंक से मिट्टी उठालेने पर वहां पर देवर्षिविधि निर्मित महादिव्य कुण्ड हुआ है हे वसुन्धरे ! अतः उसका नाम असिकुन्ड हुआ है ॥ १८॥ १९॥ २०॥ अब वहां का आश्चर्य वर्णन करता हूं जो कि मन और कर्ण को सुख देने वाला है उस आश्चर्य को पाप रहित सिद्ध मनुष्य देखते हैं। जितेन्द्रिय मनुष्य द्वादशी तथा चतुरदर्शी के दिन उसके फल को देखते हैं तथा उस फल को प्राप्त वही करते हैं ॥२१ ॥२२॥

हे देवि ! उस समय मे मथुरा में आया था हे भद्रे ! मथुरा से पश्चिम की ओर मैं स्थित हूं मथुरा में वाराह तीर्थ में चार मूर्तियां हैं जो उन मूर्तियों का दर्शन करता है वह पाप मुक्त होता है एक वाराह मूर्ति है दूसरी नारायण की मूर्ति है तीसरी वामन की मूर्ति है और चौथी राघव की मूर्ति है जो मनुष्य असिकुण्ड में स्नान करके इन चारों मूर्तियों का दर्शन करता है उसने अवश्य चारों समुद्रों पर्यन्त पृथ्वी की परिक्रमा करली है और वह सारे मथुरा के तीर्थों का फल प्राप्त करता है ॥२३। २४॥२५॥२६॥२७॥ वहां के सब तीर्थों में असि कुण्ड तीर्थ बड़ा है जो मंख्या तीर्थों की दक्षिण उत्तर में कही है असिकुण्ड से लेकर तीर्थानुक्रमणिका श्रेष्ठ है सुप्तोत्थित मनुष्य भी द्वादशी दिन स्नान करे और उन मूर्तियों का दर्शन करे तो ब्रह्म समान होजाता है उसकी काल विपर्यय होने पर भी पुनरागति नहीं होती है ॥२८॥२६ ३०॥ इति श्रीवराह पुराणे असिकुण्ड प्रभावो नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायां षट्षष्ट्यधिक शततमोऽध्यायः ॥१६६॥

अथः एक सौ सतसठवां अध्यायः ॥

दोहा—इकसौ सतसठमें अब, कहें सकल समुझाय ॥
विश्रान्ति तीर्थ महातम, अरु कथा एक गाय ॥

श्रीवराह ने कहा-हे देवि ! जो मैंने विश्रान्ति की सज्ञा कही है जोकि प्रथम राक्षस ने ब्राह्मण को कही थी उसे सुनिये ॥१॥ पृथिवी ने कहा-राक्षस ने किस लिये विश्रान्ति नाम सज्ञा कही है और किस लिये ब्राह्मण ने राक्षस को पूछा है हे प्रभो ! वह सब वह सुनायिये ॥२॥ श्रीवराह ने कहा- उज्जयिनी में एक सदाचार रहित ब्राह्मण था वह न देवताओं की पूजा करता था और न किसी साधु सन्तों को ही नमस्कार करता था ॥३॥ और वह पुण्य तीर्थ में जाकर भी स्नान नहीं करता था वेद वेदाङ्ग रहित था परदारा के साथ व्यभिचार करता था और वह मूर्ख दोनों सन्ध्याओं में शयन करता था वह कभी देव मनुष्य पितरों को नहीं पूजता था ।४॥५॥ पापाचार रत था वह दुर्मति नित्य पापियों का सङ्ग करता था ।

और गृहस्थ धर्म का आश्रय लेकर नित्य मोहित रहता था ॥६॥ स्वायम्भुव मनुने सब धर्मों से बढ़कर गार्हस्थ धर्म बतलाया है जितने सारे जन्तु हैं जिस प्रकार चारों ओर गो स्थित है जिस प्रकार माता का आश्रय लेकर सारे जन्तु जीवित रहते हैं एवम् प्रकार सारे जीव सारे धर्म गृहस्थ का आश्रय लेकर जीवित रहते हैं। ७ ८॥ तदनन्तर वह पापियों के साथ चोरी करने लगा कदाचित् रात्रि में चोरी के निमित्त इधर उधर दौड़ रहा था कि राजा के सिपाहियों ने उसको पकड़ लिया वह सिपाहियों के हाथ से छूटकर दौड़ने लगा कि एक अन्धियारे कूप में गिर पड़ा और मरकर राक्षस योनिको प्राप्त हुआ ॥६ १०॥ और घोर राक्षस रूप से उसी अन्ध कूप में निवास करने लगा तदनन्तर किसी कार्य व्याज के लिये एक महान् साथ आया हे वसुन्धरे ! उनके बीच में एक ब्राह्मण उनकी रक्षा करता था और रक्षोघ्न मंत्र से सर्व सार्थ की रक्षा करता था ॥११॥१२। वह राक्षस उनके समीप आकर ब्राह्मण से कहने लगा राक्षस ने कहा- हे विप्र ! जो तेरे मन में है मैं वह तुझे देता हूँ बहुत समय से यथेप्सित भोजन उपस्थित होगया है हे विप्र ! उठकर तू अन्यत्र शयन कर लीजिये जिससे कि मैं सर्व सार्थ को खाकर तृप्ति को प्राप्त होजाऊँ राक्षस के वचन सुनकर ब्राह्मण कहने लगा ॥१३॥१४॥१५ मै अकेला ही सार्थ की रक्षा करने आया हूँ मैं इसको कभी नहीं छोड़ सकता हूं हे राक्षस ! अतः तू चलेजा सार्थ तो मेरा परिग्रह है मेरे मंत्रबल प्रभाव से तू इस सार्थ को देख भी नहीं सकता है राक्षस ने कहा- हे विप्र ! मेरे भक्ष्य के नष्ट होने पर तेरे ऊपर दोष लगेगा ॥१६॥१७॥ हे विप्रर्षे आप दया कीजिये और मेरा भोजन न दीजिये तदनन्तर वह ब्राह्मण उस दारुण राक्षस से कहने लगा कि हे राक्षस ! तू किस कर्मदोष से राक्षस योनिको प्राप्त हुआ है तब वह पुरातन कथानक को कहने लगा उस राक्षस ने कहा कि हे विप्र ! मैं अनाचार के कारण राक्षस योनि को प्राप्त हुआ हूँ यह सुनकर उसके दुःख से दुःखित होकर ब्राह्मण ने कहा हे राक्षस ! आप

कहा–पापनाशन मथुरा पुरी के क्षेत्रपाल भूतपति महादेव का दर्शन करने से मथुरा की यात्रा का फल परिपूर्ण होता है, महादेवने प्रथम एक हजार वर्ष तक घोर तक किया है महादेव के एक हजार वर्ष तक तप करने पर मैंने महादेव को प्रसन्न करते हुये कहाकि आपका कल्याण हो जो आपके मन में है वह वरदान मांगिये महादेव ने कहा–हे देवेश ! मैंने जान लिया कि आप सर्वज्ञ हैं, हे देव ! मुझे सर्वदा मथुरा में स्थान दीजिये देवदेव महादेव के वचन सुनकर हरि भगवान् कहने लगे कि हे देव ! आप मथुरा में क्षेत्रपाल होंगे हे महादेव ! आपके दर्शन से ही मेरा क्षेत्रफल होगा ॥२॥३॥४॥५॥६॥ और आपके दर्शन के बिना मनुष्य सिद्धि को नहीं प्राप्त करेगा जिसने प्रयत्न पूर्वक जो जिस प्रकार का पुण्य तीर्थ में किया है, मनुष्य उसी सिद्धिको आत्म भावसे भजता है मेरे क्षेत्र की भूमि भवसागर पार करने वाली है जिस प्रकार स्वर्ग में इन्द्र की अमरावती नाम की पुरी अति रमणीय है उसी प्रकार जम्बूद्वीप में मथुरापुरी मुझे प्रिय है, बीसयोजन विस्तार का मेरा माथुर मण्डल है पद पद पर माथुर मण्डल में अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है इसमें विचारणा नहीं करनी चाहिये ॥७॥८॥६॥ हे देवि ! वसुन्धरे ! प्रथम मैंने महान् आत्मा ब्रह्मा का तथा रुद्र का वर्णन नहीं किया है मैंने प्रथम गुप्त से गुप्त छिपा रखा था इस क्षेत्र में सर्वरत्नविभूषित रमणीय पुरी है उसमें जितने तीर्थ हैं उन्हें–सुनिये साठ करोड़ हजार और साठ करोड़ सौ तीर्थ की संख्या मैंने कही है गोवर्द्धन तथा अक्रूर दक्षिण उत्तर में दो करोड़ हैं प्रस्कन्दन तथा भाण्डीर कुरुक्षेत्र समान क्षे हैं पुण्य से पुण्यतर यह विश्रान्ति नाम का तीर्थ है ॥११॥१२॥१३॥१४॥१५॥ वैकुण्ठ तीर्थ सहित असिकुण्ड तीर्थ कोटितीर्थोत्तम कहा है अविमुक्त सोम तीर्थ यमन, तदनन्तर तिन्दुक, चक्रतीर्थ तथा अक्रूर तीर्थ बार हवां आदित्य तीर्थ ये तीर्थ पुण्य हैं, तथा महा पातकों को नाशःकरने वाले हैं ये मथुरा के तीर्थ कुरुक्षेत्र से सौगुना पुण्य दायक है जो इस

मित्र के समान वर्ताव कर रहे हो कहिये कि आपको क्या दूं ।१८।१६।२०।२१। आत्माके उपकार से आपकी क्या भलाई करूं राक्षसने कहा हे विप्र ! यदि देना ही चाहता है तो जो मेरे मन में है वह दीजिये, मथुरापुरी में विश्रान्ति नाम वाले तीर्थ में स्नान करने का जो फल है वह मुझे दीजिये जिस स्नान फल से कि मैं राक्षस योनिसे मुक्त होजाऊं ॥२२॥२३। उसके दुःख से दुःखित होकर ब्राह्मण वचन बोलने लगा ब्राह्मण ने कहा कि हे राक्षस ! तू विश्रान्ति तीर्थ को किस प्रकार जानता है और हे राक्षस ! उस तीर्थ का नाम विश्रान्ति किस कारण से हुआ है वह सब कहिये राक्षस ने कहा एक उज्जयिनी नाम की पुरी है उसमें मैं सर्वदा निवास किया करता था कुछ समय पश्चात् मैं विष्णु मन्दिर में गया उस मन्दिर के सामने एक देववेत्ता ब्राह्मण कथा बाँच रहा था ।२४।२५.२६। और वह ब्राह्मण दिन २ में विश्रान्ति तीर्थ का माहात्म्य सुनाता था उस विश्रान्ति तीर्थ के माहात्म्य श्रवण मात्र से मेरे हृदय में भक्ति उत्पन्न हुयी और हे अनघ ! उस तीर्थ की विश्रान्ति संज्ञा मैंने वहां पर सुनी जगत्स्वामी महाबाहु जनार्दन भगवान् वहां पर विश्राम करते हैं अतः उसकी विश्रान्ति संज्ञा हुयी है राक्षस के वचन सुनकर ब्राह्मण वचन बोलने लगा कि हे राक्षस ! इस विश्रान्ति तीर्थ में एक समय स्नान करने का फल मैंने तुझे देदिया है ब्राह्मण के इसप्रकार कहते ही वह राक्षस राक्षस योनि से छूट कर मुक्ति को प्राप्त हुआ है ॥ २७ ॥ २८ ॥ २६ ॥ ३० ॥ इति श्री वराह पुराणे मथुरा महात्म्ये विश्रान्ति माहात्म्यं नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायां सप्तषष्ट्यधिक शततमोऽध्यायः ॥ १६७ ॥

अथः एक सौ अड़सठवाँ अध्याय

दोहा—क्षेत्रपाल दर्शन बिना मथुरा यात्रा जोइ ।
करे ताकी यात्रा सब कहिहैं निष्फल होइ ॥

पृथिवी ने कहा—कौन क्षेत्रपाल मथुरा की रक्षा करता है हे प्रभो! उसके दर्शन से क्या पुण्य प्राप्त होता है वह कहिये ॥१॥ श्री वराहने

कहा—पापनाशन मथुरा पुरी के क्षेत्रपाल भूतपति महादेव का दर्शन करने से मथुरा की यात्रा का फल परिपूर्ण होता है, महादेवने प्रथम एक हजार वर्ष तक घोर तक किया है महादेव के एक हजार वर्ष तक तप करने पर मैंने महादेव को प्रसन्न करते हुये कहाकि आपका कलयाण हो जो आपके मन में है वह वरदान मांगिये महादेव ने कहा—हे देवेश ! मैंने जान लिया कि आप सर्वज्ञ हैं, हे देव ! मुझे सर्वदा मथुरा में स्थान दीजिये देवदेव महादेव के वचन सुनकर हरि भगवान् कहने लगे कि हे देव ! आप मथुरा में क्षेत्रपाल होंगे हे महादेव ! आपके दर्शन से ही मेरा क्षेत्रफल होगा ॥२॥३॥४॥५॥६॥ और आपके दर्शन के विना मनुष्य सिद्धि को नहीं प्राप्त करेगा जिसने प्रयत्न पूर्वक जो जिस प्रकार का पुण्य तीर्थ में किया है, मनुष्य उसी सिद्धिको आत्म भावसे भजता है मेरे क्षेत्र की भूमि भवसागर पार करने वाली है जिस प्रकार स्वर्ग में इन्द्र की अमरावती नाम की पुरी अति रमणीय है उसी प्रकार जम्बूद्वीप में मथुरापुरी मुझे प्रिय है, बीसयोजन विस्तार का मेरा माथुर मण्डल है पद पद पर माथुर मण्डल में अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है इसमें विचारणा नहीं करनी चाहिये ॥७॥८॥९॥ हे देवि ! वसुन्धरे ! प्रथम मैंने महान् आत्मा ब्रह्मा का तथा रुद्र का वर्णन नहीं किया है मैंने प्रथम गुप्त से गुप्त छिपा रखा था इस क्षेत्र में सर्वरत्नविभूषित रमणीय पुरी है उसमें जितने तीर्थ हैं उन्हें—सुनिये साठ करोड़ हजार और साठ करोड़ सौ तीर्थ की संख्या मैंने कही है गोवर्द्धन तथा अक्रूर दक्षिण उत्तर में दो करोड़ हैं प्रस्कन्दन तथा भाण्डीर कुरुक्षेत्र समान हे हैं पुण्य से पुण्यतर यह विश्रान्ति नाम का तीर्थ है ॥११॥१२॥१३॥१४॥१५॥ वैकुण्ठ तीर्थ सहित असिकुण्ड तीर्थ कोटितीर्थोत्तम कहा है अविमुक्त सोम तीर्थ यमन, तदनन्तर तिन्दुक, चक्रतीर्थ तथा अक्रूर तीर्थ बार हवां आदित्य तीर्थ ये तीर्थ पुण्य हैं, तथा महा पातकों को नाश करने वाले हैं ये मथुरा के तीर्थ कुरुक्षेत्र से सौगुना पुण्य दायक हैं जो इस

को पढ़ते हैं तथा सावधानता से सुनते हैं वे मथुरा के माहात्म्य को प्राप्त कर के परम गति को प्राप्त करते हैं तथा अपने दोनों कुल के दोसौ बीस कुल के पितरों का उद्धार करते हैं जो मनुष्य इस कथा को मरण समय भी स्मरण करता है वह संसार नाशिनी परम सिद्धि को प्राप्त करता है हे देवि ! मैंने यह तीर्थ माहात्म्य तुझे सुनालिया है, और क्या सुनना चाहती है ।१६।१७।१८।१९।२०।२१ इति श्रीवराहपुराणे मथुरा महात्म्ये-काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायां अष्टषष्ट्यधिक शत तमोऽध्यायः ।१६८॥

अथ एक सौ उनहत्तरवाँ अध्याय

दोहा—गुरुड़वृत्तान्त कह सकल, श्रीवराहभगवान ।
मथुरापुरी माहातम पुनि पुनि करें बखान ॥

श्रीवराह ने कहा—मथुरा से बढ़कर त्रैलोक्य में कोई दूसरा क्षेत्र नहीं है, हे देवि ! उसमें मैं सर्वदा निवास करता हूं ॥१॥ सब तीर्थों में मथुरा परम प्रधान है वहां कृष्ण ने क्रीडा की है मथुरापुरी पदपद पर शुद्ध है कृष्ण के पद से वह सब चक्रस्थित है उसके मध्य में उसका स्थान अर्द्धचन्द्राकार स्थित है ॥२॥३॥ वहां निवास करने वाले लोग निःसन्देह मुक्ति प्राप्त करते हैं कृष्ण की दक्षिण कोटि उत्तर कोटि उनके मध्य सोमचक्रता आकार से भगवान् स्थित हैं वे देव स्नान दानादि कर्म में क्षेत्रफल देने वाले हैं ॥४॥५॥ अतः निश्चय से यहां सब कर्मों में दो कोटी मरण हैं जो मनुष्य नियताशन होकर अर्द्ध चन्द्र में स्नान करता है वह अक्षय लोकों को प्राप्त करता है दक्षिण से आरम्भकर उत्तर में समाप्त करे यज्ञोपवीत मात्र से बहुकुल रक्षित होते हैं ।६।७। पृथिवी ने कहा—हे प्रभो ! यज्ञोपवीत मात्रा का विधान किस प्रकार है वह यथामान करना चाहिये वह कहिये श्रीवराह ने कहा हे वरवर्णिनि ! यज्ञोपवीत की विधि सुनिये ॥८॥९॥ दक्षिणेस आरम्भ करके उत्तर में समाप्त करे, यज्ञोपवीत की यही विधि कही गयी है मनुष्य जिस विधि से निःसन्देह मुक्त होजाता है इसी विधि से उत्तर में समाप्त करे घर से निकल कर जबतक स्नान नहीं किया तब तक

मौन रहे हे वसुन्धरे ! कृष्ण की पूजा करने के पश्चात् भाषण करें स्नान करने पर देवदेव कृष्ण का यथाविधि यजन करे पयस्विनी गाय का दान करे हिरण्य धन आदि का दान करे पश्चात ब्राह्मणों को भोजन खिलावे यही विधि कही गयी है शयन से उठ कर इसी प्रकार कर्म करे ॥१०॥११॥१२॥१३॥१४॥ इस प्रकार कर्म करने वाले मनुष्य की पुनरावृत्ति नहीं होती है। वह मेरे विष्णु लोक में चला जाता है हे देवि ! जो नर अर्द्ध चन्द्र स्थान में मरते हैं वे मेरे लोक में जाते हैं और जो मनुष्य अर्द्ध चन्द्र स्थान में कर्म करके अन्यत्र भी मरते हैं वे भी दाहादिकरण मे युक्त होकर स्वर्ग लोक में जाते हैं सुपुण्यकर्ता मनुष्य की जब तक अर्द्ध चन्द्र स्थान में हड्डियां रहती हैं वह तब तक स्वर्ग लोक में सम्मान पाता है, अर्द्ध चन्द्र विश्रान्ति तीर्थ में विशेषता यह है कि उस तीर्थ में दाहादि करण से युक्त हो गर्दभ भी चतुर्भुज रूप होजाता है-हे वसुन्धरे ! गणेश्वर भूतेश दो कोटि हैं उसके मध्य में मैं नित्य रहता हूं उस स्थान को कभी नहीं छोड़ता हूँ ॥ १५ । १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ हे वसुन्धरे ! मथुरा निवासियों का जो रूप है वही मेरा भी रूप है मथुरा निवासियों के तृप्त होजाता हूँ हे देवि ! महान् आत्मा गरुड़ की कथा सुनिये कि एक समय कृष्ण दर्शन की इच्छा से गरुड़ मथुरापुरी में आया तो उसने कृष्ण को भिन्न रूप नहीं देखा तब वह गरुड़ कृष्ण-दर्शन की इच्छा से दिव्य स्तोत्र पढ़ता हुआ भगवान के सामने गया ॥२०,२१॥२२॥ गरुड़ ने कहा—हे विश्वरूप ! हे आदित्य ! हे विष्णो ! हे अच्युत ! आपकी जय हो हे केशव ! ईशान ! कृष्ण ! आपको नमस्कार हो हे मूर्त ! अचिन्त्य ! लोक विभूषण ! आपकी जय हो इस प्रकार गरुड़ के स्तुति करने पर गरुड़ के सामने से शरीर धारी भगवान खड़े हुये और गरुड़ को सान्त्वना देकर प्रीति पूर्वक यह कहने लगे कि आप का मथुरा में आने का क्या प्रयोजन है तथा स्तोत्र पाठ आपने किस लिये किया है आपकी जो कुछ इच्छा है वह कहिये।२३।२४।२५।२६। गरुड़ ने कहा—हे भगवन् ! आपके दर्शन की लालसा से मैं मथुरा में आ

हूं परन्तु यहां आने पर मैंने आपका रूप नहीं देखा है मथुरा निवासियों के सामने ही आप का स्वरूप भी देखा है सबको एकीभूत देखकर मैं मोह को प्राप्त हुआ हूँ अतः अनुग्रह की इच्छा से मैंने स्तुति की है हे भामिनि ! गरुड़ के वचन सुनकर मधुसूदन भगवान् कुछ हंसकर कोमल वाणी से गरुड़ के प्रति कहने लगे श्रीकृष्ण ने कहा हे गरुड़! मथुरा निवासियों का जो रूप है वही मेरा भी रूप है ।।२७।।२८।। ।।२६।।३०।। जो पापी हैं वे नहीं देखते हैं मथुरा के ब्राह्मणादि मेरे स्वरूप वाले हैं इस प्रकार कहकर कृष्ण भगवान् वहीं पर अन्तर्धान होगये तदनन्तर गरुड़ भी अपने स्थान को चले गया हे देवि ! यह मथुरा निवासियों का स्वरूप तुझे सुना दिया है जिनकी पूजा करने से मैं प्रसन्न हो जाता हूं जो मथुरापुरी में मरते हैं वे मुक्ति को प्राप्त होते हैं तिर्यग्योनियों में गिरे हुये कीट पतङ्ग आदि भी मथुरा पुरी में मरने से चतुर्भुज रूप होते हैं ।।३१।।३२।।३३।।३४।। जो मनुष्य आश्विन्य की द्वादशी तिथि में पद्मनाभ का दर्शन करता है एक देहधारी शिव केशव रूप का दर्शन करते हैं एकादशी दिन समाहित चित्त हो पवि- त्रता से उपवास करते हैं कालिन्दी में स्नान करते हैं वे जन्म मरण रहित हो जाते हैं चैत शुक्ल द्वादशी दिन उपवास करके स्नान करे चिन्ता विष्णु की विधि विधान पूजा करके रात्रि में जागरण करे तो वह भवसागर से छूटजाता है तदनन्तर देवीयशोदा देवकी तथा महावि- द्येश्वरी की पूजा करने से ब्रह्महत्या से मुक्तहोजाता है मथुरासे पश्चिम की ओर जो धर्मराजकी धारा है उसमें स्नान करने सेमनुष्य ग्रहदोष से मुक्त होता है भक्ति युक्त चित्त से जिस स्वरूपका ध्यानकरे विश्रान्ति संज्ञक दीर्घविष्णु केशव का दर्शन करकेसबका दर्शन करनेका फलप्राप्त होता है ३५।।३६।।३७।।३८।। ३६।।४०।।४१ इस प्रकार जो मनुष्य निर्दिष्ट समय पर जप होम तर्पण दान पूजा दर्शन आदिकरता है वह जन्ममरण रहित होकर ब्रह्मता को प्राप्त कर विष्णुके समीप जाता है ४२।। इति श्रीवराह पुराणे प्रागितिहासे मथुरा माहात्म्यं नाम काशीराम शर्मा कृतभाषाटीकायां मेकोन शषत्यधिक शततमोऽध्यायः । १६६।।

अथ एक सौ सहत्तरवाँ अध्यायः ॥

दोहा—गोकर्ण सरस्वती का, अब माहात्म्य बखान।
धरणी सों समुझाय कर, वराह भगवान् ॥

श्री वराह ने कहा—हे वसुन्धरे ! पुनः और भी कहता हूँ उसे सुनिये मथुरा में महात्मा गोकरण की पुरातन कथा सुनिये उसका पिता धन धान्य समृद्धि वाला वसु करण नाम का वैश्य था उसकी सर्व गुण सम्पन्न सुशीला नाम की भार्य्या थी उसको बहुत वर्ष होने पर अपने पति की सेवा में तत्पर होने पर भी उसकी कोई सन्तान पैदा न हुई वह दीन मन से सरस्वती के संगम में सन्तान वाली स्त्रियों को देख कर एकान्त में विलाप करने लगी ॥१॥२॥३॥ वहीं एक वृक्ष के नीचे एक मुनि स्थित था उसने उस सुशीला के विलाप को सुनकर करुण युक्त हो प्रेम पूर्वक धीरे धीरे उस सुशीला से कहने लगा कि हे सुभगे! तू कौन है अपने आप क्यों रोरही है इस प्रकार उसके वचन सुनकर सुशीला ऋषि से कहने लगी कि हे ऋषे ! मैंने बालकों के साथ क्रीड़ा करती सन्तान वाली स्त्रियों को देखा है सो प्रजा सुख मुझे नहीं है अतः मैं रो रही हूं ऋषि ने कहा कि देवता के प्रसाद से तेरा पुत्र होगा गोकर्ण नाम से विख्यात पुण्य दायक एक शिव स्थान है हे यशस्विनि ! अपने पति के साथ स्नान दीप उपहार स्त्रोत तथा नाना विध जपों से उन देवेश गोकर्ण की आराधना कीजिये। ४॥५॥६॥७ ८।६॥ ऋषि के इस प्रकार कहने पर सुशीला ऋषि को प्रणाम कर प्रसन्न करके अपने पति के समीप आकर मुनि का कहा हुआ उपाय पति से यथावत् कहने लगी उस पुत्रोत्पत्ति उपाय को अपनी प्रिया के मुख से सुनकर वसुकर्ण ने कहा कि हे प्रिये ! हमारा मनोरथ सिद्धि होगया है ऋषि ने जो कहा है मेरी भी यही इच्छा थी इस प्रकार कह वैसा ही प्रिया के साथ करने लगा सरस्वती के संगम में स्नान करके गोकर्ण की पूजा करने लगे नित्यप्रति धूप दीप नैवेद्यादि द्वारा भगवान्को प्रसन्न करनेलगे एवम् प्रकार सन्तानके लिये बारहवर्षतकगोकर्ण की आराधना करने पर भगवान् उमापति प्रसन्न होकर कहनेलगे किआप

का सर्व गुण सम्पन्न अति मनोहर पुत्र होगा सस्य सन्तति के समान जिसकी बहुत सन्तान होती है। उसकी केवल देवता के प्रसाद से ही होती हैं। महादेव के इस प्रकार कहने पर वे दम्पतिप्रभात समय सरस्वती में स्नान करके भगवान को अनन्त द्रव्य देने लगे तथा ब्राह्मणों के लिये बहुत दक्षिणा युक्त भोजन वस्त्रादि देने लगे तदनन्तर उस सुशीला ने गर्भ धारण किया वह गर्भ शुक्ल पक्ष के चन्द्रमा के समान दिनोदिन बढ़ने लगा दसवें महीने में चन्द्र कान्ति वाला पुत्र पैदा हुआ ॥१०॥११॥१२॥ १३॥१४॥ १५ १६॥ १७॥१८॥ तदनन्तर वसु कर्ण ने पुत्र जन्म महोत्सव में सब वर्णों को हजारों गाय तथा सुवर्ण वस्त्रादि दिये और उसका जात कर्म करके गोकर्ण नाम से नाम कर्ण किया एवम् प्रकार अन्नप्राशन चूड़ाकर्म उपनयन किया तदनन्तर विवाह किया उस विवाह संस्कार में उसने अनेक दान दिये देवताओं का पूजन किया अनेक प्रकार के मंगल किये ॥१६॥२०॥२१॥२२ तदनन्तर प्रथम बिना सन्तान वाला अपने नौ जवान पुत्र को देख उसने चार भार्य्याओं के साथ उसका विवाह किया वे चारों रूप गुण अवस्था से अति मनोहर थीं परन्तु उन चारों में से किसी के भी सन्तान न हुई उसने भी सन्तान के कारण धर्म करना आरम्भ किया देव पूजन वापी कूप तड़ाग तथा देव मन्दिर आदि बनवाने लगा प्याऊ सदावर्त आदि देने लगा तदनन्तर अनित्यता को मान कर जीवन को चञ्चल अस्थिर जानकर उसने सर्वदा सर्व कर्मों में विनियोग किया चक्रपाणि के पश्चिम ओर गोकर्ण के समीप हरि भगवान् का पंचायतनक प्रासाद बनवाया वहां पुष्प जातियों से विस्तृत बगीचा बनवाया आम, जम्भीर, नारंगी, विजोरे दाड़िम आदि फलों से उस बगीचे को सुसज्जित किया परीखा मण्डल युक्त प्राकार बनवाया कूओं में अर्घट्ट आदि लगा दिये जोकि बगीचे को हर समय सींचते रहें और वे श्रेष्ठ औरतें फूलों को चुनती थीं ॥२३ ॥२४॥२५॥२६॥२७॥२८॥२६॥३० तथा देव मन्दिरमेंस्नान पूजनादिक और मर्जन दीप कर्म आदि किया करती थी वे चारों पतिव्रता थीं और

भगिनी के समान उनका आपसी प्रेम था नित्य काल रात-दिन पति की आज्ञा पालन करती थीं तथा माली नित्य वृक्षों को सींचता था और उन वृक्षों का विधि द्रिष्ट कर्म से विधिवत् पालन करता था ॥३१॥३२॥३३॥ वृक्षों के ऊपर फूल लग करके फल वाले होगये नित्य काल फलों का सुमहोत्सव होने लगा सब वृक्ष फलों को देने लगे उन फलों को बांट खाने लगे सर्वदा इन्द्र के समान वर्ताव होने लगा एवम प्रकार मथुरा में निवास करने पर नित्य प्रति देने से खर्च करने से धन द्रव्य कमती होगया अब शेष धन को देखकर उसको बड़ी भारी चिन्ता हुई और कहने लगा कि माता पिता तथा कुटम्ब का पालन पोषण किस प्रकार करूँगा बड़ा भारी कष्ट है इस प्रकार सोच कर उसने अपने मनसे व्यापार करना निश्चित किया सार्थ को बुलाकर पूर्व मण्डल की तरफ गया वहां उत्तरा पथग अच्छा अच्छा सौदा खरीदकर चतुरता से व्यापार करने लगा लाभ अलाभ का विचार कर उत्तरा पथ देश से बेचने योग्य वस्तुओं को खरीद कर मणिरत्न अश्व रत्न पटरत्न आदि खरीदकर विस्तार पूर्वक लाकर मथुरापुरी के प्रति आने लगा । ३४॥३५॥३६॥३७॥३८॥३९॥४०॥४१॥ एक समय सार्थ सम्भार विश्राम के लिये उद्यत हुआ तब खूब यवस और जलवाले पर्वत समीप सिखर में नदी के तीर पर निवास करने लगे वहीं पर भाण्ड आदि स्थापित कर घोड़ों के घास के निमित कुछ नौकरों के साथ पर्व में गया वहां विहार करने लगा तब उसने एक उत्तम स्थान देखा जो कि प्रसन्न जल वाला तथा नारंगों से विभूषित था वृक्ष फल फूलों से सुशोभित थे उस स्थान में वहां के मालियों ने पाषाण की सन्धियों में फल फूल के वृक्ष लगाये हुये थे वहां एक गुफा के दर्वाजे पर पहुँच कर दृष्टि गेरता है तभी अभ्यागतों के लिये स्वागतादि शब्द सुनाई दियो सुनकर कहने लगा कि यह शब्द कहां से हुआ है पुनः शब्द करते हुये शुक को एकान्त पंजर में देखा ॥४२॥४३॥४४॥४५॥४६॥४७॥४८॥ उस शुक ने कहा-अधि ! यहां आइये ! मैं आपका स्वागत करता हूँ हे पथिक ! पाद

ग्रहण कीजिये यह आपके लिये सुन्दर आसन है, ये स्वादु फल हैं और मधु मास तथा जल हैं जितनी इच्छा है अपने नौकरों सहित इच्छा पूर्वक भोजन कीजिये ॥४६॥५०॥ मेरे पितर आकर के मुझे आशीषा देंगे अतिथि के आने पर जो गृहस्थी अतिथियों का सत् कार नहीं करता है उसके पितर नरक में वास करते हैं और अतिथि के पूजन करने पर पितर भी पूजित होकर अक्षय काल तक स्वर्ग में निवास करते हैं जिसके घर से अतिथि आशा हीन होकर जाता है तो वह अतिथि अपना पाप उसे देकर उसका पुण्य हरण कर लेता है ॥५१॥५२॥५३॥ अतः गृहस्थी को समय अथवा असमय में भी आये हुये अतिथि का पूजन करना चाहिये जिस प्रकार विष्णु है, उसी प्रकार अतिथि को समझना चाहिये, धर्मोपदेशक शुकके मुख से सुभ वाणि सुनकर गोकर्ण प्रसन्न चित्त से कहने लगा कि आप पुराणज्ञ कौन हैं, क्या देवता हैं अथवा गुह्यक है जो कि प्रसन्न रूप वाले आपकी यह अमानुपी वाणि है आप कौन हैं मुझसे सच कहिये आप अतिथि प्रिय हैं, वह मनुष्य धन्य है जिस के समीप आप रहते हैं।५४॥५५॥५६॥५७। गोकर्ण के इस प्रकार कहने पर वह शुक अपनी पुरानी कथा सुनाने लगा कि जिस प्रकार मुझ अवद्धि वाले ने पहिले भयंकर कर्म किया है, वह सुनिये शुक मुनि के तप करने पर मैंने रौद्र कर्म किया है सुमेरु के उत्तर पार्श्व में महर्षि गण से सेवित स्थान में व्यास पुत्र शुक ने घोर तप किया है, वहां उसके तप करते समय पुराण इतिहास नैगम आदि सुनने की इच्छा से ऋषि आये असित देवल मार्कन्डेय भरद्वाज, यवक्रीत, भृगु, अङ्गिरा तैत्तरी रैम्य, कागव, मेधातिथि कृत, तन्तु, सतन्तु, आदित्य, वसुमान, एकत द्वित, वामदेव, अश्वशिरा त्रिशीर्ष, तथा गौतगोदर आदि ऋषि सिद्ध, देवता, पन्नग तथा गुह्यक शुक के सामने धर्म सहिता पूछने लगे और मैं सुकोदर नामका वामदेव का शिष्य श्रद्धायुक्त होकर बाल्यपन से सुनीति में आगे से बढ़ना हुआ सन्देह युक्त प्रश्न को बार बार पूछने लगा, और अन्यायवादि मुझ को

गुरु नित्य रोका करते थे गुरुओं के आगे से कथा में वाक्य बोलने वालों के साथ पूर्व पक्ष के सिद्धान्त जानने की इच्छा वाले बीच में अन्त राक्षेप करने पर गुरुने मुझे रोका ॥५८॥५६॥६०॥६१॥ ६२॥ ॥६३॥६४॥६५॥६६॥६७॥ इस प्रकार गुरु के निषेध करने पर भी जब मैंने नहीं माना तब ऋषियों ने मुझे शाप दिया सुकदेव ने क्रोध से मुझे शाप दिया कि ये वटु बहुत बोलने वाला है, शुक के समान बोलता है अतः वह शुक पक्षी हो जायगा इस प्रकार कहने पर मैं उसी समय शुक पक्षी हो गया और पराक्रम से क्षमा मांगने लगा ॥६८॥ ६६॥७०॥ और मुनियों ने कितनी ही क्षमा मांगी परन्तु शुकदेव ने कहा कि अन्यथा कभी नहीं हो सकता है हे ऋषियो आगामी काल में इस शुक रूप पक्षी को आप लोगों के आग्रह से वरदान दूँगा, यह सर्वदा सद्भाव वाला पुराण तत्व वेत्ता सर्व शास्त्रार्थ जानने वाला हो ॥७१॥७२॥७३॥ पश्चात मथुरा में मरकर ब्रह्म लोक को जायगा शुक देव के दिये शाप तथा वरदान को ग्रहण कर मैं दीन मन हो मथुरा—मथुरा उच्चारण करता हुआ हिमालय की गुफा में निवास करने लगा कदाचित एक भील ने मुझे पकड़ कर पिंजड़े में बन्द कर लिया है वह भी अपनी भार्य्या के सहित मेरे साथ खेल किया करता है मुनि के प्रसाद से मेरा ज्ञान नष्ट नहीं होता है अवस हो करके अपने शुभ अशुभ कर्मों को भोगना पड़ता है ॥७४॥७५॥७६॥७७॥ हे महाभाग ! स्वस्थ हो जाइये, शोक न कीजिये उस शुक के वचन सुन कर गोकर्ण उस सुक मोक्ष प्रदायक बचन सुनकर कहने लगा कि जो वह रमणीय मथुरापुरी पाप नाश कर मुक्ति देने वाली है उसी में मैं निवास करता हूँ व्यापार के लिये यहां आया हूं, पुनः भांड ग्रहण करके वहीं जाना चाहता हूं ॥७८॥ ॥७९॥८०॥ उस शुक ने गोकर्ण को मथुरा निवासी सुनकर अपने को इच्छानुसार गोकर्ण के पुत्र रूप में स्थित किया इतना कहते हुये मिलनी शयन से उठकर क्रोध से बाहर आकर आसन में बैठे हुये

नौकर चाकरों सहित सुन्दर मनोहर गोकर्ण को देखती है वार बार देखकर शुक कहने लगा कि हे मातः ! प्रिय अतिथि के आने पर अतिथि के गोकर्ण का पूजन करना चाहिये शुक के वचन सुनकर तभी पूजा की सामग्री इकट्ठी की तभी वन से भील आ पहुंचा शुक ने पुनः उसके सामने भी अतिथि पूजन की प्रसंशा की भील ने भी शुक का कहना मान कर अतिथि का पूजनादि सत्कार किया और प्रणाम कर मास युक्त सुगन्धित फल गोकर्ण के अर्पण करके कहने लगा कि आपका क्या कार्य्य करूं भील के इस प्रकार कहने पर गोकर्ण कहने लगा यदि देना चाहते हो तो कुछ और दीजिये यह पिंजड़े में बन्द किया हुआ शुक मुझे पुत्र के लिये दीजिये मैं कृतार्थ होकर पिता के समीप मथुरा में जाऊंगा ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ गोकर्ण के इस प्रकार कहने पर भील ने कहा कि हमें यमुना स्नान तथा यमुना सरस्वती संगम स्नान का फल दीजिये तो मैं इस शुक को आपको देदूंगा भील के कहने पर गोकर्ण कहने लगा कि मनुष्य सरस्वती यमुना संगम में स्नान करने से जो फल प्राप्त करता है वह मुझे सुनाइये भील ने कहा-मथुरा का जो कुछ फल है यमुना सरस्वती संगम में द्वादशी व्रत करके जो स्नान फल है वह इस शुक के द्वारा मैंने सुना है यानी वहां स्नान, व्रत इत्यादि करने से वियोनि राक्षस तिर्यक् आदि योनि वाला भी परम गति को प्राप्त करता है, संगम में स्नान करके गोकर्ण भगवान का दर्शन करने से मनुष्य यमपुर नहीं जाता है, विष्णु लोक में जाता है इस प्रकार यमुना सरस्वती संगम का फल मैंने शुक से सुना है ॥ ९० ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ इति श्री वराह पुराणे गोकर्ण सरस्वती माहात्म्ये काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायाम् सप्तत्यधिक शत तमोऽध्याय ॥ १७० ॥

अथ एक सौ इकहत्तरवाँ अध्याय

दोहा—शुक ले घर आ गोकर्ण, बहुत दिन कियो वास ।
द्वीपान्तर गयो धन हित, जटायु पीठहि खास ।

व्यतीत हुये, वाणिज्य फल छः महीने में सिद्ध होता है, तदनन्तर उनका निर्मत्सेन तथा अन्योन्य अभिजल्पन सुनकर गोकर्ण आत्म-निन्दा करने लगा। अपुत्र की कहीं गति नहीं होती है यह निश्चित बात है हे पुत्रक! शुक! इनके बीच में अपुत्रा होने से मैं पापी हो दुःख को भोग रहा हूं इस विषम समय के आने पर जो योग्य है स्वाध्याय षाडगुन्य है वह कहिये क्योंकि आप कार्य के जानने वाले हैं ॥१५॥१६॥१७॥१८। शुक ने कहा—हे तात! चुप हो जायिये आप को डरना नहीं चाहिये इस दुर्काल के उपस्थित होने पर मैं यथोचित कार्य करूँगा आप कुछ फिकर न कीजिये इस प्रकार पिता को आश्वासना देकर शुक शीघ्र उड़ा और ध्रुव की दिशा देख कर उत्तर की तरफ गया, नीच गति से दुस्तर जल की रक्षा करता हुआ याने जल से ऊपर ऊपर उड़ता हुआ योजन की दूरी पर एक उन्नत शिखर वाले पर्वत के समीप गया शुक उस पर्वत को देखकर अति प्रसन्न हुआ और शीघ्रता से उस पर्वत पर उड़ रहा था कि एक परम तेज से शोभायमान विष्णु का मन्दिर दिखाई दिया दिशाओं में घूम कर वह शुक उस विष्णु मन्दिर में प्रवेश कर गया ॥१९॥२०॥२१। २२॥२३॥ और वहां जाकर देखने लगा कि यहां कौन होगा, कोई मेरे पिता का दुख दूर करने वाला होगा। इस प्रकार चिन्ता करता हुआ क्षण भर वहां स्थित हुआ तो क्या देखता है कि सुवर्ण थाल में लिये एक देवी भगवान् का पूजन कर रही हैं और वह देवी ओंनमो नारायणाय कह कर श्रेष्ठ आसन पर बैठ गयीं तदनन्तर निमेष मात्र में रूप यौवन वाली असंख्य देवियां आयीं जिस प्रकार देवी थीं उसी प्रकार वे सब थीं उन सबने गीत वाद्य नृत्य विहार किया विहार करके सारे देवता अपने उत्तम स्थान को गये ॥२४॥२५॥२६॥२७॥ देवता के दक्षिण भाग में जटायु पक्षियों के अनेक लाखों झुन्ड बैठे थे शुक ने लेख्य समान उनके बीच में वार्त चीत करके अपनी भाषा को आगे मे कर के उनके शरण में गया उन जटायु पक्षियों ने उस शुक से

कहा कि आप किस कारण यहां आये हो तथा किस प्रकार यहां आये हो क्योंकि यहां आने को बीच में जलजन्तुओं से युक्त दुस्तर समुद्र है। तब शुक ने कहा कि मेरा पिता नौका में बैठा था कि देव वश प्रचन्ड वायु ने नौका को जल में डुबो दिया है अब उसी पिता के रक्षणार्थ मैं इस पर्वत पर आपके समीप यहां पर आया हूँ आप लोगों से यही मेरी विनती है कि उस मेरे पिता की रक्षा कीजिये ॥२८॥२९॥३०॥३१। ३२। जटायु पक्षियों ने कहा–हे पुत्र! तेरा कार्य ठीक है चलिये हम मार्ग देखें अपने पिता के प्रति नौका के समीप चलिये जिस प्रकार मेरे पाद विन्यास में जल को जिस प्रकार मैं पैरों से काटूँगा उसी से तेरा पिता मेरे पृष्ठ से तैर जायगा मेरी चोंच के अवगाह से सारे जल जन्तु नष्ट होजाते हैं इस प्रकार कह कर जटायु शुक के साथ उस गोकर्ण के समीप समुद्र में पहुँचा शुक ने जटायु के सब हाल कह कर अपने पिता गोकर्ण को जटायु की पीठ पर चढ़ा कर उसी पर्वत में पहुँचे, शीघ्र ही वेग से अगाध समुद्र से पार पहुंच कर कुछ समय पश्चात् गोकर्ण उस विष्णु मन्दिर में गया ॥३३॥३४॥३५॥३६ ।३७॥ मणि रत्नों से युक्त पद्मों से सुशोभित सरोवर में स्नान करके देव पितृ तर्पण करके पुष्प ग्रहण कर विधि विधान से केशव भगवान् की पूज करके रत्नों से खचित यानें जड़ित पञ्चायतनक को देख कर शुक की अनुमति से एकान्त में स्थित हो गया क्षण भर में पुनः वे सब देवता पहिले की तरह आये और यथा। योग्य नाचना गाना करके उनमें से ज्येष्ठा यह कहने लगी ॥३८॥३९॥४०॥ ब्राह्मर्षि क्षुधार्त महात्मा के स्वागतार्थ भोजन के लिये दिव्य फल हैं और पानार्थ उत्तम जल है। वह गोकर्ण को दीजिये जिससे कि उनकी तीन महिने तक तृप्ति हो जाय और जिस प्रकार से कि शोक मोह पाप नष्ट होंजाय उसी प्रकार करके वे सब गोकर्ण को करने लगी कि शोक न कीजिये, हम आपको अभय दान प्रदान करती हैं।

आप स्वर्ग समान स्थान में निवास कीजिये यावत आपकी सिद्धि होवे इस प्रकार कहकर वे सब चली गयीं पुनः इसी प्रकार नित्य दिन दिन में उनको कहतीं थीं और वह वहीं मथुरा में येन केन प्रकार सुख पूर्वक निवास करने लगा सुन्दर सुखद वायु से उपवाहित पोत से उतरा जहां कि वह रत्नाकर समुद्र था भावी दैवयोग से वहीं नौका द्वारा आया और बहुमूल्य के बहुत सारे रत्न खरीद कर लाया जभी कोकर्ण के निवास वाले रत्नकोविद गोकर्ण को देखते हैं तो उसे न देख कर पश्चात्ताप करने लगे कि यह कल्याण रूप गोकर्ण कहां चला गया है मर गया या नष्ट होगया अथवा जलमें डूब गया है निश्चय से यह जान पड़ता है कि यह गोकर्ण शर्मिन्दा होकर समुद्र में डूब गया है इस पिता के समान गोकर्ण के समुद्र में डूबने पर हम सब पुत्र के समान घूम रहे हैं ॥४१॥४२॥४३॥४४॥४५॥४६॥४७॥४८॥ रत्नों का एक बराबर हिस्सा हम देंगे साथ में आने से यह हमारा धर्म है एवम् प्रकार वह गोकर्ण शोक विह्वल होकर द्वीप में निवास करता रहा तदनन्तर माता पिता के निमित गोकर्ण शुक से कहने लगा ।४६॥५०॥ शुक ने मन्त्र मूढ़ होने के कारण गोकर्ण से यह कहा कि मैं आपको छोटे शरीर वाला पक्षी होने के कारण वहां लेजाने में असमर्थ हूँ परन्तु समुद्र मार्ग से मैं स्वयं वहां जाकर आपका सन्देश आपके मातापिता से और आपके मातापिता का सन्देश आपसे आकर कह सुनाऊँगा मैं अवश्य ही वहां मथुरा में जाऊँगा आप आज्ञा दीजिये तदनन्तरगोकर्ण ने शुक के प्रति सत्यकहा कि हे पुत्र! तू यहां से शीघ्र मथुरामें जाकरमेरा सबहाल समाचार मातापितासे कहसुनाना औरपुनः शीघ्र वापिस मेरेपासआना क्योंकि तेरे विना मैं क्षणभर नहीं रह सकता हूं गोकर्ण के इस प्रकार कहने परवह शुक शीघ्र मथुरामें जाकर गोकर्ण के माता पिता से सब हाल कह सुनाये ॥५१॥५२॥५३॥५४॥५५ गोकर्ण के माता पिता ने समाचार सुनकर गोकर्ण को मृतप्राय समझ कर बहुत समय तक रुदन करके अपने पुत्र का प्रेम शुक में

रख लिया और शुक से कहने लगे कि हे शुक ! आप हमारे जीवन के लिये अनुकूल धर्मदर्शि कथा कहिये तब शुक ने विद्या से कथा लाप से पुत्र शोक से पीड़ित उन दोनों को शान्त किया ॥५६॥५७॥५८ तदनन्तर गोकर्ण के साथ जो सार्थ गये थे वे सब समुद्र से अनेक रत्न खरीद कर मथुरा पुरी में आये और वसुकर्ण के पुत्रार्थ उन्होंने सबने विंशति संख्या वाले रत्नों से फूलों के ढेर से पर्वत के समान वसुकर्ण को रत्नों से तृप्त किया उन सबने वसुकर्ण को प्रसन्न करके उसकी आज्ञा पायकर सब अपने अपने घर गये और यावत्काल सुख पूर्वक निवास करने लगे और अपने पिता के तुल्य उस वसुकर्ण वैश्य की सेवा करने लगे ॥५६॥६०॥६१ ६२ इति श्रीवराह पुराणे भगवच्छास्त्रे गोकर्ण माहात्म्ये काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायां मेकसप्तत्यधिक शततमोऽध्यायः॥१७१॥

अथः एक सौ बहत्तरवां अध्यायः ॥

दोहा—इकसौ बहत्तर में अब, कहें वराह महान् ॥
देवियों के प्रसाद से, गोकर्ण मथुरा मान ॥

श्रीवराह ने कहा-गोकर्ण उस द्वीप के शुभ विष्णु मन्दिर में रहने लगा उस मन्दिर में जिस प्रकार पहिले दिन देवियों ने आकर नृत्य पूजनादि किया था उसी प्रकार तेरह दिन तक करती रही और गोकर्ण भी देखता रहा वे देवियां नृत्य गीतों में तथा शास्त्र में कुशल थीं सुन्दर स्वरूप वाली विविध अलङ्कार पहिन कर नित्यप्रति दिन दिन में क्रीड़ा करती थीं उनकी क्रीड़ा को देख कर गोकर्ण अपने गृह को भी भूल गया तदनन्तर कदाचित् गोकर्ण ने उन देवियों को कान्ति हीन देखा ॥१॥२॥३॥ वे देवियां विवर्ण वदन होगयीं दीन हो अलङ्कार वस्त्र रहित होगयीं हीन शरीर के अङ्ग वाली लुंचित शिर वाली केशपद्म नख वाली सब देवियां व्रणों के सहित रुधिर बहाती हुयी विकृत आकार दीखने लगीं अतीव दुःख से पीड़ित उन देवियों को देखकर गोकर्ण मनमें वेदना करने लगा कि अपुत्र की इस

लोक परलोक में कहीं भी गति नहीं है मेरे संग से ये देवियां दशवी दशा को प्राप्त होगयीं हैं ॥४॥५ ६॥ इस प्रकार सोच विचार कर गोकर्ण उन देवियों से रूप विपर्यय का कारण पूछने लगा कि हे महा भाग ! आपका रूप व्यत्यय किस कारण हुआ है वह कहिये ॥७॥ देवियां कहने लगी हे महाभाग ! इस बात को न पूछिये क्यों कि सबमें कारण रूप दैव ही है जिससे कि वह कालात्मक भगवान पुन्य को भोगता है याने पुन्य प्रभाव से भगवान की प्राप्ति होती है अथवा भगवान् को पुन्य वाला प्रिय है और वही नित्य काल उस उत्तर को पूछता है गोकर्ण के पूछने पर भी अति दुःख पीड़ित देवियों ने कुछ न कहा ॥८॥६॥ पुनः निश्चय अर्थ जानने के लिये गोकर्ण ने उन देवियों को प्रणाम करके आग्रह रूप से पूछने लगा जिस प्रकार कि निश्चय जाना जाय गोकर्ण ने कहा अपना वैरूप्य कहिये और यदि मुझ दुःखी से अपना वैरूप्य कारण छिपाते हो तो आज ही मैं अपने प्राणों को अगाध समुद्र में अति दुःखी होकर त्यागता हूं १० ।११॥ गोकर्ण के इस प्रकार कहने पर उन देवियों में से एक देवी कहने लगी कि अपना दुःख उसको सुनाना चाहिये जो दुःख का नाश कर लेवें हे वत्स ! सुनिये मैं अपने वैरूप्य का कारण सुनाती हूँ आप सावधानता से सुनिये ॥१२॥१३॥ मनुष्यों को मुक्ति देने वाली एक रमणीय मधुपुरी है वीर अयोध्याधिपति चतुरङ्ग सेना युक्त हो चातुर्मास्य में तीर्थ सेवन की इच्छा से भक्ति पूर्वक मधुपुरी में जाकर पंचसख्या समन्वित विष्णु के मन्दिर में गया उस मधुपुरी में वाहिरी दिवार से वेष्टित सुन्दर आराम वाटिका है उस वाटिका में कूप प्रावर्तक से सुन्दर सुगन्धि वाली पुष्प जातियां हैं उस वाटिका के सुमनोहर वृक्ष सब ऋतुओं में फलों से भरे रहते हैं उसके समीप ही उस राजा ने निवास किया उस राजा के सेवकों ने फल वृक्ष वाली वाटिका को नष्ट भग्न किया और वाटिका की प्राकार परिखा को स्थण्डिल समान किया १४॥१५॥१६ ।१७॥१७ बहुधा रोकनेपर भी राजा

के पाप बुद्धि वाले सेवकों ने आराम नष्ट कर डाला इस प्रकार उसने वहां आराम नष्ट किया और वह भी दैववश को प्राप्त हुआ इस प्रकार कहकर पिञ्जरे में बन्द किये सिंह के समान कौन हमारी रक्षा करेगा कह कर हाथ से मुख को ढक कर आंसू बहाने लगी और हा कष्ट है इस प्रकार कहती हुयी वह दीना ऊंचे स्वर से रुदन करने लगी और सब देवियों के रोनेका कुररी पक्षि के समान वह प्रकार का शब्द सुन कर गोकर्ण भी अतीव दुःख से पीड़ित होगया तब गोकर्ण ने एक एक देवि के पैरों में नमस्कार किया ॥१६॥२०॥२१॥२२॥ तथा हाथ जोड़कर दीन वाणी से उन सब देवियों को शान्त किया उन सब देवियों के चैतन्य होने पर गोकर्ण मधुर वाणी से कहने लगा कि यदि मैं वहां प्राप्त होजाऊँ तो राजा को वहां से हटादूँ क्या करूँ समर्थ होते हुये भी दैवने मुझे नष्ट कर दिया है ॥२३॥२४॥ गोकर्ण इस प्रकार कहने पर वे सब देवियां चेतना को प्राप्त करके ऐक्य भाव से गोकर्ण से पूछने लगी कि आप कौन हैं और किस स्थान से यहां आये हो ॥२५॥ गोकर्ण ने कहा सुन्दर मुख कपोल वाला मैं गोकर्ण हूँ मैंने पहिले आप लोगों को रूप लावण्य युक्त देख तथा अब शोक बढ़ाने वाली मलिन मुख देख कर आप से कहा है अतः आप अपने विरूपता का कारण कहिये । २६। २७॥ गोकर्ण के पूछने पर उनमें से पुष्प जाति से अलंकृत ज्येष्ठा मालती देवी कहने लगी कि हम पुष्प जाति से वाटिका में रहती हैं और स्वामी हमारा पालन करता रहता है हम मनोहर अङ्गों वाली हैं तथा सर्वदा फूलों की वृद्धि किया करती हैं वही पुष्प समृद्धि रूप लावन्य पहिले आपने देखा है अब हमारा विपर्यय याने विरूपता सुनिये ॥२८॥२६ राजा के सेवकों ने छेदन उन्मूलन से हमें पीड़ित किया है अतः अत्यन्त उद्विग्न होकर हम सकल्मष होगयी हैं पुष्पमाला से हीन होकर मूल स्कन्ध से ही शेष रह गयी हैं इस प्रकार होकर हम निश्चेतन स्थित हैं ॥३०।३१॥ वहां मृतपिंड इष्टक यन्त्रित जो पाषाण देव हैं वही यहां इस पुन्य कर्म में साक्षी है सत्यमय है वर ये उदक पूर्ण

पुण्य उस बचीचे को सींचने वाला है और कलहंस तथा कमलों से सुशोभित तालाब सर्वदा बगीचे को सींचने वाला है हे सत्तम ! जो फलों से युक्त वृक्ष हैं वे सौवर्ण हैं यह ही मनुष्यों को सुख देने वाले बगीचे की रक्षा करते रहते हैं और उनके नाश से जिस प्रकार कि हम विरूपता को प्राप्त हो गयी हैं ॥३२॥३३॥३४। गोकर्ण ने कहा बगीचा बनाने वाले को कृपा देवादियों का जो पुण्य फल प्राप्त होता है सुनाइये ॥३५॥ ज्येष्ठा ने कहा द्विजाति के लिये प्रथम धर्म साधन इष्टापूर्त है इष्ट से स्वर्ग मिलता है और पूर्त कूपादि रचने से मोक्ष प्राप्त होता है वापी कूप तड़ागादि तथा देव मन्दिर जो मनुष्य इनका उद्धार कर रचता है, वह पूर्त के फल को प्राप्त करना है भूमि-दान तथा गोदान से जोफल प्राप्त होता है वह फल वृक्षों को लगाने तथा सींचने से होता है एक पीपल एक पिचुमन्द एक न्यग्रोध तथा दश पुष्प जाती दो दाडिम दो मातुलिंग तथा पांच आम वृक्ष लगाने वाला नरक नहीं जाता है, जिस प्रकार सुपुत्र अतिकृच्छ्र नियम से अपने कुल का उद्धार करता है उसी प्रकार फल फूल वाले वृक्ष भी अपने स्वामी का नरक से उद्धार करते हैं ३६॥३७॥३८॥३९॥४०॥ गोकर्ण ने कहा–जो इन्धनार्थ लाया जाता है उसे अग्निहोत्र कहा जाता है, पथिकों को छाया तथा विश्राम और पक्षियों को स्थान देने से और पत्रमूल त्वक् आदियों से औषधि रूप होकर वृक्ष प्राणियों का उपकार करते हैं वही वृक्षों का दैनिक पञ्चयज्ञ है ॥४१॥४२॥ गृहकृत्य काष्ट तथा क्षुद्र जन्तुओं के घर जहां निवर्तन कहा भिवा पत्रों से समीकृत है शकुनादि वर्ष में दोवार फलते हैं और फलों से सम्वत्सर तक उपकार पिता माता का करते हैं आरोपित वृक्ष पुत्र समान सींचने वाले की रक्षा करते हैं यह तत्व वेत्ता लोग कहते हैं, ॥४३॥४४॥ श्री वराह ने कहा उस पुष्पाञ्जलि वाली मालती देवी के कहने पर वह गोकर्ण इस प्रकार कहकर हा कष्ट है कह मोह को प्राप्त होकर गिर पड़ा पुनः उन देवियों ने उसे आश्वासना देकर कहा कि आप अपना यहां आने का कारण कहिये ।४५।

॥४६॥ गोकर्ण ने कहा कि मेरे वृद्ध माता पिता हैं और चार भार्या हैं मथुरा में मेरा ही यह उद्यान तथा देव मन्दिर है यदि मैं वहां पिता तथा राजा के समीप जाऊँ तो आपका यह दुख उनसे सुनाऊँ और आपके दुःख को दूर करदूँ ॥४७॥४८ ज्येष्ठाने कहा-हे अनघ ! यदि आपको रुचिकर है तो मैं आपको वहां ले जाऊँगी आज ही मथुरा देवी को देखेंगे चलिये शीघ्र विमान यान में आरूढ होकर इन दिव्य रत्न आभूषण तथा फलों को ग्रहण कीजिये और वहां मथुरा में जाकर उपायन रूप से राजा के अर्पण कीजिये इस प्रकार कहकर हरि को नमस्कार करके देवियों सहित गोकर्ण विमान समान यान में आरूढ होकर उस स्थान से उड़चले जहां कि वह राजा स्थित था और राजा के समीप जाकर बहुत सारे रत्न राजा को अर्पण किये ॥४६॥५०॥ ॥५१॥५२॥ राजा दर्शन मात्र से सन्तुष्ट होकर सम्मान पूर्वक उसका पूजन कर कहने लगा कि आपका स्वागत हो राजा ने कुबेर के समान रत्न देने वाले गोकर्ण को अपने अर्द्धासन पर बिठाया तब गोकर्ण ने कहा कि आप इस स्थान से कुछ दूर चलिये, मैं आपको आश्चर्य दिखाऊँगा तथा कहूँगा राजा ने उस बात को स्वीकार करके सेनापति से कहा कि आधे मुहूर्त में जिस प्रकार सेना यहां से चली जाय वह कीजिये शीघ्र कीजिये विलम्ब न कीजिये राजा ने जो कुछ कहा सेना पति ने वैसा ही किया तब वे दिव्य रूप वाली देवी बार बार गोकर्ण की प्रशंसा करने लगी और इच्छानुसार उसे वरदान देकर स्वस्ति कह कर स्वर्ग चले गयी ॥५३॥५४॥५५॥५६॥५७॥५८॥ तब सुखी होकर गोकर्ण ने उनका तथा अपना वृत्तान्त राजा को सुनाया और पूर्त का फल सुनाया पुनः राजा ने गोकर्ण को ग्राम, नगर वस्त्र हाथी घोड़े तथा बहुत धन दिया। आश्चर्य रूप परम धर्म आराम का महत् फल सुन कर राजा ने भी बगीचे का निर्माण किया ॥५६॥६०॥६१॥ इति श्री वराह पुराणे गोकर्ण महात्म्ये काशीराम शर्म्माकृत भाषा टीकायां द्विसप्तत्यधिक शततमोऽध्यायः ॥१७२॥

अथ एक सौ तेहत्तरवाँ अध्याय

दोहा—इक सौ तेहत्तर कहैं श्री बराह भगवान्।
मथुरा में वहु कार्य करि, पाया मोक्ष महान्।

श्री वराह ने कहा–सर्व मंगल पूर्वक गोकर्ण मथुरा में निवास करके शुक तथा वृद्ध माता पिता का और अपनी चारों स्त्रियों का यथा विभवानुसार सम्मान पूर्वक पूजन कर के मथुरा निवासि लोगों के द्वारा बगीचा बनवाने लगा ॥१॥२॥ और अपने आप नित्य वहां अविघ्न का महायज्ञ करने लगा, ब्राह्मणों को नित्य भक्ष्य भोज्यादि दान देने लगा ॥३॥ बाल वृद्ध सब लोग महात्मा गोकर्ण का यथोचित गीत वादित्र मांगल्य करने लगे गोकर्ण ने एक एक को छाती से मिला कर प्रणाम किया, माता पिता के चरण पङ्कज में शिर नवा कर और शुक को हृदय में रख कर वह गोकर्ण वैश्य रोने लगा, जिस शुक के प्रसाद से जीव रक्षा, धर्म तथा श्रेष्ठ गति मिली है और राजा का या राजा से समग्र लाभ मैंने प्राप्त किया, शुक पुत्र द्वारा मैंने इक लोक और परलोक में प्राप्त किया है ॥४॥५॥६॥७॥ एवं प्रकार अपने बान्धवों के साथ निवास करता हुआ गोकर्ण ने एक शुक नाम से विख्यात शिव का मन्दिर बनवाया है शुकेश्वर की स्थापना करके एक दिव्य यज्ञ रचा वह यज्ञ शुक सत्र नाम से विख्यात हुआ उस यज्ञ में दोसौ ब्राह्मण मिष्टान्न भोजन करते थे उस यज्ञ को करके गोकर्ण ने मरकर मुक्ति प्राप्त की है श्रेष्ठ विमान में बैठ कर शुक स्वर्ग को गया है ॥८॥९॥१०॥ गोकर्ण ने शुक प्रदान में सरस्वती यमुना संगम स्नान फल श्राद्ध तथा सुवर्ण सहित गोदान फल भार्या सहित उस भील को दिया उसी से वह भील भी स्वर्ग को गया शुक के सहित अपनी प्रिया सहित श्रेष्ठ विमान में चढ़कर स्वर्ग गया है। ११॥१२॥ तुझे यह मथुरा का महत् फल सुना लिया है सरस्वती यमुना संगम में स्नान करने का फल गोकर्ण महादेव का फल सुना लिया है, महा कार्य करने से गोकर्ण वैश्य की अक्षय सन्तान हुयी हैं और वह इस लोक में सुख भोगकर परत्र मोक्ष को प्राप्त हुआ हैं ॥१३॥१४॥ इति श्री वराह पुराणे

गोकर्ण माहात्म्ये काशीराम शर्म्माकृत भाषा टीकायां त्रिसप्तत्यधिक शततमोऽध्यायः ॥१७३॥

अथः एक सौ चौहत्तरवां अध्याय

दोहा—इक सौ चौहत्तर कहें, महाब्राह्मणाख्यान।
धरणी सों समुझाय कर, श्रीवराह भगवान् ॥

श्रीवराह ने कहा—हे वसुन्धरे ! पापियों को भी मुक्ति देने वाले महापातक नाश करने वाले सरस्वती यमुना संगम का प्रभाव पुनः और भी कहता हूँ ॥१॥ पहिले यहीं एक महा नाम का ब्राह्मण सुना जाता है, वह ब्राह्मण वन में निवास करता था स्वाध्याय युक्त होकर वह योग वेत्ता ब्राह्मण नित्य जप तप होम परायण होकर अपना समय व्यतीत करता था। इस प्रकार वन में निवास कर ब्रह्म लोक जीतने की इच्छा से जप तप होम करते उस ब्राह्मण को बहुत वर्ष व्यतीत हो गये ॥२॥ ॥३॥४॥ तदनन्तर उसकी बुद्धि तीर्थाटन को उद्यत हुयी कि पुनः इस कलेवर को तीर्थ जलों से प्रक्षालित करता हुँ विधिवत् साक्षात् सूर्योदय के प्रति गमन किया, असिकुन्ड से प्रदक्षिणा करके क्रमसे सब तीर्थों में जाकर स्नानादि कृत्य करके मैं पवित्रात्मा होता हूं इस प्रकार विचार करके वह महा नाम का ब्राह्मण मथुरापुरी से चल पड़ा ॥५॥६॥७॥८॥ पूजा नमस्कारादि करके मार्ग में चलने लगा, मार्ग में चलते समय उसने अतिभीषण पांच प्रेतों को देखा ॥६॥ कण्टक युक्त शब्दरहित निर्जन वन मार्ग में प्रेतों को देखकर कुछ भयभीत होकर आंख खोल कर कुछ समय वहीं पर स्थित होकर तदनन्तर धैर्य्य धारण करके भय को त्याग कर मधुर वाणी से प्रेतों को पूछने लगा कि भयङ्कर मूर्त्ति वाले आप कौन हैं आप लोग किस दुष्कृत कर्म से भयङ्कर स्वरूप वाले हुये हैं। १०॥११॥१२॥ आप लोग सर्वदा एक स्थान में रहते हैं अथवा घूमते रहते हैं और आप लोगों का ऐसा भयंकर स्वरूप किस कारण से हुआ है। मुझे आपका स्वरूप देखकर अत्यन्त भय लग रहा है। आज तक मैंने ऐसा भयंकर स्वरूप नहीं देखा। प्रेतों कहने लगे भूख प्यास से पीड़ित होकर नित्य दुःखी रहकर हम सब दुर्बुद्धि से युक्त हो

ज्ञान हीन तथा निश्चेष्ट रहते हैं हम दिशा विदिशा मार्ग आकाश पृथ्वी और दिन को कुछ नहीं जानते हैं जो यह दुःख मिला है यह सुखोदय का फल है सूर्योदयन के प्रति यह अप्रकाम मालूम पड़ता है मैं पर्युषित नाम वाला हूँ दूसरा सूचीमुखनाम वाला है तीसरा शीघ्रग है चौथा रोधक है तथा पांचवां लेखक नामका है ब्राह्मण ने कहा-कर्म से प्रेत योनि में गये हुओं का नाम नहीं होता है यह क्याकारण है जो कि आप नाम सहित हैं प्रेत ने कहा– मैं सदा स्वादु भोजन करता हूँ और द्विज को पर्युषित देता हूं हे द्विज ! इसीकारण मेरा नाम पर्युषित हुआ है और इस दूसरे ने अन्न की इच्छा वाले बहुत ब्राह्मण सूचित किये हैं अतः इसका नाम सूचीमुख हुआ है द्विज ने ही समर्थित किया है जिससे कि यह शीघ्र चलता है १३ १४ । १५॥१६॥१७॥ १८॥१६॥२०॥ अतः इसी कारण से इसका नाम शीघ्रग हुआ है एक द्विज भय से घरके बीच में ही खाता है उद्विग्नमन से समारूढ़ होकर गृह मध्य खाता है अतः इसका नाम रोधक कहा जाता है नित्य मौन रहकर भी प्रार्थना करने पर भी पृथ्वी को खोदे हमसे भी अति पापी है इसी कारण इस का नाम लेखक हुआ है मदसे लेखक भाव को जाता है रोधक अवाक्‌शिरा होता है शीघ्रग पङ्गु होता है तदनन्तर सूची मुख प्रधान है उपित केवल ग्रीव, लम्बोष्ट, महोदर, वृहद्वषण, शुष्कांग पाप ही से होता है हे द्विज ! यह आत्म वृत्तान्त सब तुझे सुना दिया है ॥२१॥२२॥२३॥२४॥२५॥ यदि आपकी सुनने की श्रद्धा है तो अपनी इच्छानुसार हमें पूछिये । ब्राह्मण ने कहा–जो जीव पृथ्वी में रहते हैं सब आहार जीवी हैं आपका आहार मैं सुनना चाहता हूँ कि क्या है । प्रेत कहने लगे हे सब प्राणियों पर दया करने वाले द्विज ! हमारा भोजन सुनिये जिसको सुनकर कि आप नित्यशः बार बार निन्दा करोगे श्लेष्ममूत्रपुरीष से तथा स्त्रियों के समीप अपवित्र घरों में प्रेतनित्य भोजन करते हैं जो वलिमंत्र से हीन हैं जो दान हीन हैं जो गुरुओं का पूजननहीं करते हैं जो स्त्रियों से जीते हुये हैं उन घरों में प्रेत भोजन करते हैं जो वर्तनों को फैलायेरखते हैं जो जूठको फैलाते हैं तथा जहांनित्यकलह

होता है उन घरों में प्रेत भोजन करते हैं जो विधिहीन अपात्र को दान, देता है निन्दित द्विजातियों, निन्दित कुल में पैदा हुये के तथा दुष्कृत कर्म करने वाले के घर में प्रेत भोजन करते हैं उन उन से दिया विधि हीन भोजन हमें मिलता है ॥२५॥२७॥२८॥२६॥३०॥३१ ३२॥ यह हमारा पाप युक्त भोजन है हे द्विज ! अब हम आपसे यह पूछना चाहते हैं कि पापी जिसप्रकार प्रेत योनि से मुक्त होजाय वह कहिये ब्राह्मण ने कहा-एक रात्र त्रिरात्र कृच्छ्चान्द्रायणादि व्रतों के करने से पवित्र होकर मनुष्य प्रेत योनि को नहीं प्राप्त करता है नित्य श्रद्धापूर्वक मिष्ठान्न पान देने वाला नित्य यतियों की पूजा करने वाला प्रेत योनि में नहीं जाता है तीन एकवा पाँचों को जो नित्य पोषित करता है वह सर्वभूतदयालु प्रेत नहीं होता है नित्य देव अतिथि गुरु तथा पितृ पूजन करने वाला प्रेत नहीं होता है क्रोध जीतने वाला अमात्सर्य, तृष्णासंग रहित, क्षमावान् दानशील, मनुष्य प्रेत नहीं होता है शुक्ल पक्ष वा कृष्ण पक्ष की एकादशी, और सप्तमी, तथा चतुर्दशी को जो नित्य उपवास करता है वह प्रेत नहीं होता है गो, ब्राह्मण तीर्थ पर्वत नदी तथा देवताओं को जो नित्य नमस्कार पूजन करता है वह प्रेत नहीं होता है ॥३३॥३४॥३५॥३६॥३७॥३८॥३६ ४०॥ प्रेत कहने लगे-हमने आपसे प्रेत योनिसे छूटने का उपाय सुन लिया है हे महामुने ! अब आप यह सुनाइये कि किस पाप कर्म करने से प्रेत योनि मिलती है ब्राह्मण ने कहा-यदि ब्राह्मण शूद्रान्न खाकर मरे तो उस शूद्रान्न के पेट में रहने पर प्रेत होता है नग्न कापालिक व्रत वाले पाषण्डियों के साथ एक आसन पर बैठकर भोजन करने से मनुष्य प्रेतयोनि को प्राप्त होता है और स्पर्श से भी पूर्ण पुण्य का नाश होकर प्रेत होता है ॥४१॥४२॥४३॥४४॥ पाषण्डियों के आश्रय में रहने वाला मदिरा पान करने वाला परस्त्री गमन करने वाला नित्य वृथा मांस में प्रीत करने वाला मनुष्य प्रेत योनिको प्राप्त होता है ॥४५॥ देव द्रव्य ब्राह्मण द्रव्य गुरुद्रव्य हरने वाला और शुल्क लेकर कन्या को देने वाला प्रेत योनि में जाता है ४६॥ माता पिता भ्राता भगिनी स्त्री तथा

पुत्र को जो बिना अपराध के त्याग देता है वह भी निश्चय से प्रेत होता है ४७ अयाज्य के यजन से याज्य के परिवर्जन से और शूद्र सेवा करने से मनुष्य प्रेत होता है ४८।। ब्रह्महत्या करने वाला कृतघ्न गोहत्या करने वाला और पंचपातकी तथा भूमिकन्या हरण करने वाला मनुष्य प्रेत योनिको प्राप्त करता है ४६।। नित्य हित चाहने वाले उपदेशदेने वाले गुरु की आज्ञा पालन न करने वाला मनुष्य भी प्रेत होता है ।।५०।। जो मनुष्य दुर्जनों से तथा नास्तिकों से प्रतिग्रह लेता है वह आहारादि रहित पापी मनुष्य प्रेत होता है ५१। प्रेत कहने लगे अधर्म परायण होकर जो मूर्ख ऐसा कर्म करते हैं उन विरुद्ध कर्म करने वाले पापियों की कोई गति कहिये ५२।। ब्राह्मण ने कहा-जो धर्मविमुख दयादान वर्जित मूर्ख मनुष्य हैं उनकी केवल एक मथुरा पुरी में यमुना सरस्वती संगम में गति है ।।५३।। भाद्रपद महीने के श्रवण द्वादशी योग में उस संगम में वामन भगवान् की पूजा करें तथा हवन करे ।।५४।। सुवर्ण, अन्न, वस्त्र, छत्र, उपानत का दान करे स्नान कर के पितृतर्पण करके करक दान देकर तीर्थ यात्रा करता है वह प्रेत योनि से मुक्त होता है मार्ग में स्थित होकर जो नमस्कार करता है वह श्रेष्ठ विमान में बैठकर विष्णुलोक में जाता है।।५५, ५६।। विधिपूर्वक जो नर उस तीर्थ में स्नान करता है ध्यान तथा कीर्तन करता है वह गंगा स्नान का फल प्राप्त करता है ।।५७।। और जो प्रेत होकर भी उस तीर्थ का माहात्म्य सुनता है विष्णु का अक्षय स्थान प्राप्त होता है यह मैंने सुना है ।५८।। प्रेत कहने लगे-हे मुने ! इस व्रत की विधि हमें सुनाइये जिसके करने से प्रेत योनि से मुक्त होजावें ।।५६। ब्राह्मण ने कहा-इसी प्रकार इस व्रत का विधान पहिले राजा मान्धाता के पूछने पर वशिष्ठ ऋषि ने राजा को सुनाया था वही मैं भी सुनाता हूं आप सावधान होकर सुनिये यह विधान प्रेत योनि को छुड़ाने वाला है पवित्र है तथा श्रेष्ठ वरदान देने वाला है। ६०।।६१।। भाद्रपद महीने की श्रवण नक्षत्र युक्त शुद्ध द्वादशी दिन उस तीर्थ में स्नान, दान, हवन करने से लक्षगुणाफल होता है ६२।। उस सगममें स्नान कर वामन भगवान् की

पूजा करके विधिपूर्वक कलश दान देने से जो फल प्राप्त होता है उसे सुनिये ॥६३॥ सुवर्ण उपस्कर युक्त सैकड़ों कपिला गाय दान से जो फल प्राप्त होता है वही फल श्रवण द्वादशी में उस तीर्थ कर्म से होता है ॥६४ . श्रवण द्वादशी दिन व्रत करने से राक्षस योनि नहीं मिलती है और कल्प पर्यन्त स्वर्ग में निवास करता है ॥६५॥ और तदनन्तर स्वर्ग से भ्रष्ट होकर वेदशास्त्रज्ञ ब्राह्मण होता है तथा जातिस्मर महायोगी मोक्षधर्म परायण होता है ॥६६॥ ध्यान युक्त भाव से मुक्ति को प्राप्त होता है सुवर्ण, और रत्नयुक्त अन्न तथा लाभ पूर्वक सुवर्ण की वामन मूर्ति बनाकर उपानत् छत्र समन्वित करे विधिपूर्वक मंत्र पुरःसर उस वामन मूर्ति की स्नान पूजनादि क्रिया करके मनुष्य होम मन्त्रों से हवन करे तथा ब्राह्मण को निमन्त्रित करे ६७॥६८॥ ६९॥ हे वरद ! हे अनन्त ! श्रीपति ! मेरे अनुग्रह से आयिये और निज अन्श से इस स्थान को अलंकृत कीजिये ॥७०॥ आवाहनम्– आप नक्षत्र रूप से जो द्वादशी दिन आकाश में स्थित हुये हो मनोवाञ्छित सिद्धि के लिये मैं उस नक्षत्र रूप आपको नमस्कार करता हूं ॥७१॥ नक्षत्रम् हे कमलालय हे केशव ! कमल नाम के लिये नमस्कार करता हूँ। (स्नानम्) हे अमूर्त ! हे सर्वतोव्यापिन ! आप नारायण को नमस्कार करता हूं ॥७२॥ हे सर्वमय ! हे अच्युत ! जगद्योनि को नमस्कार करता हूं (पूजा) हे केशव ! श्रवण द्वादशी योग में पूजा ग्रहण कीजिये । ७३ । हे शंख चक्रगदाधर ! हे देव देवेश ! धूप ग्रहण कीजिये (धूपम्) अच्युत ! अनन्त ! गोविन्द ! वासुदेव ! आपको नमस्कार हो ।।७४॥ आपके तेज से सारे लोक विवृत होवें अव्यय होवें (दीपम्) हे जर्नादन ! आप सर्व गत तेज हो आपको नमस्कार हो ॥७५॥ वलिका घमण्ड दूर करने के लिये अदिति के गर्भ से पैदा होने वाले तीन पैर से तीनों को जीतने वाले वामन भगवान् को नमस्कार करता हूं ७६॥ (नैवेद्यम्) देवताओं के सम्मत और योगियों की परमगति हे जलशायिन् ! मुझसे दिया अर्घ्य ग्रहणकीजिये ।७७। (अर्घ्यम्) हे सर्वमूर्त ! आप हव्यभुक हो आप हव्य कर्ता हो आप होता हो आप

हव्य हो आप केशव मूर्ति के लिये नमस्कार करता हूं ॥७८॥ इति स्वाहा होमः) हे देव ! आप ही हिरण्य अन्न जल वस्त्रमय हैं (दक्षिणाम) हे जनार्दन ! आप उपानत छत्र दानादि से मेरे ऊपर प्रसन्न होजायिये ॥७६॥ (छत्रादिदानम) पर्जन्य वरुण सूर्य सलिल केशव शिव अग्नि वैश्रवण तथा अव्यय देव मेरे पापों का नाश करे ॥८०॥ (वामनस्तुतिम) अन्न प्रजापति, विष्णु रुद्र चन्द्र इन्द्रभास्कर अग्नि त्वष्टा यम, अग्नि अव्यय आदि मेरे पापों का हरण करें ॥८१॥ (करकदानम) वामन भगवान् बुद्धिदाता हैं स्वयं वामन द्रव्यस्थ हैं वामन दोनों से तारक हैं जोकि वामन को नमस्कार करता है । ८२॥ (यजमानः) वामन को प्रति ग्रहण करता हूं वामन मुझे देता है वामन कान्ति से तारता है वामन के लिये नमस्कार करता हूं ॥८३। (द्विजः प्रतिग्रहीता) कपिला गाय के अंग में चौदह भुवन निवास करते हैं कामदुधा गाय का दान करने से मनुष्यों को सब लोक सफल होते हैं ।८४॥ (गोदानम) हे वामन ! हे सुपूजित देवगर्भ ! अपने पापनाश करने के लिये मैंने आपका विसर्जन करलिया है आप अन्य स्थान को अलंकृत कीजिये ॥८५॥ (विसर्जनम) एवं प्रकार जो विद्वान मनुष्य श्रद्धायुक्त हो द्वादशी के दिन जहाँ कहीं भी नमस्कार करे वह उत्तम फल को प्राप्त करता है ॥८६॥ ब्राह्मण ने कहा—जो नर यमुना सङ्गम सारस्वत तीर्थ में इस पूर्वोक्त विधि से कर्म करता है उसका फल सौगुना अधिक है ॥८७॥ मैंने भी भक्ति श्रद्धा पूर्वक आज तक चैत्र संन्यास रूप से इस तीर्थ का सेवन किया है ।॥८८। इस चेत्र के प्रभाव से ही आप लोग पापकर्म करने वाले भी मुझे बाधित नहीं कर सकते हैं श्रवण द्वादशी योग में व्रत करना चाहिये । ८६। व्रत तभी तक करना चाहिये जब तक एक क्षय होवे तीर्थ का प्रभाव ही प्रत्यक्ष दीखा जाता है ॥६०॥ और मैं इस समय आप लोगों की गति भी माहात्म्य श्रवण मात्र ही साधु देख रहा हूँ, श्री वराह ने कहा— ब्राह्मण के इस प्रकार कहने पर आकाश में नगाड़े की ध्वनि होने लगी और देवता फूलों की वर्षा करने लगे ६१॥ नागों और प्रेतों के विमान आये और प्रेतों के

सुनते हुये देवदत्त इस प्रकार कहने लगा ॥६२॥ इस विप्रके भापण से तथा पुराय सत्कीर्तन से तीर्थ महात्म्य श्रवण से आप लोगों का प्रेतभाव मुक्त होगया है ॥६३॥ अतः सर्व प्रयत्नसे सज्जनों के साथ भापण करना चाहिये मनमें तीर्थ भाव तथा व्रत भाव करना चाहिये ॥६४॥ सरस्वती संगम में स्नान करनेवाले पुरुष के साथ भापण करने से भी दुरात्मा प्रेतों को अक्षय स्वर्ग मिला है ॥६५॥ तीर्थ प्रभाव सुनने से मुक्ति दायक फल है सर्व धर्मों का तिलकरूप है पांच प्रेतों का मुक्ति-दायक है ॥६६॥ जो मनुष्य परम श्रद्धा भक्तिसे इसे सुनता है वह प्रेत नहीं होता है ६७॥ पिशाच नाम का तीर्थ त्रैलोक्य प्रसिद्ध है जिसके श्रवण मात्र से ही मनुष्य प्रेत योनि से मुक्त होता है ॥६८॥ इति श्री वराह पुराणे मथुरा माहात्म्ये सर्व तीर्थे यमुनासंगम प्रभावोनाम काशीरामशर्मा कृत भापाटीकायां चतुःसप्तत्यधिक शततमोऽध्यायः १७४

अथः एक सौ पिचहत्तरवां अध्यायः ॥

दोहा—कृष्णगंगा कालिञ्जर, तीर्थन कहैं प्रभाव ।
वसुब्राह्मणाख्यान अरु, श्रीवराह हरि राव ॥

श्रीवराह ने कहा—हेवरारोहे ! अब कृष्णगंगा का माहात्म्य सुनिये, यमुना स्त्रोत में स्नान करके कृष्णद्वैपायन मुनि ने स्नान करके मनमें उस पाप नाशिनी यमुना का ध्यान करके नित्य कर्म करता था सोम तथा वैकुण्ठ तीर्थ के बीच में कृष्ण गंगा कही जाती है वहीं मथुरापुरी में निवास करके वेदव्यास ने कृष्ण गंगा में तप किया है १॥२॥३॥ वहां श्रेष्ठमुनियोंसे सेवित एकदिव्यआश्रम है उसआश्रम में सदा चातुर्मास्य में तीर्थसेवन निमित्त वेदतत्व के जानने वाले ज्ञानि मुनि आयाकरते थे उन मुनियों में से जिस किसी को श्रोतस्मार्त कर्ममें सन्देह होता था उस सन्देह को सज्जनों की गतिरूप व्यास मुनिअनेकवाक्यों से दूरकर लेताथा ॥४॥५॥६॥ वहीं रहव्यास कालंजरमें तीर्थ पतिमहादेवका दर्शनपूजन करता था जिस महादेव के दर्शनमात्र से कृष्ण गंगाका फलप्राप्त होता है १॥ व्यास मुनिने अमावास्या औरपूर्णिमाके दिन पक्षमें केवल एकदिन फलाहार खाकर बारह वर्ष तक कृष्ण गंगा में निवास किया

॥८। हिमालय में जाकर बदरीकाश्रम में गया और वहां ध्यानयोग परायण हो कर परिचर्या करने लगा त्रिकाल दर्शी शुद्धात्मा सिद्धत्व को प्राप्त हुआ उस आश्रम पदमें रहने वाले का ज्ञान चक्षुसे जो चरित्र देखा कृष्णगंगा तीर्थ में पाञ्चाल्य कुल तन्तु से प्रत्यक्ष मालूम हुआ एक वसुनाम का पांचाल्य ब्राह्मण था वह दुर्भिक्ष से पीड़ित होकर अपनी भार्या के सहित दक्षिण दिशा में गया शिवनदी के दक्षिण कूल श्रेष्ठ नगर में अपनी ब्राह्मण की वृत्ति करता हुआ निवास करने लगा वहां रहने वाले ब्राह्मण के पांच पुत्र तथा एक पुत्री हुई ।.६ ।१०। ११। १२ १३॥ और उस ब्राह्मण ने अपनी कन्या ब्राह्मण को व्याह दी वह द्विज औरत सहित काल सम्पन्न हो वहां संस्थित हुआ कन्या हड्डियों को लाकर मथुरापुरी में आई और पुराण में अर्द्ध चन्द्र क्षेत्र में अस्थि पातन प्रशंसा सुनकर कि अर्द्ध चन्द्र में हड्डि गेरने से जिसकी वह हड्डियां हों वह नित्य स्वर्ग में निवास करता है तीर्थ यात्रा प्रसंग से सब लोग चल पड़े उनही के साथ वह कन्या भी मथुरा पुरी में आई उनकी छोटी बहिन बाल रण्डा हुई ॥१४॥१५॥१६॥१७। वह कन्या सुन्दर रूप सुकुमार अङ्ग वाली थी काले घूँघराले बाल थे केले के वृक्ष के समान गोल मोल उसकी जंघा थी ॥१८।पादांगुलि उसकी आपस में मिली थी नाखूनों में मेहन्दी लगी थी दक्षिणावर्त्ता गम्भीर नाभि त्रिवलियों से शोभायमान थी ॥१६। कमर पतली थी कूख समान थी कुच उन्नत थे कम्बु के समान ग्रीवा थी मुख सम्वृत था कुन्द कुड्मलों के समान दान्तों की पंक्ति थी हनु तथा अधर सुन्दर थे ॥२०॥ आंख, भौं तथा नख सुन्दर थे। सुन्दर भाषण करने वाली थी अर्थात् सम्पूर्ण रूप से सुन्दर थी ॥२१॥ वह कन्या जिस जिस को देखती तथा जो नर उसे देखता वह सब चित्र समान विचेतन हो जाते थे ॥२२॥ एववं प्रकार वह कन्या मथुरापुरी में तीर्थ स्नान करने लगी उस समय कदाचित् कहीं पर उस कन्या को वैश्याओं ने प्रागल्भ्य से देख लिया ॥२३॥ कान्यकुब्ज देशका राजा क्षत्रधर्म में व्यवस्थित था गर्त्तेश्वर महादेव के पास उसका सार्वकालिक यज्ञ होरहा था वह यज्ञ धूमधाम से होरहा था वहदर्शनीय यज्ञ

था उस यज्ञ में वादित्र तथा गाने इन्द्र भवन के समान होते थे उस राजा की जो वेश्या थी उन्होंने उस कन्या को लुभाया गीत नृत्यादियों में प्रीति करने वाली वह कन्या वैश्याओं के धर्म को प्राप्त हुई वह साध्वी कन्या भी वेश्याओं के संग से स्वयं वेश्या बन कर राजा के परिग्रह के साथ सुख पूर्वक निवास करने लगी तथा दिन दिन में विहार करने लगी ॥२४।२५॥२६॥२७।२८ इति श्रीवराह पुराणे मथुरा माहात्म्ये कृष्ण गंगा कालिंजर प्रभावे काशीरामशर्मा कृत भाषाटीकायां पंचसप्तत्यधिक शततमोऽध्यायः॥१७५।

अथ एक सौ छिहत्तरवाँ अध्याय

दोहा—इकसौ छिहत्तर में अब, कृष्ण गंगा प्रभाव।
वसुब्राह्मणाख्यान सब, कहि हैं वराह राव॥

श्रीवराह ने कहा—उस ब्राह्मण का पांचों पुत्रों में से जो सबसे छोटा पुत्र था उसकानाम पंचाल था समूह के प्रसंग से वाणिज्य भाण्ड लेकर वह पंचाल सार्थ के साथ व्यापार के लिये चलपड़ा तदनन्तर बहरूपवान् धनवान पंचाल सबदेश पर्वत तथा नदियों में व्यापार कर मथुरापुरी में पहुँचा और सुखदायक स्थान में निवास करने लगा १॥२॥३ प्रातःकाल अन्य पुरुषों के साथ उस पांचाल ने उस श्रेष्ठतीर्थ में स्नान करके वस्त्रा लङ्कारादि से भूषित हो ऐश्वर्य मदके होने से श्रेष्ठयान द्वारा देवदर्शन करके दान दिये तदनन्तर गर्तेश्वर महादेव में कौतुकार्थ जाकर तिलोत्तमा नाम की कन्या जोकि प्रथम उसकी ही बहिन थी और उससमय वैश्या के भेष में थी उसका अति मनोहर रूप सौन्दर्य को देखकर मोह को प्राप्त हुआ ॥४॥५॥६॥ और लोभ मोह वश होकर उसने बहुमान पूर्वक धात्रेधिका द्वारा तिलोत्तमा को सिले सिलाये कपड़े सैकड़ों कङ्कण, रत्नमय हार आदि दिये तथा अगुरुसार, कपूर, चन्दनादि दिये तदनन्तर दोनों का आपस में प्रेम जुड़ गया और वह पंचाल नित्य प्रति उसके घर में रहने लगा अर्द्ध प्रहर दिन के होने पर अपने शिविरमें आता था उस तिलोत्तमा के ऊपरधनके मदमे आसक्त होकर नित्य उसके घरमें जाता था तथा कृष्णगंगा तीर्थ में स्नान कर

अपने शिविर में आता था, ॥७॥८॥९॥१०॥ इसप्रकार कर्म करते उसको छः महीने व्यतीत हुये, तदनन्तर एक दिन स्नान करने कृष्ण वांगा तीर्थ में आया तभी अपने आश्रम में बैठे हुये सुमन्तु नाम मुनि ने उसे देखा कि, वह कृमियों से युक्त था उसके रोम छिद्रों से अनेक कीड़े निकल निकल कर गिर रहे थे जब तक वह स्नान न करता ढेर के ढेर उसके शरीर से कीड़े निकलते थे और स्नान करने पर वह कीड़ों का निकलना बन्द होकर मनोहर स्वरूप होजाता था, एवं प्रकार सुमन्तु मुनि ने पञ्चाल के हालात बहुत दिन देखे सुमन्तु मुनि अपने मन में विचारने लगाकि यह जवान कौन है किसका पुत्र है इस प्रकार विचार करके सुमन्तु मुनि शङ्कारहित होकर उसे पूछने लगा कि तू कौन है किसका है तेरी जात क्या है तेरे पिता का क्या नाम है ॥११॥१२॥ ॥१३॥१४।१५॥ और तू दिन रात क्या कार्य करता है सो कह– पाञ्चाल ने कहा–पाञ्चाल नाम ब्राह्मण का मैं पुत्र हूं, और व्यापार करने के लिए दक्षिणापथ से मथुरा में आया हूं रात को शिविर में निवास करके प्रातः काल इस तीर्थ में स्नान करने आता हूं स्नान करने आता हूँ स्नान करके गर्तेश्वर महादेव का दर्शन कर कालिञ्जर क्षेत्र में जाता हूं और तदनन्तर अपने शिविर में जाता हूं १६।१७। ।१८। सुमन्तु मुनि ने कहा–तेरे शरीर से निकले आश्चर्य को मैं नित्य देखता हूँ कि जब तक तू स्नान नहीं करता है तब तक तेरा शरीर कीड़ियों से भरा रहता है और स्नान करने पर शुद्धकान्ति होजाता है अतः मालुम पड़ता है कि तू अनजान से कोई बड़ा भारी पाप करता है और इस तीर्थ में स्नान करने से वह किया पाप नष्ट होजाता है कालिञ्जर के संस्पर्श से शुद्ध रूप दीखता है ।१९।२०।२१। मुझ से कहिये कि कौन सा गुप्त पाप तू करता है तीर्थ माहात्म्य से हुये तेरे कल्याण को म पूछ रहा हूं इस प्रकार त्रिकालज्ञ के वचन सुनकरभी वह पञ्चाल कुछ न कहकर ही चला गया पुनः एकान्त में वेश्या के घर जाकर वेश्या से पूछने लगा कितू कौन है हे सुभगे ! तू किसकी है हे प्रियम्वदे ! तेरा कौन देश है और किस कार सुख पूर्वक सर्वदा यहाँ निवास करती है इसप्रकार बड़े आग्रह से पूछने

पर भी उस वैश्या ने कुछ न कहा-और वार-बार पूछने पर भी उसने कुछ नहीं कहा ।।२२ ।२३।।२४।।२५।।२६।।कुछ समय पश्चात उस पञ्चाल ने अपनी प्रिया वैश्या से कहा कि यदि तू सच नहीं कहती है तो मैं अभी तेरे ही सामने अपने प्राण त्याग करता हूं उसका इस प्रकार का हठ देखकर वह वैश्यादुःख युक्तहो कहने लगी अपने माता पिता भाई बन्धु जाति देश सब सुनाने लगी ।।२७। २८।। गंगा के उत्तर तट में एक रमणीय पञ्चाल नगरी है उसमें मेरे माता पिता सुख पूर्वक निवास करते थे, कदाचित राष्ट्र के दुर्भिक्ष से पीडित होने पर मेरे माता पिता दक्षिणा पथ देश में नर्मदा के दक्षिण कूल में ब्राह्मणों के नगर में गये उस नगर में मेरे पिता के पांच पुत्र हुये और छटी में कन्या हुयी हूं पिता ने किसी ब्राह्मण के साथ मेरा विवाह किया पुनः मैं छोटी ही अवस्था में विधवा हुयी हूं जो मेरा सब से छोटा ज्येष्ठ भाई था वह बचपन ही में धन के लोभ से विदेश चला गया उसके चले जाने पर मेरे माता पिता भी मर गये तब मैं सार्थों के साथ अपने पति की हड्डी गेर ने के लिये यहां आयी हूं यहां आकर मैं नित्य तीर्थ स्नान कर देव ब्राह्मणों की सेवा करने लगी एवं प्रकार करती हुयी मैं इनके वश में हुयी और कुलटा धर्म का आश्रय लेकर मैंने अपने कुलका नाश किया है मुझ पापिनी ने दोनों कुल के इकीस पीढ़ी के पितर दारुण नरक में गेर दिये हैं उस तिलोत्तमा वैश्या ने सारे समाचार कहकर ।२६।३०। ।३१।३२।३३।३४।३५।३६। अपने श्रेष्ठ कुलका स्मरण करके रोदन किया और अपने कर्तव्य का स्मरण करके बहुत विलाप करने लगी ।।३७। उसके विलाप को सुनकर अन्य स्त्रीजन समझाने लगे कि हे भद्रे ! आपके का रोने क्या कारण है ।।३८।। तिलोत्तमा के वचन सुनकर वह पञ्चाल मूर्च्छित होकर पृथिवी पर गिर पड़ा वे स्त्रियां उस तिलोत्तमा को समझाकर पञ्चाल को समझाने लगे और अनेक उपायों से उसे समझाकर तथा चेतन करके जब कि वह चेतन हो गया तब उस से उसके मोहका कारण पूछने लगीं ।।३९।।४०।। तब उसने अपने कुल का परिचय दिया, तिलोत्तमा और उन स्त्रियों के सामने[अपने कुल

का विस्तार पूर्वक वर्णन किया तदनन्तर वह पश्चात अगम्यागमन पाप से विमन होगया और वह दुरात्मा पश्चात प्रायश्चित करने को उद्यत हुआ कि ब्राह्मण यदि ब्रह्महत्या करे तथा मदिरापान करे तो उसका प्रायश्चित मुनियों ने देह नाश कहा है। माता गुरुपत्नी, स्वसा, पुत्रिका वधू इनसे यदि गमन करेतो उसकी अग्नि में प्रवेश करके शुद्धि होती है उसकी अन्य शुद्धि नही है ॥४१॥४२॥४३॥४४॥ ब्रह्महत्या करने वाला मदिरा पान करने वाला स्त्री हत्या करने वाला गुरु की शय्या पर सोने वाला अगम्या गमन करके वह उनही के समान होता है, अर्थात ये पूर्वोक्त सब बराबर ही हैं तिलोत्तमा ने उसको अपना ज्येष्ठा भाई जान कर अपने शरीर के सारे आभूषण ब्राह्मणों को दिये और वहां जो कुछ रत्न वस्त्र धन धान्य था वह सब ब्राह्मणों को देदिये शेष जो कुछ धन था वह भी ब्राह्मणों को दिया ॥४५॥४६॥४७॥ कालिञ्जर के भूपार्थ तथा विशेषतः आरामार्थ विधान से कृष्ण गंगा तीर्थ में चिता बनाकर आत्म शुद्धि के लिये अग्नि प्रज्वलित की इस प्रकार निश्चय कर वहीं पर स्नान करके भगवान् को प्रणाम कर पश्चात भी विधि से मुनि गुरु को नमस्कार करके उसी सुमन्तु मुनि के सामने से बैठ गया और मरण योग्य उपायों को करके मथुरा निवासी ब्राह्मणों को बुलाकर अनेक दान दिये वहीं पर अनेक गांव खरीद कर ब्राह्मणों को दान दिये और जापकों से ईशावास्य का दिव्य जप सुनने लगा और उन जापकों को भी विभाग पूर्वक यज्ञ के लिये द्रव्य दिया और्ध्वदेहिक भाग से यथाविधि कल्पित करके तीर्थ में स्नान कर भगवान् को प्रणाम कर कालिञ्जर की पूजा के लिये तथा यज्ञ के लिये कल्पना करके सार्थकों को आज्ञा देकर वहीं पर देवालय बनवाया और धर्मवेत्ता सुमन्तु के चरण पकड़ने लगा ॥४८॥४९॥५०॥५१॥५२॥५३॥५४॥५५॥ तथा कहने लगा कि हे देव! आपका लोमहर्षक दिव्य ज्ञान है अगम्यागमन से ही मैंने पाप किया है हे गुरो! जब से मैं मथुरा में आया हूँ तब से मेरा भगिनी से संयोग हुआ है हे मुने! प्रथम आपने ही मुझे निर्मल दृष्टि

से देखा है मेरे शरीर से कीड़े निकलते आपने देखे हैं और पुनः कृष्ण गंगा के प्रभाव से निर्मल रूप भी आपने देखा है वह सब आपने देखा है और वार वार मुझे पूछा है ५६॥५७।५८॥५९॥ वह आप से कहा हुआ अगम्यागमन का पाप मैंने सच ही किया है अब उस पाप के मिटाने के लिये मैं निश्चय से देहत्याग करता हूं ॥६०॥ हे स्वामिन् ! आपमुझे आज्ञा दीजिये में आपके पैरों में नमस्कार करता हूँ उसके उस पापको सुनकर तथा जलती हुयी चिता को देख उस अग्नि में प्रवेश करने की इच्छा वाले उस पञ्चाल को आकाश वाणी कहने लगी कि आप ऐसा साहस न कीजिये क्योंकि आपका पाप नष्ट हो गया है ॥६१॥६२॥ किस कारण किस के सन्त्रास से आपने यह निश्चय किया है जहां कृष्ण का संचार है जहां कृष्णने सुख पूर्वक क्रीड़ा की है चक्रचिन्हित पैरों से वह स्थान ब्रह्म समान शुभ है अन्यत्र का किया पाप तीर्थ में आने से नष्ट होता है और तीर्थ में किया हुआ पाप वज्रलेप हो जाता है ये दोनों पाप गंगा सागर संगम में स्नान करने से मनुष्य ब्रह्म हत्यासे छूट जाता है, पृथिवी के सब तीर्थों में स्नान करने से जो फल प्राप्त होता है वह फल पांच ही तीर्थों में स्नान करने से मिलता है एकादशी में विश्राम घाट पर द्वादशी में सोकर तीर्थ पर त्रयोदशी दिन नैमिषारण्य में चतुर्दशी दिन प्रयाग में तथा कार्तिकी में पुष्कर राज तीर्थ में कार्तिक की शुक्ल कृष्णपक्ष की इन तिथियों में स्नान करने से मनुष्य सब पापों से मुक्त होता है और मथुरा में तीर्थों से विश्रान्त पञ्च तीर्थक में असिकुण्ड में सरस्वती में तथा कालिञ्जर में पांच तीर्थों के अभिषेक से जो फल प्राप्त होता है ॥६३॥६४॥६५॥६६॥६७॥६८॥७०॥ कृष्ण गंगा में स्नान करने से दिन दिन उससे दशगुणा फल मिलता है ज्ञान अथवा अज्ञान से जो कुछ भी पाप किया है वह सब मथुरा में नष्ट हो जाता है यह प्रथम वराह ने पृथिवी के लिये सुनाया है ॥७१॥७२॥ यह तीर्थों का गुण माहात्म्य महापाप को

को नाश करने वाला है जोकि सर्व देवमय है अनन्त हैं अप्रमेय है और जिसका अन्त नहीं है जिसके श्रोत के एक देश में आकाश लेशमात्र है ७३॥७४ जो विलीन हुआ जाना नहीं जाता है उस देव की क्या कथा है तथा नयनों के समीप में लीन तेज नहीं देखा जाता है उस के श्वास में लीन वायु नहीं दिखायी देता है उस वराह भगवान् के खुरों में सात समुद्र लीन होजाते हैं और वें समुद्र नाम मात्र से पसीने के विन्दु के समान दिखाई देते हैं रोमकूपानन्तर वन पर्वत नजर आते हैं ७५॥७६॥७७॥ नष्ट पृथिवी उसी में समाकर नहीं दिखायी देती है अतः उन भगवान् से बड़ा कौन होसकता है वही भगवान् स्वय तीर्थ की रक्षा करते हुये जिसने कि साक्षात् वराह पुराण स्थापित किया है उसी ने पृथिवी के सब सन्देह दूर किये हैं उसके दर्शन मात्र से मनुष्य सर्वपाप रहित होकर मुक्त होता है इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है ७८॥७९॥८०॥ ज्येष्ठ शुक्ल नवमी में गंगा स्नान करने से सूकर क्षेत्र में तीन रात्रि दीप दान देकर यथा शक्ति दान देने से मनुष्य सर्वपापों से मुक्त होता है और द्वादशी दिन कलिंजर में स्नान कर देवार्चन करके मनुष्य द्वादशादित्य कान्ति वाले विमान में बैठकर विष्णु लोक में जाता है ८१॥८२॥८३॥ वराह जी ने कहा एवम् प्रकार देव वाणी आकाश वाणी के कहने पर वह पंचाल सुमन्तु मुनि से पूछने लगा ८४॥ आप मेरे गुरु हैं आप मेरे पिता हैं कहिये कि क्या करूँ मुझे अग्नि में प्रवेश करना चाहिये अथवा तीर्थ सेवन करना चाहिये। त्रिरात्र कृच्छ्रपाराक अथवा चान्द्रायण व्रत करना चाहिये अथवा आपके चरणों की सेवा कर मोक्ष को प्राप्त होजाऊँ ८५। ८६। आकाश वाणी सत्य है झूँठ नहीं है मैंने पहिले ही प्रत्यक्ष तेरे गात्रों में नित्य स्नान से पहिले पातक देखा है और स्नान करने से वह पातक मिट जाता था और तू इस आश्रम में स्थित हो चन्द्र समान निर्मल है ८७॥८८॥ अब तू पाप से छूट गया है यावत् काल तक जीता रह और यह तेरी बहिन भी पाप से छूटकर परम सती होगयी है और पापसे छुटकारा पाकर परम गतिको प्राप्त होगी श्रीवराह

ने कहा—हे वसुन्धरे ! मथुरा का यह प्रभाव है ॥८६ ६०। कृष्णगंगा कालि
ञ्जर, तथा सूकर का माहात्म्य तुझे सुना दिया है हे वरारोहे ! जो मनुष्य
इसे परम भक्ति से सुनता है तथा प्रातःकाल इसका पाठ करता है वह
पाप लिप्त नहीं होता है उसके सात जन्म के पाप नष्ट हो जाते हैं और
सौ गाय दान का फल प्राप्त करता है तथा स्वर्ग में जाकर अमर होजाता
है ६१ ।६२॥६३॥ इति श्रीवराह पुराणे कृष्णगंगोद्भव माहात्म्यं नाम
काशीराम शर्मा कृतभाषाटीकायांपट् सप्तत्यधिक शततमोऽध्यायः ।१७६।

अथ एक सो सतहत्तरवाँ अध्यायः ॥

दोहा—साम्बशाप वर्णन कियो, वराह इस अध्यायः।
घोर तप करि शाप मिटो, रवि को शीश नवाय ॥

श्रीवराह ने कहा—हे वरारोहे ! द्वारिका में निवास करते कृष्ण का अन्य
विचेष्टित साम्बशापादिक सुनिये । १ । श्रीकृष्ण भगवान् अपनेपुत्र कलत्र
सहित सुख पूर्वक द्वारिका पुरी में बैठे थे कि तभी यदृच्छागमन वाले
नारद मुनि वहां आप पहुंचे ।।२।। श्री कृष्णचन्द्र ने पाद्य,अर्घ्य आसन
मधुपर्क, गाय दान आदि देकर नारद मुनिका आतिथ्य सत्कार किया
तदनन्तर आपस में उत्तम सम्वाद करने लगे ॥३॥ नारदमुनि एकान्त
में श्रीकृष्ण जी से कहने लगा कि हे महामते ! मैं आपसे कुछ कहना
चाहता हूं वह सुनिये ।।४।। आप का साम्ब नाम वाला पुत्र नौजवान
है रूपवान है वाग्मी स्पृहणीय तथा स्त्री जनों का प्यारा है आपकी
श्रेष्ठ देवयोनि विशेष सोलह हजार रानियां आपके क्रीड़ार्थ आपको
मिली हैं । हे प्रभो ! साम्ब को देखकर इन सबका मनक्षुब्ध होता है
इस बात को देवलोक में स्वयं देवता कहते हैं ॥५॥६॥७ हे सुरोत्तम !
आपके हित के लिये मैं आपको सुनाने यहां आया हूं द्वैपायन ने अर्थवि
द्रूपश्लोक सुना जाता है कि क्रिया से स्वर्ग वास होता है और उसके
विपर्यय से नरक वास होता है जो पुण्यरूप कर्म दिशा और भूमि
को स्पर्श करता है जब तक वह शब्द होता है तभी तक पुरुष
कहा जाता है पुरुष, अविनाशी, शाश्वत तथा अव्यय कहा जाता
है ॥८॥६॥१०॥ बुद्धि वालों ने नरक में पुरुष विपरीत कहा है।

अतः साम्ब तथा सब रानियों को बुलाकर आसनों में बिठा कर मैं तत्व से उनका सत्य असत्य विचार करूँगा इतना कहने पर ही श्रीकृष्ण जी ने सबके लिये तथा योग्य आसन बिछवा दिये और उन सबको बुलवा लिया वे सब रानियां आकर अपने अपने आसनों पर बैठ गयीं तदनन्तर साम्ब आकर हाथ जोड़कर उनके सामने खड़ा होकर कहने लगा कि हे प्रभो ! आपकी क्या आज्ञा है ॥ ११॥१२॥१३॥१४ कृष्ण के देखते ही साम्ब के अति मनोहर रूप को देखकर सब रानियों के मन क्षुब्ध हुये और सबकी सब उठकर कृष्ण की आज्ञा से अपने अपने घर गयीं साम्ब हाथ जोड़कर कांपता हुआ वहीं पर खड़ा रहा और कृष्ण नारद को देख लज्जा से अवनत मुख होगया ॥१५॥१६॥१७ श्रीकृष्ण ने नारद से विस्तार पूर्वक पापकारक स्त्री स्वभाव, चरित्र तः आश्चर्य कहा–समय नहीं है, एकान्त नहीं है कृत्य में विभावना नहीं है तो हे नारद ! तभी स्त्रियों का सतीत्व रह सकता है हे मुनि सत्तम ! एक स्थान में निवास करने वाली गौरी, श्यामा, वर्खर्णिनी नौजवान, प्रगल्भा तथा अवस्था से रहित स्त्रियां भी सुन्दर खूबसूरत पुरुष को देखकर कामदेव के वश हो जाती हैं। यह नारियों का स्वभाव ही है अब साम्बका कारण सुनिये ॥१८॥१९॥२०॥२१॥ यह साम्ब अतीव मानी है तेजस्वी है धार्मिक है तथा अति गुणान्वित है रूप कारण से किसी प्रकार क्षोभ को प्राप्त हुआ है भगवान् श्रीकृष्ण के इस प्रकार कहे वचन का सम्मान कर अन्तरज्ञ नारद साम्ब शापकर यह वचन बोला कि जिस प्रकार एक चक्र से रथ की गति नहीं होती है उसी प्रकार पुरुष के आस्वादन से ही स्त्रियां निरन्तर काम के विशीभूत होती हैं २२॥२३॥२४॥ पुरुष की दृष्टिपात से नारियां कृत्य कृत्य हुआ करती हैं प्रद्युम्न को देखकर सब नारियां शर्मिन्दी होती हैं और साम्ब को देखकर वे सब कामदेव के वशीभूत होती हैं जिस प्रकार उनका उद्दीपन विभाव यह गन्धादिक है उसी प्रकार यह दुष्टात्मा साम्ब आपकी स्त्रियों का विनाश करने वाला है आपका यह दुरत्यय प्रवाद जो सत्यलोक में

हुआ है मैंने यह प्रवाद लोक से ब्रह्मर्षियों से वार वार सुना है आपकुल नाशक साम्ब का त्याग करके अपनी अपकीर्ति को दूर कीजिये हे अमेयात्मन् ! मैंने आपके हित के लिये कहा है अब आप अपनी इच्छानुसार कार्य कीजिये इतना कहकर नारदमुनि चुप होगया ॥२५॥२६।२७।२८ २६॥ तदनन्तर कृष्णने साम्ब को शाप दिया कि तू कुरूप होजायगा, कृष्ण के शाप देने से साम्ब तत्क्षण कुष्ट रोगी होगया ॥३०॥ और सर्वदा शरीर से प्रतिगन्ध वाला रुधिर बहने लगा पशुवत् इस साम्बका देह दिखाई देनेलगा ॥३१॥ तदनन्तर नारद ने ही साम्ब के शापमिटाने के लिये आदित्य आराधनारूप उपाय बताया महान धर्म बताया ३२। हे साम्ब ! हे महाबाहो ! हे जाम्बवती के पुत्र ! पूर्वान्ह में पूर्वाचलपर उदय होते हुये विभावसु को वेद उपनिषद आदि से यथान्याय नमस्कार कीजिये आपकी प्रार्थना सुनकर सूर्यभगवान् प्रसन्न होजायेंगे ।३३ ३४॥ साम्ब ने कहा–हे मुने ! अगम्यागमन करने वाले पुरुष के ऊपर सूर्यभगवान् किस प्रकार प्रसन्न होवेंगे ॥३५॥ नारद ने कहा–आपके वाद से भविष्यत्पुराण होगा और मैं सदा उसे ब्रह्मा के सामने पढूँगा और सुमन्त मर्त्य लोक में मुनि को सुनाइयेगा साम्ब ने कहा–हे प्रभो मांस पिण्ड समान मैं पूर्वाचल में किस प्रकार जाकर सूर्य की आराधना करूँ आपके प्रसाद से मुझ निष्पापी ने भी बड़ा भारी दुःख प्राप्त किया है नारद ने कहा–जिस प्रकार उदयाचल में सूर्य की आराधना करने से फल मथुरा में पट् सूर्य में सूर्य आरधना करने से मिलता है वहां मध्यान्ह समय सूर्य आराधना करने से फल मिलता है मथुरा में सूर्य मध्यान्ह समय तथा अस्तङ्गत समय सूर्य की आराधना करने से राज्य फल होता है ॥३६॥३७।३८। ३६। ४०॥ मथुरा में उदय मध्यान्ह अस्त समय सावधानता से भक्ति पूर्वक सूर्य को आराधना करने से मनुष्य पातकों से छूट जाता है कृष्ण गंगा तीर्थ में स्नान करके यत्न पूर्वक सूर्य की आराधनाकर मनुष्य सर्वपाप निर्मुक्तहो कुष्टादिरोगों से छूटजाता है ४१।४२॥ श्रीवराहने कहा-तदनन्तर महाबाहु साम्बकृष्णकी

आज्ञा से मुक्तिदायक मथुरापुरी में सूर्य की आराधना करने गया।४३। नारद की बतलायी हुयी विधि के अनुसार जाम्बवती पुत्र साम्ब ने मथुरापुरी में जाकर पट्सूर्य में उदय होते सूर्य की आराधना की तब योग से सूर्य ने साम्ब को अपनी आत्मा दिखाकर कहा कि हे साम्ब! आपका कल्याण हो मेरा व्रत प्रसिद्ध करने के लिये वरदान माँगिये ॥४४॥४५॥ जो नारदने कहा—वह मेरे सामने कहिये हे साम्ब! वेद गृह्य पदाचरों से पञ्चाशक श्लोकों से जो तूने मेरी स्तुति की है उससे मैं तेरे ऊपर प्रसन्न हुआ हूं, तब सूर्य भगवान ने साम्ब के सारे अङ्ग को स्पर्श किया तो साम्ब तत्क्षण द्वितीय सूर्य के समान प्रकाशित हुआ मध्यान्ह समय याज्ञवल्क को माध्यन्दि नीयक यज्ञ साम्ब सहित पढ़ाया अतः रवि मध्यन्दिन हुआ वैकुण्ठ तीर्थ के पश्चिम और माध्यन्दिनीयक तीर्थ है ॥४६॥४७॥४८॥४६॥ उस तीर्थ में स्नान करके मध्यन्दिन सूर्य का दर्शन करने से मनुष्य सर्व पापों से मुक्त होता है तदनन्तर साम्ब के सहित विराट सूर्य उदय अस्त होता है सायान्ह में कृष्ण गंगा के दक्षिण में उस समय स्थित होकर वहां पर सायान्ह समय अस्तोदय सूर्य भगवान् का दर्शन करने से मनुष्य सर्व पाप मुक्त होकर पर ब्रह्मता को प्राप्त होता है श्री वराह ने कहा-एवं प्रकार साम्ब से प्रसन्न होकर मध्यान्ह समय सूर्य भगवान् ने आकाश से द्विधाकृत आत्म योग से साम्ब का कुष्ट रोग दूर किया उस प्रख्यात तीर्थ में साम्ब अन्तर्धान हुआ साम्ब सूर्य के साथ रथ में बैठकर सूर्य से पूछने लगा सूर्य से कहा पुराण भविष्य नाम से विख्यात पुनः नवीन रूप धर कर विख्यात हुआ तत्व के जानने वाले साम्ब ने सूर्य की प्रतिष्ठा की है ॥५०॥५१॥५२॥५३॥५४॥५५॥ उदयाचल से लेकर यमुना के दक्षिण तट पर मध्यान्ह समय उत्तम कालप्रिय सूर्य की स्थापना करके तदनन्तर पश्चात् अस्ताचल में सूर्य की मूर्ति स्थापना की प्रातर्मध्यान्हापरान्हिक रूप सूर्य की त्रिमूर्ति की स्थापना करके एक मूर्ति मथुरा में स्थापित की और अपने नाम से विख्यात की है ॥५६॥५७॥५८॥ रथयात्रा करके सूर्य के कहने के पश्चात साम्ब ने

मथुरा में कुलेश्वर सूर्य की स्थापना की है इसीलिये उस स्थान का नाम साम्बपुर है अतः माघ मास की सप्तमी तिथि के दिन जो मनुष्य साम्बपुर में जाकर रथ यात्रा करते हैं वे मनुष्य सर्व द्वन्द से मुक्त हो जाते हैं और सूर्यमण्डल भेदन करने वाले उस परम पदको प्राप्त करते हैं हे देवि ! यह साम्ब शाप तुझे सुनालिया है यह आख्यान पापों को नाश करने वाला तथा महापातकों का नाशक है ॥५६। ६०॥६१ ।६२॥ इति श्री वराह पुराणे साम्ब वचनत्रय सूर्य प्रतिष्ठानं नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायां सप्त सप्तत्यधिक शततमो ध्यायः ॥१७७॥

अथः एक सौ अठहत्तरवां अध्याय

दोहा—अगहन द्वादशी कहें, करे मनुज उपवास ।
पुनि शत्रुघ्न चरित सुने, करें स्वर्ग में वास ॥

श्रीवराह ने कहा—जिस प्रकार शत्रुघ्न ने द्विजानुग्रह के लिये उग्र स्वरूपी लवणासुर को मारा है ॥१। मार्गशीर्ष द्वादशी दिन शुद्ध पवित्र होकर उपवास करके जो मनुष्य शत्रुघ्न का चरित्र सुनता है उसके सारे पाप नष्ट होते हैं ॥२॥ जो मनुष्य ब्राह्मणों को अच्छे भोजन खिलाकर लवणासुर वध सहित शत्रुघ्न के शरीर में हर्ष उत्पन्न हुआ है तथा राम को हर्ष हुआ है महान् आत्मा शत्रुघ्न का महोत्सव करने के लिये अयोध्या से श्री रामचन्द्र अपनी सारी सेना सहित मथुरा में आये हैं मार्गशीर्ष शुक्लपक्ष में मथुरा में आकर राम शत्रुघ्न ने विश्रान्ति तीर्थ में स्नान करके एकादशी के दिन उपवास किया है और अपने कुटुम्ब सहित वहां उन्होंने बड़ा महोत्सव मनाया है ब्राह्मणों को सन्तुष्ट किया है जो मनुष्य उस दिन वहां पर महोत्सव करता है वह सर्व पाप मुक्त होकर पितरों के साथ सुख पूर्वक निवास करता है और यावत्काल स्वर्ग लोक में निवास करता है ॥३॥४॥५॥६ ।७ ।८॥ इति श्री वराह पुराणे मथुरा माहात्म्ये शत्रुघ्न लावणे राम तीर्थ यात्रायां काशीराम शर्म्माकृत भाषाटीकायां मष्टसप्तत्यधिक शततमोऽध्यायः ॥१७८॥

अथ एक सौ उनासीवाँ अध्याय

दोहा—इक सौ उनासी में अब श्रीवराह भगवान् ।
अपराधन के सब कहें प्रायश्चित्त बखान ॥

धरणी ने कहा–हे देवेश ! आपके अपराध वाला मनुष्य विष्णु धर्म से अथवा विष्णु प्राप्ति से वञ्चित रहता है, बिना अपराध वाला मनुष्य भी कर्म के करने ही से अपराध वाला होजाता है और कर्म न करने से निन्दित होता है वह सब पूजाफल जिस प्रकार जाना जाता है वह मुझे कहिये ।१ ।२॥ श्रीवराह ने कहा–मनसा वाचा कर्मणा जो पाप रुचि वाले मनुष्य हैं उन्हें सुनिये दातुन न करना राजान्न भक्षण करना असमय मैथुन करना शव का स्पर्श करना सूत की तथा उदक्की की अपेक्षा स्पर्शन भेदन करना अभाष्य भाषण करना पिण्याक भक्षण करना लाल मलिन नील तथा दूसरे का वस्त्र धारण करना गुरु से झूठा निर्बन्ध करना पतितान्न भक्षण करना अभक्ष्य भक्षण करना, तण्डुलीय विभीतक श्रेष्ठ अन्न को बांटकर न खाना, जालपाद तथा वराक का भक्षण करना और जूते पहिन कर देवमन्दिर में जाना ॥३ ।४॥५॥६॥७॥ तथा विधिवर्जित फूलों से भगवान् की पूजा करना निर्माली उतारे बिना ही पूजा करना अन्धकार में भगवान् का स्पर्श करना बिना बाजे के शब्द के देव मन्दिर के कपाट खोलने मदिरा पान करना अन्धकार में भगवान् को प्रबोधित करना पूजासमय विष्णु को नमस्कार न करना हे धरे ! तेतीस अपराध मैंने तुझे सुनाये हैं इन अपराधों को करने वाला मनुष्य विष्णु को नहीं प्राप्त करता है ॥८॥६ ।१०॥ दूर से ही नमस्कार न करे वह राक्षसी पूजा होती है एक रात्र त्रिरात्र त्रिरात्र तक क्रम से स्नान कर पञ्चगव्य भोजन करे नीली रक्षा अपनोदार्थ गोमय से प्रघर्षण करे नील वस्त्र धारण करने से प्राजापत्य व्रत से शुद्धि होती है ॥११॥१२॥ गुरु से झूठा व्यवहार करने पर दो चान्द्रायण व्रत करे पतितान्न खाने से चान्द्रायण और पाराक व्रत करे, चान्द्रायण पाराक और प्राजापत्य व्रत गोदान तथा भोज्यदान अभक्ष्य भक्षण करने पर करना

चाहिये ॥१३। १४॥ पुनः पांच दिन उपवास कर के पञ्चगव्य से शुद्ध होता हैं उपानत पहिन पहिन देव मन्दिर में जाने वाला द्विरभोजन हो विना जूते पहिन कृच्छ्र व्रत करे विना फूलों का पूजा करने वाला अन्धकार में देव स्पर्श करने वाला विना निर्माली उतारे पूजा करने वाला पञ्चामृत से स्नान करे ।।१५॥१६। द्विजाति को मदिरा पान करने पर चार चान्द्रायण व्रत करने चाहिये तथा वारह वर्ष तक तीन प्राजापत्य व्रत करना चाहिये ब्रह्मकूर्च से और तीन गायदान से शुद्धि होती है तीनों को एक रात्र पञ्चामृत पीने से तथा विष्णु की स्तुति पढ़ने से मनुष्य अपराधों से मुक्त होता है हे देवि ! तुझे यह गुप्त सुनालिया है और क्या सुनना चाहती हैं जर्नादन भगवान ने यह वार वार कहा मोहको प्राप्त होकर सुनती है तथा नष्टसंज्ञा के समान दीखने लगी वह पृथिवी मुहूर्त मात्र में संज्ञा को प्राप्तकर यह कहने लगी कि हे भगवान अपराध के करने पर मनुष्य सूतकी होता है ॥१७॥१८॥१६॥२०॥२१॥ मनुष्यों ने सर्वदा बहुत प्रायश्चित किये हैं उससे मुझे मोह हो गया है यदि अपराध करने पर भी कोई उपाय है तो जिस से कि आप मनुष्यों के ऊपर प्रसन्न होते हैं वह मुझे सुनाथिये ॥२२॥२३॥ श्री वराह ने कहा—पम्वत्सर के भीतर मेरे सौकरव तीर्थ में स्नान उपवास करने से अपराधी मनुष्य शुद्ध होजाता है एवं प्रकार मथुरा में कर्म करने से भी मनुष्य शुद्ध होता है, इन दोनों तीर्थों में जो मनुष्य एक वार भी कर्म करता है वह हजारों जन्म के अपराधों से मुक्त हो जाता है स्नान पान ध्यान कीर्तन धारण तथा श्रवण मनन, दर्शन से पातक छूट जाते हैं पृथिवी ने कहा—हे भगवन् ! मथुरा तथा सौकरव तीर्थ आपको अतिप्रिय हैं ॥२४।२५॥ ॥२६ २७॥ इन में से अतिप्रिय कौन है हे सुरेश्वर ! सत्य कहिये श्रीवराह ने कहा—पृथिवी में समुद्र पर्यन्त जितने तीर्थ तथा सरोवर हैं मेरे भक्त सर्वदा कुब्जाम्रक की प्रशंसा करते हैं उसमे भी कोटिगुण फल वाला सौकरव तीर्थ है और एक दिन मार्ग शीर्ष शुक्ल द्वादशी में गंगा सागर संगम तीर्थ पुराणों में

कहा जाता है ॥२८ २६॥३०॥ परन्तु गुप्त से गुप्त पुण्य दायक मेरा माथुर मण्डल है उसका फल सित तीर्थ में परार्द्ध गुणित फल है। नित्यशः कुब्जाम्रकादि सब तीर्थों में जाकर मथुरा में आकर शीघ्र पाप नष्ट हो जाते हैं ॥३१ ३२॥ विश्राम करने से मेरा श्रेष्ठ विश्रान्ति तीर्थ है सार से सार वाला गुप्त से गुप्त इस तीर्थ में स्नान करने वाला होता है गति चाहने वालों को मथुरा परम गति है कुब्जाम्रक में सौकरव में तथा विशेष करके मथुरा में बिना सांख्य योग से मनुष्य सर्व पातकों से मुक्त होता है जो गति योगयुक्त मनीषियों की है। वही मथुरा में प्राण त्याग करने वालों की गति है हे सुव्रते! सत्यता से यह सार मैंने तुझे सुना दिया है मथुरा के बराबर कोई दूसरा तीर्थ नहीं है केशव के समान कोई दूसरा देवता नहीं है ॥३३॥३४॥३५॥ ३६॥ इति श्री वराह पुराणे मथुरा महात्म्ये अपराध प्रायश्चित माहात्म्यं नाम काशीराम कृत भाषा टीकायाम् नाशीत्यधिक शततमोऽध्यायः १७६

अथः एक सौ अस्सी अध्यायः ॥

दोहा—इकसौ अस्सी में कहें चन्द्रसेन आख्यान।
धरणी को समुझाय कर, श्रीवराह भगवान्॥

श्रीवराह ने कहा—हे वसुन्धरे! पितरों की तृप्ति कारक ध्रुवतीर्थ में हुई पुनः एक और भी पुरातन कथा सुनाता हूँ उसे सुनिये ॥१॥ इस मथुरा पुरी में धार्मिक सत्यविक्रम दानपरायण यजनशील चन्द्रसेन नाम का राजा था ॥२॥ उसकी कुलशील अवस्थावाली दोसौ रानियां थीं उनमें से पतिव्रत परायण एक वीर पुत्र पैदा करने वाली चन्द्रप्रभा नाम की श्रेष्ठ थी उसकी सौ दासियों में एक प्रभावती नाम की दासी थी उसके परिग्रह वाले एकोदिष्टाचार रहित थे उसके सौ संख्या वाले पितर अपने कर्म दोष से नरक में गिरे वर्णशंकर पैदा होने से पितर नरक में ही जाते हैं कदाचित् उस कुल में पैदा हुआ सूक्ष्म महान प्राणि जन ध्रुवतीर्थ में गिर पड़ा ॥३॥४॥५॥६॥७ वह सूक्ष्म प्राणि समूह मशकाकार सदृश कृष्ण रूपों का चक्रमण करता हुआ त्रिकालज्ञ ऋषि ने देखा अर्थात् एक समय मथुरा निवासी श्राद्ध करने ध्रुवतीर्थ में गये

॥८॥ पश्चात्काल में खाकर पयोव्रत रह कर वह ऋषि स्थित रहता था सूर्यगति से स्थित उस ऋषि ने उस समय कृपा से परिभूत होकर व्रत जप नहीं किया क्योंकि वह उस वृत्तान्त को कौतुक से देख रहा था दिन का चौथा भाग शेष रह गया उस स्थान पर एक तरफ के पिता आकाश से पृथिवी में आरहे थे ॥९॥१०॥११। अन्य पूर्वोत्तर दक्षिण पश्चिम देश से पितर आरहे थे। कोई स्वभाव से हृष्ट थे कोई पुत्रों से दीगयी स्वधा पाकर हृष्ट, पुष्टाङ्ग, तथा प्रसन्न हो संघशः आकाश में जारहे थे कोई स्नान प्रेमी रूक्ष क्षाम शरीर वाले थे कोई वस्त्रालङ्कार सहित पुष्टाङ्ग तथा हृष्ट हो संघशः जारहे थे तथा अन्य नग्न शरीर सुपुष्टांग वाले जारहे थे ॥१२॥१३॥१४॥ और कोई यथागत आते जाते थे कोई ऊँचे नीचे नाना रूप विमानों से नाना रूप खगों से जा रहे थे कोई आकर आशिषा देकर प्रसन्नता पूर्वक जारहे थे कोई यथा गत क्रोधित होकरजारहे थे औरशापदेरहे थे कोई निर्गतोदर सूक्ष्मसुवि मानों में बैंठ जारहे थे तथा अन्य पितर श्राद्ध से सम्मानित हो जारहे थे महोत्सव के समान जान कर विस्मित हो मुनि उठखड़ा हुआ पितृ गण के चले जाने पर पुत्र कलत्रों के सहित अपने घर आये १५॥१६ १७॥१८॥ निर्जन प्रवृत्तीर्थ वृत्त वेल के समान हुआ वहां एकान्त में कृश शरीर भूख से पीड़ित विह्वल गति वाला वेपथु शरीर वाला कोटर के समान आंख वाला पीठ से चिपटे छोटे शरीर वाला उरु चर्म अस्थि की पीड़ा से अति दुःखित अत्यन्त कृश शरीर था क्षुद्रपक्षि के समान उसकी आवाज सुनायी नहीं देती थी उस मुनि ने कहा—मशकों से वेष्टित विकृत शरीर वाले आप कौन हैं निश्चय होकर अपने स्थान को क्यों नहीं जाते हो मेरे पूछने पर अपना विचेष्टित सत्य कहिये आज इस तीर्थ में मेरा नैत्यिक कर्म निरन्तर नष्ट हो रहा है इन उच्चावच जन्तुओं को देखकर मुझे मोह हो गया है।॥१९॥२०॥२१॥२२॥२३॥ इस प्रकार के स्वरूप वाले आपको देख मेरी वह क्रिया नष्ट होगयी है सावधानता से मुझे सुनाइये। जिससे कि मैं आपका हित करूँ ॥२४॥ जन्तु ने कहा—वृहत कार्य

के लिये पितरों के तृप्ति कारक इस ध्रुव तीर्थ में आज ही पुनः तिलोदक से श्राद्ध करे तो उस पुत्र के द्वारा तिलोदक श्राद्ध से तृप्त होकर पितर स्वर्ग जाते हैं मैं भी अपने कुल में पैदा हुये पुत्र से दिये तिलोदक चाहता था अतः यहांपर आया हूं मैं भूख से पीड़ित हूं योनि संकरदोष से नरक में निवास करता हूँ आशारूप पाशमें बन्ध कर मैं सौवर्ण से यहांपर आया हूं तीन तापों से पीड़ित होकर मैं जानेको असमर्थ हूँ अपने सन्तानसे कृत तर्पण श्राद्धपाकर पुष्टशरीरवाले पितरबलयुक्त हो स्वर्ग चलेगये हैं निर्बलकी गति कहां है जिनकी अक्षय प्रजावाली सन्तान है वेउस सन्तानसे दीगयी स्वधा से पूजित होकर परम गतिको प्राप्त करते हैं आज राजा चन्द्रसेन के पितर पूजित होकर हे त्रिकालज्ञ ! आपने दिव्य दृष्टि से स्वर्ग जाते हुये देखे हैं तथा ब्राह्मण, वैश्य, शूद्रों के पितर भी स्वर्ग गये हैं ॥२५॥२६॥२७॥२८॥ २९॥३०।३१॥ जिनकी अक्षय सन्तति है उन प्रतिलोम अनुलोम सब शूद्रों के पितर स्वर्ग जाते आपने देखे हैं ब्राह्मण के पूछने पर जन्तुने इस प्रकार कहा ब्राह्मण मुनि पुनः कौतूहल युक्त होकर जन्तु को पूछने लगा कि प्रारब्ध वश आपकी भी यथोचित सन्तति नहीं है यदि कोई उपाय है तो मुझसे कहिये मैं आपके हितके लिये वह उपाय करूँगा मैं सच कहता हूँ तदनन्तर ब्राह्मण के वचन सुनकर पितृ गण युक्त दुःख पीड़ित वह जन्तु कहने लगा ॥३२॥३३॥ ३४॥३५॥ जो ये सूक्ष्म मेरे देह में मशक हैं सन्तान नष्ट होने से ये मेरे देह में लग गये हैं मैं उनका तन्तुमन्त्र हूं और मेरी तन्तुमयी एक नगर के मध्य है चन्द्रसेन राजा के घर में रहती है रानी की सेवा करने वाली दासी है और उसका नाम प्रभावती है उस प्रभावती की कर्मकर दासी का विरूप निधिनाम हमारा कुल का तन्तु रूप है उससे ही हम श्राद्ध चाहते हैं और उस तन्तु रूप विरूप निधि से दिये तर्पण श्राद्ध की आशा से आशा रूप पाश में बंध कर इतने समय तक यहां पर स्थित हैं निराशा होने पर हम अपने कर्मों द्वारा अम्बुधि में नरक में चले जायेंगे ॥३६॥३७॥३८॥३९॥४०॥ जन्तु के कहे इस प्रकार के वचन सुनकर त्रिकालज्ञ ऋषि मोह युक्त

होकर इस प्रकार कहने लगा कि निकृष्ट योनि से दी गयी हवि आपको किस प्रकार मिल सकती है वह कौन विधि है जिससे कि आप पुत्र वाले हो इतना सुनकर वह जन्तु ज्ञान विकृष्ट कृपा वाले त्रिकालज्ञ से कहने लगा ४१।४२॥ पूर्व कर्म विपाक से जिस अधोमुखी अथवा ऊर्द्ध मुखी गति को पुत्र द्वारा चाहते हैं श्राद्ध, पिण्डोदक, दान तथा नित्य नैमित्तिकक्रिया पुत्र से पितर चाहते हैं। पितरों की अन्य गति नहीं है अतः पितर पुत्र वाले होते हैं ॥४३॥ ॥४४॥ हमारे कुल में ऐसा पुत्र होगा जोकि बहुत जल वाली नदियों में विशेष करके शीतल जल वाली नदियों में जल की अञ्जलि हमें देवे विशेषत तीर्थ में तिल मिश्रत जल अञ्जलि हमें देवे नाभि प्रमाण जल में स्थित होकर रौप्य युक्त जलाञ्जलि देवे हाथ में दर्भा ग्रहण कर गोत्र नाम उच्चारण कर पितरों के नाम उच्चारण करता हुआ स्वधा कार उच्चारण करता हुआ अञ्जलि देवे और तृप्यतु तृप्यतु उच्चारण करे आदि में एक अञ्जलि फिर दो अञ्जलि, पुनः तीन अंजलि तर्पण में कही गयी हैं। देव ऋषि पितृ संघ के लिये क्रम से जाननी चाहिये अन्त में तृप्यध्वं यह मन्त्र कहे और मन्त्र प्रति क्रिया करे उदीरतामङ्गिरस आयान्तुनः इस प्रकार कहे प्रथम पिता को देवे तदनन्तर माता को देवे गोत्र उच्चारण कर माता नाम देवी इस दिये स्वधारूप जल से तृप्त होवे इस प्रकार कहे ॥४५॥४६॥४७॥४८॥४९॥५०॥ एवम् माता मह शर्मा तथा पितामहादियों को तर्पण देवे पितृगण से जो आगे हैं वे पितर कहे जाते हैं तद्वत् पहिले के समान मधुवाता ऋतायते इस ऋचा को पढ़े—माता के तर्पण के समान पितामही प्रपितामही को तर्पण देवे ।५१॥५२॥ एवम् पूर्ववत् मातामहादियों को तर्पण देवे नमो वः इस मन्त्र से प्रत्येक तीनों में गोत्रोच्चारण करे असुरों का नाश करता हूं नाम गोत्र वाले पितामह शर्मा को यह आसन है। अमुक गोत्र वाली माता तथा माता मही नाम देवी

को यह आसन है कहे अमुक गोत्र पिता मह अमुक गोत्रा मातामही अर्घ्य पात्र संकल्प में पिण्डदान अवनेजन में अमुक गोत्र पिता मह शर्मगोक्त कर्म में अमुक्त गोत्र माता मह देवी अज्ञेय कर्म में आवाहन में द्वितीया पूजा कर्म में चतुर्थी प्रथमा आशीर्वाद में कही है देने वाले को अक्षय्य पुण्य देने वाली है, श्राद्धपक्ष में तथा षष्टी अक्षय्यासन में कही है ॥५३॥५४॥५५-५६ ५७॥५८॥ पिता के अक्षय काल में पितरों को देने से पितरों को अक्षय होता है एवं प्रकार भक्ति पूर्वक करने से जलाञ्जलि देने से भी अनन्त फल मिलता है, यथा विधि अनुसार ब्राह्मण के श्राद्ध करने पर अनन्त फल प्राप्त होता है ॥५६॥६०॥ श्राद्ध करने पर पितर हृष्ट पुष्ट हो सदा प्रसन्न रहते हैं इतना कह जन्तुने कहा-हे त्रिकालज्ञ! अब आप चुप हो जायिये हम नरक में जाते हैं ॥६१॥ हे मुने! पूर्व कर्म विपाक से चिरकाल तक नरक में निवास करने जाते हैं, त्रिकालज्ञ ने कहा–जो मैंने इस तीर्थ में आये हुये पितर देखे हैं उनमें बहुत तो स्वस्थ मन वाले तथा बहुत दुःखित मन वाले देखे हैं तथा पुत्र दत्त श्राद्ध ग्रहण कर उद्विग्न रूप हो, मौन से जाते देखे हैं इस में क्या कारण है वह मुझे सुनायिये। अगस्ति ने कहा–श्राद्ध में जो निश्चय है वह पुत्र का दिया हुआ श्राद्धादि द्रव्य निष्फल हो जाता है मनुष्य को जो कर्तव्य करना चाहिये वह मुझसे सुनिये, अदेश में अकाल में जो विधिहीन बिना दक्षिणा के दिया जाता है तथा जो अपात्र को दिया जाता है जो मलिन द्रव्य दिया जाता है वह महा पाप के के लिये होता है बिना श्रद्धासे दिया हुआ अपंक्तिय को दिया हुआ दुष्ट प्रेक्षित दुष्ट से देखा गया तथा तिल मन्त्र कुशा से हीन जो दिया जाता है वह आसुर श्राद्ध होता है प्रथम वामन भगवान् ने ऐश्वर्य के लिये विरोचन पुत्र वाले को सच्छिद्र श्राद्ध का फल दिया है तथा दाशरथी राम ने समर्थ वान् घोर रावण नाम राक्षस को मार कर सीता के सहित प्रसन्नता पूर्वक त्रिलोक कर्ता राम ने त्रिजटा राक्षसी की भक्ति सुनकर सीता के वाक्य से प्रसन्न होकर उसे वरदान दिया अपवित्र घर

तथा अपवित्र श्राद्ध हवि दी है।६२ ६३।६४।६५।६६।६७ ६८।६६।७०।
और विधिलोत्रयुक्त क्रोधाविष्ट दान दिये पात्ति शोच अनभ्यङ्गप्रतिश्रय
अभोजन जो विनादक्षिणा का श्राद्ध है वह त्रिजटा को देता हूँ तथा शम्भु
ने भी भक्ति से नागराज वासुकि से प्रसन्न हो श्राद्धदिया है, वह मुझ से
सुनिये जन्तु ने सकल वार्षिकी क्रिया व्रत कह यज्ञ में जो उचित देने योग्य
दक्षिणा थी ब्राह्मण ने न दी जो कि देव ब्राह्मण समीप वृथा शपथ करने
वाली है अश्रोत्रिय श्राद्ध और क्रिया मन्त्र रहित श्राद्ध यथा तत्व स्वरूप से
रात्रि में सवस्त्र स्नान जो शिष्य ज्ञान सिखाने वाले गुरु को नमस्कार नहीं
करता है तथा अग्रे गेय प्राकृत धर्म जो करते हैं हे नागराज! वह सब तुझे
वार्षिक श्राद्ध देता हूँ यह शम्भु ने वासुकि को दिया है इसप्रकार पुराण तथा
इतिहासों में पढा जाता है।७१ ७२।७३,७४।७५।७६ ७७। उसी प्रकार
अलीक करण श्राद्ध दान तथा व्रत उन पितरों को नहीं मिलता है अतः वे
नग्नादि हैं।७८। छिद्र देखने वाले राक्षसादि उस छिद्र युक्त पूर्वोक्त श्राद्ध
को छीन कर उन्हें वञ्चित करलेते हैं अतः वे पितर हताश हो जिसप्रकार
आये उसी प्रकार चले जाते हैं पुनः प्राप्यार्थ हेतु मौन व्रत धारण कर चले
जाते हैं हे महाप्राज्ञ! जो आप मुझ से पूछ रहे थे वह कहदिया है।७६,८०।
त्रिकालज्ञ मुनि ने कहा-मैं आज यहां पर षट्काल तक भोजन नहीं करूंगा
जब तक कि आपकी तृप्ति न होजाय बड़े खेद की बात है आप ठहर
जाइये।८१। जब तक मैं नहीं आया आप यहीं पर ठहरिये और मेरी
प्रतीक्षा कीजिये! मैं निरालस्य होकर रात दिन इसी तीर्थ में रहता हूं सो
आज आपके ऊपर दया करके अपना व्रत छोड़कर मैं शीघ्र जाकर आपसे
वहीं उस प्रभावती स्त्री को यहां पर लाता हूँ।८२।८३। और उस स्त्री से विधि
पूर्वक श्राद्ध कर वाऊंगा इस प्रकार कहकर वह त्रिकालज्ञ मुनि शीघ्रगति से
चले गये अकस्मात् समीप में आये ऋषि को देखकर राजाने पृथिवी गिर
कर ऋषि के चरणों में शिर रख कर कहा कि मैं धन्य हूं आप मेरे घरपर
आये हैं।८४।८५। आपके मेरे घर पर आने से मैं सदा यज्ञ करूंगा हे
मुनिशार्दूल! पाद्य अर्घ्य मधुपर्क तथा गाय को ग्रहण कीजिये उस चन्द्र
से राजा से आति थ्यसत्कार ग्रहण कर मुनि कहने लगा हे राजन! मेरे

आने का बड़ा भारी कारण सुनिये, उसे सुनकर वह सब कृत्य कीजिये जिससे कि मैं प्रसन्न होजाऊं ऋषि के वचन सुनकर राजा ऋषि से कहने लगा कि हे महर्षे! वह क्या कार्य है, कहिये जिससे कि वह कार्य शीघ्र सिद्ध होजाय, त्रिकालज्ञ ऋषि ने कहा जो आपकी वह राजमहिषी है उसे शीघ्र बुलायिये और जो उस रानी की प्रभावती नाम की दासी है वह भी रानी के साथ मेरे सामने आवे ।८६।८७।।८८।।८९।।९०। तदनन्तर अन्तःपुर रनवास से रानी तथा वह दासी ऋषि के सामने आयी और पृथिवी पर लेटकर शिर झुकाकर ऋषिको प्रणाम करने लगी, तदनन्तर आसन पर बैठी हुयी को रिषी ने कहा कि ध्रुवतीर्थ में मैंने जो आश्चर्य देखा है उसे सुनिये लोकों के पितृ लोक में जितने पितर हैं जोकि श्राद्ध करने वाले पुत्रों के द्वारा स्वर्ग लोक में जाते हैं वे सब पुत्रों से दिये श्राद्ध पाकर प्रसन्न होकर स्वर्ग चले गये हैं सूक्ष्म प्राणियों से घिरा हुआ एक वृद्ध नर भूख से कृश शरीर वाला शुष्क मुख चिपटे पेट सूक्ष्म नेत्र वाला निराश होकर पुनः अपवित्र नरक में जाने की इच्छा करता है कारुण्य से मैंने उसे पूछा कि तू कौन है और क्या चाहता है ।९१।९२।९३।९४।९५।९६। उसने अपने किये कर्म मुझे सुनाये तब उसी समय उसके कर्म सुनकर मैं कारुण्य युक्त हुआ हूं तेरी दासी की जो दासी है वह उस की कुल तन्त है हे वरानने उस विरूप निधि को बुलायिये ।९७।९८। इस प्रकार सुनकर रानी ने तथा प्रभावती ने उसके बुलाने को शीघ्रता से बहुत नौकरों को भेजा वह सदा मदिरा मांस में प्रेम करती हुयी मदसे विह्वल होकर दिनमें भी पुरुष के साथ पलंग पर सोयी थी ।९९।१००। नौकरों ने उसे हाथ से पकड़कर मुनिके समीप लाकर मुनिने उसे मदिरा से मत्त देखकर कहा-मुनिने उसके विश्वास के लिये क्रिया के प्रति कहा मुनिने कहा तूने कभी पितरों के निमित्त दान स्वधा जल दिया है कि नहीं और पितरों को मुक्ति देनेवाला तर्पण भी कभी दिया है या नहीं उसने कहा कि नहीं हे विभो! मैं क्रिया तथा अपने पितरों को नहीं जानती हूँ, इस प्रकार कहती हुयी दासी से त्रिकालज्ञ कहने लगा कि मथुरेश की पत्नी तथा पुर वासी लोगों के साथ

राजा सबके सब ही पितरों की सन्तति का फल देखिये ।१०१।१०२।
।१०३।१०४।१०५। कौतूहल युक्त हो सब के सब नगर निवासी ब्राह्मण आदि भाव होकर राजा की आज्ञा से श्राद्ध करने ध्रुवतीर्थ गये लोगों से घिरा हुआ राजा मुनिके साथ ध्रुव तीर्थ में गया वहां पर तन्तु हीन विचेतन जन्तु देखा वह जन्तु मशकों से वेष्टित था और भूख से पीड़ित था राजा सहित सारी प्रजा को वहां लेजाकर ऋषि उस जन्तु से कहने लगा कि आपकी सन्तानज स्त्रियां में यहां ले आया हूं अब जो इच्छा है अपने पुष्ट्यर्थ कार्य कीजिये ।१०६ १०७।१०८।१०९। अगस्त्य ने कहा यह विरूप निधिनाम की दासी ब्राह्मणोक्त विधान से इस ध्रुव तीर्थ में स्नान करके विधि विधान से तर्पण करें ।११०। तदनन्तर भक्ति पूर्वक रौप्य वस्त्र लेपन सहित पूजन कर श्राद्ध पिण्डदान करे. सबके सब यहीं पर सुख पूर्वक स्थित होकर इस मेरे तन्तु रूप दासी से श्राद्धदान करवा कर मुझे देखिये ।१११।११२। इस प्रकार उसके वचन सुनकर यशस्विनी राजपत्नी ने दासी से बहुदक्षिणा वाला श्राद्धदान करवाया रेशमी वस्त्र धूप कर्पूर अगुरु चन्दनादि तिलोत्तर तथा बहुप्रकार का अन्न पिन्ड सहित दान किया पिण्डदान श्राद्ध के करने पर वह जन्तु पुण्ड वाले के समान दिव्य कान्ति अदीनात्मा तथा उन मशक रूप सूक्ष्म प्राणियों से पृथक प्रकार होगया ।११३।११४।
।११५। और उन प्राणियों से वेष्टित हो यज्ञान्त स्नान दीक्षा के समान सुशोभित होगया उस समय स्वर्ग से आये विमानों से आकाश आच्छादित होगया उन मशक गात्र वाले को सुगात्र देख प्रसन्न मन से आये हुये विमान को देख वह जन्तु त्रिकालज्ञ मुनिसे तथा राजा से स्वर्ग जाने की इच्छा से कहने लगा कि सब लोग सावधानता से मेरा पितृ तुष्टि कारक वचन सुनिये कि श्रेष्ठ तीर्थ नदियों पर्वत सरोवर कुरुक्षेत्र गया आदि स्थान पितरों को मुक्ति देने वाला न दूसरा हुआ है और न होगा आषाढ़ी पूर्णिमा से लेकर पाचवे पक्ष में प्रतिपदा से लेकर शुक्ल प्रतिपदा तक पितर शीघ्र तीर्थ में आकर श्राद्धपिण्डदान खानेके लिये आरिण्यमें निश्चलतासे स्थित रहते हैं।११६।११७।११८।११९।१२०।१२१

रहते हैं सूर्य के कन्या राशि में जाने पर जो श्राद्ध करता है तथा सोलह दिन के भीतर ध्रुवतीर्थ में पितरों के निमित्त तर्पण देता है उसके पितर तृप्त हो जाते हैं हम तृप्त होगये हैं अब परम गति को जाते हैं यह ध्रुवतीर्थ का प्रभाव मैंने सुना दिया है जोकि आप सबने हमारा दुरत्यय देख लिया है हे महामुने आपके प्रसाद से मेरा दुस्तर पाप दूर होगया है एवम प्रकार त्रिकालज्ञ ऋषि चन्द्रसेन राजा तथा सब नगर निवासी लोगों को विश्वास दिलाकर राजपत्नी तथा दासी और अपनी सुता को कहा कि तुम्हारा कल्याण हो ॥१२२।१२३ १२४।१२५।१२६ और वे सब जन्तु श्रेष्ठविमान में बैठकर स्वर्ग में गये तथा देवगण के साथ सुख पूर्वक निवास करने लगे श्रीवराह ने कहा– तदनन्तर वह चन्द्रसेन राजा अपने गण परिवार के सहित ध्रुवतीर्थ का माहात्म्य देख कर ऋषि को प्रणाम करके अच्युत भगवान् का स्मरण करता हुआ रमणीय नगरी में प्रविष्ट हुआ ।१२७।१२८॥ हे भद्रे ! यह मथुरा का माहात्म्य मैंने सुना दिया है जिसके स्मरण करने से ही पूर्व जन्म के पाप नष्ट हो जाते हैं जो नर इस माहात्म्य को ब्राह्मणों के सामने पढ़ता है वह गया में जाकर सब पितरों को तृप्त किये का फल प्राप्त करता है ॥१२९।१३०॥ हे महाभागे ! यह माहात्म्य अव्रती सेवा न करने वाले हरिकी पूजा न करने वाले को नहीं सुनाना चाहिये यह तीर्थों में परम तीर्थ है धर्मों में उत्तम धर्म है ज्ञानों का परम ज्ञान है लाभों का उत्तम लाभ है ॥१३१॥१३२॥ हे महाभागे ! यह माहात्म्य सर्वदा पुण्य भक्तों को सुनाना चाहिये सूतने कहा– भगवान् के इस प्रकार वचन सुनकर पृथिवी विस्मय युक्त होकर प्रसन्नता पूर्वक प्रतिमा स्थापना पूछने लगी ॥१३३॥१३४॥ इति श्रीवराह पुराणे भगवच्छास्त्रे मथुरा वर्णनं नाम काशीरामशर्मा कृत भाषा टीकायां मशीत्यधिक शततमोऽध्यायः ॥१८०॥

अथ एक सौ इकासी अध्यायः ॥

दोहा—काष्ठादि प्रतिमा कहें, धरणी से समुझाय ।
ता में जस हरि रहत हैं, पूजा प्रकार गाय ॥

अथ मधु काष्ठ प्रतिमायामर्चास्थापनम् ॥ सूतने कहा–इस प्रकार परम स्थान को सुनकर प्रशंसित व्रत वाली पृथिवी जोकि सर्वक्षेत्र विभागों में परम विधि है। सुनकर विस्मय युक्त होकर कहने लगी पृथिवी ने कहा-हे भगवन् ! जो आपने कहा उसक्षेत्रका बड़ा ही प्रभाव है हे देव ! जिसको सुनकर मैं तत्त्वसे विगत ज्वरा होगयी हूँ एक परम गुह्य बात नित्य मेरे हृदय में है ॥१॥२॥३॥ हे विष्णो ! वह मेरी प्रीति के लिये कहिये कि आप काष्ठ शैल मृन्मय, ताम्र कांस्य रौप्य तथा सौवर्णादि सब प्रतिमाओं में किस प्रकार निवास करते हो हे माधव ब्रह्मचारी प्राप्त कर किस प्रकार रहते हो दन्त रत्न में किस प्रकार रहते हो अथवा सत्य में भित्तिसंस्थ किस प्रकार रहते हो और भूमि संस्थ विधिदृष्ट कर्म से किस प्रकार रहते हो ॥४॥५॥६॥७॥ इस प्रकार पृथिवी के वचन सुन कर श्रीवराह जी ने कहा–हे वसुन्धरे ! जिसकी प्रतिमा बनानी हो उसे लाकर सर्व लक्षण सम्पन्न प्रतिमा बनवावे तदनन्तर अर्चाशुद्धि करके विधि विधान से स्थापना करके भवसागर से पार जाने के हेतु उस प्रतिमा का पूजन करे हे वसुन्धरे ! उस प्रतिमा स्थापना में काष्ठों में से मधूक लाकर उस प्रतिमा का निर्माण कर स्थापना करके विधि विधान से पूजा करे और जो मैंने कहे हैं उन गन्धादि द्रव्यों को समर्पण करे कर्पूर, कुसुम, तथा त्वचा, अगुरु, रस चन्दन, और सिल्ह कौशीर पूजा समय इनका विलेपन कर पूजा करे स्वस्तिक, वर्द्धमान, श्रीवत्स तथा कौस्तुभ आदि प्रदान करे फल आदि अर्पण करे कर्मण्य वस्तुओं को समर्पण करे ॥८॥९॥१०॥११॥१२॥१३॥१४॥ एवम् प्रकार पूजा में सब कर्मण्य वस्तु समर्पण करे शुद्ध भक्त विधिनिर्दिष्ट कर्म से इस प्रकार कर्म करके तदनन्तर प्राणायाम करके इस मंत्र को पढ़े कि जो आप सर्वयोग प्राधान्य से भ्रम वाले लोक में ठहरते हो, वह आप पृथिवी में सुपर्णात रूप से काष्ट में स्थित होजाइये एवम प्रकार काष्ट में स्थापना करके पुनः शुद्ध भक्तों के साथ प्रदक्षिणा करके दीपक जलाकर पूजा के सामने स्थित होजावे ॥१५ १६॥१६॥१८॥

काम क्रोध रहित होकर ऊपर नीचे न देखे नमो नारायणाय कह कर इस मंत्र को पढ़े विधि निर्दिष्ट कर्म से उनका संस्करण करे ।१६।२०। मन्त्र–जो आप सर्व जनों में श्रेष्ठ हो आप प्रभु हैं सबकी अमोघ गति है तथा अमोघ निवास करते हैं हे लोकनाथ। हे जनार्दन! इस मन्त्र से संस्थापित किये हुये आप स्थित हो जाइये ।।२१ एवम् प्रकार मेरी सब संस्थापन क्रिया करके जो वहां पर आये हो उन सब भगवान् के भक्तों का पूजन करे ।२२। गन्ध माल्य उपलेपन भोजनादि से विधि दृष्ट कर्म से उनका संस्करण करे ।२३।। हे सुन्दरि! इस कर्म विधान से मधुकाष्ठ की पूजा करे धर्म संस्थापना के लिये मैंने तुझे यह सुना दिया है ।।२४।। जो इस विधान से काष्ठ की पूजा स्थापित करे वह भवसागर पार होकर मेरे विष्णु लोक में जाता है ।२५। इति श्रीवराह पुराणे भगवच्छास्त्रे मधुकाष्ठायां प्रतिमार्चा स्थापनं नाम काशीरामशर्मा कृत भाषाटीकायामेकाशीत्यधिक शततमोऽध्यायः ।।१८१।।

अथ एक सौ बयासी अध्यायः ॥

दोहा—इकसौ बयासी में अब, श्रीवराह भगवान् ।
शैलार्चा स्थापना सब, कहत हैं विधि विधान ॥

श्रीवराह ने कहा–हे वसुन्धरे! पुनः और कहता हूं उसे सुनिये जिस प्रकार कि मैं पर्वतों में प्रतिमा में निवास करता हूं १। सुरूप निःशल्प सुपरीक्षित शिला को देख कर शीघ्र चतुर रूपकार को वहाँ नियोजित करे नर वहां श्वेत वर्तिका से चित्रित करे तदनन्तर प्रदक्षिणा करके अक्षतादियों से पूजन करे ।२।३। तदनन्तर दीपक देकर दध्यदोन से बलि देवे नमो नारायणाय कह कर मन्त्र पढ़े ।४। जो आप सर्वजन श्रेष्ठ हैं सोमाग्नि तेज वाले हैं सुमति प्रधान हैं हे वासुदेव! इस मन्त्र से प्रतिष्ठित होकर कीर्तिराशि को बढ़ाइये ।५।। श्रेष्ठ अच्युत वराह आपकी जय हो जय हो आप वृद्धि कीजिये इसी मन्त्र से जिसको यादृश रूप करना चाहिये तदनन्तर नारायण भगवान् को एवम् रूप करके तदनन्तर पूर्वाभिमुख ही स्थापित करे शुक्ल वस्त्र

से भूषित होकर एवम् प्रकार अहोरात्र निवास कर शुक्लयज्ञोपवीती दन्त धावन करे, सर्व गन्धोदक ग्रहण कर यह मन्त्र पढ़े ॥६।७।८। मन्त्रः— जो आप सर्व रूप से स्थित रहते हो मायाबल सर्व जगत स्वरूप हों, हे जगत्स्वरूप! हे लोकनाथ! इस मन्त्र से सम्पूजित हो, स्थित हो जाइये करण धारा प्रवृध्यमुदा हरग अपराजित अजरामर पूजन कर इस मन्त्र से स्नापित करे ॐ नमो वासुदेवाय हे सुन्दरि! एवम् प्रकार शिला में मेरी स्थापना करके तदनन्तर पूर्व प्रोष्ठपदाओं में अधिवासन करे ॥६ १०॥ हे भूमे! मेरे कर्म परायण हो कर जो मेरी स्थापना करे वह वैष्णव लोक को जाता है इस में कुछ सन्देह नहीं है यावक पायस खाकर अहोरात्र व्रत समाप्त करे तदनन्तर पश्चिम सन्ध्या में चार दीपक दान करे पञ्चगव्य और गन्ध जलके साथ मिश्रित करे और पाद मूल से चार कलशों को स्थापित करे वहां पर गीत वादित्र घोप से उत्सव करे और सामवेद वेत्ता ब्राह्मणों से वेदघोप करावे ॥११॥१२॥१३॥१४॥ सहस्त्र ब्रह्माचर पढ़ने वाले ब्रह्मवादियों के के पठित शब्द से तथा शुभ गीत स्वर से हे देवि! मैं आता हूं क्योंकि मन्त्र पाठ मुझे प्रिय है तदनन्तर निःशब्द करके भक्तों के साथ मेरी स्थपना करे पुनः इस मन्त्र से आवाहन करे हे देव! सुमन्त्र युक्त पञ्चेन्द्रियों से तथा छन्दों में प्रधान रूप आप आइये हे लोकनाथ! इन भूतों का विधाता रूप इनमें आकर आप निवास करते हो इसी मन्त्र से समिधा तिल घृत तथा मधु द्वारा एक सो आठ आहुति देवे ॥१५।१६।१७।१८॥१६॥ इस प्रकार विधान करने पर मैं स्वयं सन्नहित हो जाता हूं रात्रि के व्यतीत हो जाने पर निर्मल प्रभात आने पर विधि पूर्वक मंत्रसे पञ्चगव्य प्राशन करें और सर्वगंधों से लाजोंसे पंचगव्य जल प्राशन करें तदनन्तरगीत वादित्र मङ्गल द्वारा मुझे प्रासाद में स्थापित करें सर्व गधें को ग्रहण कर यह मंत्र पढ़े ॥२०।२१।२२॥ मंत्र जो आप लक्षण लक्षित हैं लक्ष्मी

ये युक्त हैं निरन्तर पुराण हैं इस प्रासाद में सुसमिद्धतेजा जो आप हैं प्रवेश कीजिये आपको नमस्कार करता हूं इस मंत्र से प्रासाद संप्रवेशित करे मध्य में मेरी प्रतिमा स्थापित करे, एवं प्रकार स्थापना करके उद्वर्तन देवे। वालेयक से मिश्रित चन्दन अथवा कुंकुम से उद्वर्तन करे। एवं प्रकार उद्वर्तन करके यह मंत्र पढ़े जो आप सर्वजगत्प्रधान हैं ब्रह्मबृहस्पतिसे सम्पूजितहैं, वन्दित हैं कारण रूप हैं हे सुलोकनाथ! आपका स्वागत हो, मंत्रयुक्त आप स्थित होजायिये।२३।२४।२५ २६। एवं प्रकार संस्थापना करके गन्धमाल्यादि से पूजन करे। मेरे लिये शुक्ल वस्त्र अर्पण करे और यह मंत्र पढ़े मंत्र–हे देवेश! जो मैंने आपके लिये भक्ति पूर्वक रचे हैं उन वस्त्रों को ग्रहण कीजिये इन वस्त्रों को धारण कीजिये! हे विश्वमूर्ते! आप मेरे ऊपर प्रसन्न होजायिये मैं आपको नमस्कार करता हूं।२७।२८। एवं प्रकार विधि निर्दिष्ट कर्म से मुझे वस्त्र अर्पण करे तदनन्तर कुंकुमागुरु से मिश्रित मुझे धूप देवे एवं धूप देकर यह मंत्र पढ़े।२६। मन्त्रः–यह अनादि पुराण पुरुष हैं नारायण हैं सर्व जगत्प्रधान हैं हे देवेश! गन्ध माल्य धूप दीप ग्रहण कीजिये आपको नमस्कार करता हूँ एवं प्रकार पूजा करके नैवेद्य निवेदन करे पूर्वोक्त विधान से नैवेद्य बनाकर विद्वान् मनुष्य पूर्वोक्त मंत्र से नैवेद्य देवे नैवेद्य के बाद देह विशुद्धि के लिये आचमन देवे।३०॥३१॥३२॥ तदनन्तर सर्व कार्य सिद्धि के लिये शान्ति जाप करे मंत्रः–हे लोकनाथ! आप सुशान्ति कीजिये राजा राष्ट्र ब्राह्मण बाल वृद्ध गवाङ्गण कन्या तथा पतिव्रता आदि सबमें शान्ति कीजिये॥३३॥ सब रोग नष्ट होवें कर्षकों खेती सदा भरपूर रहे लोक में सदा सुभीक्ष रहे समय समय पर वर्षा होती रहे और शान्ति होवे॥३४॥ विधि निर्दिष्ट कर्म से एवं प्रकार कर्म करके भगवान् की पूजा करके ब्राह्मणों को भोजन खिलावे यथा विभव शक्ति से दीनानाथों को प्रसन्न करे जो इस विधि से मेरी स्थापना करता है मेरे गात्र में जितनी जल बिन्दु होती हैं उतने ही हजार वर्षतक वह मेरे विष्णु लोक में निवास करता है जो मनुष्य मर्यादकार रहित होकर मेरी स्थापना करता है

वह इक्कीस तथा सप्तति कुल के पितरों को तार देता है हे भद्रे ! यह शैलिका स्थापना तुझे सुनालिया है धर्म रक्षा तथा भक्त हित के लिये सुना लिया है ॥३५॥३६।३७।३८।३९॥ इति श्रीवराह पुराणे शैलार्चा-स्थापनं नाम काशीरामशर्माकृत भाषाटीकायां द्व्यशीत्यधिक शततमोऽध्यायः ॥१८२॥

अथ एक सौ तिरासीवाँ अध्याय

दोहा—इकसौ तिरासी में अब, श्रीवराह भगवान् ।
मृन्मयार्चा प्रकार सब, इला से विधि विधान ।

अथ मृन्मयार्चास्थापनम् श्रीवराह ने कहा—हे वसुन्धरे ! पुन. और भी कहता हूँ उसे सुनिये मैं मृन्मयी प्रतिमा में भी रहता हूं पूजन की इच्छा से मनुष्य अस्फुट अखण्डित न अति छोटी न अति बड़ी और न डेढी मृन्मयी प्रतिमा बनावे मेरे कर्म परायण मनुष्य इस प्रकार मृन्मय प्रतिमा बनाकर हे भूमे ! जिस प्रकार के कर्म अच्छे लगें उस प्रकार सब कर्म करे काष्ट के अभाव में भी मृन्मय प्रतिमा बनावे अथवा मम कर्म परायण हो शैलजा प्रतिमा बनावे ॥१॥२॥३॥४॥ ताम्र कांस्य रौप्य सुवर्ण त्रपु रीति आदियों से विद्वान मनुष्य प्रतिमा बनावे मेरे कर्म परिग्रह से वेदी में मेरा पूजन करे कोई लोकापवाद से पूजा करते हैं कोई ख्याति के लिये पूजा करते हैं कोई घर को देख किसी कामना से मेरी पूजा करते हैं यदि कोई मेरे तेजांश से उत्पन्न हुये चक्र की पूजा करे हे भूमे ! एवं प्रकार जानिये कि उसने निश्चय से मेरी स्थापना करली है हे धराधरे ! पूजाकरने वाले को मैं सम्पत्ति प्रदान करता हूँ ॥५॥६॥७॥८॥ अथवा विधि पूर्वक मंत्रों द्वारा जो मनुष्य मेरा कर्म करता है जिस जिस फल की इच्छा से मेरी पूजा करता है मैं उसे प्रसन्न अन्तरात्मा से उस उस फल को देता हूँ और वह मनुष्य मेरे प्रसाद से उत्तम गति प्राप्त करता है ।९।१०। मेरा भक्त निरन्तर कर्म परायण होकर मेरी प्रसन्नता के लिये मन ही में पूजा करे ।११। जो भक्ति पूर्वक जल की अञ्जलि भी मुझे देवे तो मैं उसीमे प्रसन्न होजाता हूं उसे फिर सुमन जाप्य नियम

अदि से क्या प्रयोजन है ॥१२॥ जो मनुष्य निभृतान्तरात्मा से नित्य मेरा चिन्तन करता है उसकी सब कामना पूरी कर मैं उसे दिव्य मनोरम भोगों को देता हूँ ॥१३॥ यह सब गोप्य प्रयत्न से तुझे सुनालिया है मेरे कर्म परायण हो मृन्मयी प्रतिमा बनाकर श्रवण नक्षत्र में उसका अधिवासन करे पूर्वोक्त विधान से मंत्र पूर्वक स्थापना करे ॥२४॥१५॥ पञ्चगव्य और गन्ध जलके साथ मिलावे तदनन्तर मेरा स्नान करावे और यह मंत्र पढ़े मंत्रः जो आप सर्व जगत्कर्ता हैं जिस के प्रसाद से लोक उत्पन्न होते हैं हे अच्युत वह आप मेरी प्रसन्नता कीजिये तथा मृन्मयी प्रतिमा में स्थित होजायिये । १६॥१७॥ कारण के कारण उग्रतेजस द्युतिमान् महा पुरुष को नमस्कार करता हूं इस मंत्र से वेश्म में प्रवेश कर स्थापना करे, इसी मंत्र से समाहित चित्त हो मेरी स्थापना करे प्रथम वहां पर पहिले की तरह चार कलशों को स्थापित करे और उन चारों को ग्रहण करे इस मंत्र को पढ़े ॥१८॥ मंत्रः—समुद्र ने वरुण को प्राप्त कर सम्पूजित तथा आत्ममति प्रसन्न हुआ है वह ऊर्ध्व बाहु वरिष्ठता को प्राप्त हुआ है इस मंत्र से मेरा अभिषेक करे । अग्नि, भूमि तथा सब रस जिस से होते हैं उस को सदा नमस्कार करता हूं ॥१६॥ मेरे कर्म परायण मनुष्य एवं प्रकार विधिवत् स्नान कराकर पूर्वोक्त विधि से गन्ध माल्यादि से पूजन करे । २०॥ अगुरु और सकुंकुम सकर्पूर धूप नमो नरायणाय कह धूप देवे ॥२१॥ यथान्याय धूप देकर पीत वस्त्र देवे नमो नारायणाय कह कर मंत्र पढे ॥२२॥ मंत्र पीत से भगवान् प्रसन्न होते हैं और भगवान् के प्रसन्न होने पर जगत प्रसन्न होता है वे भगवान वस्त्र ग्रहण करें प्रसन्न होकर भगवान सदा भव बन्ध से रक्षा करें ॥२३॥ तदनन्तर इस मंत्र से यथोचित वस्त्र देवे और धूप दीपादि से पूजन कर नैवेद्य कल्पित करें पूर्वोक्ति विधान से नैवेद्य देवे पश्चात् प्रयत्न से मंत्र पूर्वक आचमन देवे । २४॥२५॥ मंत्रः—देवताओं की शान्ति होवे तथा

ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्यों की शान्ति होवे बालवृद्धों की उत्तमशान्ति होवे ॥२६॥ पर्जन्य देव वर्षा करे पृथिवी सस्य पूर्ण होवें इस मंत्र से विधान पूर्वक शान्ति करके पश्चात् भक्तों की पूजा तदनन्तर ब्राणणों की पूजा करें दक्षिणा देकर शिरसे नमस्कार करे ।२७।२७। पश्चात् अच्छिद्र बांचकर विसर्जन करे एवं प्रकार विसर्जन करके जो वहां पर आये हों उनकी वस्त्रालङ्कार भूषणों से विधिवत पूजा करें और यदि मेरी साम्यता चाहेतो वहां पर गुरु की पूजा करें ।२६।३०। जो मनुष्य भक्ति पूर्वक विधिनिर्दिष्ट कर्म से गुरु की पूजा करता है हे देवि ! उसने नित्यमेरी पूजा करली समझो मैं सत्य कहता हूं ॥३१॥ राजा यदि किसी के ऊपर प्रसन्न होने से सहज ही में आब्रह्मपद पर्यन्त देता हैं ॥३२॥ हे कल्याणि ! उसी प्रकार मेरे शास्त्रों से मेरे वचन से गुरु पूजा सब शास्त्रों में व्यवस्थित है ॥३३॥ जो इस विधान से मेरी स्थापना करता है वह तीन त्रीस सहित कुल के पितरों को तार देता है ॥३४॥ पूजा में मेरे मार्ग में जितने जल बिन्दु गिरती हैं उतने ही हजार वर्ष तक वह मेरे विष्णु लोक में निवास करता है ॥३५॥ हे भूमे ! तुझे यह मृन्मय प्रतिमा स्थापन विधि सुनाली है अब सर्व भक्तों को प्रिय लगने वाली और कहता हूं ।३६। इति श्री वराह पुराणे मृन्मयार्चास्थापनं नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायां अशीत्यधिक शततमोऽध्यायः ॥१८२॥

अथः एक सौ चौरासी अध्याय

दोहा—इकसौ चौरासी कहें धरणी से समुझाय।
ताम्रार्चास्थापना विधि वराह सकल बताय ॥

अथ ताम्रार्चा स्थापनाम् । श्री वराह ने कहा—ताम्र से सुरूप भास्वर प्रतिमा बनवाकर उचित उपचार द्वारा घरके मध्य में लावे ॥१॥ तदनन्तर घर में लाकर उत्तर दिशा की ओर मुख करके याने प्रतिमा का मुख उत्तर की ओर करके प्रतिमा की स्थापना करे और चित्रा नक्षत्र में अधिवासन

करे ॥२॥ सर्वगन्ध से तथा पञ्चगव्य से जल को मिश्रत करे तब मेरी प्रतिमा का स्नान करावे और यह मन्त्र पढ़े ॥३॥ मन्त्रः-जो आप सार भूत स्थित हैं आप ताम्र में नेत्र रूप से स्थित हैं हे विश्वधामन्! पञ्चभूत तथा पात्रों के साथ मेरे मूर्ति में आइये ॥४॥ हे यशस्विनि! इस मन्त्र से स्थापना करके पूर्वोक्त विधान से अधिवासन पूजन करना चाहिये ॥५॥ रात्रि व्यतीत होने पर सूर्योदय होने पर शुद्ध ऋचा पढ़ कर मन्त्र पूर्वक स्नान करावे ॥६॥ और वहां पर आये हुये ब्राह्मण वेद पाठ करें तथा बहुत मंगल पढ़कर प्रतिमा को मण्डप में स्थापित करे पुजारी सुगन्ध द्रव्य युक्त जल ग्रहण कर मेरी प्रतिमा का स्नान करावे और यह मन्त्र पढ़े ॥७।८॥ मन्त्र-जो आप सबसे श्रेष्ठ हैं प्रभु हैं मायाबल तथा योगबल प्रधान हैं मेरे हित के लिये शीघ्र आइये और हे लोकनाथ ताम्र में भी स्थित होजाइयें ॥९॥ ज्वलन पवनतुल्य! अवन! भावन! तपन! श्वासन! हे भगवन! पुरुषोत्तम! स्वयं आकर बैठिये आप इतना कह द्वारपर आकर शीघ्र घर में प्रवेश करे और आसन पर मेरी स्थापना करके विधि पूर्वक मेरी पूजा करे।१०। गन्ध पुष्प दीपक आदि से पूजा करके मेरी स्थापना करे ॥११॥ स्थापना मन्त्रः-प्रकाश के प्रकाशक,जगत्प्रकाश, विज्ञानमय आनन्दमय! त्रैलोक्यनाथ! यहां आइये हे पुरुषोत्तम! बैठिये मेरी रक्षा कीजिये इस मन्त्र से मेरे शास्त्रानुसार स्थापना करके शुक्लवस्त्र ग्रहण कर इस मन्त्र को पढ़े।१२। मंत्र आप शुद्धात्मा पुरुष हैं पुराण पुरुष हैं जगत के तत्व रूप हैं सुरलोकनाथ! मेरे हित के लिये आप वस्त्र ग्रहण कीजये आप पुरुषोत्तम के लिये में नमस्कार करता हूं।१३। मेरे कर्मपरायण मनुष्य वस्त्रों से विभूषित करके यथान्याय शीघ्र मेरी अर्चना करे ॥१४॥ गन्ध पुष्पदि से पूजा कर अलंकृत करके मेरे लिये विधिवत नैवेद्य बनावे।१५। स्वाद नैवेद्य देकर शान्ति पाठ पढ़े मंत्रः-देवताओं की शान्ति होवे ब्राह्मणों की उत्तम शान्ति होवे।१६। राज्य सहित राजाओं की शान्ति होवे वैश्यों की शान्ति होवे बालकों की व्रीहि याने धान्य की दुकान वालों की गर्भिणी स्त्रियों की तथा सब देहधारियों

की शान्ति होवे ॥१७॥ हे देवेश ! आपके प्रसाद से मेरी अखिल कार्यशान्ति होवे एवम् प्रकार शान्ति पाठ करके ब्राह्मणों की पूजा करे ॥१८॥ और यथाविधि गुरु भक्त की पूजा करे हे माधवि ! तब यथा शक्ति ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥१९॥ विशेषतः वस्त्रालंकार, भोजनादि से गुरु की पूजा करे तो वह मेरी ही पूजा करता है यह मैं सत्य कहता हूँ ॥२०॥ जिसके ऊपर गुरु प्रसन्न नहीं होता उससे मैं भी दूर रहता हूँ जो इस विधान से मेरी स्थापना करता है वह नौ से सताईस कुल को तार देता है हे भद्रे ! यह ताम्रार्चा स्थापना तुझे सुना दी है ॥२१॥२२॥ एवम् प्रकार सब प्रतिमा पूजन तुझे सुनाऊँगा हे सुन्दरि ! मेरे स्नान में जितने जल विन्दु होते हैं वह उतने हजार वर्ष तक विष्णु लोक में निवास करता है ॥२३॥ इति श्रीवराह पुराणे ताम्रार्चा स्थापनं नाम काशीराम शर्मा कृत भाषाटीकायां चतुरशीत्यधिक शततमोऽध्यायः ॥१८४॥

अथः एक सौ पिचासी अध्यायः ॥

दोहा—इकसौ पिचासी में अब श्रीवराह भगवान् ।
काँस्यार्चा स्थापन कहें इला से विधि विधान ॥

अथः काँस्यार्चा स्थापनम् ॥ श्रीवराहने कहा—कांस्य से सुप्रतिष्ठित सर्व अङ्गावयव युक्त निर्मल स्वरूप प्रतिमा बनाकर जेष्ठा नक्षत्र में मेरे मन्दिर में गीत वादित्र तथा बहुमांगलिक शब्दों द्वारा लावे यथा न्याय अर्घ्य ग्रहण कर यह मन्त्र पढ़े ॥१॥२॥३॥ जो आप सर्व यज्ञों में पूज्य हैं आराधना करने योग्य हैं ध्यान योग्य हैं गोप्ता हैं विश्व कामना पूरी करने वाले हैं महान आत्मा हैं हे लोकनाथ ! वह प्रसन्न आत्मा आप पूजा से प्रसन्न होकर यहां पर विराजिये ॥४॥ यथा न्याय अर्घ्य देकर उसकी तरफ मुख करके प्रतिमा स्थापन करे विधि पूर्वक स्थापना करके अधिवासन करे ॥५॥ पञ्चगव्य युक्त तथा सर्व गन्ध, लाजा, और विशेष करके मधु से चार कलशों को मेरे स्नानार्थ भरकर स्थापित करे तदनन्तर सूर्यास्त होने पर शुद्ध भक्तों के साथ मेरी प्रतिमा स्थापना करे तब भक्तों के साथ कलशों को ग्रहण कर ओंम् नमोनारायणाय

कह कर यह मन्त्र पढ़े। ॥६।७॥८।६॥ मन्त्रः आप आदि हैं ब्रह्म युगान्त कल्प हैं सब कालों में एक आप ही कल्प भूत हैं दूसरा कोई नहीं है हे लोकनाथ ! आइये इस स्थानपर विराजमान होजाइये ॥१० विकार, अविकार, अकार रूप, सकार रूप, पकार रूप, स्वच्छन्द रूप क्षर, अक्षर धृति रूप तथा अरूप पुरुषोतम के लिये नमस्कार करता हूं। इस प्रकार रात्रि व्यतीत होने पर सूर्योदय समय अश्व मुहूर्त के आने पर मूल नक्षत्र उत्तर रहने पर पूर्वोक्त विधान से मेरे शास्त्रानु दर्शियों की मेरे मन्दिर के द्वार मूल में स्थापना करे सर्व शान्ति उदक ग्रहण कर तथा सर्व गन्ध फल ग्रहण करके नमो नारायणाय कहकर यह मन्त्र पढ़े। मन्त्रः आप इन्द्र हैं यम, कुवेर, वरुण, शोम बृहस्पति शुक्र, शनिश्चर, बुध और राहु केतु तथा सूर्य और मंगल आपही हैं तथा सर्वो अधि जलवायु पृथ्वी, वाहुसाख्यी, नाग यक्ष तथा सब दिशा रूप पुरुषोत्तम भगवान् को नमस्कार करता हूँ ॥११॥१२॥१३ १४॥१५॥ इस मन्त्र से समग्र कर्म करके मेरी उस प्रतिमा को-ग्रहण कर घर में लेजावे पूर्व अभिमन्त्रित अलों से अभिमन्त्रित कर प्रतिमा एकान्त में स्थापित करे कलशों से गन्ध युक्त जल गृहण कर गात्र संशोधन के लिये यह मन्त्र पढ़े। ॥१६॥१७॥१८॥ मन्त्रः जितने तालाव हैं समुद्र हैं नदियां हैं तीर्थ हैं तथा पुष्कर हैं वे सब आवें आपके प्रसाद से मेरी शुद्धि के लिये होवें पुरुषोत्तम के लिये नमस्कार करता हूं एवम् प्रकार मेरे कर्म परायण मनुष्य विधि से मेरा स्नान करावे इस प्रकार विधि पूर्वक गन्ध धूप आदि से तथा यथा शक्ति धन से यथोचित पूजा करे पश्चात् मेरे योग्य वस्त्र देवे, उन वस्त्रों को मगवा कर मेरे सामने रक्खे और दोनों चरणों में सिर झुका नमस्कार कर यह मन्त्र पढ़े ॥१६॥२०॥२१॥२२॥ हे देवेन्द्र ! मैं आपके गात्र सुख के लिये सुन्दर सूक्ष्म वस्त्र लाया हूं हे देवेश ! आप ग्रहण कीजिये वेद उपवेद, ऋगवेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्वण

वेदों से जिनकी स्तुति की गई हैं उन पुरुषोत्तम को नमस्कार करता हूँ। हे सुन्दरि! इस प्रकार पूजन कर अलंकृत करे, पश्चात् विधि पूर्वक मन्त्र पढ़कर नैवेद्य देवे, नैवेद्य देकर आचमन देवे। और निम्नोक्त मन्त्र से शान्ति पाठ करे, सब विद्या ब्रह्म तथा ब्राह्मण सब गृह सब नदियां सब सागर तथा इन्द्रादि अष्ट लोक पाल जो पहिले कहे हैं, वे सर्व शक्ति करे आयाम यम काम दम वाम ओम नम पुरुषोत्तमाय सूत्र पढ़े उपचार करके पश्चात मेरी परिदक्षिणा करे, अभिवादन तथा स्तुति करके शुद्ध भक्तों की पूजा करे तदनन्तर पायसादि से ब्राह्मणों को भोजन करावे हे कमले क्षणे उन ब्राह्मणों शान्ति दत उदक गृहण करके मुझे अभ्युक्षण करे, उससे मैं पूजित होता हूं सबका विसर्जन करके गुरु का पूजन करे ॥२३॥२४॥२५॥२६॥२७॥२८॥२९॥ हे भूमे! जो भक्ति युक्त चित्त से अङ्गुलियक वस्त्र दान सम्मानादि द्वारा गुरु की पूजा करता है वह निसन्देह मेरी ही पूजा करता है। जो मनुष्य मेरे भक्तों की ब्राह्मणों की तथा गुरु की निन्दा करता है। हे देवि। मैं उसका नाश करता हूं। यह सच्च ही कहता हूँ। स्नान समय जितनी जलकी बून्दे मेरे गात्र के ऊपर ठहरती हैं उतने हजार वर्ष तक मेरी पूजा करने वाला मनुष्य विष्णु लोक में निवास करता है जो इस विधान से मेरी स्थापना करता है। वह मातृ-पितृ कुल को तार देता है। हे भद्रे! यह कांस्य प्रतिमा स्थापना विधि सुनादी है इसी प्रकार रौप्य प्रतिमा विधि सुनाऊँगा ॥३० ॥३१ ॥३२ ॥३३ ॥३४॥ ॥३५॥ इति श्रीवराह पुराणे कांस्य प्रतिमा स्थापन विधिर नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा- टीकायाम् पंचाशीत्यधिक शततमोऽध्यायः ॥ १८५ ॥

अथ एक सौ छियासिवाँ अध्याय

दोहा—इक सौ छियासी में अब, धरणी से समुझाय।
रौप्य प्रतिमा विधि कहें, श्री वराह सब गाय॥

अथः-रौप्य प्रतिमा स्थापनम्-श्रीवराह ने कहा-स्वरूप निर्मल अश्लिष्ट निर्दोष चांदी की प्रतिमा बनाकर जो कि चन्द्र समान उज्वल हो सुलक्षण हो निर्व्रण हो श्री युक्त हो मनोज्ञ हो तथा दशों दिशाओं को देदीप्य करने वाली हो इस प्रकार की प्रतिमा बनवा कर मेरे कर्म परायण मनुष्य गीत वादित्र शब्द शंख दुन्दुभि आदि बाजों के शब्दों से मांगलिक स्तुतियों से उस प्रतिमा को मेरे मन्दिर में ले आवे और अर्घ्य पाद्यादि ग्रहण करके यह मन्त्र पढ़े। १॥२॥३॥४॥ मन्त्रः जो सर्व लोकों में भी सब से अर्घ्य पूज्य तथा देवताओं का भी मान्य है वह भगवान् आकर के यह मेरा अर्घ्य ग्रहण करे हे लोक नाथ! मेरे ऊपर प्रसन्न हो जाइये, जो यज्ञ में यज्ञपति रहते हैं सूर्योदय समय मेरे कर्म में अग्निहोत्र रूप रहते हैं मन्द आदि मध्य स्वरूप के लिये नमस्कार करता हूं यथा विधि इस मन्त्र से अर्घ्य देकर सुस्नात अलंकृत कर के उत्तर मुख स्थापित करे करकट राशि में अश्लेषा नक्षत्र में सूर्य्यासा समय पूजनकर मन्त्र पूर्वक वहीं अधिवासन करे वहां पर चन्दनोदक मिश्रित आम के पत्तों से तथा सर्व औषधियों से चार कलश स्थापित करे तदनन्तर वे सब मेरे शास्त्रानुसारी कर्म करने वाले गुरु के वचन से मनोज्ञ सुख शीतलों को नमोनारायणाय कह कर यह मन्त्र पढ़े ॥५॥६॥७॥८॥९॥१०॥ मन्त्रः जो आप सर्व लोक के एक कर्त्ता हो सर्वाध्यक्ष हो सर्वरूप एक रूप हो वह आप भुवादि लोक पालों से पूज्य होते भी इस मूर्ति में आइये ॥११॥ अनन्त के लिये नमस्कार करता हूं कह कर रात्रि व्यतीत होने पर सूर्य्य मण्डल के उदय होने पर खूब प्रकाश होजाने पर द्वार मूल में लावे एवम् संस्थापन करके पूर्ण कलशों से अभिषेचन करे। १२।१३। तदनन्तर अभिषेक करके विधि पूर्वक स्थापना करे नमोनारायणाय

कहकर यह मन्त्र पढ़े ॥१४॥ मन्त्रः हे भगवन् ! गंगादि नदी तथा समुद्रों से यह कपूर वासितज आपके स्नान के लिये लाया हूँ १५॥ एवं प्रकार विधान से स्नान करवा कर मन्दिर के भीतर लेजावे हे सुन्दरि ! तब इस निम्नोक्त मंत्र से मेरी प्रतिमा की स्थापना करे ।१६। मंत्रः-हे देवदेवः आप वेदों से जाने जाते हैं तथा वेद वेत्ताओं से आप पूजा पाते हैं आप यज्ञात्मक हैं यज्ञफल के देने वाले हैं यज्ञ के लिये मैं आपको बुलाता हूँ हे लोकनाथ ! आप आकर इस मूर्ति में स्थित होजायिये ।१७।। धनजन रूप्य स्वर्ण अनन्ताय नमः कह कर एवं प्रकार प्रसन्न चित्तसे संस्थापना करके पूर्वोक्त विधि से यथान्याय पूजन करके मुझे नील वस्त्र देवे तथा मुझे प्रिय लगने वाले आभूषण पहिनावे तदनन्तर घुटनों के बल खड़ा होकर वस्त्र ग्रहण कर ओंनमो नारायणाय कहकर निम्नोक्त मंत्र पढ़ें । ८।१६।२०। मंत्रः-जो आप चन्द्र किरण समान प्रकाश वाले हैं शंख तथा कुन्द पुष्प के समान वर्ण वाले हैं चीर के समान उज्वल कौमुद के समान वर्ण वाले हैं आप मेरे हित के लिये वस्त्र ग्रहण कीजिये ।।२१।। वेपः सुवेषः अनन्तः अमरः मारणः कारणः सुलभः दुर्लभः श्रेष्ठ सुवर्चा आदि कह कर इस मंत्र से मुझे शुद्ध वस्त्र देवे तदनन्तर भक्ति पूर्वक मुझे नैवेद्य देवे ।२२ नमो नारायणाय कहकर यह मंत्र पढ़े कि पायस तथा सफेद घृत से युक्त यह शाल्यन्न का नैवेद्य आप ग्रहण कीजिये नैवेद्य देकर आचमन देवे ॥२३॥२४॥ सर्व लोक हित के लिये शान्तिपाठ पढ़े और ब्रह्मा शान्ति करता है तथा रुद्र विष्णु भास्कर रात्रि दोनों सन्ध्या नक्षत्र, ग्रहा तथा दिशा शान्ति करती हैं अचल चंचल सचल खेचल मचल अरविन्द प्रभ उद्भव इस प्रकार नमस्कार कर सर्व पाप नाश करने वाला शान्ति पाठ करके यथा विभव शक्ति से भक्तों की पूजा करे ब्राह्मणों को भोजन करावे मंत्र से गुरु का पूजन करे तदनन्तर कलशों से शान्ति उदक ग्रहण करके अभ्युक्षण करे ॥२५॥२६॥२७॥२८॥ हाथ जोड़कर ब्राह्मण

तथा स्वजनों को नमस्कार करे और जितने वहां पर आये हैं शीघ्र उन सबका विसर्जन करे तदनन्तर दान मानादि से गुरु की पूजा करके गुरु की पूजा करने पर मेरी पूजा सफल होती है २६।३०॥ अन्न भोजनान्त में जितनी जल की विन्दु गिरती हैं उतने ही हजार वर्ष तक वह मनुष्य विष्णु लोक में निवास करता है ॥३१॥ जो बुद्धिमान् मनुष्य इस विधान से पूजा करता है वह मातृ पितृ कुल का उद्धार कर लेता है ॥३२॥ हे देवि ! इस विधान से मेरी रौप्य प्रतिमा स्थापना है अब सुवर्ण प्रतिमा स्थापना प्रकार कहता हूं ॥३३॥ जिस प्रकार चांदी की प्रतिमा उसी प्रकार सुवर्ण प्रतिमा करे और विधान से आवाह नादि करे ॥३४॥ जो फल दारु शैल कांश्य रजत प्रतिमा से मिलता है उससे कोटि गुण अधिक सुवर्ण प्रतिमा स्थापन से फल मिलता है ॥३५॥ सुवर्ण प्रतिमा स्थापना करने वाला मनुष्य अयुत इक्कीस कुलों को तार देता है और पुनरावृति रहित हो लय को प्राप्त होजाता है ॥३६। हे भूमे ! जो तूने पूछा है वह विपुल रहस्य तुझे सुनालिया है और क्या कहूं ॥३७॥ पृथिवी ने कहा—जो आप ने सुवर्णादि सब प्रतिमा कही हैं उन सब में तथा शालग्राम प्रतिमा में आप सर्वदा निवास करते हैं अब आप यह कहिये कि घर में कितनों की पूजा करनी चाहिये पूजन में अविशेष तथा विशेष क्या है हे माधव ! वह मुझे सुनायिये शिवादि पूजन में कितनी संख्या कही गयी है वह मुझे सुनायिये श्रीवराने कहा गृह में दो शिव लिङ्ग तथा तीन शालग्रामों की पूजा नहीं करनी चाहिये ॥३८॥३९॥४०॥ द्वारिका के दो चक्रों की तथा दो सूर्यों की घर में पूजा नहीं करनी चाहिये तीन गणेश प्रतिमा तथा तीन शक्तियों की पूजा घर में नहीं करनी चाहिये शालग्राम युग्म की पूजा करे परन्तु तीन शालग्राम की पूजा एकत्र स्थान पर न करे विषम केवल एक की पूजा करे ॥४१॥४२॥ हे वसुन्धरे ! गृह में अग्निदग्ध तथा भग्नों की पूजा न करे इनके गृह में पूजा करने पर गृहस्थी उद्वेग को प्राप्त होता है ॥४३॥ चक्र वाली शालग्राम शिला

भग्न भी होजाय तो पूजन करना ही चाहिये खण्डित स्फुटित भी शालग्राम शिला शुभ होती है ॥४४। हे देवि ! -शालग्राम शिला द्वादश प्रकार से उत्पन्न हैं उनका विधि वत्पूजन करने से जोफल प्राप्त होता है, वह सुनिये, स्वर्ण कमलों द्वारा द्वादश कोटि लिंग पूजन द्वादश कल्प तक करने पर जो फल मिलता है वह फल एक ही दिन द्वादश शालग्राम शिला पूजन से मिलता है ॥४५॥४६। और जो मनुष्य एक शत शालग्राम शिला का पूजन करता है उसका फल मैं सेकड़ों वर्षों तक भी नहीं कह सकता ॥४७। सब वर्णों को सब देवताओं की प्रतिमा का पूजन करना चाहिये तथा मणियों से रचित लिंगों की पूजा भी करनी चाहिये।४८। हे वसुन्धरे ! हीन वर्ण वालों को शालग्राम शिला का स्पर्श भी नहीं करना चाहिये स्त्री शूद्रों के हाथ का स्पर्श वज्र के स्पर्श से अधिक माना गया है ४६। जो शूद्र अथवा स्त्री मोहसे भी कभी भी स्पर्श करे तो प्रलयकाल तक घोर नरक में निवास करते हैं।५०। हे वसन्धरे ! यदि उन स्त्री आदियों में भी भक्ति होवे तो दूर ही से सावधानता पूर्वक पूजा करे ।५१॥ शालग्राम शिला का चरणामृत पान करने से सर्वपापों का नाश होता है शिवनिर्माल्य पत्र पुष्प फल जल सदा अभक्ष्य है और वह भी शालग्राम शिला के संयोग से सर्वदा पवित्र होजाता है जो मनुष्य भक्त के लिये शालग्राम शिला देवे सहिता सुवर्ण के देवे उसका फल सुनिये कि उसने मानो वन पर्वत वाली सारी पृथिवी सुवर्ण सहित तथा समुद्र पर्यन्त का सत्पात्र के लिये दान दे दिया है और यदि शालग्राम शिला का यदि कोई मूल्य लेवे यादेवे तो विक्रेता और खरीदने वाले दोनों ही नरक में जाते हैं पूजा का फल मैं सेकड़ों वर्षों तक भी नहीं कह सकता हूं ॥५२। ॥५३॥५४॥५५॥५६॥ हे देवि ! यह गुप्त प्रतिमा स्थापन विधि मैंने तुम्हे सुनाली है लिंगादि तथा शालग्राम शिला के प्रति विशेष कर सुना लिया है पूजन विधि भी सुनाली है और क्या सुनना चाहती है।५७।५८। इति श्रीवराह पुराणे रौप्यसौवर्णार्चालिंगादि स्थापन सांख्या दिकं नाम काशीराम शर्माकृत भाषा टीकायां षडशीत्यधिक शततमोऽध्यायः ।१८६।

अथ एक सौ सतासिवाँ अध्यायः

दोहा—इकसौ सतासी में अब, श्रीवराह भगवान्।
सृष्टि अरु पितृ यज्ञ कहें, पूर्व गाथा बखान॥

अथः सृष्टि पितृयज्ञौ॥ सूतने कहा—पृथिवी एवम् प्रकार प्रतिमा विधि सुनकर हाथ जोड़कर पुनः वराह जी से पूछने लगी॥१॥ धरणी ने कहा—चैत्र का महत्फल आख्यान मैंने सुन लिया है अब एक परम गुप्त बात मुझे सुनाइये॥२। जो आप ने कहा है कि सोमदत्त राजा ने शिकार खेलने के लिये वन में जाकर पितृयज्ञ माहात्म्य सुना है वह मुझे सुनाइये॥३॥ पितृयज्ञ का क्या फल है और वह पितृ यज्ञ किस प्रकार किया जाता है श्राद्ध किस ने रचा है और किसलिये रचा है तथा किस प्रकार रचा है। ४॥ यह मैं विस्तार से सुनना चाहती हूँ आप कहिये श्रीवराह ने कहा—हे भूमे जो तू मुझसे पूछ रही है वह ठीक है॥५॥ हे वरारोहे! वसुन्धरे! भाराक्रांत होकर तू मोह को प्राप्त होगई है मैं तुझे दिव्य बुद्धि देता हूँ तत्व से सुनिये। ६॥ हे वरानने! प्रथम स्वर्ग की उत्पत्ति तदनन्तर श्राद्धोत्पत्ति तुझे सुनाऊँगा॥७॥ चारों ओर से अन्धकार से घिरे हुये इस निष्प्रभ निरालोक में चराचर त्रैलोक्य रचने की बुद्धि उत्पन्न हुई॥८॥ हे वरारोहे! वह मैं अकेला ही शेष पर्यंक अनन्त शयन पर शयन करता हूँ मायामयी निद्रा करके शयन करता हूँ तथा जागता हूं हे वसुन्धरे! विष्णु माया द्वारा तू उस बात को नहीं जानती है॥६॥१०॥ हजारों युगों के युग व्यतीत हो जाते है परन्तु तू मुझे तथा मेरी माया को नहीं जानती है॥१॥ हे देवि ब्रह्मा के दिन होने पर वराह अवतार लेकर मैंने पांचसौ दफे तेरा उद्धार कर लिया है परन्तु तुझे मालुम नहीं है॥१२॥ हे यशस्विनि! जो तू मुझे जानना चाहती है वह सुनिये एक मूर्ति में ब्रह्मा, विष्णु, शिव भेद से तीन प्रकार से हुआ हूँ॥१३॥ क्रोध के कारण मैंने असुर नाशक ईश्वर रखा है मेरी नाभि से कमल और कमल से पितामह ब्रह्मा हुआ॥१४॥ एवम् प्रकार हम तीनों देवता वैष्णवीमाया करके एक समुद्र वाली पृथिवी करके परम प्रीति से रहते हैं॥१५॥ वह सब जलपूर्ण

होने से कुछ नहीं जाना जाता है यशोद्रुम विष्णुमूल एक वट वृक्ष को छोड़कर कुछ नहीं जाना जाता है । १६॥ मैं माया से बालक का रूप धरकर वट वृक्ष में निवास करता हूँ और अपने रचे चराचर त्रैलोक्य जगत को देखता रहता हूं ॥१७॥ तब मैं तुझे धारण करता हूँ और तू मुझे जानती है हे देवि ! तब काल से वढ़वामुख करके माया से जल को सुखाकर प्रलय के निवृत्त हो जाने पर मूहूर्त मात्र ध्यानस्थ लोक पितामह ब्रह्मा से मैंने कहा कि हे ब्रह्मन् ! देवतासुर मानुषों को शीघ्र उत्पन्न कीजिये ॥१८॥१६॥२०॥ मेरे इस प्रकार कहने पर ब्रह्मा ने कमण्डलु ग्रहण कर आचमन करके पवित्र हो देवताओं को रचा ॥२१॥ द्वादश आदित्य अष्टवसु, एकादशरुद्र, अश्विनी कुमार, मरुद्गण, तथा सबके तारणार्थ भूमि में ब्राह्मण देवताओं को उत्पन्न किया तथा भुजाओं से क्षत्रि उत्पन्न किये उस से वेश्य तथा पैरों से सर्ववर्ण की सेवा करने वाले शूद्र निकले ॥२२।२३॥ हे देवि ! वे देवता असुर तथा ब्राह्मण ब्रह्मा से पैदा हुये हैं सब देव असुर तप वीर्य बल वाले हुये हैं ॥२४॥ आदित्य वसु, रुद्र, अश्विनी कुमार, मरुद्गण तेतीस संख्या वाले देवता प्रथम अदिति से पैदा हुये हैं ॥२५॥ और दिति सुरशत्रु असुर हुये हैं और ब्रह्माने तपोधन ऋषियों को उत्पन्न किया है वेसब सूर्य समान तेज वाले शास्त्र विशारद हुये हैं और ब्रह्म सुनु ने उनके पुत्र पौत्र रचे हैं ॥२६॥ निमि के वंश में अत्रिय विख्यात हुआ है वह पैदा होते ही महात्मा श्रीमान् तथा तपोनिधि हुआ है ॥२८। एक चित्त से निश्चल तप करता था पञ्चाग्नि साधन कर वायु भक्षण कर एक पैर से खड़ा हो ऊपर की ओर हाथ खड़े करके बिखरे पत्ते तथा जल खाकर और शिशिर में जलशायी हो तप करता था कृच्छ्र व्रत में पुनः चन्द्रायण व्रत करता हुआ फल भक्षण करता था हे वसुन्धरे ! सहस्त्र वर्ष तक तप करके मृत्युकाल को प्राप्त करके पञ्चत्व को प्राप्त हुआ उस नष्ट हुये पुत्र को देख कर निमि को बहुत शोक हुआ पुत्र शोकाकुल होकर रात दिन चिन्ता करने लगा हे माधवि ! तदनन्तर विधान से निमि शोक करके उस

मनोगत संकल्प को त्रिरात्र में प्राप्त हुआ जान माघमास द्वादशी के दिन उसके प्रति विशुद्ध मानस विषय को छोड़कर बुद्धि विस्तार गामिनी हुई हैं वह निमि सावधानता से श्राद्ध कल्प को सोचने लगा उसके जो कुछ फल मूल आदि भोज्य पदार्थ थे और नव रस उत्पन्न जितने भक्ष्य थे और जितनी उसकी चेष्ठायें थीं सब सम्पादन करके ॥२६॥३०॥३१॥३२॥३३॥३४॥३५। ३६। सावधानता से पवित्र हो ब्राह्मणों को बुलाकर ऋषि श्रेष्ठ ने दक्षिणावर्त से सब कृत्य किया ॥३७॥ तदनन्तर एक दम वहां सात प्रवेश हुये उनको मांस शाक फल मूल देकर हे सुन्दरि ! और उन सातों ब्राह्मणों की विधिवत् पूजा करके दक्षिणाग्र कुशाओं करके पवित्र हो नाम गोत्र का उच्चारण करता हुआ श्रीमते कह पिण्ड देने लगा वह मुनि श्रेष्ठ अपना धर्म संकल्प करके एवम् दिन के चले जाने पर सूर्य के अस्त होने पर दिव्य उत्तम कर्म ब्रह्म भाव साध्य की उपासना करने लगा ॥३८॥३६॥४० ॥४१॥ अकेला यतचित्त आत्मा, निराशी, निष्पग्रह हो पवित्र स्थान पर अपना स्थिर आसन बिछाकर न अति ऊंचा और न अति नीचा चैल अजिन तथा कुशा का आसन बिछाकर उसमें बैठकर एकाग्र चित्त जितेन्द्रिय हो आत्म शुद्धि के लिये योग साधना करने लगा शरीर ग्रीवाशिर को समानकर निश्चल चित्त स्थित होगया ॥४२॥४३॥४४॥ इधर उधर न देख केवल अपनीनासिकाके अग्रभागकोदेखता हुआ प्रकाश आत्मा हो निडर होकर वह ब्रह्मचर्य व्रत में स्थित रहा ॥४५॥ जो मनुष्य संयमन कर मेरे में चित्त लगाता है मत्परायण होता है और मेरा भक्त अनन्य मानस होकर सदा मेरे में मन लगावे -एवम् सन्ध्या से निवृत्त होने पर रात्रि प्राप्त हुयी पुनः शोक युक्त हो चिन्ता करने लगा ॥४६॥४७॥ पिण्ड संकल्प करके पश्चात्ताप करने लगा कि जिस बात को मुनियों ने नहीं किया मैंने वह किया है अपवित्र निवाप कर्म पुत्र के लिये किया है। अहो स्नेह के प्रभाव से अकृत बुद्धि वाले मैंने यह पाप किया हैं क्या वे मुनिजन शाप देकर मुझे भस्म तो न

करदें देव, असुर, गन्धर्व, पिशाच, उरग, राक्षस मुझे क्या कहेंगे जो कि पितृपद में स्थित हैं। हे वसुन्धरे! एवम् प्रकार चिन्ता करते करते रात्रि व्यतीत होगई ॥४८॥४९॥५०॥५१॥ सूर्य उदय होने पर पूर्व सन्ध्या प्राप्त हुई तदनन्तर सन्ध्या विधि करके हवन करके पुनः चिन्ता करने लगा। और अति दुखित होगया शोक पीड़ित हो एकान्त में अपने आप कहने लगा कि मेरी अवस्था के लिये धिक्कार है कर्मके लिये बलके लिये तथा मेरे जीवनके लिये वार २ धिक्कार है जो कि सर्व सुख युक्त होने पर भी पुत्र का जीवन नहीं देखा जाता है।५२॥ ५३॥ ५४॥ विद्वान हृदय के का दुःख को पूतिकाख्या नरक कहते हैं। या जानते हैं पूतिकाख्या नरक से पुत्रादि सन्तति द्वारा ही पिता पितामहादियों का उद्धार होता है। पुत्र से पौत्र से पुत्र के पौत्र से प्रपिता महादि पितर प्रसन्न होते हैं पुत्र जीवन से हीन होकर मैं जीता रहना नहीं चाहता हूँ। हे देवि! उस निमि के इतना कहते ही नारद मुनि तपोवन में ऋषि के आश्रम में आया। वह आश्रम सर्व कामना युक्त था और बहुत फल फूलों से अति रमणीय था अपने ही तेज से प्रकाशमान नारद मुनि को आश्रम में आये देख कर निमिने पाद्य अर्घ्यादि से नारद श्री मुनि का स्वागतादि कर यथोचित आतिथ्य सत्कार किया और उत्तम आसन पर बिठाया आसन पर बैठकर नारद मुनि ने कहा ॥५५॥५६॥५७॥ ५८॥५९॥६० ६१॥ हे निमे! हे महाप्राज्ञ मेरा कहना सुनिये और शोक दूर कीजिये अशोच्य जो शोक कर रहा है बुद्धिमान होकर भी अज्ञान को प्राप्त हो रहा है गत तथा अगत प्राणियों का पण्डित लोग शोक नहीं करते हैं मरे या नष्ट हुये को, प्राप्त हुयें का जो शोक करता है उनके शत्रु उसकी हंसी कर प्रसन्न होते हैं और वह वस्तु भी उसे नहीं वापिस मिलती सचराचर त्रैलोक्य में भी अमरत्व नहीं देखता हूँ। ॥६२॥६३॥६४॥ देवता, असुर, गन्धर्व, मनुष्य, मृगपक्षि, आदि सभी काल के वश होते हैं और सभी की प्रतीक्षा करते हैं ॥६५॥ पैदा

हुये सब प्राणियों की होती है और कृतान्त द्वारा अवश्य जाना पड़ता है ॥६६॥ आपका पुत्र महात्मा लक्ष्मी खजाना श्रीमान् नाम वाला पूर्ण सहस्र वर्ष तक सुदुश्चर तप करके मृत्युको प्राप्त हो दिव्य परम गति को प्राप्त होगया हैं यह सब जान कर शोक न कीजिये ॥६७। ॥६८। नारद के वचन सुनकर उद्विग्न-मन-वाला-निमि शिर से नारद के पैरों में प्रणाम करके भयभीत सा बार बार श्वास लेता हुआ कुछ शर्मिन्दा होकर कारुण्य युक्त होकर गद्गद वाणी से कहने लगा अहो हे मुनिवर श्रेष्ठ ! हे धर्मधारियों में श्रेष्ठ आपने मधुर अक्षर वाले वचनों से मुझे सान्त्वना दी है। ६९॥७०॥७१॥ प्रणय से सोहार्द से सुनिये मेरे हृदय में जो दुःख है वह स्नेह से कहता हूं पुत्र स्नेह युक्त हो मैंने पुत्र के लिये जो संकल्प किया है वह सुनिये कि मैंने अन्न और फल आदि मे सात ब्राह्मणों को तृप्त करके दर्भा बिछाकर भूतल में पिण्डदान किया है और अपसव्य होकर उदक दिया है ॥७२॥७३॥७४॥ शोक के प्रभाव से मैंने यह कर्म किया है हे द्विज ! अनार्य जुष्ट अस्वर्ग्य तथा अकीर्तिकर कर्म किया है अज्ञान से मोहित हो नष्ट बुद्धि स्मृति तथा सत्त्व होकर मैंने यह कर्म किया है और यह कर्म कभी देव ऋषियों से किया भी मैंने नहीं सुना है ॥७५॥७६॥ सुदारुण मुनियों के शाप से मैं तीव्र भय देख रहा हूं नारद ने कहा—हे द्विज श्रेष्ठ न डरिये पितरों की शरण जायिये ॥७७॥ इसमें मैं धर्म अधर्म कुछ भी नहीं देख रहा हूँ नारद के इस प्रकार कहने पर निमि ध्यान करने लगा और मनसा वाचा कर्मणा पितरों की शरण गया तदनन्तर अपने वंश कर्ता का अतीव चिन्तन करने लगा उससे चिन्तित होकर उसका पितर शीघ्र तपोधन के समीप आया और पुत्र शोकाकुल तपोधन पुत्र को देख कर इष्ट वाणियों से पुत्र को आश्वासना देने लगा कि हे तपोधन । निमे ! त्वेने पितृयज्ञ संकल्पित किया है पितृ यज्ञ को स्वयं ब्रह्माने धर्म बताया है तदनन्तर अतितर धर्म एक प्रतिष्ठित क्रतु है ॥७८॥७९॥८०॥८१॥८२॥ प्रथम स्वयंभू ने

श्राद्ध विधि की है नारद के सुनते ही विधि जानने वाले स्वयम्भूने श्राद्ध विधि की है श्राद्धकर्म की विधि तथा प्रेत कर्म की क्रिया जो है हे सुन्दरि ! जिस प्रकार सपुत्रक दाता है वह सुनिये ॥८३॥ ॥८४॥ मेरे प्रसाद से मैं उसकी बुद्धि देता हूँ पैदा हुये सब प्राणियों की कालमृत्यु होती है और धर्म राज के शासन से अवश्य जाना पड़ता है अमरत्व किसी का नहीं देखा जाता है पिपीलिकादि सब प्राणि नाश वान हैं जो पैदा होता है उसकी अवश्य मृत्यु होती है और जो मरता है उसका अवश्य जन्म होता है कर्म विशेष प्रायश्चित से अवश्य निश्चल मोक्ष होता है ॥८५॥८६। ॥८७। सत्वरज तम ये शरीर की प्रकृति हैं गुण हैं, पश्चात् युग-त्रय में अल्पायु वाले नर होते हैं सात्विक भाव को नहीं जानते हैं कर्म दोष से तामस प्रकृति होते हैं तिर्यग्योनि राक्षसी आदि तामसी प्रकृति को नरक जानना चाहिये, सात्विक प्रकृति मुक्ति के अर्थ वेदवेत्ता लोग ग्रहण करते हैं धर्म का ज्ञान ऐश्वर्य तथा वैराग्य सात्विक प्रकृति है क्रूर, भीरु, विषादि, हिंसक निरपत्रय, अज्ञानान्ध तथा पैशाच इनके तामस गुण हैं ॥८८॥८९॥९०॥९१॥ तामस उसको जानना चाहिये जोकि कहे जाने पर भी नहीं जानता है, दुर्मद तथा अश्रद्धालु नर तामस प्रकृति के जानने चाहिये ॥९२॥ प्रबल, वाणी वाला अचल बुद्धिवाला सदापत शूर तथा सब में व्यक्त आत्मा वाले मनुष्य राजस जानने चाहिये ॥९३॥ क्षान्त, दान्त, विशुद्धात्मा, श्रद्धायुक्त, तप तथा स्वाध्याय ये सात्विक गुण हैं इस प्रकार चिन्तन करने वाला शोक करने के योग्य हो नहीं सकता अतः हे महा भाग ! शोक का त्याग कीजिये शोक सर्वनाश करता है ॥९४॥९५॥शोक शरीर का नाश करता है शोक से बुद्धि नष्ट होती है लज्जा धृति धर्म श्री कीर्ति स्मृति नय तथा सब धर्म शोक वाले मनुष्य को त्याग कर शीघ्र दूर चले जाते हैं हे पुत्रक ! अतः शोक का त्याग करके निःशोक होजा ९६।९७। हे वसुन्धरे ! स्नेह प्रभाव से मूढ़ मनुष्य हिंसा अनृत आदि कर्म करके आत्म दोष प्रभाव से घोर

नरक में गिरते हैं ॥६८॥ सबसे स्नेह हटाकर धर्म में बुद्धि लगावे धर्म लोक हित के लिये सत्य धर्म कहता हूँ वह सुनिये ॥६६॥ जो कि स्वायम्भुव ने कहा है वह चातुर्वर्ण्य का कहता हूं नेमि प्रभृतियों के लिये इस प्रकार जिससे कि श्राद्ध प्रवर्तित हुआ है ॥१००॥ जीव के कण्ठ स्थान में आजाने पर भीति से विभ्रान्त मन होने पर तथा उसको विह्वल जानकर शीघ्र घर से बाहर लावे ॥१०१॥ कुशास्तरण शायी सब दिशाओं को नहीं देखता है मूहर्त मात्र स्मृति को प्राप्त कर जभी जीव न देखे, स्नेह भावसे भूमिदेव द्विजाति गीतादि का पाठ पढ़ें हे माधवि ! परलोक हित के लिये सुवर्ण हिरण्य तथा गाय दान करे ईश्वर ने सर्व देवमय गाय रची हैं ॥१०२॥१०३॥१०४॥ अमृत चरण करती हुयी महीतल में चरती है इन गायों का दान करने से शीघ्र पाप मुक्त होते हैं ॥१०५॥ पश्चात् उत्कर्ण से श्रुति पथ सुनावे जब तक कि सुदुश्चर कर्म कारी प्राण न त्यागे ॥१०६॥ मेरे मार्गानुसारी इसको सुविह्वल देख प्रयाण काल में मनुष्य विधि पूर्वक इस निम्नोक्त मंत्र से सर्व संसार मोचण कर्म करे शीघ्र मधुपर्क ग्रहण करके इस मंत्रको पढ़े ॥१०७॥१०८॥ मंत्रः—अमृत तुल्य संसार नाश कर इस आद्य निर्मल मधुपर्क को ग्रहण कीजिये। यह मधुपर्क भगवान् नारायण ने भक्तों के लिये रचा है तथा यह दाह में शान्ति करने वाला है और देवताओं का पूज्य है ॥१०६॥ तदनन्तर इस मंत्र से मधुपर्क देवे मनुष्य मृत्यु समय परलोक सुखावह इस पूर्वोक्त मंत्र से मधुपर्क देवे ॥११०॥ इस प्रकार कर्म करते प्राण निकल ने पर जीव संसार में नहीं आता है नष्ट संज्ञा वाला जान तथा मृत्युवशंगत जान कर शीघ्र जाकर महावनस्पति तथा अनेक सुगन्धित द्रव्यों को लाकर घृत तैलादि द्वारा देह शोधन करे इस मृत शरीर के लिये तेजोत्यय करने वाली सर्व सामिग्री एकत्रित करके दक्षिण दिशा की ओर शिर करके जल में रख कर तीर्थादियों का आवाहन करके मृत शरीर का स्नान करावे जो गयादि तीर्थ हैं जो पुण्य शिलोच्चय हैं कुरुक्षेत्र गंगा तथा यमुना

कौशिकी और सर्व पापनाशिनी पयोष्णी नदी का ध्यान करके स्नान करावे ॥१११॥११२॥११३॥११४॥११५॥ गण्डकी भद्रनामा सरयू बलदा तथा नव वन पिण्डारकादि तीर्थ पृथिवी में जितने तीर्थ हैं। चार सागर सबका मनसे ध्यान करके स्नान करावे–उसे प्राण रहित जानकर विधिवत चिता बनावे और उसके ऊपर रखकर दक्षिणा ग्रशिर करे दिव्य अग्निका ध्यान करके अग्नि को हाथ से ग्रहण करे और विधिवत चिता प्रज्वलित करके फिर यह मंत्र उच्चारण करे ज्ञान अथवा अज्ञा न से भी जो कुछ सुदुष्कर कर्मकरके यह नर मृत्युकालको प्राप्त करके पञ्चत्व को प्राप्त होगया है ॥११६॥११७॥११८॥११६॥ ॥१२०॥ धर्म अधर्म युक्त लोभ मोह से घिरे इस मृतप्राणी के गात्र को जलाइये और वह स्वर्ग को जावे ॥१२१॥ एवं यह कह शीघ्र परिक्रमा करके तथा जलती हुयी अग्नि शिर की तरफ से लगावे ॥१२२। हे पुत्रक ! चारों वर्णों का इसी प्रकार संस्कार होता है। तब स्नान कर वस्त्र धोकर घर लौट आवे तथा मृत का नाम उच्चारण करके पृथिवी तल में पिण्ड देवे और वह उस दिन से अशौच होता है अतः देवकर्म न करे ॥१२३॥१२४॥ इति श्री वराह पुराणे भगवच्छास्त्रे श्राद्धोत्पत्ति निरूपणं नाम काशीराम शर्म्मा कृत भाषा टीकायां सप्ताशीत्यधिक शततमोऽध्यायः ॥१८७।

अथ एक सौ अठासिवाँ अध्याय

दोहा–इकसौ अठासी में अब, प्रेत क्रिया बखान।
तेरह दिन के कर्म सब कहें विष्णु भगवान्॥

अथ पिण्ड कल्प श्राद्धोत्पत्ति प्रकरणम्। धरणी ने कहा–हे माधव ! हे प्रभो आप देवताओं के देवदेव हैं अपरिग्रह हैं मैं आशौच कर्म को विधिवत् सुनना चाहती हूं।१। श्रीवराह ने कहा–हे कल्याणि ! आशौच कर्म को तुम सुनिये जिस प्रकार कि मनुष्य शुद्ध होते हैं तथा मरने के दिन से तीसरे दिन तक नदी के जल में स्नान करे ॥२॥ फिर पिण्ड संचूरण देवे जल की अञ्जलि देवे तीन अञ्जलि देवे

चौथे पांचवें तथा छटे दिन एक एक पिण्ड तथा एक एक जल की अञ्जलि देवे ॥३॥ अन्य स्थानों में स्नान करके सातवें दिन भी देवे एवम प्रकार दशदिन तक कर्म करे ॥४॥ तथा दशवें दिन द्वार आदि से कपड़े धोवे तथा गोत्र वाला तिल आमलक आदि स्नेह से स्नानकरे ॥५॥ पिण्डदान से निवृत्ति होकर चौर कर्म करे और विधान से स्नान करके अपने वान्धवों के साथ घर जावे ॥६॥ और ग्यारहवें दिन यथा विधि एकोदिष्ट करे स्नान करके शुद्धहो प्रेत को ब्राह्मणों में युक्त करे या समझे ॥७ हे माधवि ! एकोदिष्ट चारोंवर्ण के मनुष्यों को करना चाहिये उस समय यथाविधि अपने एक ब्राह्मण को द्रव्या दान देकर भोजन करावे ॥८॥ एवम् प्रकार कर पुनः स्नान करने प्रेत को प्रेतों के साथ कर देवे हे माधवि ! द्रव्यों का एकोदिष्ट चारों वर्णों में होता है ब्राह्मण के वचन के अनुसार अपाक द्रव्य को ग्रहण करना चाहिये और पाक भोजन तीनों वर्णों में करना चाहिये ।६॥१०॥ और हे वरानने ! सेवा करने से ही शूद्रों का एकोदिष्ट होता है तेरहवां दिन आने पर ब्राह्मणों को भोजन खिलावे जिसके निमित्त कर्म किया जा रहा हो उस मृत का नामोच्चारण करके स्वर्गप्राप्ति कामनया आदि कह संकल्प करके ब्राह्मण के घर में जाकर नम्र होकर सावधानता से ब्राह्मण को निमंत्रित करे और इस निम्नोक्त मन्त्र को मनही मन में पढ़े कि हे प्रेत ! तू कृतान्त द्वारा दिव्य लोक में चला गया है मन से वायुभूत होकर तू इस निमन्त्रित ब्राह्मण में प्रवेश कर ॥११॥१२॥ १३॥१४॥ सूर्य छिपजाने पर ब्राह्मण के घर जाकर पाद्यादि देकर ब्राह्मण को विधिवत् नमस्कार कर प्रेत हित कामना से ब्राह्मण के पैर दवावे हे सुन्दरि ! ब्राह्मण का शरीर प्रेत भोग स्थान है जब तक ब्राह्मण वहां रहता है तब तक प्रेत अपने भोग को देखता रहता है हे भूमे ! अतः उस समय मेरे प्रतिष्ठित गात्र का स्पर्श न करे ॥१५॥१६॥ १७॥ रात्रि व्यतीत होने पर सूर्योदय समय ब्राह्मण की दाड़ी नाई द्वारा बनवावे और प्रेत सन्तोष दायक स्नापन अभ्यञ्जन करना चाहिये भूमिभाग ग्रहण कर वहाँ पर स्थण्डिल बनावे निपात देश को लेकर

स्थण्डिल बनावे निपात देश को लेकर पवित्र देश में सावधानता से नदी कूल में अथवा निखात में प्रेत भूमि कल्पित करे चौसठ भाग कर के यथावत सुकृत होता है हे सुन्दरि ! तदनन्तर दक्षिणपूर्व दिग्भागों में कुञ्जर छाया में अथवा नदीकूल वृक्ष के नीचे चाण्डालादि हीन स्थान में प्रेत कार्य करे ॥१८॥ १६॥२०॥२१॥२२। जिस देश को कुक्कुट, श्वान सूकर नहीं देखते हैं कुत्ता राव याने शब्द से दूर करता है । सूकर गर्जन से कुक्कुट पक्षपात से चाण्डाल के समान दूर करता है उस स्थान में जोश्राद्ध करता है वहपितरों का बन्धन दायक है हे सुन्दरि ! विद्वानों को ये स्थान त्यागने चाहिये देवता, असुर, गन्धर्व, पिशाच, उरग, राक्षस नाग, भूत, यक्ष तथा स्थावर, जङ्गम, यथा स्नान करके हे देवि ! तेरी पीठ पर स्थित हैं ॥२३॥२४॥२५। २६॥ हे सुश्रोणि । विष्णु माया विस्तृत जगत् को धारण करूँगा चाण्डालादि लेकर मनुष्यों का शुभा शुभ विचार करूँगा ॥२७। हे भूमे तदनन्तर स्थण्डिल में स्नान करें पृथ्वीका भाग न करके जोनिवाप करते हैं हेभद्रे ! जगत आपके आधीन हैं आपका उच्छिष्ट हतहो जाता है उसकादिया न पितर न देवता ग्रहण करते हैं और हे सुन्दरि ! उस उच्छिष्ट से घोर नरक में गिरते हैं स्थाण्डिल में प्रेतभाग पूर्वान्हक देवे ॥२८॥२६॥३०॥ हे माधवि नाम गोत्र उच्चारण करके पिण्ड संकल्प करके पश्चात् कुल में पैदा हुये एक भोजन वाले खाते हैं ॥३१॥ जो वहां नहीं खाते हैं उन अन्य गोत्र वालों को न देवे हे सुन्दरि ! चारों वर्णों के प्रेतकार्य में एवम् प्रकार देने से प्रेत लोक में गये मनुष्य प्रसन्न होते हैं जो मनुष्य वहां पर प्रेत भाग दिये बिना खाता है वहभी महानदीमें जाकर सचैल स्नान करे मनसे तीर्थों का ध्यान कर भूमि में तीन अभ्युक्षण करे तदनन्तर एवम् प्रकार शुद्धि करके शीघ्र ब्राह्मणों को बुलावे आये हुये ब्राह्मणों को देखकर स्वागतादि क्रिया करे ।३२।३३।३४।३५। हे माधवि ! तब पाद्य देवे मंत्र से विधि पूर्वक आसन उपकल्पित करे ॥३६॥ मंत्र हे द्विज ! आपके लिये यह आसन दिया है इस आसन पर बैठिये हे द्विजोत्तम ! प्रसन्न होकर मुझे प्रसन्न कीजिये ।३७। ब्राह्मणको आसन पर बिठाकर पुत्र छत्र का संकल्प

आकाश में गगनचारी भूतों के निवारणार्थ छत्रसंकल्प करे देव,गन्धर्व
सिद्ध संघ महाअसुर निवारणार्थ तथा धारण करने के लिये तेज-
यों के लिये छत्र किया है हे वसुन्धरे ! प्रेतहित के लिये छत्रधारण
और प्रथम हृष्टपुष्ट मनसे प्रेतभागदेवें ।३८ ३९।४०। आवरणार्थ
ाण के लिये छत्र देवे वहां आकाश में देव, सिद्ध, गन्धर्व, असुर
राक्षस, पिशाच देखते हैं उनके देखने पर प्रेत शर्मिन्दा होता है
और लज्जायुक्त प्रेतको देखकर असुरराक्षस हंसते हैं अतः एवम प्रकार
निवारणार्थ छत्र सूर्य ने पहिले बनाया है ॥४१।४२।४३। प्रथम प्रेत
लोक में गये हुये सर्व देवर्षियों के लिये अग्निवर्ष शिलावर्ष तप्त जल
वर्ष, भस्मवर्ष आदि घोर रातदिन होता है अतः हे माधवि ! उस घोर
कष्ट दूर करने के लिये ब्राह्मण को छत्र देवे ॥४४।४५। पश्चात् पैरों को
सुख देने वाले जूते देवे जूतों का दान करने से जो फल मिलता है वह
कहता हूँ ।४६। जूतें देने से यमराजके मार्ग में चलते समय प्रेत के पैर
नहीं जलते हैं क्योंकि प्रेतको घोर अन्धकार वाले कठिन मार्गमें जाना
पड़ता है और पीछे से कालका दूत मृत्यु लाठी उठाये चलता है और
घोर अहोरात्र में प्रेत को लेजाता है अतः प्रेत सुख के लिये ब्राह्मण
को पादत्राण दान देवे ।४७।४८ ४९। तप्तवालुवाली भूमिकांटों से भरी
रहती है अतः जूतेका दान करने से प्रेत उस भूमि को शीघ्र पारकरता
है ।५०। तदनन्तर मंत्रपूर्वक धूप दीप देवे जिससे कि प्रेत जाता है
प्रेतको प्रथक प्रेत युक्त करे तदनन्तर नाम गोत्र उच्चारण करके भूतल
में दर्भपात्र में प्रेत का आवाहन करे ।५१।५२॥ मंत्र इस लोक को
छोड़कर परमगतिको प्राप्त होगया है हे प्रेत ! प्रेतोपपादित गन्धभक्ति
पूर्वक देरहा हूं आप प्रसन्नता से ग्रहण कीजिये ॥५३॥ गंन्ध मंत्र-
सर्वगन्ध, सर्वपुष्प तथा धूप दीप हे विप्रेन्द्र ! आप ग्रहण कीजिये ।
और प्रेत को मुक्ति प्रदान कीजिये एवम् प्रकार विप्र को वस्त्र तथा
सर्व आभरण और बार बार पक्वान्न देवे । । ५४।५५॥ हे माधवि !
प्रेत योग्य इस प्रकार द्रव्य चारों वर्णों के लिये तीन बार पाद
प्रक्षालन करके कहे हैं ॥५६॥ यह विधि शूद्रों को मन्त्र बिना करनी

चाहिये। अमन्त्र वाले शूद्रका यदि समंत्र होवे तो ब्राह्मण ग्रहण करता है ॥५७॥ यह सब कार्य करके निवृत्त होकर ब्राह्मण को पक्वान्न भोजन करावे हे सुन्दरि ! ज्ञान शुद्ध ब्राह्मण के खाने पर प्रथम प्रेत को देवे, और स्पर्श न करे प्रेत भाग सर्व व्यञ्जन युक्त कल्पित करे ॥५८॥ ५९। देवत्व और ब्राह्मणत्व प्रेत पिण्डमें दियाजाता है और निवापों में मानुषत्व जानना चाहिये ॥६०॥ पितृ स्थान में मंत्रपूर्वक विधान से देना चाहिये एवम् प्रकार प्रेतों में और त्रिप्रों में एक काम नहीं है ॥६१ पुनः हाथ धोकर आचमन कर मंत्र पूर्वक पक्वान्न ग्रहण करे और नित्यशः प्रेत भाग खाते हुये ब्राह्मण के तथा अपने सगोत्र बन्धु वर्ग तथा सम्बन्धित वर्ग के खाने पर जिसका है उसका भाग उसको देना चाहिये ब्राह्मण को देते समय किसी को रोकना नहीं चाहिये ।६२॥६३॥६४। जो देते हुये को रोकता है वह गुरुहत्या का फल प्राप्त करता है रोकने पर न देवता न अग्नि न पितर कोई भी ग्रहण नहीं करते हैं एवम् प्रकार धर्म लुप्त होता है और प्रेत अप्रसन्न होता है इस प्रकार विचार करके कर्म करे जिससे कि धर्म लुप्त न होवे ॥६५ ।६६ एवम् प्रकार ज्ञातिसम्बन्धियों के मध्य में जो प्रेत निमित्त ब्राह्मण को प्रसन्न चित्त से शुद्धभाव से भोजन कराने पर प्रेत पाप मुक्त हो प्रेतत्व से छूट जाता है हे माधवि ! पक्वान्न से ब्राह्मण को तृप्त हुआ जान हाथ धोनेके लिये जल देवे उससे प्रोषित देख उच्छिष्ट न छोड़े ब्राह्मण की आज्ञा से शीघ्र संरम्भ करे वहाँ पर अगर्हित कारण उच्छिष्ट देना चाहिये और पुनः मेरे तीर्थज जल से पवित्र होकर विधिवत शानपुदक करके निवाप स्थान में आकर शिर से प्रणाम कर भक्ति पूर्वक तुम पृथिवी की मंत्रों से स्तुति करे। ॥६७॥६८॥६९॥७०॥७१॥७२। हे मेदिनि ! हे लोकमातः आपको नमस्कार है, नमस्कार है। पृथिवी के लिये महा शैल शिला धारण करने वाली के लिये नमस्कार है हे धारिणि ! हे लोकधात्रि ! हे जगत्प्रतिष्ठे ! वसुधे ! आपको नमस्कार करता हूँ ।॥७३॥

हे सुन्दरि ! तेरे भक्त के एवं प्रकार निवाप देरे पर उसके लिये नाम गोत्र उच्चारण करके तिलोदक देवे ॥७४॥ घुटनों के वल स्थित होकर ब्राह्मणों को नमस्कार कर हाथ से ब्राह्मणों के हाथ पकड़ कर मंत्र पूर्वक खड़ा उठावे ।।७५॥ हे देवि ! तब शय्या आसन अञ्जन कंकण देवे अञ्जन कंकण ग्रहण कर ब्राह्मण शय्या में लेटकर मूहूर्त मात्र विश्राम करे निवाप स्थान में आकर गाय पूंछ पकड़ कर ब्राह्मण के हाथ में देवे । ७६॥७७॥ उदुम्बरस्थ पात्र से कृष्णतिलोदक करके ब्राह्मण गाय के अर्थ मंत्र पढ़े मंत्र से पवित्र हुआ वह जल सर्व पापों का नाश करने वाला होता है तदनन्तर गाय की पूंछ पकड़कर जल से अभिषेचन करे पश्चात् प्रेत का विसर्जन करके द्विजाति के लिये दान देवे अपवित्र निवार अन्न कौवे को देवे ।।७८॥७९॥८० तब अपने घर जाकर सर्व पक्वान्न ब्राह्मणों को खिलावे वासी न रखे ८१। पिपीलिकादि भूतों को भी प्रेतभाग देकर उस प्रेत के लिये कल्पित करे ।८२। उन सब के भोजन करने पर दीन अनाथों को तृप्त कर हे माधवि ! वह प्रेत राजपुर में जाकर देता है ॥८३॥ हे सुन्दरि ! उसका दिया हुआ सर्व अन्न अक्षय्य होता है इसप्रकार प्रेत भाव विशोधन कर्म करना चाहिये नेमि प्रभृति से चातुर्वर्ण्य का शौच कर्म अवश्य होगा यह प्रथम स्वयम्भू ने रचा है ।।८४। ८५॥ धर्म संकल्प तथा विशेषतः प्रेत कार्य करके हे पुत्र ! भयभीत न होयिये नारद के समीप में रहते ही मैंने विस्तार कहदिया है हे पुत्र ! त्वेने पुत्र के लिये एक यज्ञ रचा है ।।८६॥८७.। उससे लेकर संसार में पितृयज्ञ होगा हे वत्स एवं आपका नाम प्रसिद्ध होगा शोक न कीजिये ।।८८॥ आपका नाम शिव लोक ब्रह्मलोक विष्णुलोक में विख्यात होगा एवं प्रकार यथा विधि पितृकर्म कहकर अत्रेयपुनः कहने लगा कि तीसरे सातवें नौवें तथा ग्यारहवें महिने का कर्म करके साम्वत्सरी क्रिया करे ।।८६। ९०॥ शुद्ध होकर सावधान मनसे प्रेत का आवाहन करके यथाविधि प्रेतभाग पक्वान्न भोजन करावे ।।९१॥ चातुर्वर्ण्य का मंत्र युक्तोपचार से और अमंत्र वृषलों का बिना मंत्र के करे ।।९२। पूर्ण सम्वत्सर में प्रेत कार्य निवृत्त

होनेपर ही कोई जन्तु जाते हैं और कोई जाकर पुनः आकर जाते हैं ॥६३॥पितामह स्नुपाभार्या ज्ञाति सम्बन्धि बान्धव यदि ये बहुत हैं स्वप्न के समान यह जगत हैं ॥६४॥ स्वयं मुहूर्त मात्र रोकर निवृत्त होकर पराङ्मुख जाता है स्नेहपाश से बँधा हुआ आधेक्षण में मुक्त होता है ॥६५॥ किसकी माता है किसका पिता है तथा किसके भार्या पुत्र आदि हैं केवल युग युग में मोहपाश से बांधे जाते हैं ॥६६॥ स्नेह भाव से ही मृतका संस्कार करना चाहिये माता पिता पुत्र दारा आदि हजारों होते हैं तो किसके वे हैं और किसके हम हैं स्वयम्भूने प्रेत संस्कार लक्षण विधि कही है ॥६७॥६८॥ प्रेत कार्य के निवृत्त होनेपर पितृत्व प्राप्त होता है प्रति महीने की अमावस्या में पितृ तर्पण करना चाहिये पिता पितामह तथा प्रपिता महादियों की तृप्ति ब्राह्मण मुखों में करे तो शाश्वती तृप्ति होती है ॥६६॥१००॥ एवं प्रकार उस आत्रेय ने पितृ यज्ञ कह कर मुहूर्त मात्र ध्यान धर कर वहीं पर अन्तर्धान हुआ ॥१०१॥ नारद ने कहा आत्रेय से कहा मृत संस्कार कर्म सुनकर आपने चारों वर्णों के धर्म की स्थापना की है॥१०२॥ पितृयज्ञ को उपश्राद्ध में तपोधन ऋषि जन यथान्याय दिन दिन महिने महिने में करते हैं ॥१०३॥ यह विधि सब को कही है शूद्रों को मंत्र रहित कही है नेमिसे किया श्राद्ध उस दिन से लेकर ब्राह्मण सर्वदा करते हैं उसको नैमिश्राद्ध कहते हैं हे मुनि श्रेष्ठ ! आपका कल्याण हो मैं जाता हूं इस प्रकार कह नारद अपने तेज से सबको प्रकाशित करता हुआ शुक्रपुर को गया हे देवि ! यह पिण्ड संकल्प तथा श्राद्धोत्पत्ति आत्रेय मुनिने ब्राह्मणों में स्थापित की है ।१०४॥१०५॥१०६॥१०७॥ इति श्रीवराह पुराणे भगवच्छास्त्रे पिन्ड कल्प श्राद्धोत्पत्ति नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायां मष्टाशीत्य धिक शततमोऽध्यायः ॥१८८॥

अथ एक सौ उनानवे अध्यायः ॥

दोहा—पिण्डकल्प वर्णन करें श्री वराह भगवान् ।
धरणी से समुझाय कर श्राद्ध कल्प का ज्ञान ॥

अथ पिण्डकल्पोत्पत्ति प्रकरणम् ॥ धरणी ने कहा- श्राद्ध विधि

सुनली है तथा शौच अशौच कर्म चारों वर्णों का यथाविधि प्रेत भोज
सुनलिया है हे भगवन् ! अब मुझे एक संशय होरहा है वह कहिये
चारों वर्णों में सब द्विजाति को दान देते हैं ॥१॥२॥ विशेषतः
ब्राह्मण प्रेत भाग ग्रहण करते हैं उन सब का अनिष्ट गहित प्रेत
साथ भोजन करके ब्राह्मण किसकर्म से शुद्ध होता है और हे पुरुषोत्तम
वे ब्राह्मण किस प्रकार दान देने वाले का उद्धार करते हैं । ३ ४॥
जनार्दन ! मैं प्रेमसे तथा स्त्री स्वभाव से आपको पूछती हूं पृथिवी
इसप्रकार पूछने पर शङ्ख दुन्दुभि के समान आवाज वाले वराह रू
भगवान् पृथिवी से कहने लगे श्रीवराह ने कहा—हे भूमे ! जो कुछ
मुझसे पूछती है वह ठीक है ॥५॥६॥ जिस प्रकार ब्राह्मण उद्धार कर
हैं वह कहता हूं ज्ञानहीन ब्राह्मण प्रेत भोज्य खाकर देह की शुद्धि
लिये उपवास करे ब्राह्मण ज्ञान युक्त होकर अहोरात्र उपवास कर प्र
सन्ध्या से निवृत्त होकर अग्नि तर्पण करके शान्ति मंगल पढकर ति
होम करे ॥७॥८॥९॥ प्राग्वाहिनी नदी में जाकर विधि विधान
स्नान करके मधुपर्क युक्त पञ्चगव्य पीकर औदुम्बर पात्र मे शान्त्युद
करके उससे अपने घरको अभ्युक्षित करके पवित्र करे ।१०।११। विभागश
अग्निमुख देवताओं को तृप्त करके भूतवलि देवे और ब्राह्मणों को भोज
खिलावे ॥१२॥ तथा पाप नाश करने वाली एक गायका दान करे जो
प्रकार का कर्म करता है वह परम गति को प्राप्त होता है ॥१३॥ उदर
प्रेतान्न के रहते जो काल धर्म को याने मृत्यु को प्राप्त होता है वह क
पर्यन्त घोरनरकमें निवास करता है तदनन्तर राक्षसयोनिको प्राप्त होक
पुनः पाप युक्त होता है अतः दाता भोक्ता के सुख के लिये प्रायश्चित कर
चाहिये ।१४।१५। गाय हाथी घोड़ी धन आदि का सागन्ततक का दान
ब्राह्मण मंत्र से विधिपूर्वक ग्रहण करता है जो प्रायश्चित्त करे वह निश्च
मे तार देता है ज्ञान सम्पन्न वेदाभ्यास युक्त ब्राह्मण सर्वदा अपनेको त
दाता को भवसागर पार करलेता है हे वसुन्धरे ! तीनों वर्णों को ब्राह्म
का अपमान नहीं करना चाहिये ।१६।१७।१८। देव में जन्मनक्षत्र में श्रा
काल में पर्वदिनों में तथा प्रेत कार्यों में श्रेष्ठ ब्राह्मण को ढूंढकर जो

हम उसीके पितर हैं और नरक जाने कोउद्यत होरहे हैं ॥३७॥ उनके वचन सुनकर राजा दुःखित मन हो सान्त्वना पूर्वक पितरों से यह कहने लगा मेधातिथिने कहा-मेरा नाम मेधातिथि है आप मेरे पितर हैं किस कर्म दोष से आप लोग नरक जाने को तैयार हैं ॥३८।३९॥ पितरोंने कहा आपने श्राद्ध संकल्पित अन्न गोलक को दिया है उसी कर्म दोष से हम नरक जारहे हैं ।४०। नरक में कठिन दुःख भोगकर पुनः स्वर्ग जायेंगे आप हमारे पुत्र हैं दाता हैं तथा सर्व लोक की भलाई करने में तत्पर हैं ।४१। आपने बहुदक्षिणा वाले असंख्य गायदान किये हैं उस पुण्य से हम अतिसुख दायक स्वर्ग में जाते हैं ।४२। वहां स्वर्ग में अन्न नहीं है जिससे कि तृप्ति होवे आपको पुनः पितरों की तृप्ति करने वाला श्राद्ध करना चाहिये ।४३। उनके वचन सुन कर मेधातिथि राजा अपने घर आया और अपने चन्द्रशर्मा गुरु को बुलाकर यह कहने लगा ।४४। मेधातिथि ने कहा-हे चन्द्रशर्मन् ! पुनः आज पितरों का श्राद्ध करता हूँ सो सब ब्राह्मणों को बुलाइये परन्तु उनमें कुण्ड,गोलक नहीं होने चाहिये ।४५। राजा के इस प्रकार कहने पर पुरोहित चन्द्रशर्मा ने शुद्ध वेद वेत्ता ब्राह्मणों को बुलाया जोकि साधु स्वभाव क्षान्तकुलीन, सुशील तथा मान वर्जित थे उनको बुलाकर राजा से श्राद्ध कराने लगा तदनन्तर श्राद्ध करने पर यत्न पूर्वक पिण्डदान देकरब्राह्मणों को भोजन खिलाया और बहु दक्षिणा दी पुनः विसर्जन करके स्वयं भोजन किया भोजनकर पुनः वनमें जाकर राजा ने अपने पितर देखे ।४६।४७।४८।४९। पितरों को हृष्ट पुष्ट देखकर राजा अत्यन्त प्रसन्न हुआ और पितर भी पितृ वत्सल राजा को देखकर विनय तथा प्रीतिपूर्वक कहनेलगे कि राजन् ! आपका कल्याण हो हम अब स्वर्ग लोक जाते हैं ॥५०।५१॥ अब आपको निरन्तर हमारा श्रेष्ठहित करना चाहिये गोलक तथा कुण्डक को कभी भी दैवतथा पितृ अन्न नहीं देना चाहिये उनको देने से विद्वानों ने श्राद्ध निष्फल कहा है यदि दैव तथा पितृ कर्म में शुद्ध ब्राह्मण न मिले तो संकल्प करके अन्न विधि पूर्वक गायों को देवे अथवा गायों के अभाव में भी वह अन्न नदी में गेर देवे ॥५२।५३।५४॥ अथात्र

के लिये नास्तिक गुरुद्रोही गोलक तथा कुण्डक को नहीं देना चाहिये ॥५५॥ इतना कह सब पितर स्वर्ग चलेगये और मेधातिथि भी ब्राह्मणों सहित अपने नगर में आया ॥५६॥ तथा जो कुछ पितरों ने कहा था वह प्रसन्नता पूर्वक किया हे देवि ! अतः यह तुझे कहदिया कि एक भी श्रेष्ठ ब्राह्मण कठिन से कठिन दुर्गोंसे भी तार देता है एक भी पार करने को नौका से समुद्र के समान पार करने को समर्थ है अतः हे वसुन्धरे ! ब्राह्मण को दान देना चाहिये देव असुर मनुष्य गन्धर्व उरग राक्षस आदियों का नेमि प्रभृति सब श्राद्ध करते हैं पश्चात् मास में तपोधन पितृपक्षमें श्राद्ध करने लगे ॥५७॥५८॥५९॥६०॥ इति श्री वराह पुराणे भगवच्छास्त्रे पिण्ड कल्पोत्पत्ति प्रकरणं नाम काशीराम शर्म्माकृत भाषाटीकायां मेकोनविंशत्यधिक शततमोऽध्यायः। १८९॥

अथ एक सौ नब्वेवाँ अध्यायः ॥

दोहा—इकसौ नब्वे में कहें धरणी से भगवान् ।
पितृयज्ञहु निश्चय करणं, श्राद्धविधि सब बखान॥

अथ श्राद्धपितृयज्ञ निश्चय प्रकरणम् ॥ पृथिवी ने कहा देव, मानुष, तिर्यग्योनियों में, प्रेतयोनियों में तथा नरकों में प्राणि आते जाते बराबर घूमते रहते हैं यह संसार स्वप्न के समान है अपने कर्मों के अनुसार शुभ तथा अशुभ है हे भगवन् ! आपके मायाबल से यह संसार वर्तमान स्थित है ॥१॥२॥ हे देव ! जोकि योग से श्राद्ध भोगते हैं वे पितर कौन हैं लोक में अपने कर्मों के अनुसार पांचों में रहते हैं ॥३॥ उस पिण्ड संकल्प को महिने महिने में किस प्रकार करना चाहिये श्राद्ध में खाने वाले कौन हैं पितृ क्रिया क्या है पिण्डों को कौन खाते हैं । ४॥ मैं इस रहस्य को निश्चय से सुनना चाहती हूँ इसप्रकार पृथिवी के वचन सुनकर वराह रूपी नारायण भगवान् पृथिवीसे कहनेलगे श्रीवराहने कहा हे भूमे! हे सर्वधर्म परायणे! ठीक है जो तूने मुझसे पूछा है मैं वह तुझे सुनाता हूं हे माधवि ! जो पितृयज्ञों में खातेहैं उन्हें सुनियेकि पितामहतथा प्रपितामहादि पितरश्राद्ध संकल्पित अन्नको खाते हैं पितृपक्ष के आने पर नक्षत्र संयोग देखकर महिने में एक दिन पिन्ड संकल्प करना चाहिये पर्व

तिथि जानकर पिन्ड दान करे जिसमें देनेसे कि महत्फल होता है।५।
।६।७।८ ६। जोज्ञानी मनुष्य श्रद्धासे श्राद्ध करते हैं उसे सुनिये॥१०॥
कोई द्विजाति जन ब्रह्मयज्ञ करते हैं कोई अग्नि में देवयज्ञ करते हैं।११।
गृहस्थाश्रममें रहकर मनुष्य यज्ञ करते हैं।१२। हे देवि! पितृयज्ञ सुनिये
मैं निश्चय से सुनाता हूं हे वरारोहे! जो सैकड़ों यज्ञों से यजन करते
हैं वे सब मेरे में मिल जाते हैं या मेरे परायण हैं हे सुन्दरि! यह मैं
सत्य कहता हूँ हव्य कव्यों में देवताओं का मुख अग्नि है उत्तराग्नि मैं
हूं तथा दक्षिणाग्नि मैं हूं हे सुन्दरि! सर्वयज्ञों में मुझ अग्निरूप का
आवाहन करना चाहिये पवित्र अग्नि मैं ही हूँ सब देव सत्रादि कार्यों
मेंमैं ही स्थित हूँ।१३ १४।१५।१६। वैश्वदेव में पवित्र ब्रह्मचारी नियुक्त
करे देव तीर्थ में भिक्षुक को नियुक्त करे वानप्रस्थयतियों को श्राद्धमें
भोजन न देवे इनका पूजनदेवकार्य में करे जो व्रतस्थ श्राद्धयोग्य ब्राह्मण
हैं उन्हें कहते हैं॥१७॥१८॥ श्रेष्ठ गृह सन्तुष्ट क्षान्त दान्त जितेन्द्रिय
उदासीन सत्य सन्ध श्रोत्रिय धर्मपाठक वेद विद्या व्रत स्नात सुविमृष्ठान्न
भोजक हे माधवि! इनको पितृयज्ञ श्राद्ध में भोजन करावे॥१६॥२०
प्रथम देवतीर्थों में अग्नि के लिये देकर पश्चात पितृ निमित्त ब्राह्मणको
देवे॥२१॥ हे सुन्दरि! चारों वर्णों को जिसप्रकार श्राद्ध योग्य है पितृ
यज्ञोंमें उसीविधि अनुसार करनाचाहिये॥२२॥ श्वान कुक्कुट सूकर अपां-
क्तेय ब्राह्मण संस्कार वर्जित मनुष्य तथा सर्व कर्म करने वाले सर्व भक्षण
करने वालों को श्राद्ध भोज्य न दिखावे हे सुन्दरि! पितृयज्ञ श्राद्धमें इनकों
न देखे यदि ये श्राद्ध को देखें तो वह राक्षस श्राद्ध होता है मैंने बलिके
लिये पहिले ही प्रकल्पित कर दिया है जिस समय इन्द्रके लिये त्रिविक्रम
में मैंने बलिका राज्य हरण किया उसीसमय मैंने राक्षस श्राद्ध बलि को
दिया है अतः मन्त्र हीन क्रियाहीन श्राद्धकी वह प्रतीक्षा करते रहते हैं
॥२३॥२४॥२५॥२६॥ हे सुन्दरि! इनको श्राद्ध में त्यागना चाहिये
तर्पण करके शुद्ध ब्राह्मण को गुप्त रीति से भोजन कराना चाहिये।२७।
श्राद्धमें विधिपूर्वक मंत्रसे पितरों का आवाहन करना चाहिये पितामह
प्रपितामहादियों को अपसव्य होकर व्यञ्जन युक्त तीन पिन्ड देने

चाहिये तथा महीने महिने में तिलोदक देना चाहिये जिस भूमिमें पिन्ड देवे उस निर्वाप स्थान को वैष्णवी काश्यपी अजया नाम से उच्चारण करके प्रणाम करना चाहिये ।२८॥२६॥३०॥ इसप्रकार पिन्डदान देने से पितर प्रसन्न होते हैं देवताओं के शरीर में रहने वाले मैंने यह किया है देव गात्र से निकले तीन पितृदेव पितृ पिन्डकों को खाने वाले होवेंगे ॥३१॥३२॥ देवता असुर गन्धर्व यक्ष राक्षस पन्नग आदि वायुरूप होकर श्राद्ध में छिद्र देखते रहते हैं ॥३३॥ हे भूमे ! जो पितृ यज्ञ करते हैं उनको पितर लोग आयु कीर्ति बल तेज धन पुत्र कलत्र पशु आदि तथा आरोग्यता प्रदान करते हैं और अपने कर्मों के अनुसारसुन्दर शोभन लोकोंको प्राप्त करते हैं तिर्यग्योनि में तभावसे छूट जाते हैं और नरक में दुःख भोगने वालों का मनुष्य रक्षक होता है ॥३४॥३५॥३६॥ गृहस्थाश्रम में रहकर जोमनुष्य सर्वदा पितरों का श्राद्ध करता है और विधिपूर्वक ब्राह्मणों को तृप्त करता है उसका श्राद्धतर्पित पितर अक्षय पुण्य मानते हैं पितृभक्त मनुष्य परम गति प्राप्त करता है ।३७।३८।एवं प्रकार के कर्मपरायण मनुष्य सात्विक शुक्लमार्ग को जाते हैं पुनः अन्य भी कहता हूं हे सुन्दरि ! उसे सुनियेकि अज्ञान अन्धकार युक्त निकृतिज्ञ शठ मनुष्य सैकड़ों स्नेह पाश से घोर नरक में जाते हैं ।३६।४०।कल्पान्त पर्यन्त नरक में दुःख भोगने वालों का पुत्रपौत्रादि कोई कभी भी अमावास्या दिन एक जल विन्दुभी उन नरक निवासी अपने पितरों के निमित्त देता है तो उसी से उन पितरों की तृप्ति होजाती है और जो नर ब्राह्मणों को तृप्त करके श्राद्धकरते हैं भक्ति भाव से पितरों को पिन्ड दान तिलोदक देते हैं वे अक्षय्य तृप्तिको प्राप्त करके नरकमे मुक्त हो जाते हैं औदुम्बर पात्र ग्रहणकर उसमें तिलोदक रखकर ब्राह्मणों के वचनानुसार यथाशक्ति ब्राह्मणों को पितृउद्धार केलिये दक्षिणा देनी चाहिये ।४१।४२।४३।४४।४५। और पितरों के नारकीय दुःखदूर करने के लिये नील वृषभ का दान करना चाहिये नील षण्ड वृषभ के पूछ में यदि जलभी लगावे और छिड़के तो उसके साठहजार वर्ष तक पितर तृप्त होते हैं नील षण्ड से मुक्त मात्र शृङ्ग से हे सुश्रोणि ! यदि उसने सींग से

सोम के इस प्रकार कहने पर पितर कल्याण की इच्छा से सोम के साथ ब्रह्मर्षिगण सेवित मेरु शिखर पर सुख पूर्वक बैठे हुए शरण्य देव ब्रह्मा की शरण गये पितामह ब्रह्माको देखकर सहसा पृथ्वी में शिर झुका ब्रह्मा को प्रणाम कर अत्रिपुत्र सोम ने पितामह ब्रह्मासे कहा कि हे देव ! ये जो पितर हैं ये अजीर्णता के दुःख से पीड़ित होकर आपकी शरण में हैं।६७।६८।६९।७०।७१। हे पितामह ! जिस प्रकार इनकी अजीर्णता नष्ट होवे वह उपाय कीजिये, ब्रह्मा ने मुहूर्तमात्र ध्यान करके ईश्वर को देखा और योगीश्वर से कहा कि हे देव ! ये पितर अजीर्णता के दुःख से पिड़ित हैं।७२ ७३। और सोम के सहित यहां मेरी शरण आये हैं अब जिसप्रकार कल्याणहोवे वह कहिये ।७४। ब्रह्माके इस प्रकार कहने पर सरमेश्वरने मुहूर्तमात्र ध्यान धर तथा दिव्य योगग्रहण कर योग वेदाङ्ग निर्मित ईश्वर को देखा और परम विस्मय को प्राप्त हो ब्रह्मा से कहने लगा ।७५।।७६।। हे ब्रह्मन् ! वैष्णवी माया से विष्णु ने प्रथम पितरों को निर्माण किया है। अतः वे श्रेष्ठ हुये हैं ब्रह्मदैत्य पिता मेरे गात्र से निर्माण किया है। विष्णुदैवत्य पितामह विष्णु गात्र से निर्माण किया है।७७।७८। और रुद्र दैवत्य प्रपितामह मेरे गात्र से निर्माण किया है। अतः पितृदेवता मनुष्यों में श्राद्ध में नियुक्त किये हैं ब्राह्मणों के हित के लिये विष्णु माया से रचे गये हैं। वे पितर पितृयज्ञ में तृप्त हो अजीर्णका दुःख पा रहे हैं उनका दुःख जिसप्रकार दूरहोवे, वह उपाय कहता हूँ तेजस्वी शाण्डिल्य पुत्र धूम्रकेतु विभावसु श्राध्द में प्रथम उसे देना चाहिये, और मनुष्यों को देना चाहिये। और विसर्जित पितृपिण्ड उसी के साथ खाना चाहिये, ईश्वर के इसप्रकार कहने पर ब्रह्मा ने मन से अग्नि को बुलाया और अग्नि वहां पर आया,सर्वभक्ष तेज से प्रदीप्त अग्नि ब्रह्माने मेरी माया से पञ्चयज्ञों में नियुक्त किया।८१।८२।८३ ८४।८५। ब्रह्माने अग्नि से कहा कि हे हुताशन ! सुनिये प्रथम विसर्जित पितृपिण्ड खाइये आपके खाने पर मरुद्गणों के सहित देवता खायेंगे, पथ्य अन्न मध्यम श्राध्द साथ खाना चाहिये पश्चात् दिये गये उस पिण्ड को सोम के साथ खाते हैं ब्रम्हा के इस प्रकार कहने पर पितृदेव हुताशनादि सोम के साथ वापिस आये, हेभूमे !

कीचड़ उठाया है उसके नित्य नरक में गिरे हुये बान्धव पितरों का भी उद्धार करके वह सोम लोक में जाता है। नील वृषभदान का पृथ्वी में जो फल है उससे साठ हजार साठ सौ वर्ष तक पितर भूखप्यास रहित होकर सोम लोक में निवास करते हैं ॥४६॥४७॥४८॥४९॥५०॥ पुत्र पौत्र युक्त गृहस्थियों का यह धर्म है। सुख पूर्वक निवास करते हैं और रक्षक होते हैं ॥५१॥ पिपीलिकादि प्राणि जङ्गल तथा विहङ्गम सब गृहस्थियों के ऊपर निर्भर हैं ॥५२॥ एवं गृहाश्रम सब का मूल है उसमें धर्म प्रतिष्ठित रहता है, जो मास मास में तिथि पर्व में पितरों का श्राद्ध करते हैं, वे पितरों का उद्धार करते हैं ॥५३॥५४॥ यज्ञ दानाध्ययन उपवास तीर्थाभिषेक, अग्निहोत्र तथा विधि पूर्वक अनेक दान न करने वाले गृहस्थियों को भी श्राद्ध फल नहीं मिलता है, विष्णु ब्रह्मादियों के शरीर में रहने वाले पिता पिता महादि पितर उसके घर से चले जाते हैं ॥५५॥५६॥ हे भूमे ! एवं क्रम से वहां पितृदेव रहते हैं। कश्यपोत्पन्न देवता श्राद्ध में नियुक्त किये गये हैं ॥५७॥ शक्र आदि देवता नहीं जानते हैं। आत्मदेह निसृतों को ईश्वर भी नहीं जानता मेरी माया से पैदा हुआ ब्रह्मा भी नहीं जानता एवं मायामय भूमि में ब्रह्म रुद्र बहिष्कृत हैं ॥५८॥५९॥ पुनः और कहता हूँ कि पितृ यज्ञ में ब्राह्मणों को खिलावे अग्नि में न देवे ॥६०॥ तो भूमि में कुशा आदि बिछाकर पिण्ड संकल्प करे तो हे वसुन्धरे ! उस पितृपिण्ड से पितृदेव अजीर्ण पीड़ित होकर नहीं खाते हैं। और पीड़ित होकर सोम के समीप जाते हैं। अजीर्ण पीड़ित पितरों को देख सोम ने स्वागतादि वाक्य द्वारा उनका पूजन किया। और कहा कि आप किससे पैदा हुये हैं। तथा किस कारण दुखित हैं सोम के इस प्रकार कहने पर पितरों ने सोम से कहा कि हमारा वचन सुनिये ब्रह्मा विष्णु महेश्वर से उत्पन्न हम तीन पितर श्राद्ध में नियुक्त किये हैं और पितृपिण्ड से हम तृप्त होते हैं। हे सोम! हमें अजीर्ण हो गया है उसी से हम दुःखी हैं ।६१ ।६२।६३।६४।६५।६६। सोम ने कहा तुम तीनों में एक मैं भी चौथा मित्र होता हूँ। मिलकर वहां चलते हैं जहां कल्याण हो हे वसुन्धरे !

सोम के इस प्रकार कहने पर पितर कल्याण की इच्छा से सोम के साथ ब्रह्मर्षिगण सेवित मेरु शिखर पर सुख पूर्वक बैठे हुए शरण्य देव ब्रह्मा की शरण गये पितामह ब्रह्माको देखकर सहसा पृथ्वी में शिर झुका ब्रह्मा को प्रणाम कर अत्रिपुत्र सोम ने पितामह ब्रह्मासे कहा कि हे देव ! ये जो पितर हैं ये अजीर्णता के दुःख से पीड़ित होकर आपकी शरण में हैं।६७।६८।६६।७०।७१। हे पितामह ! जिस प्रकार इनकी अजीर्णता नष्ट होवे वह उपाय कीजिये, ब्रह्मा ने मुहूर्तमात्र ध्यान करके ईश्वर को देखा और योगीश्वर से कहा कि हे देव ! ये पितर अजीर्णता के दुःख से पिड़ित हैं ।७२ ७३। और सोम के सहित यहां मेरी शरण आये हैं अब जिसप्रकार कल्याणहोवे वह कहिये ।७४। ब्रह्माके इस प्रकार कहने पर सरमेश्वरने मुहूर्तमात्र ध्यान धर तथा दिव्य योगग्रहण कर योग वेदाङ्ग निर्मित ईश्वर को देखा और परम विस्मय को प्राप्त हो ब्रह्मा से कहने लगा ।७५।।७६।। हे ब्रह्मन् ! वैष्णवी माया से विष्णु ने प्रथम पितरों को निर्माण किया है। अतः वे श्रेष्ठ हुये हैं ब्रह्मदैत्य पिता मेरे गात्र से निर्माण किया है। विष्णुदैवत्य पितामह विष्णु गात्र से निर्माण किया है ।७७।७८। और रुद्र दैवत्य प्रपितामह मेरे गात्र से निर्माण किया हैं। अतः पितृदेवता मनुष्यों में श्राद्ध में नियुक्त किये हैं ब्राह्मणों के हित के लिये विष्णु माया से रचे गये हैं। वे पितर पितृयज्ञ में तृप्त हो अजीर्णका दुःख पा रहे हैं उनका दुःख जिसप्रकार दूरहोवे, वह उपाय कहता हूँ तेजस्वी शाण्डिल्य पुत्र धूम्रकेतु विभावसु श्राध्द में प्रथम उसे देना चाहिये, और मनुष्यों को देना चाहिये। और विसर्जित पितृपिण्ड उसी के साथ खाना चाहिये, ईश्वर के इसप्रकार कहने पर ब्रह्मा ने मन से अग्नि को बुलाया और अग्नि वहां पर आया, सर्वभक्षतेज से प्रदीप्त अग्नि ब्रह्माने मेरी माया से पञ्चयज्ञों में नियुक्त किया ।८१।८२।८३ ८४।८५। ब्रह्माने अग्नि से कहा कि हे हुताशन ! सुनिये प्रथम विसर्जित पितृपिण्ड खाियिये आपके खाने पर मरुद्गणों के सहित देवता खायेंगे, पथ्य अन्न मध्यम श्राध्द साथ खाना चाहिये पश्चात् दिये गये उस पिण्ड को सोम के साथ खाते हैं ब्रह्मा के इस प्रकार कहने पर पितृदेव हुताशनादि सोम के साथ वापिस आये, हेभूमे !

तब से वे सब मिलकर पितृयज्ञ को भोगते हैं, खाते हैं, हे वसुन्धरे
एवं प्रकार प्रथम श्राद्ध अग्नि को देवे, पितरों के निमित्त ब्राह्मणों
तृप्त करके पश्चात भूतल में दर्भा बिछाकर पिण्डदान देवे, प्रथम वि
पूर्वक ब्रह्म अंश के लिये पिण्डदेवे ।८६'८७ ८८।८६।६०।६१। रु
रुद्रांशभूत पितामह को पिण्ड देवे तदनन्तर विष्णु रूप प्रपितामह
पिण्ड देवे । ६२।। जो मनुष्य विधि पूर्वक मन्त्र द्वारा श्राद्ध करते
उनके लिये श्राद्ध से तृप्त हुये पितर वरदान देते हैं ।६३। मेरे मायाव
से ही द्विजाति ने श्राद्ध किया है । हे वसुन्धरे ! अपांक्तेय ब्राह्मणों
कहता हूं सुनिये नपुंसक, चित्रकार, वसुपाल विनिन्दक कुनख श्यावदन
काणा, विकटोदर, नर्तक, गायक, रंगोपजीवी, वेदविक्रय करने वा
ब्रह्मयोनि में पैदा हो पतित हुये असस्कार वाले क्षुद्रकर्मकर आजीवि
करने वाले शूद्रकर्म करने वाले गणक, ग्रामयाजक, ।६४।६५।६६ ६
।६८। दीक्षित, क्रोडपृष्ठ तथा वार्धुषिक ब्राह्मण, रसविक्रेता त
वेश्योपजीवी, तस्कर, लेखककार, याजक, रंगकारक, शौलिक, गिरि
दाम्भिक तथा सर्व कर्म करने वाले सर्वविक्रय करने वाले हे वसुन्धरे
इनको श्राद्धमें भोजन नहीं कराना चाहिये ।६६।१००।१०१। जो
देश में जाकर आजीविका करते हैं । रक्त बेचने वाला शंलूप तथा ति
बेचने वाला इन सबको विद्वान लोग श्राद्धसमय राजप प्रकृति के मान
।। हे देवि ! तथा अन्य जो द्विज रूप से दूषित राक्षस हैं । उन
श्राद्धों में पितृपिण्डों में न देखे, तथा अपांक्तेय ब्राह्मणों को त्यागदे
चाहिए, यदि भोजन करते समय अपांक्तेय देखलें तो उसके पितर ६
महीने तक दारुण कष्ट को प्राप्त करते हैं । हे वसुन्धरे ! शीघ्र पात्र र
उसका प्रायश्चित करना चाहिये ।१०२।१०३ १०४।१०५। अग्नि
घृत की आहुति देवे । सूर्य का अवलोकन करे, पुनः पिता महा
पितरों को पिण्डदान देकर गन्ध, पुष्प, धूप देवे तिलोदक से अर्घ्य दे
पुनः पवित्र ब्राह्मण को यथाविधि भोजन खिलावे, हे सुन्दरि ! पु
और भी कहता हूं । सुनिये ज्ञान शुद्ध विप्र से यथा विधि मंत्रशुद्धि सुनि
।१०६।१०७।१०८। हे माधवि जो कभी भी मृतान्न नहीं खाते हैं

उनको वैश्वदेवों में देवे, श्राद्ध अन्न न देवे।१०६। जो ब्राह्मण प्रेतान्न खाते हुये श्राध्दान्न खाते हैं, उनका दोष कहता हूँ कि वह खाया हुआ खिलाता है।११०। दम्भकार कृतोच्छिष्ट करके नरक जाता है जिस प्रकार वे मनुष्य शुध्द होते हैं, उनका प्रायश्चित कहताहूँ १११। वह नर मधुमास से माघ द्वादशी में द्विजाति को तृप्त करके घतयुक्त पाय सान्न चाटे और अपनी शुध्दि के लिये कपिला गाय का दान करे, सवत्स गायदान करे, पुनः श्राध्दकरे ।११२-११३ हे भूमे ! स्नान उप-लेपन करके ब्राह्मणों को बुलावे दन्तकाष्ठ छोड़ कर ही ब्रह्मचारी पवित्र होवे । ११४। यत्नपूर्वक श्राध्द में युग्म को भोजन कराकर विसर्जन करे अमावस्या के दिन दांतुन न करे ।११५। जो मूर्ख अमावास्या के दिन दांतुन करता है, वह सोम तथा पितर देवताओं की हिंसा करता है ११६। प्रातः काल सूर्योदय समय विधिपूर्वक ब्राह्मण का नित्य कर्म करके श्मश्रु कर्म तथा नख छेदन करके स्नान अभ्यञ्जन करे।११७।११८। पुनः शुध्दता से सुविसृष्ट पक्वान्न पका कर मध्यान्ह समय श्राध्दारम्भ करे ।११६। स्वागतादि कृत्य करके पाद्यादि देकर ब्राह्मण को घर के भीतर ले जावे, आसन कल्पित कर अवाहन करे विधि विधान से अर्घ्य देकर गन्धमाल्यादि से पूजन करे।।१२०।१२१। धूपदीप तथा वस्त्र तिलो-दक, भोजन के लिये पात्र ब्राह्मण के सामने रखे। १२२॥ पंक्ति दोष निवारक भस्म से मण्डप बनावें तदनन्तर अग्निकार्य करके भोजन परोसे।१२३। हे सुन्दरि ! उस समय पितरों के उद्देश्य से संकल्प न करे और ब्राह्मण को कहे कि प्रेम पूर्वक भोजन कीजिये ।१२४। और रक्षोघ्न मंत्र पाठ सुनावे ब्राम्हण की तृप्ति करके विकिरान्न देवे ।१२५। उत्तरीयासन देकर पिण्ड प्रश्न करे, भूमि में दर्भा बिछाकर दक्षिण मुख होकर तीनों पितरों को पिण्डदान देवे सन्तान वृध्दि के लिये यथाविधि पिण्डों की पूजा करनी चाहिये ॥१२६॥१२७॥ अक्षय आत्माशाला ब्राह्मण के हाथ में देकर दक्षिणा द्वारा ब्राह्मण को प्रसन्न कर स्वस्ति वाचन कर विसर्जन करे ॥१२८॥ जबतक पृथ्वी में तीन पिण्ड रहते हैं तब तक पितर घर में रहते हैं ॥१२६॥ आचमन

कर पवित्र हो शान्त्युदक देकर निवाप धारिणी को भूमि में वैष्णवी काश्यपी अक्षया नाम कहकर प्रणाम करे प्रथम पिन्ड खावे मध्यम पिन्ड पत्नी को देवे और तीसरा पिन्डजलमें गेरदेवे इस प्रकार श्राद्धविधि कही है पितृदेवोंका विसर्जन कर उनको प्रणाम करे ।१३०।१३१।१३२। एवं प्रकार देने से पितृगण प्रसन्न होते हैं और दीर्घायु पुत्रपौत्रधनादि देते हैं ।१३३। ज्ञानोत्तम ब्राह्मणों को विधान से श्राद्ध देना चाहिये अन्यथा श्राद्ध निष्फल होता है ।१३४। जो ब्राह्मण मंत्रहीन क्रियाहीन होकर श्राद्ध करता है वह श्राद्धभाग फल मेरे भक्त असुरेन्द्र को होता है ।१३५। हे सुन्दरि ! यदि ज्ञान रहित ब्राह्मण पात्र उठावे तो वह उसके खाते हुये को राक्षस हरण करते हैं ।।१३६।। हे भद्रे ! यह उत्तम पितृ कार्य तथा उत्पत्ति दान तथा दान का पुण्य तुझे सुनालिया है हे वसुन्धरे ! और क्या सुनना चाहती है ।।१३७।।१३८।। इति श्रीवराह पुराणे श्राद्ध पितृयज्ञ निश्चयो नाम काशीराम शर्म्माकृत भाषाटीकायां नवत्यधिक शततमोऽध्यायः ।।१९०।।

अथ एक सौ इकानवेवाँ अध्याय

दोहा—इकसौ इकानव्वे में कहें सकल समुझाय ।
मधुपर्कोत्पत्ति को अरु दान संकरण गाय ।।

अथ मधुपर्कोत्पत्ति दान संकरण प्रकरणम् ।। सूतने कहा—एवं धर्म शास्त्र के अनुसार बहुत धर्मोंको सुनकर पृथिवी वराह रूपी भगवान से पुनः पूछने लगी ।१। पृथिवी ने कहा—हे देव ! आपके मुखसे मैंने बहुत शास्त्र सुनलिये हैं तभी भी मुझे तृप्ति नहीं हुयी है मेरे अनुग्रह के लिये आप रहस्य सुनायिये कि मधुपर्क किसप्रकार होता है उसका फल क्या है और उसका देवता कौन है और कौन द्रव्य किसको देने चाहिये वह मुझे सुनायिये इसप्रकार भूमिके वचन सुनकर देवदेव वराहरूपी जनार्दन भगवान पृथिवी से कहने लगे ।।२।।३।।४।।५।। श्रीवराहने कहा—हे भूमे! जिसप्रकार मधुपर्क किया जाता है वह सुनिये जिसकी कि उत्पत्ति तथा दान सर्वस्व ह्रास को प्राप्त होरहा है ।।६।। मैं तथा ब्रह्मा, रुद्र लोक का संचय करके तथा जो कुछ अव्यक्त भूत थे उनका भी सर्वथा संचय करके

हे भूमे ! मेरे दक्षिण अङ्ग से रूप कान्ति श्री,ह्री कीर्ति वाला पुरुष निकला तब ब्रह्माने मुझसे पूछाकि भगवन्! आपके गात्रसे यह हमतीनों मेंचौथा कौन निकला है यह सरह तथालघु है आपसे इसका निकला ठीक नहीं लगता हैब्रह्मा के वचन सुनकर मैंने यह कहाकि इसप्रकार का पुरुष जो मुझमेपैदा हुआ है वह सर्वकर्मों में निष्ठावाला भक्तोंका भवमोक्ष करने वाला मधुपर्क है ।७।८।६।१०।११। हे ब्रह्मन् ! मैंने यहां पर तुझे तथा रुद्र को संक्षेप से सुनाया है तब ब्रह्माने कहा हे विष्णो ! ठीक ही हेकि जो यह भागवत आपसे निकला है मुझसे मधुपर्क की उत्पत्ति सुनकर ब्रह्मा मधुरवाणी से मुझे पूछने लगा कि मधुपर्क से क्याकार्य करना चाहिये यह समग्रता से कहिये ब्रह्माके वचन सुनकर मैंने इसे कहाकि जो मनुष्य मधुपर्क का कारण दान संकरण मेरी पूजाविधि करके मुझे मधुपर्क समर्पण करता है हे ब्रह्मन् ! वह उत्तर स्थान को जाता है जहां जाकर कि मनुष्य शोक नहीं करता है मेरे दान प्रतिग्रह से उसकी क्रिया कहता हूँ ।१२।१३।१४।१५।१६। जिसकी दान विधिको प्राप्त करके दिव्य गति कोप्राप्त करतेहैं मेरे प्रिय भक्त उपचारके करनेपर मधुपर्क ग्रहण करके यह मंत्र पढ़े ।१७ १८। मंत्र–हे भगवन् ! आपके गात्र से पैदा हुआ यह भव मोक्ष करने वाला मधुपर्क है मैंने आज यह मधुपर्क भक्ति पूर्वक सम्पादित किया हे आप इसे ग्रहण कीजिये आपको नमस्कार करता हूँ ।१६। हे वसुन्धरे ! पुनः अन्य भी कहता हूं उसे सुनये कि जिस प्रकार मधुपर्क है जैसी उसकी महाक्रिया है उसे सुनिये ।२०। मधु दधि तथा घी को बराबर करके परमोत्तम सिद्धि की इच्छा वाला विधिपूर्वक मंत्र से पवित्रकरे उचित उपचारसे प्राप्त करकेमेरे अर्पण करे हेभूमे! जोआपने पूछा हैवह सुनालिया है।२१।२२ इतिश्रीवराहपुराणे मधुपर्कोत्पत्तिदान संकरण काशीराम शर्म्माकृत भाषाटीकायां मेकनवत्यधिक शततमोऽध्यायः।१६१।

अथ एक सौ बयानवेवाँ अध्याय

दोहा—सर्वशान्ति वर्णन किया विविध भांति समुझाय ।
वराहरूपी विष्णु ने, धरणी इस अध्याय ॥

अथ सर्वशान्ति वर्णनम् ॥ सूतके कहा–मधुपर्क की उत्पत्ति तथा

दान पुष्प फल कारण ग्रहण सुनकर पृथिवी परम विस्मय को प्राप्त हो भगवान् के चरण पकड़कर भगवान से कहने लगी कि हे भगवन् ! जो आपको प्रिय है वह आपके भक्तों को वृत्तोच्चार से वहींपर देना चाहिये यह परम महत् रहस्य मुझे तत्व से सुनाइये श्रीवराहने कहा हे भूमे ! जो कुछ तू मुझसे पूछरही है वह ठीक है ।१।२ ३।४। वह सब दुःख संसार मोक्षण तुझे सुनाता हूं जो तूने पहिले कहा है वह मेरे कर्म कर के पश्चात् राष्ट्रसुखावह मेरी शान्ति करे। तदनन्तर सर्वकर्म करके भूमि में घुटने टेककर नमोनारायणाय कहकर मंत्र पढ़े मत्र—हे वासुदेव ! आप सबकी गति हैं आप ही परायण हैं हे संसार रूपीसागर से पार करने वाले स्वामिन् ! मैं आपकी शरण हूं आप प्रसन्न वदन होकर आइये और समुचित व्यवहार से दिशाओं को देखिये। नीचे ऊपर देखिये तथा नित्यशः व्याधियों से हमारी रक्षा कीजिये। अपने राष्ट्र तथा सर्वबल युक्त राजा के ऊपर प्रसन्न हो जाइये ॥५। ६ ।७॥८। ६॥ गर्भिणी स्त्रियों के ऊपर, बृद्धों के ऊपर, गाय ब्राह्मणों के ऊपर निरन्तर शान्ति करके शुभ कीजिये।१०। अन्न कीजिये, सुवृष्टि कीजिये, सुभिक्ष तथा अभय कीजिये। हे विभो ! हमारा राष्ट्रबढ़े और नित्यशः शान्ति होवे। ११॥ देव ब्राह्मण भक्त तथा कन्या पशू आदि सर्वभूतों के ऊपर नित्यशः शान्ति कीजिये ॥१२॥ मेरे कर्म परायण मनुष्य एवं प्रकार शान्ति पढ़कर पुनः जल की अञ्जलि देकर यह मंत्र उच्चारण करे ॥१३। मंत्र जो आप सर्वजगत की उत्पत्तिस्थान हैं यज्ञों में तथा देवों में कर्म साक्षी हैं हे वासुदेव ! आप मेरी शान्ति कीजिये तथा हे देव ! संसार से मुक्त कीजिये ॥१४॥ यह सिद्धि है, कीर्ति है तथा महोजसों का महोजस है लाभों में परमलाभ है, गतियों में परम गति है ॥१५। जो मनुष्य एवं प्रकार सुखदायक मेरी शान्ति को पढ़ते हैं वे पुनरावृत्ति रहित हो मेरे में लय होते हैं ॥१६॥ एवं शान्ति पढ़कर मधुपर्क का प्रयोग करे नमोनारायणाय कहकर यह मंत्र उच्चारण करे ॥१७॥ मंत्र—जो आप देववर से पैदा हुये हैं, जो आप पूजनीय मधुपर्क नाम से विख्यात हैं आइये इन पात्रों में स्थित हो मेरा भवमोक्ष कीजिये ॥१८॥ मधु घी

दधि बराबर करके उदुम्बर पात्र में रखे मधु न मिले तो गुड़ के साथ मिलावे ॥१६॥ और घी न मिले तो लाजा याने साठी के खीलों के साथ मिलावे और दधि के अभाव में दूध मिलावे ॥२०॥ दधि क्षौद्र तथा घृत को समान करके कहे कि हे देवेश रुद्र ! आपको सर्पि घृत मधु आदि समर्पण करता हूं और सब वस्तुओं के अभाव में मेरे कर्म परायण मनुष्य जल ही लेकर यह निम्नोक्त मंत्र का उच्चारण करे ॥२१।२२॥ मंत्र—जो आप यज्ञों से, मंत्रों से, सरहस्य जप्यों से आभिमात्र उत्पन्न हुये हैं वह दिव्य मधुपर्क मैंने रचा है आप ग्रहण कीजिये ॥२३॥ हे महाभागे ! जो मनुष्य मयोक्त मधुपर्क विधिपूर्वक देता है वह सर्व यज्ञफल प्राप्त करके मेरे विष्णु लोक में जाता हैं।२४। हे वसुन्धरे ! तुझे और भी सुनाता हूँ कि जो मेरेपरायणमनुष्य प्राण त्याग करता है उसको मंत्र से विधिपूर्वक यह मधुपर्क देना चाहिये सुपुष्कल कर्म करके जभी प्राण त्याग करे, तभी मेरे भक्त को यह सर्व संसार मोक्षण मधुपर्क देना चाहियें। मरते हुये को विह्वल देख मेरे कर्म परायण मनुष्य मधुपर्क ग्रहण करके यह मंत्र उच्चारण करे ॥२५।२६। ।२७।२८। मंत्र—जो आप नारायण सबके शरीर में रहते हैं आप सर्व जगत्प्रधान हैं। हे लोकनाथ ! भक्त से लाये हुये इस मधुपर्क को ग्रहण कीजिये ॥२६॥ मनुष्य के मृत्यु समय इसीमंत्र से विधिपूर्वक सर्वसंसार मोक्षण मधुपर्क देवे ॥३०॥ हे महाभागे ! यह मधुपर्क की गति कही है हे वसुन्धरे ! एवं प्रकार से मधुपर्क को कोई नहीं जानता हैं।३१। सिद्धि को चाहने वाले एवं प्रकार मधुपर्क देवे सर्वसंसार नाशक भगवान् की पूजा करके मधुपर्क देवे।३२। जो मधुपर्क देता है वह परम गति प्राप्त करता है यह मधुपर्क पवित्र है निर्मल है तथा सर्वकाम में शुद्धि करने वाला है।३३ यह दीक्षित को तथा गुरु शिष्य को देना चाहिये मूर्ख तथा अविनीत को कभी नहीं देना चाहियें ॥३४॥ हे भद्रे ! उत्तम सिद्धि तथा सर्वसंसारमोक्षार्थ यह मधुपर्क विभावन तुझे सुनादिया है जो मधुपर्क का आख्यान सुनता है परम सिद्धिको प्राप्त होता है।३५।३६। राजद्वार श्मशानभय तथाव्यसनमेंइस शान्ति कोपढ़ता हैउसकार्यसिद्धहोताहै।३७।

अपुत्र पुत्रको अभार्य, भार्याको, अपति कान्त को प्राप्त करता है तथा बन्धन वाला बन्धन से छूटता है ॥३८॥ हे भूमे! सुखदेने वाली यह परम महत रहस्य रूप शान्ति मैंने तुम्हें सुनाली हैं ॥३९॥ जो नर इस विधान से परमोत्तम शान्ति करता है। वह सङ्ग छोड़कर मेरे लोक में जाता है ॥४०॥ इति श्री वाराह पुराणे भगवच्छास्त्रे सर्व शान्ति करणं नाम काशीराम शर्माकृत भाषा टीकायां द्विन वत्यधिक शततमोऽध्यायः॥१९२॥

अथ एक सौ तिरानवेवां अध्यायः

दोहा—इकसौतिरानवे कहें, नचिकेत हु प्रयाण।
उद्दालकके शाप से, यम घर कियो प्रयाण॥

।अथ नचिकेत प्रयाण वर्णनम्॥ लोमहर्षण ने कहा पूर्वाह्निक क्रिया करके द्वारदेश में बैठे हुये वेदवेदाङ्गपारग महाप्राज्ञ व्यास शिष्य को।१। तथा अश्वमेध के होनेपर ब्रह्महत्या से युक्त हो द्वादश वार्षिकी दीक्षा प्रायश्चित करके राजा जनमेजय हस्तिनापुर आकर जान्हिवीतटपरस्थित परम सम्पन्न महान् आत्मा ऋषि वैशम्पायन के समीप जाकर कर्म से प्ररित हो चिन्ता से व्याकुल लोचन वाला कुरुवंश का पश्चिम राजा जनमेजय पश्चात्ताप से पीड़ित हो व्यास शिष्य के समीप जाकर यह प्रश्न पूछने लगा ॥२॥३॥४॥५॥ जनमेजय ने कहा— हे भगवान्! चिन्तावालेको तीव्र कर्मपाक फल होता है। जिसमें कर्मपाक फल मनुष्य भोगते हैं, वह मैं जानना चाहताहूँ कि यम सदन कैसा है उसका प्रमाण, तथा आकार क्या है, और वहां जाकर मनुष्य उसे कैसा देखते हैं।६।७। हे विप्र! प्रेतराज के सदन में किस प्रकार के उपाय से नहीं जाया जाता है, सर्वलोक शाशक धीरधर्मराज के समीप कैसे कौन नहीं जाते हैं, वह बतायिये ॥८॥ सूत ने कहा एवं प्रकार राजाके पूछने पर द्विजोत्तम वैशम्पायन राजा जनमेजय से मधुर वाक्य बोलने लगा।९। वैशम्पायन ने कहा हे राजन्! एक परम सुन्दर पुरानी कथा सुनिये वह नित्य धर्म, यश तथा कीर्ति को बढ़ाने वाली है ॥१०॥ पवित्र सर्वपाप प्रवृत्ति में शुभ कारिणी इतिहास पुराण की विदुषां प्रिय कथा सुनिये

११। हे राजन् ! प्रथम कोई परम धार्मिक ऋषि था, उसका उद्दालक नाम था। वह सर्व वेदांग तत्व को जानता था।१२। उसका सर्व वेदांग तत्ववेत्ता नाचिकेत नाम का पुत्र योग निष्ठा वाला हो गया। तब उद्दालक ने अपने परम धार्मिक पुत्र के ऊपर रुष्ट होकर शाप दिया कि दुर्मते ! मेरे क्रोध से शीघ्र यम सदन में जाकर यमराज को देख १३।१४। इस प्रकार शाप को ग्रहण कर महातेजा परम धार्मिक नाचिकेत मूहूर्तमात्र चिन्ताकर के योग ग्रहण कर क्षण भर में अन्तर्धान होकर विनय पूर्वक भावयुक्त हो पिता से कहने लगा कि हे तात! आपका वचन कभी झूठा न होवे। मैं धर्मराज के रमणीय नगर को जाता हूँ।१५। ।१६।१७। और पुनः अवश्य यहां वापिस आऊँगा।१८। उद्दालक ने कहा तू मेरा इकलौता पुत्र है। अन्य कोई मेरा वन्धु नहीं है, हे पुत्रक! मिथ्याभिशंसी को अधर्म, अनृत तथा अकीर्ति होवे हे तात! तू यथेष्ट उद्धार करेगा। रोपसे निर्दय मृषावादी कुलपांसन मुझसे नहीं भाषण करना चाहिये जोकि मैंने मिथ्या शाप प्रयोग किया है। धर्मसमाचार विधान से तुम को मैंने शाप दिया है।१६।२०।२१। हे पुत्र ! मैं सद्वादी नहीं हूँ। धर्म दूषित को क्षमा नहीं करता हूं। हे नित्य विधानुपालक पुत्र ! आप ही शान्ति कीजिये।२२। आप धर्मज्ञ, यशस्वी, क्षान्त दान्त, जितेन्द्रिय, शुश्रूषु, अनहम्वादी हैं आप उद्धार करने को समर्थ हैं॥२३॥ हे पुत्र ! मैंने आपकी प्रार्थना करली है आप वहां न जायिये ।२४। यदि यदृच्छा से यमराज वहां आजाय तो वह क्रोध से आपको कभी नहीं छोड़ेगा।२५। कुल सेतु नाशक मुझे नष्ट देखिये मुझ पाप कर्त्ता नराधम को सर्व लोक धिक्कार दे रहा है नरक की पुंद संज्ञा है दुःख से नरक कहते हैं पुदित्राण पुत्र से होता है अतः पुत्र नाम होता है हवन किया दान दिया तप किया पितरों को दिया यह सब अपुत्र को निष्फल होते हैं।२५।२६।२७।२८। सेवा करने वाला शूद्र होता है कृषिजीवी वैश्य होता है सत्य गोप्ता राजन्य होते हैं। तथा स्वकर्म कर्ता ब्राह्मण होता है। घोर विपुल तप करके श्रेष्ठ दान देकर अपुत्र वाला मनुष्य स्वर्ग नहीं जाता है। यह मैंने सुना है॥२६।३०॥

पुत्र से तथा पौत्र से पितामह जन्मग्रहण करता है अर्थात् पुत्र के पुत्र से पितामह प्रसन्न होता है, और पुत्र के प्रपौत्र से प्रपितामह प्रसन्न होता है ॥३१॥ हे पुत्र तू मेरे वंश को बढ़ाने वाला है अतः मैं तुझे नहीं छोड़ता हूँ। मेरी प्रार्थना करने पर तू वहां जाने के योग्य नहीं है॥३२॥ वैशम्पायन ने कहा एवं प्रकार विलाप करते हुये पिता से परम धार्मिक पुत्र कहने लगा ॥३३॥ पुत्र ने कहा-आप विषाद न कीजिये। आप पुनः मुझ को यहां आया देखेंगे। मैं सर्वलोक नमस्कृत देव धर्म राज को देखकर पुनः यहां वापिस आऊँगा मुझे मृत्यु से भय नहीं है। हे तात! आपकी अनुकम्पासे वह मेरी पूजा करेगा।३४।३५। हे महाभाग! सत्य में स्थित हो जाइये, और सत्य का पालन कीजिये। समुद्र की नौका के समान सत्य स्वर्ग की सीढ़ि है।३६। सत्य से सूर्य तपता है सत्य से वायु, चलता है, सत्य से अग्नि जलती है और सत्य ही से पृथ्वी स्थित है।३७॥ समुद्र सत्य से अपनी मर्यादा नहीं छोड़ता है और सत्य से प्रयुक्त मंत्र सर्वलोक का हित करता है, सुपूजित मंत्र से पवित्र यज्ञ भी सत्य ही से है, सत्य से वेद गान करते हैं सब लोक सत्य ही में स्थित हैं सामवेद का गान करता है सब कुछ सत्य ही में स्थित है। स्वर्ग धर्म आदि सब सत्य ही है, सत्य के अलावा कुछ नहीं है ॥३८॥३९॥४०॥ हे तात! मैंने यही सुना है कि सत्य से सब कुछ मिलता है सत्य का अतिक्रमण करके कुछ भी उत्तम वस्तु नहीं प्राप्त होती।४१। सत्य स्थित देवदेव रुद्र ने प्रथम वेद गर्भ परित्यक्त किया है उसीसे सुमन्त्रित होकर ब्रह्मा दीक्षा धारण करता है तथा और्व ऋषि ने सत्य से ही वडवा मुख में अग्निफेंकी है। हे तात! पहिले पराक्रमवाले सम्वर्त ने सत्य से ही देवताओं की भलाई के लिये सदैवत् सबलोक धारण किये हैं ॥४२॥४३॥४४॥ सत्य का पालन कर राजा बलि बन्धनयुक्त होकर पाताल में निवास करता है। महागिरि शतशृङ्ग अपने शिखरों से बढ़ता ही रहता है बढ़ता हुआ विन्ध्याचल भी सत्य पालन द्वारा नहीं बढ़ता है यह सब चराचर जगत् सत्य से ही लक्ष्मी वाला है।४५।४६। गृह धर्म वानप्रस्थधर्म श्रुतियों की गति तथा अन्य भी जो कोई व्रत वालों का धर्म है और हजारों

अश्वमेधों का जो पुण्य है यह सब तथा सत्य तखड़ी पर तोले गये तो अधिक सत्य धर्मका फल हुआ।४७ ४८। सत्य से धर्म की रक्षा होती है और रक्षा करने वाले की धर्म रक्षा करता है। अतः सत्य पालन कीजिये। आत्मा की रक्षा आत्मा से कीजिये।४६। एवँ प्रकार कह अपने हृष्टपुष्ट देह से नाचिकेत तप से योग युक्त हो संयम कर आत्मा को जीत सत्य वाणी तथा अनसूयक वह महातेजा ऋषिपुत्र नाचिकेत यमराज के परम स्थान को प्राप्त हुआ।५०।५१। इति श्री वराहपुराणे प्रागिति हासे संसार चक्रे नाचिकेत प्रयाणं नाम काशीराम शर्मा कृत भाषाटीकायां त्रिनवत्यधिक शततमोऽध्यायः।१६३।

अथः एक सौ चौरानवेवाँ अध्यायः ॥

दोहा—इकसौ चौरानवे अब, नचिकेत मुनि दुलार।
यमपुरी से आया घर, देखि यम घर करार॥

॥अथ नचिकेत सो आगमन वर्णनम्॥ वैशम्पायन ने कहा वह ऋषि पुत्र नाचिकेत यमराज के परम स्थान में गया यमराज ने यथा न्याय उसकी पूजा करके उसको देख कर ही छोड़ दिया।१। तदनन्तर यमसदन से वापिस आये पुत्रको देखकर तपोनिधि उद्दालक प्रसन्न मनहो अपने पुत्र को दोनों हाथों से आलिंगन कर उसका शिर सूँघकर हृष्ट के समान पृथ्वी आकाश को नादित करके संहृष्ट मन से प्रसन्न होकर उन तपोधनों को कहने लगा कि दिव्य तेजवाले मेरे पुत्र का प्रभाव देखिये जोकि यमराज के समीप जाकर पुनः वापिस आ गया है।२।३।४। पितृ स्नेहानुभाव से तथा गुरु की सेवा से तथा दैव के कारण यमराज के समीप जाने पर भी मैंने यह अपना पुत्र जीताही देखा है।५।संसार में मेरे समान कोई भाग्यवान् पुरुष नहीं है यह मेरा पुत्र मृत्युके मुखमें जाकर भी वापिस आगया है।५ ६। हे पुत्र! क्या यमालय में तू मराबांधा तो नहीं गया, हे पुत्रक! तेरा वह मार्ग कल्याण रूप ही तो रहा होगा यमालय में तुझे कोई घोर व्याधि तो नहीं हुई तूने वहां क्या अपूर्व दृश्य देखा क्या यमराज तेरे ऊपर प्रसन्न रहा।७।८। क्या आपने प्रेताधिपति यमराज को

लोलुप हैं दूसरे की भार्या से गमन करने वाले हैं जो कन्या को दूषित करने वाले हैं जो पापी है जो मनुष्य वेद के दूषक हैं शूद्रों के याजक हैं तथा जो हाहाभूत द्विजाति हैं जो नर अयाज्य याजक हैं जो मनुष्य कुष्टरोग वाले हैं जो शराब पीने वाले, ब्रह्महत्या वाले हैं तथा जो द्विज वीर नाशक हैं, तथा जो मनुष्य शाधुपिक हैं जो कुटिल हैं ।२।३।४।५।६। जो मातृत्यागी हैं जो पितृ त्यागी हैं तथा जो साध्वी अपनी स्त्री का त्याग करते हैं जो गुरु द्वेषी हैं जो दुराचारी हैं जो अव्यक्त भाषण करने वाले दूत हैं ।७। जो गृहक्षेत्र आदि हरण करने वाले हैं जो सेतुबन्ध को नष्ट करने वाले हैं जोअपुत्र हैं जो अभार्य हैं जो श्रद्धालु नहीं हैं, तथा जो अपवित्र हैं निर्दय हैं पापी हैं हिंसक हैं व्रतभंग करने वाले हैं मदिरा बेचने वाले सर्व वस्तु बेचने वाले जो स्त्री से पराजित याने आधीन हैं ॥८॥९। जो झूठ बोलने वाले हैं जो वेद से आजीविका करने वाले ब्राह्मण हैं, तथा नक्षत्री हैं तथा जो ब्राह्मण चाण्डालाध्यापक हैं । १०॥ जो सर्व मैथुन कर्ता हैं जो अगम्यागमन करने वाले हैं तथा जो मनुष्य मायिका रतिका और तुलाधारा हैं जो सर्वपाप सुसंग हैं जो चिन्तक हैं जो अति बैर करने वाले हैं जो स्वामीके लिये नहीं मारता,जो युद्ध पराङ्मुख हैं जो दूसरे का धन चोरने वाले हैं जो राजा को मारने वाले हैं जोअशक्त हैं पापघोप हैं तथा जो अग्निजीवी हैं जो सेवा से मुक्त हैं जो लिङ्गि हैं पापकर्मी हैं जो पात्रकारी हैं चक्री हैं तथा अधर्मी हैं देव मन्दिर यज्ञ तथा तीर्थों को जोबेचने वाले हैं जो व्रत के द्वेषी हैं जो झूठ बोलने वाले हैं ।११।१२।१३।१४।१५। तथाजो मनुष्य झूठे ही नखबाल आदि धारण करते हैं जो कूटधर्मी हैं कुटिल स्वभाव वाले हैं कूट शासन करने वाले हैं जो अज्ञान से व्रत धारण नहीं करते हैं जो आश्रम से बहिष्कृत हैं जो विपर्कीर्ण प्रतिग्राही हैं जो तीर्थ नारक हैं ॥१६।१७॥ जो झगड़ा करने वाले हैं जो तर्कणा करते हैं जो निष्ठुर हैं ये पूर्वोक्त सब तथा और भी कितने ही पापी हजारों स्त्री पुरुष जहां जाते हैं वह सुनिये और इन सब के यमालय में जाकर जो हालात होते हैं वह

सुनिये ॥१८॥१६॥ वैशम्पायन ने कहा-इस प्रकार उसके वचन सुनकर सब ऋषि विस्मय युक्त हो पूछने लगे ऋषियों ने कहा हे जानने वालों में श्रेष्ठ नाचिकेत ! आपने वहां जो कुछ देखा है वह सब सुनाइये जिस प्रकार कि वह काल है जिससे कि सबको वह देख प्रेरित करता रहता है वह सुनाइये जो अल्पचेतन पुरुष यहां कर्म करके वह उस समय उसको ब्रह्मलोक में भी रोकता है तपोधना ! उस यमराज के देश में कल्पान्त तक पकते जलते हुये शरीर का नाश नहीं होता है जिस जिसके जो जो कर्म हैं उनको वारवार भोगता हुआ मनुष्य वार वार उन कर्मोंद्वारा अवश्य उसके समीप जाता है त्रास से वहां कोई द्विज नहीं जासकता है ॥२०॥२१॥२२॥२३॥२४॥२५॥ जो मनुष्य दान से नियम से वहां नहीं जाते हैं उन्हें भी सुनाइये वैतरणी नदी किस प्रकार की है किस प्रकार के जलमे यह नदी बहती है रौरव नाम का नरक कैसा है, कूटशाल्मलि किस प्रकार है उस यमराज के दूत कैसे हैं उनका वल पराक्रमक्या है वे दूत क्या क्या करते रहते हैं पूर्व तेज से छादित जन्तु चेतना को नहीं प्राप्त करता है ॥२६॥२७॥२८॥ जन्तु उन अपने किये दोषों से किञ्चन्मात्र भी धैर्य नहीं प्राप्त करता है सत्य दोष को न जानते हुये मोह को प्राप्त होते हैं बोधव्य को नहीं जानते हैं गुणोंके गुणोत्तर नहीं जानते हैं तथा हाहाकार करते चिन्तायुक्त हो पर से परे को न जानते हुये किस की माया से मोहित होते हैं और किसकी माया से रमते रहते हैं वहां बहुत सारे पाप करके दुःख भोगते हैं हे वत्स ! आप प्रत्यक्ष दर्शि हैं अतः यह सब समझाकर कहिये ।।२६॥३०॥३१॥३२॥ इति श्रीवराह पुराणे संसार चक्रे यमलोकस्य पापि वर्णन नाम काशीराम शर्माकृत भाषाटीकायां पञ्चनवत्यधिक शततमोऽध्यायः ॥१६५॥

अथः एक सौ छियानवे वाँ अध्यायः ॥

दोहा—इकसौ छियानवे किया, नाचिकेत हु सयान ।
धर्मराजपुरी वर्णन, विविध प्रकार बयान ॥

लोलुप हैं दूसरे की भार्या से गमन करने वाले हैं जो कन्या को दूषित करने वाले हैं जो पापी हैं जो मनुष्य वेद के दूषक हैं शूद्रों के याजक हैं तथा जो हाहाभूत द्विजाति हैं जो नर अयाज्य याजक हैं जो मनुष्य कुष्टरोग वाले हैं जो शराब पीने वाले, ब्रह्महत्या वाले हैं तथा जो द्विज वीर नाशक हैं, तथा जो मनुष्य वार्धुषिक हैं जो कुटिल हैं ।२।३।४।५।६। जो मातृत्यागी हैं जो पितृ त्यागी हैं तथा जो साध्वी अपनी स्त्री का त्याग करते हैं जो गुरु द्वेषी हैं जो दुराचारी हैं जो अव्यक्त आपण करने वाले दूत हैं ।७। जो गृहक्षेत्र आदि हरण करने वाले हैं जो सेतुवन्ध को नष्ट करने वाले हैं जोअपुत्र हैं जो अभार्य हैं जो श्रद्धालु नहीं हैं, तथा जो अपवित्र हैं निर्दय हैं पापी हैं हिंसक हैं व्रतभंग करने वाले हैं मदिरा वेचने वाले सर्व वस्तु वेचने वाले जो स्त्री से पराजित याने आधीन हैं ॥८॥९॥ जो झूठ वोलने वाले हैं जो वेद से आजीविका करने वाले ब्राह्मण हैं, तथा नक्षत्री हैं तथा जो ब्राह्मण चाण्डालाध्यापक हैं । १०॥ जो सर्व मैथुन कर्ता हैं जो अगम्यागमन करने वाले हैं तथा जो मनुष्य मायिका रतिका और तुलाधारा हैं जो सर्वपाप सुसग हैं जो चिन्तक हैं जो अति वैर करने वाले हैं जो स्वामीके लिये नहीं मारता,जो युद्ध पराङ्मुख हैं जो दूसरे का धन चोरने वाले हैं जो राजा को मारने वाले हैं जोअशक्त हैं पापद्योप हैं तथा जो अग्निजीवी हैं जो सेवा से मुक्त हैं जो लिङ्गि हैं पापकर्मी हैं जो पात्रकारी हैं चक्री हैं तथा अधर्मी हैं देव मन्दिर यज्ञ तथा तीर्थों को जोवेचने वाले हैं जो व्रत के द्वेपी हैं जो झूठ बोलने वाले हैं ।११।१२।१३।१४।१५। तथाजो मनुष्य झूठे ही नखवाल आदि धारण करते हैं जो कूटधर्मी हैं कुटिल स्वभाव वाले हैं कूट शासन करने वालेहैं जो अज्ञान से व्रत धारण नहीं करते हैं जो आश्रम से वहिष्कृत हैं जो विप्रकीर्ण प्रतिग्राही हैं जो तीर्थ नारक हैं ॥१६।१७॥ जो झगड़ा करने वाले हैं जो तर्कणा करते हैं जो निष्ठुर हैं ये पूर्वोक्त सब तथा और भी कितने ही पापी हजारों स्त्री पुरुष जहां जाते हैं वह सुनिये और इन सब के यमालय में जाकर जो हालात होते हैं वह

सुनिये ॥१८॥१९॥ वैशम्पायन ने कहा-इस प्रकार उसके वचन सुनकर सब ऋषि विस्मय युक्त हो पूछने लगे ऋषियों ने कहा हे जानने वालों में श्रेष्ठ नाचिकेत ! आपने वहां जो कुछ देखा है वह सब सुनाइये जिस प्रकार कि वह काल है जिससे कि सबको वह देख प्रेरित करता रहता है वह सुनाइये जो अल्पचेतन पुरुष यहां कर्म करके वह उस समय उसको ब्रह्मलोक में भी रोकता है तपोधना ! उस यमराज के देश में कल्पान्त तक पकते जलते हुये शरीर का नाश नहीं होता है जिस जिसके जो जो कर्म हैं उनको वारवार भोगता हुआ मनुष्य वार वार उन कर्मोंद्वारा अवश्य उसके समीप जाता है त्रास से वहां कोई द्विज नहीं जासक्ता है ॥२०॥२१॥२२॥२३॥२४॥२५॥ जो मनुष्य दान से नियम से वहां नहीं जाते हैं उन्हें भी सुनाइये वैतरणी नदी किस प्रकार की है किस प्रकार के जलसे यह नदी बहती है रौरव नाम का नरक कैसा है, कूटशाल्मलि किस प्रकार है उस यमराज के दूत कैसे हैं उनका वल पराक्रमक्या है वे दूत क्या क्या करते रहते हैं पूर्व तेज से छादित जन्तु चेतना को नहीं प्राप्त करता है ॥२६॥२७॥२८॥ जन्तु उन अपने किये दोषों से किञ्चन्मात्र भी धैर्य नहीं प्राप्त करता है सत्य दोष को न जानते हुये मोह को प्राप्त होते हैं वोधव्य को नहीं जानते हैं गुणों के गुणोत्तर नहीं जानते हैं तथा हाहाकार करते चिन्तायुक्त हो पर से परे को न जानते हुये किस की माया से मोहित होते हैं और किसकी माया से रमते रहते हैं वहां बहुत सारे पाप करके दुःख भोगते हैं हे वत्स ! आप प्रत्यक्ष दर्शी हैं अतः यह सब समझाकर कहिये ॥२९॥३०॥३१॥३२॥ इति श्रीवराह पुराणे संसार चक्रे यमलोकस्थ पापि वर्णन नाम काशीराम शर्माकृत भाषाटीकायां पञ्चनवत्यधिक शततमोऽध्यायः ॥१९५॥

अथः एक सौ छियानवे वाँ अध्यायः ॥

दोहा—इकसौ छियानवे किया, नाचिकेत हु सयान ।
धर्मराजपुरी वर्णन, विविध प्रकार बयान ॥

॥अथ धर्मराज पुर वर्णनम् ॥ वैशम्पायन ने कहा भावितात्मा उन ऋषियों के वचन सुनकर नाचिकेत सब सुनाने लगा ॥१॥ नाचिकेत ने कहा हे श्रेष्ठ ब्राह्मणो ! मेरे वचन सुनिये हजार योजन विस्तार और दुगुना आयत तथा दुगुना परिवेष वाला उस यमराज का नगर है वह नगर सुन्दर सुवर्ण से रचे दिव्य भवनों से युक्त है ॥२॥३॥ उसमें बहुत सारे हर्म्यप्रासाद तथा महाट्टालिकायें हैं, नगर की वाहिरी दीवार सुवर्ण से रची गयी बड़ी उन्नत हैं ।४। कैलाश पर्वतके ऊँचे शिखरों के समान बड़े ऊँचे महलों से वह नगर शोभायमान है, उसे नगर में निर्मल जल वाली नदियां हैं ।५। तथा मनोहर बावड़ी और सरोवर हैं, तड़ाग हैं कूप हैं. वृत्त षण्ड हैं, वह नगर नरनारियों से पूर्ण है हाथी घोड़ों से व्याप्त है, नाना देश के नाना जाति वाले जीवों से वह नगर परिपूर्ण है, यमराज से वहां कोई बन्धन में पड़े हैं, कोई द्वन्द स्थित हैं । कोई युद्ध करते रहते हैं । कोई हंसता कोई गान करता रहता है । कोई दुःख से दुःखित कोई क्रीड़ा करता कोई खाता कोई यथाकर्म शयन करता कोई नाचता कोई ठहरता कोई बन्धन में स्थित रहता है एवं सैकड़ों हजारों उस यमराज के नगर में रहते हैं ।६।७।८।९।१० हे ब्राह्मणो ! मैंने उस यमराज के नगर में इस प्रकार अनेक अपने कर्मों को भोगते हुये जन्तु देखे हैं ।११। मेरे अङ्गलथपथ हो रहे हैं, मेरा मन विह्वलित हो रहा है, उस फल का चिन्तन करते मुझे दिव्य भाव दीख रहे हैं ।१२। तथापि जो कुछ देखा है, जो कुछ सुना है वह कहता हूं वहां एक नदियों में श्रेष्ठ पुष्पोदका नामक नदी है, वह नदी दीखती और नहीं भी दीखती है, वह नाना वृक्षों से शोभायमान है उस नदी में जाने को सुवर्ण की सीढ़ियाँ लगी हैं और उस नदी का रेत दिव्य काञ्चनमय है, मन्द सुगन्ध शीतल जलसे वह नदी पूर्ण है उसके आस पास के वन फूल फले वृक्षों से तथा नाना पक्षियों के स्वर से शोभायमान हैं ।१३।१४। ।१५। सर्वपाप नाशिनी वह नदी शोभा युक्त रहती है । उसके तट पर मैंने हजारों वृक्ष देखे हैं ।१६। उस नदी में देवता वार जलक्रीड़ा करते

हते हैं, जलक्रीड़ा करते समय मोटी मोटी जंघा वाली स्त्री साम गाने
ाले गन्धर्वों की उपमा धारण करती हैं, अर्थात् क्रीड़ा समय जल के
गने से उनकी जंघाओं से शब्द होता है ।१७। सर्प समान अङ्गन
ङ्गवाली किन्नरियां गायन करती रहती हैं और दिव्य भूषण धारण
र क्रीड़ा करने इस नदी तट पर आती हैं और क्रीड़ा करती रहती
॥१८॥ एवं प्रकार वहां जलमें तथा छतों में हजारों दिव्य नारी
ीड़ा करती रहती हैं ॥१९॥ वहां के अपर वृक्ष नित्य फूल फले रहते
। तथा पक्षियों से शब्दायमान रहते हैं और वे वृक्ष कामना पूरी
रने वाले हैं ॥२०॥ और वहां सुन्दर मेखला धारण करने वाली काम
प प्रमदाये जलमें पुरुषों को सुख पूर्वक रमण कराती रहती हैं ।२१।
अपने प्यारों के साथ क्रीड़ा करते उस नदी को शोभित करती रहती
और कोई प्रमदा मधु से विह्वल हो जल में गान करती रहती हैं।
ह दिव्यरत्नों से अलंकृत नदी जल तूरियों के शब्द तथा भूषणों के
ब्द से सुशोभित रहती है ॥२२॥२३॥ वह वैवस्वती नाम की नगरी
दियों में श्रेष्ठ है अति रमणीय है नित्य नगर के मध्य में बहती हुई
ाता पुत्र के समान नगर की रक्षा करती रहती है ॥२४॥ जलके
नुरूप है मनोहर है और दिव्य जलसे सदा पूर्ण रहती है, उसके
ट पर कुन्देन्दु वर्ण वाले मत्त हँस नित्य विचरते रहते हैं ॥२५॥ रथ
क्के समान श्रेष्ठ कमलों से जिन कमलों की कर्णिका प्रतप्त सुवर्ण के
ावाली हैं उनसे सुवर्ण सोपानयुक्त वह नदी अति रमणीय मनोज्ञ दीख
ड़ती है २६। उस नदी का मन्दसगन्ध शीतल निर्मल तथा स्वादु जल

॥अथ धर्मराज पुर वर्णनम् ॥ वैशम्पायन ने कहा भावितात्मा उन ऋषियों के वचन सुनकर नाचिकेत सब सुनाने लगा ॥१॥ नाचिकेत ने कहा हे श्रेष्ठ ब्राह्मणो ! मेरे वचन सुनिये हजार योजन विस्तार और दुगुना आयत तथा दुगुना परिवेष वाला उस यमराज का नगर है वह नगर सुन्दर सुवर्ण से रचे दिव्य भवनों से युक्त है ॥२॥३॥ उसमें बहुत सारे हर्म्यप्रासाद तथा महाट्टालिकायें हैं, नगर की बाहिरी दीवार सुवर्ण से रची गयी बड़ी उन्नत है ।४। कैलाश पर्वतके ऊँचे शिखरों के समान बड़े ऊँचे महलों मे वह नगर शोभायमान है, उस नगर में निर्मल जल वाली नदियां हैं ।५। तथा मनोहर बावड़ी और सरोवर हैं, तड़ाग हैं कूप हैं, वृक्ष षण्ड हैं, वह नगर नरनारियों से पूर्ण है हाथी घोड़ों से व्याप्त है, नाना देश के नाना जाति वाले जीवों से वह नगर परिपूर्ण है, यमराज से वहां कोई बन्धन में पड़े हैं, कोई द्वन्द स्थित है । कोई युद्ध करते रहते हैं । कोई हंसता कोई गान करता रहता है । कोई दुःख से दुःखित कोई क्रीड़ा करता कोई खाता कोई यथाकर्म शयन करता कोई नाचता कोई ठहरता कोई बन्धन में स्थित रहता है एवं सैकड़ों हजारों उस यमराज के नगर में रहते हैं ।६।७।८।९।१० हे ब्राह्मणो ! मैंने उस यमराज के नगर में इस प्रकार अनेक अपने कर्मो को भोगते हुये जन्तु देखे हैं ।११। मेरे अङ्गलथपथ हो रहे हैं, मेरा मन विह्वलित हो रहा है, उस फल का चिन्तन करते मुझे दिव्य भाव दीख रहे हैं ।१२। तथापि जो कुछ देखा है, जो कुछ सुना है वह कहता हूं वहां एक नदियों में श्रेष्ठ पुष्पोदका नामक नदी है, वह नदी दीखती और नहीं भी दीखती है, वह नाना वृक्षों से शोभायमान है उस नदी में जाने को सुवर्ण की सीढ़ियाँ लगी हैं और उस नदी का रेत दिव्य काञ्चनमय है, मन्द सुगन्ध शीतल जलसे वह नदी पूर्ण है उसके आस पास के वन फूल फले वृक्षों से तथा नाना पक्षियों के स्वर से शोभायमान हैं ।१३।१४। ।१५। सर्वपाप नाशिनी वह नदी शोभा युक्त रहती है । उसके तट पर मैंने हजारों वृक्ष देखे हैं ।१६। उस नदी में देवता वार जलक्रीड़ा करते

रहते हैं, जलक्रीड़ा करते समय मोटी मोटी जंघा वाली स्त्री साम गाने वाले गन्धर्वों की उपमा धारण करती हैं, अर्थात् क्रीडा समय जल के लगने से उनकी जंघाओं से शब्द होता है ।१७। सर्प समान अवनन अङ्गवाली किन्नरियां गायन करती रहती हैं और दिव्य भूषण धारण कर क्रीड़ा करने इस नदी तट पर आती हैं और क्रीड़ा करती रहती हैं ॥१८। एवं प्रकार वहां जलमें तथा छतों में हजारों दिव्य नारी क्रीड़ा करती रहती हैं ॥१९॥ वहां के अपर वृक्ष नित्य फूल फले रहते हैं। तथा पक्षियों से शब्दायमान रहते हैं और वे वृक्ष कामना पूरी करने वाले हैं ॥२०॥ और वहां सुन्दर मेखला धारण करने वाली काम रूप प्रमदाये जलमें पुरुषों को सुख पूर्वक रमण कराती रहती हैं ।२१। वे अपने प्यारों के साथ क्रीड़ा करते उस नदी को शोभित करती रहती हैं और कोई प्रमदा मधु से विह्वल हो जल में गान करती रहती हैं। वह दिव्यरत्नों से अलंकृत नदी जल तूरियों के शब्द तथा भूषणों के शब्द से सुशोभित रहती है ॥२२॥२३॥ वह वैवस्वती नाम की नगरी नदियों में श्रेष्ठ है अति रमणीय है नित्य नगर के मध्य में बहती हुई माता पुत्र के समान नगर की रक्षा करती रहती है ॥२४॥ जलके अनुरूप हैं मनोहर है और दिव्य जलसे सदा पूर्ण रहती है, उसके तट पर कुन्देन्दु वर्ण वाले मत्त हँस नित्य विचरते रहते हैं ॥२५॥ रथ चक्रके समान श्रेष्ठ कमलों से जिन कमलों की कर्णिका प्रतप्त सुवर्ण के रंगवाली हैं उनसे सुवर्ण सोपानयुक्त वह नदी अति रमणीय मनोज्ञ दीख पड़ती है २६। उस नदी का मन्दसुगन्ध शीतल निर्मल तथा स्वादु जल अमृत समान है उसके समीप वनखण्ड सुन्दर फल फूलों से युक्त वृक्षों से सुशोभित रहते हैं ।२७। उस नदी में सुरूप मनोज्ञ रूपवाली स्त्रियां मद विह्वलित हो क्रीड़ा करती रहती हैं। उस नदीमें क्रीड़न ताड़न करने परभी मनुष्य विवर्णता को नहीं प्राप्त करता है ।२८। वह नदी देवता, तपो निधि मुनियों की पूजनीय है वह नदी कवियों की निर्मल अर्थ वाली कृति काव्य रचना के समान जल के भार से मनोहर दीखती है ॥२९॥

॥अथ धर्मराज पुर वर्णनम् ॥ वैशम्पायन ने कहा भावितात्मा उन ऋषियों के वचन सुनकर नाचिकेत सब सुनाने लगा ॥१॥ नाचिकेत ने कहा हे श्रेष्ठ ब्राह्मणो ! मेरे वचन सुनिये हजार योजन विस्तार और दुगुना आयत तथा दुगुना परिवेष वाला उस यमराज का नगर है वह नगर सुन्दर सुवर्ण से रचे दिव्य भवनों से युक्त है ॥२॥३॥ उसमें बहुत सारे हर्म्यप्रासाद तथा महाट्टालिकायें हैं, नगर की बाहिरी दीवार सुवर्ण से रची गयी बड़ी उन्नत है ।४। कैलाश पर्वतके ऊँचे शिखरों के समान बड़े ऊँचे महलों से वह नगर शोभायमान है, उसे नगर में निर्मल जल वाली नदियां हैं ।५। तथा मनोहर वावड़ी और सरोवर हैं, तड़ाग हैं कूप हैं. वृक्ष षण्ड हैं, वह नगर नरनारियों से पूर्ण है हाथी घोड़ों से व्याप्त है, नाना देश के नाना जाति वाले जीवों से वह नगर परिपूर्ण है, यमराज से वहां कोई बन्धन में पड़े हैं, कोई द्वन्द स्थित है । कोई युद्ध करते रहते हैं । कोई हंसता कोई गान करता रहता है । कोई दुःख से दुःखित कोई क्रीड़ा करता कोई खाता कोई यथाकर्म शयन करता कोई नाचता कोई ठहरता कोई बन्धन में स्थित रहता है एवं सैकड़ों हजारों उस यमराज के नगर में रहते हैं ।६।७।८।६।१० हे ब्राह्मणो ! मैंने उस यमराज के नगर में इस प्रकार अनेक अपने कर्मों को भोगते हुये जन्तु देखे हैं ।११। मेरे अङ्गलथपथ हो रहे हैं, मेरा मन विह्वलित हो रहा है, उस फल का चिन्तन करते मुझे दिव्य भाव दीख रहे हैं ।१२। तथापि जो कुछ देखा है, जो कुछ सुना है वह कहता हूं वहां एक नदियों में श्रेष्ठ पुष्पोदका नामक नदी है, वह नदी दीखती और नहीं भी दीखती है, वह नाना वृक्षों से शोभायमान है उस नदी में जाने को सुवर्ण की सीढ़ियाँ लगी हैं और उस नदी का रेत दिव्य काञ्चनमय है, मन्द सुगन्ध शीतल जलसे वह नदी पूर्ण है उसके आस पास के वन फूल फले वृक्षों से तथा नाना पक्षियों के स्वर से शोभायमान हैं ।१३।१४। ।१५। सर्वपाप नाशिनी वह नदी शोभा युक्त रहती है । उसके तट पर मैंने हजारों वृक्ष देखे हैं ।१६। उस नदी में देवता वार जलक्रीड़ा करते

रहते हैं, जलक्रीड़ा करते समय मोटी मोटी जंघा वाली स्त्री साम गाने वाले गन्धर्वों की उपमा धारण करती हैं, अर्थात् क्रीड़ा समय जल के लगने से उनकी जंघाओं से शब्द होता है ।१७। सर्प समान अवनत अङ्गवाली किन्नरियां गायन करती रहतीं हैं और दिव्य भूषण धारण कर क्रीड़ा करने इस नदी तट पर आती हैं और क्रीड़ा करती रहती हैं ॥१८। एवं प्रकार वहां जलमें तथा छतों में हजारों दिव्य नारी क्रीड़ा करती रहती हैं ॥१९॥ वहां के अपर वृक्ष नित्य फूल फले रहते हैं। तथा पक्षियों से शब्दायमान रहते हैं और वे वृक्ष कामना पूरी करने वाले हैं ॥२०॥ और वहां सुन्दर मेखला धारण करने वाली काम रूप प्रमदाये जलमें पुरुषों को सुख पूर्वक रमण कराती रहती हैं ।२१। वे अपने प्यारों के साथ क्रीड़ा करते उस नदी को शोभित करतीं रहती हैं और कोई प्रमदा मधु से विह्वल हो जल में गान करती रहती हैं। वह दिव्यरत्नों से अलंकृत नदी जल तूरियों के शब्द तथा भूषणों के शब्द से सुशोभित रहती है ॥२२॥२३॥ वह वैवस्वती नाम की नगरी नदियों में श्रेष्ठ है अति रमणीय है नित्य नगर के मध्य में बहती हुई माता पुत्र के समान नगर की रक्षा करती रहती है ॥२४॥ जलके अनुरूप हैं मनोहर है और दिव्य जलसे सदा पूर्ण रहती है, उसके तट पर कुन्देन्दु वर्ण वाले मत्त हँस नित्य विचरते रहते हैं ॥२५॥ रथ चक्रके समान श्रेष्ठ कमलों से जिन कमलों की कर्णिका प्रतप्त सुवर्ण के रंगवाली हैं उनसे सुवर्ण सोपानयुक्त वह नदी अति रमणीय मनोज्ञ दीख पड़ती है २६।उस नदी का मन्दसुगन्ध शीतल निर्मल तथा स्वादु जल अमृत समान है उसके समीप वनषण्ड सुन्दर फल फूलों से युक्त वृक्षों से सुशोभित रहते हैं ।२७। उस नदी में सुरूप मनोज्ञ रूपवाली स्त्रियां मद विह्वलित हो क्रीड़ा करती रहती हैं। उस नदीमें क्रीड़न ताड़न करने परभी मनुष्य विवर्णता को नहीं प्राप्त करता है ।२८। वह नदी देवता, तपो निधि मुनियों की पूजनीय है वह नदी कवियों की निर्मल अर्थ वाली कृति काव्य रचना के समान जल के भार से मनोहर दीखती है ॥२९॥

बहुत मनुष्यों ने जल दिया है, और उसकी स्वरूप प्रतिमा निष्ठा है, इस नगर की प्रासाद पंक्ति अग्नि के समान प्रकाशित है उस नदी के तट पर बहु भक्ति से रमणीय नारियां बाजे ताल आदि देकर बजाकर नित्य गान करती रहती हैं, तथा उस नदी के समीपस्थ वन षण्डों में वाटिकाओं में मनोहर कन्याकुल का मृदुभाषण होता रहता है ॥३०॥ ॥३१॥ मनोज्ञरूप वाली अपने गान स्वर से स्वर्गस्थ देवताओं की स्पर्धा करती रहती हैं। अथवा संहर्ष करती हैं। सुतन्त्रियुक्त मृदङ्गका नाद होता है, सुवंश वाली वंसरी के स्वर के साथ गीत गान होता है ॥३२॥ प्रासाद कुञ्जों में विहार करती हुई वे एवं तृप्ति को नहीं प्राप्त करती हैं अगर चन्दनादि का गन्ध सुगन्ध है। सुन्दर शीत मंद वायु बहता है॥३३॥ कहीं ऊँचे मार्गवाले प्रासाद राथों में बार बार सुगन्ध चलती रहती है, कहीं पर जन समूह खेल करते रहते हैं। कहीं पर नर नारी गीतगान करते रहते हैं ॥३४ कहीं पर अपनी कान्ताओं के साथ क्रीड़ा करते रहते हैं। सुवर्ण वेदी सानुशोभा करके प्रमत्त नर नारियों से संकुल विमान भूत हो जल में चलते रहते हैं।३५। इसकी शोभा का वर्णन बहुत दिनों भी नहीं हो सकता है कर्म समाधि युक्त यह कथा मामूली दिनों में नहीं कही जा सकती है ।३६। इति श्री वराह पुराणे संसार चक्रे धर्मराजपुर वर्णनं नाम काशीराम शर्मा कृत भाषाटीकायां षण्णवत्यधिक शततमोऽध्यायः ॥१९६॥

अथ एक सौ सतानवे वाँ अध्यायः

दोहा—शुभ तथा अशुभ कर्म करि, मिलते न्यारे स्थान।
पापी भोगे बहुत दुःख, धर्मी पावे मान॥

नाचिकेत ने कहा दशयोजन विस्तार और उससे दूना आयत, प्राकार युक्त सैकड़ों महलों से शोभायमान यमराज का नगर है ।१। सैकड़ों प्रासादों से शोभायमान उस नगर का बाहिरी दरवाजा बड़ा ऊँचा है मानो आकाश को लिख रहा हो इतना ऊँचा है और अति

रमणीय हैं ।२। नाना प्रकार के यन्त्रों से आकीर्ण तथा ज्वाला मालाओं से युक्त वह गोपुर है धर्मदर्शियों ने देवता ऋषि तथा अन्य पुण्यायियों के लिये वह प्रवेश स्थान रचा है सारा गोपुर शरद ऋतु के मेघ समूह के समान स्वच्छ है ।३।४। उसमें पुण्य वाले मनुष्य का प्रवेश निर्माण किया है। और वहां एक सर्वदोष युक्त अग्नि तथा धाम वाला भयंकर रूप आयस का दक्षिण दरवाजा है। वह रौद्र प्रतिमयाकार है सुतप्त है तथा दुख से देखने योग्य है ।५।६। रविसुदनु यमने वहां क्रूर पापियों का प्रवेश निर्माण किया है। क्रव्यादों वा दुरात्माओं का प्रवेश निर्माण किया है ।७। तथा जो अन्द घात कारक पापी हैं, उनके लिये वह दरवाजा निर्माण किया है। और एक पश्चिम दरवाजा औदुम्बर का अवींचि वाला ऊँचा नीचा निर्माण किया है। वह चारों ओर से दुर्निरीक्ष है, और बड़े भारी वन्हिजल से युक्त होने के कारण अति भयानक है। वह पश्चिम दरवाजा भी स्वयं यमने दुष्कृतियों के प्रवेश के लिये बनाया है। उस श्रेष्ठ रमणीय नगर में वैवस्त से नियोजित दिव्य रत्नमयी परम शोभना तथा सत्य वादियों से धार्मिकों से परमसम्पन्न एक सभा है ।८।९।१०।११। वह सभा क्रोध मोह लोभ राग रहित तपस्वियों से सुशोभित रहती है। वह सभा धर्म वालों की है, वही सभा पापवालों की है। तथा धर्म युक्त वही सभा कर्म से सूचित शुभ अशुभ कर्मवाले सर्वलोक की है उस सभा में धर्मज्ञ धर्मपाठक निर्विशङ्क तथा निरापेक्ष हो शास्त्र निर्दिष्ट कर्म से धर्म तथा अधर्म को जान कर सर्व लोक हित के लिये उचित कार्य सोचते रहते हैं यानें दण्डवाले को दंड पुण्य वाले को स्वर्ग यथा शास्त्र, यथा दृष्ट, यथा काल को निवेदन करने वाले सबके सब सुयन्त्रित होकर सब कुछ सोचते रहते हैं ।१२।१३।१४।१५। मनु तथा प्रजापति महामुनि पाराशर्य अत्रि औदालकि तथा वीर्यवान् आपस्तम्ब बृहस्पति शुक्र, गौतम शङ्ख लिखित अङ्गिरा, भृगु, पुलस्त्य पुलह तथा अन्य भी जितने धर्म पाठक हैं। यमराज धर्मराज के सहित सारे कर्म की प्रतिक्रिया सोचते

रहते हैं, और सब के सब जो दिव्य हैं तथा मानुप हैं, सब ही काम प्रचुर हैं ॥ १६॥१७।१८॥१६॥ वह धर्मराज कुण्डल, वाजूवन्द तथा महाद्युति वाले ब्रह्मदत्त मुकट से शोभायमान रहता है ॥२०॥ सब तेजस्वियों के एकस्थ तेज के समान वह यमराज तेजसे, वाणीसे दुर्निरीक्ष्य है, महाबलवान हैं ॥२१॥ उसके समीप में महादिव्य ब्रह्मवादी वेदवेदाङ्गपारग अपने ही शरीर से देदीप्यमान ऋपिगण स्थित रहता है ॥२२॥ वें ऋपिगण वेदार्थ के विचार को जानने वाले हैं, सत्यधर्म वाले हैं छन्द, शिक्षा आदि के विकल्प को जानने वाले हैं, सर्वशास्त्र विकल्प ज्ञाता हैं ॥२३॥ निरुक्तमतिवाद वाले हैं। सामगान्धर्व से शोभित हैं, विविध धातुवाद वालें हैं, नैरुक्त तथा नैगमवाद वाले हैं ॥२४॥ उस धर्मराज के भवन में मैंने ऋपि तथा पितरों को शुभ कथा करते देखा है। २५॥ उसके समीप में कृष्णवर्ण महाहनु वाला उत्तम प्रकृताकार ऊर्द्ध रोम वाला निराकृति तथा बायें हाथ में श्रेष्ठ दण्ड धारण किया विकृतास्य वाला महादँष्ट्र वाला भयानक पुरुप मैंने देखा है।२६। ।२७। और उसे धर्मराज शिक्षा के लिये आज्ञा देता रहता है और वह काल सनातन धर्मराज के वचन सुनकर नित्य हर समय जी हजूर कर तय्यार रहता है ॥२८॥ तथा अन्य भी बहुत सारे वहां शासन करने के लिये तय्यार रहते हैं और मैंने वहां एक सर्व तेजोमयी देखी है, यमराज दिव्यगन्धानुलेपन से उसकी पूजा करता रहता है वह सर्व लोक की संहारिणी है, तथा गतियों की महा गति है। २६॥३०॥ इससे परे कोई साधन नहीं करना चाहिये, यह विद्वानों ने कहा है, उसके सामनें असुर, ऋपिगण तपोधन, सुर, असुर और योगिजन डरते रहते हैं, वह सर्व साधनी मोहिनी सब की पूज्या तथा नमस्कार करने योग्य है ॥३१॥३२॥ उसके अंग से क्लेश सम्भव व्याधि उत्पन्न हुयी हैं तथा अपरा कालनिर्मित व्याधियां उत्पन्न हुयी हैं वे पौरुप युक्त हैं, सर्वलोक का न्याय करने में तत्पर हैं, प्रकृति से दुर्विनीत सुदारुण महाक्रोध है, और जरामरण रहित महातेजा महासत्व दिव्य गन्धानुलेपन दुराधर्ष मृत्यु वहां स्थित रहती है, तथा वहां कालज्ञ काल

सम्मत सर्व जीवों का प्रबोधन करने वाले गायक हासक नित्य मृत्यु के साथ रहते हैं ।३३।३४।३५।३६। और कोई दिव्य आभरणों की शोभा से शोभायमान सवाल व्यजनों से युक्त बड़े पराक्रम शाली मैंने वहां देखे हैं ॥३७॥ तथा कोई बड़े लम्बे चोड़े आसनों पर बैठकर पूजा पाते रहते हैं, यह मैंने वहां देखा है ॥३८॥ वहां अनेक ज्वर हैं तथा वेदना हैं, नरनारी स्वरूप वाले अनेक ज्वर वेदना से मैंने वहां देखे हैं ।३६। और कामक्रोध विचार युक्त नाना रूप वाली तीव्ररोप से भयानक घोरस्वरूप वाली तथा जीव भक्षण करने वाली स्त्रियां वहां हैं ॥४०॥ धर्मराज के समीप उनसब स्त्रियों का हलहला शब्द पृथिवी को फाड़ता रहता है ४१ वहां-कूष्माण्ड यातुधान राक्षस पिशाच एक पैर वाले बहुत पैर वाले दो पैर वाले तीन पैर वाले एक हाथ दोहाथ तीन हाथ तथा बहुत हाथ वाले तथा कोई शङ्कु कर्ण कोई महाकर्ण कोई हस्ति कर्ण वाले हैं और कोई पुरुप वहां सर्व शोभा युक्त हैं कोई केयूर मुकुट आदि से चित्र विचित्र अगवाले हैं ॥४२॥४३॥४४॥ कोई माला पहिने हैं कोई नूपुर कड़े पहिने हैं कोई सर्व आभरणों से भूपित हैं कोई कुल्हाडी हाथ में लिये हैं कोई कुदाल कोई चक्र कोई शूल हाथ में लिये खड़े हैं कोई शक्ति तोमरादि कोई धनुप कोई तलवार कोई मुगदर लिये खड़े हैं । तथा कोई अनेकशः दधि गन्ध ले सुसज्जित हैं कोई विचित्र भक्ष लिये खड़े हैं कोई वज्र लिये खड़े हैं ॥४५॥४६॥ ॥४७॥ कोई धूप ग्रहणकर कोई विविध वस्त्र ग्रहणकर शुभ दर्शन वाले हैं कोई पालकी में बैठे हैं कोई अनेक प्रकार के यानों में बैठे हैं । तथा कोई हाथी कोई घोड़े कोई हंसों पर सवार हैं कोई शरभों पर सवार हैं कोई ऋपभों पर कोई मयूर कोई सारस कोई चकोर पर सवार हैं तथा कोई इनही जीवों के स्वरूप वाले हैं इस प्रकार तथान्य प्रकार के अनेक भयानक सत्व मैंने वहां देखे हैं ॥४८॥४६॥५०। तथा कोई उज्वल कोई मलिन कोई जीर्ण वस्त्र कोई नूतन वस्त्र पहिने हैं कोई सुमन हैं कोई विमन हैं कोई मूक कोई मारक कोई शतमारक हैं समार्जारी हैं, काचवर्णा हैं, कृष्णाकलि हैं धर्मदस्त यशोदस्न तथा

कोई कीर्तिहस्त वाले हैं ॥५१॥५२॥ यमराज के यहां इसप्रकार के सत्व हैं जो मनुष्य इनका पूजन करे उसका कभी पराजय नहीं होता है, आपन्न मनुष्य को इनकी पूजा करनी चाहिये, इनको नमस्कार करना चाहिये ।५३॥५४। इति श्रीवराह पुराणे संसार चक्रे कृतान्त काल मृत्यु किंकर वर्णन नाम काशीराम शर्माकृत भाषाटीकायां सप्तनवत्य-धिक शततमोऽध्यायः ।१९७॥

अथ एक सौ अठानवे वाँ अध्यायः ॥

दोहा—इकसौ अठानवे हु अब, कहें सकल समुझाय ।
संसार चक्रयातना, स्वरूप सब बताय ॥

अथ संसार चक्र यातना स्वरूप वर्णनम् ॥ वर्तमान सभाके बीच में प्रेताधिपति राजायम ने एक मुझे दर्शन दिया ॥१॥ और उसने यथातथ्य कार्य विधि से मेरी पूजा की और वेदनिर्दिष्ट कर्म से पाद्य अर्घ्य आसन आदि दिया ॥२॥ तथा हृष्ट होकर कहने लगाकि इस श्रेष्ठ आसन पर बैठिये कुश संच्छन्न दिव्य पुष्पों से उपशोभित काञ्च-नमय आसन पर विराजिये ॥३॥ उसका मुख महा रौद्रथा तथा नित्य भयानक था हे ब्राह्मणो ! उसके मुझे देखते ही वह सौम्य रूप होगया ॥४॥ और लाल लाल उसकी आंखें बार बार बातचीत करने से मेरे प्रेम से पद्मपत्र समान होगयीं ॥५॥ तदनन्तर में उसके भाव से बार बार भावित होगया और प्रहृष्ट मन हो उसका विश्वास पात्र होगया ॥६॥ शीघ्र सर्वदोष रहित मैं उसके प्रेम में जकड़गया वह भी मेरे से प्रेम करने लगा, कामद यशोद हो देवताओं ने भी मेरी पूजा की तथा उसकी पूजा की ॥७॥ तब मैंने कालवृद्धिकर स्तोत्र पढ़ा है जिससे कि परम धार्मिक महातेजा यम प्रसन्न हुआ ॥८॥ ऋषि पुत्र ने कहा आप धाता हैं आप विधाता हैं, आप श्राद्ध मे देखे जाते हैं आप पितरों के परम देव हैं हे चतुष्पाद ! आपको नमस्कार है ॥९॥ कालज्ञ हैं, कृतज्ञ हैं, सत्यवादी हैं दृढ़व्रत हैं, हे प्रेतनाथ ! हे महाभाग ! हे धर्मराज ! आपको नमस्कार करता हूँ ॥१०॥ हे प्रभो ! भूत भविष्य, वर्तमान कार्य आपही करवाते हो आप पान स्वरूप मोहन रूप तथा

संक्षेप विस्तार रूप हैं ॥११॥ हे दण्ड पाणे ! हे विरूपाक्ष ! हे धर्मराज आपके लिये नमस्कार है हे प्रभो ! आप सूर्य सदृश आकार वाले हैं सर्वजीव हरने वाले हैं ॥१२॥ दुराधर्ष ! कृष्ण वर्ण ! तैल रूप ! आपके लिये नमस्कार है हे श्रीमन् ! आप मार्तण्ड सदृश हैं मार्तण्ड सदृश कान्ति वाले हैं ॥१३॥ हव्य कव्य वह आपही हैं हे प्रभविष्णो ! आपको नमस्कार करता हूं आप पाप नाशक हैं व्रती हैं श्राद्ध हैं, महातपा हैं ॥१४। एक नेत्र बहुनेत्र वाले आप काल मृत्यु रूप को नमस्कार करता हूँ आप कहीं दण्डी, कहीं मुण्डी और कहीं दुरासद काल होते हैं ॥१५। कहीं बाल, कहीं वृद्ध, कहीं रौद्र होते हैं आपको नमस्कार है, आपसे धर्म हेतु से शासित लोक शोभा पाता रहता है ॥१६॥ हे देव ! प्रत्यक्ष दिखाई देता है कि आपके विना कुछ सिद्ध नहीं होता है आप देवों के परम देव हैं तपों के परम तप हैं ॥१७॥ जपों में परम जप्य आपके सिवाय अन्य कोई नहीं दिखाई देता है ऋषिगण क्रोधित हो जिनके कि बन्धु सुहृज्ज न मारे गये हों, और दुःखित पतिव्रता स्त्रियां तप में स्थित हैं आप इस स्थान से कभी पातन करने को समर्थ नहीं हैं ॥१८॥१६॥ अतः आप सब देवताओं में एकही धर्मधारी हे आप कृतज्ञ हैसत्यवादी हैं, तथा सब प्राणियों की भलाई करते रहते हैं ॥२०॥ वैशम्पायन ने कहा ऋषि पुत्र के मुख से एवं प्रकार का दिव्य स्तोत्र सुनकर धर्मराज उद्दालक पुत्र के ऊपर प्रसन्न हुआ ॥२१॥ यम ने कहा हे अनघ ! आपका कल्याण हो मैं आपके माधुर्य से प्रसन्न हूँ सब कहिये कि मैं आपका क्या कार्य करूं ।२२॥ हे द्विज ! आपका कल्याण हो जिसवरदान की इच्छा है, वह मांगिये । श्रेययुक्त शुभ अथवा अनामय जीवन जो कुछ इच्छा है वह कहिये ॥२३॥ ऋषिपुत्र ने कहा महाभाग ! हे प्रभो ! मैं जीवन मरण कुछ नहीं चाहता हूँ यदि आप सर्व प्राणियों पर दया करके वरदान देने वाले हैं तो देव ! मैं आपके देश को यथातथ देखना चाहता हूँ यहां जो पाप पुण्य की गति देखी जाती है हे राजन् । यदि आप वरदान देने वाले हैं तो वह सब मुझे

दिखाइये। और हे राजन्! अपने कार्य चिन्तक चित्रगुप्त को दिखाइये ।२४।२५।२६। हे सर्व लोक चिन्तक! यथा कर्म विशेषों को वह दर्शनार्थ कराता है। उसके इस प्रकार कहने पर महातेजा ने द्वारपाल को आज्ञा दी कि इसको चित्रगुप्त के समीप लेजाइये ।२७।२८। और इस विप्र को सब कुछ समझा कर आनुपूर्व से कहना उसके इस प्रकार कहने पर वह दूत शीघ्र मुझे लेजाकर चित्रगुप्त के सदन को प्राप्त कर उस दूत ने मुझे दिखाया ।२६।३०। मुझे देखकर चित्रगुप्त प्रत्युत्थान करने लगा और तत्व से विचार कर कहा कि हे मुनि शार्दूल! आप का स्वागत है यथेष्ट जाइये ।३१। चित्र गुप्त ने मुझे ऐसा कहकर अपने भृत्यों से कहा जोकि घोर भयङ्कर रूप वाले हाथ जोड़े खड़े थे।३२। चित्रगुप्त ने कहा हे आज्ञापालन करने वाले मेरे दूतो! मेरी आज्ञा से यह विप्र प्रेतावास जाना चाहता है। आप इसकी रक्षा गुप्ति कीजिये ॥३३॥३४॥ इस विप्र को दुःख से खेद न होवे तथा उष्ण शीत भूख प्यास से कोई दुःख न होवे यह मैं आज्ञा देता हूँ ॥३५॥ इस विप्र को वरदान दिया है यह गुरु चित्तानुचिन्तक है। यह सर्व भूत दयावान् है, तथा द्रव्यवान है ॥३६॥ यह ब्राह्मण इच्छानुसार धर्मराज की श्रेष्ठ नगरी को देखे, इस प्रकार कह उसने जाइये जाइये। कहा।३७। ऋषिपुत्र ने कहा-एवं चित्रगुप्त ने अपने दूतों को आज्ञा दी तब दूत मुझे सब कृत्य दिखाने लगे। शीघ्र दौड़ते ग्रहण करते तथा पापी जीवों को मार रहे थे ॥३८॥ कहीं पर किसी को बांध रहे थे कहीं पर जला रहे थे। कहीं पर चीर रहे थे, कहीं पर बार बार ताड़न कर रहे थे।३६। कहीं पर वेणु यष्टि प्रहार से मार रहे थे, तथा कहीं पर चावक से प्रहार कर रहे थे, उस प्रहार से किसी के पैर टूटते थे, किसी की छाती फटती थी, किसी की खोपड़ी फटती तथा किसी के शिर अधर मग्न हो जाते थे ४०। तब वे जीव करुण रोदन करते थे। परन्तु अपनी रक्षा करने वाले रक्षक को नहीं प्राप्त करते थे, अगाध पूर्ण अन्धकार युक्त नरक में भी ऐसा होता है, कोई उसमें पकते हैं कोई इन्धन के समान अग्नि में जलते हैं कोई तेल पाक में, कोई चार से कोई घी से, अपने २ कर्मों

द्वारा अलग अलग जलते भुनते दुःख पाते रहते हैं घोर यातना भोग ते रहते हैं ।४१।४२।४३। कोई कोलू में रख कर तिलों के समान पेले जाते हैं और उनसे बहुत सारा खून बहता है ॥४४॥ उस खून से घोर रूपा वैतरणी नदी बहती है वह वैतरणी फेन वाले जल तथा भौंरों से युक्त हो पापकर्मियों को दुस्तर है ॥४५॥ और किसी को शूली पर चढ़ा कर यम दूत पैरों से पकड़ कर घोर वैतरणी में फेंकते हैं। उस गरम रुधिर वाली फेन माला कुल नदी में उन जीवों को सर्प आदि हजारों प्राणी डसते रहते हैं ।४६ ४७। उस समय उनके वहाँ फेंकने पर उस नदी के आवर्तों से बड़ी ऊँची ऊँची हजारों लहरें उठती हैं ४८। सर्व दोष वाले पापी उसमें सूखते रहते हैं । और उसमें डुबकी लगाकर वमन करते रहते हैं, तथा अति दुःखित होने पर भी उनको अपना रक्षक नहीं प्राप्त होता है ।४९। तथा बहुत सारे दूत कितनों को लोहे के कांटे वाले शाल्मलि पर चढ़ाकर असि तथा शक्ति प्रहारों से बार बार ताड़न करते रहते हैं । उसकी घोर शाखाओं में मैंने हजारों कूष्माण्ड यातुधान भयानक लम्बमान देखे हैं और वे तीखे कांटों वाले स्कन्ध प्रदेशों को अतिक्रमण कर वेदना से पीड़ित हो शीघ्र शाखाओं पर चढ़ते हैं। वहां भी उनको घोर विशिताशन राक्षस मारते रहते हैं । और आरूढ़गात्रों को निःशङ्क तमोयुक्त हो संक्रम से शालामें वन्दर के समान खाते हैं ५०।५१।५२।५३।५४। कोई म्लेच्छ जिस प्रकार कुक्कुट को खाता है । उसी प्रकार का कट कटा शब्द मैंने उस वृक्ष में सुना है ॥५५॥ मनुष्य जिस प्रकार वन में पका हुआ आम फल खाता है । वे दुरासद उसी प्रकार का मुख करके उन सब को चूपकर अस्थि-मात्र शेष जीवों को जमीन पर फेंकते हैं तदनन्तर अति वेग से सब को चूपते रहते हैं । और पुनः आविष्ट कर्मों की इच्छा करते रहते हैं। पुनः नीचे से पापकर्मा देखते हुये बहु संख्यक दारुण पापों के होने पर अति दुःखी होते रहते हैं। और यह कहते हैं कि हे देव ! हमारी रक्षा कीजिये । हमें छोड़िये। तथा यमदूत कठोर वचन कह कर उन्हें ताड़न करते रहते हैं ॥५६॥५७॥५८॥५९॥६०॥ कोई पापण वर्षा से कोई

पांसु वर्षा से भागते हुए पहाड़ की छाया में प्रवेश करते हैं, परन्तु वहां भी जलते रहते हैं और पुनः वहाँ दूतों से मारे जाने पर पिघलते रहते हैं और घोर भयंकर भुवनोंमें दृढ़ अग्निसे पकते रहते हैं ६१।६२। और वार वार यह कहते हैं कि शीतल जलसे भरा हुआ घड़ा दीजिये दीजिये हमारे ऊपर प्रसन्न हो जाइये ।।६३।। उन जीवों के ऐसा कहने पर उनको अति उष्ण जल दिया जाता है, उस जल से जलकर वे आपस में क्रोश पूर्वक रुदन करते रहते हैं ।।६४।। वहां कोई दुःख से पीड़ित हो अलिङ्गन कर के गिरते हैं तथा कोई भूख से पीड़ित हो हाहाकार कर मूर्च्छित होते हैं ।।६५।। और सामने से सुगन्ध वाले अन्न तथा सुमिष्ठान्न के पर्वत समान ढेर के ढेर देखते रहते हैं ।।६६।। और दूध दधि आदि रसों को कृसरों को, पायस को, माधव पूर्ण मधुको, मैरेयक की सुरा को माध्वीक पान, सीधु जाती रस के दिव्य सुगन्ध शीतल पानों को गोरस के पान तथा भाजन नित्यशः तप से अर्जित पुण्य वालों को होते हैं ।।६७।।६८।।६९।। पुण्य वालों को माल्य धूप तथा नाना रसयुक्त गन्ध, और सहस्रशः मनोहर कान्ता हुआ करती हैं ।।७०।। सब भोजनों में सर्व आभूषणों से विभूषित रमणीयरमनोह स्त्रियां कुम्भमणिका ग्रहण कर कोई कुण्डहस्ता फल ग्रहण कर तथा कोई पात्र ग्रहण कर कोई फूल पात्र ग्रहण कर अदीन श्रेष्ठऔरतें सहस्रशः अन्नदान रत होकर पुण्यात्मियों को भोजन कराती रहती हैं। अनेक नूपुर पहिन मनोहर स्त्रियां रहती हैं ।।७१।।७२।।७३।। तथा महायोग्य इससमय उपस्थित कर वहां उसकी चतुर नारियां कहती रहती हैं निष्ठुरवादी दूत हंसते हुये और मारते हुये यह कहते रहते हैं किहे कृतघ्नो! हे लोभियो ! हे दूसरे की स्त्री से गमन करने वाले ।७४ ७५। हे पाप की आशा से निष्कृति करने वाले हे सर्वदान न देने वालो! हे परनिन्दा करने वालो ! हे पाप कथा करने वालो ।।७६।। हे निर्लज्जों ! लौकिक विभव के होने पर भी तुमने सुलभ अन्न पानी काष्ठ आदि का दान नहीं किया है इसीलिये आप लोग अनेक दुःखों से दुःखित हो रहे हैं ।७७।७८। यदि कर्मों का चयहो गया है तब ससारमें पकता है इस लोक से छूटकर दुर्गति

को प्राप्त होते हैं,पापकर्मी दरिद्र कुल में पैदा होते हैं, घोर पापों से अनुगत हो मानुष लोक में आकर वृत्तस्थ होने पर विशेषतः चातुर्वर्ण्य हेमों को भोगता है तदनन्तर सत्यरत शान्त दयावाले धार्मिक यहां विश्राम कर कुछ समय पश्चात् परमगति को प्राप्त करते हैं। अथवा पृथ्वी में श्रेष्ठकुल में पैदा होते हैं।७६।८०।८१।८२। तथा धार्मिक नर बहुसुन्दर नारियों वाले समृद्ध कुल में पैदा हो शान्त दान्त हो परम गति को प्राप्त करते हैं।८३। इति श्री वराह पुराणे भगवच्छास्त्रे संसारचक्र यातना स्वरूप वर्णन नाम काशीराम शर्मा भाषाटीका सप्तनवत्यधिक शततमोऽध्यायः ॥१६८॥

अथ एक सौ निनानवे वाँ अध्यायः

दोहा—इक सौ निनानवे कहैं, पुनिसब कुछ समुझाय।
संसार चक्र यातना कहैं, स्वरूप वर्णन गाय॥

अथ पुनः संसारचक्र यातना स्वरूप वर्णनम्। ऋषिपुत्र नाचिकेत ने कहा वहां सब भूमि लोहे के कांटों से व्याप्त है पुनः वहां कोई तमोयुक्त विषय होते हैं।१। और कोई छिन्न हाथ तथा छिन्न पाद शिर अधर वाले पापी उस यमलोक से शीघ्र नहीं छुटकारा पाते हैं।२। और जो धर्मयुक्त दान्त हैं वे घर के समान सुख पूर्वक रहते हैं सब पृथ्वी का पालन करते रहते हैं और पापी गिराये जाते हैं।३। पापी नित्य सुशीतल जल तथा भोजन आदि मांगते रहते हैं परन्तु उन्हें कुछ नहीं मिलता है सुभोजन वाली सुकुमारश्रीरूपस्त्रियां सुशीत भोजनों से प्रार्थित हो वहां प्रधानपूजाकर परमजन की प्रतीक्षा करती हैं और वेपापी अग्नितप्त सुघोर शिलातलमें फेंके जाते हैं।४।५ और अलोक में वृक्ष तथा भवन देखे जाते हैं पृष्ठ पाद उदर के जलने परभी उनके पीछे से यमदूत आते हैं और उन पापियों को मारते रहतेहैं वेसब पापी क्लेशको पाते हैं परन्तु अपने रक्षक को नहीं प्राप्त करते।६।७। और कितने ही पापियों को कुत्ते सारे अंगों में काटते हैं और कुत्तों के काटने पर वे सब बार बार रोते रोते विलापकरते हैं।८। और जिन्होंने अन्न विविध भक्ष्य भोज्य लेह्य चोष्य देते हुये को देनेसे रोका है वे पापी सूची मुख नाम के नरक में

जाते हैं और भूख प्यास से पीड़ित हैं तथा उनको अनेक भयङ्कर दँष्टा वाले सूचीमुख भक्षण करते हैं ॥६॥१० तथा कितने ही पापी मनुष्यों के पीछे दौड़कर एक लोहे की बनी अग्नि से गरम की गयी सुदारुण स्त्री मनुष्य को आलिंगन करती है मनुष्य दौड़ भागता है तो वह भी पीछे से दौड़ती हुयी यह कहती है कि हे पापी मैं तेरी बहिन हूँ मैं तेरे पुत्र की स्त्री हूं मैं तेरी मातृष्वसा हूं तेरी मातुलानी हूं पितृष्वसा हूँ गुरु भार्या हूं तथा मित्र भार्या हूँ भ्रातृभार्या हूं नृपभार्या हूं तूने श्रोत्रिय द्विजाति की स्त्री से गमन किया तू रसातल में गये के समान पाप से नहिं छूटेगा हे निर्लज्ज तू क्यों भागता है तू व्यसनों से घिरा है, हे पापी! जिस प्रकार तूने कर्म किये हैं उनकर्मों के प्रभाव से मैं निश्चय ही तुझे मारूँगी इस प्रकार कहती वार वार सुनाती हुई भयानक रूपवाली उसके पीछे दौड़ती रहती हैं हजारों ज्ञानियों में इस प्रकार के पाप करने वाले को घसीट कर दारुण दुःख देती रहती हैं ॥११॥१२॥१३॥१४।१५॥१६।१७॥ तथा वे यम दूत वृषली स्त्री के दारुण दुःखों से दुखित देख कहते रहते हैं कि तू वहुत सारे दुःखों से क्यों रोरहा है हे सुदुर्बुद्धे! क्यों रोरहा है स्वयं मेरे से आलिंगन कर हे पापी! मैं बार बार तुझे दशप्रकार से लेजारहा हूँ हाथ जोड़ते लाज नहीं आती है पापी! हे मूढ़ मैं तुझे नहीं छोड़ता हूँ तू कहां जाता है यमालय में जहां जहां भी तू जायेगा हे पापी! दूसरे की स्त्री से गमन करने वाले तुझ को मैं कहीं नहीं छोड़ूँगा इस प्रकार कह वार वार लोहदण्ड प्रहार से मारते रहते हैं ॥१८॥१९।२०॥२१॥ गोपाल के समान वारवार मारते रहते हैं व्याघ्र सिंह सृगाल तथा गर्दभ राक्षसों से खाये जाते हैं श्वापद कुत्ते काक तथा अन्य जीवों से भी भक्षण किये जाते हैं, वहां एक धूम ज्वालाकुल असितालवन है दावाग्नि सदृश आकार वाला चारों ओर अर्चि से प्रदीप्त रहता है यमदूत पापियों को वहां फेंकते हैं वहां गिरने से जल भुनकर वृक्षों पर चढ़ने लगते हैं तब उन वृक्षों के असि सदृश पत्तों से वहुशः कट जाते हैं।२२।२३।२४।२५। वहां कटे जलें मारे घसीटे

विकृत किये हुये सब पापी रोदन करते हैं ॥२६॥ और असिताल वन के दरवाजे पर जो बड़े दारुण यमदूत महारथी रहते हैं, वे उनपापियों को झिड़कते रहते हैं ॥२७ हे धर्म सेतु नाश करने वाले पापियो ! अपने किये कर्मों का फल हजारों प्रकार के दुःखों से भोगिये वह सब कर्म फल भोगकर भी तुम यदि मनुष्य योनि को प्राप्त कर दरिद्र कुल में पैदा होवोगे और नित्य भोग आदि से पीडित होकर दुर्गति को प्राप्त करोगे, वहां अग्निज्वाला समान है, अग्नि स्पर्श है, महाशब्द होते रहते है ॥२८॥२९॥३०॥ लोहे के समान चोंच से पक्षि नोंचते रहते हैं सुदारुण व्याघ्र खाते रहते हैं वहां अनेक प्रकार के क्रव्याद हैं तथा अनेक प्रकार के हिंसक जन्तु उन पापियों को खाते रहते हैं ऋक्ष हाथी तथा बहु कीट पिपीलिकादि से बहुदुःख युक्त असिताल वन में यमदूत पापियों को गेरते रहते हैं वह मैंने देखे हैं ।।३१॥३२॥३३॥ कोई असिपत्र से कटते हैं कोई शूल से भेदित होते हैं तथा अपर नाना रूप वाले भयानक देश हैं । ३४॥ रुधिर से परिपूर्ण वहां कितनी ही पुष्करिणी बावड़ी, तालाब तथा नदी तड़ाग कुये आदि हजारों हैं, ॥३५॥ तथा विष्ठा मांस कीट आदि आदि से भरे अन्य भी कितने ही स्थान मैंने देखे हैं उनमें वे पापी हजारों संख्या वाले दुःख भोगते रहते हैं कितने ही गन्ध सूँघते रहते हैं कितने ही उनमें डुबकी लगाते हैं ।३६।३७। वे यमराज के दूत पापियों के ऊपर हड्डि पाषाण वर्षा रुधिर के बलाहक तथा अश्म वर्षा करते रहते हैं ।३८। दौड़ते भागते हाहाकार शब्द करते में मारा गया कहने वालों का मारे बांधे हुओं का दारुण शब्द होता है ।३९। उन पापियों के क्रन्दन करने पर सारी दिशा व्याप्त होजाती हैं यमराज के दूत कहीं पर बांधते हैं कहीं पर रोकते हैं कहीं पर भेदन करते रहते हैं ॥४०॥ कोई बन्धन में जकड़े कोई ऊपर टांके हुये पापियों का हाहाकार मिश्रित दारुण शब्द सुनाई देता है ॥४१॥ तथा अन्य कितने ही मैंने देखे हैं जिनको देखकर कि मन उद्वेजित होता है ॥४२॥ इति श्रीवराह पुराणे संसार चक्रे यातना स्वरूप वर्णनं नाम काशीराम शर्म्मांकृत भाषा

टीकायां नवनवत्यधिक शततमोऽध्यायः ॥१६६॥

अथ दोसौ वाँ अध्यायः ॥

दोहा—दोसौ अध्याय में पुनि, कहें सकल समुझाय ।
नरक यातना स्वरूपहिं, वर्णन समग्रगाय ॥

अथ पुनः नरक यातना स्वरूप वर्णनम् । ऋषिपुत्र ने कहा तप्त महातप्त रौरव, महारौरव, सप्ततील, कालसूत्र, अन्धकार महान्धकार आदि आठ नरक हैं । इसमें पापी अपने पाप कर्मों को भोगते रहते हैं ।१।२। पहिले नरक में एक गुण, दूसरेमें दो गुण तीसरे में तीन गुण चौथे में चार गुण, पांचवे पांच गुण, छटे में छः गुण, सातवें में सात गुण, तथा आठवें में आठ गुण हैं ॥३॥४॥ प्रेत एक अहोरात्र में मार्ग को चलकर यमपुरी में जाते हैं दुःख वालों के लिये उससे अधिक दुःख क्या है ।५। यहां केवल दुःख ही है । सुख नहीं है, दुःख से दुःख बढ़ता है । वहां कुछ उपाय नहीं होता जिससे कि स्वल्प भी सुख मिल जाय।६। छूटता है, और मरता है । वहां मारक दुर्लभ है । शब्द स्पर्श, तथा रूप रस गन्ध इन पांचों में किसी का भी पापी को वहाँ सुख नहीं होता है । दुःख से दुःखान्त गामि शरीर तथा मन से कुछ सुख नहीं होता है ।७।८। वहां की सुतप्त भूमि लोहे के तवे तीखे बाणों से व्याप्त है तथा अन्तरिक्ष अग्नि जिह्वा वाले खग समूह से व्याप्त है, ।६। यहाँ बहुत ही भूख प्यास लगती है उष्ण अति उष्ण, शीतल अति शीतल पीने की इच्छावाले को राक्षस सरोवर के समीप ले जाते हैं । वह सरोवर हंस सारसों से आकीर्ण तथा पद्म उत्पल आदि से विभूषित रहता है। पीने की इच्छावाला वहाँ दौड़ता है तथा वहां का जल सुतप्ततर देखता है ।१०।११।१२। तदनन्तर राक्षस पक्वमांस लाते हैं । तथा उस पापी को क्षारोदक महाह्नद में गेरत हैं ।१३। उस ह्रमें उसको अनेक मत्स्य खाते हैं। तदनन्तर कालावमान में कथाञ्चित् प्रपला दि को वेदना होती है । पुनः यातनार्थ उसके शरीर में माँस होता है ।१४।१५। आर्त अवस्था में उसके शिर में उठते बैठते चलते समय

दारुण दुःख होता है ।१६। वहीं गोबर का खड्डा है । वहीं कुम्भीपाक है । वहां उसका शरीर रज पेशी अण्डा कमल पत्र के समान है । करपत्रिका वाले राक्षस सुमार्ग से चीरते हैं । और क्रोधित हो भीमनाद वाले राक्षस दान्तों से पीसते हैं ।१७।१८। वहां असिपत्र वन है शृंगाटक वन है वहाँ के शृंगाटक तप्त बालु मिश्रित हैं ॥१९॥ वहाँ पापी मनुष्य जलाया जाता है ' काटा जाता है बींधा जाता है । तथा भेदन किया जाता है गिराया जाता है पीड़ित किया जाता है खींचा घसीटा जाता है । प्रवेशित किया जाता है।२०। वहाँ काले तथा शवल रंग के कुत्ते बड़े दुरासद होते हैं । और पापी मनुष्य को सर्प, बिच्छु के समान खाते हैं, प्रतिकूल कण्टकों से व्याप्त वहाँ अन्य कूटशाल्मलि है इस कूटशाल्मलि में इसको यावत् अस्थि मात्रावशेष तक घसीटते हैं ।२१।२२। उस पापी को जिससे दुःख हो जो उसके प्रतिकूल हो वह शीघ्र उसको दुःख देने के लिये किया जाता है ।२३। शीत की इच्छा वाले को गरम तथा उष्ण की इच्छा वाले को शीत सुख की इच्छा वाले को दुःख दिया जाता है सुख वहाँ है ही नहीं ॥२४॥ यमदूतों से बार बार हजारों टुकड़े होने पर भी वह छिन्नांग वेदना को ही सहता रहता है मरता नहीं है ॥२५॥ घोर भयानक व्यालों से व्याप्त भयानक नदीमें प्रेतगेरे उतारे जातेहैं जिसको किरेश करही भय होता है ॥२६॥ शत योजन आयत करम्भ वालुका नदी है वह अग्निज्वाला समान घोर है प्रेत उसी से पार जाते हैं तदनन्तर वैतरणी नाम क्षारजल वाली महानदी है वह पञ्चाशत् योजन विस्तृत है । और पांच योजन गहरी है । उसमें अगाध कीचड़ है । चर्म माँस अपस्थि मेदना से व्याप्त है । उसमें वज्र के समान दांत वाले कर्कटक रहते हैं और धनुर्मात्र उलूक रहते हैं । वज्र समान उनकी अस्थि भेदन करने वाली जिह्वा है । तथा वे महा विषैले महा क्रोधी दुर्वेपल तथा दारुण हैं । ॥२७॥२८॥२९॥३०॥ मुश्किल से उस योजन कर्दम से पार होकर कोई निराश्रय शून्यागार में निवास करते हैं ॥३१॥ जहाँ कि अनेकशः मूषिक गण खाते रहते हैं । चूहों से उसके माँस खाजाने पर

केवल अस्थिमात्र उस पापी की शेष रह जाती हैं।३२ पुनः प्रभात समय वायु के लगने से माँस यथावत् हो जाता है। शून्यागार प्रवेश से दो कोश से कुछ कम दूरी पर एक सहकार वन है। वहां भयानक पक्षि रहते हैं। वे मनुष्य का मांस चमड़ा तथा हड्डि भी उड़ालेजाते हैं।३३।३४। तथा मनुष्य को शिर आंख कान रहित कर जाते हैं उस सहकार वन से कुछ दूर दक्षिण की ओर त्रियोजन विस्तृत वट वृक्ष है ।।३५।। वह सन्ध्या समय के मेघ के समान नित्य प्रदीप्त मालुम पड़ता है दशयोजन विस्तीर्ण अधः शत आयत विख्यात यम चुल्ली है वह तीन योजन परिमाण गम्भीर है वह नित्य प्रज्वलित रहती है तथा नित्य धूम से आंधियारी रहती है ॥३६॥३७॥ उस यम चुल्ली में यम किङ्कर राक्षस हजारों लाखों अरवों संख्यक प्रेतों को एक अहोरात्र में फेंकते हैं। उस यमचुल्ली में एक महीने तक प्रेत भ्रमण करते रहते हैं तदनन्तर एक वसा मेदा से व्याप्त शकुनिका नाम नदी है। चुल्ली कुक्षि में विश्रान्त वह नदी वेग से बहती है। बड़े कष्ट से उससे पार हो पुनः सात यातना स्थान हैं।३८।३९।४०। वे सब एक से दूसरा दुस्तर बढ़कर है पापी मनुष्य उनमें कठिनता पूर्वक तीव्र वेदना भोगता है।४१। वहां दश लता शूल हैं। तेरह कुम्भीपाक हैं। पापी नियमित रूप से अहोरात्र में उन उन स्थानों में जाता है ४२। दुर्निरीक्ष्य निरनुक्रोश राक्षस उन पापियों को उन उन अंगार विधूम स्थानों में शूल प्रोत करवा कर वेदना देते हैं ॥४३ शुष्कोदपान में तथा धूम में नीचा शिर कर के लटकाते हैं। अग्नि में जलाते हैं तीक्ष्ण तैल कटाह में पकाये जाते हैं पुनः गोवरों के खड्डे में मेद अग्नि से पकाये जाते हैं वह पापी एक स्थान में शूल प्रोत हो दश दिन तक यमदूतों से फेंके जाने पर दुःख भोगता है।४४।४५। सात यातना स्थानों को पार करके तीन योजन दूर तक तप्तत्रपुजलोर्मि वाली यमनदी है उसमें जलता भुनता अचेत हो कृच्छ्रता से पार हो मुहूर्त मात्र विश्रामकर के कुछ समय पश्चात् शीत जल वाली शीतल जंगल से घिरी रमणीय दीर्घिका है। वह यम की

भगिनी है। उसमें वह पापी सर्व कामना पूर्ण करता है। उस स्थान में पापी मनुष्य भक्ष्य भोज्य सब कुछ प्राप्त करता है और तीन रात्रि निवास कर पापी मनुष्य वहां अपनी सब पूर्व यातना भूल जाता है ।४६।४७।४८।४६। तदनन्तर शतयोजन विस्तृत शूल ग्रह नाम पर्वत है, वह एक पाषण है, सत्वों को वह निराश्रय है ॥५०। वहां सदा तप्त जल वाला मेघ वर्षता है उस पर्वत को पापी मनुष्य बड़े मुश्किल से एक अहोरात्र में पार करता है ॥५१॥ उससे आगे भृंगारक वन है। वहां पापी मनुष्य उसे घाससे भरा देखते है। उम वन में बहुत सारे नीले रंग की मक्खी तथा डांस रहते हैं ॥५२॥ जिनके कि स्पर्श करने तथा डसने से पापी कृमि रूप हो जाता है। मांस तथा रुधिर वर्षता है इस से मुश्किल से पार जाकर प्रेत यातना के लिये अन्य शरीर प्राप्त करता है। तदनन्तर वह सुदारुण दुःख को पाकर अपने माता, पिता, पुत्र, भाई वान्धवों को सामने से देखता है और इधर यमदूतों के प्रहारों से पीड़ित होकर क्रन्दन करता रहता है। और हा हा पुकार करहे पुत्र ! मेरी रक्षा कीजिये। इस प्रकार क्रन्दन करता रहता है लगुड़, मुन्दर, दण्ड, जानु तथा वेणु मुष्ठि और कशा के प्रहारसे सर्प व्याल आदिके गोदमें आनेसे अति पीड़ित हो मोहको प्राप्त होता है॥५३॥५४॥५५॥ ॥५६ ५७॥ पापी मनुष्य एवं प्रकार से अपने किये कर्मो का फल पर्याय से बार बार यहीं प्राप्त करते हैं ॥५८॥ चार पातक और पांचवां समाचार मनुष्य इन कर्मों को करके उस देश में जाता है ॥५६॥ उन सब में कर्म फल भोगकर गुणान्तर पथ में गैया प्रेत स्थावरता को प्राप्त करता है स्थावरता को प्राप्त करके नर होता है, तब पशु योनि में जाता है एवं प्रकार साठ हजार साठ सौ वर्षतक वह प्रेत बार बार नरकमें निवास करता है।६० ६१।६२। तदनन्तर निवृत कर्मा होकर स्वेदज होता है, तब स्वेदज योनि भुगतान करके पुनः पक्षि जातिकी सब योनियों में जाता है, तब गायककी योनि में जाता है। तब मानुषयोनि को प्राप्त करता है। ॥६३॥६४॥ मानुषयोनि में प्रथम शूद्र होता है, पुनः मानुष योनि को

ठीक समझ कर वैश्य योनि में पैदा होता है पुनः वैश्य योनि के बाद क्षत्रि योनि और उसके अनन्तर ब्राह्मण योनि को प्राप्त करता है, दुरात्मा पापकर्मा ब्राह्मणत्व को भी प्राप्त करके दुःशिक्षित होने से मन से आत्म द्रोग्धा होता है शरीर मानस घोर व्यसनों से उत्पादन किया गया है ॥६५॥६६॥६७॥ उपर्युक्त नर पूर्व कर्मों के अनुसार होता है, ब्रह्महत्या वाला कुष्ठी काकाक्ष, काक तालुक, तथा मदिरा पान करने वाला श्यावदन्त, पूतिगन्ध, पापी, राज हत्या वाला, पितृहत्या वाला तथा मदिरा पान करने वाला जो होय और सुवर्ण की चोरी करने वाले मनुष्य के ऊपर ब्रह्महत्या के समान पाप लगता है जो मनुष्य विरूप होते हैं, उन पाप कर्मियों का इनमें से कोई न कोई पाप पूर्व जन्म में किया रहता है, यावत् कर्मों के द्वारा वे पापी निर्याण वेश्मों में जाकर छिन्न भिन्न हो रुधिर से लोहूलुहान होते हैं। सारी भूमि उनके खून से तरातर होती है और उसी रुधिर से नदियां भी निकलती हैं निरन्तर पीड़ित हुये पापियों के क्रन्दन से हाहाकार युक्त महानाद होता है यमदूत उनपापियों को अनेक प्रकार से मारते बांधते रहते हैं ॥६८॥६९॥७०॥७१॥७२॥७३॥ लोहे के दण्ड के प्रहार से सुदारुण आयुधों से उग्र छेदन भेदनों से तथा सर्व पीडनाओं से दुःख देकर जबकि यमदूत थक जाते हैं। मोह युक्त होजाते हैं तब वे दूत आकर चित्र गुप्त के पास कहते हैं ॥७४॥७५॥७६॥ इति श्रीवराह पुराणे संसार चक्रे नरक यातना स्वरूप वर्णनं नाम काशीराम शर्म्मा-कृत भाषा टीकायां द्विशत.तमोऽध्यायः ॥२००॥

अथ द्वौसौ एकवाँ अध्यायः

दोहा—द्वौसौ एक अध्याय में, राक्षस किङ्कर युद्ध।
विविध भांति वर्णन करे, चित्रगुप्त का क्रुद्ध॥

अथ राक्षस किङ्कर युद्धम् ॥ ऋषि पुत्रने कहा—तब वे सब दूत नाना प्रकार के वेष वाले मिलकर हाथ जोड़कर चित्रगुप्त से कहने लगे ॥१॥ दूतों ने कहा—हे स्वामिन्! हम थक गये हैं क्षीण हो गये हैं,

अब अन्य नौकरों को कार्य में नियुक्त कीजिये, हम इसके अलावा अन्य दुष्कर कार्य करेंगे ॥२॥ हे सुव्रत! आपका यथेष्ट कार्य तभी और ही लोग करें हे परमेश्वर! हम दुःखी होगये हैं। हमारी रक्षा कीजिये ॥३॥ तदनन्तर खुली लाल आंखों वाला चित्रगुप्त उस वाक्य से क्रोधित हो श्वास लेकर सर्प के समान चारों ओर देखने लगा ॥४॥ नजदीक ही एक किसी आनाकृति पुरुष को देखा चित्रगुप्त के इशारे से वह शीघ्र वहां पर आया ॥५॥ उस को चित्रगुप्त ने क्रोध से हटादिया तब वह शीघ्र जाकर नाना आभरणों से भूषित नानारूप वाले मन्देहा नाम के राक्षस जहां रहते थे, वहां जाकर सर्व लोकार्थ चिन्तक महाबाहु चित्रगुप्त ने भूतों के विनाश के लिये आज्ञा दी जो कि चित्रगुप्त सब प्राणि पर समान वर्ताव रखता था, उसने विनाशार्थ आज्ञा दी तब वे नाना रूप वाले पिशिताशन राक्षस हाथी घोड़ों पर सवार होकर कवच पहिन नाना आयुध धारण कर किंकरों को आगे से करके उसके चरणों में अभिवादन करके प्रसन्न चित्तसे कहने लगे कि हे प्रभो! हमें शीघ्र-आज्ञा दीजियें, आपकी आज्ञापालन करने वाले हम किसका जीवन नष्ट करें ॥६॥७॥८॥९॥१०॥११॥ उनका वह वचन सुनकर चित्रगुप्त रोष गद्गद् वाणी से बार बार श्वास लेता हुआ कहने लगा ॥१२॥ हे मेरी आज्ञापालन करने वाले मन्देहा नाम के राक्षसो! इनको बांधकर के ग्रहण करो, और इनको मार बांध कर पुनः आइये। आप कृतज्ञ हैं, तथा दृढ़विक्रम वाले हैं, सबको मारने वाले हैं इन मेरे विरोधियों को मार दीजिये चित्रगुप्त का इस प्रकार वचन सुन कर राक्षस कहने लगे ॥१३॥१४॥१५॥ राक्षसों ने कहा—चाहे थके हैं, भूखे हैं, दुःखित हैं, तपोधन हैं, परन्तु सैकड़ों हजारों भृत्यों को अमात्य ही जानना चाहिये आपने इनका वध करने की आज्ञा दी है वह ठीक नहीं है, जिस प्रकार सर्व धर्मार्थचिन्तक ये उत्पन्न हुये हैं, उसी प्रकार हम तथा

आप भी उत्पन्न हुये हैं ॥१६॥१७॥१८॥ धर्मात्मा को मिथ्या प्रतिज्ञा नहीं करनी चाहिये हे वीर ! यदि कहना मानते हो तो इन्हें छोड़ दीजिये ॥१६॥ हे वीर ! हम भृत्यों के महा बलवानों को छोड़कर रक्षा कीजिये आज युद्धमें राक्षसों से हमारी रक्षा कीजिये ॥२०॥ ऐसा कह तदनन्तर घोर कामरूप व्याधि भीम भयानक रूप शूर शीघ्र सन्नद्ध हुये ॥२१॥ कोई हाथियों पर कोई घोड़ों पर कोई रथों पर कोई कष्टक कोई तुरंग कोई हंस कोई मृग कोई सृगाल कोई महिष कोई व्याघ्र कोई मेष कोई गीध कोई बाज कोई मयूर कोई सर्प कोई गर्दभ कोई कुक्कुट पर सवार होकर नाना प्रकार के आयुध धारण कर आपस में लड़ाई करने आये ॥२२॥२३॥२४॥ तूरी भेरी आदि बाजे बजने लगे वी योधा जंघाओं पर ताल ठोकने लगे जय चाह ने वाले वीर शीघ्र गति से चलकर पृथिवी को डगमगाने लगे ।२५। तदनन्तर उन राक्षसों का आपस में युद्ध होने लगा योधाओं के मुकुट बाजूबन्द चित्रविचित्र केयूर पट्टिशासिक तथा कुण्डल वाले शिरों पृथिवी व्याप्त होगयी, तथा बहुत सारे केयूर छत्र मणि भूषणों से पृथिवी व्याप्त हो गयी ॥२६॥२७॥ शूल, शक्ति, पष्टि तोमर पट्टिश असि खड्ग आदि आयुधों से रोंगटे खड़े करने वाला घमासान युद्ध हुआ तथा नख, दन्त पादों से वे आपस में एक दूसरे को मारने लगे ॥२८॥२६॥ तदनन्तर हाथों से एक दूसरे के केश पकड़कर लड़ने लगे उनका अयुक्त अतुल युद्ध हुआ ॥३०॥ तदनन्तर घोर पराक्रम वाले दूतों ने राक्षसों को मार पछाड़ दिया । दीजिये २ कहते काटिये ठहरिये कह रहे थे बध्यमान वे पिशाच रणार्दित होकर निवृत्त हुये बुलाये जारहे थे क्रोधसे लाल आंखें करके यह कह रहे थे कि ठहरिये कहां जाते हो तभी दूसरा कहता है कि मैं कहीं नहीं जारहा हूं दृढ़ होजाइये मैंने आपके देह नाशक शस्त्र छोड़ दिया है और हे मूढ़ ! त्वेने मुझे दुःख देने वाला शस्त्र अभी नहीं छोड़ा है ठहरिये मेरे फेंके बाणों को ग्रहण कीजिये कहां भागते हो । ३१॥३२॥३३॥३४॥ दूसरा कहता है कि हे दुर्बुद्धे ! क्या कहता है रण-पारङ्गत में यह

खड़ा हूँ। मेरी भुजाओं से छूटकर यदि जीवित रहेगा तो फिर कहना ॥३५॥ वहां वे हजारों पिशिताशन राक्षस मन्देहा नाम के मारे गये ॥३६। तब वे काम रूपी राक्षस जबकि भग्न हुये तो उन्होंने तमोयुक्त होकर तामसी माया ग्रहण की ॥३७। कभी दृश्य कभी अदृश्य होने लगे वह सब सेना तमोगुण युक्त होगयी तब वे परम भीषण ज्वर की शरण गये ॥३८॥ सर्व प्राणिप्रणाशन विरूपाक्ष शूलपाणि ज्वर की शरण गये चित्रगुप्त से प्रेरित मन्देहा नाम के महाबलवान पिशिताशन राक्षस मारते तथा खाने लगे। तब दूत तथा हजारों व्याधियां कहने लगे हे जगत्पते ! आज हमारी रक्षा कीजिये तब कामरूपी दूतों का वचन सुन कर ज्वर क्रोधित हो इस प्रकार सबको कहने लगा-- अग्नि समान कान्ति वाले हाथ जोड़कर खड़े हुये सबसे इस प्रकार कहने लगा कि योग से तथा बल से इन सब पापों को नष्ट कीजिये तदनन्तर ज्वर की आज्ञा से मेघगम्भीर वाणी वाले वे सब जहां पिशिताशन राक्षस थे शीघ्र वहां जाकर घमण्ड से गर्वित उन घोर हजारों राक्षसों को अनेक प्रकार के शस्त्र प्रहारों से मारने लगे और मार कर उन्हें लोहूलुहान कर दिया ॥३६ ४०॥४१॥४२॥४३॥४४॥ ॥४५॥४६। तदनन्तर स्वयं यम ने ही आकर युद्ध समाप्त करवाया चारों ओर से मारे जारहे राक्षसों को छुड़वाकर ज्वर के समीप जाकर विनय से बार बार सान्त्वना देता हुआ दिव्य ज्वर की पूजा करता हुआ ज्वर का हाथ हाथ से पकड़ कर सम्भ्रम पूर्वक अपने घर में प्रवेश किया संग्राम में पसीने की बिन्दु के समान आसन को पोंछ कर उस पर महाज्वर को बिठाकर विश्रान्त हुये काल भूत महा ज्वर को धर्मराज पूछने लगा कि हे देव ! क्या क्या समाचार है आप सर्व व्यापी हैं महातपा हैं क्रोध का कारण क्या है हे देवेश ! सर्वलोक नमस्कृत आप तथा मैं इस चराचर लोक को शासित करते रहते हैं यथा काम, यथादृष्ट, यथाश्रुत अनुसार लोक शासना करते रहते हे हे देव ! मृत्यु से सुसंवृत मैं आपसे ग्राह्य हूँ. सारे जगत का मैं ही नाश करता हूँ मैं सर्व घाती हूं अपने स्थान को जाइये स्वयं युद्ध

त्यागें ॥४७। ४८॥४६। ५०॥५१॥५२॥५३॥ रण भूमि में साठ करोड़ राक्षस मारे गये हैं अमर अक्षय तुझे नहीं प्राप्त करते हैं ।५४। तब युद्ध समाप्त हुआ और स्वयं धर्मराज यमने दूतों का और चित्र गुप्त का एक मेल करवाया ॥५५। तब दूत पहिले के समान चित्रगुप्त से भाषण करने लगे सर्व कर्म गुण भूत शुभ अशुभ कर्म सर्व जन्तुओं में युक्त कीजिये चित्र गुप्त के समीप से दूत रुद्र के समीप जाकर उपस्थान करके काल चिन्तक को कहने लगे कि जिस प्रकार लोक हैं जिस प्रकार राजा है जिस प्रकार सनातन मृत्यु है, हे प्रभो ! उसी प्रकार उठिये क्षमा कीजिये क्षमा कीजिये ॥५६॥५७॥५८॥५६॥ इति श्रीवराह पुराणे भगवच्छास्त्रे ससार चक्रे राक्षस किंकर युद्ध नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायां मेकाधिक शततमोऽध्यायः ॥२०१॥

अथ दोसौ द्वौवाँ अध्यायः ॥

दोह—द्वौ सौ द्वौ अध्याय में, नरक के सर्व हाल।
वर्णत कर्म विपाक सब, उद्दालक ऋषि लाल ॥

अथः नारकिं दण्डन कर्म विपाक वर्णनम् ॥ ऋषि पुत्र ने कहा-मैंने वहां अद्भुत विस्मय देखा है, धर्मराज द्वारा बुद्धि मान् चित्रगुप्त का सन्देश सुना है ॥१॥ जो मनुष्य प्रथम वर्णन किये हैं वे अपने *पाप कर्मानुसार फल भोगते हैं अग्नि से तपाये तथा दृढ़ बन्धनों से* बँधे जाते हैं ॥२॥ जो उन उन उल्बण कर्मों से सन्तप्त हैं तथा जो श्याम हैं इसको शीघ्र मारिये ॥३॥ ऐसी आज्ञा होती रहती है दुराचार पापरत निर्घृण हिंसक को कुत्ते काटें ॥४॥ जो सर्वदोष युक्त मातृ-पितृ हत्या वाला है उसको शाल्मलि पर चढ़ाकर कांटों से विदारण कीजिये ॥५॥ इस को सुतप्त तैल अथवा घृत आदि की कड़ाई में पकाकर पुनः तचे हुये ताम्बे के खल में फेंकिये ॥६॥ इस नीच मनुष्य को प्रदीप्त अग्नि में गेर कर पुनः मनुष्यता को प्राप्त कराकर क्षण मे प्रदीप्त कराइये ॥७॥ शयन आसन चुराने वाला तथा अग्नि लगाने वाले मनुष्य को शीघ्र वैतरणी में फेंकिये ॥८॥ यह सर्व तीर्थ विनाशक अति पाप कर्म करने वाला है इस के लिये

यह सुतप्त प्रदीप्त कीला तैयार है ॥९॥ कूट साक्षिक पिशुन तथा असत्य भाषण करने वाले मनुष्य के दोनों कानों में आज्ञा देकर दण्ड दीजिये ॥१०॥ कुछ समय के लिये जो ग्राम याजक ब्राह्मण हैं दाम्भिक हैं शठ हैं उसको केवल बन्धन में रख कर कुछ न दीजिये ॥११॥ जो क्रूर वाणी बोलने वाला है, उसकी जिह्वा काट डालो जिस दुरात्मा ने अगम्या गमन का पाप नहीं जाना हैं और लोभ तथा काम मोहित होकर अगम्या गमन का पाप किया है उसका लिंग काट कर अग्नि में जला कर भस्म करदो ॥१२॥ ॥१३॥ जिसने दायाद के कारण बहुत सारे नष्ट किये हैं उस पापी [illegible]राचारी का खलक कीजिये ॥१४॥ इस वार्धुषिक विप्र को सब [illegible]ङ्गों में भेदन कीजिये तथा इसको यातना स्थानों में ले जाइये ॥१५॥ सुवर्ण चोरने वाले पापी तथा कृतघ्न पितृ हत्या, ब्रह्म [illegible]त्या वाले को समान दण्ड दीजियें ॥१६॥ शीघ्र हड्डियां काट [illegible]ट कर अग्नि में जलायिये इस विप्र को जोकि पिशुन है [illegible]से तीखे दाढ़ वाले सुदारुण महा व्याघ्र खावें इस मर्म भेदी [illegible]ो पाकों में पकाइये ॥१७॥१८॥ जिसने प्रथम अग्नि छोड़ी और ग्रहण कर पूजा नहीं की है इस पाप समार वीरघ्न अति [illegible]पी को नित्य क्रोधित घोर कर्कट के सामने छोड़ो। इस सर्व [illegible]जक याजी को घोर ह्रद में गेरो ॥१९॥२०॥ जो नित्य [illegible] पशुओं का जल धारण करता है। और न रक्षा करता [illegible] न देता है। इस पापी को अदान व्रती ब्राह्मण वेद विक्रयी [illegible]ह्मण तथा जो सब कर्म करता है और देता कुछ भी नहीं [illegible]। जल पात्र हरने वाले तथा भोजन देनेसे इन्कार करने वाले [illegible]द्याध्ययन नहीं करता तथा अन्य को विद्याध्ययन नहीं कराता। वेद पाठ [illegible] धार्मिक ग्रन्थों का जो पठन पाठन नहीं करता जो वेद विदूषक है ईश्वर [illegible]र्तन कभी नहीं किया और पर द्रोही पर अपकारी रहा ऐसे पापी को यम [illegible] सुदृढ़ दण्डों से मारें ॥२१॥२२॥२३॥ वेणुदण्डसे अश्व ताडिनी

कुछ न दीजिये ॥२४॥ इसको अन्न पान कुछ न दीजिये विश्वास घातक को शीघ्र अग्नि में पकाइये । २५॥ जिस ब्रह्मदेय वस्तु हरण की है उसे शीघ्र पकायिये बहुत हजार वर्षों तक कर्म विस्तार में गिरादीजिये, उससे निकल कर तिर्यग्योनि में गिरादीजिये, सूक्ष्म देहविपाकों में कीट पक्षि आदि विजातियों में बहुत हजार वर्ष तक दुःख भोग करके मानुष योनि प्राप्त होती है वहां वह दुरात्मा अनेक जातियों में पैदा होता है । २६॥२७॥२८॥ घोर हिंसारूप से ब्रह्म हत्याकर दण्ड देना चाहिये, राजहत्या ब्रह्महत्या तथा दुष्कृत कर्म करने वाला सुवर्ण की चोरी करने वाला मदिरा पान करने वाले का अनुभव करके दण्ड देवे ॥२६॥३०॥ गोहत्या करने वाले पापी को कूट शाल्मलि में टांको और घोर दर्शन वाले अनेक राक्षस उसे घसीटें जन्तुओं सम्प्रयोजित हो पूति पाकों में पके ब्रह्महत्या से चारों भागों द्वारा मृगत्व पशुता को प्राप्त होता है, उद्विग्न वास पतित जहां जहां युक्त होता है, पाप कर्म समुद्विग्न बारबार होता है ॥३१॥३२ ३३॥ यह क्या पितृ घाती दुरात्मा पापी है वे इसको सैकड़ों वर्षों तक खावें तदनन्तर घोर नरकों में निरन्तर रहे तब मानुषताको प्राप्त कर गर्भस्थ ही मरे । ३४॥३५॥ दश गर्भों में दुःख भोगकर पुनः मुक्त होवे तब मानुष हो सर्वदा क्लेश भागी होवे ॥३६॥ उस मनुष्य योनि में पैदा होकर सर्वदा भूख प्यास से पीड़ित तथा रोग ग्रस्त होवे मित्र विश्वास घातक इस घोर पापाचार को कोलु में पेलकर ही छोड़ो और हौसो वर्ष तक घोर ज्वलन में जलायिये ।।३७।।३८।। तदनन्तर यह कुत्ते की योनि से पैदा होवे, और उससे भी मुक्त होकर सर्वदा क्लेश युक्त मनुष्य होवे ॥३६॥ संसार में विविध दारुण रोगों को प्राप्त करता है ब्रह्मधन तथा लवण, चोरने वाला पापी पांच सौ वर्ष तक नरक यातना भोगकर पश्चात विष्टा का कीड़ा तब पक्षि तब वृक होता है इस अग्नि लाने वाले को अग्नि में जलायिये ॥४०॥४१॥४२॥ अपने किये पाप कर्म का फल नरक यातना भोगकर पश्चात मृग होता है तत्पश्चात मानु-

पता को प्राप्त होता है दुरात्मा मानुपता प्राप्त करने परभी संघात चिन्तकों के साथ सर्व दुष्कृत कार्यों में दारुण दुःखों को भोगता है एवं प्रकार हजारों पापी दुःख भोगते हैं, दूसरे का द्रव्य हरण करने वाला रौरव नरक में यातन भोगता है तथा पतित मनुष्य कुम्भीपाक में यातना भोगकर गर्दभ की योनि प्राप्त करता है तदनन्तर विष्ठा खाने वाले सूकर की योनि प्राप्त करता है ।४३।४४।४५ ४६। पर द्रव्यापहारी अनेक दुःखों को प्राप्त करता है, दशजन्म तक गर्दभ योनि से पैदा हो, भूख प्यास से पीड़ित रहता है ।।४७। जो मनुष्य योनि प्राप्त करके चोर होता है, परोपघाती होता है, सर्वदोषयुक्त निर्लज्ज होता है, उसको नीचा शिर करके वृक्षकी शाखा पर लटकाइये पश्चात उस पापी को अग्निसे जलाइये । ४८। ४६ । तदनन्तर सौवर्ष के बाद वह मुक्त होता है तथा अजितात्मा पिशुन मनुष्य नरक यातना भोगकर प्रथम सूकर तदनन्तर नकुल की योनि प्राप्त करता है, तत्पश्चात् विमुक्त होकर बहुत काल में मानुप योनि प्राप्त करता है ।।५०। ।।५१।। कूटसाक्षी तथा मिथ्याव्रत धारण करने वाला मनुष्य अपने ही कर्म से निन्दित हो, सर्वलोक से धिक्कृत होकर कहींभी कल्याण नहीं प्राप्त करता है ।५२। इस झूठ बोलने वाले दुष्ट को तथा क्षेत्र हारक को जबतक इसके पाप कर्म हैं, तब तक दुःख दीजिये ।५३। यह एक लाख वर्ष तक हर एक अपने किये पाप कर्म का फल भोगकर पुनः तिर्यग्योनि में पैदा होकर जातिस्मर हो अपनी सब जन्म की जातियों को स्मरण करता है पश्चात् मानुप योनि प्राप्त कर भूख से पीडित रहता है ।५४। ।५५। सर्व काम विमुक्त सर्वदोषयुक्त मनुष्य किसी जन्म में अन्धा होता है, किसी जन्म में बहिरा होता है, किसी जन्म में मूक गूँगा किसी में काणा किसी में रोग ग्रस्त व्याधि युक्त होता है, एवं प्रकार दुःख भोगता है तथा सुख को स्वप्नमात्र नहीं देखता है ।।५६।।५७।। सहस्र, अयुत तथा अरबों जन्म लेता है, परन्तु क्षेत्र हरने वाला पापी कभी भी शान्ति नहीं प्राप्त करता है ।।५८। तथा इस भूमि हरण करने वाले मनुष्य को दृढ़ बन्धनों से बांधकर अन्तर्गत तीव्र दुःखों से

चिरकाल तक दुःख दीजिये ।५६। इस मेरे यमलोक में आये पापी मनुष्य को चिरकालतक वन्धन में रखियो तथा पश्चात् उसी पाप से वह पापी चिरकाल तक मार्जार योनि प्राप्त करेगा ।६०। पापी भूख प्यास से व्याकुल हो वन्धन से बंधकर दुःखों का अनुभव करता हुआ सात प्रकार से सात तथा एक जाति में जाकर दुःख भोगता है, और इस शाकुनिक पापी को कुत्तों तथा गीधों के द्वारा मरवादीजिये ।६१।६२। और तब यह पापी ग्राम कुक्कुट होवे तदनन्तर डाँस मच्छर आदि योनि में जावे हजारों योनियों में जन्म लेकर दुःख भोगकर पश्चात् मानुप योनि को प्राप्त करे । और इस सौकरिक पाप वाले को महिप द्वारा मरवादीजिये ।६३।६४। सहस्र वर्ष तक दौड़ाकर इस सौकरिक पापी को महिप पैरों से तथा सींगों से मारे तब नरक से मुक्त हो सूकर की योनि प्राप्त करे तब महिप तब कुक्कुट तब शशक तब जम्बूक की योनि प्राप्त करे पुनः जिस जिस योनि में पैदा होगा उसको वही भक्ष्य होगा इस प्रकार करने पर ही कर्म का नाश होता है, अन्यथा नहीं यह मैंने पहिले ही नियम करलिया है ।६५।६६।६७ पुनः मानुप योनि प्राप्त कर पुनः व्याध होगा, अन्यथा सैंकड़ों जन्मों से भी छुटकारा नहीं होसकता है ।६८। उच्छिष्ट अन्न देने वाले पापाचार अधर्मी को तीन सौ वर्ष तक जलते कोयलों में जलायिये ।६६। भिन्न चरित्र वाली दुःशीला और पति से झूठा व्यवहार करने वाली स्त्री को चारों ओर से सात गरम किये लोहे के पुरुप आलिङ्गन करें ।७०। तत्पश्चात् कुत्ती की योनि मिले पुनः सूकरी की योनि मिले तदनन्तर कर्मक्षय होने पर मानुप योनि में जन्म लेकर नाना प्रकार के दुःखों से जन्म व्यतीत करे ।७१। और उस दुःख में दुःखित हो कदापि सुख नहीं प्राप्त करेगी, इसने नौकरों को बहुत दुःख दिया है, और उन नौकरों को भक्ष्य भोज्य पान आदि कुछ भी नहीं दिया है, लोभी बन प्रजा को देख अनुमोदन किया है अतः इस दुर्मति को मेरे समीप सर्वदोषघोर रौरव नरक में डालकर दुःख दीजिये आपका कल्याण हो इस सर्व कर्म करने वाले दुरात्मा को सहस्र वर्ष तक यातना दीजिये पश्चात् यह दस्यु जाति में पैदा होगा पुनः सर्प

योनि में पैदा होगा तदनन्तर कर्मों का क्षय होगा, तत्पश्चात् इतर सर्व पाप करने वाला पुनः सूकर तब मेष तब हाथी तब घोड़ा पुनः शृगाल, सूकर, वक आदि योनियों में बार बार जन्म लेकर हजारों वर्षों के बाद मानुष योनि प्राप्त करेगा, आपत्तियुक्त पांचकर्मों से पाँच वक्र जन्म लेकर मरेगा ।७२।७३।७४।७५।७६।७७।७८।७९। पांच दफे अपौगण्ड अवस्था ही में मरे कर्म शेष के भी क्षय होने पर मानुषता को प्राप्त करता है, यह कर्म निर्णय है ।८०। पाप का पुण्य का प्रजाके विनिपातन में प्राणियों का असम्मान तथा सर्वशः दुष्प्रहार अतः स्वयम्भु ने यथार्थवत् पूर्वकर्म विपाक निर्माण किया है ।८१।८२। इति श्रीवराह पुराणे संसार चक्रे नारकि दण्ड कर्म विपाक वर्णनं नाम काशीराम शर्म्माकृत भाषाटीकायां द्व्यधिक शततमोऽध्यायः २०२।

अथ द्वौसौ तीनवाँ अध्यायः

दोहा—द्वौसौ त्रय अध्याय में, अनेक विधि समुझाय ।
पाप समूह वर्णन सब, करे ऋषि पुत्र गाय ॥

अथ पाप समूहानुक्रम वर्णनम् ॥ ऋषिपुत्र ने कहा-तथा चित्रगुप्त ने अन्य पाप भी कहे हैं, उन कहे व्यामिश्र पापों को सुनिये ।१। शील संयमन हीनों का कृष्ण पक्षानुगामियों का महा पापियों का परा भव कहिये २।राजद्वेषी आदिसब निन्दित हैं, केवलपेट पूर्तिपरायण वालों के साथ बातचीत नहींकरनी चाहिये, ।३। हिंसाकेलिये विहार करने वालेक्रूर सूचकसर्व दूषक गवेडक को मारनेवाले तथा महिषादिको मारनेवाले तथा जो दावाग्नि छोड़ता है और जोसौकरिक है,वेसब असंख्यक कालतकनरक यातना भोगतेहैं ।४।५। कर्मक्षयसे जबकि वेपुनः मानुषयोनि प्राप्त करते हैं तोअल्पायुवाले तथाव्याधिग्रस्त होतेहैं।६।गर्भ हीमेंनष्ट होते हैं तथा बचपन हीमें मरतेहैं कोईनीच पुरुषपरिरिंगरतहो मरतेहैं ।७।काष्ठ वंशमें शस्त्रमें तथावायुसे अग्निसे जलसे पाशबन्धमें पतनसेविषसे तथामातृपितृ वधका, मित्रसम्बन्धि बन्धुजकष्ट प्राप्त करतेहैं, जो लोहक हैं, गर्भपात करनेवाले हैं, मूल कर्मकर हैं विषदेने वाले हैं, पुत्र दाहक हैं, पञ्जर कर्ता हैं, शूलोपघातक हैं ।८ ९।१०।११।जो पिशुन हैं,कलह करते हैं तथा जो मिथ्या दोष

लगाने वाले हैं जो गौ, कुञ्जर, गधा, ऊँट के चर्मकार हैं मांस भेदक हैं तथा जो उद्वेजन करने वाले चण्ड हैं वे सब नरक में यातना भोगते हैं बहुत काल तक वहां दुःसह यातना भोगकर जब कर्मक्षय होता है तब मानुष योनि प्राप्त करते हैं और हीनांग हो दरिद्री होते हैं ॥१२॥१३॥१४॥ तथा अपने कर्मोंद्वारा कान नाक हाथ पैरों के छेदन को प्राप्त करते हैं याने इन अंगों से हीन होते हैं और बार बार शारीरिक तथा मानसिक दुःख प्राप्त करते हैं पापी मनुष्य उग्र गल वेदना तथा मस्तक वेदना तथा कुक्षि में तीव्र आमय वेदना प्राप्त करते हैं और अपने ही कर्मद्वारा, जड़, अन्ध बधिर, मूक, पंगु, पादसर्पि, एक पक्षहत, काणे, कुनख, रोगी, कुबड़े, लूले हीन विकल तथा घटोदर गलकुष्टी आदि होते हैं तथा वातरण्ड वाले होते हैं अण्डहीन होते हैं प्रमेह मधु मेहि आदि भी अपने कर्मानुसार होते हैं ॥१५॥१६॥१७॥१८॥१९॥ योनि शूल अक्षिशूल श्वासशूल हृदयशूल गुह्यशूल आदि कर्मानुसार होते हैं तथा कर्मानुसार पिण्डका वर्त भेद से प्लीह गुल्मादि रोग वाले होते हैं बहुत दारुण घोर व्याधियों से ग्रस्त इन क्रूरहिंसकों को मारो काटो ॥२०॥२१॥ मिथ्या भाषण करने वाले दूतों को नरक यातना तथाक्रम दीजिये जो कर्कश हैं जो पुरुष हैं जो स्त्रियों को निरर्थक हैं जिनकी चार प्रकार की भाषा है जोकि झूठ भी कही जाती हास्य रूप से जो भाषा है तथा चित्ररूप से जो भाषा है जो अरहस्य है तथा रहस्य है जो पैशुन्यता से निन्दा करता है जो उद्वेग जनक भाषणकरता है जो कटुकभाषण करता है जोलोक गर्हित भाषण करता है जो स्नेह नाशक भाषण करता है रूक्ष भाषण करता है भिन्न वृत्तयुग भाषण करता है जो कदली गर्भ के समान निःसार भाषण करता है जो मर्म भेदी भाषण करता है जो कटुकाक्षरा वाणी बोलता है जो स्वर हीन असंख्येय वाणी बोलता है निरर्थक भाषण करता है तथा जो अयन्त्रित मुखा हैं जो प्रलाप करते हैं ॥२२॥२३॥२४॥२५॥२६॥ क्रूर निष्ठुर शठ निर्दय निर्लज्ज मूर्ख मर्मभेदी भाषण करते हुये दर्पित करते हैं ॥२७॥ जो दूसरों के शुभगुणों का वर्णन सुनकर पसन्द

नहीं करते हैं। उन सब धूर्त पापियों को बन्धन में जकड़कर दुःख दीजिये २८॥ तदनन्तर कर्मानुसार बहु प्रकार से कीटपक्षि आदि होते हैं संसार में दोष करने वाले लोक द्वेषी बहुत समय तक घोर नरक में यातना भोगते हैं पाप कर्म क्षय होनेपर मानुषयोनि प्राप्त करते हैं ॥२६॥३०। परिभूत, अविज्ञान नष्टचित्त तथा अकीर्तिवाले अपूजनीय अयोग्य तथा स्वपक्षमें अपमानित मित्रों में मित्रों को छोड़कर सम्बन्धियों से निराकृत तथा लोक दोष और लोक द्वेष करने वाले ॥३१॥३२॥ इन पूर्वोक्त पापों को करने वाले मनुष्यों के मस्तक पर अन्य मनुष्यों से किया पाप भी गिरता है वज्र,शस्त्र, विष, देहादेह निपातन तथा मिथ्या प्रलापकरने वाले मनुष्यों की यह क्लेश परम्परा कहदी है जो स्तेयहार प्रहार तथा नीतिहार आदि स्तेय कर्म करते हैं, और बलात्कार हरण करते हैं जो करचण्डाशि हैं जो राजशब्दोपजीवी हैं, जो कृपणों को दुःख देते हैं, जो सुवर्ण मणि मुक्ताओं का कूट कर्म करते हैं जो समय पर किये को हरण करते हैं जो लोकपीड़ा करने वाले मनुष्य हैं तथा अनादि बुद्धि वाले स्वार्थातिशय करने वाले भूतनिष्ठाभियोग जानने वाले व्यवहारमें अनर्थ करने वाले धातुओं का भेद करने वाले चांदी के करने वाले न्यास धनको हरने वाले तथा जो सम्मोहन करने वाले क्षुद्र पापी हैं वे उन उन नरकों में पाप भोगते हैं ॥३३॥३४॥३५॥३६॥३७॥३८॥३६ उन दारुण नरकों में वे पापी चिरकाल तक यातना भोगते हैं ॥४०॥ जब उनका पाप कर्म क्षय होता है तब वे मानुष योनि प्राप्त करते हैं और जहां महाभय है वहां पैदा होते हैं ॥४१॥ जिस देश में चोरभय हो, राजभयहो भूखका भयहो आपत्तियों का भयहो तथा व्याधि मृत्यु आदिका भय हो, जिन देशों में ईतिदोष का भयहो तथा लुब्ध नगरों में अथवा अनेक दोष वाले देश तथा नगरों में उनपापियों का जन्म होता है ॥४२॥४३॥ बहु दुःख परिक्लिष्ट होते हैं गर्भवास से पीड़ित होते हैं कोई एक हाथ कोई दो हाथ तथा कूट विकृतोदर होते हैं ४४। शिरा विघ्न गात्र होते हैं हीनाङ्ग होते हैं वात रोगी होते हैं तथा अश्रुपातित रोग वाले होते हैं वे भार्या को नहीं प्राप्त करते हैं।

क्योंकि लूला लँगड़ा देखकर उन्हें कोई लड़की नहीं देता है तथा भार्या मिल भी जाय तो उनके पुत्र तद्रूप सुलक्षण नहीं होते हैं अति ह्रस्व, विवर्ण, विकृत भ्रान्त लोचन संसार में जिस प्रकार पक्व के समान होते हैं कृपण भैरव स्वन वाले होते हैं बड़े परिवार का उच्छिष्ट भोजन करते हैं रूप गुण बल तथा शील से हीन होते हैं ये राजभृत्य होते हैं पृथिवी के परिचारक होते हैं ॥४५॥४६॥४७॥४८। इनका घर नहीं होता है निरामर्ष होते हैं तथा सर्वदा वेदना से दुःखी रहते हैं सजातीय मित्र सम्बन्धियों का कार्य करने से तृणीभूत होते हैं अनर्थ राज दण्ड नित्य वध उत्पादन करता है ॥४६॥५०॥ और कर्मकल्याण कृच्छ्रों में अत्यन्त मोह को प्राप्त होता है कर्षक, पशुपाल तथा वाणिज्य से आजीविका करने वाले जो जो कर्म करते हैं सर्वत्र क्षय भागी होते हैं और सत्य ढूँढ़ते हुये भी वे कीर्तिके भागी नहीं होते हैं ॥५१॥५२ जो कुछ अशुभ कर्म उस देश में होता है वह उन मनुष्यों को छोड़ उस देश का नहीं होता है सुवृष्टि होने पर भी उनका वह क्षेत्र छोड़ देवे, वहां वज्रपात होकर क्षेत्र नष्ट होजाता है ॥५३॥५४॥ उनको न सुख न निर्वाण और न मानुपता प्राप्त होती है नृशंसियों दुरात्मा पापियों को केवल दारुण दुःख होता है।।५५। स्तेय कर्म करने वालों की क्लेश परम्परा छोड़कर अब परदारा गामियों की यातना सुनिये ॥५६॥ विक्षिप्त मन वाले तिर्यग्मानुष देहों में जाते हैं धर्मचारित्र दूषक अधर्मों में विहार करते हैं ॥५७॥ उनको उसी प्रदान से अथवा ग्रहण से ग्रहण करे मूल कर्म प्रयोग से राष्ट्र के अतिक्रमण से अथवा जो बलात्कार वा प्रकृति से कुलाङ्गनाओं से व्यभिचार करते हैं। वर्ण संकर पैदा करने वाले कुल धर्म को दूषित करने वाले और जो शील शौचादि सम्पन्न धर्मलक्षण जन को धर्षित करते हैं, उन पापियों का पराभव सुनिये ॥५८॥५६॥६०॥ वे पापी दारुण नरक को भोगकर बहुत हजार वर्षों तक उसी कर्म से दुष्कृत हो पाप कर्म क्षय होने पर जब कि पुनः मानुष योनि प्राप्त करते हैं तो संकीर्ण योनि से क्षुद्र पुरुषाधम होते हैं ॥६१॥६२॥ वेश्या लङ्क कूटों का तथा

शाखिडकोंका अनेक मैथुन गामीदुष्ट पाषण्ड नारियों का कोई निर्लज्ज पुण्डक, वद्धपौरुषगण्डक, स्त्रीवन्धक स्त्रीविनाश, स्त्रीवेष स्त्रीविहारी तथा स्त्रियों से प्रवृद्ध, स्त्री भोग परिभोगी, तद्वेत, तन्नियम, तद्वेष तथा उन्हीं के साथ भाषण करने वाले हों उन्हीं के साथ भाव करने, उन्हीं से कथालाप उन ही से भोग परिभोग वाले होते हैं तथा दोनों में विरलोभ नीच मनुष्य प्राप्त करते हैं ॥६३॥६४॥६५॥६६॥ सौभाग्य-परमासक्त वीभत्स नर नीचों के साथ संवास तथा प्रिय अप्रिय शारीरिक मानसिक दुःख को अधम मनुष्य प्राप्त करते हैं कृमियों से भक्षण तप्त तैल में रन्धना तथा अग्निक्षार, नदि आदि से निःसन्देह दुःख प्राप्त करते हैं। परदाराओं पर आसक्त मनुष्यों को निग्रह भय होता है मैंने सब कार्य सुना दिया है ॥६७॥६८॥६९। ७०॥ इति श्रीवराह पुराणे पापसमूहानुक्रमो नाम काशीराम शर्मा कृत भाषाटीकायां अधिक द्विशततमोऽध्यायः ॥२०३॥

अथ दोसौ चारवाँ अध्यायः ॥

दोहा—दूतों को समुझाय सब, चित्रगुप्त यमराज ॥
विविधरूप धरि पठावत पापी लाने काज ॥

अथः दूतप्रेषणवर्णनम्—ऋषिपुत्र ने कहा-हे ऋषिगण ! लोकशासक चित्रगुप्त का कहा वचन यह मैंने और भी सुना है ॥१। वह दूर है क्या करना चाहिये इसके कर्म का नाश नहीं है उस पर कृपा क्यों करता है ग्रहण करो मत मारो दुःख दो ॥२॥ शर्मिन्दा क्यों है, आप जानते हो परामुङ्ख क्यों हुये हो विलम्ब क्यों किया शीघ्र क्यों नहीं जाता है ॥३॥ पुनः जावो और शीघ्र उसे यहां ले आवो मैं अशक्त हूँ इस प्रकार दर्प रोष क्यों करते हो ॥४॥ हे दुर्बुद्धि ! तू क्या कहता है कि उसका विवाह है, उर्द्धरेता है, तपस्वी है यह मुझे क्यों कह रहे हो ॥५॥ तू गर्व भाषण क्यों करता है समय का पालन करो अपनी प्रिया के साथ रमण कररहा है यह क्यों कहतेहो ।६। पुनः पतिव्रता है साध्वी है इसप्रकाररहस्य कहते हो बालकरात्रिसमय घरआकर

क्या क्या कहता है ।७। किस प्रकार जानकर लाया जाता है भोक्तु काम को किस प्रकार लाते हो, जलशापि तथा दातुकाम दाता को किस प्रकार लाते हो ।८। यहां धार्मिक आपही हैं, मैं एक नृशंस के समान हूं, जावो जावो, तथा देखो जिससे कि समय न टलजाय ।६। तू शीघ्र सर्प होजा और तू व्याघ्र होजा तू सरीसृप होजा, तू जलग्राह का रूप धारण कर तू कृमि होजा ।१०। तथा तू नरकानुगत व्याधिरूप होजा, तू अति-सार होजा, तू छर्दि होजा ।११। तू कर्णरोग होजा विषूची रोग तथा नित्य स्थापि रोग का रूप धारण कर, महाघोर ज्वर का रूप धारण कर दुरासद जलग्राह होजा ।१२। वात व्याधि होजा, तथा जलोदर होजा अपस्मार रोग का रूप धारण कर, उन्माद तथा वातरोग होजा ।१३। तू शीघ्र विभ्रम होजा तथा पुन विष्टम्भ होजा महाघोर व्याधि होजा यह तृष्णा होवे और यथा दृष्टयथा काल ठहरिये काल संहरण में शुभा गमन में आपकृत कर्मा हैं इसी काम करने से आप लोगों की मुक्ति होगी विलम्बन करके तुम सब वेग से शीघ्र जायिये ।१४.१५।१६। जो मैंने कहा है वह धर्मराज की श्रेष्ठ आज्ञा है, वहां विलम्ब न करके एक रात्रि, दोरात्रि, तीनरात्रि, चार रात्रि, छैरात्रि दशरात्रि अथवा पक्ष मास वहुमास विताकर वापिस आवो, पुनः मोक्ष मिलेगा, वहां भूतात्मा मोहवान् करुण, तथा कष्ट है, जिसजिस समय जितनों को मैं कहूं उस समय तुम वह महाकाल कीजिये ।१७ १८।१६।२०। शास्त्रानुसार मैंने यह विनियोग कह दिये हैं, सोते जागते प्रमत्त होते हुये को जाकर पकड़ो जिससे कि समय न टल जाय ।२१। मेरे शासन से तुमसब यत्न पूर्वक वह कार्य कीजिये यहां मैं ब्राह्मणों को अभय देता हूं ।२२। अतः मैं आप लोगों को आज्ञा देता हूँ कि जाइये, ऋषियों से, स्त्रियों से यातना से नहीं डरना चाहिये ।२३। मेरे कहने मुताबिक कार्य कीजिये जिससे कि समय न चलाजाय यथादृष्ट कीजिये । विशेष मृत्यु से संगत हो मैंने आज्ञा देदी है जिसप्रकार महायशा महातेजा चित्रगुप्त जिस प्रकार स्वयं रुद्रने कहा जिस प्रकार शचीपति इन्द्रने कहा जिस प्रकार ब्रह्मा आज्ञा देता है तथैव प्रभु चित्रगुप्त अपने नौकरों को पापियों को

लाने के लिये आज्ञा देता है ॥२४॥२५॥२६ इति श्रीवराह पुराणे संसार चक्रे दूत प्रेषणं नाम काशीराम शर्म्मकृत भाषा टीकायाँ चतुरधिक द्विशततमोऽध्यायः ॥२०४॥

अथः द्वौसौ पाँचवाँ अध्याय

दोहा—द्वौसौ पांच अध्याय हु, वर्णत है यमराज ।
शुभाशुभ फलानु कीर्तन, पाप पुण्य के काज ॥

अथ शुभाशुभ फलानु कीर्तन वर्णनम् ॥ ऋषि पुत्र ने कहा हे ऋषि गण ! प्रथम उस चित्रगुप्त यम का कहा जो मैंने सुना है वह और भी सुनिये ।१॥ यह जन्म धारण करे, यह स्वर्ग जावे, यह वृक्ष होवे, यह तिर्यग्योनि में पैदा होवे, यह मनुष्य मुक्ति को प्राप्त करे ।२॥ यह शीघ्र नाग, होवे यह परम गति को प्राप्त करे, यह अपने पूर्वज पितामहादियों को देखता है ॥३॥ दुःखी होते, रोते, बोलते, अपने कर्म दोष से सब अक्षय्य नरक में चले गये हैं ॥४॥ पुत्र पौत्र हीन दारत्यागी अधर्मी को शीघ्र रौरव नरक में भेजो ॥५॥ अतीत तथा अनागतों को छोड़ दीजिये इन पाप रहित मनुष्यों को शीघ्र छोड़ दीजिये ॥६॥ आगम और विपत्ति में सर्व धर्मों का पालन करने वाले अनिन्दक बहुत कल्पों तक स्वर्ग में निवासकर वह परम धार्मिक परम सुन्दर नारी की गोद में कलियुग में मानुपता को प्राप्त कर धर्मका निदर्शन रूप होवे ।७। ।८ इसका परिक्लेश पूर्वक त्रिविष्ठप में अक्षय्य वास होवे यह रणभूमि में शत्रुको मारकर मरा है ॥९॥ गौ, ब्राह्मण तथा राष्ट्र के अर्थ जो मरा है उसे इन्द्र की अमरावती में शीघ्र भेजो ॥१०॥ वहां वैमानिक याने विमान वाला हो एक कल्पतक वास करेगा उसी प्रकार यह महा भाग ! धर्मात्मा धर्मवत्सल बहुदान प्रेमी तथा नित्य सर्व प्राणियों पर दया करने वाला है इसकी गन्ध माल्यादि से शीघ्र पूजा कीजिये मैंने इस महात्मा के लिये पूजा कहदी है यह देवताओं से जिवीत होवे इसको रथ दीजिये ॥११॥१२॥१३॥ यह प्रेतवास छोड़ कर त्रिविष्टप जावे तथा देवदेव धीमान् इन्द्र का अर्द्धासन इसको होवे ॥१४॥ वहां यह शङ्ख तूरि आदि बाजों के शब्द से तथा विजय

शब्द से पूजा पाकर सुख प्राप्त करे ॥१५॥ यह कल्याण को प्राप्त होवे तथा दुरासद इन्द्र देश को जावे इस कीर्ति वाले ने सर्वलोक अलंकृत किया है ॥१६॥ शतसंख्या वाले गुणों से चक्र इसकी प्रतीक्षा कररहा है, यह धर्मांश तब तक स्थित रहेगा जब तक कि त्रिविष्टप में चक्र है ॥१७। तभी तक वह स्वर्ग में वास करेगा जब तक धर्म का अनुमान होगा तदनन्तर समय से च्युत हो मानुष योनि में सुख भोगेगा ॥१८॥ सर्वधर्मों से अलंकृत रत्नवेणु आदि दान करने वाले मनुष्य को सर्व सौख्य युक्त अश्विनीकुमार के लोक में भेजो ।१६। यह महाभाग देवदेव सनातन के समीप जावे इसने पहिले यथोक्त सुख दोहना गायों का दान किया है ।।२०॥ सर्वशक्ति युक्त हो इसने द्विजाति को दान दिया है, विशेषतः पवित्र ब्राह्मणों को बहु अन्नदान दिया है।२१।अतः रुद्रकल्प मनोरम कल्प वास करेगा रुद्र लोक में जाकर कल्प तक निवास करेगा ॥२०॥ इसने ब्राह्मणों को मधुखण्ड पुरःसर अनेक रसों से युक्त मनोरम सर्व गन्ध दिया है, तरुणी दूध वाली सुवर्णा युक्त तथा हेम वस्त्रालंकृत शुभ सवत्सा गाय का इस महात्माने दान किया है ॥२३॥ ॥२४॥ इसका लेखा मैंने देखा है कि, यह तीन कोटि तक स्वर्ग वास करेगा, स्वर्ग से भ्रष्ट हो ऋषियों के कुल में पैदा होगा ॥२५॥ सुवर्ण दान देने वाले को स्वर्ग भेजो वहाँ देवताओं की आज्ञा से उमापति महादेव के समीप जायेगा ॥२६॥ यह महातेजा वहाँ यथेष्ट कामना को प्राप्त करे वहीं यह प्रेतगण भक्त महातपा भी जायेगा ॥२७॥ जिसने पूर्वजों को तृप्त किया है वह पितरों के साथ पितृ लोक में जावे, नानालोकनमस्कृत दान व्रत वाले स्वर्ग जावें ॥२८॥ यह कल्याण रूप सवप्राणियों पर दया करने वाला है यह सर्वकामप्रद मनुष्य सर्व कामों से पूजना चाहिये ॥२६॥ द्विजाति को भूमिदान देनेवाला स्वर्ग जावे महानुग वीर वहीं ब्रह्मलोक में रहे ॥३०॥ विविध काम भोगों से सेव्यमान नरोत्तम महर्षियों से पूजित हो अक्षय्य अजर स्थान को प्राप्त करता है ॥३१॥ इति श्रीवराह पुराणे भगवच्छास्त्रे संसारचक्रे शुभाशुभ फलानु कीर्तनं नाम काशीराम शर्म्माकृत भाषाटीकायां पञ्चा-

धिक द्विशततमोऽध्यायः ॥२०५॥

अथ दौसौ छै वाँ अध्यायः

दोहा—द्वौसौ छै अध्याय में, करिसन्देश बखान।
शुभकर्म फलोदय कहे, नाचिकेत हु महान्॥

अथ शुभकर्म फलोदय प्रकरणम् ॥ ऋषि नीचेकेत ने कहा हे तपोनिष्ठ ब्राह्मणो ! चित्रगुप्त के कहने पर मैंने जो सन्देश सुना है, उसे सुनाता हूँ आपलोग सुनिये । १॥ इस सर्व अतिथियों का सत्कार करने वाले दान्त सब प्राणियों पर दया करने वाले अन्नदान देने वाले, शेष भोजन खाने वाले को हे महाभृत्य ! छोड़ दीजिये यह धर्मका निर्णय है मैं काल तथा मृत्यु के साथ प्रकृत हूँ मेरे समीप पापी तथा विकृत निवास करेंगे इसके गुणगान गगन में गन्धर्व तथा अप्सरा करेंगे २॥३॥४॥ दिव्य आसन दीजिये तथान्य यान दीजिये, तथा अन्य अन्य मन से जिस कामना को चाहता है, वह धर्मराज के शासन से शीघ्र दीजिये इसने पहिले अक्रिय दान दिये हैं॥५॥६॥ सहित अनुचरों के यह महा भाग भोगने या खाने की प्रेचा करे मेरे आदेश से यह महावीर यहाँ रहता है ॥७॥ स्वर्ग से विमान आरहे हैं वह श्रेष्ठयानों में अपने परिवार सहित बैठकर देवलोक में जाकर देवताओं से पूजित हो यावल्लोक पर्यन्त वही सुख पूर्वक निवास करेगा ॥८.६॥ यह जिस लोक में जायेगा सर्वदा कृतार्थ ही रहेगा जहाँ यह पवित्र रहेगा वहां मेध्य तथा पवित्र होगा ॥१०॥ अनेक कन्यादान देने वाला अनेक यज्ञ करने वाला सर्व कामनाओं से तृप्त हो वैष्णव पद को जाता है । ११॥ यह धीर वहां सहस्र अयुत वर्ष तक रमण करता है तदनन्तर मानुष लोक में श्रेष्ठ कुल में पैदा होता है ॥१२॥ यह प्राणियों पर अनुकम्पा करने वाला है इसकी पूजा कीजिये यह अयुत वर्ष तक वहां देववत् निवास करे ॥१३॥ तदनन्तर मानुषलोक में सर्वमानुष पूजित होता है जिसने निरन्तर उपानह, छत्र तथा जलपात्र दान दिया है उसका पूजन कीजिये जिसदेश में हजारों सभा हैं, यह मृदु शीतल हाथ से स्पर्श करता

है यह विद्याधर हैं तथा नित्य मुदित मानस हैं उसमें नित्य चार महा-पद्म वर्ष तक रहे पुनः समय से उस स्थान से च्युत हो मानुषलोक में आकर बहुसुन्दर स्त्रीवाले कुल में जन्म ग्रहण करे याने जन्म लेता है जिसने द्विजाति को दधि क्षीर तथा घृत दिया है ॥१४ १५।१६ १७ १८॥ वह हमारे समीप आवे इसकी पूजा कीजिये शीघ्र उसे वहां ले जाइये जहांकि चलायमान न हो॥१६॥ हजारों दधि पूर्णपात्र बान्धवों को विभागश देकर तथा स्वयं पीकर जहां अचल रहे वहाँ ले जावो ॥२०॥ तत्पश्चात् यह अनसूयक लोक में जावे और हजारों वर्ष तक वहीं निवास करे ॥२१॥ बहुसुन्दर नारियों से सेवित हो अमर होकर गोलोक में निवास करे ॥२२॥ तथा चित्र गुप्त का यह दूसरा भाषण भी है कि सर्वदेव मय सर्ववेदमय देवियां अमृत धारण कर महीतल में विचरती हैं यह तीर्थों का परम तीर्थ है इससे बढ़कर तीर्थ नहीं है ॥२३। २४। पवित्रों में पवित्र है पुष्टियों में परम पुष्ठि है अतः मेध्य कारण पहिले गाय दान देना चाहिये ।२५। दधि से सारे देवता दूध से महेश्वर घृतसे पावक, पायस से पितामह एकबार देने से भी तेरह वर्ष तक प्रसन्न रहते हैं अतः गायदान देकर गोमूत्र पीकर मनुष्य प्रसन्न हो बुद्धिमान होता है ।।२६।२७॥ पंचगव्य पान करने से वाजपेय यज्ञ का फल प्राप्त होता है तथा अश्वमेध यज्ञफल प्राप्त करता है गव्य परम मेध्य है गव्य से अन्य कोई वस्तु मेध्य नहीं है ।२८। दांतों में मरुद्गण गाय की जिह्वा में सरस्वती खुरमध्यमें गन्धर्व खुराग्र में पन्नग निवास करते हैं ।२६। सर्व सन्धियों में साध्यगण नेत्रों में चन्द्रसूर्य ककुद में सर्व नक्षत्र पूँछ में धर्म निवास करता हैं।।३०। अपान में सर्व तीर्थ प्रस्राव में जान्हवी नदी तथा नाना द्वीपयुक्त चारों सागर वास करते हैं रोमकूप में ऋषि गोमय में पद्मधारिणी और रोम में विद्या लक्ष तथा केशों में अयनद्वय निवास करते हैं ।३१।३२। धैर्य धृति शान्ति, पुष्टि, वृद्धि, स्मृति मेधा, लज्जा, वपु, कीर्ति तथा विद्या, शान्ति, मति, परमसन्तति आदि सब गाय के चलने पर गाय के साथ जाते हैं ।।३३।३४॥ जहां गाय हैं वहां सर्व जगत् देवदेव पुरोगम

रहता है जहां गाय रहती हैं वहां लक्ष्मी तथा सांख्य धर्म रहता है।३५। सर्व रूपों में वे अभिमत गाय रहती हैं विशाल भवनों में सर्व प्रासाद पंक्तियों में स्त्री पुरुष सुयंत्रित हो रत्ता करते शयनासन पानों में बैठे हुये भोगों में विविध भोगों से क्रीड़ा करते हजारों हैं वहां पान गृहों में अन्य पुष्पमाला से विभूषित हैं ॥३६॥३७॥३८॥ नाना प्रकार के भक्ष्य तथा भोजन संचय शयनासनपान घोड़े हाथी शुभलोचना स्त्री विविध प्रकार के वहां देखे हैं कोई स्त्रियां जल क्रीड़ा करती शोभायमान रहती हैं कोई उद्यानों में कोई भवनों में रहती हैं इससे बढ़कर कोई दूसरा स्थान नहीं है ॥३९।४०।४१॥ अहो सूत्रकृत शिल्प तथा रत्नों से अलंकृत शिल्प एवम् प्रकार एक घर से दूसरे में जाकर तदनन्तर समग्र कर्म महोदय को सम्यक् प्रकार देखकर पुनः मैं यमराज के समीप आया हूँ ॥४२ ४३ इतिश्रीवराहपुराणे संसार चक्रेशुभ कर्मफलो दयो नामकाशीरामशर्मा कृतभाषा टीकायां षडधिक द्विशततमोऽध्यायः।२०६।

अथ द्वौसौ सातवां अध्यायः

दोहा—द्विशतसप्त अध्याय में, नारद अरु यमराज।
पुरुष विलोभन बात सब, कहें धर्म के काज॥

अथ संसारचक्र पुरुष विलोभन प्रकरणम्॥ ऋषि पुत्र ने कहा—हे विप्रगण! स्वयं यमराज की सभा में जो कुछ मैंने कलप्रिय नारद से सुना है वह सुनिये तथा उस महात्मा के पूछने पर जो पुरातन आख्यान चित्रभानु से कहा है वह सुनिये जिस प्रकार राजा जनक ने दिव्य काम प्राप्त किये हैं वह सब कहता हूँ आपलोग सुनिये ॥१॥२।३ तप से द्योतित कान्ति वाला महातेजा नारद मुनि धर्मराज की सभा में आया ॥४॥ राजा ने स्वयं वेगसे आये नारद को देख यथान्याय पूजन तथा प्रदक्षिणा करके महातेजासूर्यपुत्र यमराजने कहा हे द्विजश्रेष्ठ नारद! आपका स्वागत हो आप भाग्य से मेरे समीप आये हैं। ५॥६॥ हे महामुने! आप धर्मज्ञ हैं, सर्वदर्शी हैं, सबधर्म वेत्ताओं में श्रेष्ठ हैं। तथा गान्धर्व इतिहास के विज्ञाता हैं ॥७॥ आपको आये देख हे विभो! हम पवित्र होगये हैं मेध्य होगये हैं हे मुनिसत्तम! यह देश

भी आपके आने से पवित्र होगया है ॥८॥ जो कार्य है जिसके योग्य है जो मनमें है हे भगवन् ! तथा अन्य जो कुछ उत्तम कार्य है उसे शीघ्र कहिये हे सुव्रत ! जो आपको प्रिय है तथा तपोमय सब द्विजातियों को जो प्रिय है वह तीनों लोकों में दुर्लभ है ।६।१०॥ एवम् धर्मराज का वचन सुनकर धर्मवेत्ता नारद कहने लगा कि जो आपने संशयास्पद पूछा है उसे कहता हूँ ॥११॥ नारद ने कहा–आप सत्य से तपसे, शान्ति से धैर्यसे नित्य धर्मके गोप्ता पाता नेता हैं । १२॥ भावज्ञ तथा कृतज्ञ आपके सिवाय दूसरा नहीं है सुव्रत ! मुझे बड़ा संशय है उसे सुनायिये ॥१३॥ व्रत नियम से अमरत्व किस प्रकार होता है सुरोत्तम ! तथा किस दान धर्म से तपसे अमरत्व प्राप्त होता है । १४। तथा किस कर्म से लोक में श्री कीर्ति तथा सुमहत्फल प्राप्त होता है किस कर्म से विगत ज्वर हो दुर्लभ शाश्वत स्थान को प्राप्त करते हैं तथा किस कर्म से पापिष्ठ लोकगर्हित नरकको जाते हैं यह मुझे बड़ा कौतूहल है आप तत्व से कहिये ।।१५।।१६। यम ने कहा हे तपोधन ! अधर्म से मनुष्य अनेक घोर बन्धनों को प्राप्त करते हैं ॥१७॥ हे मुनि सत्तम ! वह विस्तार से सब कहता हूं हे महाभाग ! वह सुनिये और सुनकर मनमें धारण कीजिये॥१८॥ यज्ञ न करने वाला सन्तान रहित भूमिदान न देने वाला नरक जाता है शूर शतवर्षी वेद पारग तथा पतिव्रता स्त्री और सत्य भाषण करने वाले नरक नहीं जाते हैं । अजित तथा जो शठता रहित है जो स्वामी के भक्त हैं जो अहिंसक हैं जो ब्रह्मचर्य धारण करने वाले हैं जो पतिव्रता हैं जो दानी हैं जो द्विज भक्त हैं जो अपनी स्त्री से प्रेम करने वाले हैं जो परदारा से गमन नहीं करते हैं जो अपने समान सबकी आत्मा को समझते हैं जो सब प्राणियों पर दया करने वाले हैं वे मनुष्य हाहाकार भयाकुल तमोगुण युक्त पापिष्ठ यातना स्थान नरक को नहीं जाते हैं ॥१६॥ ॥२०।२१॥२२॥२३॥ तथा जो ज्ञानवान हैं जो परम विद्या पारङ्गत हैं जो उदासीन हैं तथा जो स्वामी अर्थ प्राण त्यागता है वे नरक नहीं जाते हैं ।।२४। जो दानी हैं जो सब प्राणियों पर दया करने

वाले हैं तथा जो मातापिताकी सेवा करने वाले हैं वे मनुष्य नरकनहीं जाते हैं।२५। जो तिल, गाय, सुवर्णतथा शाश्वती पृथ्विीका दान करते हैं वे भी नरक नहीं जाते हैं ।।२६॥ जो यथोक्त यजमान हैं जो यज्ञ करने वाले हैं जो चातुर्मास्य व्रत करने वाले हैं जो द्विज अग्नि में आहुति देने वाले हैं जो गुरुकी आज्ञा पालन करने वाले हैं जो कृतज्ञ हैं कृति हैं जो मौनी हैं जो नित्य स्वाध्याय करने वाले हैं जो दान्त हैं तथा जो सभ्य हैं जो सर्व समय मैथुन नहीं करते जो जितेन्द्रिय हैं वे आत्मभावित मनुष्य मेरे समीप नहीं आते हैं।२७।२८।२६' और इन कर्मों के करने पर अमरत्व प्राप्त करता है सर्वकामना से निवृत्त हो निराशा युक्त हो सुजितेन्द्रिय होकर मनुष्य उस घोर नरक में नहीं जाता जहां कि वे पापकर्मी जाते हैं।३०।३१ नारद ने कहा-क्या दान ही श्रेय है या पात्र से फल प्राप्त होता है किस महत्कर्म करके स्वर्ग की प्राप्ति होती है।३२। हे सुव्रत ! जिस दानसे रूप, धनधान्य, आयु तथा श्रेष्ठ कुल मिलता है वह सुनाइये ॥३३॥ यम ने कहा-शुभ अशुभ कर्मों की गति देखना पूछना तथा विस्तार से कहना सैकड़ों वर्षों में भी पूरी नहीं देखी कही तथा पूछी जा सकती है ।।३४॥ जिस कर्म से जो फल मनुष्य को मिलता है वहकिञ्चिन्मात्र कहता हूं अनेकप्रकार के सौख्य गुणों में हुआ करते हैं।३५। हे मुनि श्रेष्ठ ! यह रहस्य आख्यान सुनिये जिसमे प्रेत भाव में निःसन्देह जो गति प्राप्त होती है वह सुनिये ।।३६।। तप से स्वर्ग मिलता है तथा आयु का प्रकर्ष और भोग तपही से मिलते हैं।३७। ज्ञान, विज्ञान, आरोग्य, रूप सौभाग्य सम्पत्ति आदि भोग तप से प्राप्त होते हैं मन से नहीं स्वयं मिलते ॥३८॥ हे महामुने ! एवम् प्रकार पुण्य से मिलता है मौन से आज्ञा दान से उपभोग तथा ब्रह्मचर्य से जीवन मिलता है ।।३९। अहिंसा से परम रूप तथा दीक्षा से श्रेष्ठकुल जन्म मिलता है फल मूल खाने वालों को राज्य तथा पत्ते खाकर तप करने वालों को स्वर्ग मिलता है ॥४०॥ दूध खाकर तप करने वाले स्वर्गजाते हैं गुरुसेवा करनेसे धन वृद्धि होती है श्राद्धदान करनेसे सन्तति होती है।४१। गौ आदिकी काल दीक्षाने अथवा

जो तृण शायी हैं और जो त्रिवर्ष तक जलपीकर तप करते हैं वे इष्ट लोक जाते हैं ।।४२।। यज्ञ करने वाला स्वर्ग जाता है तथा हे सुव्रत ! जो दश वर्ष तक उपहार करते हैं उनको जलपान से अधिक फल प्राप्त होता है ।।४३। रसों के प्रति संहार से सौभाग्य प्राप्ति होती है माँस के प्रतीहार से प्रजा आयुष्मती होती है ।।४४।। गन्ध माल्य निवृत्ति से पुष्कल मूर्ति होती है अन्नदान से मनुष्य स्मृति तथा मेधा को प्राप्त करता है ।।४५।। छत्रदान से वरिष्ठ घर होता है उपानद् का दान करने से रथ प्राप्ति होती है वस्त्र दान से सुरूपता तथा धन पुत्रादि से युक्त होता है ।।४६।। पानीय दान करने से शाश्वती तृप्ति होती है अन्नपानादि दान करने से काम भोगों से मनुष्य तृप्त होता है ।।४७।। जो मनुष्य ब्राह्मण के लिये पुष्पोपगन्ध फलोप गन्ध तथा पादप स्पर्श करता है वह सर्व समृद्धिवान् सस्त्रीक रत्न पूर्ण घर को प्राप्त करता है ।।४८।। वस्त्र अन्न पानीय रस आदि दान से वही प्राप्त करता है माला धूप गन्ध अनुलेपन पुष्प तथा मनोरम गृहों को दान करके ब्राह्मणों को देवे तो वह सुरूप सम्पन्न हो किसी भी रोग को नहीं प्राप्त करता है अशून्य बीजों से शयन से अभिराम घरको जो ब्राह्मण को देता है वह स्त्री समृद्धि तथा हाथी घोड़ों से वरिष्ठ अधिष्ठान को प्राप्त करता है तथा गायों को धूप दान करने से अष्टवसुओं के लोक को प्राप्त करता है ।।४९।।५०। ५१।। हाथी तथा गोवृषभ दान से स्वर्ग में शाश्वत सुख प्राप्त होता है घृत दान से तेज, और सुकुमारता, तैलदान से प्राणद्युति तथा स्निग्धता प्राप्त होती है।५२। क्षौद्र दान से नाना रस तृप्तता तथा दीपदान से कान्ति मान होते हैं ।।५३।। पायस से शरीर पुष्टि कृसर दान से स्निग्ध सौम्यता, फल दान से पुत्र तथा पुष्प दान से सौभाग्य मिलता है।५४। रथ दान से दिव्य विमान मिलता है तथा शिविका को प्राप्त करता है दान देखने पर भी मनुष्य सौभाग्य प्राप्त करता है और अभय दानसे सब कामना पूर्ण होती है ।।५५। ५६।। इति श्रीवराह पुराणे संसार चक्रे पुरुष विलम्भनं नाम काशीराम शर्माकृत भाषाटीकायां सप्ताधिक द्विशततमोऽध्यायः। २०७।

अथः द्वौसौ आठवाँ अध्याय

दोहा—द्विशत आठ अध्याय में, पतिव्रतोपाख्यान।
ब्राह्मण तप प्रभाव से, यमशिर चढ़ते आन॥

अथ पति व्रतोपाख्यान वर्णनम् ॥ ऋषिपुत्र ने कहा-यमराज इस प्रकार कहरहा था कि मुहूर्त मात्र में सूर्यसमान देदीप्यमान विमानों में बैठकर तपसे सिद्ध हुये सपत्नीक सबान्धव सानुराग क्रोध युक्त ब्राह्मणों को स्वर्ग जाते देख यमराजा विवर्णवदन हो प्रभातेज रहित होगया क्रोध से अत्यन्त दुःखी होगया उस धर्मराज को उस प्रकार निष्प्रभ देख तपोधन नारद मुनि उसके मनोगत भावको जानकर कहने लगा ॥१॥२॥३॥४॥ आप पशुपति शिव के समान शोभायमान हैं याने दूसरे शिव स्वरूप हैं आपका शोभन वदन किस कारण क्षण भर में विवर्णता को प्राप्त हो गया है ॥५॥ श्वास लेते हुये नाग के समान क्यों दुःखी हो रहे हो हे राजन् ! आप किससे डरते हैं यह मैं जानना चाहता हूँ ॥६॥ यम ने कहा-सच ही मेरा वदन विवर्णता को प्राप्त हो रहा है वह सुनिये ॥७॥ जो ब्राह्मण मायाचार हैं जो उञ्छवृत्ति परायण हैं दृढ़स्वाध्याय तप वाले हैं ह्रीं वाले हैं निन्दानकरने वाले हैं अतिथि प्रिय तथा जितेन्द्रिय हैं वे अहंमानी सब ब्राह्मण मेरे मस्तक पर पैर रख ऊपर होकर जाते हैं ॥८॥९॥ वे मेरे समीप नहीं आते वे मेरे वश में नहीं हैं सहित पत्नी परिवार के वे मेरे मस्तक पर जाते हैं ॥१०॥ दिव्यगन्ध से विलिप्त अङ्ग वाले माल्य से भूषित वस्त्र वाले मेरे माल्य को सूजते हैं हे द्विजोत्तम ! इसीलिये मैं विवर्ण हुआ हूं ।११। मृत्यु किसके लिये है मृत्यु किस प्रकार होवे हे मृत्यो ! क्या तू नहीं कहता है कह तू लोक में निरर्थक होगया है ।१२। सदा लोभ वालों को मारता है धर्म रहित पापियों को मारता है इन तपसे सिद्ध-वालों के लिये मैं यहां विग्रह वाला नहीं हूँ ।१३। मैं महात्माओं का निग्रह अनुग्रह करने को समर्थ नहीं हूँ तथा रोकने को समर्थ नहीं हूं इसीलिये मैं दुःखी हो रहा हूँ ॥१४॥ इसी समय विमान में महा-

कान्ति वाली सानुगा सपरिच्छदा पतिव्रता अपने पति के साथ बड़े बड़े तूरी आदि बाजे के शब्द के साथ ही वहाँ पर पहुँची वह धर्म को जानने वाली धर्म वत्सला विमान में बैठी धर्मराज हित के लिये सर्व-सत्व सुखा वह विचित्र वाक्य बोलने लगी । १५॥१६॥१७॥ पति व्रता ने कहा हे धर्मराज ! हे महा बाहो ! आप कृतज्ञ हैं सर्व सम्मत हैं आप तपस्वी ब्राह्मणों में ईर्ष्या न कीजिये ॥१८॥ हे वीर ! इन तप वालों का माहात्म्य है तथा बल है वेदपारग ब्राह्मण सब के देवता हैं ब्राह्मणों में क्रोधयुक्त मात्सर्य नहीं करना चाहिये ॥२०। तुम्हे शुभ-शुभ कर्म देखकर नित्य मनस्वियों की पूजा करनी चाहिये, और सज्जनों के साथ कभी राग तथा रोष मोह नहीं करना चाहिये ॥२१॥ आकाश में बिजली के समान चलती हुयी प्रतिव्रता को देख धर्म राजने उसकी पूजा की ॥२२॥ एवं नारद ने भी देख कर धर्मराज से कहा ॥२३॥ नारद ने कहा हे राजन् ! जिसका आपने पूजन किया है, और जो आपको हित वाक्य कहकर चली गयी है वह महा-भाग्य शाली सुरूप श्रेष्ठ स्त्री कौन है मुझे बड़ा कौतूहल है मैं यह जानना चाहता हूं आप संक्षेप से यह रहस्य मुझे सुनाइये ॥२४॥२५। यमने कहा मैं आपको परम शोभन कथा सुनाता हूँ, जिसलिये कि मैंने इसका पूजन किया है वह सुनिये । २६ । हे मुने ! पहिले कृतयुग में महायश तेज वाला सत्य प्रतिज्ञा वाला निमि नाम का राजा था ॥२७॥ उसका पुत्र मिथि नाम का हुआ और उस मिथि का नाम जनक से जनक भी हुआ है उसकी रूपवती नाम की भार्या पति की भलाई करने में तत्पर रहती थी ।२८। मिथिकी वह रूपवती भार्या पति की भक्ति किया करती थी तथा परम प्रसन्नता से पति की आज्ञा पालन किया करती थी ।।२९॥ और वह महाभाग्य शाली राजा मिथि भी सर्व प्राणियों की भलाई करने में तत्पर रहता था, धर्मात्मा था, महात्मा था महातपा था तथा सत्य प्रतिज्ञा वाला था ।।३०॥ वह इस समग्र पृथिवी का पालन धर्म से करता था, उसके शासन करने पर उसके राज्य में बुढ़ापा, मृत्यु तथा व्याधि आदि किसी को नहीं होते थे ॥३१॥ उस महाप्रतापी

के राज्य में पर्जन्य समय समय पर वर्षा करता था, एवं उसमहात्मा का राज्य सर्व गुण सम्पन्न था।३२। उस के राज्य में कोई रोग से पीड़ित अथवा दुःखित नहीं दीखता था कदाचित् बहुत समय पश्चात् मिथिलाधिप राजा को नम्रता पूर्वक रानी ने वचन कहा।३३॥३४॥ रानी ने कहा नौकरों का, द्विजाति का तथा परिजन का जो कुछ धन पृथिवी में आपके घर में है, वह सब आपने विनियुक्त किया है, तथा सानिध्य किया है हे राजन्! आप केवल भोजन प्रशंसा के अलावा कुछ नहीं जानते हैं वह कोई नियम नहीं है, हमारा फूलों का मोल भी नहीं लगता है, न कभी गवादि का दान न कभी वस्त्र दान है और न कभी पात्र का वार्षिक हो होता है हे सुव्रत हे महाराज मेरा कुछ नहीं दिखाई देता है हे नराधिप! मुझे जो कुछ करना है वह कहिये आप जैसी आज्ञा दें मैं करने को तत्यार हूं॥३५॥३६॥३७॥३८॥३९॥ राजाने कहा हे प्रिये! उपरोध मे विप्रिय कहना ठीक नहीं है, हे देवि! मैं तेरा तथा परिजन का अप्रिय नहीं देखता हूं।४०॥ हे प्रिये! यदि मानती हो तो यथा शक्ति मैं वह कहती हूं यह सौवर्ष व्यतीत होगये हैं वर्तमान में हवन करूँगा, हे प्रिये! कुदाल याने कोविदार काष्ठ से क्षेत्र बनाऊँगा तदनन्तर निः सन्देह तत्व से धर्मविधि प्राप्त करेंगे।४१॥४२॥ जो जो भक्ष्य भोज्य हैं उनका धर्म करके तदनन्तर तुम सुख प्राप्त करोगी राजा के इस प्रकार कहने पर रानी कहने लगी॥४३॥ रानी ने कहा–हे राजन्! आपके हजारों नौकर हैं तथा हाथी महिष ऊँट खच्चर गधे आदि हजारों हैं हे राजन्! ये सब आपका यथेप्सित कार्य क्यों नहीं करते हैं।॥४४॥४५। राजाने कहा–हे वरानने। जो मेरे नौकर हैं वे नियुक्त वार्षिक तथा इन सब कर्मों को करते हैं।॥४५ हाथी घोड़े बैल खच्चर गधे ऊँट अनेक हैं हे शोभने। सब के सब कार्य में नियुक्त किये हैं।४७। हे अनिन्दिते! सोना चांदी ताम्र त्रापुष तथा लोहा आदि सब कार्यों में नियुक्त हैं॥४८॥ हे देव। मैं सुवर्ण लोह आदि कुछ

नहीं देखता हूं जिससे कि मैं कुद्दाल काष्ठ क्षेत्र सुसमाहित हो करूँ ॥४६॥ उस राजा के इसप्रकार कहने पर रानी हृष्टपुष्ट मन होकर राजा से कहने लगी ॥५०॥ हे राजन् इच्छानुसार चलिये मैं आपके पीछे से आती हूँ इस प्रकार कहने पर राजा रानी सहित चलपड़ा ॥५१॥ तदनन्तर राजा और रानी क्षेत्र ढूँढने लगे बहुत दूर जाकर राजा यह कहने लगा ॥५२॥ हे वरवर्णिनि ! यह मेरा कल्याण रूप स्थान है इसमें बैठिये जबतक कि मैं इन गुल्म कण्टकों को काटता हूँ हे प्रिये ! तुम इनको शुद्ध कीजिये तदनन्तर मैं आपके कर्मयोग को यथोप्सित प्राप्त करूँगा ॥५३॥५४॥ हे तपोधन राजा के इसप्रकार कहने पर रानी हँसती हुयी मधुर वाक्य बोलने लगी ॥५५॥ यहां पार्श्व में वृक्ष तथा सौवर्ण गुल्म दिखायी देता है परन्तु यहां पानी का सानिध्य नहीं दीखता है ॥५६॥ हृद्रोग कारक क्षेत्र यहां पर किस प्रकार क्यों करें यह नदी है यह वृक्ष हैं यह समांसल भूमि है ॥५७॥ इसमें क्रिया कर्म किस प्रकार गुणकारक होगा रानी के इस प्रकार कहने पर राजा कहने लगा प्राणियों को गुणवत्सल राजा ने सानुनय शुभ वाक्य कहा कि हे प्रिये ! पूर्वगृह में पूर्व तथा विनियुक्त होता है हे सुन्दरि ! पानीय के पार्श्व तथा सन्निकृष्ट होने से चतुर्थ जन पर्यन्त यहां कोई नहीं दिखाई देता है हे महादेवि ! यहां किसी की बाधा नहीं है इस प्रकार कह भार्या के साथ उस क्षेत्र को शोधने लगा ॥५८॥५६॥६०॥६१॥ गगन मण्डल में सदा सूर्य उग्ररूप से तपने लगा तब वहां समृद्धशाली निदाघ ऋतु आई ॥६२॥ अति दारुण घाम होने लगे वह समय अति दारुण था तब वह रानी भूख प्यास से व्याकुल हुई ॥६३॥ हे सुव्रत ! गुणप्रवाह से ताम्र समान वर्ण वाले उस रानी के पैर उस भूमि में सन्ताप को प्राप्त होगये मध्यान्ह समय सूर्य की किरणें अग्नि के समान सन्तापित करने लगीं तब वह रानी सन्तापित होकर अपने पतिसे इसप्रकार कहने लगी ॥६४।६५। हे महाराज ! गरमी से पीड़ित होकर मैं बहुत प्यासी हूँ हे राजन् ! प्रसन्नता पूर्वक मुझे शीघ्र पानी पिलायिये ॥६६॥ इसप्रकार कह कर दुःखपीड़ित हो विह्वलता से रानी जमीन पर गिर पड़ी और

गिरते समय विह्वलता से उसकी दृष्टि सूर्य पर पड़ी ॥६७॥ यदृच्छा पूर्वक लेटती हुयी ने सूर्य को क्रोध से देखा उसके क्रोध युक्त देखने से आकाश में सूर्य भयभीत होकर डगमगाने लगा और आकाश को छोड़कर भूमि में गिर पड़ा तदनन्तर राजा स्वभाव विरुद्ध कार्य देख कहने लगा कि सूर्य भगवान् आकाश मण्डल को छोड़कर क्यों कर पृथिवी मंडल में आये हैं क्या करूँ सर्वलोक नमस्कृत महातेजा सूर्य पृथिवी पर आगया है ॥६८॥६९॥७०॥ राजाके इसप्रकार कहने पर सूर्य नम्रता पूर्वक राजा से कहने लगा कि हे राजन् ! यह शुभाङ्गी पतिव्रता मेरे ऊपर क्रोधित होगयी है ॥७१॥ हे राजन् ! मैं तेरे कार्यानुशासन हूँ। इसीलिये मैं आकाश छोड़ कर यहां आया हूँ त्रैलोक्य में इसके समान कोई दूसरी स्त्री नहीं है ॥७२॥ स्वर्ग लोक अथवा मृत्यु लोक में ऐसी कोई नहीं है अहो इसका बड़ा ही सत्व है इसका परम तप है इसका धैर्य्य इसकी शक्ति आश्चर्य जनक है आपके एवं प्रशंसित हैं हे महाभाग ! तथा यह आपके चित्तानुसारी है ।७३।७४। यह आपके अनुरूप है तपस विशुद्ध है पतिव्रता है साध्वी है तथा नित्य आपके हित में तत्पर है ।७५। हे महाभाग ! इन्द्रकीशची के समान आपकी रानी है पात्रवाले ने पात्र प्राप्त करलिया है सुकृत कर्म का महत्फल है ।७६। जिससे कि सुयंत्रित अनुरूप सुरूप हुआ है आपका कार्य निष्फल न होवे ।७७। जिसप्रकार आपके मन में मैं वह दपित क्षेत्र बनाइये हे महाराज ! भोजन के लिये आपके सिवाय दूसरा नहीं हैं ।७८। निश्चयसे फलदयशस्य और कामद होगा इसप्रकार कह सूर्यने जलपात्र छोड़ा और सूर्यने रानीके लिये परम प्रसन्नता से जूते और छत्र तथा दिव्य अलङ्कार भूषण दिये ॥७९॥८०॥ उनके पुण्यके विशेष होने से उन पुण्य कर्माओं को उपभोग सुख के लिये एवं सामग्री देकर सूर्य ने कहा एवं सूर्य भगवान् के कहने पर राजा ने वैसा ही किया राजा जनक ने प्रिया के हित के लिये वैसाही किया तदनन्तर राजा ने रानी को पानी पिलाया पानी पीने से रानी को कुछ चैन आई और निर्भय होकर राजा से कहने लगी ।८१।८२।

॥८३॥ रानी ने वह आश्चर्य देख विस्मय से उत्फुल्ल लोचन होकरकहा हे राजन् ! यह शुभ जल किसने दिया है तथा दिव्य छत्र उपानह किसने दिये हैं यह मेरा सन्देह मिटाइये राजा ने कहा हे महादेवि ! यह विवस्वान् नाम के सूर्य भगवान् हैं आपकी अनुकम्पासे आकाश छोड़ कर यहां आये हैं राजा के इस प्रकार कहने पर रानी अपने पति राजा से कहने लगी ।८४।८५।८६। हे स्वामिन् ! इस सूर्य भगवान् का कौन सा प्रिय कार्य करूँ आप पूछिये और सूर्य भगवान् की मन कामना मालुम कीजिये रानी के इस प्रकार कहने पर राजा हाथ जोड़ शिरसे प्रणाम कर सूर्य भगवान् से पूछने लगा कि भगवन्! मैं आप का कौनसा प्रिय कार्य करूँ राजाके इस प्रकार कहने पर सूर्य ने कहा हे महाराज ! मुझे स्त्रियों से अभय होवे । सूर्य के इस वचन को सुनकर राजा अपनी प्रियासे सुनाने लगा राजा से सूर्य कामना सुनकर रानी ने कहा।८७।८८।८९। ९०। परम प्रसन्नता से उस राजा की मनकी प्यारी रानी ने सूर्य रश्मि वारणार्थ छत्र कुण्डिका देकर और पादत्राणार्थ पाद त्राण देकर कहा हे महाभाग सूर्य भगवन्! आपने जो अभय वरदान की मांग की है वह आपको अभय होवे हे विप्र एवं प्रकार मैं पतिव्रता की पूजा तथा नमस्कार करता हूं ॥९१॥९२॥९३॥ इति श्री वराह पुराणे संसार चक्रे -पति व्रतोपाख्यानं नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायां मष्टाधिकी शततमोऽध्यायः ॥२०८॥

अथ दोसौ नौवाँ अध्यायः ॥

दोहा—दो सौ नौ अध्याय में नादर से यमराज ।
पतिव्रता महात्म्य सब, कहे धर्म के काज ॥

अथ पतिव्रता महात्म्य वर्णनम्॥ नारदने कहा हे राजेन्द्र! किस कर्मसे तप से तपोधन उत्तम गति को जातेहैं वहमुझे सुनाइये ।१। नारदके इसप्रकार कहने पर यमराज ने कहा हे विप्र ! उसका नियम नहीं है तथा तप नहीं है हे महामुने ! उपवास दान तथादेव नहीं है हे विप्र ! प्रतिव्रता को जिस प्रकार रहना चाहिये वह सुनिये ॥१॥२॥३॥ पति के शयन करने

पर जो शयन करती है उठने पर उठती है और पति के भोजन करने पर जो भोजन करती है हे विप्र ! वह निश्चय से मृत्यु को जीतती है ।४। जो पति के मौन होने पर मौन होती है और स्थित होने पर जो स्वयं स्थित होती है वह मृत्यु को जीतती है अन्य में कुछ नहीं देखता हूँ ।५। हे तपोधन ! जो एकदृष्टि एक मनही पति की आज्ञा पालन करती है उससे हम तथा अन्य सब डरते हैं ।६। वह परम शोभना साध्वी देवताओं की भी पूजनीय है जोकि पति की आज्ञा का उल्लंघन नहीं करती है ।७। हे विप्रेन्द्र ! जो वर्तमान भी हो अथवा सदा प्रख्यात भी हो कभी अन्य दैवत पति याने पति के अलावा अन्य किसी का भी ध्यान चिन्तन नहीं करती है एवं नित्य पति के हित में तत्पर पतिव्रता स्त्री मृत्यु के मुख में नहीं जाती है अर्थात् सीधी पतिसहित स्वर्ग जाती है ।८।९। हे नारद जो अनुवेष्टन भाव से अपने पति के साथ जाती है वह कभी भी मृत्यु के मुख में में नहीं जाती है।१०। जो स्त्री यही मेरी माता है यही मेरा पिता है यही मेरा बन्धु है यही मेरा देवता है इसप्रकार कह नित्य पति की सेवा करती है वह सदा मुझ यमराज को जीतलेती है।११। जो साध्वी प्रतिव्रता नारी है उसके लिये मैं हाथ जोड़े खड़ा रहता हूं पतिका ध्यान करने वाली पतिके पीछे चलने वाली पतिके शोक करने पर शोक करने वाली नारी मृत्यु द्वार को नहीं देखती है जो अनेकशः गीतवादित्र नृत्यों को न कभी देखती है तथा सुनती है वह मृत्युद्वार को नहीं देखती है स्नान करते समय ठहरते समय अथवा प्रसाधन के शमार्जन जो मन से भी अन्य किसी को नहीं देखती हैं वह मृत्यु द्वार को नहीं देखती हैं जो देवपूजन करते भोजन करते हुये पति को भी चित्त से नहीं त्यागती है वह मृत्यु द्वार को नहीं देखती है सूर्योदय से पहिले उठकर ॥१२॥१३॥१४॥१५॥१६॥ नित्य घर का मार्जन करती है वह मृत्यु द्वार को नहीं देखती है जो नित्यशोचा चार युक्त है तथा जिसके चक्षु देह और भाव नित्य सुसंवृत है वह मृत्यु द्वारको नहीं देखती है जो पति चित्तानुसारीहो पतिका मुख देखती है तथा

पति का हित चिन्तन करती रहती है वह मृत्यु द्वार को नहीं देखती है एवं कीर्ति वालों के लोक में आकाश में देवता दीखते हैं ।।१७।
।।१८।।१९।।मनुष्यों की पतिव्रता स्त्री उसलोक में दिखाई देती है हे विप्र ! प्रथम सूर्य ने पतिव्रता कही है अतः मैंने जैसे सुना है वह गुप्त रहस्य आपको सुनाया है अतः मैं इसकी पूजा करता हूं ।।२०।।२१।।
इति श्रीवराह पुराणे संसार चक्रे पतिव्रता माहात्म्यं नाम काशीराम शर्माकृत भाषाटीकायां नवाधिक द्विशततमेऽध्यायः ।।२०९।।

अथः दोसौ दशवाँ अध्याय

दोहा—दोसौदश अध्याय में, पतिव्रता माहात्म्य ।
नारदसे यमराज पुनि, कहे सकल आध्यात्म्य ॥

पुनः पतिव्रता माहात्म्य वर्णनम् नारद ने कहा आपने सूर्यमतानुसार रहस्य धर्माख्यान महायश स्त्रियों के पतिव्रत धर्म माहात्म्य कहा है ।१। यह मुझे सर्व प्राणियों के विषय में बड़ा ही कौतूहल है उसे मैं सुनना चाहता हूँ आप सुनाइये ।२। जो दुःख से सन्तप्त सुख के लिये सैकड़ों नाना प्रकार के व्रत उपायों से तीव्र तप करते हैं सर्व प्रिय अप्रिय को छोड़कर मनसे आत्मा का चिन्तन करने वाले कितने ही सुख कांक्षा करते हुये भी किसी से दुःख पाते हैं लोक में श्रुति प्रचलित है कि धर्म कल्याण कारक होता है पुनः सम्यक प्रकार धर्ममें लगे हुये की पाप करने की मति किस प्रकार होती है ।।३ ४।।५।। यह किसका कार्य है कौन इस कार्य को करता है तथा कौन करवाता है कौन एक चतुर्विध भूतग्राम को खींचता है ।।६।। अथवा किस द्वेष करके उसकी मति प्रवर्तित होती है इस लोकमें सुदारुण सुख दुःखादि करता है हे भगवन् ! देवताओं से भी दुर्विज्ञेय इस गुप्त बात को यदि मैं जानने के योग्य हूं तो आप मुझे सुना

होता है मैं वचन व्यवहृत करता हूँ जो स्वयं किये को करता है।११।१२। हे ब्रह्मन् ! ब्रह्मर्षि गण सेवित इस दिव्य सभा में यथादृष्ट यथाश्रुत वार्ता को मैं कहूँगा ।१३। सम्भूत से जो स्वयं किया गया है मनुष्य अपने किये कर्मों को भोगता है आत्मा को आत्मा ही गिराता है और कुछ कर्म कराता है ।१४। वायु से भावित सज्ञा संसार में दृढ़ होती हैं उसी सुकृत अथवा दुष्कृत रूप वायुभावित संज्ञा को मनुष्य करता है सर्व प्राणिमात्र करता है ।१५। अभिधा ताभिभूत जन्तु आत्मा से आत्मा का उद्धार करता है आत्मा ही शत्रु है आत्माही बन्धु है आत्माका कोई भी बन्धु याने मित्र नहीं है ।१६। बन्धु परिक्लेश बन्ध पूर्व कर्मोंद्वारा निर्मित किया गया है जीव सैकड़ों जन्म धारण करके जगत् में अपने किये कर्मों को भोगता है ।१७। यह मिथ्या प्रवृत्तशब्द सर्वशः जगत् में घूमता है जितने वह कर्म करता है उतने स्वयंकृत कर्म हैं ॥१८॥ जैसे जैसे मनुष्य के पाप क्षीण होते जाते हैं वैसे ही मनुष्य की शुभ बुद्धि बढ़ती जाती है ।१६। संसारमें दोष को प्राप्त हुये जायमान प्राणि ने पाप कर्म क्षय से भाव पतता को प्राप्त होता है ॥२०॥ मनुष्य पौर्वदैहिकी शुभा शुभकरी बुद्धि को प्राप्त करता है प्राणी दुष्कृत कर्मों से वा अपने किये शुभ कर्मों से क्लेशक्षय पाप हरने वाले शुभ कर्मों को करता है ।२१। मनुष्य शुभ अशुभ तथा कर्म अकर्म को प्राप्त करके विवृत विमल कर्म में देवताओं से पूजनीय होता है ।२२। शुभ फल की प्राप्ति स्वर्ग है और पापफल प्राप्ति नरक है नकोई देने वाला है और न कोई हरने वाला दिखाई देता है ॥२३॥ नारद ने कहा यदि एवं प्रकार अपने किये कर्मों का ही शुभा शुभ फल मनुष्य प्राप्त करता है तो जिस मन कर्म से किये तप आदि उपाय से शुभ की वृद्धि तथा अशुभ का क्षय हो जिस प्रकार जन्तु रोहित न हो वह आप कहिये ॥२४॥२५॥ यम ने कहा यह पुण्य है पवित्र है तथा अशुभों को शुभफल देने वाला है मैं तुझे पापनाशक उपाय सुनाता हूँ।२६। पाप पुण्य कर्ता नित्य विश्व तथा जगत् के कर्ता जिसने यह चराचरत्रैलोक्य रचा है उस अनादि निधन

मध्य सुर असुरों से दुर्विज्ञेय को सम्यक् प्रमाण करके मैं वह कहता हूं ॥२७॥२८॥ जो सब प्राणियों में समान बर्ताव रखता है जितात्मा है शान्तमानस है वह सर्व वेद वेत्ता ज्ञानवान् मनुष्य पापों से मुक्त होता है ॥२९॥ जो तत्वार्थ को जानता है तथा जो सम्यक् प्रकार प्रकृति पुरुष को जानकर मोह को नहीं प्राप्त होता वह शाश्वत पद को प्राप्त करता है ।३०। गुण, अगुण, चण, अत्तण का जो परिज्ञाता है तथा जो असंमूढ़ है वह पापों से मुक्त होता है । ३१॥ जो मनुष्य स्वदेह परदेह में सुख दुःख का बराबर विचार करता है वह निश्चय से पाप मुक्त होता है ।३२' जो सब प्राणियों में अहिंसक है तथा तृष्णा क्रोध रहित है सदा शुभ न्याय वाला है वह पापों से मुक्त होता है ।३३। प्राणायामों से अधः सन्धारणाओं का निग्रह कर जो व्यवस्थित मना है वह पापों से मुक्त होता है ।३४। जो सर्वतः निराश रहता है जो इष्टार्थों में लालच नहीं करता तथा परीतात्मा प्राण त्याग करता है वह पापों से मुक्त होता है ।॥३५। श्रद्धालु, जितक्रोध, परद्रव्य में लालच न करने वाला तथा जो अनसूय मनुष्य है वह पापों से मुक्त होता है ॥३६॥ गुरु सेवा करने वाला हिंसा न करने वाला क्षुद्रस्वभाव रहित मनुष्य पापों से मुक्त होता है ३७। जो शुभ कर्म करता है अशुभ कर्म त्यागता है तथा जो मङ्गल में परम है वह पापों से मुक्त होता है ।३८॥ जो विशुद्ध अन्तरात्मा से तीर्थाटन करता है पाप से उपरत रहता है वह पापों से मुक्त होता है ।३९। जो उठकर भक्तिपूर्वक ब्राह्मण के समीप जाकर दान देवे वह पाप मुक्त होता है ।४०। नारद ने कहा-हे परन्तप! आपने जो कहा है वह सबके लिये श्रेय है हित है उपपन्न है युक्तियुक्त है।४१।हे प्रभो ! सम्यक् तत्वार्थ दर्शित विविध कारणोपायों से मुझे पहले संशय हुआ था वह आपने दूर करलिया है ।४२। हे योगके जाननने वालों में श्रेष्ठ! यदि उससे भी कोई छोटा उपाय पापनाश करने वाला है तो बताइये ।४३। योग धर्म का पहिले दुष्कर कह ही दिया है लोक में पाप नाशक अन्य सुख साधन है सो कहिये ।४४। जिससे सुदारुण पापकृत दोष दूर होजायं वह अल्पोपायं कर सुपाय कहिये ।४५। जो इसलोक

ध्यान करता है वह पापों से मुक्त होता है और जो मनुष्य सैकड़ों प्राणायाम करे वह भी पापों से मुक्त होता है ॥६४॥६५॥ इति श्रीवराह पुराणे भगवच्छास्त्रे संसारचक्रे पापनाशनोपाय निरूपण नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायां दशाधिक द्विशततमोऽध्याय ।२१०।

अथ द्वौसौ ग्यारहवाँ अध्यायः

दोहा—दो सौ ग्यारह में कहें, पापनाशनोपाय ।
नारदसे समुझायकर, यमराज सकलगाय ॥

अथ पुनः पापनाशोपाय वर्णनम् ॥ ऋषिपुत्र ने कहा धर्मराज के इस प्रकार शुभ वचन को सुनकर भाव और भक्ति से नारद पुनः कहने लगा ॥१॥ नारद ने कहा हे महाबाहो ! हे धर्मराज ! आप चर अचर सब प्राणियों में समान वर्ताव रखते हैं हे पितरों के समान पराक्रम वाले ! ब्राह्मणों के हित के लिये जो आपने प्रदक्षिण कहा है वह श्रुतपरं पद यह समाख्यान मैंने सुन लिया हैं ॥२॥३॥ हे महाभाग ! तीनों वर्ण यज्ञ सामान्य भागी हैं शूद्र वेद से ब्राह्मणों ने बहिष्कृत किये हैं ।४। हे महामते ! जिस प्रकार आपकी सब प्राणियों में समता है उसीप्रकार उनके लिये भी श्रेय कहना चाहिये ।५। शूद्रों के लिये भी कर्मानुसार जो हित वाक्य है उसे कहिये यमराज ने कहा हे सुव्रत ! चातुर्वण्य का का जो नित्यधर्मयुक्त कल्याण होता है उसे कहता हूँ केवल श्रु संयोग से श्रद्धा पूर्वक तथा नियम से पापनाशार्थ जो कर्म किये जाते हैं उनको कहता हूँ आप सुनिये गाय पवित्र हैं मांगल्य हैं और देवताओं की भी देवता हैं ।६।७।८। जो मनुष्य भक्ति पूर्वक उन गायों की सेवा करता है वह पापों से मुक्त होता है सोम्य मुहूर्त में जो पञ्चगव्य का पान करता है उसके यावज्जन्म के किये पाप तत्क्षण नष्ट हो जाते हैं जो मनुष्य गोपुच्छ से अपने मस्तक पर जल छिड़कता है वह सब तीर्थोंमें स्नान करने का फलप्राप्त करके पापों से मुक्त होता है तथा हे नारद! जो मनुष्य रोहिणी नक्षत्र में गोमूत्र से स्नान करता है उसके सर्वपाप कृतदोप

शीघ्र नष्ट होते हैं जो मनुष्य गाय के स्तन से निकली दूध की धाराको शिर से धारण करता है वह पापों से मुक्त होता है जो ब्राह्मण नित्य उठ स्नानादि से सुद्ध हो परम भक्ति से गाय को प्रणाम करता है वह पापों से छूट जाता है उदय हुये सूर्य को जो परम भक्ति से ॥६॥१०॥ ॥११॥१२॥१३॥१४॥ प्रणाम करता है वह पापों से मुक्त होता है दधि अक्षत तथा तीन अञ्जलियों से जो नित्य सूर्य भगवान् की पूजा करता है उसके ऊपर प्रसन्न हो उसके सारे पूर्व सञ्चित पापों को भस्म कर लेता है ।१५।१६। उतना ही औदुम्बर पात्रस्थ दधिमिश्र पौर्णमासी के दिन चन्द्रमा को देवे तो पाप मुक्त होता है ।१७। अरुन्धती, बुध, तथा सब महामुनियों को पूजकर और वेद विधि से उनको दधिअक्षत अञ्जलि देकर जो एकग्रमनसे हाथ जोड़ नमस्कार करे उसके सब पाप शीघ्र नष्ट हो जाते हैं ।१८।१६। जो भक्ति पूर्वक ब्राह्मण को तृप्त करके ब्राह्मण की सेवा करता है और प्रयत चित्त हो नमस्कार करता है वह पापों से मुक्त होता है ।२०। विपुव योगों में जो पवित्रता से दूध का दान करता है वह यावज्जन्म के किये पापों से मुक्त होता है ।२१। प्राचीनाग्रकुशाओं को करके वृष स्थापित कर ब्राह्मणोंके साथ उसे नमस्कार कर मनुष्य पापों से मुक्त होता है ।२२। दक्षिणावर्त सव्य से प्राक्स्रोतस नदी में विधिवत् अभिषेक करके मनुष्य पाप मुक्त होता है ।२३। दक्षिणावर्त से शंख से हाथ में जल लेकर प्रसन्नता पूर्वक उस जलको जो विप्र शिर से धारण करता है उसके जन्मभर के किये सारे पाप तत्क्षण नष्ट हो जाते हैं पूर्व वाहिनी नदी में जाकर नाभिमात्र जलमें स्थित होकर स्नान करके काले तिलों से मिश्रित सात अञ्जलि देवे तीन प्राणायाम करके ब्रह्मचारी जितेन्द्रिय मनुष्य के यावज्जन्म के किये सारे पाप शीघ्र नष्ट होते हैं विना छिद्र वाले पद्मपत्र द्वारा सर्वरत्नोदक से जो मनुष्य तीन बार स्नान करता है वह सब पापों से मुक्त होता है हे मुने ! तुझे गुप्त से गुप्त और भी सुनाता हूँ ।२४।२५।२६। ।२७।२८। कार्तिक शुक्ल पक्षकी भुक्तिमुक्ति देने वाली प्रबोधिनी नामकी

एकादशी है ।२६। जो वह विष्णु की अनेकरूपिणी अव्यक्ता परा मूर्ति है हे मुनि पुङ्गव ! वह द्वादशी मानुप लोक में भेजी है ।३०। जो नारायण परायण हो विधिवत् उसका उपवास करते हैं हे मुने ! उनके कोटि जन्म के पाप नष्ट होते हैं ।३१। एकादशी के उपलक्ष्य में पहिले सर्वलोक हित के लिये पृथ्वी ने वाराह भगवान् से पूछा है ।३२। पृथ्वी ने कहा हे प्रभो ! इस घोर कलियुग में मनुष्य पाप करने में लगे रहते हैं ब्रह्मधन-हरण कहते हैं तथा ब्राह्मण का वध करते हैं ॥३३। हे देव ! गुरु से द्रोह तथा मित्र से वैर स्वामि से वैर और दूसरे की भार्या से गमन करने वाले हैं ॥३४॥ और हे सुरेश्वर ! दूसरे का धन हरण करने वाले हैं, अभक्ष्य भक्षण करने वाले तथा वेद ब्राह्मणों की निन्दा करने वाले हैं दाम्भिक हैं मर्यादा रहित हैं और नास्तिक हैं असत् प्रतिग्रह लेने वाले हैं अगम्यागमन करने वाले हैं हे विभो ! इन तथा अन्य पापों के करने वाले मनुष्यों की गति किस प्रकार होती है हे सुरेश्वर ! वह कहिये ।३५।३६।३७। श्री वराह ने कहा हे महाभाग ! हे देवि ! तूने मुझसे ठीक ही पूछा है लोक हित के लिये मैं तुझे एक रहस्य सुनाता हूं ।३८। पुण्य रहित महापातकी मनुष्योंके हितार्थकेलिये जोमैंने निर्माण किया है वह सुनिये ।३६। विष्णु की जो वह अव्यक्त अनेक रूपिणी प्रधान शक्ति है हे भूमे ! वह द्वादशी रूप धारिणी मृत्युलोक मेनिर्मित की है ।४०। हे भद्रे ! महापापी मनुष्य भी उस दिन उपवास व्रत करके पापपुण्य रहित हो परम पद को जाते हैं ।४१। हे वसुन्धरे ! जिससे सर्व पापक्षय होता है उस एकादशी के बिना अन्य कोई उपाय नहीं है ।२४। जिस प्रकार शुक्ल पक्ष की एकादशी उसी प्रकार कृष्णपक्ष की एकादशी का व्रत उपवास करना चाहिये शुक्ला नित्यमुक्ति प्रदा है कृष्ण मुक्ति देती है ।४३। अतः सर्व प्रयत्न से सदा द्वादशी पारायण करना चाहिये यदि वैष्णव लोक जाने की इच्छा होवे तो ।४४। मन, वचन, कर्म, से किया एक महीने का पाप एकादशी नष्ट करती है ।४५। हे वरानने ! पुराण बार बार यह कहते हैं कि हरिवासर के प्राप्त होने पर नहीं भोजन

करना चाहिये नहीं भोजन करना चाहिये ।४६। हे मनुष्यो ! यदि उस विष्णु के परम पद जाना चाहते हो तो एकादशी के दिन भोजन नहीं करना चाहिये, कदापि नहीं करना चाहिये ।४६। में हाथ उठाकर यह कहता हूँ मेरे उस प्रलाप को सुनिये कि एकादशी के दिन निरालस्य हो विश्वेश की आराधना कीजिये ॥४८॥ शंख से जल न पीवे मत्स्य तथा सूकर को न मारे दोनों पक्षकी एकादशी दिन भोजन न करे ॥४६॥ जो दोनों पक्षकी एकादशी दिन भोजन करता है वह ब्रह्महत्या वाला सुरापान करने वाला है चोर है तथा गुरु की शय्या पर शयन करने वाला है ॥५०॥ उस आत्मघाती दुरात्मा ने क्या पाप नहीं किया है जिसने कि जान बूझ कर भी एकादशी के दिन भोजन किया है ॥५१॥ जो शुक्ल एकादशी व्रत करने को समर्थ न हो वह अयाचित नक्त व्रत करे ।।५२॥ एक भक्त दान से द्वादशी व्रत करे हे भूमे ! जो दान अथवा व्रत नहीं करता है वह महापातक भागी होता है और कहीं भी वह अच्छी गति नहीं प्राप्त करता है पृथुलोचने ! तथा जो उपवास करने को असमर्थ है वह एक ही प्रबोधिनी एकादशी का व्रत करे उस दिन जगत के ईश्वर विश्वेश की आराधना करके ।।५३॥५४॥५५॥ द्वादश द्वादशियों का समग्र फल प्राप्त होता है यदि वही एकादशी पूर्वाभाद्रपदा के योग में होवे तो उस दिन का फल अक्षय होता है और यदि वही एकादशी उत्तराभाद्रपदा के योग में होवे तो उसका कोटि गुणा पुण्य फल केशव भगवान् देते हैं उस एकही एकादशीदिन केशव पूजन से कोटिगुण फल मिलता है ।५६।५७।५८। जिस प्रकार प्रबोधिनी एकादशी पुन्य दायक है उसी प्रकार हरिशयनी एकादशी भी पुण्य देनेवाली है उसका भी व्रत उपवास करने से अनन्त फल प्राप्त होता है ॥५६॥ हरि के शयन बोधन और परिवर्तन में एकादशी का व्रत विधान से करने पर मनुष्य शुद्धमन, पतोनिष्ठ, धर्मावम्बी, स्वाध्यायवलम्बी, निर्मलताको प्राप्त होता है ।६०। इसलिये सर्व प्रयत्नसे द्वादशी पारण करे यदि अपनी

शाश्वती गति चाहे तो अवश्य द्वादशी पारण करे।६१। उत्तराभाद्रपदा नक्षत्र के योग में कार्तिकशुक्ल एकादशी अनन्त पुण्य फल देने वाली है।६२। हे भद्रे ! उसदिन जो कुछ किया जाता है वह अनन्त गुण फल वाला कहा है जब भौमवार के दिन एकादशी होवे तो स्नानकर भगवान का पूजन कर परम श्रेष्ठ फल प्राप्त होता है तथा सब द्वादशी पारण का फल मिलता है।६३।६४। जलपूर्ण कलश स्थापित करे उसमें पञ्चरत्न गेरदेवे उसके ऊपर घृत का पात्र रखे उसके ऊपर मत्स्यरूप जनार्दन भगवान् को स्थापित करे हे वरानने वह मत्स्य प्रतिमा निष्क मात्र परिमाण के सुवर्ण से बनवावे।६५।६६। तब पञ्चामृत से स्नान करावे कुंकुम से विलेपन करे एक जोड़ा पीले वस्त्रों का देवे छत्र उपानद् आदि देवे।६७। हे देवि ! संयतेन्द्रिय हो मेरा भक्त पूजन करे, मत्स्य, कूर्म, वराह, नरसिंह, वामन, राम, श्रीराम, कृष्ण, बुद्धि तथा कल्कि एवं दश अवतारों की भक्ति पूर्वक पूजा करे पुष्ट धूप दीप, तथा अनेक प्रकार के नैवेद्य से पूजन कर अनेक प्रकार के अलङ्कारों से भूषित करे।६८।६९।७०। हे सुव्रते! रात्रि में भगवान का उत्थापन करे विमल प्रभात समय उठ स्नान कर भगवान केशव की पूजाकर पुष्प धूप दीप नैवेद्यादि से विविध प्रकार से पूजन करके विद्वान मनुष्य भक्ति पूर्वक आचार्य की पूजा करे।७१।७२। अपनी शक्ति के अनुसार भूषण उपहार वस्त्रादि से विधिपूर्वक पूजन करके भगवान् की प्रार्थना करे।७३॥ जगत् के आदि जगद्रूप जगदादि अनादि जगत् की उत्पत्तिस्थान जनार्दन भगवान् मेरे ऊपर प्रसन्न होवें॥७४॥ इस विधान से जो मनुष्य एकादशीका व्रत करता है हे वसुन्धरे ! उसका पुण्य सुनिये॥७५॥ यदि हजार मुख भी हजार गुणा होकर कहें तब भी प्रबोधिनी के गुण कहे नहीं जासकते हैं।७६। तथापि उद्देश मात्र से यथा शक्ति कहता हूं उसे सुनिये कि चन्द्र तारे सूर्य के वर्ण वाले यानें उनके समान देदीप्य मान विमान में बैठकर अनुजीवियों के साथ ही वह मनुष्य मेरे विष्णु लोक में आता है तदनन्तर सहस्र कल्पान्तर पश्चात सात द्वीपों का

राजा होता है ॥७७॥७८॥ तदनन्तर आयु आरोग्य सम्पन्न जन्मातीत होता है ब्रह्महत्या वाला सुरापान करने वाला चोर तथा गुरु की शय्यापर शयन करने वाला इसको सुनने ही से सर्व पापों से मुक्त होता है ॥७६॥८०॥ निर्धन विद्वान मनुष्य भी भक्ति पूर्वक दर्शन करे स्मरण करे उसकी पुकार सुनकर भगवान् उसे बुद्धि प्रदान करते हैं और वह पाप रहित होकर स्वर्ग को जाता है ॥८१। भवभय नाशक इस माहात्म्य के पाठ करने से दुःस्वप्न नाश होते हैं और जो इस अव्यय बोधिनी का व्रत करता है उसका फल तो कहनाही क्या है ॥८२॥ वही धन्य हैं वही कृतार्थ हैं उन्होंने ही सुकृत किया है उनने ही अपना जन्म सफल लिया है जिनने कि यह व्रत किया है ।।८३॥ हे भूमे ! जो निरन्तर नारायण, अच्युत, अनन्त, वासुदेव आदि नाम उच्चरण करता है वह मेरे में लीन होजाता है ॥८४॥ और जो अनन्य बुद्धि से श्रद्धापूर्वक गुरुपादिष्ट मार्ग से पूजन करे वह मेरे में कैसे नहीं लीन होगा ।।८५। उस अमित तेज वाले वराह रूपी विष्णु का जो प्रयाण करते हैं वे देवताओं से भी निरन्तर पूजनीय हैं ॥८६॥ अतः सुनियत होना चाहिये वैष्णव मार्ग ग्रहण करना चाहिये हे सुन्दरि तीनों लोकों में वैष्णवत्व दुर्लभ हैं ॥८७। हजारों जन्मों तक शिव की आराधना करके सर्वपापक्षय होने पर वैष्णवत्व प्राप्त होता है।८८। ईश्वर की आराधना करने पर पाप क्षय होता है ज्ञान को चाहने वाला परमेश्वर रुद्र की पूजा करे ॥८६॥ तथा मेरी आराधना करने से विष्णु के परमपद को प्राप्त करता है महा भाग्यवान् वैष्णव सारे जगत को पवित्र करते हैं ॥६०॥ हे प्रिये ! स्मरण, कीर्तन दर्शन, पर्शन करने से भगवान का भक्त चाण्डाल भी यदृच्छासे पवित्र करता है । ६१॥ यह जानकर विद्वानों को जनार्दन की पूजा करनी चाहिये हे भद्रे आगमोक्त अथवा वेदोक्त विधिसे जनार्दन की पूजा करे ।.६२॥ यम ने कहा एवं प्रकार सुनकर प्रशंसित व्रत वाली पृथिवी जगन्नाथ भगवान की पूजाकर भगवान में लय को प्राप्त हुयी है ॥६३॥ अतः विद्वान

को यत्न से वैष्णवता ग्रहण करनी चाहिये जो विष्णु पूजन परायण वैष्णव हैं उनको यह लोक नहीं है वे परम पद को जाते हैं जो एक वार भी इस एकादशी का व्रत कर द्वादशी पारण करते हैं ॥६४॥६५। प्रबोधिनी व्रत करके वे परम पद प्राप्त करते ह हे द्विजशार्दूल। वे न यमकी यातना दण्डसे न यमकिंकरों को देखते हैं यह मैं सत्य कहता हूं यह मैंने जितना देखा जितना सुना है कह दिया।६६। ॥६७। हे महामुने जो कुछ स्वयम्भू ने गुह्याख्यान कहा आपसे कह दिया।६८-६९। इति श्रीवराह पुराणे पापनाशोपाय वर्णनं नाम काशीराम शर्म्मांकृत भाषा टीकायां मेकादशाधिक द्विशततमोऽध्यायः ॥२११।

अथः द्वौसौ वारहवाँ अध्याय

दोहा—दोसौ बाराह में कहे, नारद से यमराज।
प्रवोधनीय वर्णन सब धर्म अर्थ के काज॥

अथ संसार चक्रोपाख्याने प्रवोधनीय वर्णनम् ॥ नारद ने कहा हे महाराज ! हे सब धर्म वेत्ताओं में श्रेष्ठ! ठीक है आपने धर्मयुक्त दिव्य कथा ठीक ही कही है ।।१।। आपके धर्म मार्ग में स्थित मैं भी प्रसन्न हो गया हूं आपसे धर्मोपाय मैंने सुन लिये हैं ॥२॥ हे राजेन्द्र! आपने विशेष करके मेरा सम्मान किया है अब मैं शीघ्र उन लोकों को जाता हूं जहां कि मेरा मन रमता है ।३॥ हे महाराज! आपका कल्याण हो हे सुव्रत! अकम्प होजा इसप्रकार कह नारद मुनि चले गये ॥४॥ अपने तेज से सूर्य के समान आकाश को प्रकाशित करता हुआ कामचार महामुनिरम्य आकाश में विचरने लगा ॥५॥ नारद मुनि के चले जाने पर धर्मवत्सल यमराज ने मुझे देख प्रसन्न चित्तसे अनेक वाक्य कह मेरी वन्दना करने लगा ॥६। हे सुव्रत! मेरी युक्त पूजा करके प्रिय वचन कह सुप्रीत अन्तरात्मा से उसने विसर्जन किया ॥७॥ हे ब्राह्मणो! उस यमराज के नगर यह मैंने देखा सुना है जिस प्रकार मैंने देखा सुना है वह यहां आकर आपको कह दिया है ॥८॥ वैशम्पायन ने कहा उस ऋषि पुत्र के वचन सुनकर वे सब तपस्वी हृष्ट पुष्ट हुये वहां कोई वैखानस थे कोई निरासन थे ॥९॥

साधु साधु कह सबकी आंख विस्मय से प्रफुल्लित हुयीं कोई वहां पापावर थे कोई वानप्रस्थ थे तथा कोई शालीन थे तथा कोई कापोती वृत्ति में स्थित थे तथा अन्य सर्वभूत दया वृत्ति ग्रहण किये थे ॥१०॥ ॥११॥ तथा कोई शिलोञ्छ थे कोई महोजस काष्ठान्त थे कोई अपाकपाची थे कोई पाकी थे ॥१२॥ कोई नाना विधि वाले थे कोई जितात्मा थे कोई- मौन व्रत वाले थे कोई जल शायी थे ।१३। तथा कोई उद्रशायी थे कोई मृगचारी थे कोई पञ्चाग्नि साधन वाले थे कोई पर्ण फल खाने वाले थे ॥१४॥ कोई जलभक्षी कोई वायुभक्षी कोई शाक भक्षी थे ऋषि पुत्र के वचन सुनकर और भी तीव्रतप करने लगे ॥१५॥ तपसे अन्य कुछ नहीं है यह बार बार विचार करके जन्ममरण से कोई धीर महर्षि धर्म अधर्म को छोड़ शाश्वती धर्म को अपनाने लगे इस दिव्य कथा को सुन दिव्य कान्ति वाले ऋषिगण भय युक्त हो उन उन नियमों को ग्रहण करने लगे धर्मात्मा नाचिकेत भी तपोधन पुत्र को देख कर परम प्रसन्नता युक्त हो धर्म ही का चिन्तन करने लगा परम तप में स्थित हो चिन्मय शुद्ध ईश्वर विष्णु का चिन्तन करने लगा जो मनुष्य भक्ति कारक इस परमाख्यान को सुने या सुनावे वह सर्व कामना प्राप्त करता है ॥१६॥१७॥१८॥१६॥२० २१॥ इति श्री वराह पुराणे श्रगिति हासे संसार चक्रोपाख्याने प्रबोधिनीयं नाम काशीरामकृत भाषा टीकायां द्वादशाधिक द्विशततमोध्यायः ॥२१२॥

अथ दोसौ तेरहवाँ अध्यायः ॥

दोहा—दोसौ तेरह में कहें, गोकर्णेश महात्म्य ।
सनत्कुमार पूछन पर, ब्रह्मा सब आध्यात्म्य ॥

अथ गोकर्णेश्वर माहात्म्यम् ॥ सूतने कहा पहिले देवताओं के संग्राम में अतिभयङ्कर प्रतिबल वाले तारकामय तथा दानव सेना मारे जाने पर शत्रु के मरने से इन्द्र के अपना इन्द्र पद ग्रहण करने पर सचराचर त्रैलोक्य के सम्यक् प्रसूति प्राप्त करने पर याने त्रैलोक्य में सुख शान्ति हो जाने पर ॥१॥२॥ सुमेरु पर्वत के

शिखर में मणि विद्रुम से विद्ध विपुल कमलासन पर सुख पूर्वक बैठे हुई निवृ कार्य से प्रसन्नरा वदन तथा सूर्य अग्नि के समान कान्ति वाले स्थिर चित वाले ब्रह्मा के चरणोंमें शिरसे प्रणामकर नम्रता सनत्कुमार पूछने लगा ।३।४।५। सनत्कुमार ने कहा हे महाभाग ! हे तत्ववेत्ताओं में श्रेष्ठ ! मैं आपसे ऋषि संस्तुत पुराण सुनना चाहता हूँ ।६। हे विभो! उत्तर गोकर्ण तथा दक्षिणगोकर्ण किस प्रकार हुआ में शृंगेश्वर की परम प्रतिष्ठा सम्यक् प्रकार किस प्रकार हुई है क्षेत्र का क्या प्रमाण है तीर्थ का क्या फल है भगवान् पशुपति के वहां मृगरूप किस कारण धारण किया है पुनः आप जिनके प्र मुख हैं उन देवताओं ने आपके सहित उन मृगरूप शिव को किस प्रकार प्राप्त किया है इसका मृगरूप किस प्रकार है इसका शरीर कहां प्रतिष्ठित है ।७। ।८।९। जिस प्रकार जहां विधि सम्यक् प्रतिष्ठित है वह सब समग्रता से शीघ्र कहिये ।१०। सनत्कुमार के इस प्रकार पूछने पर ब्रह्मदेवताओं में श्रेष्ठ भगवान् ब्रह्मा उस पुत्र सनत्कुमार के लिये यह गुप्त पुरातन रहस्य सुनाने लगा ।११। ब्रह्मा ने कहा हे महाभाग ! वत्स! हे ब्रह्मर्षे ! यथा शास्त्र यथातत्व सरस्य इस पुराण को सुनाता हूं आप सुनिये ।१२। पर्वतराज मन्दर के उत्तर में नन्दनवनके समान कान्ति वाला मुञ्जवान् नाम का शिखर है ।१३। उसमें बज्रस्फटिक के पाषाण हैं मूँगेके अङ्कर याने छोटे २ किनके बालू रूप हैं वहां की शिला नील निर्मल वर्ण की है वहां की गुफाओं से झरने निकलते हैं उसके उन्नत शिखर आकाश का चुम्बन करते रहते हैं उन शिखरों में विचित्र कुसुम लता मञ्जारी हैं उनसे अत्यन्त शोभायमान रहता है वहां की गुफा कन्दरा नानाधातु परिस्रव से अति रमणीय हैं शिलीन्ध्र कुसुमों से चारों ओर चित्रित के समान दीखता है ।१४।१५ १६। यहां केतकी खन्ड तथा कुन्द पुष्पों के खन्ड पुष्पित हैं वनराजि से धातकीप्रफुल्लित के समान प्रकाशित होती है ॥ १७ ॥ भिन्न हुई निर्मल इन्द्र नील मणियों से निर्मल बहते हुये जलों से चित्र विचित्र कुसुम युक्त शिला प्रस्तर विस्तार से जो कि इन्द्र धनुप के समान रमणीय हैं उनसे युक्त बड़े बड़े सर्पों से

सेवित तथा कुवेर भवन के समान कान्ति वाले उस पर्वत राज में देव मिथुन क्रीड़ा करते रहते हैं अप्सरागण नृत्य करता रहता है मत्त मयूर केका बोलते रहते हैं कल्हार आदि के फूल फूले रहते हैं हंस सारस विचरते रहते हैं तथा उस पर्वत में निर्मल जल बहता है खिले हुये कमलों वाले सरोवरों से वह अति रमणीय है वह पर्वत गजयूथ से व्याप्त मृगपक्षियों से युक्त है मुनिगण उसमें निवास करते हैं नदियों से वह पर्वत शोभायमान है ॥१८॥१९॥२०॥२१॥२२॥ किन्नरों का गान होता रहता है कोयलों का शब्द होता रहता है सैंकड़ों विद्याधरों से आकीर्ण तथा देवगन्धर्वों से सेवित वह पर्वत है धारापातों से जल की हजारों किनकों से उस प्रज्वालित अतुल रमणीय शिखर में हरित शाद्वल रहता है सब ऋतुओं में खिलने वाले पुष्पादियों से वहां के उद्यान सुशोभित हैं यक्ष किम्पुरुष वहां वास करते हैं गुह्यकों का वहां आश्रय है सिद्धमुनियों से सेवित उस सेवन करने योग्य अति रमणीय पर्वत में धर्मारण्य तपः क्षेत्र में वरदान देने वाले स्थाणु नाम महेश्वर भगवान् सब देवताओं गुरु नित्य निवास करते हैं नित्य सन्निहित रहते हैं ॥२३॥२४॥२५॥२६॥२७॥ भक्तानुकम्पी वह भगवान् पार्वती के साथ गुह तथा पार्षदों के सहित निवास करते हैं ॥२८॥ उस वरेण्य अज अव्यय महेश्वर की सेवा करने को विमानों में चढ़ सारे देवता उस पर्वत पर आये ॥२९॥ तथा अन्य देवनिका की सेवा करने उसके समीप आये तदनन्तर त्रेतायुग के काल में नन्दी नाम के महामुनि ने शिवकी आराधना करने के लिये तीव्र तप किया ग्रीष्म में पंचाग्नि साधन तथा शिशिर में जल में स्थित हो तप करता था निरालम्ब उर्ध्व बाहु रह कर तप करता था जल, वायु, अग्नि तथा विविध व्रत, उग्रतप नियमों से और जप पुष्पोपहारों से वह मुनि सदा समय समय पर विधिवत् भक्ति पूर्वक शङ्कर की आराधना तथा पूजा करता था ॥३०॥३१॥३२॥ ॥३३॥ वह सुव्रत मुनि उग्रतप करने लगा तप करते बिलकुल निश्चल हो काष्ट भूत कृश होगया तदनन्तर क्षाम हो कृष्ण वर्ण होगया तब सम्यक् आराधना कर नियम से सन्तुष्ट करने पर शङ्कर भगवान्

उसके ऊपर प्रसन्न हुये ॥३४॥३५॥ तब महादेव ने उस नन्दी नाम मुनि को अपना दर्शन दिया और मुनि से शिव ने कहा कि मैं तुझे दिव्य चक्षु देता हूं ॥३६॥ हे मुने ! हे वत्स मैं तेरे ऊपर प्रसन्न हूं, मेरे अदृश्य रूप को देख जिस अप्रति मोजस रूप को कि यहां विद्वान लोग देखते हैं ॥३७॥ सहस्त्र सूर्यों की किरणों वाले ज्वालाओं की माला वाले बालसूर्य के समान मण्डलाकार प्रभामण्डल से मण्डित, जटाजूट से वेष्टित चन्द्र से अलङ्कृत शेखर वाले जगत आलोचन श्री वाले प्रदीप्त तीन लोचन वाले प्रादेश मात्र तथा सुन्दर शतशीर्ष शतोदर सहस्त्र हाथ पैर शिरमुख नेत्रों वाले छोटे से छोटा और बड़े से बड़े रुद्राक्ष माला धारण किये कमण्डलु हाथ में लिये सिंहचर्म का वस्त्र पहिनने वाले व्याल सर्प का यज्ञोपवीत धारण करने वाले महादेव को देख कर प्रसन्न चित्त हृष्ट रोमा होकर महातपा नन्दी नाम मुनि हाथ जोड़ प्रणाम करके सनातन ब्रह्म का उच्चारण कर स्तुति करने लगा धात्र, विधात्रि, वरद शम्भु को नमस्कार करता हूँ । ३८॥३९॥ ॥४०॥४१॥४२॥४३॥ जगत भोक्त के लिये त्रिनेत्र के लिये शंकर के लिये शिव के लिये भव के लिये भव रक्षक के लिये मुनि के लिये गजेन्द्र चर्म धारण करने वाले के लिये नीलकण्ठ, भीम तथा भूतभव्य भव रूप के लिये लम्ब भूवाले को कराल को हरिनेत्र को मीढुष को कपटी को विशाल को मुञ्जकेश को त्रिशूलधारी को पशुपति को विभुको तथा स्थाणु को नमस्कार करता हूँ ॥४४॥४५॥४६॥ गणों के पति को स्रष्टा को संक्षेप को तथा भीषण को सौम्य को सौम्य तप वाले को भीम को त्र्यम्बक को प्रेतवास निवासी को रुद्रको वस्त्र को वरद को कपालमाली को उस हरिश्मश्रु धारण करने वाले को नमस्कार करता हूं ॥४७॥४८॥ भक्त प्रिय परमात्मा को निरन्तर नमस्कार होवे एवम् प्रकार नन्दी ने भव की स्तुति कर तथा नमस्कार कर शिर से प्रणाम कर बार बार वन्दना की तदनन्तर भगवान् शकर नन्दी पर प्रसन्न हो उस ऋषि से साक्षात् वचन बोलने लगे कि हे विप्रेन्द्र ! हे महामुने ! जो तेरी इच्छा है मुझसे वरदान की याचना कर तेरी

इच्छानुसार में उन दुर्लभ वरदानों को भी तुझे दूँगा प्रभुत्व अमरत्व या इन्द्रत्व जो कुछ चाहता है मांगले ब्रह्मत्व लोकपालत्व अथवा मोक्ष अथवा अष्टगुण वाला अणिमादि ऐश्वर्य तथा गाणपत्य हे मुने ! जो कुछ चाहता है वह शीघ्र मांगले महादेव के इस प्रकार कहने पर वह मुनि प्रसन्न अन्तरात्मा से भगवान को कहने लगा हे प्रभो ! प्रभुत्व देवत्व इन्द्रत्व ब्रह्मत्व लोकपालत्व तथा मोक्ष, अष्टगुण ऐश्वर्य गाणपत्य आदि में कुछ नहीं चाहता हूं ॥४६॥५०॥५१॥५२॥५३॥५४॥५५॥ ५६॥ हे देवदेवेश ! हे शंकर ! यदि आप मेरे ऊपर प्रसन्न हैं तो हे भगवन् ! हे सुराधिप ! अनुक्रोशता से अवश्य आपको मेरे ऊपर यह अनुग्रह करना चाहिये कि जिससे आपके सिवाय अन्य किसी में मेरी भक्ति न होवे अर्थात् नित्य आपका ही भक्त बना रहूँ ।।५७।५८।। ऐसी अनन्य भक्ति में आप सर्व भूताशय में चाहता हूं और जिस प्रकार तप में लगे हुये मेरा कोई विघ्न न होवे रुद्राराधना परायण मेरा कोटि जप्य से कोई विघ्न न होवे वह कीजिये नन्दि के इस प्रकार के वचन सुनकर वह महेश्वर हंसकर प्रीति पूर्वक मधुर वाणी से कहने लगे कि हे विप्रर्षे ! मैं आपके तप से प्रसन्न हूं तप से उठ जाइये ।५९॥६०॥ ६१॥ तूने शुद्धचित्त से भक्ति पूर्वक मेरी आराधना की है हे तपोधन ! आपका तप पर्याप्त होगया है अब तप न कीजिये रुद्रों के सामने आपने त्रिगुणा कोटीजप किया है और पूर्ण सहस्त्र वर्ष तक तीव्र तप किया है ऐसा तप पहिले देव, असुर तथा ऋषियों ने भी नहीं किया है ॥६२। ६३॥ ६४॥ आपने महदाश्चर्य जनक दुष्कर कर्म किया है आपने इस सारे चराचर त्रैलोक्य को संक्षोभित कर लिया है ॥६५॥ इन्द्र के सहित सब देवता आपके दर्शन के लिये आयेंगे आप अक्षय हो अव्यय हो तथा देव राक्षसों से अप्रत-र्क्य हो ॥६६॥ आप देवताओं को और राक्षसों से एक ही दिव्य तेज, वपु तथा श्री वाला हो आभूषणों से भूषित हो मेरे समान हो मेरे ही समान प्रभाववाला हो मेरे ही समान कांति तेज वाला हो मेरे समान रूप तेज को धारण करके तीन आंख धारण करेंगे

सर्व गुणों से उत्तम होगा तथा निश्चय ही देवदानवों से पूजित होगा इस ही शरीर से जरामरण रहित हो देवताओं से भी दुष्प्राप्य गाणेश्वरी गति तुझे प्राप्त होगयी है द्विजोत्तम ! आप मेरे पार्षदों में श्रेष्ठ होगये हैं और नन्दीश्वर आपका नाम विख्यात होगा ।६७।६८।६९। ।७०। हे तपोधन ! आपने सबही अष्ट गुण ऐश्वर्य प्राप्त करलिया है मेरे द्वितीय तनुरूप तुझको देवता नमस्कार करेंगे ।७१। हे मुनीश्वर ! मेरे प्रसाद से आजसे लेकर देवकार्यों में देवाग्र हो तू लोक में प्रभु होगा ।७२। सब प्राणि तेरी ही पूजा करेंगे हे पार्षदाधिप ! मेरे से प्रसाद की इच्छा करेंगे वरदान चाहने वालों को वरदान देने वाला तथा सदा जगत् का विधाता भयवालों को अभय देने वाला धर्मज्ञ तू होगा ।७३। ।७४। जो तेरे से द्वेष करेगा वह मुझसे द्वेष करता है और जो तेरे से स्नेह करेगा वह मेरे से स्नेह करता है हम दोनों में कोई अन्तर नहीं है जिसप्रकार कि आकाश और वायु में अन्तर नहीं है ।७५। हे गणाधिप ! तुझे नित्य दक्षिण द्वार पर स्थित होना चाहिये और वाम द्वार पर विभुमहाकाल को स्थित होना चाहिये ।७६। हे देवश्रेष्ठ ! आप आज मेरे प्रतीहार हैं आप मेरे शिर की रक्षा कीजिये महाकाल में भी आप मेरे गण हैं ।७७। तीनों भुवनों में न वज्र से न दण्डसे न चक्र से न अग्निसे कोई किसी प्रकार की बाधा नहीं कर सकता है ।७८। देव, दानव गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, पन्नग, तथा मेरे भक्त पुरुष सब ही तेरा आश्रय लेंगे ।७९। तेरे प्रसन्न होने पर मैं भी प्रसन्न होता हूँ और तेरे रुष्ट होने पर मैं भी रुष्ट होता हूँ द्विजश्रेष्ठ ! आपके अलावा मेरा कोई अन्य प्रिय नहीं है ।८०॥ एवं स्वयं उमापति ने उसे वरदान देकर अम्बर चारी ने पुनः स्पष्ट स्वरसे कहा ।८१। आपका कल्याण हो आप इस समय कृतकृत्य हो गये हैं जिससे कि मरुद्गणों सहित देवता आप के दर्शन के लिये आरहे हैं वह निश्चय जानिये।८२। हे वत्स ! जो मैंने तुझे वरदान दिया है वह स्वर्ग निवासी सब देवताओं ने सुनलिया है ।८३। नारायण को आगे करके इन्द्रमरुद्गण सहित सब देवता प्रेमार्थ वरार्थ आरहे हैं ।८४। यक्ष विद्याधर गण सिद्धगन्धर्व पन्नग तथा

हजारों तपस्वी मुनि महात्मा तेरी परम ऋद्धि को जानकर पर ईर्ष्या से सन्तप्त होरहे हैं सदा यहां मेरे समीप वरप्राप्ति के लिये अनेक तप नियम करना चाहते हैं मौञ्जवान् पर्वत में वरदान देनेवाले जिसको स्थित जानकर जभी मनुष्य यहां आयेंगे तभी मुझे न देखें अतः हे महामुने! तभी मैं यहां से शीघ्र चला जाता हूं।८५।८६।८७।८८। आज वे ब्रह्मादि देवता देखने चाहिये अनुमान करना मान करना चाहिये वे मेरे से अनुग्रह चाहते हैं तथा हे द्विजसत्तम! सबका अभिप्राय जानता हूँ और उनवरों से अनुग्रह कर वहीं पर अन्तर्धान हुआ।८९।९०। इति श्री वराह पुराणे भगवच्छास्त्रे गोकर्ण माहात्म्ये काशीराम शर्म्मा कृत भाषाटीकायां त्रयोदशाधिक शततमोऽध्याय ॥२१३॥

अथ दो सौ चौदह वाँ अध्यायः

दोहा—दोसौ चौदह में कहें, ब्रह्मा सब समुझाय।
गोकर्ण माहात्म्य तथा नन्दीश्वर वर गाय॥

अथ पुनः गोकर्ण माहात्म्यनन्दिकेश्वर वरप्रदानवर्णनम्॥ ब्रह्माने कहा–तदनन्तर भूत नायक भव के अन्तर्धान होनेपर गण सेनापति उस नन्दीने दिव्य रूप धारण किया।१। चारभुजा तीन आंख धारण कर दिव्य सस्थान संस्थित हो दिव्य वर्ण सुन्दर शरीर धारण किया त्रिशूल परिघ, दण्ड, पिनाक तथा मौञ्जी मेखला धारण की वह उस समय दूसरे शंकर के समान तेजसे शोभायमान होने लगा।२।३। वह द्विज बुलाते हुये के समान पैर को खींच कर स्थित हुआ तीन पाद क्रमों से आक्रान्त या चलने की इच्छा से मानो त्रिविक्रम वामन के समान उद्यत हुआ॥४॥ उसको देखकर आकाश चारी सब देवता शंका करने लगे और सम्भ्रान्त मन हो पुरोहित को कहने के लिये स्वर्ग में गये।५। उनमें नन्दिकेश्वर की बात सुनकर इन्द्र तथा सब देवता परम विषाद को प्राप्त हो अत्यन्त चिन्ता करने लगे।६। यह कोई उमाकान्त महेश्वर से वरदान पाकर अतिऊर्जित बल श्रीमान् होअवश्य त्रैलोक्य कोप्राप्त करेगा।७।जिसप्रकार इसका तेज बलयुक्त महाउत्साह है यह महासत्व निश्चय से देवताओं के स्थान को हरण करेगा।८। जभी यह अपने पराक्रमसे स्वर्ग में आता है तभी

ने कहा आज मेरा जीवन तथा परिश्रम सफल होगया है ।११।१२। ।१३। जोकि मैंने सुराध्यक्ष लोक गुरु हरि का दर्शन पालिया है आज में पर्याप्त होगया हूं कृतकृत्य होगया हूँ ।१४। जोकि मेरे ऊपर पापनाशक अव्यग्र शिव प्रसन्न होगये हैं शिवने मुझे अपना पार्षद बनाकर अनेक इष्ट वरदान दिये हैं ।१५। मेरा वह परम अनुग्रह होगया है मैं इस समय पवित्र होगया हूँ देवताओं के प्रति महात्माने जो विधि से वाक्य कहा था मेरे उद्देश्य से जो तथ्य हित वाक्य कहा था वही हुआ अन्यथा नहीं जो प्रीतिसे देवर्षि आकर प्रिय भाषण करते हैं परमेष्ठि से आदृत होनेपर मैं परम प्रसन्न हूँ देवताओं ने कहा हम आपको वरदान देनेवाले उस वरद शिव को देखना चाहते हैं ।१६।१७ १८। आपकी तपस्या से प्रसन्न होकर स्वयं शिवने आपको प्रत्यक्ष दर्शन दिया है ऐसा कह वे देवता पुनः उससे पूछने लगे कि कराली भगवान् शिव कहां हैं हम उनका दर्शन करना चाहते हैं नन्दीने कहा शङ्कर मुझे वरदान देकर वहीं पर अन्तर्धान होगया था ।१९।२०। न जाने कहां गये हैं कहां ठहरे हैं सो आपलोग खोजकरो सनत्कुमार ने कहा शिव ने नन्दी से क्या कहा था जोकि नन्दी ने शिव को नहीं बताया ॥२१॥ हे देवेश ! वह मुझे सुनाइये कि शिव का क्या गुप्त रहस्य था ब्रह्माने कहा महादेव ने कहा था कि मुझे देवताओं के पास नहीं बताना फलाने स्थान पर है यह नहीं कहना ।२२। महादेवने नन्दी से क्या कहा था वह सुनिये ईश्वर ने कहा पृथिवी का एक सिद्ध अद्रिसंकट स्थान है वह स्थान पुण्य हिमालय के पार है वहां अनेक तपोवन हैं वहां श्लेष्मातक नाम सर्पराज निवास करता है ।२३ २४। उसने कठिन तप करके पाप दूर किये हैं मुझे उसकेऊपर अवश्य अनुग्रह करना चाहिये उसके समीप रुचिर स्थान है यह स्थान नरा-

है और उसीके नामसे वह दिव्य तप युक्त स्थान श्लेष्मातक
से विख्यात है उसस्थान में पुण्यशील शिलोच्चय है।२५।२६।
हां मृगरूप धरकर मैं ग्रहण करने की इच्छा वाले अन्वेषण करने से
खिन्न देवताओं को देखूँगा २७। यह समाचार तू देवता तथा अप्स-
राओं को नहीं कहना इतना कह उसे वरदान देकर अनुग्रहीत कर महा-
देव वहीं पर अन्तर्धान हुआ।२८। सारी दिशाओं को विद्योतित करता
हुआ देवताओं ने परिवारित किया बाल चन्द्रके समान दिव्य विन्दुओं
से अर्चित किया मरुद्गणों के सहित महेन्द्र कामग याने इच्छाचारी रथ
में बैठकर पराक्रम से पूरित करते हुये के समान शैल पृष्ठपर आया।२६।
।३०। और गणों सहित यादसाँ पति वरुण रत्न चित्रित, वज्र स्फटिक
चित्र,तप्त सुवर्ण के वर्ण वाले प्रकाशमान अति तेजवाले विमान से वहां
आया तथा कुवेर करोड़ों विमानों से पर्वत शिखर को तथा दशों
दिशाओं को प्रकाशित करता हुआ यक्ष,रक्षसों से सहित आया कुवेर
सूर्यसमान देदीप्यमान दिव्य विमानों में सुकृति के समान अधिष्ठित हो
सूर्यसमान आया सूर्यचन्द्र आदि सब ग्रह मण्डल तथा सारे तारे अग्नि-
तुल्य वर्ण वाले विमानों द्वारा आकाश से पर्वत पर आये एकादश
रुद्र आये तथा द्वादश सूर्य आये।३१ ३२।३३।३४।३५। तथा अश्विनी
कुमार भी मौञ्जवान् पर्वत पर आये विश्वेदेवा आये साध्यागण आये
तथा तपोयुक्त गुरु आया ॥३६॥ ऐरावत हाथी के मार्ग याने आकाश
को आच्छादित कर शीघ्र आये स्कन्द, विशाख, तथा विनायक आया
मयूरों के केका स्वर युक्त उस पर्वतपर नारद तथा तुम्बुरु आया विश्वा
वसु परावसु आये हाहा हूहू आये तथा अन्य सब गन्धर्व आये इन्द्र
की आज्ञा से अनेक प्रकार के आकाश यानों द्वारा अनिल तथा अनल
आये सत्य धर्म तथा ध्रुव आया देवर्षि आये सिद्ध आये यक्ष तथा
विद्याधर गुह्यक सबके सब आये, गन्धकाली घृताची, बुद्धा, गौरी तथा
तिलोत्तमा, उर्वशी, मेनका, रम्भा पञ्चस्था तथा अन्य भी देवाङ्गना
उस पर्वत पर आयीं ।।३७।।३८।।३६।।४०।४१।।४२।। पुलस्त्य, अत्रि,
मरीचि, वशिष्ठ, भृगु, कश्यप, पुलह, विश्वामित्र गौतम भारद्वाज,

अग्नि वेश्य तथा वृद्धिपराशर, मार्कण्डेय, अङ्गिरा, गर्ग, सम्वर्त्त, क्रतु, मरीचि जमदग्नि, भार्गव च्यवन आदि सब ऋषि मेरे-तथा विष्णु तथा इन्द्र के नियोग से उस पर्वत पर आये पुरुषरूप धारी समुद्र तथा महा नदी सरयू आयी, ताम्रारुणा, चारुभागा, वितस्ता, कौशिकी, पुण्या सरस्वती कोका, नर्मदा तथा वाहुदा शतलज व्यासा, गण्डकी, गोदावरी वेणी, तापी, करतोया, शीता तथा चीरवती ।४३।४४।४५।४६।४७।४८। नन्दा, परनन्दा, चर्मण्वती, पार्णाशा, देविका, वितस्ता आदि नदी तथा अनन्यनदी सबकी सब स्वरूपवान् मूर्तिमान होकर वहां आयीं सिन्धु आया प्रभास तीर्थ आया सोम तीर्थ आया लोहित तथा गंगासागर तीर्थ आये।।४६।।५०।। तथा अन्य भी जितने पुण्य तीर्थ हैं सबके सब अपने अपने रूप धारण कर वहां आये इन्द्र के नियोग से सबके सब वहां आये।।५१।।५२। शैलोत्तम महामेरु, कैलाश, गन्धमादन, हिमालय, हेमकूट तथा महागिरि निषध, विन्ध्य, महेन्द्र, सह्य मलय, दर्दुर, माल्यवान्, चित्रकूट, तथा द्रोणपर्वत, श्रीपर्वत, लतावेष्ठ, पारियात्र, ये सब पर्वत अपना रूप धर वहां आये ।।५३।५४।५५।। सब यज्ञ, सब

शिखर भर गया जिस प्रकार कि समय पर समुद्र तट परिपूर्ण भर जाता है ।।६५।। उह पर्वत शिखर पर देव समाज के ऊपर वायु से प्रेरित वृक्ष पुष्प वृष्टि कर रहे थे ।।६६।। देव गन्धर्व गीत गाय रहे थे अप्सरायें नृत्य कर रही थीं और उस समय प्रहृष्ट मन हो पक्षि मधुर कूजन कररहे थे ।।६७।। और वहाँ सुख स्पर्श पुण्य गन्ध वाला वायु चलरहा था एवं विष्णु आदि सब देवता वहां पर आकर उनने श्री समान प्रकाशमान नदी को आगे से स्थित देखा वह नन्दी उन देवराज इन्द्र के सहित उन सब देव गन्धर्व अप्सराओं को आये देख इन्द्र तथा अन्य सब देवताओं को शिर से चरणों में प्रणाम कर हाथ जोड़ नम्रता पूर्वक सहसा उनके लिये नमस्कार करने को उद्यत हुआ और उन सब को नमस्कार कर स्वागतादि कह अर्घ्य पाद्यादि देकर शीघ्र आसन दिये प्रणिधान से उसका अर्थ सुनकर उसका पूजन करे ।।६८।। ।।६६।।७० ७१।।७२।। आदित्य, वसु, रुद्र, मरुद्गण, अश्विनीकुमार, साध्यगण, विश्वेदेवा, गन्धर्व, तथा गुह्यकों की पूजाकरे ।।७३।। विश्वावसु हाहा, हूहू तथा नारद तुम्बरू चित्रसेनादि सब गन्धर्व उसकी पूजा करने लगे ।।७४ उस नन्दीश्वर को देख वासुकि प्रभृति सब पन्नगेन्द्र उसकी पूजा करने लगे ।।७५।। सिद्धचारण विद्याधर अप्सराओं के समूह देवदेव से सत्कृत पूजा करने लगे ।।७६।। यक्ष विद्याधर तथा सब ग्रह सागर, पर्वत, सिद्ध ब्रह्मर्षि तथा गंगा आदि नदी सब ही प्रसन्नता पूर्वक उसे आशीर्वाद देने लगे देवताओं ने कहा हे मुने ! वह पशुपति भगवान् आपके ऊपर सर्वदा प्रसन्न रहें हे अनघ ! तेरी सर्वत्र अप्रतिहत गति होवे हे द्विजोत्तम ! आप इससे उर्द्ध देवों से नहीं होंगे निरामय अमृतीभूत हो सुख पूर्वक विचरण करोगे हे विभो ! अम्बक के साथ आप सातों लोकों में विचरण करेंगे ।।७७।।७८।।७६।।८०।। देवताओं के इस प्रकार कहने पर पुनः नन्दी देवताओं से कहने लगा नन्दिकेश्वर ने कहा-जो आप प्रीति वाले सब देवताओं ने मुझे आशिषा दी हैं उससे मैं अनुग्रहीत हूँ मैं आपका सदा नियोज्य हूँ कहिये कि मुझे आपका क्या कार्य करना चाहिये ।८१।८२। आज्ञा कीजिये हे देवताओं

अग्नि वेश्य तथा वृद्धिपराशर, मार्कण्डेय, अङ्गिरा, गर्ग, सम्वर्त, क्रतु, मरीचि जमदग्नि, भार्गव च्यवन आदि सब ऋषि मेरे तथा विष्णु तथा इन्द्र के नियोग से उस पर्वत पर आये पुरुषरूप धारी समुद्र तथा महा नदी सरयू आयी, ताम्रारुणा, चारुभागा, वितस्ता, कौशिकी, पुण्या सरस्वती कोका, नर्मदा तथा बाहुदा शतलज व्यासा, गण्डकी, गोदावरी वेणी, तापी, करतोया, शीता तथा चीरवती ।४३।४४।४५।४६।४७।४८। नन्दा, परनन्दा, चर्मरवती, पार्णाशा, देविका, वितस्ता आदि नदी तथा अनन्यनदी सबकी सब स्वरूपवान् मूर्तिमान होकर वहां आयीं सिन्धु आया प्रभास तीर्थ आया सोम तीर्थ आया लोहित तथा गंगासागर तीर्थ आये ॥४६॥५०॥ तथा अन्य भी जितने पुण्य तीर्थ हैं सबके सब अपने अपने रूप धारण कर वहां आये इन्द्र के नियोग से सबके सब वहां आये ॥५१॥५२। शैलोत्तम महामेरु, कैलाश, गन्धमादन, हिमालय, हेमकूट तथा महागिरि निषध, विन्ध्य, महेन्द्र, सह्य मलय, दर्दुर, माल्यवान्, चित्रकूट, तथा द्रोणपर्वत, श्रीपर्वत, लतावेष्ठ, पारियात्र, ये सब पर्वत अपना रूप धर वहां आये ॥५३।५४।५५॥ सब यज्ञ, सब विद्या चारों वेद धर्म, सत्य, दम, स्वर्ग तथा महर्षि कपिल तथा वासुकि नाग, और पृथिवी धारण करने वाला जलती हुयी हजारों फणों वाला अनन्त भी वहां आया फणीन्द्र धृतराष्ट्र आया नागराजा किर्मीराङ्ग आया श्रीमान् नागराज अम्भोधर आया ॥५६॥ ५७॥५८॥ अर्बुद, न्यर्बुद, नल, सर्पराट्, विद्यु्जिह्व आया द्विजिह्वेन्द्र शंसगर्वा तीनों भुवनों में प्रसिद्ध अनिमिषेश्वर नहुष विरोचनसुत सत्य स्फुटोमणि शतफण धारी भूरिश्रृङ्ग अरिमेजय संयुक्त महाबान भुजगेश्वर ये सबके सब सर्प वहां आये ॥५६॥६०॥६१॥ नागराज विनत कम्बल तथाअश्वतर एलापत्र तथा सर्पों के मालिक कर्कोटक और धनञ्जय आदि महाबलवान अनेक भुजगेन्द्र आये ।६२।६३। अहोरात्र तथा पक्ष, मास, सम्वत्सर, आकाश पृथ्वी, दिशा विदिशासबके सब मौञ्जवान पर्वतपर आये ॥६४। तदनन्तर सब देव, यक्ष, सिद्धों के आनेसेसारा पर्वत

शिखर भर गया जिस प्रकार कि समय पर समुद्र तट परिपूर्ण भर जाता है ।।६५।। उह पर्वत शिखर पर देव समाज के ऊपर वायु से प्रेरित वृक्ष पुष्प वृष्टि कर रहे थे ।।६६।। देव गन्धर्व गीत गाय रहे थे अप्सरायें नृत्य कर रही थीं और उस समय प्रहृष्ट मन हो पक्षि मधुर कूजन कररहे थे ।।६७।। और वहाँ सुख स्पर्श पुण्य गन्ध वाला वायु चलरहा था एवं विष्णु आदि सब देवता वहां पर आकर उनने श्री समान प्रकाशमान नदी को आगे से स्थित देखा वह नन्दी उन देवराज इन्द्र के सहित उन सब देव गन्धर्व अप्सराओं को आये देख इन्द्र तथा अन्य सब देवताओं को शिर से चरणों में प्रणाम कर हाथ जोड़ नम्रता पूर्वक सहसा उनके लिये नमस्कार करने को उद्यत हुआ और उन सब को नमस्कार कर स्वागतादि कह अर्घ्य पाद्यादि देकर शीघ्र आसन दिये प्रणिधान से उसका अर्थ सुनकर उसका पूजन करे ।।६८।। ।।६९।।७० ७१।।७२।। आदित्य, वसु, रुद्र, मरुद्गण, अश्विनीकुमार, साध्यगण, विश्वेदेवा, गन्धर्व, तथा गुह्यकों की पूजाकरे ।।७३।। विश्वावसु हाहा, हूहू तथा नारद तुम्बरू चित्रसेनादि सब गन्धर्व उसकी पूजा करने लगे ।।७४ उस नन्दीश्वर को देख वासुकि प्रभृति सब पन्नगेन्द्र उसकी पूजा करने लगे ।।७५।। सिद्धचारण विद्याधर अप्सराओं के समूह देवदेव से सत्कृत पूजा करने लगे ।।७६।। यक्ष विद्याधर तथा सब ग्रह सागर, पर्वत, सिद्ध ब्रह्मर्षि तथा गंगा आदि नदी सब ही प्रसन्नता पूर्वक उसे आशीर्वाद देने लगे देवताओं ने कहा हे मुने ! वह पशुपति भगवान् आपके ऊपर सर्वदा प्रसन्न रहें हे अनघ ! तेरी सर्वत्र अप्रति हत गति होवे हे द्विजोत्तम ! आप इससे उर्द्ध देवों से नहीं होंगे निरामय अमृतीभूत हो सुख पूर्वक विचरण करोगे हे विभो ! त्र्यम्बक के साथ आप सातों लोकों में विचरण करेंगे ।।७७।।७८।।७९।।८०।। देवताओं के इस प्रकार कहने पर पुनः नन्दी देवताओं से कहने लगा नन्दिकेश्वर ने कहा-जो आप प्रीति वाले सब देवताओं ने मुझे आशिषा दी हैं उससे मैं अनुग्रहीत हूँ मैं आपका सदा नियोज्य हूँ कहिये कि मुझे आपका क्या कार्य करना चाहिये ।८१।८२। आज्ञा कीजिये हे देवताओं

मुझे आज्ञात कीजिये उसके इस प्रकार वचन सुनकर इन्द्रने कहा–कि हे भद्र ! वह शिव कहां हैं और कहां चले गये हैं हे विप्र ! हम सब उस देवताओं के अधिपति शिव का दर्शन करना चाहते हैं ॥८३।८४॥ हे मुने ! स्थाणु, उग्र, शिव शर्व को यदि जानते हो तो जहां जिस स्थान में वे स्थित हैं हे महर्षे शीघ्र उस स्थान को बताइये इन्द्र के इस प्रकार के वचन सुनकर नन्दी पशुपति का स्मरण कर इन्द्र से कहने लगा नन्दिकेश्वर ने कहा हे दिवस्पते ! हे देवेन्द्र ! यथा तत्व सुनिये ॥८५ ८६।।८७॥ इस मौञ्जवान् पर्वत में मैंने स्थाणु शिव की आराधना की है वह मेरे ऊपर प्रसन्न हो मुझे वरदान देकर यहां से प्रसन्न हो चले गये हैं उनको बताने में मुझे भय लगता है हे इन्द्र ! मैं आपके शासन में स्थित हूँ आप कहो तो यत्न पूर्वक उनको ढूँढें उनका अन्वेषण करें ॥८८॥८९॥९०॥ इति श्रीवराह पुराणे गोकर्ण माहात्म्ये नन्दिकेश्वर वर प्रदानं नाम काशीराम कृत भाषा टीकायां चतुर्दशाधिक द्विशततमोऽध्यायः ॥२१४॥

अथ दोसौ पन्द्रहवाँ अध्यायः ॥

दोहा—दोसौ पंद्रह में कहें, गोकर्णेश महात्म्य ।
ब्रह्मासनत्कुमार से जलेश्वर हु माहात्म्य ॥

अथ गोकर्णेश्वर माहात्म्य वर्णनम् –ब्रह्मा ने कहा–तदनन्तर सब देवगण के साथ मिलकर शंकर को खोजने का इन्द्र ने विचार किया ॥१॥ तब सब देवता उस पर्वत शिखर से उठकर आकाश गति से उस नन्दि के साथ चल पड़े ॥२॥ रुद्र को खोजने अन्वेषण करने में तत्पर देवता स्वर्लोक, ब्रह्मलोक, नाग लोक में भ्रमण करने लगे ॥३॥ अन्वेषण करते करते थककर खिन्न होगये परन्तु महादेव का पता नहीं लग सका चतुः समुद्र पर्यन्त सप्त द्वीपवती पृथिवी के सारे वन पर्वत तथा कंदराओं में पर्वतों के ऊँचे ऊँचे शिखरों में विस्तृत कुञ्जों में तथा विहार स्थलों में सर्वत्र अन्वेषण किया इस सारी पृथिवी के कोने कोने तक अन्वेषण किया परन्तु देवताओं से कहीं भी शिव का पता नहीं लग सका जबकि ढूँढते ढूँढते खिन्न मन होगये और

महादेव शिव का दर्शन न मिला तब देवता भयभीत होने लगे डर करके सलाह कर गुरु लाघव सोचने लगे ॥४॥५।६॥७ ८॥ देवता आपस में सलाह करके मेरी शरण आये उस लोक शंकर को एकाग्र मनसे ध्यान कर तद्वेप भूपणों से मैंने उसे देखा है देवताओं ने कहा—महान् ! जिस प्रकार जहां वे वृषभध्वज हमें दर्शन देवें वह स्थान बताइये पृथिवी में एक श्लेष्मातक नाम वन को छोड़कर हमने सारा त्रैलोक्य निरन्तर घूम लिया है परन्तु कहीं भी शिवका पता नहीं लगा है ॥६॥१०॥११॥ हे देवगण ! आवो उस श्लेष्मीतक वनमें जावें इस प्रकार कह उन सब देवताओं के साथ हम उसदिशा की ओर चल पड़े ॥१२॥ और शीघ्र ही शीघ्रगामी विमानों में बैठकर सिद्ध चारण सेवित उस श्लेष्मातक नाम वन में गये ॥१३॥ उस वनमें अनेक प्रकार के रमणीय पवित्र बहुत गुण वाले ध्यानयोग्य सुरमणीय स्थान थे ॥१४। आश्रम के वन भागों में तथा कन्दराओं के विवरों में वनराजी तथा निर्मल जल वाली नदी शोभायमान थीं ॥१५॥ सिंह, शार्दूल, महिप, गौ, लांगूल, ऋक्ष, तथा वानरों हाथियों, मुर्गों के झुंडों से वह वन शब्दायमान था ॥१६॥ इन्द्रको आगे करके सब देवता उस वन में प्रवेश कर गये रथयान आदि छोड़कर सबके सब पैदल ही उस वन में चलने लगे ॥१७॥ कन्दराओं के अन्धकार में तथा गहन जंगलों में सर्व देवमय रुद्रको शनैः शनैः ढूँढने लगे॥१८॥ वे देवता कहीं शुभ वनोद्देश में याने वनके किसी कोने में प्रवेश करते हुये वह कहीं पर कदली वन से व्याप्त था कहीं पर फूले वृक्षों से सुशोभित था एक ओर से पर्वत नदी का पुलिन विराजमान था वह तट याने सपाट कुन्द इन्दु तथा हंस के समान वर्ण वाला था मधुगन्धि वाले पुष्पों के गन्धामोद से वह स्थान सुरभित था ॥१६॥२०॥ तदनन्तर देवताओं ने मुक्ताचूर्णके समान बालुकाओं याने रेत से खेल करती एक मनोहर कन्या देखी उसे देखकर सब देवता मुझसे कहने

राजपुत्री उमा है ॥२३॥ तब देवता उस ऊँचे शिखर में चढ़कर नीचे देखकर उस सुरोत्तम को देवताओं ने देखा ॥२४॥ मृगसमूह के मध्य में रक्षक के समान स्थित एक शृङ्ग एक चरण तथ सुवर्ण के समान कान्ति सुन्दर मुख आंख तथा दांत, पीठ पर शुल्कविन्दुओं से शोभायमान शुल्कोदर भाग से राजतों से उपशोभित ॥२५॥२६॥ पीन तथा उन्नत कटि भाग तथा स्कन्ध प्रदेश नीचे को झुके हुये अन्श, शिर तथा अधर, विम्बाफल के समान ओष्ठ ताम्रवर्ण की जिह्वा तथा मुख दँष्टांकुर से विराजित एवम् गुण विराजित उस मृगरूप धारी शिव को देख वे सब देवता शीघ्रता से उसको पकड़ने की इच्छा से पर्वत शिखर से दौड़े ॥२७॥२८॥ प्रथम शृंगाग्र धारण कर इन्द्रने ग्रहण किया और उसका मध्य प्रणतात्मा वाले मैंने ग्रहण किया और केशव भगवान् ने भी उस महात्मा का मूल ग्रहण किया तीनों के इस प्रकार पकड़ने पर त्रिधाभूत से अलग अलग हुआ ॥२९॥३०॥ इन्द्र के हाथ में अग्रभाग स्थित रहा मेरे हाथ में मध्य स्थित रहा विष्णु के हाथमें मूलभाग स्थित रहा तीन भाग में प्रविभक्त हुआ ॥३१॥ हमारे तीन प्रकार से शृंगको ही ग्रहण करने पर विषाण रहित होकर वह मृगाधिप नष्ट हो अन्त र्धान हो हमें उपालम्भन देता हुआ आकाश से बोला हे देवताओ मैंने आपलोगों को वञ्चित किया है आप लोगों ने मुझे प्राप्त नहीं किया आपने शरीर के सहित मुझे वश में किया परन्तु पुनः वह शरीर भी नष्ट होगया है वञ्चित हुये आप लोग शृंग मात्र से ही सन्तुष्ट हो जावो ॥३२॥३३॥३४॥ यदि मैं सशरीर हो जाऊँ और ग्रहण कर स्थापित हो जाऊँ तो चार पैर वाला सकल धर्म प्रतिपादित हो जावे ॥३५॥ हे देवताओ ! लोकानुग्रह कामना से इस श्लेष्मातक वन में यथेच्छ न्याय पूर्वक तुम लोग मेरे शृंगों को स्थापित करो ॥३६॥ मेरे प्रभाव से अनुभावित इस सुमहान् पुण्य क्षेत्र में भी बड़ा बहुत ही फल प्राप्त होगा ॥३७॥ समुद्र पर्यन्त पृथ्वी में जितने तीर्थ हैं सरोवर हैं वे सब मेरे अर्थ यहां आयेंगे ।३८। और पुनःमैं शैलपति हिमालय की पादभूमि नैपालमें स्वयं पृथ्वी से उत्पन्न हूँगा ।३९।

दीप्त तेजोमय शिर होंगे और शरीर चतुर्मुखहोगा सर्वत्र तीनों भुवनों में उसका शरीरेश नाम विख्यात होगा ।४०। वहां घोर नागहृद में अन्तर्जल में सर्वप्राणियों के हितके लिये मैं तीसहजार वर्षतक निवास करूँगा ॥४१॥ जब वृष्णि कुलोत्पन्न कृष्ण इन्द्र के वचन से चक्र द्वारा पर्वतों को भेदन कर दानवों को मारेगा ।४२। तब वह देश सर्व म्लेच्छों से अधिष्ठित होगा। तदनन्तर अन्य सूर्यवंशीय क्षत्रिय राजा उनको मारेंगे और उस देश में निवास करेंगे तथा ब्राह्मणों से सम्वर्तित धर्मों को स्थापित करके शाश्वत राज्य याने निरन्तर स्थायी राज्य को करेंगे ।४३।४४। तब राजा उस देश में लिंगार्चन स्थापना करेंगे सूर्यवंशीय क्षत्रिय राजा मुझे शून्य स्थान में प्राप्त करेंगे ।४५। तदनन्तर वहां बड़ा भारी जलपद नगर बसेगा विशेषतः ब्राह्मण तथा चारों वर्ण उस नगर में निवास करेंगे ४६। सम्यक् प्रवृत्ति वाले राजा दीर्घकाल तक जीते रहकर धर्म राज्य करेंगे एवम् सम्यक् प्रकार उस देश तथा पौर जन के स्थित होने पर सब प्राणि सर्वदा मेरी पूजा किया करेंगे उस स्थान पर जो एक वार भी दर्शन करे तथा वन्दना करे व पाप रहित होकर शिवलोक में जाकर मेरा दर्शन करते हैं गंगा उत्तर तथा अश्विनीमुख से दक्षिण चौदह योजन का यह मेरा क्षेत्र हिमालय के उच्चशिखर से निकली वाग्मती नाम नदी है।४७ ४८। ४९।५०। उस नदी का जल भागीरथी से शतगुणा पवित्र कहा है वहां आचमन करने से इन्द्रलोक तथा स्नान करने से विष्णु लोक की प्राप्ति होती है ॥५१॥ और जो उस नदी में प्राण त्याग करते हैं वे निःसन्देह मेरे शिवलोक में जाते हैं जो दुष्कर्म करने वाले इस क्षेत्र में निवास करते हैं वे निश्चय से पुरुहूत इन्द्र के स्थान में वास करते हैं देवदानव गन्धर्व सिद्धि विद्याधर उरग मुनिगण अप्सरा आदि मेरी माया से मोहित हैं जहां मैं सन्निहित रूप से निवास करता हूं उस स्थान को कोई नहीं जानते हैं ।५२ ५३।५४। तपस्वियों

है जहाँ से कि गंगा आदि श्रेष्ठ नदियां निकलती हैं उस पुण्य श्रेष्ठ क्षेत्र में सब श्रेष्ठ नदियां पुण्य दायक हैं सारे प्रस्रवण तथा सारे शिलोच्चय पुण्यवाले हैं वहां सिद्धचारण सेवित एक आश्रम होगा ।५५। ।५६।५७।५८। जहां मेरा शरीर स्थित है वह स्थान शैलेश्वर नाम से विख्यात है पर्वतराज से निकली पुण्यदायक वाग्मती नदी तथा वेगवती भागीरथी मनुष्यों के पापों को हरण करती हैं कीर्तन ही से शुद्धि तथा दर्शन से ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है ॥५९॥६०॥ उसका जलपान तथा उसमें स्नान करने से वह सात कुलों का उद्धार करती है उस प्रसिद्ध तीर्थ में स्वयं लोकपाल विचरण करता है ॥६१॥ जो उसमें स्नान करते हैं वे स्वर्ग जाते हैं तथा उसमें प्राणत्याग करने से मोक्षकी प्राप्ति होती है जो वहां स्नान कर करके मेरी पूजा करते हैं मैं उनके ऊपर प्रसन्न होकर उन्हें संसार सागर से पार करता हूं जो अनिन्दक पवित्र मनुष्य श्रद्धापूर्वक उस जल से एक कलश भर कर मेरे स्नानार्थ लाता है उसको वेदवेदाङ्ग के वेत्ता श्रोत्रियसे किये यज्ञ का फल प्राप्त होता है उसके तीर में जलोद्भेद मेरे मूल से निकला है । ६२॥६३॥ ॥६४॥६५॥ वह जल नित्य मुनिजनप्रिय है तथा मृग शृङ्गोदक नाम से विख्यात है उसमें समाहित मन हो आचमन कर स्नान करना चाहिये ।६६। स्नान करने से यावज्जन्म के किये सारे पाप तत्क्षण नष्ट होते हैं ब्रह्मर्षियों से सेवित पुण्य पञ्चनद तीर्थ मेंजाकर स्नान मात्र करने सेअग्निष्टोम यज्ञ का फल प्राप्त होता है जिस वाग्मती की साठहजार धेनु रक्षा करती हैं उसमें कोई पापी कृतघ्न मनुष्य कभी न जावे पवित्र, श्रद्धालु तथा जो सत्य प्रतिज्ञा वाले मनुष्य हैं वे वाग्मती नदी में स्नान करके उत्तम गति प्राप्त करते हैं जो आर्त हैं जो भयभीत हैं जो सन्तप्त हैं तथा जो व्याधिग्रस्त हैं वे सब के सब वाग्मती में स्नान करके यदि मेरा दर्शन करें तो उनको निःसन्देह शान्ति प्राप्त होती है ॥६७। ॥६८।६९॥७०।७१॥ स्नान करने वाले के सब पाप मेरे प्रभाव से नष्ट होजाते हैं तथा समुदीर्ण ईति दोष भी शान्त होजाते हैं ।७२। वाग्मती के जल में स्नान करके जो मेरा दर्शन करते हैं वाग्मती नदी में जहां

कहीं पर भी स्नान करे वहीं वह नदी राजसूय तथा अश्वमेध यज्ञके फलको देती हैं चारों ओर से योजन परिमाण वाला रुद्रसे अधिष्ठित मूल क्षेत्र जानना चाहिये वहां पूर्वोत्तर पार्श्व में वासुकि नाम नाग राजा है ॥७३॥७४॥७५॥ वह वासुकि नाग हजारों नागों से युक्त हो मेरे दरवाजे पर सदा रहता है वह नाग उस क्षेत्र में प्रवेश करने वाले मनुष्यों को दुःख देता रहता है याने उनके जाने में विघ्न करता है।७६। प्रथम उसी वासुकि को तदनन्तर मुझे नमस्कार करना चाहिये ऐसा करने पर उस क्षेत्र में प्रवेश करने वालों के विघ्न दूर होते हैं जो मनुष्य वहां परम भक्ति से मुझे नमस्कार करता है वह पृथिवी में सर्व लोक नमस्कृत राजा होता है ॥७७॥७८॥ जो मनुष्य गन्ध माल्या दिसे मेरी मूर्तिका पूजन करता है वह तुषितादि देवताओं में उत्पन्न होता है ॥७६। और जो मनुष्य श्रद्धापूर्वक उस स्थान में मुझे दीपदान देता है वह सूर्यप्रभ देवताओं में उत्पन्न होता है ।८०॥ जो मनुष्य गीत वादित्र, नृत्य, स्तुति जागरण आदि से मेरी सेवा करते हैं वे मेरी संस्था को प्राप्त होते हैं ॥८१। दधि से, दूध से, मधु से, घृत से, अथवा जल से जो मनुष्य मेरा स्नान कराते हैं वे जरामरण रहित होते हैं ॥८२। जो श्रद्धा पूर्वक श्राद्ध में ब्राह्मणों को भोजन देते हैं वह देवताओं से पूजित होकर अमृत पान करते हैं ।८३। व्रत, उपवास होम से तथा सुन्दर भोजनों से जो परम श्रद्धालु ब्राह्मण मेरा यजन करते हैं वे साठ हजार वर्ष स्वर्ग में निवासकर बार बार मर्त्य लोक में ऐश्वर्य प्राप्त करते हैं ।८४।८५। ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य शूद्रअथवा स्त्री भी जो शैलेश्वर स्थान की भक्ति से उपासना करते हैं वे देवताओं के सहित पार्षद होते हैं शैलेश्वर परम गुप्त हैं शैलेश्वर परम गति है शैलेश्वर प्रधान क्षेत्र अन्य कोई पृथिवी में नहीं है ।८६।८७। ब्रह्महत्या गुरुहत्या हत्या वाले तथा सर्वपातकी मनुष्य इस क्षेत्रमें आने से निर्मल होजाते हैं

नाम पुण्य तीर्थ मुनिजनों को प्रिय है ॥६०॥ वहां स्नान करके पवित्र दान्त, सत्य सन्ध, जितेन्द्रिय मनुष्य सर्व पापों से मुक्त हो सर्व फल प्राप्त करता है ।।६१॥ जो नर शैलेश्वर के दक्षिण पार्श्व धनाशक तीर्थ में जावे वह परम गति प्राप्त करता है ॥६२।। कामक्रोध रहित हो ऊँचे से जो पतन करता है वह अप्सराओं के गण से विमान द्वारा स्वर्ग जाता है ॥६३॥ भृगुमूल में स्वयं ब्रह्मासे निर्मित परम तीर्थ है उसका ब्रह्मोद्भेद नाम विख्यात है उसका फल सुनिये । ६४॥ जो जितेन्द्रिय मनुष्य एक सम्वत्सर तक वहां स्नान करता है वह निर्मल ब्रह्मलोक में जाता है ।।६५॥ वहां गोवृष के पद से चिन्हित गोरक्षक नाम तीर्थ है उसका दर्शन करने से एक सहस्र गायदान का फल प्राप्त होता है ६६॥ वहां सिद्धों से सेवित एक गौरी का शिखर है वहां शिखर प्रिया पार्वती नित्य निवास करती है ।।६७॥ लोकरक्षा के लिये उद्यत वह लोकमाता पार्वतीनित्य रहती है उसका दर्शनपर्शन करने से मनुष्य उसके सालोक्यता को प्राप्त करता है ॥६८।। जो नर वहां से नीचे वाग्मती तट में प्राणत्याग करता गिरता है वह वैहायस विमान से उमा लोक में जाता है ॥६६॥ जो मनुष्य उमाके स्तन कुण्ड में स्नान करता है वह अग्निसमान कान्ति वाला होकर स्कन्द लोक याने कार्तिक स्वामी के लोक को जाता है ।१००। ब्रह्मर्षियों से सेवित पुण्य पञ्चनद तीर्थ में जाकर स्नान करने से अग्निहोत्र का फल प्राप्त होता है ।१०१ जो मतिमान् प्रयतात्मा मनुष्य नकुलोह से स्नान करावे वह शुद्ध मानस होकर जातिस्मर होता है याने सर्व जन्मों को स्मरण करता है।१०२।

आदि तीर्थ सुन्दरिका तीर्थ में जाकर विधि पूर्वक स्नान करने से मनुष्य रूपवान् उत्तम कान्ति वाला होता है वहां तीनों सन्ध्या समय जाकर पूर्वोक्त विधि से सन्ध्या कर्म करके मनुष्य पाप मुक्त होता है वाग्मती तथा मणिवती के पाप नाशक सम्भेद में जाकर जो मनुष्य अहोरात्र निवास करके रुद्रजाप करता है वह वेदवेत्ता विद्वान तथा राजपूजित यज्वा होता है ।।१०५।।१०६।।१०७।।१०८।।१०६।।११० तथा वह सारे कुल का उद्धार करता है जो कोई वर्ण से गिरा हुआ भी इस स्थान में तिलोदक देवे उससे पितर तृप्त होजाते हैं मनुष्य वाग्मती में जहां कहीं पर स्नान करे तो तिर्यग्योनि में न जाकर समृद्ध कुल में पैदा होता है वाग्मती तथा मणिवती का सम्भेद ऋषियों से सेवित है ।।१११।।११२।।११३।। काम क्रोध रहित बुद्धिमान् मनुष्य उस स्थान में जाकर विधि पूर्वक स्नान करे तो गंगाद्वार में जो स्नान करने का पुण्य फल होता है उससे दशगुणा फल उसमें स्नान करने से प्राप्त होता है इस स्थान में विद्याधर, सिद्ध, गन्धर्व, मुनि देवता तथा यक्ष उरगों के साथ स्नान करते हैं इस स्थान पर ब्राह्मणों के निमित्त स्वल्पभी जो धन दिया जाता है वह अक्षय फल देने वाले को प्राप्त होता है अतः सर्व प्रयत्न से यह दान करना चाहिये ।।११४।११५।। ११६।।११७।। इससे बढ़कर कोई दूसरा क्षेत्र नहीं है इस देवताओं से सेवित श्लेष्मातक वन में मृगरूप से विचरते हुये मैंने जहां जहां पर देवताओं को देखा है तथा जिस जिस स्थान पर बैठा हूँ सोया हूं गया हूं विहार किया है वहां वहां पर पुण्य क्षेत्र होगा हे देवताओ यह त्रिधाभूत शृङ्ग सुनिये ।।११८।।११६।।१२०।। गोकर्णेश्वर यह नाम पृथिवी में विख्यात होगा एवम् प्रकार देवताओं को कहकर देवदेव सनातन महादेव अदृश्य रूप से ही उत्तर दिशा की ओर गये ।।१२१।। ।।१२२।। इति श्रीवराह पुराणे भगवच्छास्त्रे भगवद्गोगोकर्णेश्वर माहात्म्य वर्णनं नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायां पञ्चदशाधिक द्विशततमोऽध्यायः ।।२१५।।

अथः दोसौ सोलहवाँ अध्याय

दोहा—दोसौ सोलह में कहें, ब्रह्मा सब समुझाय।
गोकर्ण श्रृङ्गेश्वर हु, माहात्म्य सकल गाय।'

अथ गोकर्ण श्रृङ्गेश्वरादि माहात्म्यम् ॥ ब्रह्माने कहा—मृगरूपी त्र्यम्बक महादेव के उस स्थान से चले जाने पर सब देवता आपस में सलाह कर मेरे साथ त्रिधाविभक्त प्रथक् स्थित उस श्रृंगको विधिदृष्ट कर्म से स्थापित करने के लिये उद्यत हुये ॥१॥२। इन्द्र से ग्रहण किये श्रृंगाग्र तथा मैंने भी तन्मध्य वहीं विधवत् स्थापित किया ।।३। देव, देवर्षि, तथा सिद्ध, ब्रह्मर्षियों ने उसका गोकर्ण नाम प्रसिद्ध किया तदनन्तर विष्णुने देवतीर्थ से उसका मूल स्थापित किया उसका श्रृंगेश्वर नाम विख्यात हुआ है ॥४।५॥ वहां वहां उस श्रृंगके त्रिधा स्थित होने पर एक भाग से सान्निध्य कल्पित किया उसने अपने सौ भाग मृग में रखे उनमें से दोभाग तीन श्रृंगों में रखे उस शरीर मार्ग से भगवान् शंकर निकल गये और अपने शैशिर पर्वत के पाद में गये ।।६।७।८। उस शैलेश्वर में भगवान् की शतसंख्या वाली व्युष्टि याने अभ्युदय कही है प्रभु के एकाग्रगति वाले श्रृंगके त्रिधा विभक्त होने पर ॥६। तदनन्तर सुरासुरगुरु भगवान् महेश्वर की तपस्या आराधना करके अनेक वरदान मांगने लगे ।।१०॥ देव, दानव, गन्धर्व, सिद्ध, यक्ष महोरग सबके सब श्लेष्मातक वन मण्डल की समग्र यात्रा निमित्त परिक्रमा करने लगे तीर्थों का फल तथा महत् क्षेत्र फल कह वे सब देवगण आदि अपने अपने स्थान को गये एवम् उन सब देव गन्धर्व आदियों के चले जाने पर ॥११॥१२।१३॥ पौलस्त्य वंशोत्पन्न रावण नाम राक्षस अपने भाइयों के साथ वहां आकर उग्रतप से महादेव की आराधना करने लगा ।।१४। गोकर्णेश्वर महादेव की परम शुश्रुषा से जब कि स्वयं वरद शंकर प्रसन्न हुये ।।१५॥ तब रावण ने त्रैलोक्य विजय वरदान की याचना की शंकर ने उसे वह मनवाञ्छित वरदान दिया ॥१६॥ रावण परमेश्वर से ईप्सित वर पाकर शीघ्र त्रैलोक्य विजय के लिये चल पड़ा ॥१७। उसने त्रैलोक्य तथा इन्द्र

को जीतकर अपने पुत्र इन्द्रजीत के साथ उस शिव मूर्ति गोकर्णेश्वर को उखाड़ ले आया जिसको इन्द्र ने श्रृंगाग्र लेकर स्थापित किया था रावण अपने पुत्र इन्द्रजीत के साथ उसे उखाड़ ले आया ।१८।१९। जभी रावण ने उसे समुद्र तट पर रख कर सन्ध्योपासन किया तभी वह पृथिवी में चिपक गया ॥२०॥ रावण बल पूर्वक भी उसे नहीं उठा सका तो वज्रकल्प जान छोड़कर अपनी लंका में गया ॥२१॥ हे महामते ! वही दक्षिण गोकर्ण है भूतपति शिव वहां पर स्वयं प्रतिष्ठित हुये हैं ।२२। हे मुने ! यह सब मैंने तुझे विस्तार से सुना दिया है उत्तर गोकर्ण दक्षिण, गोकर्ण, श्रृंगेश्वर शैलेश्वर भगवान् की उत्पत्ति यथाक्रम सुनादी है तीर्थ उत्पत्ति तथा क्षेत्र का फल सब सुना दिया है और क्या सुनना चाहता है ।२३ २४.२५। इति श्री वराह पुराणे गोकर्ण श्रृगेश्वरादीनां माहात्म्यं नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायां षोड़शाधिक द्विशततमोऽध्यायः । २१६॥

अथ दोसौ सत्रहवां अध्यायः

दोहा—दोसौ सत्रह में कहें ब्रह्म सकल समुझाय ।
धरणी वराह संवाद श्रुतिफल वर्णन गाय ॥

अथ धरणी वराह संवाद फलश्रुति वर्णनम् ॥ सनत्कुमार ने कहा—आप परमेष्ठी ने मेरे पूछने पर सब कह दिया है स्थाणुरूप अप्रतिमौजस भगवान् विश्वरूप लोकनाथ के मृगरूप धर कानन में क्रीड़ा करने पर जिस प्रकार पुन्य क्षेत्र में शरीर तथा श्रृंग जगत् हित के लिये प्रतिष्ठित हुआ तथा जिस प्रकार तीर्थ हुये हैं महाभाग ! वह यथा तत्व से मुझे सुनाइये ब्रह्माने कहा हे महामुने ! जो हमने अधिक वर्णन है उसे पुलस्त्य कहेगा ॥१।२।३।४॥ इन सब तीर्थों का यही फल है कुरुराज्य को लेकर मुनियों के आगे से वनमें वेद वेदांग तत्व वित् मेरे समान मेरा पुत्र है जिसको सुनकर मनुष्य सर्वपाप मुक्त होता है ॥५॥६॥ यशस्वी कीर्तिमान् हो उभयत्र सबसे वन्दना योग्य होता है यह चारों वर्णोंको सावधानता से सुनना चाहिये।७। मंगल्य है कल्याण

रूप है धर्म अर्थ काम मोक्ष का साधक है श्री ऐश्वर्य देने वाला तथा पुण्य आयुष्य, विजयावह है ॥८॥ धन्य, यशस्य, पापघ्न तथा स्वस्ति और शान्ति कारक है इसको सम्यक प्रकार सुनकर मनुष्य दुर्गति को नहीं प्राप्त करता है ॥९॥ प्रातः काल उठकर जो मनुष्य इसे कीर्तन करता है वह स्वर्ग जाता है सूतने कहा—भगवान् प्रजापति ब्रह्मा सनत्कुमार इस प्रकार कह कर चुप हुये हैं। हे शौनकादि ऋषियो! यह मैने तत्व से सब कह दिया है ॥१०॥११॥ इस वराह भूमि सम्वाद के सार को ग्रहण कर जो मनुष्य नित्य कीर्तन करे अथवा सुने वह सर्व पाप मुक्त हो परम गति को प्राप्त करता है प्रभास में नैमिषारण्य में पुस्कर राज में, प्रयाग में, ब्रह्मतीर्थ में तथा अमरकण्टक तीर्थ में स्नानादि से जो पुन्य फल प्राप्त होता है उससे कोटिगुणाफल भूमि वराह सम्वाद पढ़ने तथा सुनने का है ॥१२॥१३॥१४॥ श्रेष्ठ ब्राह्मण को कपिला गाय का दान देने से जो फल प्राप्त होता है वह फल एक अध्याय मात्र सुनने से होता है ॥१५॥ शुद्ध पवित्र हो सावधानता से जो मनुष्य इस भूमि वराह संवाद के दश अध्याय सुनता है वह अग्निष्टोम अतिरात्र के फल को प्राप्त करता है ॥१६॥ पुनः जो बुद्धिमान निरन्तर इसे सुनकर परम भक्ति से पारण करे या परायण करे अथवा इसको समग्र सुने उसका जो फल होता है वह सुनिये ॥१७॥ सवयज्ञों का जो पुन्य होता है सबदानों का फल होता है तथा सर्व तीर्थों में स्नान करने का जो फल मुनियों ने कहा है ॥१८॥ वराह वचनानुसार उस सब फल को अवश्य प्राप्त करता है वराह भगवान् कहते हैं कि जो इस मेरे माहात्म्य को भक्ति पूर्वक सुनता है उसका फल अपुत्रेका पुत्र तथा पुत्र वाले का पौत्र होता है जिसके घर में यह लिखित पुस्तक की सर्वदा पूजा होती है ॥१९॥२०॥ उसके ऊपर सर्वदा नारायण प्रसन्न रहते हैं इसे निरन्तर भक्ति पूर्वक सुनता है और सुनकर सर्वदा सनातन विष्णु के समान पूजा करता है गन्ध, पुष्प तथा वस्त्र और ब्राह्मणों के तर्पणादि से पूजन करे ॥२१॥२२॥ हे वसुन्धरे

वाचक की पूजा को तो सर्वपाप निर्मुक्त हो विष्णु सायुज्यता को प्राप्त होता है ॥२३।२४॥ ॐ इति श्री वराह पुराणे भगवच्छास्त्रे धरणी वराह संवादे फल श्रुतिर्नाम काशीराम शर्मा कृत भाषा टीकायां सप्तदशाधिक द्विशततमोऽध्यायः ॥२१७॥

समाप्त यं श्रीवराह महापुराण टीका

❀ अथ पुराण पठनादि विषयानुक्रमणि का अध्यायः ❀

सम्वत् सोलह सौ सैंतीस में वीरेश्वर के साथ माधव भट्ट ने काशी में यह वराह पुराण लिखा है ।१। वराह पुराण के वृत्तान्त कहते हैं कि प्रथम सम्बन्ध कथन आदि कर्मक वृत्तान्त तदनन्तर आदि सृष्टि तथा दुर्जन का चरित्र वृत्तान्तोद्देश भाग तथा श्राद्ध कल्प कहा गया है ।२।३। आदि वृत्तान्त कथन में सरमा कुन्ती का आख्यान, महातपाका आख्यान कहा है तब अग्निकी उत्पत्ति वर्णन है ।४। अश्विनी कुमारों की उत्पत्ति विनायक उत्पत्ति नागोत्पत्ति ।५। स्कन्दोत्पत्ति तथा सूर्य उत्पत्ति कही है कामादियों की उत्पत्ति देवियों की उत्पत्ति ।६। कुवेर की उत्पत्ति परापर निर्णय, धर्म तथा रुद्र की उत्पत्ति सोमोत्पत्ति रहस्य पृथ्वी की उत्पत्ति रहस्य प्रागितिहास वर्णन, व्याधका उपाख्यान वर्णन किया गया है ।७।८ तदनन्तर सत्यतपाख्यान कहा है तब मत्स्य द्वादशी, कूर्म द्वादशी, वराह द्वादशी, नृसिंह द्वादशी वामन द्वादशी, भार्गवद्वादशी, श्रीराम द्वादशी ।९॥१०। कृष्ण द्वादशी, बुद्धद्वादशी, कल्किद्वादशी, पद्मनाभ द्वादशी ११। तदनन्तर धरणीव्रत, अगस्त्य के उत्तमव्रत, तब पशुपालो पाख्यान तथा भर्तृप्राप्ति व्रत वर्णन किया है ।१२ शुभव्रत, धन्यव्रत, कान्तिव्रत, सौभाग्य व्रत अविघ्न व्रत, शान्ति, कामव्रत आरोग्य व्रत, पुत्रप्राप्तिव्रत, शौर्यव्रत, सार्वभौमिक व्रत, वर्णन किया गया है ।१३।१४। पुराण प्रशंसा, रुद्रगीत, प्रकृतिनिर्णय कहा गया है ।१५। भुवन कोश वर्णन, जम्बूद्वीप मर्यादा वर्णन कहा है ॥१६॥ भारतादि समुद्देश, सृष्टि विभाग, महिष से नारद सम्वाद, शक्तिमाहात्म्य कथन महिषासुर वध, रुद्रमाहात्म्य कथन तदनन्तर पर्वाध्याय कहा है ॥१७।१८॥ श्वेतो पाख्यान, मंत्रोक्त तिलधेनु विधि तथा जलधेनु, रसधेनु, गुडधेनु,

शर्कराधेनु, मधुधेनु, दधिधेनु, लवणधेनु कार्पास धेनु विधि कही गयी है ॥१६॥२०॥ धान्य धेनु विधि भगवच्छास्त्र लवण वर्णन तव विष्णु स्तोत्र तदनन्तर हरि के प्रति नाना प्रकारके प्रश्न तदनन्तर भक्त लक्षण बत्तीस अपराध सुखदुःख लक्षण कहे हैं ॥२१॥२२॥ नाना मन्त्र कहे हैं देवोपकरण विधि भोज्याभोज्य नियम विधि सन्ध्योपस्थान कारण वियोनि गर्भमोक्ष कोकामुख प्रशंसा भगवच्छास्त्र कथन में पुष्पगन्ध माहात्म्य ॥२३॥२४॥ रूपकारण कथन मायाचक्र कुब्जाम्रक माहात्म्य तदनन्तर वर्णदीक्षा ॥२५॥ कंकताञ्जन दर्पों के मन्त्र कहे हैं तव राजान्न खाने में दोष वर्णन, प्रायश्चित वर्णन ॥२६॥ दातुन न करने में प्रायश्चित्त शव स्पर्श करने तथा मन्त्र त्यागने में प्रायश्चित नील वस्त्र धारण करने पर क्रोध युक्त हो पूजन करने पर लाल वस्त्र पहिन कर पूजन करने पर तथा अन्धकार में पूजन करने पर काले कपड़े पहिनने में मैले वस्त्र पहिनने में वराह मांस खाने में प्रायश्चित कहा है ॥२७॥२८॥२९॥ दीपोच्छिष्ट तैल को हाथ में मल कर पूजन करने में श्मशान गमन में स्पृष्टपूजन में शोधन में पिण्याक भक्षण में उपाद्गूढ़पाद में भगवच्छास्त्र विहित न करने पर प्रायश्चित कहा है ॥३०॥३१॥ सूकर क्षेत्र महिमा, जम्बूक ग्रध्र खञ्जरीट का आख्यान कोका मुख वर्णन, वदरीषन्ड माहात्म्य, गुह्यधर्म कीर्तन, मन्दार गुह्य महिमा त्रिवेणी माहात्म्य, गंडकी माहात्म्य, चक्र तीर्थ महिमा हरि-क्षेत्रोत्पत्ति देवहृद तथा रुद्र क्षेत्र का आख्यान वर्णन गो निष्क्रम महिमा द्वारवती महिमा तत्रत्य अनेक तीर्थ महिमा लोहा गो माहात्म्य मथुरातीर्थ महात्म्य तथा मथुरा प्रादुर्भाव यमुना तीर्थ और अक्रूर तीर्थ महात्म्य वर्णन हैं ॥३४॥३५॥३६॥३७ देवारण्य महात्म्य, उत्तमचक्र तीर्थ महात्म्य कपिल महिमा गोवर्धन महिमा तथा आख्यायिका युक्त विश्रान्ति तीर्थ महिमा गोकर्ण माहात्म्य सरस्वती माहात्म्य यमुनोद्भेद महिमा कालिञ्जर समुद्भव, गंगोद्भेदमहिमा, तथा स्यमकका शाप वर्णन किया गया है ॥३८॥३९॥४०॥ माधुक प्रतिमा स्थापन वर्णन शैलार्चा

स्थापन, मृन्मय प्रतिमा स्थापन विधि, ताम्रप्रतिमा कांस्य प्रतिमा, रौप्य प्रतिमा तथा सुवर्ण प्रतिमा स्थापन विधि कही है ॥४१॥४२॥ तदनन्तर श्रादोत्पत्ति कही है पिन्डसंकल्प पिन्डोत्पत्ति और पितृयज्ञ निर्णय किया गया है ।.४३॥ मधुपर्क दान फल संसार चक्र वर्णन दुष्कृत्य करण, तथा सुख वर्णन ॥४४॥ कृतान्त दूत कथन, यातनारूप वर्णन नरक वर्णन किंकर वर्णन ॥४५॥ तथा कर्मानुसार–कर्म विपाक वर्णन पापकृत्य कथन, दूतप्रेषण कर्म वर्णन ॥४६॥ शुभाशुभ कथन शुभ कर्म फलोदय, पुरुष लोभन कर्म तथा निमिका अद्भुत आख्यान वर्णन, दिव्य पाप नाश कथा, गोकर्णोत्पत्ति, नन्दि वरदान, जलेश्वर शैलेश्वर वर्णन श्रृङ्गेश्वर महिमा वर्णन है एवम् प्रकार पुराण वृत्तान्त संग्रह है इसको सुनकर मनुष्य वाराह पुराण सुनने का फल प्राप्त करता है ।४७।४८॥४९॥ इत्यनुक्रमणिका नाम काशीराम शर्मा कृत भवार्थ दीपिका भाषा टीकायां मष्टादशाधिक द्विशततमोऽध्यायः शुभं भूयात्।

❀ समाप्तं वाराहं महा पुराणम् ❀

साहित्य प्रिंटिंग प्रेस, हाथरस में मुद्रित।